श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

( सचित्र 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम् )

## द्वितीयः खण्डः

( द्वितीयः स्कन्धः तृतीयः स्कन्धश्च )

**दयालोक प्रकाशन संस्थान**

१८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद - २११ ००२

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

( सचित्रं 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम् )

द्वितीयः खण्डः

(द्वितीयः स्कन्धः तृतीयः स्कन्धश्च)

टीकाकर्त्री
श्रीमती दयाकान्ति देवी
धर्मपत्नी—श्रीलोकमणिलाल

दयालोक प्रकाशन संस्थान
१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद, २११००२

प्रकाशक—दयालोक प्रकाशन संस्थान, १८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद

विक्रमसंवत् २०४४, प्रथम संस्करण १०००

●

प्राप्ति-स्थान

दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद—२११००२

●

मूल्य : ७५९ रूपये मात्र

मुद्रक—

शाकुन्तल मुद्रणालय

३४, बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद

# नम्र निवेदन

भक्त पाठको,

भक्त, भक्ति, भगवान् और भागवत --इन शब्दों में एक ही भज् धातु उसी प्रकार ओत-प्रोत है जिस प्रकार एक ही सूत्र पुष्पादि की लंबी माला में अनुस्यूत रहता है। भज् धातु का अर्थ है— सेवा (भज् सेवायाम्-पाणिनि धातुपाठ)। अतएव भक्त का अर्थ हुआ 'सेवक'। भक्ति का अर्थ है— 'सेवा'। भगवान् का अर्थ है– 'सेव्य (षडैश्वर्य सम्पन्न)'। और भागवत का अर्थ है—'भगवान् का स्वरूप या विग्रह। तभी तो पद्मपुराणान्तर्गत श्रीमद्भागवत के माहात्म्य-अध्याय– ३, श्लोक ६१—६२ में स्पष्ट रूप से श्रीमद्भागवत को भगवान् का श्रीविग्रह घोषित किया है—

'स्वकीयं यद्भवेत्तेजस्तच्च भागवतेऽदधात्।<br>
तिरोधाय प्रविष्टोऽयं श्रीमद्भागवतार्णवम्॥<br>
तेनेयं वाङ्मयी मूर्तिः प्रत्यक्षा वर्तते हरेः।<br>
सेवनाच्छ्रवणात्पाठाद्दर्शनात्पापनाशिनी ॥'<br>
(दे० हमारे संस्करण प्र० ख० पृ० ११०)

यही कारण है कि आस्तिक समाज में श्रीमद्भागवत पुस्तक की पूजा के बाद ही उसका पारायण होता है। यों तो विष्णु भक्ति से सम्बद्ध होने के कारण विष्णु, नारद, भागवत, गरुड, पद्म और वाराह · ये ६ पुराण सात्त्विक माने गये हैं। किन्तु इनमें भागवत पुराण सबमें अग्रणी है। क्योंकि इसके विषय में पाणिनि के सूत्र 'यावदवधारणे' २।१।८। के उदाहरण में 'यावच्छ्लोकम्' प्रयोग आया है। इसका अर्थ प्राचीन परम्परा से यह किया जाता है–यावन्तः श्लोकास्तावन्तोऽच्युतप्रणामाः'— भागवत के जितने श्लोक हैं, उतने विष्णु के प्रणाम के द्योतक हैं अर्थात् भागवत के सभी श्लोकों से प्रकट होता है कि विष्णु प्रणम्य हैं।

ऐसे भागवत ग्रन्थ पर अनेकानेक टीकायें लिखी गई हैं। किन्तु वे सब विद्वानों के लिए ही उपादेय हैं, सर्वसाधारण के लिए नहीं। इसलिए सर्वसाधारण भी भागवत के अर्थों का हृदयंगम करें इस विचार को आदर्श मानकर मैं इस महापुराण के टीका-लेखन कार्य में प्रवृत्त हुई हूँ। आठ खण्डों में प्रकाशित होने वाले संस्करणों का प्रथम खण्ड संवत् २०४१ में प्रकाशित हो चुका है, जिसमें श्रीमद्भागवत-माहात्म्य सहित प्रथम स्कन्ध मुद्रित है। उस संस्करण का सहृदय पाठकों ने स्वागत किया है। उससे प्रोत्साहित होकर मैं यह द्वितीय खण्ड भी पाठकों के हाथ में समर्पित कर रही हूँ। इस खण्ड में द्वितीय तथा तृतीय स्कन्ध मुद्रित हैं। द्वितीय स्कन्ध में भगवान् के विराट् स्वरूप से लेकर भागवत के दश लक्षण तक वर्णित हैं। तृतीय स्कन्ध में उद्धव और विदुर की भेंट वार्ता से लेकर कर्दम ऋषि की पत्नी देवहूति के मोक्षपद प्राप्ति का वृत्तान्त कहा गया है।

प्रथम खण्ड में पूजन सामग्री, हवन सामग्री तथा श्रीमद्भागवत महापुराण के पूजन एवं पाठ की संक्षिप्त विधि आदि विषय लिखे जा चुके हैं। इसके लिए जिज्ञासु को प्रथम खण्ड देखना चाहिए।

अन्त में मैं इस खण्ड के प्रकाशन में सहयोग करने वाले पं० श्री आजाद मिश्र, श्री कमलनयन शर्मा तथा आचार्य श्री तारिणीश झा जी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

रामनवमी<br>
सं० २०४४, कलि सं० ५०८८, श्रीकृष्ण संवत् ५११३<br>
७ अप्रैल, १९८७

निवेदिका<br>
दयाकान्ति देवी अग्रवाल

सूचना—इस खण्ड में फा० नं० गलत हो जाने से पृष्ठ संख्या ५१२ के बाद ५२१ छप गई है, किन्तु श्लोकसंख्या सर्वत्र सही है। पाठकगण इस त्रुटि के लिए क्षमा करेंगे। पुस्तक में पृष्ठों की संख्या ६३२ है।

श्रीहरिः

# विषय सूची



## द्वितीय स्कन्ध



## तृतीय स्कन्ध

## चित्र-सूची

( रंगीन )



## रेखाचित्र

# श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

## द्वितीयः स्कन्धः

यन्नामस्मृतिमात्रेण निःशेषक्लेशसंक्षयः ।
जायते तत्क्षणादेव तं श्रीकृष्णं नमाम्यहम् ॥

# श्री मद्भागवत की आरती

आरती अति पावन पुराण की ।
धर्म भक्ति विज्ञान खान की ॥ आ० ॥

महापुराण भागवत निर्मल ।
शुक-मुख-विगलित निगम-कल्प-फल ।
परमानन्द-सुधा-रसमय फल ।
लीला-रति-रस रस-निधान की ॥ आ० ॥

कलि-मल-मथनि त्रिताप-निवारिनि ।
जन्म-मृत्युमय भव-भय-हारिनि ।
सेवत सतत सकल सुख कारिनि ।
सु महौषधि हरि-चरित-गान की ॥ आ० ॥

विषय-विलास-विमोह-विनाशिनि ।
विमल विराग विवेक विकाशिनि ।
भगवत्तत्त्व-रहस्य प्रकाशिनि ।
परम ज्योति परमात्म-ज्ञान की ॥ आ० ॥

परमहंस-मुनि-मन-उल्लासिनि ।
रसिक-हृदय-रस-रास विलासिनि ।
भुक्ति मुक्ति रति प्रेम सुवासिनि ।
कथा अकिञ्चन प्रिय सुजान की ॥ आ० ॥

ॐ तत्सत्

श्रीगणेशाय नमः

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## द्वितीयः स्कन्धः

### अथ प्रथमः अध्यायः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

### प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच--

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकहितं नृप ।
आत्मवित्संमतः पुंसां श्रोतव्यादिषु यः परः ॥१॥

पदच्छेद—

वरीयान् एषः ते प्रश्नः, कृतः लोक हितम् नृप ।
आत्मवित् सम्मतः पुंसाम्, श्रोतव्य आदिषु यः परः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वरीयान् | ७. | बहुत उत्तम (है) | आत्मवित् | ९. | आत्मज्ञानियों से |
| एषः | ५. | यह | सम्मतः | १०. | मान्य (एवं) |
| ते | ४. | आपका | पुंसाम् | ११. | मनुष्यों के |
| प्रश्नः | ६. | प्रश्न | श्रोतव्य | १२. | श्रवण |
| कृतः | ३. | किया गया | आदिषु | १३. | स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में |
| लोक, हितम् | २. | संसार के, कल्याण के लिए | यः | ८. | यह |
| नृप । | १. | हे राजन् ! | परः ॥ | १४. | सर्वश्रेष्ठ (है) |

श्लोकार्थ--हे राजन् ! संसार के कल्याण के लिए किया गया आपका यह प्रश्न बहुत उत्तम है। यह आत्मज्ञानियों से मान्य एवं मनुष्यों के श्रवण, स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में सर्वश्रेष्ठ है ।

## द्वितीयः श्लोकः

श्रोतव्यादीनि राजेन्द्र नृणां सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यतामात्मतत्त्वं गृहेषु गृहमेधिनाम् ॥२॥

पदच्छेद—

श्रोतव्य आदीनि राजेन्द्र, नृणाम् सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यताम् आत्म तत्त्वम्, गृहेषु गृह मेधिनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रोतव्य | ७. | सुनने (और) | सहस्रशः । | ९. | हजारों (बातें) |
| आदीनि | ८. | स्मरण, कीर्तनादि के योग्य | अपश्यताम् | ४. | न जानने वाले |
| राजेन्द्र | १. | हे राजन् ! | आत्म तत्त्वम् | ३. | आत्मा के स्वरूप को |
| नृणाम् | ६. | मनुष्यों के | गृहेषु | २. | घर में (उलझे हुए तथा) |
| सन्ति | १०. | हैं | गृहमेधिनाम् ॥ | ५. | गृहस्थ |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! घर में उलझे हुए तथा आत्मा के स्वरूप को न जानने वाले गृहस्थ मनुष्यों के सुनने और स्मरण, कीर्तनादि के योग्य हजारों बातें हैं ।

## तृतीयः श्लोकः

निद्रया ह्रियते नक्तं व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्बभरणेन वा ॥३॥

पदच्छेद—

निद्रया ह्रियते नक्तम्, व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा च अर्थ ईहया राजन्, कुटुम्ब भरणेन वा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निद्रया | २. | नींद से | दिवा | ११. | दिन |
| ह्रियते | १४. | बिता देते हैं | च | १२. | इस प्रकार |
| नक्तम् | ५. | रात | अर्थ, ईहया | ७. | धन की, इच्छा से |
| व्यवायेन | ४. | स्त्री प्रसंग से | राजन् | १. | हे राजन् ! (मनुष्य) |
| च | ६. | और | कुटुम्ब | ९. | परिवार के |
| वा | ३. | अथवा | भरणेन | १०. | पालन-पोषण से |
| वयः । | १३. | (सारी) आयु | वा ॥ | ८. | अथवा |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मनुष्य नींद से अथवा स्त्री-प्रसंग से रात और धन की इच्छा से अथवा परिवार के पालन-पोषण से दिन, इस प्रकार सारी आयु बिता देते हैं ।

## चतुर्थः श्लोकः

देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि ।
तेषां प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ॥४॥

पदच्छेद—

देह अपत्य कलत्र आदिषु, आत्म सैन्येषु असत्सु अपि ।
तेषाम् प्रमत्तः निधनम्, पश्यन् अपि न पश्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देह | १. | शरीर | तेषाम् | ९. | उनकी |
| अपत्य | २. | सन्तान | प्रमत्तः | ८. | पागल हुआ (मनुष्य) |
| कलत्र | ३. | स्त्री | निधनम् | १०. | मृत्यु को |
| आदिषु | ४. | इत्यादि | पश्यन् | ११. | देखता हुआ |
| आत्म सैन्येषु | ५. | अपने सम्बन्धियों के | अपि | १२. | भी |
| असत्सु | ६. | असत् होने पर | न | १३. | नहीं |
| अपि । | ७. | भी (उनके मोह में) | पश्यति ॥ | १४. | देखता है |

श्लोकार्थ—शरीर, सन्तान, स्त्री इत्यादि अपने सम्बन्धियों के असत् होने पर भी उनके मोह में पागल हुआ मनुष्य उनकी मृत्यु को देखता हुआ भी नहीं देखता है ।

## पञ्चमः श्लोकः

तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम् ॥५॥

पदच्छेद—

तस्मात् भारत सर्व आत्मा, भगवान् ईश्वरः हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मतव्यः च इच्छता अभयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. | इसलिए | श्रोतव्यः | १२. | श्रवण |
| भारत | २. | हे परीक्षित् ! | कीर्तितव्यः | ११. | कीर्तन |
| सर्व | ५. | सब की | च | १३. | और |
| आत्मा | ६. | आत्मा (एवं) | स्मर्तव्यः | १४. | स्मरण करना चाहिए |
| भगवान् | ८. | भगवान् | च | १०. | ही |
| ईश्वरः | ७. | सर्वशक्तिमान् | इच्छता | ४. | चाहने वाले (प्राणियों) को |
| हरिः । | ९. | श्री हरि की (लीलाओं का) | अभयम् ॥ | ३. | अभयपद |

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! अभयपद चाहने वाले प्राणियों को सबकी आत्मा एवं सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का ही कीर्तन, श्रवण और स्मरण करना चाहिए ।

## षष्ठः श्लोकः

एतावान् सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया ।
जन्मलाभः परः पुंसामन्ते नारायणस्मृतिः ॥६॥

पदच्छेद—

एतावान् सांख्य योगाभ्याम्, स्व धर्म परिनिष्ठया ।
जन्म लाभः परः पुंसाम्, अन्ते नारायण स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ३. | यही | लाभः | ५. | फल (है कि) |
| सांख्य | ७. | ज्ञान | परः | ४. | सर्वोत्तम |
| योगाभ्याम् | ८. | भक्ति (तथा) | पुंसाम् | १. | मनुष्यों के |
| स्व, धर्म | ९. | अपने, धर्म में | अन्ते | ६. | मृत्यु के समय |
| परिनिष्ठया। | १०. | श्रद्धा के कारण | नारायण | ११. | भगवान् नारायण का |
| जन्म | २. | शरीर धारण का | स्मृतिः ॥ | १२ | स्मरण रहे |

श्लोकार्थ—मनुष्यों के शरीर धारण का यही सर्वोत्तम फल है कि मृत्यु के समय ज्ञान, भक्ति तथा अपने धर्म में श्रद्धा के कारण भगवान् नारायण का स्मरण रहे ।

## सप्तमः श्लोकः

प्रायेण मुनयो राजन्निवृत्ता विधिषेधतः ।
नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म गुणानुकथने हरेः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रायेण मुनयः राजन्, निवृत्ताः विधि षेधतः ।
नैर्गुण्यस्थाः रमन्ते स्म, गुण अनुकथने हरेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रायेण | ६. | अधिकतर | नैर्गुण्यस्थाः | ५. | निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर(भी) |
| मुनयः | ४. | मुनिजन | रमन्ते स्म | १०. | रमे रहते हैं |
| राजन् | १. | हे परीक्षित् ! | गुण | ८ | अनन्त लीलाओं के |
| निवृत्ताः | ३. | संन्यास लिए हुए | अनुकथने | ९. | कीर्तन में |
| विधि, षेधतः। | २. | (शास्त्रीय) विधि, और निषेध से | हरेः॥ | ७. | श्री हरि की |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! शास्त्रीय विधि और निषेध से संन्यास लिए हुए मुनिजन निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर भी अधिकतर श्री हरि की अनन्त लीलाओं के कीर्तन में रमे रहते हैं ।

## अष्टमः श्लोकः

इद भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
अधीतवान् द्वापरादौ पितुर्द्वैपायनादहम् ॥८॥

पदच्छेद—

इदम् भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
अधीतवान द्वापर आदौ, पितुः द्वैपायनात् अहम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इदम् | ६. | इस | अधीतवान् | १२. | पढ़ा था |
| भागवतम् | ४. | श्रीमद्‌भागवत | द्वापर | १०. | द्वापर युग के |
| नाम | ५. | नाम के | आदौ | ११. | प्रारम्भ में |
| पुराणम् | ७. | पुराण को | पितुः | ८. | पिता |
| ब्रह्म | २. | वेद के | द्वैपायनात् | ९. | वेदव्यास जी से |
| सम्मितम् । | ३. | समान ही | अहम् ॥ | १ | मैंने |

श्लोकार्थ—मैंने वेद के समान ही श्रीमद्‌भागवत नाम के इस पुराण को पिता वेदव्यास जी से द्वापर युग के प्रारम्भ में पढ़ा था ।

## नवमः श्लोकः

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्य उत्तमश्लोकलीलया ।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥९॥

पदच्छेद—

परिनिष्ठितः अपि नैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया ।
गृहीत चेताः राजर्षे, आख्यानम् यत् अधीतवान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परिनिष्ठितः | ३. | श्रद्धा होने पर | गृहीत | ८. | खिंच जाने से |
| अपि | ४. | भी | चेताः | ७. | हृदय के |
| नैर्गुण्ये | २. | निर्गुण ब्रह्म में | राजर्षे | १. | हे राजन् ! |
| उत्तम श्लोक | ५. | पवित्र कीर्ति (श्री कृष्ण की) | आख्यानम् | १०. | कथा |
| लीलया । | ६. | लीलाओं में | यत् | ९. | (मैंने) जो |
| | | | अधीतवान् ॥ | ११. | पढ़ी थी (उसे कहूँगा) |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निर्गुण ब्रह्म में श्रद्धा होने पर भी पवित्र-कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं में हृदय के खिंच जाने से मैंने जो कथा पढ़ी थी, उसे कहूँगा ।

## दशमः श्लोकः

तदहं तेऽभिधास्यामि महापौरुषिको भवान् ।
यस्य श्रद्दधतामाशु स्यान्मुकुन्दे मतिः सती ॥१०॥

पदच्छेद—

तद् अहम् ते अभिधास्यामि, महापौरुषिकः भवान् ।
यस्य श्रद्दधताम् आशु, स्यात् मुकुन्दे मतिः सती ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ५. | वह (कथा) | श्रद्दधताम् | ८. | श्रद्धा रखने वाले (प्राणियों) की |
| अहम् | ३. | मैं | आशु | १२. | तत्काल |
| ते | ४. | आपको | स्यात् | १३. | लग जाती है |
| अभिधास्यामि | ६. | सुनाऊँगा | मुकुन्दे | ११. | भगवान् श्रीकृष्ण में |
| महापौरुषिकः | २. | परम भक्त (हैं अतः) | मतिः | १०. | बुद्धि |
| भवान् । | १. | आप | सती ॥ | ९. | उत्तम |
| यस्य | ७. | जिस पर | | | |

श्लोकार्थ--आप परम भक्त हैं; अतः मैं आपको वह कथा सुनाऊँगा, जिस पर श्रद्धा रखने वाले प्राणियों की उत्तम बुद्धि भगवान् श्रीकृष्ण में तत्काल लग जाती है ।

## एकादशः श्लोकः

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ॥११॥

पदच्छेद—

एतद् निर्विद्यमानानाम्, इच्छताम् अकुतोभयम् ।
योगिनाम् नृप निर्णीतम्, हरेः नाम अनुकीर्तनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | २. | सांसारिक विषयों से | नृप | १. | हे राजन् ! |
| निर्विद्यमानानाम् | ३. | विरक्त (तथा) | निर्णीतम् | १०. | निश्चित किया गया है |
| इच्छताम् | ५. | इच्छुक | हरेः | ७. | श्रीहरि के |
| अकुतोभयम् । | ४. | अभयपद के | नाम | ८. | नाम का |
| योगिनाम् | ६. | योगियों के लिए | अनुकीर्तनम् ॥ | ९. | कीर्तन |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सांसारिक विषयों से विरक्त तथा अभयपद के इच्छुक योगियों के लिए श्रीहरि के नाम का कीर्तन निश्चित किया गया है ।

## द्वादशः श्लोकः

किं प्रमत्तस्य बहुभिः परोक्षैर्हायनैरिह ।
वरं मुहूर्त्तं विदितं घटेत श्रेयसे यतः ॥१२॥

पदच्छेद—

किम् प्रमत्तस्य बहुभिः, परोक्षैः हायनैः इह ।
वरम् मुहूर्त्तम् विदितम्, घटेत श्रेयसे यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किम् | ६. | क्या (लाभ ? इसके विपरीत) | वरम् | ६. | उत्तम (है) |
| प्रमत्तस्य | २. | असावधान (प्राणियों) को | मुहूर्त्तम् | ८ | एक क्षण (भी) |
| बहुभिः | ४. | अनेकों | विदितम् | ७. | ज्ञान-पूर्वक बिताया हुआ |
| परोक्षैः | ३. | अज्ञान में बीतने वाले | घटेत | १२. | प्रयास किया जाता है |
| हायनैः | ५. | वर्षों से | श्रेयसे | ११. | परम कल्याण के लिए |
| इह । | १. | इस संसार में | यतः ॥ | १०. | जिसमें |

श्लोकार्थ—इस संसार में असावधान प्राणियों को अज्ञान में बीतने वाले अनेकों वर्षों से क्या लाभ ? इसके विपरीत, ज्ञान-पूर्वक विताया हुआ एक क्षण भी उत्तम है, जिसमें परम कल्याण के लिए प्रयास किया जाता है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

खट्वाङ्गो नाम राजर्षिर्ज्ञात्वेयत्तामिहायुषः ।
मुहूर्त्तात्सर्वमुत्सृज्य गतवानभयं हरिम् ॥१३॥

पदच्छेद—

खट्वाङ्गः नाम राजर्षिः, ज्ञात्वा इयत्ताम् इह आयुषः ।
मुहूर्त्तात् सर्वम् उत्सृज्य, गतवान अभयम् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| खट्वाङ्गः | १. | खट्वाङ्ग | मुहूर्तात् | ७. | दो घड़ी में (ही) |
| नाम, राजर्षिः | २. | नाम के, राजा ने | सर्वम् | ८. | सबका |
| ज्ञात्वा | ६. | जानने के पश्चात् | उत्सृज्य | ९. | त्याग कर |
| इयत्ताम् | ५. | अवधि को | गतवान् | १२. | प्राप्त कर लिया था |
| इह | ३. | संसार में | अभयम् | ११. | धाम को |
| आयुषः । | ४. | (अपनी) आयु की | हरिम् ॥ | १०. | श्रीहरि के |

श्लोकार्थ—खट्वाङ्ग नाम के राजा ने संसार में अपनी आयु की अवधि को जानने के पश्चात् दो घड़ी में ही सबका त्याग कर श्रीहरि के धाम को प्राप्त कर लिया था ।

## चतुर्दशः श्लोकः

तवाप्येर्तांह कौरव्य सप्ताहं जीवितावधिः ।
उपकल्पय तत्सर्वं तावद्यत्सांपरायिकम् ।।१४।।

पदच्छेद—

तव अपि एर्तांह कौरव्य, सप्ताहम् जीवित अवधिः ।
उपकल्पय तत् सर्वम्, तावत् यत् सांपरायिकम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तव अपि | २. तुम्हारे तो | | उपकल्पय | १०. कर लो |
| एर्तांह | ५. अभी | | तत् | ८. वह |
| कौरव्य | १. हे कुरु नन्दन परीक्षित् | | सर्वम् | ९. सब |
| सप्ताहम् | ६. सात दिनों की (है) | | तावत् | ७ इस बीच (तुम) |
| जीवित | ३. जीवन की | | यत् | ११. जो |
| अवधिः । | ४. अवधि | | सांपरायिकम् ।। | १२. परम कल्याण को देने वाला (है) |

श्लोकार्थ—हे कुरु नन्दन परीक्षित् ! तुम्हारे तो जीवन की अवधि अभी सात दिनों की है । इस बीच तुम वह सब कर लो, जो परम कल्याण को देने वाला है ।

## पञ्चदशः श्लोकः

अन्तकाले तु पुरुष आगते गतसाध्वसः ।
छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृहां देहेऽनु ये च तम् ।।१५।।

पदच्छेद—

अन्तकाले तु पुरुषः, आगते गत साध्वसः ।
छिन्द्यात् असङ्ग शस्त्रेण, स्पृहाम् देहे अनु ये च तम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अन्तकाले | २. अन्त काल | | शस्त्रेण | ७. शस्त्र से |
| तु | १. तथा | | स्पृहाम् | १३. ममता-बन्धन को |
| पुरुषः | ४. मनुष्य को | | देहे | ८. शरीर के |
| आगते | ३. आने पर | | अनु | ११. सम्बन्धी (हैं) |
| गत साध्वसः । | ५. निडर होकर | | ये | १०. जो |
| छिन्द्यात् | १४. काट देना चाहिए | | च | ९. और |
| असङ्ग | ६. वैराग्य रूप | | तम् ।। | १२. उनके (भी) |

श्लोकार्थ—तथा अन्त काल आने पर मनुष्य को निडर होकर वैराग्य रूप शस्त्र से शरीर के और जो सम्बन्धी हैं, उनके भी ममता-बन्धन को काट देना चाहिए ।

## षोडशः श्लोकः

गृहात् प्रव्रजितो धीरः पुण्यतीर्थजलाप्लुतः ।
शुचौ विविक्त आसीनो विधिवत्कल्पितासने ।।१६।।

पदच्छेद—

गृहात् प्रव्रजितः धीरः, पुण्य तीर्थ जल आप्लुतः ।
शुचौ विविक्ते आसीनः, विधिवत् कल्पित आसने ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| गृहात् | २. (उस समय) घर से | | शुचौ | ७. शुद्ध |
| प्रव्रजितः | ३. संन्यास लेकर (तथा) | | विविक्ते | ८. एकान्त स्थान में |
| धीरः | १. स्थिर-चित्त (मनुष्य) | | आसीनः | १२. बैठे |
| पुण्य, तीर्थ | ४. पवित्र, तीर्थ के | | विधिवत् | ९. विधान पूर्वक |
| जल | ५. जल में | | कल्पित | १०. लगाये हुए |
| आप्लुतः । | ६. स्नान करके | | आसने ।। | ११. आसन पर |

श्लोकार्थ—स्थिर-चित्त मनुष्य उस समय घर से संन्यास लेकर तथा पवित्र तीर्थ के जल में स्नान करके शुद्ध एकान्त स्थान में विधान-पूर्वक लगाये हुए आसन पर बैठे ।

## सप्तदशः श्लोकः

अभ्यसेन्मनसा शुद्धं त्रिवृद्ब्रह्माक्षरं परम् ।
मनो यच्छेज्जितश्वासो ब्रह्मबीजमविस्मरन् ।।१७।।

पदच्छेद—

अभ्यसेत् मनसा शुद्धम्, त्रिवृत् ब्रह्म अक्षरम् परम् ।
मनः यच्छेत् जित श्वासः, ब्रह्म बीजम् अविस्मरन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अभ्यसेत् | ७. जप करे | | परम् । | ३. सर्वोत्तम |
| मनसा | ६ मन से | | मनः | ९. मन को |
| शुद्धम् | २. पवित्र (एवम्) | | यच्छेत् | १०. वश में करे (तथा) |
| त्रिवृत् | १. अ उ म तीन मात्राओं वाले | | जित श्वासः | ८. प्राणवायु को जीतकर |
| ब्रह्म | ४. ॐ कार | | ब्रह्म बीजम् | ११. प्रणव मन्त्र को |
| अक्षरम् | ५. मन्त्र का | | अविस्मरन् ।। | १२. न भूले |

श्लोकार्थ—'अ उ म' तीन मात्राओं वाले पवित्र एवं सर्वोत्तम ॐ कार मन्त्र का मन से जप करे, प्राणवायु को जीतकर मन को वश में करे तथा प्रणव-मन्त्र को न भूले ।

## अष्टादशः श्लोकः

नियच्छेद्विषयेभ्योऽक्षान्मनसा बुद्धिसारथिः ।
मनः कर्मभिराक्षिप्तं शुभार्थे धारयेद्धिया ।।१८।।

पदच्छेद—

नियच्छेत् विषयेभ्यः अक्षान्, मनसा बुद्धि सारथिः ।
मनः कर्मभिः आक्षिप्तम्, शुभ अर्थे धारयेत् धिया ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नियच्छेत् | ६. | अलग करे (तथा) | मनः | ९. | मन को |
| विषयेभ्यः | ५. | विषयों से | कर्मभिः | ७. | कर्मों से |
| अक्षान् | ४. | इन्द्रियों को | आक्षिप्तम् | ८. | घबड़ाये हुए |
| मनसा | ३. | मन के द्वारा | शुभ अर्थे | ११. | मंगलमय श्रीहरि के ध्यान में |
| बुद्धि | १. | बुद्धि को | धारयेत् | १२. | लगावे |
| सारथिः । | २. | सारथि बनाकर (मनुष्य) | धिया ।। | १०. | बुद्धि के सहारे |

श्लोकार्थ --बुद्धि को सारथि बनाकर मनुष्य मन के द्वारा इन्द्रियों को विषयों से अलग करे तथा कर्मों से घबड़ाये हुए मन को बुद्धि के सहारे मंगलमय श्रीहरि के ध्यान में लगावे ।

## एकोनविंशः श्लोकः

तत्रैकावयवं ध्यायेदव्युच्छिन्नेन चेतसा ।
मनो निर्विषयं युक्त्वा ततः किञ्चन न स्मरेत् ।
पदं तत्परमं विष्णोर्मनो यत्र प्रसीदति ।।१९।।

पदच्छेद—

तत्र एक अवयवम् ध्यायेत्, अव्युच्छिन्नेन चेतसा ।
मनः निर्विषयम् युक्त्वा, ततः किञ्चन न स्मरेत् ।
पदम् तत् परमम् विष्णोः, मनः यत्र प्रसीदति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्र | १. | भगवान् के श्रीविग्रह में से | ततः | ६. | तदनन्तर |
| एक, अवयवम् | २. | किसी एक, अंग का | किञ्चन | १०. | कुछ भी |
| ध्यायेत् | ५ | ध्यान करे | न स्मरेत् । | ११. | स्मरण न करे |
| अव्युच्छिन्नेन | ३. | स्थिर | पदम् | १६. | धाम है |
| चेतसा । | ४. | चित्त से | तत, परमम् | १५. | वही, परम |
| मनः | ८. | मन को (ईश्वर में) | विष्णोः | १४. | भगवान् विष्णु का |
| निर्विषयम् | ७. | विषयों से रहित | मनः, यत्र | १२. | मन, जहाँ |
| युक्त्वा | ९. | लगाकर | प्रसीदति ।। | १३. | आनन्द मग्न हो जाता है |

श्लोकार्थ-- भगवान् के श्रीविग्रह में से किसी एक अंग का स्थिर चित्त से ध्यान करे । तदनन्तर विषयों से रहित मन को ईश्वर में लगाकर कुछ भी स्मरण न करे । जहाँ मन आनन्द-मग्न हो जाता है, भगवान् विष्णु का वही परम धाम है ।

## विंशः श्लोकः

रजस्तमोभ्यामाक्षिप्तं विमूढं मन आत्मनः ।
यच्छेद्धारणया धीरो हन्ति या तत्कृतं मलम् ।।२०।।

पदच्छेद—

रजः तमोभ्याम् आक्षिप्तम्, विमूढम् मनः आत्मनः ।
यच्छेत् धारणया धीरः, हन्ति या तत् कृतम् मलम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रजः तमोभ्याम् | २. | रजोगुण और तमोगुण से | धारणया | ६. | धारणा शक्ति से |
| आक्षिप्तम् | ३. | चंचल (तथा) | धीरः | १. | धैर्यशाली (मनुष्य) |
| विमूढम् | ४. | अज्ञानी | हन्ति | १२. | नष्ट कर देती है |
| मनः | ५. | मन को | या | ६. | जो (धारणा शक्ति) |
| आत्मनः । | ७. | अपने | तत्कृतम् | १०. | रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न |
| यच्छेत् | ८. | वश में करे | मलम् ।। | ११. | दोषों को |

श्लोकार्थ—धैर्यशाली मनुष्य रजोगुण और तमोगुण से चंचल तथा अज्ञानी मन को धारणा शक्ति से अपने वश में करे, जो धारणा शक्ति रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न दोषों को नष्ट कर देती है।

## एकविंशः श्लोकः

यस्यां संधार्यमाणायां योगिनो भक्तिलक्षणः ।
आशु संपद्यते योग आश्रयं भद्रमीक्षतः ।।२१।।

पदच्छेद—

यस्याम् संधार्यमाणायाम्, योगिनः भक्ति लक्षणः ।
आशु संपद्यते योगः, आश्रयम् भद्रम् ईक्षतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्याम् | १. | जिस (धारणा शक्ति) के | संपद्यते | १०. | प्राप्त कर लेते हैं |
| संधार्यमाणायाम् | २. | उत्पन्न हो जाने पर | योगः | ९. | भक्तियोग को |
| योगिनः | ३. | योगिजन | आश्रयम् | ५. | भगवान् का |
| भक्ति लक्षणः । | ८. | भक्ति स्वरूप वाले | भद्रम् | ४. | मंगलमय |
| आशु | ७. | तत्काल | ईक्षतः ।। | ६. | ध्यान करते हुए |

श्लोकार्थ—जिस धारणा शक्ति के उत्पन्न हो जाने पर योगिजन मंगलमय भगवान् का ध्यान करते हुए तत्काल भक्ति स्वरूप वाले भक्तियोग को प्राप्त कर लेते हैं।

## द्वाविंशः श्लोकः

राजोवाच—

यथा सधार्यंते ब्रह्मन् धारणा यत्र सम्मता ।
यादृशी वा हरेदाशु पुरुषस्य मनोमलम् ॥२२॥

पदच्छेद—

यथा संधार्यंते ब्रह्मन्, धारणा यत्र सम्मता ।
यादृशी वा हरेत् आशु, पुरुषस्य मनोमलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | ५. | किस साधन से | यादृशी | ८. | किस प्रकार |
| संधार्यंते | ६. | की जाती है | वा | ७. | तथा |
| ब्रह्मन् | १. | हे शुकदेव जी ! | हरेत् | १२. | दूर करती है |
| धारणा | २. | धारणा शक्ति | आशु | ११. | शीघ्र |
| यत्र | ३. | किसमें | पुरुषस्य | ९. | पुरुष के |
| सम्मता । | ४. | मानी गयी है (और) | मनोमलम् ॥ | १०. | मन के दोषों को |

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! धारणा शक्ति किसमें मानी गयी है और किस साधन से की जाती है तथा किस प्रकार पुरुष के मन के दोषों को शीघ्र दूर करती है ?

## त्रयोविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

जितासनो जितश्वासो जितसङ्गो जितेन्द्रियः ।
स्थूले भगवतो रूपे मनः संधारयेद् धिया ॥२३॥

पदच्छेद—

जित आसनः जित श्वासः, जित सङ्गः जित इन्द्रियः ।
स्थूले भगवतः रूपे, मनः संधारयेत् धिया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जित | २. | जीतकर | स्थूले | ११. | विराट् |
| आसनः | १. | आसन को | भगवतः | १०. | भगवान् के |
| जित | ४. | रोककर | रूपे | १२. | रूप में |
| श्वासः | ३. | प्राणवायु को | मनः | ९. | मन को |
| जित | ६. | त्याग कर (तथा) | संधारयेत् | १३. | लगावे |
| सङ्गः | ५. | आसक्ति को | धिया ॥ | ८. | बुद्धि के द्वारा |
| जित इन्द्रियः । | ७. | इन्द्रियों पर विजय करके (मनुष्य) | | | |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! आसन को जीतकर, प्राणवायु को रोककर, आसक्ति को त्याग कर तथा इन्द्रियों पर विजय करके मनुष्य बुद्धि के द्वारा मन को भगवान् के विराट् रूप में लगावे ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

विशेषस्तस्य देहोऽयं स्थविष्ठश्च स्थवीयसाम् ।
यत्रेदं दृश्यते विश्वं भूतं भव्यं भवच्च सत् ॥२४॥

पदच्छेद—

विशेषः तस्य देहः अयम्, स्थविष्ठः च स्थवीयसाम् ।
यत्र इदम् दृश्यते विश्वम्, भूतम् भव्यम् भवत् च सत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विशेषः | ३. | विराट् | इदम् | १३. | यह |
| तस्य | १. | उस (भगवान्) का | दृश्यते | १६. | दिखलाई देता है |
| देहः | ४. | शरीर | विश्वम् | १४. | संसार |
| अयम् | २. | यह | भूतम् | ९. | बीता हुआ |
| स्थविष्ठः | ७ | स्थूल (है) | भव्यम् | १०. | आने वाला |
| च | ६. | भी | भवत् | १२. | वर्तमान |
| स्थवीयसाम् । | ५. | स्थूलों में | च | ११ | और |
| यत्र | ८. | जिसमें | सत् ॥ | १५. | सत्यरूप में |

श्लोकार्थ—उस भगवान् का यह विराट् शरीर स्थूलों में भी स्थूल है; जिसमें बीता हुआ, आने वाला और वर्तमान यह संसार सत्यरूप में दिखलाई देता है ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

आण्डकोशे शरीरेऽस्मिन् सप्तावरणसंयुते ।
वैराजः पुरुषो योऽसौ भगवान् धारणाश्रयः ॥२५॥

पदच्छेद—

आण्डकोशे शरीरे अस्मिन्, सप्त आवरण संयुते ।
वैराजः पुरुषः यः असौ, भगवान् धारणा आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आण्डकोशे | ४. | ब्रह्माण्ड | वैराजः | ७. | विराट् |
| शरीरे | ५. | शरीर में | पुरुषः | ८. | पुरुष |
| अस्मिन् | ३. | इस | यः | ६. | जो |
| सप्त आवरण | १. | सात आवरणों से | असौ | १०. | उन्हीं की |
| संयुते । | २. | घिरे हुए | भगवान् | ९. | भगवान् श्रीहरि (हैं) |
| | | | धारणा आश्रयः ॥ | ११. | धारणा की जाती है |

श्लोकार्थ—सात आवरणों से घिरे हुए इस ब्रह्माण्ड शरीर में जो विराट् पुरुष भगवान् श्री हरि हैं, उन्हीं की धारणा की जाती है ।

## षड्विंशः श्लोकः

पातालमेतस्य हि पादमूलं, पठन्ति पार्ष्णिप्रपदे रसातलम् ।
महातलं विश्वसृजोऽथ गुल्फौ, तलातलं वै पुरुषस्य जङ्घे ॥२६॥

पदच्छेद—

पातालम् एतस्य हि पाद मूलम्, पठन्ति पार्ष्णि प्रपदे रसातलम् ।
महातलम् विश्वसृजः अथ गुल्फौ, तलातलम् वै पुरुषस्य जङ्घे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पातालम् | ६. | पाताल लोक | महातलम् | ११. | महातल लोक |
| एतस्य | २. | इस | विश्वसृजः | १. | विश्व के रचयिता |
| हि | ५. | ही | अथ | १२. | तथा |
| पाद, मूलम् | ४. | पैर का, तलवा | गुल्फौ, | १०. | एड़ी के ऊपर की गाँठे |
| पठन्ति | १६. | बताई गयी हैं | तलातलम् | १५. | तलातल लोक |
| पार्ष्णि | ७. | एड़ी और | वै | १४. | ही |
| प्रपदे | ८. | पंजे | पुरुषस्य | ३. | विराट् पुरुष के |
| रसातलम् । | ९. | रसातल लोक | जङ्घे ॥ | १३. | पिंडलियाँ |

श्लोकार्थ—विश्व के रचयिता इस विराट् पुरुष के पैर का तलवा ही पाताल लोक, एड़ी और पंजे रसातल लोक, एड़ी के ऊपर की गाँठे महातल लोक तथा पिंडलियाँ ही तलातल लोक बताई गयी हैं ।

## सप्तविंशः श्लोकः

द्वे जानुनी सुतलं विश्वमूर्त्ते-रूरुद्वयं वितलं चातलं च ।
महीतलं तज्जघनं महीपते, नभस्तलं नाभिसरो गृणन्ति ॥२७॥

पदच्छेद—

द्वे जानुनी सुतलम् विश्वमूर्त्तेः, ऊरुद्वयम् वितलम् च अतलम् च ।
महीतलम् तद् जघनम् महीपते, नभस्तलम् नाभि सरः गृणन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वे, जानुनी | ३. | दोनों, घुटने | महीतलम् | १२. | भू लोक (और) |
| सुतलम् | ४. | सुतल लोक | तद् | १०. | उसका |
| विश्वमूर्त्तेः, | २. | विराट् पुरुष के | जघनम् | ११. | नितम्ब |
| ऊरु द्वयम् | ५. | दोनों जाँघे | महीपते, | १. | हे राजन् ! |
| वितलम् | ६. | वितल | नभस्तलम् | १५. | आकाश मण्डल |
| च | ७. | और | नाभि | १३. | नाभि रूप |
| अतलम् | ८. | अतल लोक | सरः | १४. | सरोवर को |
| च । | ९. | तथा | गृणन्ति ॥ | १६. | कहते हैं |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! विराट् पुरुष के दोनों घुटने सुतल लोक, दोनों जाँघे वितल और अतल लोक तथा उसका नितम्ब भूलोक और नाभिरूप सरोवर को आकाश मण्डल कहते हैं ।

# अष्टाविंशः श्लोकः

उरःस्थलं ज्योतिरनीकमस्य, ग्रीवा महर्वदनं वै जनोऽस्य ।
तपो रराटीं विदुरादिपुंसः, सत्यं तु शीर्षाणि सहस्रशीर्ष्णः ॥२८॥

पदच्छेद— उरःस्थलम् ज्योतिः अनीकम् अस्य, ग्रीवा महः वदनम् वै जनः अस्य ।
तपः रराटीम् विदुः आदि पुंसः, सत्यम् तु शीर्षाणि सहस्र शीर्ष्णः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उरः स्थलम् | २. | वक्षस्थल | तपः | १४. | तपोलोक |
| ज्योतिः अनीकम् | ३. | स्वर्गलोक (एवं) | रराटीम् | १३. | ललाट को |
| अस्य, | १. | इस (भगवान्) का | विदुः | १८. | कहते हैं |
| ग्रीवा | ४. | गर्दन | आदि पुंसः | १०. | आदि पुरुष के |
| महः | ५. | महर्लोक (है) | सत्यम् | १७. | सत्यलोक |
| वदनम् | ११. | मुखमण्डल को | तु | १५. | और |
| वै | ६. | इसी प्रकार | शीर्षाणि | १६. | मस्तक को |
| जनः | १२. | जनलोक | सहस्र | ७. | हजार |
| अस्य । | ९. | इस | शीर्ष्णः ॥ | ८. | सिरों वाले |

श्लोकार्थ- इस भगवान् का वक्षस्थल स्वर्गलोक एवं गर्दन महर्लोक है । इसी प्रकार हजार सिरों वाले इस आदि पुरुष के मुखमण्डल को जनलोक, ललाट को तपोलोक और मस्तक को सत्यलोक कहते हैं ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

इन्द्रादयो बाहव आहुरुस्राः, कर्णौ दिशः श्रोत्रममुष्य शब्दः ।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे, घ्राणोऽस्य गन्धो मुखमग्निरिद्धः ॥२९॥

पदच्छेद -- इन्द्र आदयः बाहवः आहुः उस्राः, कर्णौ दिशः श्रोत्रम् अमुष्य शब्दः ।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे, घ्राणः अस्य गन्धः मुखम् अग्निः इद्धः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इन्द्र आदयः | ३. | इन्द्र इत्यादि | नासत्यदस्रौ | ११. | अश्विनीकुमार |
| बाहवः | २. | भुजायें | परमस्य, नासे, | १०. | परम पुरुष के, नासिकाछिद्र |
| आहुः | ८. | कहे गये हैं (इसी प्रकार) | घ्राणः | १२. | घ्राणेन्द्रिय |
| उस्राः, | ४. | देवता | अस्य | ९. | इस |
| कर्णौ, दिशः | ५. | कान, दिशायें (और) | गन्धः | १३. | गन्ध (और) |
| श्रोत्रम् | ६. | श्रवणेन्द्रिय | मुखम् | १४. | मुख |
| अमुष्य | १. | इस (विराट् पुरुष) की | अग्निः | १६. | आग (है) |
| शब्दः । | ७. | शब्द | इद्धः ॥ | १५. | धधकती हुई |

श्लोकार्थ—इस विराट् पुरुष की भुजायें इन्द्र इत्यादि देवता, कान दिशायें और श्रवणेन्द्रिय शब्द कहे गये हैं । इसी प्रकार इस परम पुरुष के नासिका छिद्र अश्विनीकुमार, घ्राणेन्द्रिय गन्ध और मुख धधकती हुई आग है ।

## त्रिंशः श्लोकः

द्यौरक्षिणी चक्षुरभूत्पतङ्गः, पक्ष्माणि विष्णोरहनी उभे च।
तद्भ्रूविजृम्भः परमेष्ठिधिष्ण्य-मापोऽस्य तालू रस एव जिह्वा ॥३०॥

पदच्छेद— द्यौः अक्षिणी चक्षुः अभूत् पतङ्गः, पक्ष्माणि विष्णोः अहनी उभे च।
तद् भ्रू विजृम्भः परमेष्ठि धिष्ण्यम्, आपः अस्य तालुः रसः एव जिह्वा ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| द्यौः | १. आकाश | | |
| अक्षिणी | ३. दोनों आँखें | तद् भ्रू, विजृम्भः | ११. उनके भौहों का, विलास |
| चक्षुः | ५. आँखों की पुतली | परमेष्ठि, धिष्ण्यम्, | १०. ब्रह्मा का, धाम |
| अभूत् | ९. हैं | आपः | १२. जल |
| पतङ्गः, | ४. सूर्य | अस्य | १३. इस का |
| पक्ष्माणि | ८. पलकें | तालुः | १४. तालु भाग |
| विष्णोः | २. विराट् पुरुष की | रसः | १६. रस |
| अहनी उभे | ७. दिन और रात, दोनों | एव | १५. और |
| च। | ६. तथा | जिह्वा ॥ | १७ रसना इन्द्रिय (है) |

श्लोकार्थ—आकाश विराट् पुरुष की दोनों आँखें, सूर्य आँखों की पुतली तथा दिन और रात दोनों पलकें हैं। ब्रह्मा का धाम उनके भौहों का विलास, जल इसका तालुभाग और रस रसना-इन्द्रिय है।

## एकत्रिंशः श्लोकः

छन्दांस्यनन्तस्य शिरो गृणन्ति, दंष्ट्रा यमः स्नेहकला द्विजानि।
हासो जनोन्मादकरी च माया, दुरन्तसर्गो यदपाङ्गमोक्षः ॥३१॥

पदच्छेद— छन्दांसि अनन्तस्य शिरः गृणन्ति, दंष्ट्रा यमः स्नेह कला द्विजानि।
हासः जन उन्मादकरी च माया, दुरन्त सर्गः यद् अपाङ्ग मोक्षः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| छन्दांसि | १. वेद को | हासः | ११. मुस्कान (है) |
| अनन्तस्य | २. विराट् पुरुष का | जन उन्मादकरी | ९. लोगों को पागल बनाने वाली |
| शिरः | ३. मस्तक | च | १२. तथा |
| गृणन्ति, | ८. कहा गया है | माया, | १०. मायाशक्तिः |
| दंष्ट्रा | ५. डाढ़ (तथा) | दुरन्त | १३. अनन्त |
| यमः | ४. यमराज को | सर्गः | १४. सृष्टि |
| स्नेह कला | ६. प्रेम और कलाओं को | यद् | १५. जिनकी |
| द्विजानि। | ७. दाँत | अपाङ्ग मोक्षः ॥ | १६. तिरछी नजर (है) |

श्लोकार्थ वेद को विराट् पुरुष का मस्तक, यमराज को डाढ़ तथा प्रेम और कलाओं को दाँत कहा गया है। लोगों को पागल बनाने वाली मायाशक्ति मुस्कान है तथा अनन्त सृष्टि जिनकी तिरछी नजर है।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

व्रीडोत्तरोष्ठोऽधर एव लोभो, धर्मःस्तनोऽधर्मपथोऽस्य पृष्ठम् ।
कस्तस्य मेढ्रं वृषणौ च मित्रौ, कुक्षिः समुद्रा गिरयोऽस्थिसंघाः ॥३२॥

पदच्छेद—

व्रीडा उत्तरोष्ठः अधरः एव लोभः, धर्मः स्तनः अधर्मपथः अस्य पृष्ठम् ।
कः तस्य मेढ्रम् वृषणौ च मित्रौ, कुक्षिः समुद्राः गिरयः अस्थि संघाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| व्रीडा | १. | लज्जा | कः | १०. | ब्रह्मा |
| उत्तरोष्ठः | ४. | ऊपर का होठ | तस्य, मेढ्रम् | ११. | उस (पुरुष) की, जननेन्द्रिय |
| अधरः | ६. | नीचे का होठ | वृषणौ | १३. | अण्डकोश |
| एव | २. | ही | च | १६. | तथा |
| लोभः, | ५. | लोभ | मित्रौ, | १२. | मित्र और वरुण देवता |
| धर्मः स्तनः | ७. | धर्म स्तन (और) | कुक्षिः | १५. | कोख |
| अधर्म पथः | ८. | अन्याय मार्ग | समुद्राः | १४. | समुद्र |
| अस्य | ३. | इस (पुरुष) के | गिरयः | १७. | पर्वत |
| पृष्ठम् । | ९. | पीठ (है) | अस्थि, संघाः । | १८. | हड्डियों का, समूह (है) |

श्लोकार्थः—लज्जा ही इस पुरुष के ऊपर का होठ, लोभ नीचे का होठ, धर्म स्तन और अन्याय-मार्ग पीठ है। ब्रह्मा उस पुरुष की जननेन्द्रिय, मित्र और वरुण देवता अण्डकोश, समुद्र कोख तथा पर्वत हड्डियों का समूह है।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

नद्योऽस्य नाड्योऽथ तनूरुहाणि, महीरुहा विश्वतनोर्नृपेन्द्र ।
अनन्तवीर्यः श्वसितं मातरिश्वा, गतिर्वयः कर्म गुणप्रवाहः ॥३३॥

पदच्छेद—

नद्यः अस्य नाड्यः अथ तनूरुहाणि, महीरुहाः विश्वतनोः नृपेन्द्र ।
अनन्त वीर्यः श्वसितम् मातरिश्वा, गतिः वयः कर्म गुण प्रवाहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नद्यः, अस्य | २. | नदियाँ, इस | अनन्त वीर्यः | ८. | अपार शक्तिशाली |
| नाड्यः | ४. | नाड़ियाँ | श्वसितम् | १०. | (उसका) स्वास |
| अथ | ५. | तथा | मातरिश्वा, | ९ | वायु |
| तनूरुहाणि, | ७. | रोमावलियाँ (हैं) | गतिः, वयः | ११. | चाल, आयु (और) |
| महीरुहाः | ६. | वृक्ष | कर्म | १४. | कर्म है |
| विश्वतनोः | ३. | विराट् पुरुष की | गुण | १२. | सत्त्व, रज एवं तम की |
| नृपेन्द्र । | १. | हे राजेन्द्र ! | प्रवाहः ॥ | १३. | अविरल धारा |

श्लोकार्थः—हे राजेन्द्र ! नदियाँ इस विराट् पुरुष की नाड़ियाँ तथा वृक्ष रोमावलियाँ हैं। अपार शक्तिशाली वायु उसका श्वास; चाल आयु और सत्त्व, रज एवं तम की अविरल धारा कर्म है।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ईशस्य केशान् विदुरम्बुवाहान्, वासस्तु संध्यां कुरुवर्य भूम्नः ।
अव्यक्तमाहुर्हृदयं मनश्च, स चन्द्रमाः सर्वविकारकोशः ॥३४॥

पदच्छेद—

ईशस्य केशान् विदुः अम्बुवाहान्, वासः तु संध्याम् कुरुवर्य भूम्नः ।
अव्यक्तम् आहुः हृदयम् मनः च, सः चन्द्रमाः सर्व विकार कोशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ईशस्य, केशान् | ४. | पुरुष का, केश | अव्यक्तम् | ८. | प्रकृति को |
| विदुः | ७. | समझा जाता है | आहुः | १०. | कहते हैं |
| अम्बुवाहान्, | २. | बादलों को | हृदयम् | ९. | अन्तःकरण |
| वासः | ६. | वस्त्र | मनः | १४. | मन है |
| तु, संध्याम् | ५. | तथा, संध्या को | च, | ११. | और |
| कुरुवर्य | १. | हे राजन् ! | सः चन्द्रमाः | १३. | वह चन्द्रमा (उसका) |
| भूम्नः । | ३. | विराट् | सर्व विकार कोशः ॥ | १२. | सभी विकारों का भण्डार |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! बादलों को विराट् पुरुष का केश तथा संध्या को वस्त्र समझा जाता है । प्रकृति को अन्तःकरण कहते हैं और सभी विकारों का भण्डार वह चन्द्रमा उसका मन है ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

विज्ञानशक्तिं महिमामनन्ति, सर्वात्मनोऽन्तःकरणं गिरित्रम् ।
अश्वाश्वतर्युष्ट्रगजा नखानि, सर्वे मृगाः पशवः श्रोणिदेशे ॥३५॥

पदच्छेद—

विज्ञान शक्तिम् महिमा आमनन्ति, सर्व आत्मनः अन्तःकरणम् गिरित्रम् ।
अश्व अश्वतरी उष्ट्र गजाः नखानि, सर्वे मृगाः पशवः श्रोणि देशे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विज्ञान शक्तिम् | १. | महत्तत्त्व को | अश्वतरी | ८. | खच्चर |
| महिमा | ५. | अहंकार | उष्ट्र गजाः | ९. | ऊँट और हाथी |
| आमनन्ति, | ६. | मानते हैं | नखानि, | १०. | (उनके) नख हैं (तथा) |
| सर्व आत्मनः | २. | विराट् पुरुष का | सर्वे | ११. | सभी |
| अन्तःकरणम् | ३. | चित्त और | मृगाः | १२. | जंगली |
| गिरित्रम् । | ४. | रुद्र को | पशवः | १३. | पशु |
| अश्व | ७. | घोड़े | श्रोणिदेशे ॥ | १४. | (उनके) कटिभाग में (हैं) |

श्लोकार्थ—महत्तत्त्व को विराट् पुरुष का चित्त और रुद्र को अहंकार मानते हैं । घोड़े, खच्चर, ऊँट और हाथी उनके नख हैं तथा सभी जंगली पशु उनके कटिभाग में स्थित हैं ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

वयांसि तद्व्याकरणं विचित्रं, मनुर्मनीषा मनुजो निवासः ।
गन्धर्वविद्याधरचारणाप्सरः—स्वरस्मृतीरसुरानीकवीर्यः ॥३६॥

पदच्छेद—

वयांसि तद् व्याकरणम् विचित्रम्, मनुः मनीषा मनुजः निवासः ।
गन्धर्व विद्याधर चारण अप्सरः, स्वर स्मृतीः असुर अनीक वीर्यः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वयांसि | १. | पक्षी गण | गन्धर्व, विद्याधर | ९. | गन्धर्व, विद्याधर |
| तद् | २. | उस (विराट् पुरुष) की | चारण | १०. | चारण और |
| व्याकरणम् | ४. | रचना (है) | अप्सरः, | ११ | अप्सरायें |
| विचित्रम्, | ३. | अद्भुत | स्वर | १२. | षड्जादि सातों स्वरों की |
| मनुः | ५. | वैवस्वत मनु | स्मृतीः | १३. | लय और तानें (हैं तथा) |
| मनीषा | ६. | बुद्धि (और) | असुर | १४. | दैत्यों का |
| मनुजः | ७. | मनुष्य | अनीक | १५. | समूह |
| निवासः । | ८. | निवास स्थान (हैं) | वीर्यः ॥ | १६. | पराक्रम (है) |

श्लोकार्थ:—पक्षीगण उस विराट् पुरुष की अद्भुत रचना है, वैवस्वत मनु बुद्धि और मनुष्य निवास स्थान हैं । गन्धर्व, विद्याधर, चारण और अप्सरायें षड्ज इत्यादि सातों स्वरों की लय और तानें हैं तथा दैत्यों का समूह पराक्रम है ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

ब्रह्माननं क्षत्रभुजो महात्मा, विड्रुरङ्घ्रिश्रितकृष्णवर्णः ।
नानाभिधाभीज्यगणोपपन्नो, द्रव्यात्मकः कर्म वितानयोगः ॥३७॥

पदच्छेद—

ब्रह्म आननम् क्षत्रभुजः महात्मा, विड् ऊरुः अङ्घ्रि श्रित कृष्णवर्णः ।
नाना अभिधा अभीज्य गण उपपन्नः, द्रव्य आत्मकः कर्म वितान योगः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्म | १. | ब्राह्मण | नाना अभिधा | १०. | अनेक नामों वाले |
| आननम् | ३. | मुख (हैं) | अभीज्य | ११. | यज्ञों के |
| क्षत्र भुजः | ४. | क्षत्रिय बाहु (हैं) | गण | १२. | समूह का |
| महात्मा, | २. | विराट् पुरुष के | उपपन्नः, | ९. | सम्पन्न होने वाले |
| विड् ऊरुः | ५. | वैश्य जंघा (तथा) | द्रव्य आत्मकः | ८. | होमादि द्रव्यों के द्वारा |
| अङ्घ्रि श्रित | ७. | चरणों में स्थित (हैं) | कर्म | १४. | कर्म (हैं) |
| कृष्णवर्णः । | ६. | शूद्र | वितानयोगः ॥ | १३. | विस्तार (उनके) |

श्लोकार्थ:—ब्राह्मण विराट् पुरुष के मुख हैं, क्षत्रिय बाहु हैं, वैश्य जंघा तथा शूद्र चरणों में स्थित हैं । होमादि द्रव्यों के द्वारा सम्पन्न होने वाले तथा अनेक नामों वाले यज्ञों के समूह का विस्तार उनके कर्म हैं ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

इयानसावीश्वरविग्रहस्य, यः संनिवेशः कथितो मया ते ।
संधार्यतेऽस्मिन् वपुषि स्थविष्ठे, मनः स्वबुद्धया न यतोऽस्ति किंचित् ॥३८॥

पदच्छेद— इयान् असौ ईश्वर विग्रहस्य, यः संनिवेशः कथितः मया ते ।
संधार्यते अस्मिन् वपुषि स्थविष्ठे, मनः स्व बुद्धया न यतः अस्ति किंचित् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इयान् | ७. | इतना बड़ा (है) | अस्मिन् | ८. | इसी |
| असौ | ६. | वह | वपुषि | १०. | शरीर में |
| ईश्वर विग्रहस्य, | १. | विराट् पुरुष के शरीर का | स्थविष्ठे, | ९. | विराट् |
| यः संनिवेशः | २. | जो आकार | मनः स्व बुद्धया | ११. | मन को अपनी बुद्धि से |
| कथितः | ५. | बताया है | न | १५. | नहीं |
| मया | ३. | मैंने | यतः | १३. | क्योंकि (इससे भिन्न) |
| ते । | ४. | आपको | अस्ति | १६. | है |
| संधार्यते | १२. | धारण करते हैं | किंचित् ॥ | १४. | कोई (धारणा का आश्रय) |

श्लोकार्थः—विराट् पुरुष के शरीर का जो आकार मैंने आपको बताया है, वह इतना बड़ा है। इसी विराट् शरीर में अपनी बुद्धि से मन को धारण करते हैं; क्योंकि इससे भिन्न कोई धारणा का आश्रय नहीं है।

## एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

स सर्वधीवृत्त्यनुभूतसर्व, आत्मा यथा स्वप्नजनेक्षितैकः ।
तं सत्यमानन्दनिधिं भजेत, नान्यत्र सज्जेद् यत आत्मपातः ॥३९॥

पदच्छेद— सः सर्व धी वृत्ति अनुभूत सर्वः, आत्मा यथा स्वप्न जन ईक्षित एकः ।
तम् सत्यम् आनन्द निधिम् भजेत, न अन्यत्र सज्जेत् यतः आत्मपातः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ७. | वह | तम् सत्यम् | ९. | उस सत्यस्वरूप |
| सर्व धी वृत्ति | ५. | सभी बुद्धि व्यवहारों से | आनन्द निधिम् | १०. | आनन्द के सागर |
| अनुभूत सर्वः | ६. | सबका अनुभव करने वाला | भजेत, | ११. | भजन करना चाहिए |
| आत्मा | ८. | परमात्मा (एक है) | न | १३. | नहीं |
| यथा | १. | जिस प्रकार | अन्यत्र | १२. | दूसरी वस्तुओं में |
| स्वप्न जन | २. | स्वप्न में मनुष्य | सज्जेत् | १४. | आसक्त होना चाहिए |
| ईक्षित | ४. | देखता है | यतः | १५. | क्योंकि (उससे) |
| एकः । | ३. | एक अपने को ही | आत्मपातः ॥ | १६. | जीवात्मा का पतन(होता है) |

श्लोकार्थः—जिस प्रकार स्वप्न में मनुष्य एक अपने को ही देखता है, उसी प्रकार सब रूपों में सभी बुद्धि व्यवहारों से सबका अनुभव करने वाला वह परमात्मा एक है। उस सत्यस्वरूप आनन्द के सागर परमात्मा का भजन करना चाहिए। दूसरी वस्तुओं में आसक्त नहीं होना चाहिए; क्योंकि उससे जीवात्मा का पतन होता है।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
महापुरुषसंस्थानुवर्णने प्रथमः अध्यायः ॥१॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीयः स्कन्धः

अथ द्वितीयः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

**एवं पुरा धारणयाऽऽत्मयोनि-र्नष्टां स्मृतिं प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ।**
**तथा ससर्जेदममोघदृष्टि-र्यथाप्ययात् प्राग्व्यवसायबुद्धिः ॥१॥**

पदच्छेद— **एवम् पुरा धारणया आत्मयोनिः, नष्टाम् स्मृतिम् प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ।**
**तथा ससर्ज इदम् अमोघ दृष्टिः, यथा अपि अयात् प्राग् व्यवसाय बुद्धिः ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | २. | इस प्रकार की | ससर्ज | १३. | सृष्टि की |
| पुरा | १. | सृष्टि के प्रारम्भ में | इदम् | ११. | इस (संसार) की |
| धारणया | ३. | धारण के द्वारा | अमोघ दृष्टिः, | ८. | सफल दर्शन और |
| आत्मयोनिः, | ७. | ब्रह्माजी ने | यथा अपि | १४. | जैसी कि |
| नष्टाम् स्मृतिम् | ५. | खोई हुई स्मरण शक्ति को | अयात् | १६. | थी |
| प्रत्यवरुध्य | ६. | पाकर | प्राग् | १५. | (प्रलय से) पहले |
| तुष्टात् । | ४. | प्रसन्न किये गये (भगवान्) से | व्यवसाय | ९. | निश्चयात्मक |
| तथा | १२. | वैसी ही | बुद्धिः ॥ | १०. | ज्ञान के द्वारा |

श्लोकार्थ—सृष्टि के प्रारम्भ में इस प्रकार की धारणा के द्वारा प्रसन्न किये गये भगवान् से खोई हुई स्मरण शक्ति को पाकर ब्रह्माजी ने सफल दर्शन और निश्चयात्मक ज्ञान के द्वारा इस संसार की वैसी ही सृष्टि की, जैसी कि प्रलय से पहले थी ।

## द्वितीयः श्लोकः

**शाब्दस्य हि ब्रह्मण एष पन्था, यन्नामभिर्ध्यायति धीरपार्थैः ।**
**परिभ्रमंस्तत्र न विन्दतेऽर्थान्, मायामये वासनया शयानः ॥२॥**

पदच्छेद— **शाब्दस्य हि ब्रह्मणः एषः पन्थाः, यत् नामभिः ध्यायति धीः अपार्थैः ।**
**परिभ्रमन् तत्र न विन्दते अर्थान्, मायामये वासनया शयानः ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शाब्दस्य | १. | शब्द | अपार्थैः । | ८. | झूठे |
| हि | ४. | ही | परिभ्रमन् | १५. | भटकता हुआ |
| ब्रह्मणः | २. | ब्रह्म वेद का | तत्र | १४. | उन (लोकों) में |
| एषः | ३. | यह | न | १७. | नहीं |
| पन्थाः, | ५. | मार्ग (है) | विन्दते | १८. | पाता है |
| यत् | ६. | कि | अर्थान्, | १६. | सच्चे सुख को |
| नामभिः | ९. | नामों के | मायामये | १३. | माया से निर्मित |
| ध्यायति | १०. | चक्कर में पड़ जाती है | वासनया | ११. | वासना से |
| धीः | ७. | बुद्धि | शयानः ॥ | १२. | सोया हुआ (मनुष्य) |

श्लोकार्थ—शब्द-ब्रह्म वेद का यही मार्ग है कि बुद्धि झूठे नामों के चक्कर में पड़ जाती है; फलस्वरूप वासना से सोया हुआ मनुष्य माया से निर्मित उन लोकों में भटकता हुआ सच्चे सुख को नहीं पाता है ।

## तृतीयः श्लोकः

अतः कविर्नामसु यावदर्थः, स्यादप्रमत्तो व्यवसायबुद्धिः ।
सिद्धेऽन्यथार्थे न यतेत तत्र, परिश्रमं तत्र समीक्षमाणः ॥३॥

पदच्छेद—

अतः कविः नामसु यावद् अर्थः, स्यात् अप्रमत्तः व्यवसाय बुद्धिः ।
सिद्धे अन्यथा अर्थे न यतेत तत्र, परिश्रमम् तत्र समीक्षमाणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः | १. | इसलिये | सिद्धे | ११. | प्राप्त हो जाय (तो) |
| कविः | २. | विद्वान् को (चाहिए कि) | अन्यथा | १०. | दूसरे प्रकार से |
| नामसु | ३. | (उन) नामों में | अर्थे | ६. | (यदि) प्रयोजन |
| यावद् अर्थः, | ४. | जितने से प्रयोजन | न यतेत | १६. | प्रयत्न न करे |
| स्यात् | ५. | हो | तत्र, | १५. | उस विषय में |
| अप्रमत्तः | ६. | सावधान होकर | परिश्रमम् | १३. | श्रम को |
| व्यवसाय | ७. | निश्चयात्मक | तत्र | १२. | उसमें |
| बुद्धिः । | ८. | ज्ञान से (उतना ही कर्म करे) | समीक्षमाणः ॥ | १४. | व्यर्थ जानकर |

श्लोकार्थ—इसलिये विद्वान् को चाहिए कि उन नामों में जितने से प्रयोजन हो, सावधान होकर निश्चयात्मक ज्ञान से उतना ही कर्म करे। यदि वह प्रयोजन दूसरे प्रकार से प्राप्त हो जाय तो उसमें श्रम को व्यर्थ जानकर उस विषय में प्रयत्न न करे।

## चतुर्थः श्लोकः

सत्यां क्षितौ किं कशिपोः प्रयासै-र्बाहौ स्वसिद्धे ह्युपबर्हणैः किम् ।
सत्यञ्जलौ किं पुरुधान्नपात्र्या, दिग्वल्कलादौ सति किं दुकूलैः ॥४॥

पदच्छेद—

सत्याम् क्षितौ किम् कशिपोः प्रयासैः, बाहौ स्व सिद्धे हि उपबर्हणैः किम् ।
सति अञ्जलौ किम् पुरुधा अन्नपात्र्या, दिग् वल्कल आदौ सति किम् दुकूलैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत्याम् | २. | रहते | सति | ६. | रहते |
| क्षितौ | १. | पृथ्वी के | अञ्जलौ | ८. | अँजुली के |
| किम् | ४. | क्या (लाभ है) | किम् | ११. | क्या (जरूरत है) |
| कशिपोः,प्रयासैः, | ३. | पलंग के लिए, प्रयत्न करने से | पुरुधा, अन्नपात्र्या, | १०. | बहुत से, बर्तनों की |
| बाहौ, स्वसिद्धे | ५. | बाहुओं के, अपने पास रहते | दिग् वल्कल | १३. | आकाश और वृक्षों की छाल |
| हि | १२. | तथा | आदौ सति | १४. | इत्यादि के रहते |
| उपबर्हणैः | ६. | तकियों की | किम् | १६. | क्या (काम है ?) |
| किम् । | ७. | क्या (आवश्यकता है) | दुकूलैः ॥ | १५. | वस्त्रों का |

श्लोकार्थ— पृथ्वी के रहते पलंग के लिए प्रयत्न करने से क्या लाभ है, बाहुओं के अपने पास रहते तकियों की क्या आवश्यकता है, अँजुली के रहते बहुत से बर्तनों की क्या जरूरत है तथा आकाश और वृक्षों की छाल इत्यादि के रहते वस्त्रों का क्या काम है ?

# पञ्चमः श्लोकः

चीराणि किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां,
नैवाङ्घ्रिपाः परभृतः सरितोऽप्यशुष्यन् ।
रुद्धा गुहाः किमजितोऽवति नोपसन्नान्,
कस्माद् भजन्ति कवयो धनदुर्मदान्धान् ।।५।।

पदच्छेद—

चीराणि किम् पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षाम्,
न एव अङ्घ्रिपाः परभृतः सरितः अपि अशुष्यन् ।
रुद्धाः गुहाः किम् अजितः अवति न उपसन्नान्,
कस्मात् भजन्ति कवयः धन दुर्मद अन्धान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चीराणि | ३. | फटे-पुराने चीथड़े | रुद्धाः | १६. | बन्द कर दी गयी हैं ?(तथा क्या) |
| किम् | १. | क्या (पहनने के लिए) | गुहाः | १५. | गुफायें |
| पथि | २. | रास्ते में | किम् | १४. | क्या (निवास के लिए) |
| न | ४. | नहीं | अजितः | १७. | भगवान् अजित |
| सन्ति | ५. | पड़े हैं ? (क्या) | अवति | २०. | रक्षा करते हैं (फिर) |
| दिशन्ति | १०. | देते हैं ? (क्या) | न | १९. | नहीं |
| भिक्षाम्, | ८. | फलरूप भीख | उपसन्नान्, | १८. | शरणागत जनों की |
| न एव | ९. | नहीं | कस्मात् | २१. | क्यों |
| अङ्घ्रिपाः | ७. | वृक्ष (खाने के लिए) | भजन्ति | २६. | चापलूसी करते हैं |
| परभृतः | ६. | दूसरों के पोषक | कवयः | २२. | विद्वान् लोग |
| सरितः | ११. | नदियाँ | धन | २३. | धन के |
| अपि | १२. | भी | दुर्मद | २४. | घमण्ड में |
| अशुष्यन् । | १३. | सूख गयी हैं ? | अन्धान् ।। | २५. | अन्धे (लोगों) की |

श्लोकार्थ—क्या पहिनने के लिए रास्ते में फटे-पुराने चीथड़े नहीं पड़े हैं ? क्या दूसरों के पोषक वृक्ष खाने के लिए फलरूप भीख नहीं देते हैं ? क्या नदियाँ भी सूख गयी हैं ? क्या निवास के लिए गुफायें बन्द कर दी गयी हैं ? तथा क्या भगवान् अजित शरणागत जनों की रक्षा नहीं करते हैं ? फिर क्यों विद्वान् लोग धन के घमण्ड में अन्धे लोगों की चापलूसी करते हैं ?

# षष्ठः श्लोकः

एवं स्वचित्ते स्वत एव सिद्ध, आत्मा प्रियोऽर्थो भगवाननन्तः ।
तं निर्वृतो नियतार्थो भजेत, संसारहेतूपरमश्च यत्र ॥६॥

पदच्छेद—

एवम् स्व चित्ते स्वतः एव सिद्धः, आत्मा प्रियः अर्थः भगवान् अनन्तः ।
तम् निर्वृतः नियतार्थः भजेत, संसार हेतु उपरमः च यत्र ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार (धारणा से) | तम् | ११. | उनका |
| स्व चित्ते | २. | अपने हृदय में | निर्वृतः | ९. | आनन्द-मग्न (मनुष्य) को |
| स्वतः एव | ७. | अपने आप ही | नियतार्थः | १०. | दृढ़ निश्चय करके |
| सिद्धः, | ८. | विराजमान हो जाते हैं | भजेत, | १२. | भजन करना चाहिए |
| आत्मा | ४. | परमात्मा | संसार हेतु | १५. | जन्म-मरण के कारण का |
| प्रियः अर्थः | ३. | प्रिय मनोरथ | उपरमः | १६. | नाश हो जाता है |
| भगवान् | ५. | भगवान् | च | १३ | क्योंकि |
| अनन्तः । | ६. | श्री हरि | यत्र ॥ | १४. | इस (भजन) से |

श्लोकार्थ—इस प्रकार धारणा करने से अपने हृदय में प्रिय मनोरथ परमात्मा भगवान् श्री हरि अपने आप ही विराजमान हो जाते हैं। आनन्द-मग्न मनुष्य को दृढ़ निश्चय करके उनका भजन करना चाहिए; क्योंकि इस भजन से जन्म-मरण के कारण का नाश हो जाता है।

# सप्तमः श्लोकः

कस्तां त्वनादृत्य परानुचिन्ता—मृते पशूनसतीं नाम युञ्ज्यात् ।
पश्यञ्जनं पतितं वैतरण्यां, स्वकर्मजान् परितापाञ्जुषाणम् ॥७॥

पदच्छेद—

कः ताम् तु अनादृत्य पर अनुचिन्ताम्, ऋते पशून् असतीम् नाम युञ्ज्यात् ।
पश्यन् जनम् पतितम् वैतरण्याम्, स्व कर्मजान् परितापान् जुषाणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः, ताम् | १२. | कौन (व्यक्ति), उस | युञ्ज्यात् । | १६. | आसक्त रहेगा |
| तु | ३. | तथा | पश्यन् | ८. | देखता हुआ |
| अनादृत्य | १४. | अनादर करके | जनम् | ७. | लोगों को |
| पर,अनुचिन्ताम् | १३. | परमात्मा के, चिन्तन का | पतितम् | २. | गिरे हुए |
| ऋते | १०. | छोड़कर | वैतरण्याम्, | १. | वैतरणी में |
| पशून् | ९. | पशुओं को | स्वकर्मजान् | ४. | अपने कर्मों से उत्पन्न |
| असतीम् | १५. | असत् विषयों में | परितापान् | ५. | दुःखों को |
| नाम | ११. | भला | जुषाणम् ॥ | ६. | भोगते हुए |

श्लोकार्थ—वैतरणी में गिरे हुए तथा अपने कर्मों से उत्पन्न दुःखों को भोगते हुए लोगों को देखता हुआ, पशुओं को छोड़कर भला कौन व्यक्ति उस परमात्मा के चिन्तन का अनादर करके असत् विषयों में आसक्त रहेगा ?

## अष्टमः श्लोकः

केचित् स्वदेहान्तर्हृदयावकाशे, प्रादेशमात्रं पुरुषं वसन्तम् ।
चतुर्भुजं कञ्जरथाङ्गशङ्ख—गदाधरं धारणया स्मरन्ति ॥८॥

पदच्छेद—

केचित् स्व देह अन्तर् हृदय अवकाशे, प्रादेशमात्रम् पुरुषम् वसन्तम् ।
चतुर्भुजम् कञ्ज रथाङ्ग शङ्ख, गदाधरम् धारणया स्मरन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| केचित् | १. कुछ लोग | चतुर्भुजम् | ११. चार भुजाधारी |
| स्व देह | २. अपने शरीर के | कञ्ज | ७. कमल |
| अन्तर् हृदय | ३. अन्दर हृदय के | रथाङ्ग | ८. चक्र |
| अवकाशे, | ५. देश में | शङ्ख, | ९. शंख (और) |
| प्रादेशमात्रम् | ४. वित्ता-भर | गदाधरम् | १०. गदा धारण करनेवाले |
| पुरुषम् | १२. परम-पुरुष का | धारणया | १३. धारणा के द्वारा |
| वसन्तम् । | ६. निवास करने वाले (तथा) | स्मरन्ति ॥ | १४. ध्यान करते हैं |

श्लोकार्थ—कुछ लोग अपने शरीर के अन्दर हृदय के वित्ता-भर देश में निवास करने वाले तथा कमल, चक्र, शंख और गदा धारण करनेवाले चार भुजाधारी परम-पुरुष का धारणा के द्वारा ध्यान करते हैं ।

## नवमः श्लोकः

प्रसन्नवक्त्रं नलिनायतेक्षणं, कदम्बकिञ्जल्कपिशङ्गवाससम् ।
लसन्महारत्नहिरण्मयाङ्गदं, स्फुरन्महारत्नकिरीटकुण्डलम् ॥९॥

पदच्छेद— प्रसन्न वक्त्रम् नलिन आयत ईक्षणम्, कदम्ब किञ्जल्क पिशङ्ग वाससम् ।
लसत् महारत्न हिरण्मय अङ्गदम्, स्फुरत् महारत्न किरीट कुण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| प्रसन्न वक्त्रम् | १. प्रसन्न मुख | लसत् | १२. सुशोभित (तथा) |
| नलिन | २. कमल के समान | महारत्न | ९. श्रेष्ठ रत्नों से जड़े हुए |
| आयत | ३. विशाल | हिरण्मय | १०. सुवर्ण के |
| ईक्षणम्, | ४. नेत्र | अङ्गदम्, | ११. बाजूबन्द से |
| कदम्ब | ५. कदम्ब पुष्प के | स्फुरत् | १३. चमकीले |
| किञ्जल्क | ६. पराग के समान | महारत्न | १४. मणियों से जड़े हुए |
| पिशङ्ग | ७. पीले | किरीट | १५. मुकुट और |
| वाससम् । | ८. वस्त्र (और) | कुण्डलम् ॥ | १६. कुण्डलों से युक्त (भगवान् का हृदय में दर्शन करे) |

श्लोकार्थ—प्रसन्न-मुख, कमल के समान विशाल नेत्र, कदम्ब पुष्प के पराग के समान पीले वस्त्र और श्रेष्ठ रत्नों से जड़े हुए सुवर्ण के बाजूबन्द से सुशोभित तथा चमकीले मणियों से जड़े हुए मुकुट और कुण्डलों से युक्त भगवान् का हृदय में दर्शन करें ।

## दशमः श्लोकः

उन्निद्रहृत्पङ्कजकर्णिकालये, योगेश्वरास्थापितपादपल्लवम् ।
श्रीलक्ष्मणं कौस्तुभरत्नकन्धर–मम्लानलक्ष्म्या वनमालयाऽऽचितम् ॥१०॥

पदच्छेद—

उन्निद्र हृत् पङ्कज कर्णिकालये, योगेश्वर आस्थापित पाद पल्लवम् ।
श्रीलक्ष्मणम् कौस्तुभ रत्न कन्धरम्, अम्लान लक्ष्म्या वनमालया आचितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उन्निद्र | ४ | खिले हुए | श्रीलक्ष्मणम् | १०. | श्रीवत्स की सुनहली रेखा |
| हृत् | ५. | हृदय | कौस्तुभ | ११. | कौस्तुभ |
| पङ्कज | ६. | कमल की | रत्न | १२. | मणि (और) |
| कर्णिकालये, | ७. | पंखुड़ियों पर | कन्धरम्, | ९. | (उनका) वक्षःस्थल |
| योगेश्वर | ३. | योगिराजों के | अम्लान | १३. | सदाबहार |
| आस्थापित | ८. | विराजमान हैं | लक्ष्म्या | १४. | शोभावाली |
| पाद | १. | (श्री हरि के) चरण | वनमालया | १५. | वनमाला से |
| पल्लवम् । | २. | कमल | आचितम् ॥ | १६. | सुशोभित है |

श्लोकार्थ—श्री हरि के चरण-कमल योगिराजों के खिले हुए हृदय-कमल की पंखुड़ियों पर विराजमान हैं। उनका वक्षःस्थल श्रीवत्स की सुनहली रेखा, कौस्तुभ मणि और सदाबहार शोभावाली वनमाला से सुशोभित है।

## एकादशः श्लोकः

विभूषितं मेखलयाङ्गुलीयकै-र्महाधनैर्नूपुरकङ्कणादिभिः ।
स्निग्धामलाकुञ्चितनीलकुन्तलै-र्विरोचमानाननहासपेशलम् ॥११॥

पदच्छेद—

विभूषितम् मेखलया अङ्गुलीयकैः, महाधनैः नूपुर कङ्कण आदिभिः ।
स्निग्ध अमल आकुञ्चित नील कुन्तलैः, विरोचमान आनन हास पेशलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विभूषितम् | ७. | सुशोभित है | स्निग्ध | ९. | चिकने |
| मेखलया | १ | (श्री हरि) करधनी | अमल | १०. | कोमल और |
| अङ्गुलीयकैः, | २. | अँगूठी | आकुञ्चित | ११. | घुंघराले (हैं तथा वे) |
| महाधनैः | ३. | वहुमूल्य | नील कुन्तलैः, | ८. | (उनके) काले बाल |
| नूपुर | ४. | पाजेव और | विरोचमान | १२. | दमकते |
| कङ्कण | ५. | कंगन | आनन हास | १३. | मुख एवं मुसकान से |
| आदिभिः । | ६. | आदि आभूषणों से | पेशलम् ॥ | १४. | सुन्दर (लगते हैं) |

श्लोकार्थ—श्री हरि करधनी, अँगूठी, वहुमूल्य पाजेव और कंगन आदि आभूषणों से सुशोभित है। उनके काले बाल चिकने, कोमल और घुंघराले हैं तथा वे दमकते मुख एवं मुसकान से सुन्दर लगते हैं।

## द्वादशः श्लोकः

अदीनलीलाहसितेक्षणोल्लसद्—भ्रूभङ्गसंसूचितभूर्यनुग्रहम् ।
ईक्षेत चिन्तामयमेनमीश्वरं, यावन्मनो धारणयावतिष्ठते ॥१२॥

पदच्छेद— अदीन लीला हसित ईक्षण उल्लसत्, भ्रू भङ्ग संसूचित भूरि अनुग्रहम् ।
ईक्षेत चिन्तामयम् एनम् ईश्वरम्, यावत् मनः धारणया अवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अदीन | २. | खुली | ईक्षेत | १२. | दर्शन करे |
| लीला | १. | लीला से पूर्ण | चिन्तामयम् | ९. | ध्यान में स्थित |
| हसित | ३. | हँसी और | एनम् | १०. | इस |
| ईक्षण | ४. | चितवन से | ईश्वरम्, | ११. | भगवान् का (तबतक) |
| उल्लसत्, | ५. | शोभित | यावत् | १३. | जबतक |
| भ्रू भङ्ग | ६. | तिरछी भौंहों से | मनः | १४. | मन |
| संसूचित | ८. | वर्षा करने वाले | धारणया | १५. | धारणा शक्ति से (उनमें) |
| भूरि अनुग्रहम् । | ७. | अनन्त कृपा की | अवतिष्ठते ॥ | १६. | स्थिर रहे |

श्लोकार्थ—लीला से पूर्ण खुली हँसी और चितवन से शोभित तिरछी भौंहों से अनन्त कृपा की वर्षा करने वाले, ध्यान में स्थित इस भगवान् का तब तक दर्शन करे, जब तक मन धारणा शक्ति से उनमें स्थिर रहे ।

## त्रयोदशः श्लोकः

एकैकशोऽङ्गानि धियानुभावयेत्, पादादि यावद्धसितं गदाभृतः ।
जितं जितं स्थानमपोह्य धारयेत्, परं परं शुद्ध्यति धीर्यथा यथा ॥१३॥

पदच्छेद— एकैकशः अङ्गानि धिया अनुभावयेत्, पाद आदि यावत् हसितं गदाभृतः ।
जितम् जितम् स्थानम् अपोह्य धारयेत्, परम् परम् शुद्ध्यति धीः यथा यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एकैकशः | ७. | एक-एक करके | जितम् जितम् | ९. | (तदनन्तर) ध्यान किये हुए |
| अङ्गानि | ५ | सभी अंगों का | स्थानम् | १०. | अंगों को |
| धिया | ६. | बुद्धि से | अपोह्य | ११. | छोड़कर |
| अनुभावयेत्, | ८. | ध्यान करे | धारयेत्, | १३. | ध्यान करे (उस समय) |
| पाद आदि | २. | पैर से लेकर | परम् परम् | १२. | दूसरे-दूसरे अंगों का |
| यावत् | ४. | तक | शुद्ध्यति | १६. | निर्मल होगी(चित्त स्थिर होगा) |
| हसितम् | ३. | मुख | धीः | १५. | बुद्धि |
| गदाभृतः । | १. | गदाधारी श्री हरि के | यथा यथा ॥ | १४. | जैसे-जैसे |

श्लोकार्थ—गदाधारी श्रीहरि के पैर से लेकर मुख तक सभी अंगों का बुद्धि से एक-एक करके ध्यान करे । तदनन्तर ध्यान किए हुए अंगों को छोड़कर दूसरे-दूसरे अंगों का ध्यान करे । उस समय जैसे-जैसे बुद्धि निर्मल होगी, चित्त स्थिर होगा ।

## चतुर्दशः श्लोकः

यावन्न जायेत परावरेऽस्मिन् विश्वेश्वरे द्रष्टरि भक्तियोगः ।
तावत्स्थवीयः पुरुषस्य रूपं, क्रियावसाने प्रयतः स्मरेत ।।१४।।

पदच्छेद— यावत् न जायेत पर अवरे अस्मिन् विश्व ईश्वरे द्रष्टरि भक्ति योगः ।
तावत् स्थवीयः पुरुषस्य रूपम्, क्रिया अवसाने प्रयतः स्मरेत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावत् | ५. | जब तक | तावत् | ९. | तब तक |
| न | ७. | नहीं | स्थवीयः | १३. | विराट् |
| जायेत | ८. | उत्पन्न हो जाय | पुरुषस्य | १२. | आदि पुरुष के |
| पर अवरे | १. | परात्पर | रूपम्, | १४. | रूप का |
| अस्मिन्, | ३. | इस | क्रिया | १०. | (नित्य नैमित्तिक) कर्म के |
| विश्व ईश्वरे | ४. | जगदीश में | अवसाने | ११. | अन्त में |
| द्रष्टरि | २. | द्रष्टा रूप | प्रयतः | १५. | नियम से |
| भक्ति योगः । | ६. | भक्ति योग | स्मरेत ।। | १६ | स्मरण करना चाहिए |

श्लोकार्थ—परात्पर द्रष्टारूप इस जगदीश में जब तक भक्ति-योग उत्पन्न नहीं हो जाय, तब तक नित्य-नैमित्तिक कर्म के अन्त में आदि पुरुष के विराट् रूप का नियम से स्मरण करना चाहिए ।

## पञ्चदशः श्लोकः

स्थिरं सुखं चासनमाश्रितो यति—र्यदा जिहासुरिममङ्ग लोकम् ।
काले च देशे च मनो न सज्जयेत्, प्राणान् नियच्छेन्मनसा जितासुः ।।१५।।

पदच्छेद— स्थिरम् सुखम् च आसनम् आश्रितः यतिः, यदा जिहासुः इमम् अङ्ग लोकम् ।
काले च देशे च मनः न सज्जयेत्, प्राणान् नियच्छेत् मनसा जित असुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्थिरम् सुखम् च | ७. | स्थायी और सुखदायी | काले च देशे | १०. | काल और देश में |
| आसनम् | ८. | आसन पर | च | १३. | तथा |
| आश्रितः | ९. | बैठकर | मनः | ११. | मन को |
| यतिः, | २. | साधक | न सज्जयेत् | १२. | आसक्त न करे |
| यदा | ३. | जब | प्राणान् | १७. | प्राणों को |
| जिहासुः | ६. | छोड़ना चाहे (तब) | नियच्छेत् | १८. | वश में करे |
| इमम् | ४. | इस | मनसा | १४ | मन से |
| अङ्ग | १. | हे परीक्षित् ! | जित | १६. | जीतकर |
| लोकम् । | ५. | संसार को | असुः ।। | १५. | इन्द्रियों को |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! साधक जब इस संसार को छोड़ना चाहे, तब स्थायी और सुखदायी आसन पर बैठकर काल और देश में मन को आसक्त न करे तथा मन से इन्द्रियों को जीतकर प्राणों को वश में करे ।

## षोडशः श्लोकः

मनः स्वबुद्ध्यामलया नियम्य, क्षेत्रज्ञ एतां निनयेत् तमात्मनि ।
आत्मानमात्मन्यवरुध्य धीरो, लब्धोपशान्तिर्विरमेत कृत्यात् ॥१६॥

पदच्छेद— मनः स्व बुद्ध्या अमलया नियम्य, क्षेत्रज्ञे एताम् निनयेत् तम् आत्मनि ।
आत्मानम् आत्मनि अवरुध्य धीरः, लब्ध उपशान्तिः विरमेत कृत्यात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनः | ४. | मन को | आत्मानम् | १०. | अन्तरात्मा को |
| स्व | १. | अपनी | आत्मनि | ११. | परमात्मा में |
| बुद्ध्या | ३. | बुद्धि से | अवरुध्य | १२. | लीन करके |
| अमलया | २. | निर्मल | धीरः, | १५. | (वह)धीर पुरुष |
| नियम्य, | ५. | वश में करके | लब्ध | १४. | पाया हुआ |
| क्षेत्रज्ञे | ७. | क्षेत्रज्ञ में (तथा) | उपशान्तिः | १३. | परम शान्ति को |
| एताम् | ६. | (मन से युक्त) इस बुद्धि को | विरमेत | १७. | छोड़ देवे |
| निनयेत् | ९. | लीन करे (तदनन्तर) | कृत्यात् ॥ | १६. | सांसारिक कर्मों को |
| तम् आत्मनि । | ८. | उस (क्षेत्रज्ञ) को अन्तरात्मा में | | | |

श्लोकार्थ—अपनी निर्मल बुद्धि से मन को वश में करके मन से युक्त इस बुद्धि को क्षेत्रज्ञ में तथा उस क्षेत्रज्ञ को अन्तरात्मा में लीन करे। तदनन्तर अन्तरात्मा को परमात्मा में लीन करके परम शान्ति को पाया हुआ वह धीर पुरुष सांसारिक कर्मों को छोड़ देवे।

## सप्तदशः श्लोकः

न यत्र कालोऽनिमिषां परः प्रभुः, कुतो नु देवा जगतां य ईशिरे ।
न यत्र सत्त्वं न रजस्तमश्च, न वै विकारो न महान् प्रधानम्॥१७॥

पदच्छेदः— न यत्र कालः अनिमिषाम् परः प्रभुः, कुतः नु देवाः जगताम् ये ईशिरे ।
न यत्र सत्त्वम् न रजः तमः च, न वै विकारः न महान् प्रधानम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ६. | नहीं है | ये | ८. | जो |
| यत्र | १. | जहाँ | ईशिरे । | १०. | शासन करते हैं (वे) |
| कालः | ५. | काल | न यत्र सत्त्वम् | १३. | न जहाँ सत्त्वगुण (है) |
| अनिमिषाम् | २. | देवताओं पर | न रजः | १४. | न रजोगुण (है) |
| परः | ४. | महान् | तमः | १६ | तमोगुण (है) |
| प्रभुः, | ३. | शासन करने वाला | च, | १५. | और (न) |
| कुतः | १२. | कैसे (रह सकते हैं ?) | न | १७. | न (वहाँ) |
| नु | ७. | फिर | वै | २०. | और (वहाँ) |
| देवाः | ११. | देवता (वहाँ) | विकारः | १८. | अहंकार है |
| जगताम् | ९. | संसार के प्राणियों पर | न महान् | १९. | न महत्तत्त्व (है) |
| | | | प्रधानम् ॥ | २१. | प्रकृति (भी नहीं है) |

श्लोकार्थ—जहाँ देवताओं पर शासन करने वाला महान् काल नहीं है, फिर जो संसार के प्राणियों पर शासन करते हैं, वे देवता वहाँ कैसे रह सकते हैं ? न जहाँ सत्त्वगुण है, न रजोगुण है और न तमोगुण है। न वहाँ अहंकार है, न महत्तत्त्व है और वहाँ प्रकृति भी नहीं है।

## अष्टादशः श्लोकः

परं पदं वैष्णवमामनन्ति तद्, यन्नेति नेतीत्यतदुत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यमनन्यसौहृदा, हृदोपगुह्यार्हपदं पदे पदे ॥१८॥

पदच्छेद— परम् पदम् वैष्णवम् आमनन्ति तद्, यद् न इति न इति इति अतद् उत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यम् अनन्य सौहृदा, हृदा उपगुह्य अर्हं पदम् पदे पदे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परम् परम् | १७. | परम धाम | उत्सिसृक्षवः । | ५. | छोड़ने की इच्छा रखने वाले |
| वैष्णवम् | १६. | भगवान् विष्णु का | विसृज्य | ७. | त्याग करके (तथा) |
| आमनन्ति | १८. | कहते हैं | दौरात्म्यम् | ६. | शरीरादि में आत्मबुद्धि का |
| तद्, | १५. | उसको | अनन्य | १३. | अनुपम |
| यद् | ८. | जिस | सौहृदा, | १४. | प्रेम से परिपूर्ण (रहते हैं) |
| न इति | १. | यह नहीं है | हृदा | ११. | हृदय से |
| न इति | २. | यह नहीं है | उपगुह्य | १२. | आलिङ्गन करके |
| इति | ३. | इस प्रकार | अर्हं पदम् | ९. | पूज्य स्वरूप का |
| अतद् | ४. | (परमात्मा से) भिन्न वस्तुओं को | पदे पदे ॥ | १०. | पग-पग पर |

श्लोकार्थ—"यह नहीं है, यह नहीं है" इस प्रकार परमात्मा से भिन्न वस्तुओं को छोड़ने की इच्छा रखने वाले योगीजन शरीरादि में आत्मबुद्धि का त्याग करके तथा जिस पूज्य स्वरूप का पग-पग पर हृदय से आलिङ्गन करके अनुपम प्रेम से परिपूर्ण रहते हैं, उसको भगवान् विष्णु का परम धाम कहते हैं ।

## एकोनविंशः श्लोकः

इत्थं मुनिस्तूपरमेद् व्यवस्थितो, विज्ञानदृग्वीर्यसुरन्धिताशयः ।
स्वपार्ष्णिनाऽऽपीड्य गुदं ततोऽनिलं, स्थानेषु षट्सून्नमयेज्जितक्लमः ॥१९॥

पदच्छेद—इत्थम् मुनिः तु उपरमेत् व्यवस्थितः, विज्ञान दृक् वीर्य सुरन्धित आशयः ।
स्व पार्ष्णिना आपीड्य गुदम् ततः अनिलम्, स्थानेषु षट्सु उन्नमयेत् जित क्लमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इत्थम् | ८. | इस प्रकार | स्व पार्ष्णिना | १० | (वह पहले) अपनी एड़ी से |
| मुनिः तु | ७. | योगी को तो | आपीड्य | १२ | दबा लेवे |
| उपरमेत् | ९. | शरीर त्यागना चाहिए | गुदम् | ११. | गुदा को |
| व्यवस्थितः, | ६. | ब्रह्मनिष्ठ | ततः | १३. | तदनन्तर |
| विज्ञान | १ | ज्ञान | अनिलम्, | १५. | प्राणवायु को |
| दृक् | २. | दृष्टि के | स्थानेषु | १७. | स्थानों से |
| वीर्य | ३. | बल से | षट्सु | १६ | छहों |
| सुरन्धित | ५. | नष्ट किये हुए | उन्नमयेत् | १८. | ऊपर ले जावे |
| आशयः । | ४. | वासनाओं को | जित क्लमः ॥ | १४. | बिना घबराहट के |

श्लोकार्थ—ज्ञान-दृष्टि के बल से वासनाओं को नष्ट किये हुए ब्रह्मनिष्ठ योगी को तो इस प्रकार शरीर त्यागना चाहिए— वह पहले अपनी एड़ी से गुदा को दबा लेवे, तदनन्तर बिना घबराहट के प्राणवायु को छहों स्थानों से ऊपर ले जावे ।

# विंशः श्लोकः

**नाभ्यां स्थितं हृद्यधिरोप्य तस्मा—दुदानगत्योरसि तं नयेन्मुनिः ।**
**ततोऽनुसन्धाय धिया मनस्वी, स्वतालुमूलं शनकैर्नयेत ॥२०॥**

पदच्छेद—नाभ्याम् स्थितम् हृदि अधिरोप्य तस्मात्, उदान गत्या उरसि तम् नयेत् मुनिः ।
ततः अनुसन्धाय धिया मनस्वी, स्व तालु मूलम् शनकैः नयेत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाभ्याम् | २. | नाभिचक्र (मणिपूरक) में | मुनिः । | १. | योगिपुरुष |
| स्थितम् | ३. | विद्यमान (प्राणवायु) को | ततः | ११. | उसके बाद |
| हृदि | ४. | हृदय (अनाहत चक्र) में | अनुसन्धाय | १४ | सोच-समझकर |
| अधिरोप्य | ५. | रोक कर | धिया | १३. | बुद्धि से |
| तस्मात्, | ६. | वहाँ से | मनस्वी, | १२. | बुद्धिमान् योगी |
| उदानगत्या | ८. | उदान वायु के द्वारा | स्व | १६. | अपने |
| उरसि | ९. | कण्ठदेश (विशुद्ध चक्र) में | तालु मूलम् | १७. | विशुद्ध चक्र के अग्रभाग में |
| तम् | ७. | उसे | शनकैः | १५. | धीरे से (उस वायु को) |
| नयेत् | १०. | ले जावे | नयेत ॥ | १८. | चढ़ा देवे |

श्लोकार्थ—योगिपुरुष नाभिचक्र (मणिपूरक) में विद्यमान प्राणवायु को हृदय (अनाहत चक्र) में रोक कर वहाँ से उसे उदान वायु के द्वारा कण्ठदेश (विशुद्ध चक्र) में ले जावे। उसके बाद बुद्धिमान् योगी बुद्धि से सोच-समझकर धीरे से उस वायु को अपने विशुद्ध चक्र के अग्रभाग में चढ़ा देवे।

# एकविंशः श्लोकः

**तस्माद् भ्रुवोरन्तरमुन्नयेत, निरुद्धसप्तायतनोऽनपेक्षः ।**
**स्थित्वा मुहूर्तार्धमकुण्ठदृष्टि—र्निर्भिद्य मूर्धन् विसृजेत्परं गतः ॥२१॥**

पदच्छेद— तस्मात् भ्रुवोः अन्तरम् उन्नयेत, निरुद्ध सप्त आयतनः अनपेक्षः ।
स्थित्वा मुहूर्तं अर्धम् अकुण्ठ दृष्टिः, निर्भिद्य मूर्धन् विसृजेत् परम् गतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | ५. | वहाँ से | मुहूर्तं | १४. | घड़ी |
| भ्रुवोः | ६. | भौहों के | अर्धम् | १३. | एक |
| अन्तरम् | ७. | मध्य (आज्ञा चक्र) में | अकुण्ठ | ९. | विशुद्ध |
| उन्नयेत, | ८. | ले जावे (वहाँ) | दृष्टिः, | १०. | ज्ञान-दृष्टि से |
| निरुद्ध | ४. | बन्द करके (उस प्राणवायु को) | निर्भिद्य | १७. | भेदन कर (शरीर को) |
| सप्त | २. | (इन) सातों | मूर्धन् | १६. | ब्रह्मरन्ध्र का |
| आयतनः | ३. | छिद्रों को | विसृजेत् | १८. | छोड़ देवे |
| अनपेक्षः । | १. | इच्छा-रहित (वह योगी) | परम् | ११. | परमात्मा में |
| स्थित्वा | १५. | विश्राम करके (तदनन्तर) | गतः ॥ | १२. | स्थित हुआ (योगी) |

श्लोकार्थ—इच्छा-रहित वह योगी दो आँख, दो कान, दो नासा छिद्र और एक मुख इन सातों छिद्रों को बन्द करके उस प्राणवायु को वहाँ से भौहों के मध्य आज्ञा चक्र में ले जावे। वहाँ विशुद्ध ज्ञान-दृष्टि से परमात्मा में स्थित हुआ योगी एक घड़ी विश्राम करके तदनन्तर ब्रह्मरन्ध्र का भेदन कर शरीर को छोड़ देवे।

# द्वाविंशः श्लोकः

यदि प्रयास्यन् नृप पारमेष्ठ्यं, वैहायसानामुत यद् विहारम् ।
अष्टाधिपत्यं गुणसन्निवाये, सहैव गच्छेन्मनसेन्द्रियैश्च ॥२२॥

पदच्छेदः— यदि प्रयास्यन् नृप पारमेष्ठ्यम्, वैहायसानाम् उत यद् विहारम् ।
अष्ट आधिपत्यम् गुण सन्निवाये, सह एव गच्छेत् मनसा इन्द्रियैः च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदि | २. | यदि (योगिपुरुष) | आधिपत्यम् | ९. | स्वामी होकर |
| प्रयास्यन् | ४. | जाने की इच्छा करता है | गुण | ६. | सत्त्व, रजस् और तमोगुण का |
| नृप | १. | हे राजन् ! | सन्निवाये, | ७. | समूह रूप ब्रह्माण्ड में |
| पारमेष्ठ्यम्, | ३. | ब्रह्मलोक में | सह | १६. | साथ लेकर |
| वैहायसानाम् | १०. | आकाशचारी सिद्धों के | एव | १७. | ही |
| उत | ५. | अथवा | गच्छेत् | १८. | (शरीर से) निकले |
| यद् | ११. | प्रसिद्ध | मनसा | १३. | मन |
| विहारम् । | १२. | आनन्द को | इन्द्रियैः | १५. | इन्द्रियों को |
| अष्ट | ८. | आठों सिद्धियों का | च ॥ | १४. | और |

श्लोकार्थ :—हे राजन् ! यदि योगिपुरुष ब्रह्मलोक में जाने की इच्छा करता है अथवा सत्त्व, रजस् और तमोगुण का समूह रूप ब्रह्माण्ड में आठों सिद्धियों का स्वामी होकर आकाशचारी सिद्धों के प्रसिद्ध आनन्द को पाना चाहता है तो वह मन और इन्द्रियों को साथ लेकर ही शरीर से निकले ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

योगेश्वराणां गतिमाहुरन्त-र्बहिस्त्रिलोक्याः पवनान्तरात्मनाम् ।
न कर्मभिस्तां गतिमाप्नुवन्ति, विद्यातपोयोगसमाधिभाजाम् ॥२३॥

पदच्छेदः— योगेश्वराणाम् गतिम् आहुः अन्तर्, बहिः त्रिलोक्याः पवन अन्तरात्मनाम् ।
न कर्मभिः ताम् गतिम् आप्नुवन्ति, विद्या तपः योग समाधि भाजाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| योगेश्वराणाम् | ६. | योगिराजों को | न | १५. | नहीं |
| गतिम् | १०. | विचरण का | कर्मभिः | १२. | (मनुष्य) केवल कर्मों के द्वारा |
| आहुः | ११. | अधिकार है (किन्तु) | ताम् | १३. | उस |
| अन्तर्, | ८. | अन्दर और | गतिम् | १४. | गति को |
| बहिः | ९. | बाहर | आप्नुवन्ति, | १६. | पा सकते हैं |
| त्रिलोक्याः | ७. | त्रिलोकी के | विद्या तपः | १. | ज्ञान तपस्या |
| पवन | ४. | वायु के (समान सूक्ष्म) | योग समाधि | २. | योग और समाधि का |
| अन्तरात्मनाम् । | ५. | आत्मावाले | भाजाम् ॥ | ३. | सेवन करने वाले (तथा) |

श्लोकार्थ :—ज्ञान, तपस्या, योग और समाधि का सेवन करने वाले तथा वायु के समान सूक्ष्म आत्मावाले योगिराजों को त्रिलोकी के अन्दर और बाहर विचरण का अधिकार है; किन्तु मनुष्य केवल कर्मों के द्वारा उस गति को नहीं पा सकते हैं ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

वैश्वानरं याति विहायसा गतः, सुषुम्णया ब्रह्मपथेन शोचिषा।
विधूतकल्कोऽथ हरेरुदस्तात्, प्रयाति चक्रं नृप शैशुमारम् ॥२४॥

पदच्छेद— वैश्वानरम् याति विहायसा गतः, सुषुम्णया ब्रह्मपथेन शोचिषा।
विधूत कल्कः अथ हरेः उदस्तात्, प्रयाति चक्रम् नृप शैशुमारम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैश्वानरम् | ७. | अग्निलोक में | कल्कः | ९. | पापों को |
| याति | ८. | जाता है (वहाँ) | अथ | ११. | उसके बाद |
| विहायसा | ६. | आकाश मार्ग से | हरेः | १३. | भगवान् विष्णु के |
| गतः, | ५. | जाता हुआ (योगी) | उदस्तात्, | १२. | ऊपर स्थित |
| सुषुम्णया | २. | सुषुम्णा के द्वारा | प्रयाति | १६. | पहुँचता है |
| ब्रह्मपथेन | ४. | ब्रह्म लोक को | चक्रम् | १५. | लोक में |
| शोचिषा। | ३. | ज्योतिर्मय | नृप | १. | हे राजन्! |
| विधूत | १०. | समाप्त करके | शैशुमारम् ॥ | १४. | शिशुमार |

श्लोकार्थ—हे राजन्! सुषुम्णा के द्वारा ज्योतिर्मय ब्रह्मलोक को जाता हुआ योगी आकाशमार्ग से अग्निलोक में जाता है। वहाँ पापों को समाप्त करके उसके बाद ऊपर स्थित भगवान् विष्णु के शिशुमार लोक में पहुँचता है।

# पञ्चविंशः श्लोकः

तद् विश्वनाभिं त्वतिवर्त्य विष्णो-रणीयसा विरजेनात्मनैकः।
नमस्कृतं ब्रह्मविदामुपैति, कल्पायुषो यद् विबुधा रमन्ते ॥२५॥

पदच्छेद— तद् विश्व नाभिम् तु अतिवर्त्य विष्णोः, अणीयसा विरजेन आत्मना एकः।
नमस्कृतम् ब्रह्म विदाम् उपैति, कल्प आयुषः यद् विबुधाः रमन्ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ५. | उस (शिशुमार चक्र) को | एकः। | १०. | अकेले ही |
| विश्व | २. | विश्व ब्रह्माण्ड के | नमस्कृतम् | १२. | वन्दित (महर्लोक) में |
| नाभिम् | ३. | घूमने का केन्द्र | ब्रह्मविदाम् | ११. | ब्रह्मज्ञानियों के द्वारा |
| तु | १. | तदनन्तर (योगी पुरुष) | उपैति, | १३. | पहुँचता है |
| अतिवर्त्य | ६. | पार करके | कल्प | १५, | कल्प पर्यन्त |
| विष्णोः, | ४. | भगवान् विष्णु के | आयुषः | १६. | जीवित रहने वाले |
| अणीयसा | ७. | अत्यन्त सूक्ष्म (और) | यद् | १४. | जहाँ पर |
| विरजेन | ८. | निर्मल | विबुधाः | १७. | देव-गण |
| आत्मना | ९. | शरीर से | रमन्ते ॥ | १८. | विहार करते हैं |

श्लोकार्थ—तदनन्तर योगी पुरुष विश्व-ब्रह्माण्ड के घूमने का केन्द्र भगवान् विष्णु के उस शिशुमार चक्र को पार करके अत्यन्त सूक्ष्म और निर्मल शरीर से अकेले ही ब्रह्मज्ञानियों के द्वारा वन्दित महर्लोक में पहुँचता है, जहाँ पर कल्प पर्यन्त जीवित रहने वाले देव-गण विहार करते हैं।

## षड्विंशः श्लोकः

अथो अनन्तस्य मुखानलेन, दन्दह्यमानं स निरीक्ष्य विश्वम् ।
निर्याति सिद्धेश्वरजुष्टधिष्ण्यं, यद् द्वैपरार्ध्यं तदु पारमेष्ठ्यम् ॥२६॥

पदच्छेद— अथो अनन्तस्य मुख अनलेन, दन्दह्यमानम् सः निरीक्ष्य विश्वम् ।
निर्याति सिद्धेश्वर जुष्ट धिष्ण्यम्, यद् द्वैपरार्ध्यम् तद् उ पारमेष्ठ्यम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अथो | १. उसके बाद (प्रलय काल में) | निर्याति | १६. चला जाता है |
| अनन्तस्य | २. भगवान् शेषनाग के | सिद्धेश्वर | ६. सिद्धों के द्वारा |
| मुख | ३. मुख की | जुष्ट | १०. सेवित |
| अनलेन, | ४. आग से | धिष्ण्यम्, | ११. स्थान वाले |
| दन्दह्यमानम् | ६. भस्म होते | यद् | १४. जो कि |
| सः | ८. वह (योगी पुरुष) | द्वैपरार्ध्यम् | १५. दो परार्ध वर्ष तक |
| निरीक्ष्य | ७. देखकर | तद् उ | १२. उसी |
| विश्वम् । | ५. नीचे के लोकों को | पारमेष्ठ्यम् | १३. ब्रह्मलोक को |

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रलय काल में भगवान् शेषनाग के मुख की आग से नीचे के लोकों को भस्म होते देखकर वह योगी पुरुष सिद्धों के द्वारा सेवित स्थानवाले उसी ब्रह्मलोक को, जो कि दो परार्ध वर्ष तक स्थित रहता है, चला जाता है।

## सप्तविंशः श्लोकः

न यत्र शोको न जरा न मृत्यु—र्नार्तिर्न चोद्वेग ऋते कुतश्चित् ।
यच्चित्ततोऽदः कृपयानिदंविदां, दुरन्तदुःखप्रभवानुदर्शनात् ॥२७॥

पदच्छेद— न यत्र शोकः न जरा न मृत्युः, न आर्तिः न च उद्वेगः ऋते कुतश्चित् ।
यत् चित्ततः अदः कृपया अनिदम् विदाम्, दुरन्त दुःख प्रभव अनु दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| न | १३. न | कुतश्चित् । | १२. किसी से |
| यत्र | ११. वहाँ (किसी को) | यत् | ८. जो |
| शोकः | १४. दुःख (है) | चित्ततः | ९. हार्दिक (व्यथा है उसे) |
| न जरा | १५. न बुढ़ापा (है) | अदः | १. उस (ब्रह्मलोक) को |
| न मृत्युः, | १६. न मृत्यु (है) | कृपया | ७. दयावश |
| न आर्तिः | १७. न भय (है) | अनिदम् | २. वास्तविक रूप से न |
| न | १९. न ही | विदाम्, | ३. जानने वाले (लोगों के) |
| च | १८. और | दुरन्त दुःख | ४. घोर संकट-स्वरूप |
| उद्वेगः | २०. घबराहट (है) | प्रभव | ५. जन्म-मरण को |
| ऋते | १०. छोड़कर | अनुदर्शनात् ॥ | ६. देखकर (ब्रह्मलोकवासी) |

श्लोकार्थ—उस ब्रह्मलोक को वास्तविक रूप से न जाननेवाले लोगों के घोर संकट-स्वरूप जन्म-मरण को देखकर ब्रह्मलोकवासी लोगों में दयावश जो हार्दिक व्यथा है, उसे छोड़कर वहाँ किसी को किसी से न दुःख है, न बुढ़ापा है, न मृत्यु है, न भय है और न ही घबराहट है।

## अष्टाविंशः श्लोकः

ततो विशेषं प्रतिपद्य निर्भय-स्तेनात्मनापोऽनलमूर्तिरत्वरन् ।
ज्योतिर्मयो वायुमुपेत्य काले, वाय्वात्मना खं बृहदात्मलिङ्गम् ॥२८॥

पदच्छेद— ततः विशेषम् प्रतिपद्य निर्भयः, तेन आत्मना आपः अनल मूर्तिः अत्वरन् ।
ज्योतिर्मयः वायुम् उपेत्य काले, वायु आत्मना खम् बृहत् आत्मन् लिङ्गम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ततः | १. ब्रह्मलोक का भोग कर लेने पर | ज्योतिर्मयः | ९. | तैजसरूप को |
| विशेषम् | ३. सूक्ष्म शरीर को | वायुम् | १०. | वायुरूप में |
| प्रतिपद्य | ४. प्राप्त करके | उपेत्य | ११. | विलीन करके |
| तिर्भयः, | २. अभय हुआ (वह योगी) | काले, | १२. | समय आने पर |
| तेन आत्मना | ६. उस पार्थिव शरीर को | वायु आत्मना | १३. | वायु शरीर को |
| आपः | ७. (जल में) जलीय शरीर को | खम् | १६. | आकाशतत्त्व में (विलीन करे) |
| अनल मूर्तिः | ८. तेज में (तथा) | बृहत् | १५. | महान् |
| अत्वरन् । | ५. स्थिरता के साथ | आत्मन्लिङ्गम् ॥ | १४. | परमात्मा का बोध कराने वाले |

श्लोकार्थ—ब्रह्मलोक का भोग कर लेने पर अभय हुआ वह योगी सूक्ष्म शरीर को प्राप्त करके स्थिरता के साथ उस पार्थिव शरीर को जल में, जलीय-शरीर को तेज में तथा तैजस-रूप को वायुरूप में विलीन करके समय आने पर वायु शरीर को परमात्मा का बोध कराने वाले महान् आकाश तत्त्व में विलीन करे।

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

घ्राणेन गन्धं रसनेन वै रसं, रूपं तु दृष्टया श्वसनं त्वचैव ।
श्रोत्रेण चोपेत्य नभोगुणत्वं, प्राणेन चाकूतिमुपैति योगी ॥२९॥

पदच्छेद— घ्राणेन गन्धम् रसनेन वै रसम्, रूपम् तु दृष्टया श्वसनम् त्वचा एव ।
श्रोत्रेण च उपेत्य नभोगुणत्वम्, प्राणेन च आकूतिम् उपैति योगी ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| घ्राणेन | ३. नासिका इन्द्रिय को | एव । | १४. | ही |
| गन्धम् | ४. गन्ध तन्मात्रा में | श्रोत्रेण | १२. | श्रवणेन्द्रिय को |
| रसनेन | ५. जिह्वा को | च | १६. | तदनन्तर |
| वै | १. आवरण भेदन के बाद | उपेत्य | १५. | मिलाकर |
| रसम्, | ६. रस तन्मात्रा में | नभोगुणत्वम्, | १३. | शब्द तन्मात्रा में |
| रूपम् | ८. रूप तन्मात्रा में | प्राणेन | १७. | कर्मेन्द्रियों को |
| तु | ११. तथा | च | १८. | भी |
| दृष्टया | ७. नेत्रेन्द्रिय को | आकूतिम् | १९. | क्रियाशक्ति में |
| श्वसनम् | १०. स्पर्श तन्मात्रा में | उपैति | २०. | लीन करे |
| त्वचा | ९. त्वग् इन्द्रिय को | योगी ॥ | २. | योगी पुरुष |

श्लोकार्थ—आवरण भेदन के बाद योगी पुरुष नासिका इन्द्रिय को गन्ध तन्मात्रा में, जिह्वा को रस तन्मात्रा में, नेत्रेन्द्रिय को रूप तन्मात्रा में, त्वग् इन्द्रिय को स्पर्श तन्मात्रा में तथा श्रवणेन्द्रिय को शब्द तन्मात्रा में ही मिलाकर तदनन्तर कर्मेन्द्रियों को भी क्रियाशक्ति में लीन करे।

# त्रिंशः श्लोकः

स भूतसूक्ष्मेन्द्रियसंनिकर्षं, मनोमयं देवमयं विकार्यम् ।
संसाद्य गत्या सह तेन याति, विज्ञानतत्त्वं गुणसंनिरोधम् ॥३०॥

पदच्छेद सः भूत सूक्ष्म इन्द्रिय संनिकर्षम्, मनोमयम् देवमयम् विकार्यम् ।
संसाद्य गत्या सह तेन याति, विज्ञान तत्त्वम् गुण संनिरोधम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वह (योगी पुरुष) | संसाद्य | ८. | लीन करके |
| भूत सूक्ष्म | २. | पञ्च तन्मात्राओं को | गत्या | ११. | गति के द्वारा |
| इन्द्रिय | ४. | इन्द्रियों को | सह | १०. | साथ |
| संनिकर्षम्, | ६. | (इनके) अधिष्ठाता को | तेन | ९. | उस (त्रिविध अहंकार) के |
| मनोमयम् | ७. | सात्त्विक अहंकार में | याति | १४. | पहुँचता है |
| देवमयम् | ५. | राजस अहंकार में (तथा) | विज्ञानतत्त्वम् | १३. | महत्तत्त्व में |
| विकार्यम् । | ३. | तामस अहंकार में | गुण संनिरोधम् | १२. | तीनों गुणों से रहित |

श्लोकार्थ—वह योगी पुरुष पञ्च तन्मात्राओं को तामस अहंकार में, इन्द्रियों को राजस अहंकार में तथा इनके अधिष्ठाता को सात्त्विक अहंकार में लीन करके उस त्रिविध अहंकार के साथ गति के द्वारा तीनों गुणों से रहित महत्तत्त्व में पहुँचता है ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

तेनात्मनाऽऽत्मानमुपैति शान्त—मानन्दमानन्दमयोऽवसाने ।
एतां गतिं भागवतीं गतो यः, स वै पुनर्नेह विषज्जतेऽङ्ग ॥३१॥

पदच्छेद— तेन आत्मना आत्मानम् उपैति शान्तम्, आनन्दम् आनन्दमयः अवसाने ।
एताम् गतिम् भागवतीम् गतः यः, सः वै पुनः न इह विषज्जते अङ्ग ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेन | ४. | उसी | भागवतीम् | १२. | भगवतसंबन्धी |
| आत्मना | ५. | सूक्ष्म शरीर से | गतः | १४. | पाया है |
| आत्मानम् | ८. | परमात्मा को | यः, | १०. | जिसने |
| उपैति | ९. | प्राप्त करता है | सः | १६. | वह (पुरुष) |
| शान्तम्, | ६. | शान्त और | वै | १५. | निश्चयपूर्वक |
| आनन्दम् | ७. | आनन्द स्वरूप | पुनः | १७. | फिर से |
| आनन्दमयः | २. | आनन्द रूप (वह योगी) | न | १९. | नहीं |
| अवसाने । | ३. | प्रलय काल में | इह | १८. | इस संसार में |
| एताम् | ११. | इस | विषज्जते | २०. | फँसता है |
| गतिम् | १३. | गति को | अङ्ग ॥ | १ | हे परीक्षित् ! |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! आनन्द रूप वह योगी प्रलय काल में उसी सूक्ष्म शरीर से शान्त और आनन्दस्वरूप परमात्मा को प्राप्त करता है । जिसने इस भगवतसंबन्धी गति को पाया है, निश्चयपूर्वक वह पुरुष फिर से इस संसार में नहीं फँसता है ।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

एते सृती ते नृप वेद गीते, त्वयाभिपृष्टे ह सनातने च।
ये वै पुरा ब्रह्मण आह पृष्ट, आराधितो भगवान् वासुदेवः ॥ ३२ ॥

पदच्छेद— एते सृती ते नृप वेद गीते, त्वया अभिपृष्टे ह सनातने च।
ये वै पुरा ब्रह्मणे आह पृष्टः, आराधितः भगवान् वासुदेवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एते | ८. | इन दोनों | च | ६. | और |
| सृती | ६. | मुक्ति मार्गों को | ये वै | १७. | इन्हीं दोनों (मार्गों) का |
| ते | १०. | तुमसे (कहा है) | पुरा | ११. | सत्ययुग में |
| नृप | १. | हे राजन् ! | ब्रह्मणे | १६. | ब्रह्मा जी से |
| वेद गीते, | ४. | वेदों में वर्णित | आह | १८. | वर्णन किया था |
| त्वया | २. | तुम्हारे | पृष्टः, | १३. | पूछने पर |
| अभिपृष्टे | ३. | पूछने पर (मैंने) | आराधितः | १२. | प्रसन्न करके |
| ह | ५. | प्रसिद्ध | भगवान् | १४. | भगवान् |
| सनातने | ७. | सनातन | वासुदेवः ॥ | १५. | विष्णु ने |

श्लोकार्थ:—हे राजन ! तुम्हारे पूछने पर मैंने वेदों में वर्णित, प्रसिद्ध और सनातन इन दोनों मुक्ति-मार्गों को तुमसे कहा है। सत्ययुग में प्रसन्न करके पूछने पर भगवान् विष्णु ने ब्रह्मा जी से इन्हीं दोनों मार्गों का वर्णन किया था।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न ह्यतोऽन्यः शिवः पन्था विशतः संसृताविह।
वासुदेवे भगवति भक्तियोगो यतो भवेत् ॥ ३३ ॥

पदच्छेद— न हि अतः अन्यः शिवः पन्थाः, विशतः संसृतौ इह।
वासुदेवे भगवति, भक्तियोगः यतः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ८. | नहीं | संसृतौ | २. | संसार में |
| हि | ६. | है | इह। | १. | इस |
| अतः | ४. | इसके | वासुदेवे | १२. | वासुदेव में |
| अन्यः | ५. | अतिरिक्त दूसरा | भगवति | ११. | भगवान् |
| शिवः | ६. | कल्याणकारी | भक्तियोगः | १३. | भक्तियोग |
| पन्थाः, | ७. | मार्ग | यतः | १०. | जिससे |
| विशतः | ३. | प्रवेश करने वाले लोगों के लिए | भवेत् ॥ | १४. | हो जाय |

श्लोकार्थ:—इस संसार में प्रवेश करने वाले लोगों के लिए इसके अतिरिक्त दूसरा कल्याणकारी मार्ग नहीं है, जिससे भगवान् वासुदेव में भक्तियोग हो जाय।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

भगवान् ब्रह्म कात्स्न्र्येन त्रिरन्वीक्ष्य मनीषया ।
तदध्यवस्यत् कूटस्थो रतिरात्मन् यतो भवेत् ।।३४।।

पदच्छेद— भगवान् ब्रह्म कात्स्न्र्येन, त्रिः अन्वीक्ष्य मनीषया ।
तद् अध्यवस्यत् कूटस्थः, रतिः आत्मन् यतः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | १. | भगवान् | तद् | ७. | उस (साधन) का |
| ब्रह्म | २. | ब्रह्मा जी ने | अध्यवस्यत् | ८. | निश्चय किया |
| कात्स्न्र्येन | ३. | सम्पूर्ण (वेदों) का | कूटस्थः, | ११. | अचल |
| त्रिः | ५. | तीन बार | रतिः | १२. | प्रेम |
| अन्वीक्ष्य | ६. | अध्ययन करके | आत्मन् | १०. | परमात्मा में |
| मनीषया। | ४. | सावधानी के साथ | यतः | ९. | जिससे |
| | | | भवेत् ।। | १३. | हो सके |

श्लोकार्थ —भगवान् ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण वेदों का सावधानी के साथ तीन बार अध्ययन करके उस साधन का निश्चय किया, जिससे परमात्मा में अचल प्रेम हो सके।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

भगवान् सर्वभूतेषु लक्षितः स्वात्मना हरिः ।
दृश्यैर्बुद्धयादिभिर्द्रष्टा लक्षणैरनुमापकैः ।।३५।।

पदच्छेद— भगवान् सर्व भूतेषु, लक्षितः स्वात्मना हरिः ।
दृश्यै बुद्धि आदिभिः द्रष्टा, लक्षणैः अनुमापकैः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | ५. | भगवान् | दृश्यैः | १०. | प्रत्यक्ष |
| सर्व | १. | सभी | बुद्धि | ८. | बुद्धि |
| भूतेषु, | २. | प्राणियों में | आदिभिः | ९. | इत्यादि |
| लक्षितः | ४. | ज्ञात होने वाले | द्रष्टा, | १२. | साक्षिरूप से सिद्ध (हैं) |
| स्वात्मना | ३. | आत्मा रूप से | लक्षणैः | ११. | साधनों के द्वारा |
| हरिः । | ६. | वासुदेव | अनुमापकैः ।। | ७. | अनुमान कराने वाले |

श्लोकार्थ —सभी प्राणियों में आत्मा रूप से ज्ञात होने वाले भगवान् वासुदेव अनुमान कराने वाले बुद्धि इत्यादि प्रत्यक्ष साधनों के द्वारा साक्षिरूप से सिद्ध हैं।

# षट्त्रिंशः श्लोकः

तस्मात् सर्वात्मना राजन् हरिः सर्वत्र सर्वदा ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यो भगवान्नृणाम् ।। ३६ ।।

पदच्छेद— तस्मात् सर्व आत्मना राजन्, हरिः सर्वत्र सर्वदा ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मर्तव्यः भगवान् नृणाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. इसलिए | श्रोतव्यः | ९. | श्रवण |
| सर्व आत्मना | ६. सभी प्रकार से | कीर्तितव्यः | १०. | कीर्तन |
| राजन्, | २. हे परीक्षित् | च, | ११. | और |
| हरिः | ८. श्री हरि का | स्मर्तव्यः | १२. | स्मरण करना चाहिए |
| सर्वत्र | ५. सब जगह | भगवान् | ७. | भगवान् |
| सर्वदा । | ४. हमेशा | नृणाम् ।। | ३. | मनुष्यों को |

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! मनुष्यों को हमेशा सब जगह सभी प्रकार से भगवान् श्रीहरि का श्रवण, कीर्तन और स्मरण करना चाहिए ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

पिबन्ति ये भगवत आत्मनः सतां, कथामृतं श्रवणपुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषयविदूषिताशयं, व्रजन्ति तच्चरणसरोरुहान्तिकम् ।। ३७ ।।

पदच्छेद— पिबन्ति ये भगवतः आत्मनः सताम्, कथा अमृतम् श्रवण पुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषय विदूषित आशयम्, व्रजन्ति तत् चरण सरोरुह अन्तिकम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पिबन्ति | ८. पान करते हैं | पुनन्ति | १२. | पवित्र कर देते हैं (तथा) |
| ये | १. जो (लोग) | ते | ९. | वे (लोग) |
| भगवतः | ६. भगवान् के | विषय, विदूषित | १०. | विषय-भोगों से, मलिन |
| आत्मनः | ५. परमात्मा | आशयम्, | ११. | अन्तःकरण को |
| सताम्, | २. सज्जनों से वर्णित (और) | व्रजन्ति | १६. | पहुँच जाते हैं |
| कथा, अमृतम् | ७. कथारूपी, अमृतरस का | तत् चरण | १३. | उन (प्रभु) के चरण |
| श्रवण, पुटेषु | ३. कान रूपी, दोनों में | सरोरुह | १४. | कमल के |
| सम्भृतम् । | ४. पूरित | अन्तिकम् ।। | १५. | समीप |

श्लोकार्थ—जो लोग सज्जनों से वर्णित और कानरूपी दोनों में पूरित परमात्मा भगवान् के कथारूपी अमृतरस का पान करते हैं, वे लोग विषय-भोगों से मलिन अन्तःकरण को पवित्र कर देते हैं तथा उन प्रभु के चरण-कमल के समीप पहुँच जाते हैं ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
पुरुषसंस्थावर्णनं नाम द्वितीयः अध्यायः ।। २ ।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीयः स्कन्धः

अथ तृतीयः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

एवमेतन्निगदितं पृष्टवान् यद् भवान् मम ।
नृणां यन्म्रियमाणानां मनुष्येषु मनीषिणाम् ॥ १ ॥

पदच्छेद— एवम् एतद् निगदितम्, पृष्टवान् यद् भवान् मम ।
नृणाम् यद् म्रियमाणानाम्, मनुष्येषु मनीषिणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ११. | इस प्रकार | मम । | २. | मुझसे |
| एतद् | १०. | उसे | नृणाम् | ९. | मनुष्यों को क्या करना चाहिए |
| निगदितम् | १२. | बता दिया गया | यद् | ५. | कि |
| पृष्टवान् | ४. | पूछा था | म्रियमाणानाम् | ६. | मरते समय |
| यद् | ३. | जो | मनुष्येषु | ७. | मनुष्यों में |
| भवान् | १. | आपने | मनीषिणाम् ॥ | ८. | बुद्धिमान् |

श्लोकार्थ—आपने मुझसे जो पूछा था कि मरते समय मनुष्यों में बुद्धिमान् मनुष्यों को क्या करना चाहिए ? उसे इस प्रकार बता दिया गया ।

## द्वितीयः श्लोकः

ब्रह्मवर्चसकामस्तु यजेत ब्रह्मणस्पतिम् ।
इन्द्रमिन्द्रियकामस्तु प्रजाकामः प्रजापतीन् ॥ २ ॥

पदच्छेद— ब्रह्मवर्चस कामः तु, यजेत ब्रह्मणस्पतिम् ।
इन्द्रम् इन्द्रिय कामः तु, प्रजा कामः प्रजापतीन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्म | १. | ब्रह्म | इन्द्रम् | ८. | इन्द्र की |
| वर्चस | २. | तेज का | इन्द्रिय | ६. | इन्द्रिय बल का |
| कामः | ३. | इच्छुक (मनुष्य) | कामः | ७. | इच्छुक |
| तु | ५. | और | तु | ९. | तथा |
| यजेत | १२. | उपासना करे | प्रजाकामः | १०. | संतान का अभिलाषी |
| ब्रह्मणस्पतिम् । | ४. | बृहस्पति की | प्रजापतीन् ॥ | ११. | प्रजापतियों की |

श्लोकार्थ—ब्रह्मतेज का इच्छुक मनुष्य बृहस्पति की और इन्द्रिय-बल का इच्छुक इन्द्र की तथा संतान का अभिलाषी प्रजापतियों की उपासना करे ।

# तृतीयः श्लोकः

देवीं मायां तु श्रीकामस्तेजस्कामो विभावसुम् ।
वसुकामो वसून् रुद्रान् वीर्यकामोऽथ वीर्यवान् ॥३॥

पदच्छेद—

देवीम् मायाम् तु श्रीकामः, तेजः कामः विभावसुम् ।
वसु कामः वसून् रुद्रान्, वीर्य कामः अथ वीर्यवान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवीम् | ४. | देवी की | वसु कामः | ८. | धन की कामना से |
| मायाम् | ३. | माया | वसून् | ६. | वसुओं की |
| तु | ५. | तथा | रुद्रान् | १२ | रुद्रों की (उपासना करें) |
| श्रीकामः | २. | लक्ष्मी की कामना से | वीर्य कामः | ११. | बल की कामना से |
| तेजः कामः | ६. | तेज की इच्छा से | अथ | १०. | और |
| विभावसुम् । | ७. | अग्नि की | वीर्यवान् ॥ | १. | वीर पुरुष |

श्लोकार्थः—वीर पुरुष लक्ष्मी की कामना से माया देवी की तथा तेज की इच्छा से अग्नि की, धन की कामना से वसुओं की और बल की कामना से रुद्रों की उपासना करे ।

# चतुर्थः श्लोकः

अन्नाद्यकामस्त्वदितिं स्वर्गकामोऽदितेः सुतान् ।
विश्वान् देवान् राज्यकामः साध्यान् संसाधको विशाम् ॥४॥

पदच्छेद—

अन्नाद्य कामः तु अदितिम्, स्वर्गकामः अदितेः सुतान् ।
विश्वान् देवान् राज्य कामः, साध्यान् संसाधकः विशाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्नाद्य कामः | १. | अनाज की कामना से | विश्वान् | ७. | विश्वे |
| तु | ६. | तथा | देवान् | ८. | देवों की |
| अदितिम् | २. | अदिति देवमाता की | राज्य कामः | ६. | राज्य की कामना से |
| स्वर्गकामः | ३. | स्वर्ग की कामना से | साध्यान् | १२. | साध्य देवों की (उपासना करे) |
| अदितेः | ४. | अदिति के | संसाधकः | ११. | अनुकूल करने की इच्छा से |
| सुतान् । | ५. | पुत्र देवताओं की | विशाम् ॥ | १०. | प्रजाओं को |

श्लोकार्थः—अनाज की कामना से अदिति देवमाता की, स्वर्ग की कामना से अदिति के पुत्र देवताओं की, राज्य की कामना से विश्वे देवों की तथा प्रजाओं को अनुकल करने की इच्छा से साध्य देवों की उपासना करे ।

# पञ्चमः श्लोकः

आयुष्कामोऽश्विनौ देवौ पुष्टिकाम इलां यजेत् ॥
प्रतिष्ठाकामः पुरुषो रोदसी लोकमातरौ ॥५॥

पदच्छेद—

आयुः कामः अश्विनौ देवौ, पुष्टि कामः इलाम् यजेत् ।
प्रतिष्ठा कामः पुरुषः, रोदसी लोकमातरौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आयुः कामः | १. आयु की इच्छा वाला (मनुष्य) | प्रतिष्ठा | ६. सम्मान का |
| अश्विनौ | २. अश्विनी कुमार | कामः | ७. अभिलाषी |
| देवौ | ३. देवों की | पुरुषः | ८. मनुष्य |
| पुष्टि कामः | ४. पुष्टि का इच्छुक | रोदसी | ९. आकाश (तथा) |
| इलाम् | ५. पृथ्वी की (और) | लोक | १०. लोक |
| यजेत् । | १२. उपासना करे | मातरौ ॥ | ११. माता पृथ्वी की |

श्लोकार्थ—आयु की इच्छा वाला मनुष्य अश्विनी कुमार देवों की, पुष्टि का इच्छुक पृथ्वी की और सम्मान का अभिलाषी मनुष्य आकाश तथा लोकमाता पृथ्वी की उपासना करे ।

# षष्ठः श्लोकः

रूपाभिकामो गन्धर्वान् स्त्रीकामोऽप्सर उर्वशीम् ।
आधिपत्यकामः सर्वेषां यजेत परमेष्ठिनम् ॥६॥

पदच्छेद—

रूप अभिकामः गन्धर्वान्, स्त्री कामः अप्सरः उर्वशीम् ।
आधिपत्य कामः सर्वेषाम्, यजेत परमेष्ठिनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| रूप | १. सौन्दर्य की | उर्वशीम् । | ६. उर्वशी |
| अभिकामः | २. अभिलाषा से | आधिपत्य | ९. स्वामी होने की |
| गन्धर्वान् | ३. गन्धर्वों की | कामः | १०. कामना से |
| स्त्री | ४. स्त्री प्राप्ति की | सर्वेषाम् | ८. सबका |
| कामः | ५. कामना से | यजेत | १२. आराधना करनी चाहिए |
| अप्सरः | ७. अप्सरा की (तथा) | परमेष्ठिनम् ॥ | ११. ब्रह्मा जी की |

श्लोकार्थ—सौन्दर्य की अभिलाषा से गन्धर्वों की, स्त्री-प्राप्ति की कामना से उर्वशी अप्सरा की तथा सबका स्वामी होने की कामना से ब्रह्मा जी की आराधना करनी चाहिए ।

## सप्तमः श्लोकः

यज्ञं यजेद् यशस्कामः कोशकामः प्रचेतसम् ।
विद्याकामस्तु गिरिशं दाम्पत्यार्थ उमां सतीम् ॥७॥

**पदच्छेद—**

यज्ञम् यजेत् यशः कामः, कोश कामः प्रचेतसम् ।
विद्या कामः तु गिरिशम्, दाम्पत्य अर्थः उमाम् सतीम् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यज्ञम् | २. | यज्ञ भगवान् की | कामः | ६. | इच्छा से |
| यजेत् | १२. | आराधना करनी चाहिए | तु | ८. | तथा |
| यशः कामः | १. | कीर्ति की कामना से | गिरिशम् | ७. | भगवान् शंकर की |
| कोश कामः | ३. | खजाने की लालसा से | दाम्पत्य अर्थः | ९. | पति-पत्नी में प्रेम के निमित्त |
| प्रचेतसम् | ४. | वरुण की | उमाम् | ११. | पार्वती की |
| विद्या । | ५. | विद्या-प्राप्ति की | सतीम् ॥ | १०. | सती |

**श्लोकार्थ**—कीर्ति की कामना से यज्ञ भगवान् की, खजाने की लालसा से वरुण की, विद्या-प्राप्ति की इच्छा से भगवान् शंकर की तथा पति-पत्नी में प्रेम के निमित्त सती पार्वती की आराधना करनी चाहिए ।

## अष्टमः श्लोकः

धर्मार्थं उत्तमश्लोकं तन्तुं तन्वन् पितॄन् यजेत् ।
रक्षाकामः पुण्यजनानोजस्कामो मरुद्गणान् ॥८॥

**पदच्छेद—**

धर्मार्थः उत्तम श्लोकम्, तन्तुम् तन्वन् पितॄन् यजेत् ।
रक्षा कामः पुण्यजनान्, ओजः कामः मरुद् गणान् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्मार्थः | १. | धर्म के लिए | रक्षा | ६. | रक्षा की |
| उत्तम श्लोकम् | २. | भगवान् विष्णु की | कामः | ७. | कामना से |
| तन्तुम् | ३. | वंश परम्परा की | पुण्यजनान् | ८. | यक्षों की (और) |
| तन्वन् | ४. | वृद्धि के लिए | ओजः | ९. | बल-प्राप्ति की |
| पितॄन् | ५. | पितरों की | कामः | १०. | इच्छा से |
| यजेत् । | १२. | उपासना करनी चाहिए | मरुद्गणान् ॥ | ११. | मरुद्गणों की |

**श्लोकार्थ**—धर्म के लिए भगवान् विष्णु की, वंश-परम्परा की वृद्धि के लिए पितरों की, रक्षा की कामना से यक्षों की और बल-प्राप्ति की इच्छा से मरुद्गणों की उपासना करनी चाहिए ।

## नवमः श्लोकः

राज्यकामो मनून् देवान् निर्ऋतिं त्वभिचरन् यजेत् ।
कामकामो यजेत् सोममकामः पुरुषं परम् ॥९॥

पदच्छेद—

राज्य कामः मनून् देवान्, निर्ऋतिम् तु अभिचरन् यजेत् ।
काम कामः यजेत् सोमम्, अकामः पुरुषम् परम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| राज्य कामः | १. | राज्य की कामना से | यजेत् । | ७. | आराधना करे |
| मनून् | २. | मन्वन्तर के अधिपति | काम कामः | ८. | भोगों की लालसा से |
| देवान् | ३. | देवों की | यजेत् | १३. | उपासना करे |
| निर्ऋतिम् | ६. | निर्ऋति की | सोमम् | ९. | सोम की (और) |
| तु | ४. | तथा | अकामः | १०. | निष्काम होने पर |
| अभिचरन् | ५. | अभिचार की इच्छा से | पुरुषम् | १२. | पुरुष नारायण की |
| | | | परम् ॥ | ११. | आदि |

श्लोकार्थ—राज्य की कामना से मन्वन्तर के अधिपति देवों की तथा अभिचार की इच्छा से निर्ऋति की आराधना करे। भोगों की लालसा से सोम की और निष्काम होने पर आदि पुरुष नारायण की उपासना करे।

## दशमः श्लोकः

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन, यजेत पुरुषं परम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अकामः सर्व कामः वा, मोक्ष कामः उदारधीः ।
तीव्रेण भक्ति योगेन, यजेत पुरुषम् परम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अकामः | ३. | निष्काम भावना | तीव्रेण | ७. | दृढ़ |
| सर्व कामः | ४. | समस्त कामना | भक्ति | ८. | भक्ति |
| वा | ५. | अथवा | योगेन | ९. | भाव के द्वारा |
| मोक्ष कामः | ६. | मुक्ति की इच्छा से | यजेत | १२. | उपासना करे |
| उदार | १. | विशाल | पुरुषम् | ११. | पुरुष नारायण की |
| धीः | २. | बुद्धिशाली (मनुष्य) | परम् ॥ | १०. | परम |

श्लोकार्थ—विशाल बुद्धिशाली मनुष्य निष्काम भावना, समस्त काभना अथवा मुक्ति की इच्छा से दृढ़ भक्ति-भाव के द्वारा परम पुरुष नारायण की उपासना करे।

## एकादशः श्लोकः

एतावानेव यजतामिह निःश्रेयसोदयः ।
भगवत्यचलो भावो यद् भागवतसङ्गतः ॥ ११ ॥

पदच्छेद— एतावान् एव यजताम्, इह निःश्रेयसा उदयः ।
भगवति अचलः भावः, यद् भागवत सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ४. | यह | भगवति | १०. | भगवान में |
| एव | ५. | ही | अचलः | ११. | दृढ़ |
| यजताम् | २. | उपासना करने वाले मनुष्यों की | भावः | १२. | भक्ति (हो जाय) |
| इह | १. | इस संसार में | यद् | ७. | कि |
| निः श्रेयसा | ३. | परम कल्याण के साथ | भागवत | ८. | भगवद्भक्तों की |
| उदयः । | ६. | उन्नति है | सङ्गतः । | ९. | संगति से (उनकी) |

श्लोकार्थ—इस संसार में उपासना करने वाले मनुष्यों की परम कल्याण के साथ यही उन्नति है कि भगवद्भक्तों की संगति से उनकी भगवान् में दृढ़ भक्ति हो जाय ।

## द्वादशः श्लोकः

ज्ञानं यदा प्रतिनिवृत्तगुणोर्मिचक्र-मात्मप्रसाद उत यत्र गुणेष्वसङ्गः ।
कैवल्यसम्मतपथस्त्वथ भक्तियोगः, को निर्वृतो हरिकथासु रतिं न कुर्यात् ॥ १२ ॥

पदच्छेद— ज्ञानम् यदा प्रतिनिवृत्त गुण ऊर्मि चक्रम्, आत्मन् प्रसादः उत यत्र गुणेषु, असङ्गः ।
कैवल्य सम्मत पथः तु अथ भक्ति योगः, कः निर्वृतः हरि कथासु रतिम् न कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ५. | ज्ञान | कैवल्य | १२. | कैवल्य मोक्ष का |
| यदा | ६. | जब (हो जाता है तब) | सम्मत पथः | १३. | मान्य साधन |
| प्रतिनिवृत्त | ४. | समाप्त कर देने वाला | तु | १५. | अतः |
| गुण | २. | तीनों गुणों के | अथ | ११. | तदनन्तर |
| ऊर्मि चक्रम्, | ३. | तरंग जाल को | भक्ति योगः, | १४. | भगवद्भक्ति (मिल जाती है) |
| आत्म प्रसादः | ७. | आत्मा प्रसन्न हो जाती है | कः | १६. | कौन |
| उत | ८. | तथा | निर्वृतः | १७. | आत्मानन्दी (मनुष्य) |
| यत्र | १. | जिस (सत्संगति) से | हरि कथासु | १८. | श्रीहरि की कथाओं में |
| गुणेषु | ९. | विषयों में | रतिम् | १९. | प्रेम |
| असङ्गः । | १०. | आसक्ति नहीं रहती है | न कुर्यात् । | २३. | नहीं करेगा |

श्लोकार्थ—जिस सत्संगति से तीनों गुणों के तरंग-जाल को समाप्त कर देने वाला ज्ञान जब हो जाता है तब आत्मा प्रसन्न हो जाती है तथा विषयों में आसक्ति नहीं रहती है । तदनन्तर कैवल्य-मोक्ष का मान्य-साधन भगवद्भक्ति मिल जाती है; अतः कौन आत्मानन्दी मनुष्य श्री हरि की कथाओं में प्रेम नहीं करेगा ।

## त्रयोदशः श्लोकः

शौनक उवाच

इत्यभिव्याहृतं राजा निशम्य भरतर्षभः ।
किमन्यत्पृष्टवान् भूयो वैयासकिमृषिं कविम् ॥१३॥

पदच्छेद—

इति अभिव्याहृतम् राजा, निशम्य भरत ऋषभः ।
किम् अन्यत् पृष्टवान् भूयः, वैयासकिम् ऋषिम् कविम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ३. | इस प्रकार | अन्यत् | १०. | और |
| अभिव्याहृतम् | ४. | कही गयी (बात) को | पृष्टवान् | १२. | पूछा था। |
| राजा | २. | राजा परीक्षित् ने | भूयः | ९. | फिर |
| निशम्य | ५. | सुनकर | वैयासकिम् | ७. | व्यास पुत्र शुकदेव |
| भरत ऋषभः । | १. | भरतवंशियों में श्रेष्ठ | ऋषिम् | ८. | मुनि से |
| किम् | ११. | क्या | कविम् ॥ | ६. | दूरदर्शी |

श्लोकार्थ—भरतवंशियों में श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ने इस प्रकार कही गयी बात को सुनकर दूरदर्शी व्यास पुत्र शुकदेव मुनि से फिर और क्या पूछा था ?

## चतुर्दशः श्लोकः

एतच्छुश्रूषतां विद्वन् सूत नोऽर्हसि भाषितुम् ।
कथा हरिकथोदर्काः सतां स्युः सदसि ध्रुवम् ॥१४॥

पदच्छेद—

एतद् शुश्रूषताम् विद्वन्, सूत नः अर्हसि भाषितुम् ।
कथा हरिकथा उदर्काः, सताम् स्युः सदसि ध्रुवम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | ५. | उस बात को | कथाः | १०. | वार्तालाप |
| शुश्रूषताम् | ३. | सुनने के इच्छुक | हरिकथा | १२. | श्री हरि की लीला कथा को |
| विद्वन् | १. | हे विद्वान् | उदर्काः | १३. | बताने वाला |
| सूत | २. | सूत जी ! (आप) | सताम् | ८. | सन्तों की |
| नः | ४. | हम लोगों से | स्युः | १४. | होगा |
| अर्हसि | ७. | कृपा करें (क्योंकि) | सदसि | ९ | सभा में |
| भाषितुम् । | ६. | बताने की | ध्रुवम् ॥ | ११. | निश्चय ही |

श्लोकार्थ—हे विद्वान् सूत जी ! आप सुनने के इच्छुक हम लोगों से उस बात को बताने की कृपा करें; क्योंकि सन्तों की सभा में वार्तालाप निश्चय ही श्री हरि की लीला कथा को बताने वाला होगा ।

## पञ्चदशः श्लोकः

स वै भागवतो राजा पाण्डवेयो महारथः ।
बालक्रीडनकैः क्रीडन् कृष्णक्रीडां य आददे ॥ १५ ॥

पदच्छेद—

सः वै भागवतः राजा, पाण्डवेयः महारथः ।
बाल क्रीडनकैः क्रीडन्, कृष्ण क्रीडाम् यः आददे ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | ५. वे | बाल | ८. बाल्यावस्था में |
| वै | १. प्रसिद्ध है कि | क्रीडनकैः | ९. खिलौनों से |
| भागवतः | २. भगवद् भक्त (एवम्) | क्रीडन्, | १०. खेलते हुए |
| राजा, | ६. राजा परीक्षित् | कृष्ण क्रीडाम् | ११. श्रीकृष्ण की लीला का ही |
| पाण्डवेयः | ४. पाण्डु नन्दन | यः | ७. जो |
| महारथः । | ३. महारथी | आददे । | १२. रस पान करते थे |

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि भगवद्भक्त एवम् महारथी पाण्डुनन्दन वे राजा परीक्षित् जो बाल्यावस्था में खिलौनों से खेलते हुए श्रीकृष्ण की लीला का ही रस पान करते थे ।

## षोडशः श्लोकः

वैयासकिश्च भगवान् वासुदेवपरायणः ।
उरुगायगुणोदाराः सतां स्युर्हि समागमे ॥ १६ ॥

पदच्छेद—

वैयासकिः च भगवान्, वासुदेव परायणः ।
उरुगाय गुण उदाराः, सताम् स्युः हि समागमे ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| वैयासकिः | २. शुकदेव मुनि (भी) | गुण | ९. लीलाओं की |
| च | ५. अतः | उदाराः | ११. चर्चा |
| भगवान् | १. भगवान् | सताम् | ६. सन्तों की |
| वासुदेव | ३. श्रीकृष्ण के | स्युः | १२. हुई होगी |
| परायणः । | ४. परम अनुरागी (हैं) | हि | १०. ही |
| उरुगाय | ८. श्री हरि के | समागमे । | ७. संगति में |

श्लोकार्थ—भगवान् शुकदेव मुनि भी श्रीकृष्ण के परम अनुरागी हैं, अतः सन्तों की संगति में श्री हरि के लीलाओं की ही चर्चा हुई होगी ।

## सप्तदशः श्लोकः

आयुर्हरति वै पुंसामुद्यन्नस्तं च यन्नसौ ।
तस्यर्ते यत्क्षणो नीत उत्तमश्लोकवार्तया ॥१७॥

पदच्छेद—

आयुः हरति वै पुंसाम्, उद्यन् अस्तम् च यन् असौ ।
तस्य ऋते यत् क्षणः नीतः, उत्तम श्लोक वार्तया ॥

शब्दार्थ

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आयुः | ९. | समय को | असौ । | १४. | वे (भगवान् सूर्य) |
| हरति | १६. | समाप्त कर रहे हैं | तस्य | ७. | उससे |
| वै | १५. | निश्चय ही | ऋते | ८. | अतिरिक्त |
| पुंसाम् | ६. | मनुष्यों के | यत् | ३. | जो |
| उद्यन् | १०. | उगते हुए | क्षणः | ४. | समय |
| अस्तम् | १२. | अस्ताचल को | नीतः | ५. | बिताया गया |
| च | ११. | और | उत्तमश्लोक | १. | श्री हरि की |
| यन् | १३. | जाते हुए | वार्तया ॥ | २. | चर्चा के द्वारा |

श्लोकार्थ—श्री हरि की चर्चा के द्वारा जो समय बिताया गया, मनुष्यों के उससे अतिरिक्त समय को उगते हुए और अस्ताचल को जाते हुए वे भगवान् सूर्य निश्चय ही समाप्त कर रहे हैं।

## अष्टादशः श्लोकः

तरवः किं न जीवन्ति भस्त्राः किं न श्वसन्त्युत ।
न खादन्ति न मेहन्ति किं ग्रामपशवोऽपरे ॥१८॥

पदच्छेद—

तरवः किम् न जीवन्ति, भस्त्राः किम् न श्वसन्ति उत ।
न खादन्ति न मेहन्ति, किम् ग्राम पशवः अपरे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तरवः | २. | वृक्ष | उत । | ५. | अथवा |
| किम् | १. | क्या | न खादन्ति | १४. | नहीं खाते हैं (और) |
| न | ३. | नहीं | न | १५. | नहीं |
| जीवन्ति | ४. | जीते हैं | मेहन्ति | १२. | मल-मूत्र त्यागते हैं |
| भस्त्राः | ७. | लुहार की धौंकनी | किम् | १०. | क्या |
| किम् | ६. | क्या | ग्राम | ११. | गाँव के |
| न | ८ | नहीं | पशवः | १३. | पशु |
| श्वसन्ति | ९. | साँस लेती है | अपरे ॥ | १२. | दूसरे |

श्लोकार्थ—क्या वृक्ष नहीं जीते हैं ? अथवा क्या लुहार की धौंकनी साँस नहीं लेती है ? क्या गाँव के दूसरे पशु नहीं खाते हैं और मल-मूत्र नहीं त्यागते हैं ?

# एकोनविंशः श्लोकः

श्वविड्वराहोष्ट्रखरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत्कर्ण पथोपेतो जातु नाम गदाग्रजः ॥ १६ ॥

पदच्छेद—

श्वन् विड्वराह उष्ट्र खरैः, संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत् कर्ण पथ उपेतः, जातु नाम गदाग्रजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्वन् | ६. | कुत्ते | न | ५. | नहीं |
| विड्वराह | १०. | ग्राम सूकर | यत् | १. | जिसके |
| उष्ट्र खरैः | ११. | ऊँट और गधों से भी | कर्णपथ | २. | कान के छिद्र में. |
| संस्तुतः | १२. | गया-बीता है | उपेतः | ६. | पहुँचा |
| पुरुषः | ७. | (वह) मनुष्य (रूपधारी) | जातु नाम | ४. | कभी भी |
| पशुः । | ८. | पशु | गदाग्रजः ॥ | ३. | भगवान् श्रीकृष्ण का नाम |

श्लोकार्थ— जिसके कान के छिद्र में भगवान् श्रीकृष्ण का नाम कभी भी नहीं पहुँचा, वह मनुष्य-रूपधारी पशु कुत्ते, ग्राम-सूकर, ऊँट और गधों से भी गया-बीता है ।

# विंशः श्लोकः

बिले बतोरुक्रमविक्रमान् ये, न भृण्वतः कर्णपुटे नरस्य ।
जिह्वासती दार्दुरिकेव सूत, न चोपगायत्युरुगायगाथाः ॥ २० ॥

पदच्छेद—

बिले बत उरुक्रम विक्रमान् ये, न भृण्वतः कर्णपुटे नरस्य ।
जिह्वा असती दार्दुरिका इव सूत, न च उपगायति उरुगाय गाथाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बिले | ६. | बिल (हैं) | असती | १८. | मिथ्या (है) |
| बत | ८. | खेद है (वे) | दार्दुरिका | १६. | मेढक की जीभ के |
| उरुक्रम | २. | भगवान् श्रीहरि के | इव | १७. | समान |
| विक्रमान् | ३. | लीला चरित को | सूत, | १. | हे सूत जी ! |
| ये, | ६. | जो | न | १३. | नहीं |
| नभृण्वतः | ४. | नहीं सुनने वाले | च | १०. | तथा (जो) |
| कर्ण पुटे | ७. | दोनों कान (हैं) | उपगायति | १४. | गान करती है (वह) |
| नरस्य । | ५. | मनुष्य के | उरुगाय | ११. | भगवान् श्रीकृष्ण की |
| जिह्वा | १५. | जीभ | गाथाः ॥ | १२. | लीलाओं का |

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! भगवान् श्रीहरि के लीला-चरित को नहीं सुनने वाले मनुष्य के जो दोनों कान हैं; खेद है; वे बिल हैं तथा जो भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान नहीं करती है, वह जीभ मेढक की जीभ के समान मिथ्या है ।

# एकविंशः श्लोकः

**भारः परं पट्टकिरीटजुष्ट - मप्युत्तमाङ्गं न नमेन्मुकुन्दम् ।**
**शावौ करौ नो कुरुतः सपर्यां, हरेर्लसत्काञ्चनकङ्कणौ वा ।।२१।।**

पदच्छेद— भारः परम् पट्ट किरीट जुष्टम्, अपि उत्तमाङ्गम् न नमेत् मुकुन्दम् ।
शावौ करौ नो कुरुतः सपर्याम्, हरेः लसत् काञ्चन कङ्कणौ वा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| भारः | १०. बोझ है | | शावौ | २०. मुर्दे के (हाथ हैं) |
| परम् | ९. बहुत बड़ा | | करौ | १५. दोनों हाथ (यदि) |
| पट्ट | ५. रेशमी वस्त्र और | | नो | १८. नहीं |
| किरीट | ६. मुकुट से | | कुरुतः | १९. करते हैं (तब वे) |
| जुष्टम्, | ७. सुशोभित होने पर | | सपर्याम्, | १७. सेवा |
| अपि | ८. भी | | हरेः | १६. भगवान् श्रीकृष्ण की |
| उत्तमाङ्गम् | १. (मनुष्य का) सिर | | लसत् | १४. भूषित |
| न | ३. नहीं | | काञ्चन | १२. सुवर्ण के |
| नमेत् | ४. झुका (तो वह) | | कङ्कणौ | १३. कंगन से |
| मुकुन्दम् । | २. भगवान् श्रीहरि के (चरणों में) | | वा ।। | ११. उसी प्रकार |

श्लोकार्थ—मनुष्य का सिर भगवान् श्री हरि के चरणों में नहीं झुका तो वह रेशमी वस्त्र और मुकुट से सुशोभित होने पर भी बहुत बड़ा बोझ है । उसी प्रकार सुवर्ण के कंगन से भूषित दोनों हाथ यदि भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा नहीं करते हैं, तब वे मुर्दे के हाथ हैं ।

# द्वाविंशः श्लोकः

**बर्हायिते ते नयने नराणां, लिङ्गानि विष्णोर्न निरीक्षतो ये ।**
**पादौ नृणां तौ द्रुमजन्मभाजौ, क्षेत्राणि नानुव्रजतो हरेर्यौ ।।२२।।**

पदच्छेद— बर्हायिते ते नयने नराणाम् लिङ्गानि विष्णोः न निरीक्षतः ये ।
पादौ नृणाम् तौ द्रुम जन्म भाजौ, क्षेत्राणि न अनुव्रजतः हरेः यौ ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| बर्हायिते | ७. मोर के पंख की आँख के समान हैं | पादौ | १३. पैर |
| ते नयने | ६. वे नेत्र | नृणाम् तौ | १२. मनुष्यों के वे दोनों |
| नराणाम् | ५. मनुष्यों के | द्रुम जन्मभाजौ | १४. पेड़ के जीवन के समान हैं |
| लिङ्गानि | ३. स्थानों का | क्षेत्राणि | १०. तीर्थ क्षेत्रों की |
| विष्णोः | २. भगवान् विष्णु के | न अनुव्रजतः | ११. यात्रा नहीं करते |
| न निरीक्षतः | ४. दर्शन नहीं करते | हरेः | ९. भगवान् श्री हरि के |
| ये । | १. जो (नेत्र) | यौ ।। | ८. जो (पैर) |

श्लोकार्थ—जो नेत्र भगवान् विष्णु के स्थानों का दर्शन नहीं करते, मनुष्यों के वे नेत्र मोर के पंख की आँख के समान हैं । तथा जो पैर भगवान् श्रीहरि के तीर्थक्षेत्रों की यात्रा नहीं करते, मनुष्यों के वे दोनों पैर पेड़ के जीवन के समान हैं ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

जीवञ्छवो भागवताङ्‌घ्रिरेणुं, न जातु मर्त्योऽभिलभेत यस्तु ।
श्रीविष्णुपद्या मनुजस्तुलस्याः, श्वसञ्छवो यस्तु न वेद गन्धम् ॥२३॥

पदच्छेद—

जीवन् शवः भागवत अङ्‌घ्रि रेणुम्, न जातु मर्त्यः अभिलभेत यः तु ।
श्री विष्णुपद्याः मनुजः तुलस्याः, श्वसन् शवः यः तु न वेद गन्धम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जीवन् शवः | ७. | जीता हुआ मुर्दा (है) | श्रीविष्णुपद्याः | १२. | भगवान् विष्णु के चरणों की |
| भागवत | ३. | भगवद्‌भक्तों के | मनुजः | ११. | मनुष्य ने |
| अङ्‌घ्रिरेणुम्, | ४. | चरणों की धूली को | तुलस्याः, | १३. | तुलसी की |
| न जातु | ५. | कभी भी नहीं | श्वसन् शवः | १६. | साँस लेता हुआ मुर्दा है |
| मर्त्यः | २. | मनुष्य ने | यः | १०. | जिस |
| अभिलभेत | ६. | लगाया (वह) | तु | ९. | इसी प्रकार |
| यः | १. | जिस | न वेद | १५. | अनुभव नहीं किया (वह) |
| तु | ८. | तथा | गन्धम् ॥ | १४. | सुगन्ध का |

श्लोकार्थ—जिस मनुष्य ने भगवद्‌भक्तों के चरणों की धूली को कभी भी नहीं लगाया, वह जीता हुआ मुर्दा है तथा इसी प्रकार जिस मनुष्य ने भगवान् विष्णु के चरणों की तुलसी की सुगन्ध का अनुभव नहीं किया, वह साँस लेता हुआ मुर्दा है ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

तदश्मसारं हृदयं बतेदं, यद् गृह्यमाणैर्हरिनामधेयैः ।
न विक्रियेताथ यदा विकारो, नेत्रे जलं गात्ररुहेषु हर्षः ॥२४॥

पदच्छेद—

तद् अश्मसारम् हृदयम् बत इदम्, यद् गृह्यमाणैः हरि नामधेयैः ।
न विक्रियेत अथ यदा विकारः, नेत्रे जलम् गात्ररुहेषु हर्षः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ८. | वह (हृदय) | न विक्रियेत | ५. | पिघलता नहीं |
| अश्मसारम् | ९. | इस्पात लोहा (है) | अथ | १०. | तथा |
| हृदयम् | २. | हृदय | यदा | ११. | जब (हृदय) |
| बत | ६. | खेद है | विकारः | १२. | पिघलता है (तब) |
| इदम्, | ७ | इस प्रकार का | नेत्रे | १३. | आँखों में |
| यद् | १. | जो | जलम् | १४. | आँसू और |
| गृह्यमाणैः | ४. | कीर्तन से | गात्ररुहेषु | १५. | रोमावलियों में |
| हरिनामधेयैः । | ३. | भगवन्नाम | हर्षः ॥ | १६. | आनन्द (छा जाता है) |

श्लोकार्थ—जो हृदय भगवन्नाम-कीर्तन से पिघलता नहीं, खेद है, इस प्रकार का वह हृदय इस्पात लोहा है । तथा जब हृदय पिघलता है, तब आँखों में आँसू और रोमावलियों में आनन्द छा जाता है ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

अथाभिधेह्यङ्ग मनोऽनुकूलं, प्रभाषसे भागवतप्रधानः ।
यदाह वैयासकिरात्मविद्या—विशारदो नृपतिं साधु पृष्टः ।। २५ ।।

पदच्छेद—

अथ अभिधेहि अङ्ग मनः अनुकूलम्, प्रभाषसे भागवत प्रधानः ।
यद् आह वैयासकिः आत्म विद्या, विशारदः नृपतिम् साधु पृष्टः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | ५. | अतः | यद् | १४. | जो |
| अभिधेहि | १६. | कहिये | आह | १५. | कहा था (उसे आप) |
| अङ्ग | १. | हे सूत जी ! (आप) | वैयासकिः | १०. | शुकदेव मुनि ने |
| मनः | २. | मन को | आत्मविद्या, | ८. | अध्यात्म ज्ञान के |
| अनुकूलम् | ३. | भाने वाली (बात) | विशारदः | ९. | पण्डित |
| प्रभाष से | ४. | कह रहे हैं | नृपतिम् | ११. | राजा के |
| भागवत | ७. | भगवद्भक्त (और) | साधु | १२. | सुन्दर |
| प्रधानः । | ६. | परम | पृष्टः । | १३. | प्रश्नों पर |

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! आप मन को भानेवाली बात कह रहे हैं; अतः परम भगवद्भक्त और अध्यात्म-ज्ञान के पण्डित शुकदेव मुनि ने राजा के सुन्दर प्रश्नों पर जो कहा था; उसे आप कहिये ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
तृतीयः अध्यायः ॥३॥

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
## द्वितीय स्कन्धः
### अथ चतुर्थः अध्यायः
## प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच—

वैयासकेरिति वचस्तत्त्वनिश्चयमात्मनः ।
उपधार्य मतिं कृष्णे औत्तरेयः सतीं व्यधात् ॥ १ ॥

पदच्छेद—

वैयासकेः इति वचः, तत्त्व निश्चयम् आत्मनः ।
उपधार्य मतिम् कृष्णे, औत्तरेयः सतीम् व्यधात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैयासकेः | ४. | शुकदेव मुनि के | उपधार्य | ७. | धारण करके |
| इति | ५. | इस | मतिम् | १०. | बुद्धि को |
| वचः | ६. | वचन को | कृष्णे | ११. | भगवान् श्रीकृष्ण में |
| तत्त्व | २. | भगवत्स्वरूप का | औत्तरेयः | १. | उत्तरा-पुत्र राजा परीक्षित् ने |
| निश्चयम् | ३. | ज्ञान कराने वाले | सतीम् | ९. | निर्मल |
| आत्मनः । | ८. | अपनी | व्यधात् ॥ | १२. | लगा दिया |

श्लोकार्थ—उत्तरा-पुत्र राजा परीक्षित् ने भगवत्स्वरूप का ज्ञान कराने वाले शुकदेव मुनि के इस वचन को धारण करके अपनी निर्मल बुद्धि को भगवान् श्रीकृष्ण में लगा दिया ।

## द्वितीयः श्लोकः

आत्मजायासुतागारपशुद्रविणबन्धुषु ।
राज्ये चाविकले नित्यं विरूढां ममतां जहौ ॥ २ ॥

पदच्छेद—

आत्मन् जाया सुत आगार, पशु द्रविण बन्धुषु ।
राज्ये च अविकले नित्यम्, विरूढाम् ममताम् जहौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मन् | १. | (राजा परीक्षित् ने) देह | राज्ये | १०. | राज्य में |
| जाया | २. | पत्नी | च | ८. | और |
| सुत | ३. | पुत्र | अविकले | ९. | सम्पूर्ण |
| आगार | ४. | घर | नित्यम् | ११. | सदा |
| पशु | ५. | पशु | विरूढाम् | १२. | लगी हुई |
| द्रविण | ६. | धन | ममताम् | १३. | ममता को |
| बन्धुषु । | ७. | भाई-बन्धु | जहौ ॥ | १४. | त्याग दिया |

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् ने देह, पत्नी, पुत्र, घर, पशु, धन, भाई-बन्धु और सम्पूर्ण राज्य में सदा लगी हुई ममता को त्याग दिया ।

## तृतीयः श्लोकः

पप्रच्छ चेममेवार्थं यन्मां पृच्छथ सत्तमाः ।
कृष्णानुभावश्रवणे श्रद्दाधानो महामनाः ।।३।।

पदच्छेद—

पप्रच्छ च इमम् एव अर्थम्, यत् माम् पृच्छथ सत्तमाः ।
कृष्ण अनुभाव श्रवणे, श्रद्दधानः महामनाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पप्रच्छ | १०. | पूछा था | पृच्छथ | १४. | पूछ रहे हैं |
| च | १२. | आप लोग | सत्तमाः । | १. | हे शौनकादि ऋषियों ! |
| इमम् | ७. | इस | कृष्ण | २. | भगवान् श्री कृष्ण की |
| एव | ८. | ही | अनुभाव | ३. | लीलाओं को |
| अर्थम् | ९. | प्रश्न को | श्रवणे | ४. | सुनने में |
| यत् | ११. | जिसे | श्रद्दधानः | ५. | श्रद्धा रखने वाले |
| माम् | १३. | मुझसे | महामनाः ।। | ६. | मनस्वी राजा परीक्षित् ने |

श्लोकार्थ—हे शौनकादि ऋषियों ! भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं को सुनने में श्रद्धा रखने वाले मनस्वी राजा परीक्षित् ने इसी प्रश्न को पूछा था, जिसे आप लोग मुझसे पूछ रहे हैं ।

## चतुर्थः श्लोकः

संस्थां विज्ञाय संन्यस्य कर्म त्रैवर्गिकं च यत् ।
वासुदेवे भगवति आत्मभावं दृढं गतः ।।४।।

पदच्छेद—

संस्थाम् विज्ञाय संन्यस्य, कर्म त्रैवर्गिकम् च यत् ।
वासुदेवे भगवति, आत्म भावम् दृढम् गतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| संस्थाम् | १. | (राजा परीक्षित् अपनी) मृत्यु को | यत् | ४. | जो |
| विज्ञाय | २. | जानकर | वासुदेवे | ९. | वासुदेव में |
| संन्यस्य | ७. | छोड़कर | भगवति | ८. | भगवान् |
| कर्म | ६. | पुरुषार्थ हैं (उन्हें) | आत्मभावम् | ११. | अनन्य भाव को |
| त्रैवर्गिकम् | ५. | धर्म, अर्थ और काम तीनों | दृढम् | १०. | अत्यन्त |
| च | ३. | तथा | गतः ।। | १२. | प्राप्त हो गये थे |

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् अपनी मृत्यु को जानकर तथा जो धर्म, अर्थ और काम तीन पुरुषार्थ हैं, उन्हें छोड़कर भगवान वासुदेव में अत्यन्त अनन्य-भाव को प्राप्त हो गये थे ।

## पञ्चमः श्लोकः

राजोवाच—

समीचीनं वचो ब्रह्मन् सर्वज्ञस्य तवानघ ।
तमो विशीर्यते मह्यं हरेः कथयतः कथाम् ।। ५ ।।

पदच्छेद—

समीचीनम् वचः ब्रह्मन्, सर्वज्ञस्य तव अनघ ।
तमः विशीर्यते मह्यम्, हरेः कथयतः कथाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| समीचीनम् | ६. | बड़ा उत्तम है | तमः | ११. | (मेरा) अज्ञान |
| वचः | ५. | उपदेश | विशीर्यते | १२. | दूर होता जा रहा है |
| ब्रह्मन् | १. | हे ब्रह्मज्ञानी | मह्यम् | ७. | मुझे |
| सर्वज्ञस्य | ३. | सब कुछ जानने वाले | हरेः | ८. | भगवान् श्रीकृष्ण की |
| तव | ४. | आपका | कथयतः | १०. | सुनाते रहने से |
| अनघ । | २. | निष्पाप शुकदेव जी ! | कथाम् ।। | ९. | लीलाओं को |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मज्ञानी निष्पाप शुकदेव जी ! सब कुछ जानने वाले आपका उपदेश बड़ा उत्तम है । मुझे भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं को सुनाते रहने से मेरा अज्ञान दूर होता जा रहा है ।।

## षष्ठः श्लोकः

भूय एव विवित्सामि भगवानात्ममायया ।
यथेदं सृजते विश्वं दुर्विभाव्यमधीश्वरैः ।।६।।

पदच्छेद—

भूयः एव विवित्सामि, भगवान् आत्म मायया ।
यथा इदम् सृजते विश्वम्, दुर्विभाव्यम् अधीश्वरैः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूयः | १०. | फिर | यथा | ४. | जिस प्रकार |
| एव | ११. | (उसे) ही (मैं) | इदम् | ५. | इस |
| विवित्सामि | १२. | जानना चाहता हूँ | सृजते | ७. | रचते हैं (जिसे) |
| भगवान् | १. | भगवान | विश्वम् | ६. | ब्रह्माण्ड को |
| आत्म | २. | अपनी | दुर्विभाव्यम् | ९. | नहीं जान सकते |
| मायया । | ३. | माया से | अधीश्वरैः ।। | ८. | ब्रह्मादि लोकपाल (भी) |

श्लोकार्थ—भगवान् अपनी माया से जिस प्रकार इस ब्रह्माण्ड को रचते हैं, जिसे ब्रह्मादि लोकपाल भी नहीं जान सकते; फिर उसे ही मैं जानना चाहता हूँ ।।

## सप्तमः श्लोकः

यथा गोपायति विभुर्यथा संयच्छते पुनः ।
यां यां शक्तिमुपाश्रित्य पुरुशक्तिः परः पुमान् ।
आत्मानं क्रीडयन् क्रीडन् करोति विकरोति च ।। ७ ।।

पदच्छेद—

यथा गोपायति विभुः यथा संयच्छते पुनः ।
याम् याम् शक्तिम् उपाश्रित्य पुरु शक्तिः परः पुमान् ।
आत्मामम् क्रीडयन् क्रीडन् करोति विकरोति च ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | ५. | जिस प्रकार (जगत् की) | पुरु शक्तिः | १. | महान् शक्तिशाली |
| गोपायति | ६. | रक्षा करते हैं | परः | ३. | परात्पर |
| विभुः | २. | व्यापक (एवम्) | पुमान् । | ४. | परमात्मा |
| यथा | ७. | जिस प्रकार | आत्मानम् | १३. | अपने को |
| संयच्छते | ८. | संहार करते हैं | क्रीडयन् | १४. | खिलौना बनाकर |
| पुनः । | ९. | फिर से | क्रीडन् | १५. | खेलते हुए |
| याम् याम् | १०. | जिस-जिस | करोति | १६. | सृष्टि करते हैं |
| शक्तिम् | ११. | शक्ति के | विकरोति | १८. | संहार करते हैं (उसे बतावें) |
| उपाश्रित्य | १२. | सहारे | च ।। | १७. | तथा |

श्लोकार्थ—महान् शक्तिशाली, व्यापक एवं परात्पर परमात्मा जिस प्रकार जगत् की रक्षा करते हैं, जिस प्रकार संहार करते हैं, फिर से जिस-जिस शक्ति के सहारे अपने को खिलौना बनाकर खेलते हुए सृष्टि करते हैं तथा संहार करते हैं, उसे बतावें ।

## अष्टमः श्लोकः

नूनं भगवतो ब्रह्मन् हरेद्भुतकर्मणः ।
दुर्विभाव्यमिवाभाति कविभिश्चापि चेष्टितम् ।। ८ ।।

पदच्छेद—

नूनम् भगवतः ब्रह्मन्, हरेः अद्भुत कर्मणः ।
दुर्विभाव्यम् इव आभाति, कविभि, च अपि चेष्टितम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नूनम् | ७. | निश्चय ही | दुर्भाव्यम् | १०. | कठिनाई से जानने योग्य की |
| भगवतः | ४. | भगवान् | इव | ११. | भाँति |
| ब्रह्मन् | १. | हे शुकदेव जी ! | आभाति | १२. | प्रतीत होती हैं |
| हरेः | ५. | श्रीकृष्ण की | कविभिः | ८. | विद्वानों के द्वारा |
| अद्भुत | २. | अलौकिक | च अपि | ९. | भी |
| कर्मणः । | ३. | लीलाधारी | चेष्टितम् ।। | ६. | लीलायें |

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! अलौकिक लीलाधारी भगवान् श्रीकृष्ण की लीलायें निश्चय ही विद्वानों के द्वारा भी कठिनाई से जानने योग्य की भाँति प्रतीत होती हैं ।

## नवमः श्लोकः

यथा गुणांस्तु प्रकृतेर्युगपत् क्रमशोऽपि वा ।
बिभर्त्ति भूरिशस्त्वेकः कुर्वन् कर्माणि जन्मभिः ॥९॥

पदच्छेद—

यथा गुणान् तु प्रकृतेः, युगपत् क्रमशः अपि वा ।
बिभर्ति भूरिशः तु एकः, कुर्वन् कर्माणि जन्मभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १३. | किस प्रकार | बिभर्ति | १४. | धारण करते हैं |
| गुणान् | ९. | गुणों को | भूरिशः | ३. | अनेक |
| तु | १. | हे शुकदेव जी ! | तु | ७. | ही |
| प्रकृतेः | ८. | प्रकृति के | एकः | ६. | अकेले |
| युगपत् | १०. | एक साथ | कुर्वन् | ५. | करते हुए (भगवान्) |
| क्रमशः | १२. | एक-एक करके | कर्माणि | ४. | लीलाओं को |
| अपिवा । | ११. | अथवा | जन्मभिः ॥ | २. | अवतारों के द्वारा |

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! अवतारों के द्वारा अनेक लीलाओं को करते हुए भगवान् अकेले ही प्रकृति के गुणों को एक साथ अथवा एक-एक करके किस प्रकार धारण करते हैं ?

## दशमः श्लोकः

विचिकित्सितमेतन्मे ब्रवीतु भगवान् यथा ।
शाब्दे ब्रह्मणि निष्णातः परस्मिश्च भवान्खलु ॥१०॥

पदच्छेद—

विचिकित्सितम् एतद् मे, ब्रवीतु भगवान् यथा ।
शाब्दे ब्रह्मणि निष्णातः, परस्मिन् च भवान् खलु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विचिकित्सितम् | १०. | सन्देह को | शाब्दे ब्रह्मणि | ४. | शब्द ब्रह्म को |
| एतद् | ९. | इस | निष्णातः | ७. | जानने वाले हैं (अतः) |
| मे | ८. | मेरे | परस्मिन् | ६. | परब्रह्म को |
| ब्रवीतु | १२. | दूर करें | च | ५. | और |
| भगवान् | १. | हे मुनिवर ! | भवान् | २. | आप |
| यथा । | ११. | भलीभाँति | खलु ॥ | ३. | निश्चय ही |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आप निश्चय ही शब्द-ब्रह्म को और परब्रह्म को जानने वाले हैं; अतः मेरे इस सन्देह को भलीभाँति दूर करें ।

# एकादशः श्लोकः

सूत उवाच—

इत्युपामन्त्रितो राज्ञा गुणानुकथने हरेः ।
हृषीकेशमनुस्मृत्य प्रतिवक्तुं प्रचक्रमे ॥११॥

पदच्छेद— इति उपामन्त्रितः राज्ञा, गुण अनुकथने हरे : ।
हृषीकेशम् अनुस्मृत्य, प्रतिवक्तुम् प्रचक्रमे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ५. | इस प्रकार | हरेः । | २. | भगवान् श्रीकृष्ण के |
| उपामन्त्रितः | ६. | निवेदन करने पर (शुकदेव जी) | हृषीकेशम् | ७. | इन्द्रियाधीश श्रीकृष्ण का |
| राज्ञा | १. | राजा परीक्षित् के द्वारा | अनुस्मृत्य | ८. | स्मरण करके |
| गुण | ३. | गुणों को | प्रतिवक्तुम् | ९. | कहना |
| अनुकथने | ४. | कहने के लिए | प्रचक्रमे ॥ | १०. | प्रारम्भ किया |

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् के द्वारा भगवान् श्रीकृष्ण के गुणों को कहने के लिए इस प्रकार निवेदन करने पर शुकदेव जी ने इन्द्रियाधीश भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण करके कहना प्रारम्भ किया ।

# द्वादशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे, सदुद्भवस्थाननिरोधलीलया ।
गृहीतशक्तित्रितयाय देहिना—मन्तर्भवायानुपलक्ष्यवर्त्मने ॥१२॥

पदच्छेद— नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे, सद् उद्भव स्थान निरोध लीलया ।
गृहीत शक्ति त्रितयाय देहिनाम्, अन्तः भवाय अनुपलक्ष्य वर्त्मने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः | १६. | प्रणाम है | गृहीत | १२. | धारण करने वाले |
| परस्मै | १३. | परात्पर | शक्ति | ११. | शक्तियों को |
| पुरुषाय | १४. | परब्रह्म को | त्रितयाय | १०. | सत्त्व, रजस् और तमस् |
| भूयसे, | १५. | बार-बार | देहिनाम्, | १. | प्राणियों के |
| सद् उद्भव | ६. | जगत् की उत्पत्ति | अन्तः | २. | अन्तःकरण में |
| स्थान | ७. | स्थिति और | भवाय | ३. | रहने वाले |
| निरोध | ८. | प्रलय की | अनुपलक्ष्य | ४. | अज्ञात |
| लीलया । | ९. | लीला करने वाले | वर्त्मने ॥ | ५. | स्वरूप वाले |

श्लोकार्थ—प्राणियों के अन्तःकरण में रहने वाले, अज्ञात स्वरूप वाले; जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की लीला करने वाले; सत्त्व, रजस् और तमस् शक्तियों को धारण करने वाले परात्पर परब्रह्म को बार-बार प्रणाम है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

भूयो नमः सद्वृजिनच्छिदेऽसता-मसम्भवायाखिलसत्त्वमूर्तये ।
पुंसां पुनः पारमहंस्य आश्रमे, व्यवस्थितानामनुमृग्यदाशुषे ॥१३॥

पदच्छेद— भूयः नमः सद् वृजिन छिदे असताम्, असम्भवाय अखिल सत्त्व मूर्तये ।
पुंसाम् पुनः पारमहंस्ये आश्रमे, व्यवस्थितानाम् अनुमृग्य दाशुषे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूयः नमः | १६. | बार-बार प्रणाम है | मूर्तये । | ८. | रूपों में स्थित |
| सद् | १. | सज्जनों के | पुंसाम् | १३. | मनुष्यों के |
| वृजिन | २. | दुःख को | पुनः | ९. | तथा |
| छिदे | ३. | दूर करने वाले | पारमहंस्ये | १०. | परमहंस |
| असताम्, | ४. | दुष्टों की | आश्रमे, | ११. | आश्रम में |
| असम्भवाय | ५. | उत्पत्ति को रोकने वाले | व्यवस्थितानाम् | १२. | रहने वाले |
| अखिल | ६. | सम्पूर्ण | अनुमृग्य | १४. | मनोरथों को |
| सत्त्व | ७. | प्राणियों के | दाशुषे ॥ | १५. | पूर्ण करनेवाले (परमात्मा) को |

श्लोकार्थ—सज्जनों के दुःख को दूर करने वाले, दुष्टों की उत्पत्ति को रोकने वाले, सम्पूर्ण प्राणियों के रूप में स्थित तथा परमहंस आश्रम में रहने वाले मनुष्यों के मनोरथों को पूर्ण करने वाले परमात्मा को बार-बार प्रणाम है ।

## चतुर्दशः श्लोकः

नमो नमस्तेऽस्त्वृषभाय सात्वतां, विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा, स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥१४॥

पदच्छेद— नमः नमः ते अस्तु ऋषभाय सात्वताम्, विदूर काष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्त साम्य अतिशयेन राधसा, स्व धामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः | ८. | बार-बार | कुयोगिनाम् । | ३. | भक्तिहीन हठयोगियों से |
| नमः | ९. | प्रणाम | निरस्त | १४. | रहित (आप) |
| ते | ७. | आपको | साम्य | १३. | (अपनी) बराबरी से |
| अस्तु | १०. | है | अतिशयेन | ११. | बहुत अधिक |
| ऋषभाय | २. | वत्सल (एवं) | राधसा, | १२. | तेज के कारण |
| सात्वताम्, | १. | भक्तों के | स्व धामनि | १६. | अपने धाम में |
| विदूर | ५. | दूर | ब्रह्मणि | १५. | ब्रह्मस्वरूप |
| काष्ठाय | ६. | रहने वाले | रंस्यते | १७. | विहार करते हैं (अतः आपको) |
| मुहुः | ४. | बहुत | नमः ॥ | १८. | प्रणाम है |

श्लोकार्थ—भक्तों के वत्सल एवं भक्तिहीन हठयोगियों से बहुत दूर रहने वाले आपको बार-बार प्रणाम है । बहुत अधिक तेज के कारण अपनी बराबरी से रहित आप ब्रह्म-स्वरूप अपने धाम में विहार करते हैं; अतः आपको प्रणाम है ।

# पञ्चदशः श्लोकः

यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं, यद्वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम् ।
लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ।।१५।।

पदच्छेद— यद कीर्तनम् यद् स्मरणम् यद् ईक्षणम्, यद वन्दनम् यद् श्रवणम् यद् अर्हणम् ।
लोकस्य सद्यः विधुनोति कल्मषम्, तस्मै सुभद्र श्रवसे नमः नमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् कीर्तनम् | १. | जिनका कीर्तन | सद्यः | ९. | तत्काल |
| यद् स्मरणम् | २. | जिनका स्मरण | विधुनोति | १० | नष्ट कर देता है |
| यद् ईक्षणम्, | ३. | जिनका दर्शन | कल्मषम्, | ८. | पापों को |
| यद् वन्दनम् | ४. | जिनका वन्दन | तस्मै | ११. | उन |
| यद् श्रवणम् | ५. | जिनका श्रवण (और) | सुभद्र | १२. | पुण्य |
| यद् अर्हणम् । | ६. | जिनका पूजन | श्रवसे | १३. | कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण को |
| लोकस्य | ७. | जीवों के | नमः नमः ।। | १४. | बार-बार नमस्कार है |

श्लोकार्थ—जिनका कीर्तन, जिनका स्मरण, जिनका दर्शन, जिनका वन्दन, जिनका श्रवण और जिनका पूजन जीवों के पापों को तत्काल नष्ट कर देता है; उन पुण्य कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार नमस्कार है ।

# षोडशः श्लोकः

विचक्षणा यच्चरणोपसादनात्, सङ्गं व्युदस्योभयतोऽन्तरात्मनः ।
विन्दन्ति हि ब्रह्मगतिं गतक्लमा-स्तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ।।१६।।

पदच्छेद— विचक्षणाः यद् चरण उपसादनात्, सङ्गम् व्युदस्य, उभयतः अन्तरात्मनः ।
विन्दन्ति हि ब्रह्म गतिम् गत क्लमाः, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमः नमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विचक्षणाः | १. | विद्वान् लोग | हि | ११. | ही |
| यद् | २. | जिन (भगवान्) के | ब्रह्म | १२. | ब्रह्म |
| चरण | ३. | चरणों की | गतिम् | १३. | लोक को |
| उपसादनात्, | ४. | सन्निधि पाने के बाद | गत | १०. | विना |
| सङ्गम् | ७. | आसक्ति को | क्लमाः, | ९. | परिश्रम के |
| व्युदस्य | ८. | समाप्त करके | तस्मै | १५. | उन |
| उभयतः | ६. | इस लोक और परलोक की | सुभद्र | १६. | मंगलमय |
| अन्तरात्मनः । | ५. | शुद्ध हृदय से | श्रवसे | १७. | कीर्ति वाले भगवान श्रीकृष्णको |
| विन्दन्ति | १४. | प्राप्त करते हैं | नमः नमः ।। | १८. | बार-बार प्रणाम है |

श्लोकार्थ—विद्वान् लोग जिन भगवान् के चरणों की सन्निधि पाने के बाद शुद्ध हृदय से इस लोक और परलोक की आसक्ति को समाप्त करके परिश्रम के विना ही ब्रह्म लोक को प्राप्त करते हैं; उन मंगलमय कीर्ति वाले भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार प्रणाम है ।

## सप्तदशः श्लोकः

**तपस्विनो दानपरा यशस्विनो, मनस्विनो मन्त्रविदः सुमङ्गलाः ।**
**क्षेमं न विन्दन्ति विना यदर्पणं, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥१७॥**

पदच्छेद— तपस्विनः दान पराः यशस्विनः, मनस्विनः मन्त्र विदः सुमङ्गलाः ।
क्षेमम् न विन्दन्ति विना यद् अर्पणम्, तस्मै सुभद्र श्रवसे नमः नमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तपस्विनः | १. | तपस्वी | विन्दन्ति | १३. | प्राप्त कर सकते |
| दान पराः | २. | दानी | विना | १०. | विना |
| यशस्विनः, | ३. | कीर्तिवाले | यद् | ८. | जिस (भगवान्) में |
| मनस्विनः | ४. | स्वाभिमानी | अर्पणम्, | ९. | समर्पण भाव के |
| मन्त्र | ५. | मन्त्रों के | तस्मै | १४ | उन |
| विदः | ६. | जानकार (तथा) | सुभद्र | १५. | मंगलमय |
| सुमङ्गलाः । | ७. | सदाचारी लोग | श्रवसे | १६. | नाम वाले ( श्री कृष्ण) को |
| क्षेमम् | ११. | कल्याण | नमः | १७. | बार-बार |
| न | १२. | नहीं | नमः ॥ | १८. | प्रणाम है |

श्लोकार्थः—तपस्वी, दानी, कीर्तिवाले, स्वाभिमानी, मन्त्रों के जानकार तथा सदाचारी लोग जिस भगवान् में समर्पण भाव के विना कल्याण प्राप्त नहीं कर सकते; उन मंगलमय नाम वाले भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार प्रणाम है ।

## अष्टादशः श्लोकः

**किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कसा, आभीरकङ्का यवनाः खसादयः ।**
**येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः, शुद्ध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥१८॥**

पदच्छेद— किरात हूण आन्ध्र पुलिन्द पुल्कसाः, आभीरकङ्काः यवनाः खस आदयः ।
ये अन्ये च पापाः यद् उपाश्रय आश्रयाः, शुद्ध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किरात हूण | १. | किरात हूण | च | ६. | और |
| आन्ध्र पुलिन्द | २. | आन्ध्र पुलिन्द | पापाः | १०. | पापी लोग (हैं वे) |
| पुल्कसाः, | ३. | पुल्कस | यद् | ११. | जिस (भगवान्) के |
| आभीर कङ्काः | ४. | आभीर कंक | उपाश्रय | १२. | भक्तों की |
| यवनाः | ५. | यवन | आश्रयाः, | १३. | भक्ति से |
| खस आदयः । | ७. | खस इत्यादि | शुद्ध्यन्ति | १४. | पवित्र हो जाते हैं |
| ये | ८. | जो | तस्मै | १५. | उन |
| अन्ये | ९. | दूसरे | प्रभविष्णवे | १६. | सर्वशक्तिमान् श्रीहरि को |
| | | | नमः ॥ | १७. | नमस्कार है |

श्लोकार्थ—किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कस, आभीर, कंक, यवन और खस इत्यादि जो दूसरे पापी लोग हैं, वे जिस भगवान् के भक्तों की भक्ति से पवित्र हो जाते हैं; उन सर्वशक्तिमान् भगवान श्री हरि को नमस्कार है ।

# एकोनविंश: श्लोक:

स एष आत्माऽऽत्मवतामधीश्वर–स्त्रयीमयो धर्ममयस्तपोमयः।
गतव्यलीकैरजशङ्कराादिभि-वितर्क्यलिङ्गो भगवान् प्रसीदताम् ॥१९॥

पदच्छेद— सः एषः आत्मा आत्मवताम् अधीश्वरः, त्रयीमयः धर्ममयः तपोमयः।
गतः व्यलीकैः अज शङ्कर आदिभिः, वितर्क्य लिङ्गः भगवान् प्रसीदताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १४. | वे | गत | ९. | रहित होकर |
| एषः | १. | ये (भगवान्) | व्यलीकैः | ८. | कपट भाव से |
| आत्मा | ३. | आत्मा | अज शङ्कर | १०. | ब्रह्मा, शिव |
| आत्मवताम् | २. | ज्ञानियों की | आदिभिः, | ११. | इत्यादि देवताओं के द्वारा |
| अधीश्वरः, | ४. | स्वामी | वितर्क्य | १२. | आश्चर्यपूर्वक |
| त्रयीमयः | ५. | वेद मूर्ति | लिङ्गः | १३. | ज्ञात होने वाले |
| धर्ममयः | ६. | धर्म स्वरूप (और) | भगवान् | १५. | भगवान् श्रीकृष्ण |
| तपोमयः। | ७. | तप रूप (हैं) | प्रसीदताम्॥ | १६. | प्रसन्न होवें |

श्लोकार्थ—ये भगवान् ज्ञानियों की आत्मा, स्वामी, वेदमूर्ति, धर्मस्वरूप और तप रूप हैं। कपट भाव से रहित होकर ब्रह्मा, शिव इत्यादि देवताओं के द्वारा आश्चर्यपूर्वक ज्ञात होने वाले वे भगवान् श्रीकृष्ण प्रसन्न होवें।

# विंश: श्लोक:

श्रियः पतिर्यज्ञपतिः प्रजापति-र्धियां पतिर्लोकपतिर्धरापतिः।
पतिर्गतिश्चान्धकवृष्णिसात्वतां, प्रसीदतां मे भगवान् सतां पतिः ॥२०॥

पदच्छेद— श्रियः पतिः यज्ञपतिः प्रजापतिः, धियाम् पतिः लोकपतिः धरा पतिः।
पतिः गतिः च अन्धक वृष्णि सात्वताम्, प्रसीदताम् मे भगवान् सताम् पतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रियः पतिः | १. | लक्ष्मी के स्वामी | च | १२. | तथा |
| यज्ञ पतिः | २. | यज्ञों के भोक्ता | अन्धक | ७. | अन्धक (और) |
| प्रजा पतिः, | ३. | प्रजा के पालक | वृष्णि | ८. | वृष्णि कुल के |
| धियाम् पतिः | ४. | बुद्धि प्रदाता | सात्वताम्, | ९ | यादवों के |
| लोक पतिः | ५ | संसार के रक्षक | प्रसीदताम् | १६. | प्रसन्न होवें |
| धरा पतिः। | ६. | पृथ्वी के शासक | मे | १५. | मेरे पर |
| पतिः | १०. | रक्षक (एवम्) | भगवान् | १४. | भगवान् श्रीकृष्ण |
| गतिः | ११. | शरण दाता | सताम् पतिः॥ | १३. | सन्तों के स्वामी |

श्लोकार्थ—लक्ष्मी के स्वामी, यज्ञों के भोक्ता, प्रजा के पालक, बुद्धि प्रदाता, संसार के रक्षक, पृथ्वी के शासक, अन्धक और वृष्णि कुल के यादवों के रक्षक एवम् शरण तथा सन्तों के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण मेरे पर प्रसन्न होवें।

## एकविंशः श्लोकः

यदङ्घ्र्यभिध्यानसमाधिधौतया, धियानुपश्यन्ति हि तत्त्वमात्मनः ।
वदन्ति चैतत् कवयो यथारुचं, स मे मुकुन्दो भगवान् प्रसीदताम् ॥२१॥

पदच्छेद— यद् अङ्घ्रि अभिध्यान समाधि धौतया, धिया अनुपश्यन्ति हि तत्त्वम् आत्मनः ।
वदन्ति च एतत् कवयः यथारुचम्, सः मे मुकुन्दः भगवान् प्रसीदताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | २. | जिनके | वदन्ति | १५. | वर्णन करते हैं |
| अङ्घ्रि | ३. | चरणों के | च | १२. | और |
| अभिध्यान | ४. | निरन्तर ध्यान की | एतत् | १४. | उसका |
| समाधि | ५. | समाधि से | कवयः | १. | विद्वान् लोग |
| धौतया, | ६. | निर्मल | यथारुचम्, | १३. | अपनी रुचि के अनुसार |
| धिया | ७. | ज्ञान के द्वारा | सः | १६. | वे |
| अनुपश्यन्ति | ११. | दर्शन करते हैं | मे | १९. | मेरे पर |
| हि | ८. | ही | मुकुन्दः | १८. | श्रीकृष्ण |
| तत्त्वम् | १०. | स्वरूप का | भगवान् | १७. | भगवान् |
| आत्मनः । | ९. | आत्मा के | प्रसीदताम् ॥ | २०. | प्रसन्न होवें |

श्लोकार्थ—विद्वान् लोग जिनके चरणों के निरन्तर ध्यान की समाधि से निर्मल ज्ञान के द्वारा ही आत्मा के स्वरूप का दर्शन करते हैं और अपनी रुचि के अनुसार उसका वर्णन करते हैं; वे भगवान् श्रीकृष्ण मेरे पर प्रसन्न होवें ।

## द्वाविंशः श्लोकः

प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती, वितन्वताजस्य सतीं स्मृतिं हृदि ।
स्वलक्षणा प्रादुरभूत् किलास्यतः, स मे ऋषीणामृषभः प्रसीदताम् ॥२२॥

पदच्छेद— प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती, वितन्वता अजस्य सतीम् स्मृतिम् हृदि ।
स्वलक्षणा प्रादुरभूत् किल आस्यतः, सः मे ऋषीणाम् ऋषभः प्रसीदताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रचोदिता | ९. | प्रेरित किया | स्व लक्षणा | १२. | अपने सभी अंगों के साथ |
| येन | २. | जिन्होंने | प्रादुरभूत् | १३. | प्रकट हुई (एवंच) |
| पुरा | १. | आदिकाल में | किल | १०. | तदनन्तर (वह देवी) |
| सरस्वती, | ८ | सरस्वती देवी को | आस्यतः, | ११. | (ब्रह्मा जी के) मुख से |
| वितन्वता | ७. | विस्तार करते हुए | सः | १६. | वे (भगवान् श्रीकृष्ण) |
| अजस्य | ३. | ब्रह्मा के | मे | १८. | मेरे पर |
| सतीम् | ५. | पूर्वकल्प की | ऋषीणाम् | १४. | ज्ञानियों में |
| स्मृतिम् | ६. | स्मरण शक्ति का | ऋषभः | १५. | सर्वश्रेष्ठ |
| हृदि । | ४. | हृदय में | प्रसीदताम् ॥ | १८. | प्रसन्न होवें |

श्लोकार्थ—आदिकाल में जिन्होंने ब्रह्माजी के हृदय में पूर्वकल्प की स्मरण शक्ति का विस्तार करते हुए सरस्वती देवी को प्रेरित किया । तदनन्तर वह देवी ब्रह्मा जी के मुख से अपने सभी अंगों के साथ प्रकट हुई । एवंच ज्ञानियों में सर्व-श्रेष्ठ वे भगवान् श्रीकृष्ण मेरे पर प्रसन्न होवें ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

भूतैर्महद्भिर्य इमाः पुरो विभुर्निर्माय शेते यदमूषु पूरुषः ।
भुङ्क्ते गुणान् षोडश षोडशात्मकः, सोऽलङ्कृषीष्ट भगवान् वचांसि नः ।।२३।।

पदच्छेद—

भूतैः महद्भिः यः इमाः पुरः विभुः, निर्माय शेते यद् अमूषु पूरुषः ।
भुङ्क्ते गुणान् षोडश षोडश आत्मकः; सः अलङ्कृषीष्ट भगवान् वचांसि नः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूतैः | ४. | पंच महाभूतों के द्वारा | पूरुषः । | १०. | जीव रूप से |
| महद्भिः | ३. | महत्तत्त्वादि | भुङ्क्ते | १५. | भोग करते हैं |
| यः | २. | जो (भगवान् श्रीकृष्ण) | गुणान् | १४. | विषयों का |
| इमाः | ५. | इन | षोडश | १३. | सोलह |
| पुरः | ६. | शरीरों को | षोडशआत्मकः, | १२. | सोलह इन्द्रियों से |
| विभुः, | १. | सर्वव्यापी | सः | १६. | वे |
| निर्माय | ७. | बनाकर | अलङ्कृषीष्ट | २०. | सुशोभित करें |
| शेते | ११. | विद्यमान रहते हैं (तब) | भगवान् | १७. | भगवान् (श्रीकृष्ण) |
| यद् | ८. | जब | वचांसि | १९. | वाणी को |
| अमूषु | ९. | इनमें | नः ।। | १८. | मेरी |

श्लोकार्थ—सर्वव्यापी जो भगवान् श्रीकृष्ण महत्तत्त्वादि पंच महाभूतों के द्वारा इन शरीरों को बनाकर जब इनमें जीवरूप से विद्यमान रहते हैं, तब सोलह इन्द्रियों से सोलह विषयों का भोग करते हैं। वे भगवान् श्रीकृष्ण मेरी वाणी को सुशोभित करें।

## चतुर्विंशः श्लोकः

नमस्तस्मै भगवते वासुदेवाय वेधसे ।
पपुर्ज्ञानमयं सौम्या यन्मुखाम्बुरुहासवम् ।।२४।।

पदच्छेद—

नमः तस्मै भगवते, वासुदेवाय वेधसे ।
पपुः ज्ञानमयम् सौम्याः, यद् मुख अम्बुरुह आसवम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः | ५. | नमस्कार है | ज्ञानमयम् | ११. | ज्ञान-कथा का |
| तस्मै | २. | उन | सौम्याः | ६. | सन्त जन |
| भगवते, | ३. | भगवान् | यद् | ७. | जिनके |
| वासुदेवाय | १. | वासुदेव (के अवतार) | मुख | ८. | मुख |
| वेधसे । | ४. | वेद व्यास जी को | अम्बुरुह | ९. | कमल के |
| पपुः | १२. | पान करते हैं | आसवम् ।। | १०. | मकरन्द-स्वरूप |

श्लोकार्थ—वासुदेव के अवतार उन भगवान् वेदव्यास जी को नमस्कार है। सन्त जन जिनके मुख-कमल के मकरन्द-स्वरूप ज्ञान-कथा का पान करते हैं।

## पञ्चविंशः श्लोकः

एतदेवात्मभू राजन् नारदाय विपृच्छते ।
वेदगर्भोऽभ्यधात् साक्षाद् यदाह हरिरात्मनः ॥२५॥

पदच्छेद—

एतद् एव आत्मभूः राजन्, नारदाय विपृच्छते ।
वेदगर्भः अभ्यधात् साक्षात्, यद् आह हरिः आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् एव | ६. | यही (ज्ञान) | अभ्यधात् | ७. | बताया था |
| आत्मभूः | ३. | ब्रह्मा जी ने | साक्षात् | ६. | स्वयम् |
| राजन् | १. | हे परीक्षित् ! | यद् | ८. | जिसका |
| नारदाय | ४. | देवर्षि नारद के | आह | १२. | उपदेश दिया था |
| विपृच्छते । | ५. | पूछने पर | हरिः | १०. | भगवान् विष्णु ने |
| वेद गर्भः | २. | वेदों को धारण करने वाले | आत्मनः ॥ | ११. | उन्हें |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! वेदों को धारण करने वाले ब्रह्मा जी ने देवर्षि नारद के पूछने पर यही ज्ञान बताया था; जिसका स्वयं भगवान् विष्णु ने उन्हें उपदेश दिया था ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
चतुर्थः अध्यायः ॥ ४ ॥
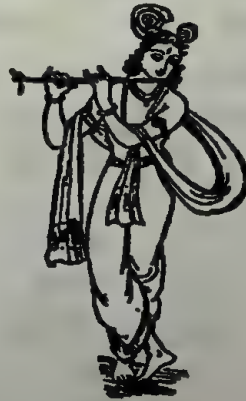
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## द्वितीयः स्कन्धः

### अथ पञ्चमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

नारद उवाच—

देवदेव नमस्तेऽस्तु भूतभावन पूर्वज ।
तद् विजानीहि यज्ज्ञानमात्मतत्त्वनिदर्शनम् ।।१।।

पदच्छेद—
देवदेव नमः ते अस्तु, भूत भावन पूर्वज ।
तद् विजानीहि यद् ज्ञानम्, आत्मन् तत्त्व निदर्शनम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देव देव | ४. | हे देवाधिदेव (ब्रह्मा जी) | तद् | ८. | वह |
| नमः | ६. | नमस्कार | विजानीहि | १०. | बतावें |
| ते | ५. | आपको | यद् | ११. | जो |
| अस्तु, | ७. | है (आप मुझे) | ज्ञानम्, | ९. | ज्ञान |
| भूत | १. | प्राणियों के | आत्मन् | १२. | परमात्मा के |
| भावन | २. | रक्षक (एवं) | तत्त्व | १३. | स्वरूप का |
| पूर्वज । | ३. | (सबके) पितामह | निदर्शनम् ।। | १४. | दर्शन कराने वाला है |

शब्दार्थ—प्राणियों के रक्षक एवं सबके पितामह हे देवाधिदेव ब्रह्मा जी ! आपको नमस्कार है। आप मुझे वह ज्ञान बतावें, जो परमात्मा के स्वरूप का दर्शन कराने वाला है ।

## द्वितीयः श्लोकः

यद्रूपं यदधिष्ठानं यतः सृष्टमिदं प्रभो ।
यत्संस्थं यत्परं यच्च तत् तत्त्वं वद तत्त्वतः ।। २ ।।

पदच्छेद—
यद् रूपम् यद् अधिष्ठानम्, यतः सृष्टम् इदम् प्रभो ।
यद् संस्थम् यद् परम् यद् च, तत् तत्त्वं वद तत्त्वतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | २. | जो | यद् | ९. | जिसमें |
| रूपम् | ३. | स्वरूप है | संस्थम् | १०. | प्रलय होता है |
| यद् | ४. | जो | यद् परम् | ११. | जिसके अधीन है |
| अधिष्ठानम्, | ५. | आधार है | यद् | १३. | जैसा है |
| यतः | ६. | जिससे | च | १२. | और |
| सृष्टम् | ८. | सृष्टि हुई है | तत् तत्त्वम् | १४. | उस स्वरूप को |
| इदम् | ७. | यह | वद | १६. | बतावें |
| प्रभो । | १. | हे भगवन् ! (परमात्मा का) | तत्त्वतः ।। | १५. | सही रूप में |

शब्दार्थ—हे भगवन् ! परमात्मा का जो स्वरूप है, जो आधार है, जिससे यह सृष्टि हुई है, जिसमें प्रलय होता है, जिसके अधीन है और जैसा है; उस स्वरूप को सही रूप में बतावें ।

## तृतीयः श्लोकः

सर्वं ह्येतद् भवान् वेद भूतभव्यभवत्प्रभुः ।
करामलकवद् विश्वं विज्ञानावसितं तव ।।३।।

पदच्छेद -

सर्वम् हि एतद् भवान् वेद, भूत भव्य भवत् प्रभुः ।
कर आमलकवत् विश्वम्, विज्ञान अवसितम् तव ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वम् | ७. | सब कुछ | प्रभुः । | ३. | स्वामी |
| हि | ५. | निश्चय ही | कर | १०. | हाथ में रखे हुए |
| एतद् | ६. | यह | आमलकवत् | ११. | आँवले के समान |
| भवान् | ४. | आप | विश्वम्, | ९. | सारा संसार |
| वेद, | ८. | जानते हैं | विज्ञान | १३. | ज्ञान-दृष्टि के अन्दर |
| भूत भव्य | १. | भूत, भविष्य और | अवसितम् | १४. | समाहित है |
| भवत् | २. | वर्तमान काल के | तव।। | १२. | आपकी |

श्लोकार्थ—भूत, भविष्य और वर्तमान काल के स्वामी आप निश्चय ही यह सब कुछ जानते हैं। सारा संसार हाथ में रखे हुए आँवले के समान आपकी ज्ञान-दृष्टि के अन्दर समाहित है।

## चतुर्थः श्लोकः

यद्विज्ञानो यदाधारो यत्परस्त्वं यदात्मकः ।
एकः सृजसि भूतानि भूतैरेवात्ममायया ।।४।।

पदच्छेद—

यद् विज्ञानः यद् आधारः, यद् परः त्वम् यद् आत्मकः ।
एकः सृजसि भूतानि, भूतैः एव आत्मन् मायया ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | १. | (हे स्वामिन् ! आपको)जहाँ से | आत्मकः । | ९. | स्वरूप है (उसे बतावें) |
| विज्ञानः | २. | ज्ञान मिला है | एकः | १०. | (आप) अकेले |
| यद् | ३. | जो | सृजसि | १६. | सृष्टि करते हैं |
| आधारः, | ४. | आधार है | भूतानि, | १५. | प्राणियों की |
| यद् | ५. | जो | भूतैः | १४. | पञ्च महाभूतों के द्वारा |
| परः | ६. | स्वामी है (तथा) | एव | ११ | ही |
| त्वम् | ७. | आपका | आत्मन् | १२. | अपनी |
| यद् | ८. | जो | मायया ।। | १३. | माया से |

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आपको जहाँ से ज्ञान मिला है, जो आधार है, जो स्वामी है तथा आपका जो स्वरूप है; उसे बतावें। आप अकेले ही अपनी माया से पञ्च महाभूतों के द्वारा प्राणियों की सृष्टि करते हैं।

## पञ्चमः श्लोकः

आत्मन् भावयसे तानि न पराभावयन् स्वयम् ।
आत्मशक्तिमवष्टभ्य ऊर्णनाभिरिवाक्लमः ॥५॥

पदच्छेद—

आत्मन् भावयसे तानि, न पर अभावयन् स्वयम् ।
आत्मन् शक्तिम् अवष्टभ्य, ऊर्णनाभिः इव अक्लमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मन् | १. | हे भगवन् ! (आप) | आत्मन् | ५. | अपनी |
| भावयसे | १३. | सृष्टि करते हैं | शक्तिम् | ६. | शक्ति के |
| तानि, | १२. | इन (जीवों) की | अवष्टभ्य, | ७. | सहारे |
| न | ३. | नहीं | ऊर्णनाभिः | ८. | मकड़ी के |
| पर | २. | दूसरों को | इव | ९. | समान |
| अभावयन् | ४. | कष्ट पहुँचाते हुए | अक्लमः ॥ | ११. | विना श्रम के |
| स्वयम् । | १०. | अपने आप | | | |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप दूसरों को कष्ट न पहुँचाते हुए अपनी शक्ति के सहारे मकड़ी के समान अपने आप विना श्रम के इन जीवों की सृष्टि करते हैं ।

## षष्ठः श्लोकः

नाहं वेद परं ह्यस्मिन्नापरं न समं विभो ।
नामरूपगुणैर्भाव्यं सदसत् किञ्चिदन्यतः ॥६॥

पदच्छेद—

न अहम् वेद परम् हि अस्मिन्, न अपरम् न समम् विभो ।
नाम रूप गुणैः भाव्यम्, सत् असत् किञ्चित् अन्यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १३. | नहीं | विभो । | १. | हे प्रभो ! |
| अहम् | १२. | मैं | नाम | ३. | नाम |
| वेद | १४. | जानता (तथा) | रूप | ४. | रूप और |
| परम् | ११. | उत्कृष्ट (वस्तु) को | गुणैः | ५. | गुणों के द्वारा |
| हि | १०. | अथवा | भाव्यम्, | ६. | अनुभव में आने वाली |
| अस्मिन्, | २. | इस संसार में | सत् | ८. | सत् |
| न | १५. | न | असत् | ९. | असत् |
| अपरम् | १६. | अधम (और) | किञ्चित् | ७. | ऐसी कोई |
| न समम् | १७. | न मध्यम को (जानता) | अन्यतः ॥ | १८. | (जो) दूसरे से (उत्पन्न हुई हो) |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! इस संसार में नाम, रूप और गुणों के द्वारा अनुभव में आने वाली ऐसी कोई सत्, असत् अथवा उत्कृष्ट वस्तु को मैं नहीं जानता तथा न अधम और न मध्यम को जानता; जो दूसरे से उत्पन्न हुई हो । अर्थात् सब कुछ आपसे ही उत्पन्न है ।

## सप्तमः श्लोकः

स भवानचरद् घोरं यत् तपः सुसमाहितः ।
तेन खेदयसे नस्त्वं पराशङ्कां प्रयच्छसि ॥७॥

पदच्छेद—

सः अचरत् घोरम्, यत् तपः सुसमाहितः ।
तेन खेदयसे नः त्वम्, पर आशङ्काम् प्रयच्छसि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सः | १. सो जगत् के कारण | | तेन | ८. उससे |
| भवान् | २. आपने (भी) | | खेदयसे | ११. मोह में डाल रहे हैं (और) |
| अचरत् | ६. की है | | नः | १०. मुझे |
| घोरम्, | ४. कठिन | | त्वम्, | ९. आप |
| यत् | ७. अतः | | पर | १२. बहुत बड़ा |
| तपः | ५. तपस्या | | आशङ्काम् | १३. सन्देह |
| सुसमाहितः । | ३. एकाग्रमन से | | प्रयच्छसि ॥ | १४. उत्पन्न कर रहे हैं |

श्लोकार्थ—सो जगत् के कारण आपने भी एकाग्रमन से कठिन तपस्या की है; अतः उससे आप मुझे मोह में डाल रहे हैं और बहुत बड़ा सन्देह उत्पन्न कर रहे हैं ।

## अष्टमः श्लोकः

एतन्मे पृच्छतः सर्वं सर्वज्ञ सकलेश्वर ।
विजानीहि यथैवेदमहं बुद्ध्येऽनुशासितः ॥८॥

पदच्छेद—

एतद् मे पृच्छतः सर्वम्, सर्वज्ञ सकल ईश्वर ।
विजानीहि यथा एव इदम्, अहम् बुद्ध्ये अनुशासितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| एतद् | ५. इन | | विजानीहि | ८. उत्तर देवें |
| मे | ४. मेरे | | यथा | १३. भली भाँति |
| पृच्छतः | ७. प्रश्नों का | | एव | ९. ताकि |
| सर्वम्, | ६. सभी | | इदम्, | १२. इसे |
| सर्वज्ञ | १. सब कुछ जानने वाले | | अहम् | ११. मैं |
| सकल | २. (और) सबके | | बुद्ध्ये | १४. जान सकूं |
| ईश्वर । | ३. स्वामी हे प्रभो ! | | अनुशासितः ॥ | १०. उपदेश पाकर |

श्लोकार्थ—सब कुछ जानने वाले और सबके स्वामी हे प्रभो ! मेरे इन सभी प्रश्नों का उत्तर देवें, ताकि उपदेश पाकर मैं इसे भली-भाँति जान सकूं ।

# नवमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—

सम्यक् कारुणिकस्येदं वत्स ते विचिकित्सितम् ।
यदहं चोदितः सौम्य भगवद्वीर्यदर्शने ॥ ९ ॥

पदच्छेद—

सम्यक् कारुणिकस्य इदम्, वत्स ते विचिकित्सितम् ।
यद् अहम् चोदितः सौम्य, भगवद् वीर्य दर्शने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सम्यक् | ७. | उचित है | यद् | ८. | इससे |
| कारुणिकस्य | ३. | परम दयालु | अहम् | ९. | मैंने |
| इदम्, | ५. | यह | चोदितः | १२. | प्रेरणा पायी है |
| वत्स | १. | हे पुत्र ! | सौम्य | २. | नारद ! |
| ते | ४. | तुम्हारा | भगवद् वीर्य | १०. | भगवान् की लीलाओं के |
| विचिकित्सितम् । | ६. | सन्देह | दर्शने ॥ | ११. | वर्णन की |

श्लोकार्थ—हे पुत्र नारद ! परम दयालु तुम्हारा यह सन्देह उचित है। इससे मैंने भगवान् की लीलाओं के वर्णन की प्रेरणा पायी है।

# दशमः श्लोकः

नानृतं तव तच्चापि यथा मां प्रब्रवीषि भोः ।
अविज्ञाय परं मत्त एतावत्त्वं यतो हि मे ॥ १० ॥

पदच्छेद—

न अनृतम् तव तद् च अपि, यथा माम् प्रब्रवीषि भोः ।
अविज्ञाय परम् मत्तः, एतावत् त्वम् यतः हि मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १०. | नहीं (हैं) | भोः । | १. | हे नारद ! (तुम) |
| अनृतम् | ९. | असत्य | अविज्ञाय | १४. | न जानकर |
| तव | ५. | तुम्हारा | परम् | १३. | परे परमात्मा को |
| तद् | ६. | वह | मत्तः, | १२. | मुझसे |
| च | ७. | कथन | एतावत् | १८. | ऐसा (समझ रहे हो) |
| अपि, | ८. | भी | त्वम् | १६. | तुम |
| यथा | ३. | जैसा | यतः | ११. | क्योंकि |
| माम् | २. | मुझे | हि | १५. | ही |
| प्रब्रवीषि | ४. | बता रहे हो | मे ॥ | १७. | मुझे |

श्लोकार्थ—हे नारद ! तुम मुझे जैसा बता रहे हो, तुम्हारा वह कथन भी असत्य नहीं है। क्योंकि मुझसे परे परमात्मा को न जानकर ही तुम मुझे ऐसा समझ रहे हो।

## एकादशः श्लोकः

येन स्वरोचिषा विश्वं रोचितं रोचयाम्यहम् ।
यथार्कोऽग्निर्यथा सोमो यथर्क्षग्रहतारकाः ॥११॥

पदच्छेद—

येन स्व रोचिषा विश्वम्, रोचितम् रोचयामि अहम् ।
यथा अर्कः अग्निः यथा सोमः, यथा ऋक्ष ग्रह तारकाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| येन | १०. | उस | अर्कः | १. | सूर्य |
| स्व रोचिषा | ११. | स्वयं प्रकाश (परमात्मा) के | अग्निः | २. | अग्नि |
| विश्वम्, | १३. | संसार को | यथा | ४. | और |
| रोचितम् | १२. | प्रकाश से | सोमः, | ३. | चन्द्रमा |
| रोचयामि | १४. | प्रकाशित करता हूँ | यथा | ६. | तथा |
| अहम् । | ९. | मैं (भी) | ऋक्ष, ग्रह | ५. | नक्षत्र, ग्रह |
| यथा | ८. | समान | तारकाः ॥ | ७. | तारों के |

श्लोकार्थ—सूर्य, अग्नि, चन्द्रमा और नक्षत्र, ग्रह तथा तारों के समान मैं भी उस स्वयं-प्रकाश परमात्मा के प्रकाश से संसार को प्रकाशित करता हूँ ।

## द्वादशः श्लोकः

तस्मै नमो भगवते वासुदेवाय धीमहि ।
यन्मायया दुर्जयया मां ब्रुवन्ति जगद्गुरुम् ॥१२॥

पदच्छेद—

तस्मै नमः भगवते, वासुदेवाय धीमहि ।
यद् मायया दुर्जयया, माम् ब्रुवन्ति जगद् गुरुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मै | १. | उन | मायया | ८. | माया के कारण (लोग) |
| नमः | ४. | नमस्कार करते हैं (और उनका) | दुर्जयया, | ७. | अजेय |
| भगवते, | २. | भगवान् | माम् | ९. | मुझे |
| वासुदेवाय | ३. | वासुदेव को (हम) | ब्रुवन्ति | १२. | कहते हैं |
| धीमहि । | ५. | ध्यान करते हैं | जगद् | १० | संसार का |
| यद् | ६. | जिनकी | गुरुम् ॥ | ११. | पितामह |

श्लोकार्थ—उन भगवान् वासुदेव को हम नमस्कार करते हैं और उनका ध्यान करते हैं; जिनकी अजेय माया के कारण लोग मुझे संसार का पितामह कहते हैं ।

# त्रयोदशः श्लोकः

विलज्जमानया यस्य स्थातुमीक्षापथेऽमुया ।
विमोहिता विकत्थन्ते ममाहमिति दुर्धियः ॥ १३ ॥

पदच्छेद—

विलज्जमानया यस्य, स्थातुम् ईक्षा पथे अमुया ।
विमोहिताः विकत्थन्ते, मम अहम् इति दुर्धियः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विलज्जमानया | ४. | लजाती हुई | विमोहिताः | ६. | भ्रम में पड़े हुए |
| यस्य, | १. | उस (परमात्मा) की | विकत्थन्ते, | ११. | अभिमान करते हैं |
| स्थातुम् | ३. | ठहरने में | मम | ९. | (यह) मेरा (है) |
| ईक्षापथे | २. | दृष्टि के सामने | अहम् | ८. | (यह) मैं (हूँ) |
| अमुया । | ५. | उस (माया) से | इति | १०. | इस प्रकार |
| | | | दुर्धियः ॥ | ७. | अज्ञानी जन |

श्लोकार्थ—उस परमात्मा की दृष्टि के सामने ठहरने में लजाती हुई उस माया से भ्रम में पड़े हुए अज्ञानी जन यह 'मैं हूँ, यह मेरा है' इस प्रकार अभिमान करते हैं ।

# चतुर्दशः श्लोकः

द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीव एव च ।
वासुदेवात्परो ब्रह्मन्न चान्योऽर्थोऽस्ति तत्त्वतः ॥ १४ ॥

पदच्छेद—

द्रव्यम् कर्म च कालः च, स्वभावः जीवः एव च ।
वासुदेवात् परः ब्रह्मन्, न च अन्यः अर्थः अस्ति तत्त्वतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्रव्यम् | २. | द्रव्य | वासुदेवात् | १२. | भगवान् वासुदेव से |
| कर्म | ३. | कर्म | परः | १३. | भिन्न |
| च | ४. | और | ब्रह्मन्, | १. | हे ब्रह्मज्ञानी नारद जी ! |
| कालः | ५. | काल | न | १७. | नहीं |
| च, | ६. | तथा | च | १४. | कोई |
| स्वभावः | ७. | स्वभाव | अन्यः | १५. | दूसरी |
| जीवः | ९. | प्राणी | अर्थः | १६. | चीज |
| एव | १०. | भी | अस्ति | १८. | हैं |
| च । | ८. | एवम् | तत्त्वतः ॥ | ११. | वास्तव में |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मज्ञानी नारद जी ! द्रव्य, कर्म और काल तथा स्वभाव एवं प्राणी भी वास्तव में भगवान् वासुदेव से भिन्न कोई दूसरी चीज नहीं हैं ।

# पञ्चदशः श्लोकः

नारायणपरा वेदा देवा नारायणाङ्गजाः ।
नारायणपरा लोका नारायणपरा मखाः ॥१५॥

पदच्छेद—

नारायण पराः वेदाः, देवाः नारायण अङ्गजाः ।
नारायण पराः लोकाः, नारायण पराः मखाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| नारायण | २. भगवान् नारायण के | | नारायण | ८. भगवान् नारायण में |
| पराः | ३. बोधक (हैं) | | पराः | ९. स्थित हैं (तथा) |
| वेदाः | १. वेद | | लोकाः | ७. तीनों लोक |
| देवाः | ४. देवगण | | नारायण | ११. भगवान् नारायण को |
| नारायण | ५. भगवान् नारायण के | | पराः | १२. प्रसन्न करते हैं |
| अङ्गजाः । | ६. शरीर से उत्पन्न (हैं) | | मखाः ॥ | १०. यज्ञ (भी) |

श्लोकार्थ—वेद भगवान् नारायण के बोधक हैं। देवगण भगवान् नारायण के शरीर से उत्पन्न हैं। तीनों लोक भगवान् नारायण में स्थित हैं तथा यज्ञ भी भगवान् नारायण को प्रसन्न करते हैं।

# षोडशः श्लोकः

नारायणपरो योगो नारायणपरं तपः ।
नारायणपरं ज्ञानं नारायणपरा गतिः ॥१६॥

पदच्छेद—

नारायण परः योगः, नारायण परम् तपः ।
नारायण परम् ज्ञानम्, नारायण परा गतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| नारायण | २. भगवान् नारायण का | | नारायण | ८. भगवान् नारायण को |
| परः | ३. दर्शन कराता (है) | | परम् | ९. बताता है (और) |
| योगः | १. योग | | ज्ञानम् | ७. ज्ञान |
| नारायण | ५. भगवान् नारायण की | | नारायण | ११. भगवान् नारायण में |
| परम् | ६. प्राप्ति कराती (है) | | परा | १२. स्थित है |
| तपः । | ४. तपस्या | | गतिः ॥ | १०. मोक्ष |

श्लोकार्थ—योग भगवान् नारायण का दर्शन कराता है। तपस्या भगवान् नारायण की प्राप्ति कराती है। ज्ञान भगवान् नारायण को बताता है और मोक्ष भगवान् नारायण में स्थित है।

## सप्तदशः श्लोकः

तस्यापि द्रष्टुरीशस्य कूटस्थस्याखिलात्मनः ।
सृज्यं सृजामि सृष्टोऽहमीक्षयैवाभिचोदितः ॥१७॥

पदच्छेद—

तस्य अपि द्रष्टुः ईशस्य, कूटस्थस्य अखिल आत्मनः ।
सृज्यम् सृजामि सृष्टः अहम्, ईक्षया एव अभिचोदितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ७. | उस (परमात्मा) की | सृज्यम् | १३. | ससार की |
| अपि | २. | भी | सृजामि | १४. | सृष्टि करता हूँ |
| द्रष्टुः | १. | साक्षी होने पर | सृष्टः | १०. | उत्पन्न होकर (और) |
| ईशस्य | ३. | स्वामी (तथा) | अहम् | १२. | मैं |
| कूटस्थस्य | ४. | निर्विकार होने पर (भी) | ईक्षया | ९. | दृष्टि से |
| अखिल | ५. | सबकी | एव | ८. | ही |
| आत्मनः । | ६. | आत्मा | अभिचोदितः ॥ | ११. | प्रेरणा पाकर |

श्लोकार्थ—साक्षी होने पर भी स्वामी तथा निर्विकार होने पर भी सबकी आत्मा उस परमात्मा की ही दृष्टि से उत्पन्न होकर और प्रेरणा पाकर मैं संसार की सृष्टि करता हूँ ।

## अष्टादशः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इति निर्गुणस्य गुणास्त्रयः ।
स्थितिसर्गनिरोधेषु गृहीता मायया विभोः ॥१८॥

पदच्छेद—

सत्त्वम् रजः तमः इति, निर्गुणस्य गुणाः त्रयः ।
स्थिति सर्ग निरोधेषु, गृहीताः मायया विभोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत्त्वम् | ७. | सत्त्व | स्थिति | ४. | पालन (और) |
| रजः | ८. | रज (और) | सर्ग | ३. | उत्पत्ति |
| तमः | ९. | तम | निरोधेषु | ५. | प्रलय के लिए |
| इति | १०. | इन | गृहीताः | १३. | धारण किया है |
| निर्गुणस्य | १. | निर्गुण (एवं) | मायया | ६. | माया के द्वारा |
| गुणाः | १२. | गुणों को | विभोः ॥ | २. | अनन्त परमात्माने |
| त्रयः । | ११. | तीन | | | |

श्लोकार्थ—निर्गुण एवं अनन्त परमात्मा ने उत्पत्ति, पालन और प्रलय के लिए माया के द्वारा सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणों को धारण किया है ।

# एकोनविंशः श्लोकः

कार्यकारणकर्तृत्वे द्रव्यज्ञानक्रियाश्रयाः ।
बध्नन्ति नित्यदा मुक्तं मायिनं पुरुषं गुणाः ॥१९॥

पदच्छेद—

कार्य कारण कर्तृत्वे, द्रव्य ज्ञान क्रिया आश्रयाः ।
बध्नन्ति नित्यदा मुक्तम्, मायिनम् पुरुषम् गुणाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कार्य कारण | १०. | कार्य-कारण और | बध्नन्ति | १२. | बाँध लेते हैं |
| कर्तृत्वे | ११. | कर्तापन के अभिमान में | नित्यदा | ६. | नित्य |
| द्रव्य | १. | द्रव्य | मुक्तम् | ७. | मुक्त (और) |
| ज्ञान | २. | ज्ञान और | मायिनम् | ८. | माया में स्थित |
| क्रिया | ३. | क्रिया को | पुरुषम् | ९. | आदिपुरुष भगवान् को |
| आश्रयाः । | ४. | उत्पन्न करने वाले | गुणाः ॥ | ५. | सत्त्वादि गुण |

श्लोकार्थ—द्रव्य, ज्ञान और क्रिया को उत्पन्न करने वाले सत्त्वादि-गुण नित्य मुक्त और माया में स्थित आदि पुरुष भगवान् को कार्य-कारण और कर्तापन के अभिमान में बाँध लेते हैं ।

# विंशः श्लोकः

स एष भगवाँल्लिङ्गैस्त्रिभिरेभिरधोक्षजः ।
स्वलक्षितगतिर्ब्रह्मन् सर्वेषां मम चेश्वरः ॥२०॥

पदच्छेद—

सः एषः भगवान् लिङ्गैः, त्रिभिः एभिः अधोक्षजः ।
स्वलक्षित गतिः ब्रह्मन्, सर्वेषाम् मम च ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ९. | वे | स्वलक्षित | ५. | अज्ञात |
| एषः | ८. | ये (ही) | गतिः | ६. | स्वरूप वाले (एवम्) |
| भगवान् | १०. | भगवान् | ब्रह्मन् | १. | हे नारद जी ! |
| लिङ्गैः | ४. | आवरणों के कारण | सर्वेषाम् | ११. | सबके |
| त्रिभिः | ३. | तीन गुणों के | मम | १३. | मेरे |
| एभिः | २. | इन | च | १२. | और |
| अधोक्षजः । | ७. | इन्द्रियों से परे | ईश्वरः ॥ | १४. | स्वामी (हैं) |

श्लोकार्थ—हे नारद जी ! इन तीन गुणों के आवरणों के कारण अज्ञात स्वरूप वाले एवम् इन्द्रियों से परे ये ही वे भगवान् सबके और मेरे स्वामी हैं ।

## एकविंशः श्लोकः

कालं कर्म स्वभावं च मायेशो मायया स्वया ।
आत्मन् यदृच्छया प्राप्तं विबुभूषुरुपाददे ॥२१॥

पदच्छेद—

कालम् कर्म स्वभावम् च, माया ईशः मायया स्वया ।
आत्मन् यदृच्छया प्राप्तम्, विबुभूषुः उपाददे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालम् कर्म | ९. | काल, कर्म | स्वया । | ४. | अपनी |
| स्वभावम | ११. | स्वभाव को | आत्मन् | ६. | अपने में |
| च | १०. | और | यदृच्छया | ७. | स्वेच्छा से |
| माया | १. | माया | प्राप्तम् | ८ | आये हुए |
| ईशः | २. | पति (भगवान्) ने | विबुभूषुः | ३. | वहुत रूपों में होने की इच्छा से |
| मायया | ५. | माया के द्वारा | उपाददे ॥ | १२. | स्वीकार किया |

श्लोकार्थ—माया-पति भगवान् ने वहुत रूपों में होने की इच्छा से अपनी माया के द्वारा अपने में स्वेच्छा से आये हुए काल, कर्म और स्वभाव को स्वीकार किया ।

## द्वाविंशः श्लोकः

कालाद् गुणव्यतिकरः, परिणामः स्वभावतः ।
कर्मणो जन्म महतः, पुरुषाधिष्ठितादभूत् ॥२२॥

पदच्छेद—

कालात् गुण व्यतिकरः, परिणामः स्वभावतः ।
कर्मणः जन्म महतः, पुरुष अधिष्ठितात् अभूत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालात् | ३. | काल से | कर्मणः | ८. | कर्म से |
| गुण | ४. | सत्त्वादि गुणों में | जन्म | १०. | उत्पत्ति |
| व्यतिकरः | ५. | संवन्ध | महतः | ९. | महत्तत्त्व की |
| परिणामः | ७. | परिवर्तन-क्रिया (और) | पुरुष | १. | भगवान् के द्वारा |
| स्वभावतः । | ६. | स्वभाव से | अधिष्ठितात् | २. | स्वीकृत |
| | | | अभूत् ॥ | ११. | हुई |

श्लोकार्थ—भगवान् के द्वारा स्वीकृत काल से सत्त्वादि-गुणों में संवन्ध, स्वभाव से परिवर्तन-क्रिया और कर्म से महत्तत्त्व की उत्पत्ति हुई ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

महतस्तु विकुर्वाणाद्रजःसत्त्वोपबृंहितात् ।
तमःप्रधानस्त्वभवद् द्रव्यज्ञानक्रियात्मकः ॥२३॥

पदच्छेद— महतः तु विकुर्वाणात्, रजः सत्त्व उपबृंहितात् ।
तमः प्रधानः तु अभवत्, द्रव्य ज्ञान क्रिया आत्मकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महतः | ५. | महत्तत्त्व के | तमः | ९. | तमोगुण |
| तु | १. | तदनन्तर | प्रधानः | १०. | प्रधान |
| विकुर्वाणात् | ६. | विकार से | तु | ११. | अहंतत्त्व की |
| रजः | २. | रजोगुण (और) | अभवत् | १२. | उत्पत्ति हुई |
| सत्त्व | ३. | सत्त्वगुण की | द्रव्य, ज्ञान | ७ | महाभूत, ज्ञानेन्द्रिय और |
| उपबृंहितात् । | ४. | अधिकता वाले | क्रिया आत्मकः ॥ | ८. | कर्मेन्द्रिय के उत्पादक |

श्लोकार्थ—तदनन्तर रजोगुण और सत्त्वगुण की अधिकता वाले महत्तत्त्व के विकार से महाभूत, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय के उत्पादक तमोगुण प्रधान अहन्तत्त्व की उत्पत्ति हुई ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

सोऽहङ्कार इति प्रोक्तो विकुर्वन् समभूत्त्रिधा ।
वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेति यद्भिदा ।
द्रव्यशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिरिति प्रभो ॥२४॥

पदच्छेद— सः अहङ्कारः इति प्रोक्तः, विकुर्वन् समभूत् त्रिधा ।
वैकारिकः तैजसः च, तामसः च इति यद् भिदा ।
द्रव्य शक्तिः क्रिया शक्तिः, ज्ञान शक्तिः इति प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वही (तत्त्व) | तामसः च | १२. | तमोगुण प्रधान तामस |
| अहङ्कारः | ३. | अहंकार | इति | १३. | ये |
| इति | ४. | इस नाम से | यद् | ९. | जिसके |
| प्रोक्तः | ५. | कहा गया है | भिदा । | १४. | भेद (हैं, वे ही) |
| विकुर्वन् | ६. | (उसमें) विकार होने पर | द्रव्य शक्तिः | १५. | द्रव्य शक्ति |
| समभूत् | ८. | विभक्त हो गया | क्रिया शक्तिः | १६. | क्रिया शक्ति और |
| त्रिधा । | ७. | (वह) तीन रूपों में | ज्ञान शक्तिः | १७. | ज्ञान शक्ति |
| वैकारिकः | १०. | सत्त्व गुण प्रधान वैकारिक | इति | १८. | इस नाम से भी प्रसिद्ध हैं |
| तैजसः च | ११. | रजोगुण प्रधान तैजस और | प्रभो ॥ | १. | हे नारद जी ! |

श्लोकार्थ—हे नारद जी ! वही तत्त्व अहंकार इस नाम से कहा गया है । उसमें विकार होने पर वह तीन रूपों में विभक्त हो गया; जिसके सत्त्वगुण-प्रधान वैकारिक, रजोगुण-प्रधान तैजस और तमोगुण-प्रधान तामस ये भेद हैं । वे ही द्रव्य-शक्ति, क्रिया-शक्ति और ज्ञान-शक्ति इस नाम से भी प्रसिद्ध हैं ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

तामसादपि भूतादेर्विकुर्वाणादभून्नभः ।
तस्य मात्रा गुणः शब्दो लिङ्गं यद् द्रष्टृदृश्ययोः ।।२५।।

पदच्छेद—

तामसात् अपि भूत आदेः, विकुर्वाणात् अभूत् नभः ।
तस्य मात्रा गुणः शब्दः, लिङ्गम् यद् द्रष्टृ दृश्ययोः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तामसात् | २. | तामस अहंकार से | मात्रा | ८. | सूक्ष्म रूप (और) |
| अपि | ३. | ही | गुणः | ९. | गुण |
| भूत आदेः | १. | पञ्च महाभूतों का कारण | शब्दः | १०. | शब्द (है) |
| विकुर्वाणात् | ४. | परिवर्तन होने पर | लिङ्गम् | १४. | बोध होता है |
| अभूत् | ६. | उत्पन्न हुआ | यद् | ११. | जिस (शब्द) से |
| नभः । | ५. | आकाश | द्रष्टृ | १२. | साक्षी परमात्मा (और) |
| तस्य | ७. | उस (आकाश) का | दृश्ययोः ।। | १३. | जगत् का |

श्लोकार्थ—पञ्च महाभूतों का कारण तामस अहंकार से ही परिवर्तन होने पर आकाश उत्पन्न हुआ। उस आकाश का सूक्ष्म रूप और गुण शब्द है, जिस शब्द से साक्षी परमात्मा और जगत् का बोध होता है।

## षड्विंश श्लोकः

नभसोऽथ विकुर्वाणादभूत् स्पर्शगुणोऽनिलः ।
परान्वयाच्छब्दवांश्च प्राण ओजः सहो बलम् ।।२६।।

पदच्छेद—

नभसः अथ विकुर्वाणात्, अभूत् स्पर्श गुणः अनिलः ।
पर अन्वयात् शब्दवान् च, प्राणः ओजः सहः बलम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नभसः | २. | आकाश में | पर | ८. | कारण के |
| अथ | १. | तदनन्तर | अन्वयात् | ९. | संबन्ध से |
| विकुर्वाणात् | ३. | परिवर्तन होने पर | शब्दवान् | १०. | शब्द वाला |
| अभूत् | ७. | उत्पन्न हुआ (वह) | च | १३. | और |
| स्पर्श | ४. | स्पर्श | प्राणः, ओजः | ११. | जीवन-शक्ति, स्फूर्ति |
| गुणः | ५. | गुण वाला | सहः | १२. | सहन-शक्ति |
| अनिलः । | ६. | वायु | बलम् ।। | १४. | बल रूप (है) |

श्लोकार्थ—तदनन्तर आकाश में परिवर्तन होने पर स्पर्श गुण वाला वायु उत्पन्न हुआ। वह कारण के सम्बन्ध से शब्द वाला, जीवन-शक्ति, स्फूर्ति, सहन-शक्ति और बल-रूप है।

## सप्तविंशः श्लोकः

वायोरपि विकुर्वाणात् कालकर्मस्वभावतः ।
उदपद्यत तेजो वै रूपवत् स्पर्शशब्दवत् ॥२७॥

पदच्छेद—

वायोः अपि विकुर्वाणात्, काल कर्म स्वभावतः ।
उदपद्यत तेजः वै, रूपवत् स्पर्श शब्दवत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वायोः | ४. | वायु में | उदपद्यत | ९. | उत्पन्न हुआ (जो) |
| अपि | ५. | भी | तेजः | ८. | तेज |
| विकुर्वाणात् | ६. | परिवर्तन होने से | वै | ७. | ही |
| काल | १. | काल | रूपवत् | १०. | रूप |
| कर्म | २. | कर्म और | स्पर्श | ११. | स्पर्श और |
| स्वभावतः । | ३. | स्वभाव के कारण | शब्दवत् ॥ | १२. | शब्द गुण वाला (है) |

श्लोकार्थ—काल, कर्म और स्वभाव के कारण वायु में भी परिवर्तन होने से ही तेज उत्पन्न हुआ; जो रूप स्पर्श और शब्द गुण वाला है ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

तेजसस्तु विकुर्वाणादासीदम्भो रसात्मकम् ।
रूपवत् स्पर्शवच्चाम्भो घोषवच्च परान्वयात् ॥२८॥

पदच्छेद—

तेजसः तु विकुर्वाणात्, आसीत् अम्भः रस आत्मकम् ।
रूपवत् स्पर्शवत् च अम्भः, घोषवत् च पर अन्वयात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेजसः | २. | तेज से | रूपवत् | ११. | रूप गुण |
| तु | १. | तदनन्तर | स्पर्शवत् | १२. | स्पर्श गुण |
| विकुर्वाणात् | ३. | परिवर्तन होने पर | च | ८. | वह |
| आसीत् | ७. | उत्पन्न हुआ | अम्भः | ९. | जल |
| अम्भः | ६. | जल | घोषवत् | १४. | शब्द गुण से भी युक्त (है) |
| रस | ४. | रस गुण | च | १३. | और |
| आत्मकम् । | ५. | वाला | पर,अन्वयात् ॥ | १०. | कारण के, संबन्ध से |

श्लोकार्थ—तदनन्तर तेज से परिवर्तन होने पर रस गुण वाला जल उत्पन्न हुआ । वह जल कारण के सम्बन्ध से रूप गुण, स्पर्श गुण और शब्द गुण से भी युक्त है ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

विशेषस्तु विकुर्वाणादम्भसो गन्धवानभूत् ।
परान्वयाद् रसस्पर्शशब्दरूपगुणान्वितः ।। २९ ।।

पदच्छेद—

विशेषः तु विकुर्वाणात्, अम्भसः गन्धवान् अभूत् ।
पर अन्वयात रस स्पर्श, शब्द रूप गुण अन्वितः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| विशेषः | ४. विशेष रूप से | अन्वयात् | ८. संबन्ध से (वह) |
| तु | १. तथा | रस | ९. रस |
| विकुर्वाणात् | ३. परिवर्तन होने पर | स्पर्श | १०. स्पर्श |
| अम्भसः | २. जल से | शब्द | ११. शब्द और |
| गन्धवान् | ५. गन्धगुण वाली (पृथ्वी) | रूप | १२. रूप |
| अभूत् । | ६. उत्पन्न हुई | गुण | १३. गुण से (भी) |
| पर | ७. कारण के | अन्वितः ।। | १४. युक्त (है) |

श्लोकार्थ—तथा जल से परिवर्तन होने पर विशेष रूप से गन्ध गुणवाली पृथ्वी उत्पन्न हुई। कारण के संबन्ध से वह रस, स्पर्श, शब्द और रूप गुण से भी युक्त है।

# त्रिंशः श्लोकः

वैकारिकान्मनो जज्ञे देवा वैकारिका दश ।
दिग्वातार्कप्रचेतोऽश्विवह्नीन्द्रोपेन्द्रमित्रकाः ।। ३० ।।

पदच्छेद—

वैकारिकात् मनः जज्ञे, देवाः वैकारिकाः दश ।
दिक् वात अर्क प्रचेतस् अश्विन्, वह्नि इन्द्र उपेन्द्र मित्र काः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| वैकारिकात् | १. वैकारिक अहंकार से | अर्क | ८. सूर्य |
| मनः | २. मन (और) | प्रचेतस् | ९. वरुण |
| जज्ञे. | ६. उत्पन्न हुए (ये देवता हैं) | अश्विन् | १०. अश्विनी कुमार |
| देवाः | ५. देवता | वह्नि | ११. अग्नि |
| वैकारिकाः | ३. इन्द्रियों के स्वामी | इन्द्र, उपेन्द्र | १२. इन्द्र, विष्णु |
| दश । | ४. दस | मित्र | १३. मित्र (एवं) |
| दिक् वात | ७. दिशा, वायु | काः ।। | १४. प्रजापति |

श्लोकार्थ—वैकारिक अहंकार से मन और इन्द्रियों के स्वामी दस देवता उत्पन्न हुए। ये देवता हैं—दिशा, वायु, सूर्य, वरुण, अश्विनी कुमार, अग्नि, इन्द्र, विष्णु, मित्र एवं प्रजापति ।

## एकत्रिंशः श्लोकः

तैजसात्तु विकुर्वाणादिन्द्रियाणि दशाभवन् ।
ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिर्बुद्धिः प्राणश्च तैजसौ ।
श्रोत्रं त्वग्घ्राणदृग्जिह्वा वाग्दोर्मेढ्राङ्‌घ्रिपायवः ॥३१॥

पदच्छेद— तैजसात् तु विकुर्वाणात्, इन्द्रियाणि दश अभवन् ।
ज्ञान शक्तिः क्रिया शक्तिः, बुद्धिः प्राणः च तैजसौ ।
श्रोत्रम् त्वक् घ्राण दृश् जिह्वाः, वाक् दोः मेढ्र अङ्‌घ्रि पायवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तैजसात् | १. | तैजस अहंकार से | तैजसौ । | २२. | तैजस अहंकार से (ही उत्पन्न हैं) |
| तु | १६. | तथा | श्रोत्रम् | ३. | कान |
| विकुर्वाणात् | २. | परिवर्तन होने पर | त्वक् | ४. | चमड़ी |
| इन्द्रियाणि | १४. | इन्द्रियाँ | घ्राण | ५. | नासिका |
| दश | १३. | दश | दृश् | ६. | आँख |
| अभवन् । | १५. | उत्पन्न हुईं | जिह्वाः | ७. | जीभ |
| ज्ञानशक्तिः | १७. | ज्ञान शक्ति | वाक् | ८. | वाणी |
| क्रियाशक्तिः | २०. | क्रिया शक्ति | दोः | ९. | हाथ |
| बुद्धिः | १८. | बुद्धि | मेढ्र | १०. | जननेन्द्रिय |
| प्राणः | २१. | प्राण (भी) | अङ्‌घ्रि | ११. | पैर (और) |
| च | १९. | और | पायवः । | १२. | गुदा (नामक) |

श्लोकार्थ—तैजस अहंकार से परिवर्तन होने पर कान, चमड़ी, नासिका, आँख, जीभ, वाणी, हाथ, जननेन्द्रिय, पैर और गुदा नामक दस इन्द्रियाँ उत्पन्न हुईं तथा ज्ञानशक्ति बुद्धि और क्रिया-शक्ति प्राण भी तैजस अहंकार से ही उत्पन्न हैं ।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

यदैतेऽसङ्गता भावा भूतेन्द्रियमनोगुणाः ।
यदायतननिर्माणे न शेकुर्ब्रह्मवित्तमम् ॥३२॥

पदच्छेद— यदा एते असङ्गताः भावाः, भूत इन्द्रिय मनः गुणा ।
यदा आयतन निर्माणे, न शेकुः ब्रह्म वित्तमम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | ६. | जब | यदा | ८. | (तथा) जब (ये) |
| एते | ४. | ये | आयतन | ९. | शरीर की |
| असङ्गताः | ७. | अलग-अलग (विद्यमान थे) | निर्माणे | १०. | रचना करने में |
| भावाः | ५. | पदार्थ | न | ११. | नहीं |
| भूत, इन्द्रिय | २. | पञ्च महाभूत, दस इन्द्रियाँ | शेकुः | १२. | समर्थ हो सके |
| मनः, गुणाः । | ३. | मन और सत्त्वादि गुण | ब्रह्म वित्तमम् ॥ | १. | हे ब्रह्मज्ञानी नारद जी ! |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मज्ञानी नारद जी ! पञ्च महाभूत, दस इन्द्रियाँ, मन और सत्त्वादि गुण, ये पदार्थ जब अलग-अलग विद्यमान थे तथा जब ये शरीर की रचना करने में समर्थ नहीं हो सके ।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तदा संहत्य चान्योन्यं भगवच्छक्तिचोदिताः ।
सदसत्त्वमुपादाय चोभयं ससृजुर्ह्यदः ॥३३॥

पदच्छेद—

तदा संहृत्य च अन्योन्यम्, भगवत् शक्ति चोदिताः ।
सत् असत्त्वम् उपादाय, च उभयम् ससृजुः हि अदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तदा | १. | तब | असत्त्वम् | ६. | कार्य भाव को |
| संहृत्य | ६. | मिलकर | उपादाय | १०. | स्वीकार करके |
| च | ७. | और | च | २. | भूतादि गुणों ने |
| अन्योन्यम् | ५. | एक दूसरे से | उभयम् | १२. | दोनों की |
| भगवत् शक्ति | ३. | भगवान् की माया की | ससृजुः | १४. | सृष्टि की |
| चोदिताः । | ४. | प्रेरणा पाने पर | हि | १३. | ही |
| सत् | ८. | कारण | अदः ॥ | ११. | उस (अण्ड-पिण्ड) |

श्लोकार्थ—तब भूतादि गुणों ने भगवान् की माया की प्रेरणा पाने पर एक दूसरे से मिलकर और कारण-कार्य भाव को स्वीकार करके उस अण्ड-पिण्ड दोनों की ही सृष्टि की ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

वर्षपूगसहस्रान्ते तदण्डमुदकेशयम् ।
कालकर्मस्वभावस्थो जीवोऽजीवमजीवयत् ॥३४॥

पदच्छेद—

वर्ष पूग सहस्र अन्ते, तद् अण्डम् उदके शयम् ।
काल कर्म स्वभावस्थः, जीवः अजीवम् अजीवयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वर्ष | ६. | वर्षों का | शयम् । | १०. | स्थित (तथा) |
| पूग | ७. | समूह | काल | १. | काल |
| सहस्र | ५. | हजारों | कर्म | २. | कर्म और |
| अन्ते | ८. | बीतने पर | स्वभावस्थः | ३. | स्वभाव से युक्त |
| अद् | १२. | उस (हिरण्यमय) | जीवः | ४. | आदि पुरुष ने |
| अण्डम् | १३. | अण्डे को | अजीवम् | ११. | अचेतन |
| उदके | ९. | जल में | अजीवयत ॥ | १४. | जीवित किया |

श्लोकार्थ—काल, कर्म और स्वभाव से युक्त आदि पुरुष ने हजारों वर्षों का समूह बीतने पर जल में स्थित तथा अचेतन उस हिरण्यमय अण्डे को जीवित किया ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

स एव पुरुषस्तस्मादण्डं निर्भिद्य निर्गतः ।
सहस्रोर्वङ्घ्रिबाह्वक्षः सहस्राननशीर्षवान् ॥३५॥

पदच्छेद—

सः एव पुरुषः तस्मात्, अण्डम् निर्भिद्य निर्गतः ।
सहस्र उरु अङ्घ्रि बाहु अक्षः, सहस्र आनन शीर्षवान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः एव | १. | वही | उरु | ७. | जाँघ |
| पुरुषः | २. | आदि पुरुष | अङ्घ्रि | ८. | पैर |
| तस्मात् | ३. | उस (सुवर्ण के) | बाहु | ९. | भुजा |
| अण्डम् | ४. | अण्डे को | अक्षः | १०. | आँख (तथा) |
| निर्भिद्य | ५. | फोड़कर | सहस्र | ११. | हजारों |
| निर्गतः । | १४. | बाहर निकला | आनन | १२. | मुख और |
| सहस्र | ६. | हजारों | शीर्षवान् ॥ | १३. | मस्तक के साथ |

श्लोकार्थ— वही आदि पुरुष उस सुवर्ण के अण्डे को फोड़कर हजारों जाँघ, पैर, भुजा, आँख तथा हजारों मुख और मस्तक के साथ बाहर निकला ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

यस्येहावयवैर्लोकान् कल्पयन्ति मनीषिणः ।
कट्यादिभिरधः सप्त सप्तोर्ध्वं जघनादिभिः ॥३६॥

पदच्छेद—

यस्य इह अवयवैः लोकान्, कल्पयन्ति मनीषिणः ।
कटि आदिभिः अधः सप्त, सप्त ऊर्ध्वम् जघन आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्य | १. | उस (आदि पुरुष) के | आदिभिः | ३. | (नीचे के) सात अंगों से |
| इह | १०. | इस प्रकार | अधः | ४. | पाताल के |
| अवयवैः | १२. | अङ्गों से (ही) | सप्त | ५. | सात लोकों की (और) |
| लोकान् | १३. | चौदह लोकों की | सप्त | ९. | सात लोकों की |
| कल्पयन्ति | १४. | रचना मानते हैं | ऊर्ध्वम् | ८. | स्वर्ग के |
| मनीषिणः । | ११. | विद्वज्जन (उसके) | जघन | ६. | कमर से लेकर |
| कटि | २. | कमर से लेकर | आदिभिः ॥ | ७. | (ऊपर के सात) अंगों से |

श्लोकार्थ—उस आदि पुरुष के कमर से लेकर नीचे के सात अंगों से पाताल के सात लोकों की और कमर से लेकर ऊपर के सात अंगों से स्वर्ग के सात लोकों की, इस प्रकार विद्वज्जन उसके अंगों से ही चौदह लोकों की रचना मानते हैं ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

पुरुषस्य मुखं ब्रह्म क्षत्रमेतस्य बाहवः ।
ऊर्वोर्वैश्यो भगवतः पद्भ्यां शूद्रोऽभ्यजायत ॥ ३७ ॥

पदच्छेद—

पुरुषस्य मुखम् ब्रह्म, क्षत्रम् एतस्य बाहवः
ऊर्वोः वैश्यः भगवतः, पद्भ्याम् शूद्रः अभ्यजायत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरुषस्य | २. | विराट् पुरुष के | ऊर्वोः | ८. | दोनों जंघाओं से |
| मुखम् | ३. | मुख (हैं और) | वैश्यः | ९. | वैश्य (तथा) |
| ब्रह्म | १. | ब्राह्मण | भगवतः | ७. | भगवान् की |
| क्षत्रम् | ४. | क्षत्रिय | पद्भ्याम् | १०. | पैरों से |
| एतस्य | ५. | इसकी | शूद्रः | ११. | शूद्र वर्ण |
| बाहवः । | ६. | भुजायें (हैं इसी प्रकार) | अभ्यजायत ॥ | १२. | उत्पन्न हुआ है |

श्लोकार्थ—ब्राह्मण विराट् पुरुष के मुख हैं और क्षत्रिय इसकी भुजायें हैं । इसी प्रकार भगवान् की दोनों जंघाओं से वैश्य तथा पैरों से शूद्र वर्ण उत्पन्न हुआ है ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

भूर्लोकः कल्पितः पद्भ्यां भुवर्लोकोऽस्य नाभितः ।
हृदा स्वर्लोक उरसा महर्लोको महात्मनः ॥ ३८ ॥

पदच्छेद—

भूः लोकः कल्पितः पद्भ्याम्, भुवः लोकः अस्य नाभितः ।
हृदा स्वः लोकः उरसा, महः लोकः महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूर्लोकः | ३. | पृथ्वी लोक की | नाभितः । | ५. | नाभि से |
| कल्पितः | १२. | रचना हुई है | हृदा | ८. | हृदय से |
| पद्भ्याम् | २. | पैरों से | स्वर्लोकः | ९. | स्वर्ग लोक की (और) |
| भुवः | ६. | अन्तरिक्ष | उरसा | १०. | वक्षस्थल से |
| लोकः | ७. | लोक की | महर्लोकः | ११. | महर्लोक की |
| अस्य | ४. | उसके | महात्मनः ॥ | १. | विराट् पुरुष के |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के पैरों से पृथ्वी लोक की, उसके नाभि से अन्तरिक्ष लोक की, हृदय से स्वर्ग लोक की और वक्षस्थल से महर्लोक की रचना हुई है ।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

ग्रीवायां जनलोकश्च तपोलोकः स्तनद्वयात् ।
मूर्धभिः सत्यलोकस्तु ब्रह्मलोकः सनातनः ॥३९॥

पदच्छेद—

ग्रीवायाम् जनलोकः च, तपोलोकः स्तन द्वयात् ।
मूर्धभिः सत्यलोकः तु, ब्रह्मलोकः सनातनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ग्रीवायाम् | १. | (विराट् पुरुष के) गले से | मूर्धभिः | ७. | मस्तक से |
| जनलोकः | २. | जनलोक | सत्यलोकः | १०. | सत्यलोक (उत्पन्न हुआ है) |
| च | ३. | और | तु | ६. | तथा |
| तपोलोकः | ५. | तप लोक | ब्रह्मलोकः | ९. | ब्रह्मा का निवास स्थान |
| स्तनद्वयात् । | ४. | दोनों स्तनों से | सनातनः ॥ | ८. | सदा स्थायी |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के गले से जनलोक और दोनों स्तनों से तप लोक तथा मस्तक से सदा स्थायी ब्रह्मा का निवास स्थान सत्यलोक उत्पन्न हुआ है ।

# चत्वारिंशः श्लोकः

तत्कट्यां चातलं क्लृप्तमूरुभ्यां वितलं विभोः ।
जानुभ्यां सुतलं शुद्धं जङ्घाभ्यां तु तलातलम् ॥४०॥

पदच्छेद—

तत् कट्याम् च अतलम् क्लृप्तम्, ऊरुभ्याम् वितलम् विभोः ।
जानुभ्याम् सुतलम् शुद्धम्, जङ्घाभ्याम् तु तलातलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | १. | उस | विभोः । | २. | विराट् पुरुष की |
| कट्याम् | ३. | कमर से | जानुभ्याम् | ८. | घुटनों से |
| च | ५. | और | सुतलम् | १०. | सुतललोक की |
| अतलम् | ४. | अतल लोक की | शुद्धम् | ९. | पवित्र |
| क्लृप्तम् | १४. | रचना हुई है | जङ्घाभ्याम् | १२. | पिण्डलियों से |
| ऊरुभ्याम् | ६. | जङ्घाओं से | तु | ११. | तथा |
| वितलम् | ७. | वितल लोक की | तलातलम् ॥ | १३. | तलातल लोक की |

श्लोकार्थ—उस विराट् पुरुष की कमर से अतल लोक की और जंघाओं से वितल लोक की, घुटनों से पवित्र सुतल लोक की तथा पिण्डलियों से तलातल लोक की रचना हुई है ।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

महातलं तु गुल्फाभ्यां प्रपदाभ्यां रसातलम् ।
पातालं पादतलत इति लोकमयः पुमान् ॥४१॥

पदच्छेद—

महातलम् तु गुल्फाभ्याम्, प्रपदाभ्याम् रसातलम् ।
पातालम् पाद तलतः, इति लोकमयः पुमान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महातलम् | २. | महातल लोक | पातालम् | ७. | पाताल लोक (निर्मित है) |
| तु | ५. | तथा | पाद, तलतः | ६. | पैरों के, तलुवे से |
| गुल्फाभ्याम् | १. | एड़ी के ऊपर की गाँठों से | इति | ८. | इस प्रकार |
| प्रपदाभ्याम् | ३. | पंजों से | लोकमयः | १०. | सभी लोकों से युक्त है |
| रसातलम् । | ४. | रसातल लोक | पुमान् ॥ | ९. | (वह) विराट् पुरुष |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष की एड़ी के ऊपर की गाँठों से महातल लोक, पंजों से रसातल लोक तथा पैरों के तलुवे से पाताल लोक निर्मित है। इस प्रकार वह विराट् पुरुष सभी लोकों से युक्त है।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

भूर्लोकः कल्पितः पद्भ्यां भुवर्लोकोऽस्य नाभितः ।
स्वर्लोकः कल्पितो मूर्ध्ना इति वा लोककल्पना ॥४२॥

पदच्छेद—

भूः लोकः कल्पितः पद्भ्याम्, भुवः लोकः अस्य नाभितः ।
स्वः लोकः कल्पितः मूर्ध्ना, इति वा लोक कल्पना ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूः लोकः | ३. | पृथ्वी लोक | स्वः लोकः | ८. | स्वर्ग लोक |
| कल्पितः | ४. | उत्पन्न है | कल्पितः | ९. | उत्पन्न है |
| पद्भ्याम् | २. | पैरों से | मूर्ध्ना | ७. | मस्तक से |
| भुवः लोकः | ६. | अन्तरिक्ष लोक (तथा) | इति | १०. | ऐसी |
| अस्य | १. | इस (विराट् पुरुष) के | वा | ११. | भी |
| नाभितः । | ५. | नाभि से | लोक कल्पना॥ | १२. | लोक रचना है |

श्लोकार्थ—इस विराट् पुरुष के पैरों से पृथ्वी लोक उत्पन्न है, नाभि से अन्तरिक्ष लोक तथा मस्तक से स्वर्ग लोक उत्पन्न है; ऐसी भी लोक-रचना है।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
पञ्चमः अध्यायः ॥५॥

ब्रह्मोवाच— अथ षष्ठः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

**वाचां वह्नेर्मुखं क्षेत्रं छन्दसां सप्तधातवः ।
हव्यकव्यामृतान्नानां जिह्वा सर्वरसस्य च ॥१॥**

पदच्छेद— **वाचाम् वह्नेः मुखम् क्षेत्रम्, छन्दसाम् सप्त धातवः ।
हव्य कव्य अमृत अन्नानाम्, जिह्वा सर्व रसस्य च ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वाचाम् | २. | वाणी और | हव्य | ९. | हवन सामग्री |
| वह्नेः | ३. | अग्नि का | कव्य | १०. | श्राद्ध के अन्न और |
| मुखम् | १. | (विराट् पुरुष का) मुख | अमृत | ११. | जीवनदायी |
| क्षेत्रम् | १४. | उत्पत्ति स्थान है | अन्नानाम् | १२. | अन्नों का (एवं) |
| छन्दसाम् | ६. | छन्दों का | जिह्वा | ८. | रसनेन्द्रिय |
| सप्त | ४. | सातों | सर्व रसस्य | १३. | सभी रसों का |
| धातवः । | ५. | धातुयें | च ॥ | ७. | तथा |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष का मुख वाणी और अग्नि का; रक्त, मज्जा, वसा, मांस, अस्थि, मेदा और शुक्र ये सातों धातुएँ गायत्री, त्रिष्टुप, अनुष्टुप्, उष्णिक, बृहती पङ्क्ति और जगती छन्दों का तथा रसनेन्द्रिय हवन सामग्री, श्राद्ध के अन्न और जीवनदायी अन्नों का एवं सभी रसों का उत्पत्ति स्थान है ।

## द्वितीयः श्लोकः

**सर्वासूनां च वायोश्च तन्नासे परमायने ।
अश्विनोरोषधीनां च घ्राणो मोदप्रमोदयोः ॥२॥**

पदच्छेद— **सर्व असूनाम् च वायोः च, तद् नासे परम अयने ।
अश्विनोः ओषधीनाम् च, घ्राणः मोद प्रमोदयोः ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्व | ३. | सभी | परम अयने । | १४. | उत्पत्ति का स्थान है |
| असूनाम् | ४. | प्राणों की | अश्विनोः | ९. | दोनों अश्विनी कुमारों |
| च | ५. | और | ओषधीनाम् | १०. | वनस्पति |
| वायोः | ६. | वायु की | च | १२. | और |
| च | ७. | तथा | घ्राणः | ८. | नासिका इन्द्रिय |
| तद् | १. | विराट् पुरुष का | मोद | ११. | सामान्य गन्ध |
| नासे | २. | नासापुट | प्रमोदयोः ॥ | १३. | विशेष गन्ध की |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष का नासा पुट प्राण, अपान, व्यान, समान और उदान आदि सभी प्राणों की और वायु की तथा नासिका इन्द्रिय दोनों अश्विनी कुमारों, वनस्पति, सामान्य गन्ध और विशेष गन्ध की उत्पत्ति का स्थान है ।

## तृतीयः श्लोकः

रूपाणां तेजसां चक्षुर्दिवः सूर्यस्य चाक्षिणी ।
कर्णौ दिशां च तीर्थानां श्रोत्रमाकाशशब्दयोः ।
त द्गात्रं वस्तु साराणां सौभगस्य च भाजनम् ।। ३ ।।

पदच्छेद— रूपाणाम् तेजसाम् चक्षुः, दिवः सूर्यस्य च अक्षिणी ।
कर्णौ दिशाम् च तीर्थानाम्, श्रोत्रम् आकाश शब्दयोः ।
तद् गात्रम् वस्तु साराणाम् सौभगस्य च भाजनम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रूपाणाम् | २. | रूप और | श्रोत्रम् | ११. | कानों का छिद्र |
| तेजसाम् | ३. | तेज का | आकाश | १२. | आकाश और |
| चक्षुः | १. | नेत्र इन्द्रिय | शब्दयोः । | १३. | शब्द का (तथा) |
| दिवः सूर्यस्य | ५. | स्वर्ग और सूर्य का | तद् | १४. | उनका |
| च | ६. | तथा | गात्रम् | १५. | शरीर |
| अक्षिणी । | ४. | आँखों की पुतली | वस्तु | १६. | पदार्थों के |
| कर्णौ | ७. | कान | साराणाम् | १७. | सारभाग |
| दिशाम् | ८. | दिशाओं | सौभगस्य | १६. | सुन्दरता का |
| च | ९. | और | च | १८. | और |
| तीर्थानाम् | १०. | तीर्थों का | भाजनम् ।। | २०. | उत्पादक है |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष की नेत्र-इन्द्रिय रूप और तेज का, आँखों की पुतली स्वर्ग और सूर्य का तथा कान दिशाओं और तीर्थों का, कानों का छिद्र आकाश और शब्द का तथा उनका शरीर पदार्थों के सारभाग और सुन्दरता का उत्पादक है ।

## चतुर्थः श्लोकः

त्वगस्य स्पर्शवायोश्च सर्वमेधस्य चैव हि ।
रोमाण्युद्भिज्जजातीनां यैर्वा यज्ञस्तु सम्भृतः ।। ४ ।।

पदच्छेद— त्वक् अस्य स्पर्श वायोः च, सर्व मेधस्य च एव हि ।
रोमाणि उद्भिज्ज जातीनाम्, यैः वा यज्ञः तु सम्भृतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वक् | २. | चमड़ी से | रोमाणि | १०. | रोयें से |
| अस्य | १. | इस (विराट पुरुष) की | उद्भिज्ज | ११. | अंकुर वाली |
| स्पर्श | ३. | स्पर्श गुण | जातीनाम् | १२. | वनस्पतियाँ (उत्पन्न हुई हैं) |
| वायोः | ५. | वायु | यैः | १३. | जिनसे |
| च | ४. | और | वा | १४. | कि |
| सर्व | ७. | सभी प्रकार की | यज्ञः | १५. | यज्ञानुष्ठान |
| मेधस्य | ८. | पवित्रता | तु | ९. | और |
| च एव हि । | ६. | तथा | सम्भृतः ।। | १६. | सम्पन्न होता है |

श्लोकार्थ—इस विराट् पुरुष की चमड़ी से स्पर्शगुण और वायु तथा सभी प्रकार की पवित्रता और रोयें से अंकुर वाली वनस्पतियाँ उत्पन्न हुई हैं, जिनसे कि यज्ञानुष्ठान सम्पन्न होता है ।

## पञ्चमः श्लोकः

केशश्मश्रुनखान्यस्य　　शिलालोहाभ्रविद्युताम् ।
बाहवो　लोकपालानां　प्रायशः　क्षेमकर्मणाम् ॥ ५ ॥

पदच्छेद—

केश श्मश्रु नखानि अस्य, शिला लोह अभ्र विद्युताम् ।
बाहवः　लोकपालानाम्, प्रायशः　क्षेम　कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| केश | २ | बाल | विद्युताम् । | ८ | बिजली के (तथा) |
| श्मश्रु | ३. | दाढ़ी-मूंछ और | बाहवः | ६. | भुजायें |
| नखानि | ४. | नाखून (क्रमशः) | लोक | १३. | लोक |
| अस्य | १. | विराट् पुरुष के | पालानाम् | १४. | पालों के (उत्पादक हैं) |
| शिला | ५. | पत्थर | प्रायशः | १०. | प्रायः |
| लोह | ६. | लोहा | क्षेम | ११. | मंगल |
| अभ्र | ७. | बादल और | कर्मणाम् ॥ | १२ | कारी |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के बाल, दाढ़ी-मूंछ और नाखून क्रमशः पत्थर, लोहा, बादल और बिजली के तथा भुजायें प्रायः मंगलकारी लोकपालों के उत्पादक हैं ।

## षष्ठः श्लोकः

विक्रमो　भूर्भुवः　स्वश्च　क्षेमस्य　शरणस्य　च ।
सर्वकामवरस्यापि　हरेश्चरण　आस्पदम् ॥ ६ ॥

पदच्छेद—

विक्रमः भूः भुवः स्वः च, क्षेमस्य　शरणस्य च ।
सर्व काम वरस्य अपि, हरेः　चरणः　आस्पदम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विक्रमः | २. | गति | च । | ६. | तथा (उनके) |
| भूः | ३. | पृथ्वी | सर्व काम | ११. | सभी कामनाओं |
| भुवः | ४. | अन्तरिक्ष | वरस्य | १३. | वरदानों को |
| स्वः | ५. | स्वर्गलोक | अपि | १२. | और |
| च | ७. | और | हरेः | १. | विराट् पुरुष की |
| क्षेमस्य | ६. | कल्याण | चरणः | १०. | पैर |
| शरणस्य | ८. | अभय पद को | आस्पदम् ॥ | १४. | देने वाले हैं |

श्लोकार्थ—विराट् भगवान् की गति पृथ्वी, अन्तरिक्ष, स्वर्गलोक, कल्याण और अभयपद को तथा उनके पैर सभी कामनाओं और वरदानों को देने वाले हैं ।

## सप्तमः श्लोकः

अपां वीर्यस्य सर्गस्य पर्जन्यस्य प्रजापतेः ।
पुंसः शिश्न उपस्थस्तु प्रजात्यानन्दनिर्वृतेः ॥७॥

पदच्छेद—

अपाम् वीर्यस्य सर्गस्य, पर्जन्यस्य प्रजापतेः ।
पुंसः शिश्नः उपस्थः तु, प्रजाति आनन्द निर्वृतेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अपाम् | ३. | जल का | शिश्नः | २. | लिङ्ग |
| वीर्यस्य | ४. | शुक्राणु का | उपस्थः | ९. | जननेन्द्रिय |
| सर्गस्य | ५. | सृष्टि का | तु | ८. | तथा (उनकी) |
| पर्जन्यस्य | ६. | मेघ का (और) | प्रजाति | १० | मैथुन के |
| प्रजापतेः । | ७. | ब्रह्मा का (उत्पादक है) | आनन्द | ११. | आनन्द को |
| पुंसः | १. | विराट् पुरुष का | निर्वृतेः । | १२. | प्रदान करने वाली है |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष का लिङ्ग जल का, शुक्राणु का, सृष्टि का, मेघ का और ब्रह्मा का उत्पादक है तथा उनकी जननेन्द्रिय मैथुन के आनन्द को प्रदान करने वाली है।

## अष्टमः श्लोकः

पायुर्यमस्य मित्रस्य परिमोक्षस्य नारद ।
हिंसाया निर्ऋतेर्मृत्योर्निरयस्य गुदः स्मृतः ॥८॥

पदच्छेद—

पायुः यमस्य मित्रस्य, परिमोक्षस्य नारद ।
हिंसायाः निर्ऋतेः मृत्योः, निरयस्य गुदः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पायुः | २. | गुदा इन्द्रिय | हिंसायाः | ७. | हिंसा |
| यमस्य | ३. | यमराज | निर्ऋतेः | ८. | निर्ऋति देवता |
| मित्रस्य | ४. | मित्र देवता (और) | मृत्योः | ९. | मृत्यु (और) |
| परिमोक्षस्य | ५. | मल त्याग का (तथा) | निरयस्य | १०. | नरक का |
| नारद । | १. | हे देवर्षे ! (विराट् पुरुष की) | गुदः | ६. | (उनका) गुदा द्वार |
| | | | स्मृतः ॥ | ११ | (स्थान) कहा गया है |

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! विराट् पुरुष की गुदा इन्द्रिय यमराज, मित्र देवता और मलत्याग का तथा उनका गुदा द्वार हिंसा, निर्ऋतिदेवता, मृत्यु और नरक का स्थान कहा गया है।

## नवमः श्लोकः

पराभूतेरधर्मस्य तमसश्चापि पश्चिमः ।
नाड्यो नदनदीनां तु गोत्राणामस्थिसंहृतिः ॥९॥

पदच्छेद—

पराभूतेः अधर्मस्य, तमसः च अपि पश्चिमः ।
नाड्यः नद नदीनाम् तु, गोत्राणाम् अस्थि संहृतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पराभूतेः | २. | पराजय | नाड्यः | ७. | नाड़ियाँ |
| अधर्मस्य | ३. | पाप | नद नदीनाम् | ८. | महानद और नदियों का |
| तमसः | ५. | अज्ञान का | तु | ९. | एवम् |
| च | ४. | और | गोत्राणाम् | १२. | पर्वतों का (उत्पादक है) |
| अपि | ६. | तथा | अस्थि | १०. | (उनकी) हड्डियों का |
| पश्चिमः । | १. | (विराट् पुरुष की) पीठ | संहृतिः ।। | ११. | समूह |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष की पीठ पराजय, पाप और अज्ञान का तथा नाड़ियाँ महानद और नदियों का एवम् उनकी हड्डियों का समूह पर्वतों का उत्पादक है ।

## दशमः श्लोकः

अव्यक्तरससिन्धूनां भूतानां निधनस्य च ।
उदरं विदितं पुंसो हृदयं मनसः पदम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अव्यक्त रस सिन्धूनाम्, भूतानाम् निधनस्य च ।
उदरम् विदितम् पुंसः, हृदयम् मनसः पदम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अव्यक्त | ३. | मूल प्रकृति | उदरम् | २. | उदर |
| रस | ४. | मधुरादि रस | विदितम् | १२. | कहा गया है |
| सिन्धूनाम् | ५. | समुद्र | पुंसः | १. | विराट् पुरुष का |
| भूतानाम् | ६. | प्राणी | हृदयम् | ९. | (उनका) हृदय |
| निधनस्य | ८. | मृत्यु का (और) | मनसः | १०. | मन का |
| च । | ७. | तथा | पदम् ।। | ११. | आश्रय |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष का उदर मूल-प्रकृति, मधुरादि-रस, समुद्र, प्राणी तथा मृत्यु का और उनका हृदय मन का आश्रय कहा गया है ।

# एकादशः श्लोकः

धर्मस्य मम तुभ्यं च कुमाराणां भवस्य च।
विज्ञानस्य च सत्त्वस्य परस्यात्मा परायणम् ॥ ११ ॥

पदच्छेद—

धर्मस्य मम तुभ्यम् च, कुमाराणाम् भवस्य च।
विज्ञानस्य च सत्त्वस्य, परस्य आत्मा परायणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्मस्य | ३. | धर्म का | विज्ञानस्य | १०. | ब्रह्मविद्या का |
| मम | ४. | मेरा | च | ११. | एवम् |
| तुभ्यम् | ६. | तुम्हारा | सत्त्वस्य | १२ | अन्तःकरण का |
| च | ५. | और | परस्य | १ | विराट् पुरुष की |
| कुमाराणाम् | ७. | सनकादि कुमारों का | आत्मा | २. | आत्मा |
| भवस्य | ९. | भगवान् शंकर का | परायणम् ॥ | १३. | आश्रय है |
| च। | ८. | तथा | | | |

श्लोकार्थ—हे देवर्षे ! विराट् पुरुष की आत्मा धर्म का, मेरा और तुम्हारा, सनकादि कुमारों का तथा भगवान् शंकर का, ब्रह्मविद्या का एवं अन्तःकरण का आश्रय है।

# द्वादशः श्लोकः

अहं भवान् भवश्चैव त इमे मुनयोऽग्रजाः।
सुरासुरनरा नागाः खगा मृगसरीसृपाः ॥ १२ ॥

पदच्छेद—

अहम् भवान् भवः च एव, ते इमे मुनयः अग्रजाः।
सुर असुर नराः नागाः, खगाः मृग सरीसृपाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम् | १. | (हे नारद जी !) मैं | अग्रजाः। | ७. | तुम्हारे बड़े भाई |
| भवान् | २. | आप | सुर | १०. | देव |
| भवः | ३. | भगवान् शंकर | असुर | ११. | दानव |
| च | ४. | और | नराः | १२ | मनुष्य |
| एव | ९. | तथा | नागाः | १३ | सर्प |
| ते | ६. | प्रसिद्ध | खगाः | १५. | पक्षी (एवं) |
| इमे | ५. | ये | मृग | १४. | पशु |
| मुनयः | ८. | सनकादि कुमार | सरीसृपाः ॥ | १६ | रेंगने वाले जन्तु (विराट् पुरुष के रूप हैं) |

श्लोकार्थ—हे नारद जी ! मैं, आप, भगवान् शंकर और ये प्रसिद्ध तुम्हारे बड़े भाई सनकादि कुमार तथा देव, दानव, मनुष्य, सर्प पशु, पक्षी एवं रेंगने वाले जन्तु विराट् पुरुष के रूप हैं।

## त्रयोदशः श्लोकः

गन्धर्वाप्सरसो यक्षा रक्षोभूतगणोरगाः ।
पशवः पितरः सिद्धा विद्याध्राश्चारणा द्रुमाः ॥ १३ ॥

पदच्छेद—

गन्धर्व अप्सरसः यक्षाः, रक्षः भूत गण उरगाः ।
पशवः पितरः सिद्धाः, विद्याध्राः चारणाः द्रुमाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| गन्धर्व | १. गन्धर्व | पशवः | ७. पशु |
| अप्सरसः | २. अप्सरा | पितरः | ८. पितर |
| यक्षाः | ३. यक्ष | सिद्धाः | ९. सिद्ध |
| रक्षः | ४. राक्षस | विद्याध्राः | १०. विद्याधर |
| भूतगण | ५. भूत-प्रेत | चारणाः | ११. चारण (और) |
| उरगाः । | ६. सर्प | द्रुमाः ॥ | १२. वृक्ष (विराट् पुरुष के रूप हैं) |

श्लोकार्थ- गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष, राक्षस, भूत-प्रेत, सर्प, पशु, पितर, सिद्ध, विद्याधर, चारण और वृक्ष विराट् पुरुष के रूप हैं ।

## चतुर्दशः श्लोकः

अन्ये च विविधा जीवा जलस्थलनभौकसः ।
ग्रहर्क्षकेतवस्तारास्तडितः स्तनयित्नवः ॥ १४ ॥

पदच्छेद—

अन्ये च विविधाः जीवाः, जल स्थल नभ ओकसः ।
ग्रह ऋक्ष केतवः ताराः, तडितः स्तनयित्नवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अन्ये | ३. दूसरे | ग्रह | ७. सूर्यादि ग्रह |
| च | ६. तथा | ऋक्ष | ८. नक्षत्र |
| विविधाः | ४. अनेकों | केतवः | ९. पुच्छल तारा |
| जीवाः | ५. प्राणी | ताराः | १०. तारा-मण्डल |
| जल स्थल | १. जल-थल और | तडितः | ११. बिजली और |
| नभ ओकसः । | २. आकाश के निवासी | स्तनयित्नवः ॥ | १२. बादल भी विराट् पुरुष के रूप हैं |

श्लोकार्थ—जल-थल और आकाश के निवासी दूसरे अनेकों प्राणी तथा सूर्यादि ग्रह, नक्षत्र, पुच्छल तारा तारा-मण्डल, बिजली और बादल भी विराट् पुरुष के रूप हैं ।

## पञ्चदशः श्लोकः

सर्वं पुरुष एवेदं भूतं भव्यं भवच्च यत् ।
तेनेदमावृतं विश्वं वितस्तिमधितिष्ठति ।। १५ ।।

पदच्छेद—

सर्वम् पुरुषः एव इदम्, भूतम् भव्यम् भवत् च यत् ।
तेन इदम् आवृतम् विश्वम्, वितस्तिम् अधितिष्ठति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वम् | ७. | सब | च | ३. | और |
| पुरुषः | ८. | विराट् पुरुष का | यत् । | ५. | जो कुछ (है) |
| एव | ९. | ही (रूप है) | तेन | १०. | उसी (विराट् पुरुष) से |
| इदम् | ६. | यह | इदम् | १२. | यह |
| भूतम् | १. | बीता हुआ | आवृतम् | ११. | ढका हुआ |
| भव्यम् | २. | आने वाला | विश्वम् | १३. | ब्रह्माण्ड |
| भवत् | ४. | वर्तमान | वितस्तिम् | १४. | (उसके) दस अंगुल में |
| | | | अधितिष्ठति।। | १५. | स्थित है |

श्लोकार्थ—बीता हुआ, आनेवाला और वर्तमान जो कुछ है, यह सब विराट् पुरुष का ही रूप है। उसी विराट् पुरुष से ढका हुआ यह ब्रह्माण्ड उसके दस अंगुल में स्थित है।

## षोडशः श्लोकः

स्वधिष्ण्यं प्रतपन् प्राणो बहिश्च प्रतपत्यसौ ।
एवं विराजं प्रतपंस्तपत्यन्तर्बहिः पुमान् ।। १६ ।।

पदच्छेद—

स्वधिष्ण्यम् प्रतपन् प्राणः, बहिः च प्रतपति असौ ।
एवम् विराजम् प्रतपन्, तपति अन्तः बहिः पुमान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वधिष्ण्यम् | ४. | अपने मण्डल को | एवम् | ८. | इसी प्रकार |
| प्रतपन् | ५. | प्रकाशित करता हुआ | विराजम् | १०. | विराट् विग्रह को |
| प्राणः | ३. | सूर्य | प्रतपन् | ११. | प्रकाशित करता हुआ |
| बहिः | ६. | बाहर (भी) | तपति | १४. | प्रकाशित करता है |
| च | १. | जिस प्रकार | अन्तः | १२. | अन्दर और |
| प्रतपति | ७. | प्रकाश करता है | बहिः | १३. | बाहर |
| असौ । | २. | (दूर स्थित) वह | पुमान् ।। | ९. | विराट् पुरुष |

श्लोकार्थ—जिस प्रकार दूर स्थित वह सूर्य अपने मण्डल को प्रकाशित करता हुआ बाहर भी प्रकाश करता है; इसी प्रकार विराट् पुरुष विराट् विग्रह को प्रकाशित करता हुआ अन्दर और बाहर प्रकाशित करता है।

# सप्तदशः श्लोकः

सोऽमृतस्याभयस्येशो मर्त्यमन्नं यदत्यगात् ।
महिमैष ततो ब्रह्मन् पुरुषस्य दुरत्ययः ।। १७ ।।

पदच्छेद—

सः अमृतस्य अभयस्य ईशः, मर्त्यम् अन्नम् यद् अत्यगात् ।
महिमा एषः ततः ब्रह्मन्, पुरुषस्य दुरत्ययः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वह (परमात्मा) | अत्यगात् । | ८. | परे है |
| अमृतस्य | ३. | अविनाशी | महिमा | १३. | लीला |
| अभयस्य | ४. | मोक्ष पद का | एषः | १२. | यह |
| ईशः | ५. | स्वामी है (और) | ततः | ९. | इसलिए |
| मर्त्यम् | ६. | विनाशी | ब्रह्मन् | १०. | हे नारद जी ! |
| अन्नम् | ७. | कर्मफल से | पुरुषस्य | ११. | परमात्मा की |
| यद् | १. | क्योंकि | दुरत्ययः ।। | १४. | अपार है |

श्लोकार्थ—क्योंकि वह परमात्मा अविनाशी मोक्ष पद का स्वामी है और विनाशी कर्मफल से परे है, इसलिए हे नारद जी ! परमात्मा की यह लीला अपार है ।

# अष्टादशः श्लोकः

पादेषु सर्वभूतानि पुंसः स्थितिपदो विदुः ।।
अमृतं क्षेममभयं त्रिमूर्ध्नोऽधायि मूर्धसु ।।१८।।

पदच्छेद—

पादेषु सर्व भूतानि, पुंसः स्थिति पदः विदुः ।
अमृतम् क्षेमम् अभयम्, त्रिमूर्ध्नः अधायि मूर्धसु ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पादेषु | ४. | पैर में | अमृतम् | ७. | अविनाशी |
| सर्व | १. | सभी | क्षेमम् | ८. | मंगलमय |
| भूतानि | २. | प्राणियों को | अभयम् | ९. | मोक्ष पद |
| पुंसः | ३. | विराट् पुरुष के | त्रिमूर्ध्नः | १०. | त्रिकोली के मस्तक महर्लोक से |
| स्थिति पदः | ५. | स्थित | अधायि | १२. | स्थित है |
| विदुः । | ६. | समझना चाहिए (तथा) | मूर्धसु ।। | ११. | ऊपर (जन, तप और सत्यलोकमें) |

श्लोकार्थ—सभी प्राणियों को विराट् पुरुष के पैर में स्थित समझना चाहिए तथा अविनाशी मंगलमय मोक्ष पद त्रिलोकी के मस्तक महर्लोक से ऊपर जन, तप और सत्यलोक में स्थित है ।

# एकोनविंशः श्लोकः

पादास्त्रयो बहिश्चासन्नप्रजानां य आश्रमाः ।
अन्तस्त्रिलोक्यास्त्वपरो गृहमेधोऽबृहद्व्रतः ।।१९।।

पदच्छेद—

पादाः त्रयः बहिः च आसन्, अप्रजानाम् ये आश्रमाः ।
अन्तः त्रिलोक्याः तु अपरः, गृहमेधः अबृहत् व्रतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पादाः | ३. | लोक | अन्तः | १४. | अन्दर (ही रहते हैं) |
| त्रयः | २. | जन, तप और सत्य | त्रिलोक्याः | १३. | भूः भुवः और स्वर्ग के |
| बहिः च | १. | त्रिलोकी से ऊपर | तु | ८. | किन्तु |
| आसन् | ४. | स्थित हैं | अपरः | ११. | (ब्रह्मचारियों से) निम्न |
| अप्रजानाम् | ६. | ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मचारियों का | गृहमेधः | १२. | गृहस्थ जन |
| ये | ५. | जहाँ | अबृहत् | ९. | आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत न |
| आश्रमाः । | ७. | निवास है | व्रतः ।। | १०. | रखने वाले |

श्लोकार्थ—त्रिलोकी से ऊपर जन, तप और सत्य लोक स्थित हैं, जहाँ ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मचारियों का निवास है; किन्तु आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत न रखने वाले ब्रह्मचारियों से निम्न गृहस्थजन भूः, भुवः और स्वर्गलोक के अन्दर ही रहते हैं।

# विंशः श्लोकः

सृती विचक्रमे विष्वङ् साशनानशने उभे ।
यदविद्या च विद्या च पुरुषस्तूभयाश्रयः ।।२०।।

पदच्छेद—

सृती विचक्रमे विष्वङ्, स अशन अनशने उभे ।
यद् अविद्या च विद्या च, पुरुषः तु उभय आश्रयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सृती | ५. | मार्गों पर | अविद्या | ८. | कर्मकाण्ड रूप |
| विचक्रमे | ६. | भ्रमण करता है | च | ९. | और |
| विष्वङ् | १. | जीवात्मा | विद्या च | १०. | उपासना रूप हैं |
| स अशन | २. | सकाम | पुरुषः | १२. | परमात्मा |
| अनशने | ३. | निष्काम | तु | ११. | तथा |
| उभे । | ४. | इन दोनों | उभय | १३. | दोनों (मार्गों) का |
| यद् | ७. | ये (मार्ग) | आश्रयः ।। | १४. | आधार है |

श्लोकार्थ—जीवात्मा सकाम-निष्काम इन दोनों मार्गों पर भ्रमण करता है। ये मार्ग कर्मकाण्ड-रूप और उपासना रूप हैं तथा परमात्मा दोनों मार्गों का आधार है।

## एकविंशः श्लोकः

यस्मादण्डं विराड् जज्ञे भूतेन्द्रियगुणात्मकः ।
तद् द्रव्यमत्यगाद् विश्वं गोभिः सूर्य इवातपन् ॥२१॥

पदच्छेद—

यस्मात् अण्डम् विराट् जज्ञे, भूत इन्द्रिय गुण आत्मकः ।
तद् द्रव्यम् अत्यगात् विश्वम्, गोभिः सूर्यः इव अतपन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्मात् | १. | जिस (परमात्मा) से | तद् | ९. | वह (परमात्मा) |
| अण्डम् | २. | ब्रह्माण्ड (तथा) | द्रव्यम् | १५. | सभी वस्तुओं से |
| विराट् | ७. | विराट् पुरुष | अत्यगात् | १६. | अलग है |
| जज्ञे | ८. | उत्पन्न हुआ है | विश्वम् | ११. | पूरे विश्व को |
| भूत | ३. | पञ्च महाभूत | गोभिः | १०. | (अपनी) किरणों से |
| इन्द्रिय | ४. | एकादश इन्द्रिय और | सूर्यः | १३. | सूर्य के |
| गुण | ५. | सत्त्व, रजस्, तमस् गुण | इव | १४. | समान |
| आत्मकः । | ६. | स्वरूप | अतपन् ॥ | १२. | प्रकाशित करने वाले |

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा से ब्रह्माण्ड तथा पंच महाभूत, एकादश इन्द्रिय और सत्त्व, रजस्, तमस् गुण-स्वरूप विराट् पुरुष उत्पन्न हुआ है; वह परमात्मा अपनी किरणों से पूरे विश्व को प्रकाशित करने वाले सूर्य के समान सभी वस्तुओं से अलग है ।

## द्वाविंशः श्लोकः

यदास्य नाभ्यान्नलिनादहमासं महात्मनः ।
नाविदं यज्ञसंभारान् पुरुषावयवादृते ॥२२॥

पदच्छेद—

यदा अस्य नाभ्यात् नलिनात्, अहम् आसम् महात्मनः ।
न अविदम् यज्ञ संभारान्, पुरुष अवयवात् ऋते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब | न | १३. | नहीं |
| अस्य | ३. | इस | अविदम् | १४. | पाया |
| नाभ्यात् | ५. | नाभि के | यज्ञ | ११. | यज्ञ की |
| नलिनात् | ६. | कमल से | संभारान् | १२. | सामग्रियों को |
| अहम् | २. | मैं | पुरुष | ८. | विराट् पुरुष के |
| आसम् | ७. | उत्पन्न हुआ था (उस समय) | अवयवात् | ९. | अंगों के |
| महात्मनः । | ४. | परमात्मा की | ऋते ॥ | १०. | अतिरिक्त |

श्लोकार्थ—जब मैं इस परमात्मा की नाभि के कमल से उत्पन्न हुआ था; उस समय विराट् पुरुष के अंगों के अतिरिक्त यज्ञ की सामग्रियों को नहीं पाया ।

## त्रयोविंश: श्लोक:

तेषु यज्ञस्य पशवः सवनस्पतयः कुशाः ।
इदं च देवयजनं कालश्चोरुगुणान्वितः ॥२३॥

पदच्छेद—

तेषु यज्ञस्य पशवः, स वनस्पतयः कुशाः ।
इदम् च देव यजनम्, कालः च उरु गुण अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषु | १. | (मैंने) उस (विराट् के अंगों) से | देव | ८. | यज्ञ |
| यज्ञस्य | २. | यज्ञ के | यजनम् | ९. | भूमि का |
| पशवः | ३. | पशु | कालः | १४. | शुभ मूहूर्त्त का(संकलन किया) |
| स वनस्पतयः | ४. | वनस्पति तथा | च | १०. | एवं |
| कुशाः । | ५. | कुशा | उरु | ११. | उत्तम |
| इदम् | ७. | इस | गुण | १२. | गुणों से |
| च | ६. | और | अन्वितः । | १३. | युक्त |

श्लोकार्थ—मैंने उस विराट् के अंगों से यज्ञ के पशु, वनस्पति तथा कुशा और इस यज्ञ-भूमि का एवं उत्तम गुणों से युक्त शुभ मुहूर्त्त का संकलन किया ।

## चतुर्विंश: श्लोक:

वस्तून्योषधयः स्नेहा रसलोहमृदो जलम् ।
ऋचो यजूंषि सामानि चातुर्होत्रं च सत्तम ॥२४॥

पदच्छेद—

वस्तूनि ओषधयः स्नेहाः, रस लोह मृदः जलम् ।
ऋचः यजूंषि सामानि, चातुर्होत्रम् च सत्तम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वस्तूनि | २. | यज्ञपात्रादि वस्तु | ऋचः यजूंषि | ७. | ऋग्वेद, यजुर्वेद |
| ओषधयः | ३. | जौ चावल आदि ओषधि | सामानि | ८. | सामवेद |
| स्नेहाः | ४. | घी आदि द्रव पदार्थ | चातुर्होत्रम् | १०. | चारों होता (इन सबको मैंने विराट् से एकत्रित किया) |
| रस लोह | ५. | मधुरादि रस, लोहा | च | ९. | और |
| मृदः जलम् । | ६. | मिट्टी, जल | सत्तम ॥ | १. | हे मुनिवर ! |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! यज्ञपात्रादि वस्तु, जौ-चावल आदि ओषधि, घी आदि द्रव पदार्थ, मधुरादि रस, लोहा, मिट्टी, जल, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और चारों होता इन सबको मैंने विराट् पुरुष से एकत्रित किया था ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

नामधेयानि मन्त्राश्च दक्षिणाश्च व्रतानि च ।
देवतानुक्रमः कल्पः सङ्कल्पस्तन्त्रमेव च ॥२५॥

पदच्छेद—

नामधेयानि मन्त्राः च, दक्षिणाः च व्रतानि च ।
देवता अनुक्रमः कल्पः, सङ्कल्पः तन्त्रम् एव च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नामधेयानि | १. | नाम संज्ञा | देवता | ८. | देवताओं के |
| मन्त्राः | २. | मन्त्र | अनुक्रमः | ६. | क्रम |
| च | ३. | और | कल्पः | १०. | यज्ञ विधान |
| दक्षिणाः | ४. | दक्षिणा | सङ्कल्पः | ११. | संकल्प |
| च | ५. | तथा | तन्त्रम् | १३. | शास्त्र को |
| व्रतानि | ६. | व्रत | एव | १४. | भी (मैंने विराट् पुरुष के अंगों से इकट्ठा किया) |
| च । | ७. | एवम् | च॥ | १२. | तथा |

श्लोकार्थ—नाम संज्ञा, मन्त्र और दक्षिणा तथा व्रत एवम् देवताओं के क्रम, यज्ञ-विधान, संकल्प तथा शास्त्र को भी मैंने विराट् पुरुष के अंगों से इकट्ठा किया ।

## षड्विंशः श्लोकः

गतयो मतयः श्रद्धा प्रायश्चित्तं समर्पणम् ।
पुरुषावयवैरेते सम्भाराः सम्भृता मया ॥२६॥

पदच्छेद—

गतयः मतयः श्रद्धा, प्रायश्चित्तम् समर्पणम् ।
पुरुष अवयवैः एते, सम्भाराः सम्भृताः मया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गतयः | ४. | क्रिया | पुरुष | २. | विराट् पुरुष के |
| मतयः | ५. | ज्ञान | अवयवैः | ३. | अंगों से |
| श्रद्धा | ६. | भक्ति | एते | ६. | इन |
| प्रायश्चित्तम् | ७. | प्रायश्चित्त (तथा) | सम्भाराः | १०. | सभी वस्तुओं को |
| समर्पणम् । | ८. | समर्पण-भाव | सम्भृताः | ११. | इकट्ठा किया |
| | | | मया ॥ | १. | मैंने |

श्लोकार्थ—मैंने विराट् पुरुष के अंगों से क्रिया, ज्ञान, भक्ति, प्रायश्चित्त तथा समर्पण-भाव इन सभी वस्तुओं को इकट्ठा किया ।

# सप्तविंशः श्लोकः

इति सम्भृतसम्भारः पुरुषावयवैरहम् ।
तमेव पुरुषं यज्ञं तेनैवायजमीश्वरम् ॥ २७ ॥

पदच्छेद—

इति सम्भृत सम्भारः, पुरुष अवयवैः अहम् ।
तम् एव पुरुषम् यज्ञम्, तेन एव अयजम् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | तम् एव | ८. | उसी |
| सम्भृत | ६. | इकट्ठा करके | पुरुषम् | ११. | भगवान् का |
| सम्भारः | ५. | यज्ञ-सामग्री | यज्ञम् | १०. | यज्ञ |
| पुरुष | ३. | विराट् पुरुष के | तेन एव | ७. | उसी (सामग्री) से |
| अवयवैः | ४. | अंगों से | अयजम् | १२. | यजन किया |
| अहम् । | २. | मैंने | ईश्वरम् ॥ | ९. | सर्व समर्थ |

श्लोकार्थ—इस प्रकार मैंने विराट् पुरुष के अंगों से यज्ञ-सामग्री इकट्ठा करके उसी सामग्री से उसी सर्व-समर्थ यज्ञ-भगवान् का यजन किया ।

# अष्टाविंशः श्लोकः

ततस्ते भ्रातर इमे प्रजानां पतयो नव ।
अयजन् व्यक्तमव्यक्तं पुरुषं सुसमाहिताः ॥ २८ ॥

पदच्छेद—

ततः ते भ्रातरः इमे, प्रजानाम् पतयः नव ।
अयजन् व्यक्तम् अव्यक्तम्, पुरुषम् सुसमाहिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | तदनन्तर | नव । | ५. | नौ |
| ते | २. | तुम्हारे | अयजन् | १२. | पूजन किया था |
| भ्रातरः | ३ | बड़े भाई | व्यक्तम् | १०. | विराट् |
| इमे | ४. | इन | अव्यक्तम् | ९. | अन्तर्यामी |
| प्रजानाम् | ६. | प्रजा | पुरुषम् | ११. | भगवान् का |
| पतयः | ७. | पतियों ने | सुसमाहिताः ॥ | ८. | सावधान मन से |

श्लोकार्थ—तदनन्तर तुम्हारे बड़े भाई मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वशिष्ठ और दक्ष इन नौ प्रजापतियों ने सावधान मन से अन्तर्यामी विराट् भगवान् का पूजन किया था ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

ततश्च मनवः काले ईजिरे ऋषयोऽपरे ।
पितरो विबुधा दैत्या मनुष्याः क्रतुभिर्विभुम् ॥२९॥

पदच्छेद—

ततः च मनवः काले, ईजिरे ऋषयः अपरे ।
पितरः विबुधाः दैत्याः, मनुष्याः क्रतुभिः विभुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | तदनन्तर | पितरः | ५. | पितर |
| च | ८ | तथा | विबुधाः | ६. | देवता |
| मनवः | २. | मनु | दैत्याः | ७. | दानव |
| काले | १०. | समय-समय पर | मनुष्याः | ९. | मनुष्यों ने |
| ईजिरे | १३. | आराधना की थी | क्रतुभिः | ११. | यज्ञों से |
| ऋषयः | ४. | ऋषि गण | विभुम् ॥ | १२. | परमात्मा की |
| अपरे । | ३. | दूसरे | | | |

श्लोकार्थ—तदनन्तर मनु, दूसरे ऋषिगण, पितर, देवता, दानव तथा मनुष्यों ने समय-समय पर यज्ञों से परमात्मा की आराधना की थी ।

# त्रिंशः श्लोकः

नारायणे भगवति तदिदं विश्वमाहितम् ।
गृहीतमायोरुगुणः सर्गादावगुणः स्वतः ॥३०॥

पदच्छेद—

नारायणे भगवति, तद् इदम् विश्वम् आहितम् ।
गृहीत माया उरु गुणः, सर्ग आदौ अगुणः स्वतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नारायणे | ५. | नारायण में | माया | ११. | माया के |
| भगवति | ४. | भगवान् | उरु | १२. | महान् |
| तद् | १. | इस प्रकार | गुणः | १३. | गुणों को |
| इदम् | २. | यह | सर्ग | ९. | सृष्टि के |
| विश्वम् | ३. | सारा संसार | आदौ | १०. | प्रारम्भ में |
| आहितम् । | ६. | स्थित है | अगुणः | ८. | निर्गुण होने पर भी |
| गृहीत | १४. | धारण करते हैं | स्वतः ॥ | ७. | (वे भगवान्) स्वयं |

श्लोकार्थ—इस प्रकार यह सारा संसार भगवान् नारायण में स्थित है । वे भगवान् स्वयं निर्गुण होने पर भी सृष्टि के प्रारम्भ में माया के महान् गुणों को धारण करते हैं ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुषरूपेण परिपाति त्रिशक्तिधृक् ।। ३१ ।।

पदच्छेद—

सृजामि तद् नियुक्तः अहम्, हरः हरति तद् वशः ।
विश्वम् पुरुष रूपेण, परिपाति त्रिशक्ति धृक् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सृजामि | ५. | सृष्टि करता हूँ | वशः । | ८. | आधीन होकर |
| तद् | २. | उसी (परमात्मा) की | विश्वम् | ४. | संसार की |
| नियुक्तः | ३. | प्रेरणा से | पुरुष | १२. | विष्णु |
| अहम् | १. | मैं | रूपेण | १३. | रूप से |
| हरः | ६. | भगवान् शंकर | परिपाति | १४. | पालन करते हैं |
| हरति | ९. | संहार करते हैं (तथा) | त्रिशक्ति | १०. | उत्पत्ति, पालन और संहार की |
| तद् | ७. | उसी के | धृक् ।। | ११. | शक्तियों को धारण करते हुए |

श्लोकार्थ—मैं उसी परमात्मा की प्रेरणा से संसार की सृष्टि करता हूँ । भगवान् शंकर उसी के आधीन होकर संहार करते हैं तथा वे स्वयं उत्पत्ति, पालन और संहार की शक्तियों को धारण करते हुए विष्णु रूप से पालन करते हैं ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

इति तेऽभिहितं तात यथेदमनुपृच्छसि ।
नान्यद्भगवतः किंचिद्भाव्यं सदसदात्मकम् ।। ३२ ।।

पदच्छेद—

इति ते अभिहितम् तात, यथा इदम् अनुपृच्छसि ।
न अन्यत् भगवतः किंचित्, भाव्यम् सत्-असत् आत्मकम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ५. | उसे | न | १४. | नहीं है |
| ते | ६. | तुम्हें | अन्यत् | १३. | भिन्न |
| अभिहितम् | ७. | बता दिया | भगवतः | १२. | भगवान् से |
| तात | १. | हे पुत्र ! | किंचित् | १०. | कोई भी |
| यथा | २. | जैसा | भाव्यम् | ११. | वस्तु |
| इदम् | ३. | इसे | सत् असत् | ८. | भाव-अभाव |
| अनुपृच्छसि । | ४. | पूछे हो | आत्मकम् ।। | ९. | रूप |

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! जैसा इसे पूछे हो, उसे तुम्हें बता दिया । भाव-अभाव रूप कोई भी वस्तु भगवान् से भिन्न नहीं है ।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न भारती मेऽङ्ग मृषोपलक्ष्यते, न वै क्वचिन्मे मनसो मृषा गतिः ।
न मे हृषीकाणि पतन्त्यसत्पथे, यन्मे हृदौत्कण्ठ्यवता धृतो हरिः ॥३३॥

पदच्छेद— न भारती मे अङ्ग मृषा उपलक्ष्यते, न वै क्वचित् मे मनसः मृषा गतिः ।
न मे हृषीकाणि पतन्ति असत् पथे, यद् मे हृदा औत्कण्ठ्यवता धृतः हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ५ | नहीं | न | १४. | नहीं |
| भारती | ३. | वाणी | मे | ११. | मेरी |
| मे | २ | मेरी | हृषीकाणि | १२. | इन्द्रियाँ |
| अङ्ग | १. | हे पुत्र ! | पतन्ति | १५. | जाती हैं |
| मृषा | ४. | वृथा | असत् पथे, | १३. | कुमार्ग में |
| उपलक्ष्यते, | ६. | होती है | यद् | १६. | क्योंकि |
| न वै | १०. | नहीं होता है (तथा) | मे हृदा | १७. | मेरे हृदय ने |
| क्वचित् | ८. | कभी भी | औत्कण्ठ्यवता | १८. | बड़ी लालसा से |
| मे मनसः | ७. | मेरे मन में | धृतः | २०. | धारण कर रखा है |
| मृषा गतिः । | ९. | असत् संकल्प | हरिः ॥ | १९. | भगवान् श्री हरि को |

श्लोकार्थ—हे पुत्र ! मेरी वाणी वृथा नहीं होती है, मेरे मन में कभी भी असत् संकल्प नहीं होता है तथा मेरी इन्द्रियाँ कुमार्ग में नहीं जाती हैं; क्योंकि मेरे हृदय ने बड़ी लालसा से भगवान् श्री हरि को धारण कर रखा है ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

सोऽहं समाम्नायमयस्तपोमयः, प्रजापतीनामभिवन्दितः पतिः ।
आस्थाय योगं निपुणं समाहित-स्तं नाध्यगच्छं यत आत्मसम्भवः ॥३४॥

पदच्छेद— सः अहम् समाम्नायमयः तपोमयः, प्रजापतीनाम् अभिवन्दितः पतिः ।
आस्थाय योगम् निपुणम् समाहितः, तम् न अध्यगच्छम् यतः आत्म सम्भवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः अहम् | ६. | वही मैं | निपुणम् | ८. | भलीभाँति |
| समाम्नायमयः | १. | वेदमूर्ति | समाहितः, | ७. | सावधान मन से |
| तपोमयः, | २. | तपोमूर्त्ति | तम् | ११. | उसे |
| प्रजापतीनाम् | ३. | प्रजापतियों से | न | १२. | नहीं |
| अभिवन्दितः | ४. | पूजित (और) | अध्यगच्छम् | १३. | जान सका |
| पतिः । | ५. | (उनका) स्वामी | यतः | १४. | जिससे |
| आस्थाय | १०. | स्थित होकर (भी) | आत्म | १५. | मैं |
| योगम् | ९. | योग में | सम्भवः ॥ | १६. | उत्पन्न हुआ हूँ |

श्लोकार्थ—वेदमूर्ति, तपोमूर्ति, प्रजापतियों से पूजित और उनका स्वामी वही मैं सावधान मन से भलीभाँति योग में स्थित होकर भी उसे नहीं जान सका, जिससे मैं उत्पन्न हुआ हूँ ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नतोऽस्म्यहं तच्चरणं समीयुषां, भवच्छिदं स्वस्त्ययनं सुमङ्गलम् ।
यो ह्यात्ममायाविभवं स्म पर्यगाद्, यथा नभः स्वान्तमथापरे कुतः ॥ ३५ ॥

पदच्छेद—नतः अस्मि अहम् तद् चरणम् समीयुषाम्, भवच्छिदम् स्वस्त्ययनम् सुमङ्गलम् ।
यः हि आत्ममाया विभवम् स्म पर्यगात्, यथा नभः स्व अन्तम् अथ अपरे कुतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नतः अस्मि | ८. | नत मस्तक हूँ | हि | १०. | कि |
| अहम् | १. | मैं | आत्ममाया | ११. | अपनी माया के |
| तद् | ६. | उस (परमात्मा) के | विभवम् | १२. | विस्तार को |
| चरणम् | ७. | चरणों में | स्म पर्यगात्, | १३. | नहीं जानता है |
| समीयुषाम्, | २. | शरणागत (भक्तों) को | यथा नभः | १४. | जैसे आकाश |
| भवच्छिदम् | ३. | संसार से मुक्त करने वाले | स्व अन्तम् | १५. | अपने अन्त को (नहीं जानता) |
| स्वस्त्ययनम् | ४. | कल्याणकारी (एवं) | अथ | १६. | अतः |
| सुमङ्गलम् । | ५. | मंगलमय | अपरे | १७. | दूसरे लोग (उसे) |
| यः | ९. | जो | कुतः ॥ | १८. | कैसे (जान सकते हैं ?) |

श्लोकार्थ—मैं शरणागत भक्तों को संसार से मुक्त करने वाले, कल्याणकारी एवं मंगलमय उस परमात्मा के चरणों में नत मस्तक हूँ; जो कि अपनी माया के विस्तार को नहीं जानता है । जैसे आकाश अपने अन्त को नहीं जानता; अतः दूसरे लोग उसे कैसे जान सकते हैं ? ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

नाहं न यूयं यदृतां गतिं विदुर्न वामदेवः किमुतापरे सुराः ।
तन्मायया मोहितबुद्धयस्त्विदं, विनिर्मितं चात्मसमं विचक्ष्महे ॥ ३६ ॥

पदच्छेद—न अहम् न यूयम् यद् ऋताम् गतिम् विदुः, न वामदेवः किमुत अपरे सुराः ।
तद् मायया मोहित बुद्धयः तु इदम्, विनिर्मितम् च आत्म समम् विचक्ष्महे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न अहम् | ४. | न मैं | तद् मायया | १०. | उसी की माया के कारण |
| न यूयम् | ५. | न तुम लोग | मोहित बुद्धयः | ११. | मलिन बुद्धि वाले |
| यद् | १. | जिस (परमात्मा) के | तु | १२. | (हम लोग) तो |
| ऋताम् | २. | वास्तविक | इदम्, | १४. | इस संसार के विषय में |
| गतिम् | ३. | स्वरूप को | विनिर्मितम् | १३. | रचे गये |
| विदुः, | ७. | जानते हैं (फिर) | च | १५. | केवल |
| न वामदेवः | ६. | न शंकर जी (ही) | आत्म समम् | १६. | अपनी बुद्धि के अनुसार |
| किमुत | ९. | बात ही क्या है | विचक्ष्महे ॥ | १७. | सोचते हैं |
| अपरे सुराः । | ८. | दूसरे देवताओं की | | | |

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को न मैं, न तुम लोग, न शंकर जी ही जानते हैं; फिर दूसरे देवताओं की बात ही क्या है ? उसी की माया के कारण मलिन बुद्धिवाले हम लोग तो रचे गये इस संसार के विषय में केवल अपनी बुद्धि के अनुसार सोचते हैं ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

यस्यावतारकर्माणि गायन्ति ह्यस्मदादयः ।
न यं विदन्ति तत्त्वेन तस्मै भगवते नमः ॥३७॥

पदच्छेद—

यस्य अवतार कर्माणि, गायन्ति हि अस्मद् आदयः ।
न यम् विदन्ति तत्त्वेन, तस्मै भगवते नमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्य | ३. | जिस परमात्मा के | न | १०. | नहीं |
| अवतार | ४. | अवतार की | यम् | ८. | जिसे |
| कर्माणि | ५. | लीलाओं का | विदन्ति | ११. | जानते हैं |
| गायन्ति | ६ | गान करते हैं | तत्त्वेन | ९. | स्वरूप से |
| हि | ७ | किन्तु | तस्मै | १२. | उस |
| अस्मद् | १. | हम | भगवते | १३. | परमात्मा को |
| आदयः । | २. | लोग | नमः ॥ | १४. | नमस्कार है |

श्लोकार्थ- हम लोग जिस परमात्मा के अवतार की लीलाओं का गान तो करते हैं, किन्तु जिसे स्वरूप से नहीं जानते हैं; उस परमात्मा को नमस्कार है ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

स एष आद्यः पुरुषः कल्पे कल्पे सृजत्यजः ।
आत्माऽऽत्मन्यात्मनाऽऽत्मानं संयच्छति च पाति च ॥३८॥

पदच्छेद—

सः एषः आद्यः पुरुषः, कल्पे कल्पे सृजति अजः ।
आत्मा आत्मनि आत्मना आत्मानम्, संयच्छति च पाति च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वही | आत्मा | ६. | परमात्मा |
| एषः | २. | यह | आत्मनि | ९. | अपने में |
| आद्यः | ४. | आदि | आत्मना | १०. | अपने से |
| पुरुषः | ५. | पुरुष | आत्मानम् | ११. | अपनी |
| कल्पे | ७. | प्रत्येक | संयच्छति | १६. | संहार करता है |
| कल्पे | ८. | कल्प में | च | १५. | तथा |
| सृजति | १२. | सृष्टि करता है | पाति | १४. | पालन करता है |
| अजः । | ३. | अजन्मा | च ॥ | १३. | और |

श्लोकार्थ—वही यह अजन्मा आदि पुरुष परमात्मा प्रत्येक कल्प में अपने में अपने से अपनी सृष्टि करता है और पालन करता है तथा संहार करता है ।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

विशुद्धं केवलं ज्ञानं प्रत्यक् सम्यगवस्थितम् ।
सत्यं पूर्णमनाद्यन्तं निर्गुणं नित्यमद्वयम् ।। ३९ ।।

पदच्छेद—

विशुद्धम् केवलम् ज्ञानम्, प्रत्यक् सम्यक् अवस्थितम् ।
सत्यम् पूर्णम् अनादि अन्तम्, निर्गुणम् , नित्यम् अद्वयम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विशुद्धम् | १. | (वह परमात्मा) माया से रहित | सत्यम् | ७. | (वह तीनों कालों में) सत्य |
| केवलम् | २ | केवल | पूर्णम् | ८. | परिपूर्ण |
| ज्ञानम् | ३. | ज्ञान स्वरूप (और) | अनादि अन्तम् | ९. | जन्म-मृत्यु से रहित |
| प्रत्यक् | ४. | आत्मरूप से | निर्गुणम् | १०. | सत्त्वादि तीनों गुणों से असंग |
| सम्यक् | ५. | सभी जगह | नित्यम् | ११. | सनातन (और) |
| अवस्थितम् । | ६. | स्थित है | अद्वयम् ।। | १२. | एकरूप है |

श्लोकार्थ— वह परमात्मा माया से रहित, केवल ज्ञानस्वरूप और आत्मरूप से सभी जगह स्थित है। वह तीनों कालों में सत्य, परिपूर्ण, जन्म-मृत्यु से रहित. सत्त्वादि तीनों गुणों से असंग, सनातन और एकरूप है।

# चत्वारिंशः श्लोकः

ऋषे विदन्ति मुनयः प्रशान्तात्मेन्द्रियाशयाः ।
यदा तदेवासत्तर्कैस्तिरोधीयेत विप्लुतम् ।। ४० ।।

पदच्छेद—

ऋषे विदन्ति मुनयः, प्रशान्त आत्मन् इन्द्रिय आशयाः ।
यदा तद् एव असत् तर्कैः, तिरोधीयेत विप्लुतम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऋषे | १. | हे नारद ! | यदा | ८. | जब (लोग) |
| विदन्ति | ७. | जानते हैं | तद् | ९. | उसी |
| मुनयः | ६. | मुनि जन (उस परमात्मा को) | एव | १०. | परमात्मा को |
| प्रशान्त | ५. | शान्त किये हुए | असत् | ११. | दुष्ट |
| आत्मन् | २. | (अपने) शरीर | तर्कैः | १२. | विचारों से |
| इन्द्रिय | ३. | इन्द्रिय और | तिरोधीयेत | १३. | मिथ्या मान लेते हैं |
| आशयाः । | ४. | अन्तःकरण को | विप्लुतम् ।। | १४. | (तब उन्हें उसका) दर्शन नहीं होता है |

श्लोकार्थ— हे नारद ! अपने शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण को शान्त किये हुए मुनि-जन उस परमात्मा को जानते हैं। जब लोग उसी परमात्मा को दुष्ट विचारों से मिथ्या मान लेते हैं, तब उन्हें उसका दर्शन नहीं होता है।

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

**आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य, कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।**
**द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि, विराट् स्वराट् स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥४१॥**

पदच्छेद— आद्यः अवतारः पुरुषः परस्य, कालः स्वभावः सत् असत् मनः च ।
द्रव्यम् विकारः गुणः इन्द्रियाणि, विराट् स्वराट् स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आद्यः | २. पहला | द्रव्यम् | ९. पंच महाभूत |
| अवतारः | ३. अवतार | विकारः | १०. अहंकार |
| पुरुषः | ४. विराट् पुरुष | गुणः | ११. सत्त्वादि गुण |
| परस्य, | १. भगवान् का | इन्द्रियाणि, | १२. इन्द्रियाँ |
| कालः | ५. काल | विराट् | १३. ब्रह्माण्ड शरीर |
| स्वभावः | ६. स्वभाव | स्वराट् | १४. ब्रह्माण्ड पुरुष |
| सत्-असत् | ७. कारण-कार्य | स्थास्नु | १५. स्थावर |
| मनः | ८. मन | चरिष्णु | १७. जंगम (ये सब) |
| च । | १६. और | भूम्नः ॥ | १८. भगवान् के (रूप हैं) |

श्लोकार्थ—भगवान् का पहला अवतार विराट् पुरुष, काल, स्वभाव, कारण-कार्य, मन, पंच महाभूत, अहंकार, सत्त्वादि गुण, इन्द्रियाँ, ब्रह्माण्ड शरीर, ब्रह्माण्ड पुरुष, स्थावर और जंगम, ये सब भगवान् के रूप हैं।

## द्विचत्वारिंशः श्लोकः

**अहं भवो यज्ञ इमे प्रजेशा, दक्षादयो ये भवदादयश्च ।**
**स्वर्लोकपालाः खगलोकपाला, नृलोकपालास्तललोकपालाः ॥४२॥**

पदच्छेद— अहम् भवः यज्ञः इमे प्रजेशाः, दक्ष आदयः ये भवत् आदयः च ।
स्वर्लोकपालाः खग लोकपालाः, नृलोकपालाः तल लोकपालाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अहम् | १. मैं | च । | ९. और |
| भवः | २. शंकर जी | स्वः | १०. स्वर्गलोक के |
| यज्ञः | ३. विष्णु भगवान् | लोकपालाः | ११. लोकपाल |
| इमे | ४. ये | खगलोक | १२. अन्तरिक्ष लोक के |
| प्रजेशाः, | ६. प्रजापति (तथा) | पालाः, | १३. रक्षक |
| दक्ष आदयः | ५. दक्ष इत्यादि दस | नृलोकपालाः | १४. पृथ्वीलोक के रक्षक (एवं) |
| ये | ७. जो | तललोक | १५. पाताल लोक के |
| भवत् आदयः | ८. आप-सरीखे (भक्तजन हैं वे) | पालाः ॥ | १६. रक्षक(ये सब भगवान् के रूप हैं) |

श्लोकार्थ—मैं, शंकर जी, विष्णु भगवान्, ये दक्ष इत्यादि दस प्रजापति तथा जो आप-सरीखे भक्तजन हैं, वे और स्वर्गलोक के लोकपाल, अन्तरिक्ष लोक के रक्षक, पृथ्वीलोक के रक्षक एवं पाताल लोक के रक्षक ये सब भगवान् के रूप हैं।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

गन्धर्वविद्याधरचारणेशा, ये यक्षरक्षोरगनागनाथाः ।
ये वा ऋषीणामृषभाः पितृणां, दैत्येन्द्रसिद्धेश्वरदानवेन्द्राः ।
अन्ये च ये प्रेतपिशाचभूत-कूष्माण्डयादोमृगपक्ष्यधीशाः ।। ४३ ।।

पदच्छेद— गन्धर्व विद्याधर चारण ईशाः, ये यक्ष रक्ष उरग नाग नाथाः ।
ये वा ऋषीणाम् ऋषभाः पितृणाम्, दैत्येन्द्र सिद्धेश्वर दानवेन्द्राः ।
अन्ये च ये प्रेत पिशाच भूत, कूष्माण्ड यादः मृग पक्षि अधीशाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| गन्धर्व, विद्याधर | २. गन्धर्व, विद्याधर और | | ऋषभाः | १०. अधिपति |
| चारण ईशाः, | ३ चारणों के स्वामी | | पितृणाम्, | ९. पितरों के |
| ये | १. जो | | दैत्येन्द्र, सिद्धेश्वर | ११. दैत्यराज, सिद्धनाथ |
| यक्ष, रक्ष | ४. यक्ष, राक्षस | | दानवेन्द्राः । | १२. दानवराज |
| उरग | ५. साँप और | | अन्ये च ये | १३. और जो दूसरे |
| नागनाथाः । | ६. नागों के स्वामी | | प्रेत, पिशाच | १४. प्रेत, पिशाच |
| ये वा | ७ तथा जो | | भूत, कूष्माण्ड | १५ भूत, कूष्माण्ड |
| ऋषीणाम् | ८. ऋषियों के और | | यादः, मृग | १६. जलचर, पशु और |
| | | | पक्षि, अधीशाः।। | १७. पक्षियों के, स्वामी हैं |

श्लोकार्थ—जो गन्धर्व, विद्याधर और चारणों के स्वामी, यक्ष, राक्षस, साँप और नागों के स्वामी तथा जो ऋषियों के और पितरों के अधिपति, दैत्यराज, सिद्धनाथ, दानवराज और जो दूसरे प्रेत, पिशाच, भूत, कूष्माण्ड, जलचर, पशु और पक्षियों के स्वामी हैं; वे सब भगवान् के रूप हैं।

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

यत्किं च लोके भगवन्महस्व-दोजःसहस्वद् बलवत् क्षमावत् ।
श्रीह्रीविभूत्यात्मवदद्भुतार्णं, तत्त्वं परं रूपवदस्वरूपम् ।।४४।।

पदच्छेद यत् किं च लोके भगवत् महस्वत्, ओजः सहस्वत् बलवत् क्षमावत् ।
श्री ह्री विभूति आत्मवत् अद्भुत अर्णम्, तत्त्वम् परम् रूपवत् अस्वरूपम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यत् किं च | १२. जो कुछ है (वह सब) | | श्री ह्री विभूति | ७. सौन्दर्य, लज्जा, वैभव और |
| लोके | १. संसार में | | आत्मवत् | ८. सुन्दर शरीर से युक्त |
| भगवत् | २. ऐश्वर्य-सम्पन्न | | अद्भुत, अर्णम्, | ९. विचित्र, रंगों से युक्त |
| महस्वत्, | ३. तेजोमय | | तत्त्वम् | १४. स्वरूप है |
| ओजः सहस्वत् | ४. मनोबल और इन्द्रियबल से युक्त | | परम् | १३. परमात्मा का |
| बलवत् | ५. बलवान् | | रूपवत् | १०. रूपवान् और |
| क्षमावत् । | ६. क्षमावान् | | अस्वरूपम् ।। | ११. अरूप |

श्लोकार्थ—संसार में ऐश्वर्य-सम्पन्न, तेजोमय, मनोबल और इन्द्रियबल से युक्त, बलवान्, क्षमावान्, सौन्दर्य, लज्जा, वैभव और सुन्दर शरीर से युक्त, विचित्र रंगों से युक्त रूपवान् और अरूप जो कुछ है; वह सब परमात्मा का स्वरूप है ।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

**प्राधान्यतो यानृष आमनन्ति, लीलावतारान् पुरुषस्य भूम्नः ।**
**आपीयतां कर्णकषायशोषा-ननुक्रमिष्ये त इमान् सुपेशान् ।।४५।।**

पदच्छेद—

प्राधान्यतः यान् ऋषे आमनन्ति, लीला अवतारान् पुरुषस्य भूम्नः ।
आपीयताम् कर्ण कषाय शोषान्, अनुक्रमिष्ये ते इमान् सुपेशान् ।।

शब्दार्थ

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्राधान्यतः | ४. | प्रधान रूप से | आपीयताम् | १६. | पान करें |
| यान् | ५. | जो | कर्ण | १३. | कानों के |
| ऋषे | १. | हे देवर्षि नारद ! | कषाय | १४. | दोषों को |
| आमनन्ति, | ८. | माने गये हैं | शोषान्, | १५. | दूर करने वाली (उन कथाओं का) |
| लीला | ६. | लीला | अनुक्रमिष्ये | १२. | क्रमशः कहूँगा (आप) |
| अवतारान् | ७. | अवतार | ते | ११. | आपसे |
| पुरुषस्य | ३. | परमात्मा के | इमान् | ६ | उनकी |
| भूम्नः । | २. | परम पुरुष | सुपेशान् ।। | १०. | सुन्दर (कथाओं) को (मैं) |

श्लोकार्थ —हे देवर्षि नारद ! परम पुरुष परमात्मा के प्रधान रूप से जो लीला-अवतार माने गये हैं, उनकी सुन्दर कथाओं को मैं आपसे क्रमशः कहूँगा । आप कानों के दोषों को दूर करने वाली उन कथाओं का पान करें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
षष्ठः अध्यायः ।। ६ ।।

## द्वितीयः स्कन्धः

### अथ सप्तमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

**ब्रह्मोवाच—**

**यत्रोद्यतः क्षितितलोद्धरणाय बिभ्रत्, क्रौडीं तनुं सकलयज्ञमयीमनन्तः ।**
**अन्तर्महार्णव उपागतमादिदैत्यं, तं दंष्ट्रयाद्रिमिव वज्रधरो ददार ।।१।।**

**पदच्छेद—** यत्र उद्यतः क्षिति तल उद्धरणाय बिभ्रत्, क्रौडीम् तनुम् सकल यज्ञमयीम् अनन्तः ।
अन्तः महार्णवे उपागतम् आदिदैत्यम्, तम् दंष्ट्रया अद्रिम् इव वज्रधरः ददार ।।

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **यत्र** | ५. | जब | **अन्तः महार्णवे** | ९. | समुद्र के अन्दर |
| **उद्यतः** | ८. | यत्न किया (उस समय) | **उपागतम्** | १०. | (लड़ने के लिए) आये हुए |
| **क्षितितल** | ६. | (डूबी हुई) पृथ्वी को | **आदि दैत्यम्,** | १२. | आदि दैत्य हिरण्याक्ष को |
| **उद्धरणाय** | ७. | ऊपर लाने का | **तम्** | ११. | उस |
| **बिभ्रत्,** | ४. | धारण करके | **दंष्ट्रया** | १३. | (अपनी) दाढ़ों से |
| **क्रौडीम्, तनुम्** | ३. | सूकर शरीर को | **अद्रिम्** | १६. | पर्वतों को (काट दिया था) |
| **सकल, यज्ञमयीम्** | २. | सम्पूर्ण, यज्ञमय | **इव, वज्रधरः** | १५. | जैसे, इन्द्र ने (वज्र से) |
| **अनन्तः ।** | १. | भगवान् विष्णु ने | **ददार ।।** | १४. | विदीर्ण कर दिया |

**श्लोकार्थ—** भगवान् विष्णु ने सम्पूर्ण यज्ञमय सूकर शरीर को धारण करके जब डूबी हुई पृथ्वी को ऊपर लाने का यत्न किया; उस समय समुद्र के अन्दर लड़ने के लिए आये हुए उस आदि-दैत्य हिरण्याक्ष को अपनी दाढ़ों से विदीर्ण कर दिया। जैसे इन्द्र ने अपने वज्र से पर्वतों को काट दिया था।

## द्वितीयः श्लोकः

**जातो रुचेरजनयत् सुयमान् सुयज्ञ, आकूतिसूनुरमरानथ दक्षिणायाम् ।**
**लोकत्रयस्य महतीमहरद् यदाऽऽर्तिं, स्वायम्भुवेन मनुना हरिरित्यनूक्तः ।।२।।**

**पदच्छेद—** जातः रुचेः अजनयत् सुयमान् सुयज्ञः, आकूति सूनुः अमरान् अथ दक्षिणायाम् ।
लोक त्रयस्य महतीम् अहरत् यदा आर्तिम्, स्वायम्भुवेन मनुना हरिः इति अनूक्तः ।।

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **जातः** | ४. | अवतार लेकर | **दक्षिणायाम् ।** | ५. | दक्षिणा के गर्भ से |
| **रुचेः** | १. | रुचि प्रजापति की (पत्नी) | **लोक त्रयस्य महतीम्** | ११. | तीनों लोकों के महान् |
| **अजनयत्** | ८. | उत्पन्न किया था | **अहरत्** | १३. | दूर किया (उससमय) |
| **सुयमान्** | ६. | सुयम नामक | **यदा** | १०. | जब (उन्होंने) |
| **सुयज्ञः,** | ३. | सुयज्ञ नाम से | **आर्तिम्,** | १२. | संकट को |
| **आकूति सूनुः** | २. | आकूति के पुत्र के रूप में | **स्वायम्भुवेन** | १४. | स्वायम्भुव |
| **अमरान्** | ७. | देवताओं को | **मनुना, हरिः** | १५. | मनु ने, (उन्हें) हरि |
| **अथ** | ९. | तदनन्तर | **इति, अनूक्तः ।।** | १६. | इस नाम से, पुकारा था |

**श्लोकार्थ—** भगवान् ने रुचि नामक प्रजापति की पत्नी आकूति के पुत्र के रूप में सुयज्ञ नाम से अवतार लेकर अपनी पत्नी दक्षिणा के गर्भ से सुयम नामक देवताओं को उत्पन्न किया था। तदनन्तर जब उन्होंने तीनों लोकों के महान् संकट को दूर किया, उस समय स्वायम्भुव मनु ने उन्हें हरि इस नाम से पुकारा था।

## तृतीयः श्लोकः

**जज्ञे च कर्दमगृहे द्विज देवहूत्यां, स्त्रीभिः समं नवभिरात्मगतिं स्वमात्रे ।**
**ऊचे ययाऽऽत्मशमलं गुणसङ्गपङ्क--मस्मिन् विधूय कपिलस्य गतिं प्रपेदे ॥३॥**

पदच्छेद— जज्ञे च कर्दम गृहे द्विज देवहूत्याम्, स्त्रीभिः समम् नवभिः आत्म गतिम् स्व मात्रे ।
ऊचे यया आत्म शमलम् गुण सङ्ग पङ्कम्, अस्मिन् विधूय कपिलस्य गतिम् प्रपेदे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जज्ञे, च | ६. | उत्पन्न हुए थे, इस अवतार में | ऊचे, यया | ६. | उपदेश दिया था, जिससे |
| कर्दम, गृहे | २. | कर्दम प्रजापति के, घर में | आत्म, शमलम् | ११. | मन की, मैल (और) |
| द्विज | १. | हे देवर्षि नारद ! (वे भगवान्) | गुण सङ्ग | १२. | सत्त्वादि गुणों में आसक्ति रूप |
| देवहूत्याम्, | ३ | देवहूती के गर्भ से | पङ्कम्, | १३ | कीचड़ को |
| स्त्रीभिः, समम् | ५. | बहिनों के, साथ | अस्मिन् | १० | इस शरीर में विद्यमान |
| नवभिः | ४. | नव | विधूय | १४. | धोकर |
| आत्म गतिम् | ८. | आत्मा के स्वरूप का | कपिलस्य गतिम् | १५ | भगवान् कपिल के स्वरूप को |
| स्व, मात्रे । | ७. | अपनी, माता को | प्रपेदे ॥ | १६. | प्राप्त हो गयीं |

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! वे भगवान् कर्दम प्रजापति के घर में देवहूती के गर्भ से नव बहिनों के साथ उत्पन्न हुए थे । इस अवतार में उन्होंने अपनी माता को आत्मा के स्वरूप का उपदेश दिया था; जिससे देवहूती जी इस शरीर में विद्यमान मन की मैल और सत्त्वादि गुणों में आसक्ति रूप कीचड़ को धोकर भगवान् कपिल के स्वरूप को प्राप्त हो गयीं ।

## चतुर्थः श्लोकः

**अत्रेरपत्यमभिकाङ्क्षत आह तुष्टो, दत्तो मयाहमिति यद् भगवान् स दत्तः ।**
**यत्पादपङ्कजपरागपवित्रदेहा, योगर्द्धिमापुरुभयीं यदुहैहयाद्याः ॥ ४ ॥**

पदच्छेद—अत्रेः अपत्यम् अभिकाङ्क्षतः आह तुष्टः, दत्तः मया अहम् इति यद् भगवान् सः दत्तः ।
यत् पाद पङ्कज पराग पवित्र देहाः, योग ऋद्धिम् आपुः उभयीम् यदु हैहय आद्याः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अत्रेः | ३. | अत्रि ऋषि से | दत्तः । यत् | १०. | दत्तात्रेय हुए । जिनके |
| अपत्यम् | १. | पुत्र की | पाद, पङ्कज | ११. | चरण, कमल के |
| अभिकाङ्क्षतः | २. | कामना करने वाले | पराग पवित्रदेहाः, | १२. | केसर से निर्मल शरीर वाले |
| आह, तुष्टः, | ४. | वरदान दिया, प्रसन्न होकर | योग, ऋद्धिम् | १६ | योग की, सिद्धियों को |
| दत्तः | ७. | दे दिया | आपुः | १७. | प्राप्त किया था |
| मया, अहम् | ६. | मैंने, अपने को | उभयीम् | १५. | भोग और मोक्ष दोनों |
| इति | ५. | कि | यदु | १३. | राजा यदु और |
| यद् | ८. | इसलिए | हैहय आद्याः ॥ | १४. | सहस्रार्जुन इत्यादि राजाओं ने |
| भगवान्, सः | ९. | भगवान्, वे | | | |

श्लोकार्थ—पुत्र की कामना करने वाले अत्रि ऋषि से प्रसन्न होकर भगवान् ने उन्हें वरदान दिया कि 'मैंने अपने को दे दिया', इसलिए वे भगवान् दत्तात्रेय इस नाम से प्रसिद्ध हुए; जिनके चरण-कमल के केसर से निर्मल शरीर वाले राजा यदु और सहस्रार्जुन इत्यादि राजाओं ने योग की भोग और मोक्ष दोनों सिद्धियों को प्राप्त किया था ।

## पञ्चमः श्लोकः

**तप्तं तपो विविधलोकसिसृक्षया मे, आदौ सनात् स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत् ।**
**प्राक्कल्पसम्प्लवविनष्टमिहात्मतत्त्वं, सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन् ॥५॥**

पदच्छेद--तप्तम् तपः विविध लोक सिसृक्षया मे, आदौ सनात् स्व तपसः सः चतुः सनः अभूत् ।
प्राक् कल्प सम्प्लव विनष्टम् इह आत्म तत्त्वम्, सम्यक् जगाद मुनयः यद् अचक्षत आत्मन् ॥

शब्दार्थ--

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तप्तम्, तपः | ४. | की थी, तपस्या | अभूत्। | १०. | उत्पन्न हुए थे |
| विविध, लोक | २. | अनेक, लोकों की | प्राक् कल्प | ११. | पूर्व कल्प के |
| सिसृक्षया | ३. | सृष्टि करने की इच्छा से | सम्प्लव, विनष्टम् | १२. | प्रलय से, भूले हुए |
| मे, | ५. | मेरी | इह | १४. | इस कल्प में |
| आदौ | १. | (मैंने) सृष्टि के प्रारम्भ में | आत्म तत्त्वम्, | १३. | आत्मा के स्वरूप को |
| सनात्, स्व | ६. | सन नामवाली, अपनी | सम्यक्, जगाद | १५. | भली प्रकार, बताया था |
| तपसः | ७. | तपस्या से (प्रसन्न होकर) | मुनयः, यद् | १६. | ऋषिगणों ने, जिसका |
| सः | ८. | वे (भगवान्) | अचक्षत | १८. | साक्षात्कार किया है |
| चतुः, सनः | ९. | सनक, आदि चार रूपों में | आत्मन् ॥ | १७. | आत्मा में |

श्लोकार्थ—मैंने सृष्टि के प्रारम्भ में अनेक लोकों की सृष्टि करने की इच्छा से तपस्या की थी। मेरी सन नाम वाली अपनी तपस्या से प्रसन्न होकर वे भगवान् सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार चार रूपों में उत्पन्न हुए थे। उन सनकादि कुमारों ने पूर्व कल्प के प्रलय से भूले हुए आत्मा के स्वरूप को इस कल्प में भली प्रकार बताया; जिसका ऋषि गणों ने आत्मा में साक्षात्कार किया है।

## षष्ठः श्लोकः

**धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां, नारायणो नर इति स्वतपःप्रभावः ।**
**दृष्ट्वाऽऽत्मनो भगवतो नियमावलोपं, देव्यस्त्वनङ्गपृतना घटितुं न शेकुः ॥६॥**

पदच्छेद--धर्मस्य दक्ष दुहितरि अजनिष्ट मूर्त्याम्, नारायणः नरः इति स्व तपः प्रभावः ।
दृष्ट्वा आत्मनः भगवतः नियम अवलोपम्, देव्यः तु अनङ्ग पृतनाः घटितुं न शेकुः ॥

शब्दार्थ--

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्मस्य | १. | (भगवान् ने) धर्म की (पत्नी) | दृष्ट्वा | ११. | सामने देखकर |
| दक्ष, दुहितरि | २. | दक्ष प्रजापति की, कन्या | आत्मनः भगवतः | १०. | अपने को भगवान् के |
| अजनिष्ट | ७. | अवतार लिया था | नियम अवलोपम् | १२. | तपस्या में विघ्न |
| मूर्त्याम्, | ३. | मूर्ति देवी के गर्भ से | देव्यः तु | ९. | अप्सरायें भी |
| नारायणः, नरः | ५. | नारायण, नर | अनङ्ग, पृतनाः | ८. | कामदेव की, सेना |
| इति | ६. | (ऋषि के) रूप में | घटितुम् | १३. | डालने में |
| स्वतपःप्रभावः। | ४. | अपने समान तपो बल वाले | न शेकुः ॥ | १४. | समर्थ नहीं हो सकी थीं |

श्लोकार्थ—भगवान् ने धर्म की पत्नी तथा दक्ष प्रजापति की कन्या मूर्ति देवी के गर्भ से अपने समान तपोबल वाले नर-नारायण ऋषि के रूप में अवतार लिया था। कामदेव की सेना अप्सरायें अपने को भगवान् के सामने देखकर भी उनकी तपस्या में विघ्न डालने में समर्थ नहीं हो सकी थीं।

## सप्तमः श्लोकः

कामं दहन्ति कृतिनो ननु रोषदृष्ट्या, रोषं दहन्तमुत ते न दहन्त्यसह्यम् ।
सोऽयं यदन्तरमलं प्रविशन् बिभेति, कामः कथं नु पुनरस्य मनः श्रयेत ।। ७ ।।

पदच्छेद—कामम् दहन्ति कृतिनः ननु रोष दृष्ट्या, रोषम् दहन्तम् उत ते न दहन्ति असह्यम् ।
सः अयम् यद् अन्तरम् अलम् प्रविशन् बिभेति, कामः कथम् नु पुनः अस्य मनः श्रयेत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कामम्, दहन्ति | ४. कामदेव को, जला देते हैं | सः, अयम् | १०. | वही, यह (क्रोध) |
| कृतिनः | १. (शंकर आदि) महानुभाव | यद्, अन्तरम् | ११. | जिनके, अन्तःकरण में |
| ननु | ३. निश्चय ही | अलम् | १३. | बहुत |
| रोष, दृष्ट्या, | २. क्रोध की, अग्नि से | प्रविशन् | १२. | प्रवेश करते समय |
| रोषम् | ८. क्रोध को | बिभेति, | १४. | डरता है |
| दहन्तम् | ६. (अपने को) जलाने वाले | कामः, कथम् | १६ | कामदेव, कैसे |
| उत, ते | ५. किन्तु, वे | नु, पुनः | १५. | भला, फिर |
| न दहन्ति | ९. नहीं जला पाते हैं | अस्य, मनः | १७. | इनके, मन में |
| असह्यम् । | ७. असहनीय | श्रयेत ।। | १८. | प्रवेश कर सकता था |

श्लोकार्थ—शंकर आदि महानुभाव क्रोध की अग्नि से निश्चय ही कामदेव को जला देते हैं; किन्तु वे अपने को जलाने वाले असहनीय क्रोध को नहीं जला पाते हैं। वही यह क्रोध जिनके अन्तःकरण में प्रवेश करते समय बहुत डरता है, फिर भला कामदेव कैसे इनके मन में प्रवेश कर सकता था ?

## अष्टमः श्लोकः

विद्धः सपत्न्युदितपत्रिभिरन्ति राज्ञो, बालोऽपि सन्नुपगतस्तपसे वनानि ।
तस्मा अदाद् ध्रुवगतिं गृणते प्रसन्नो, दिव्याः स्तुवन्ति मुनयो यदुपर्यधस्तात् ।।८।।

पदच्छेद—विद्धः सपत्नी उदित पत्रिभिः अन्ति राज्ञः, बालः अपि सन् उपगतः तपसे वनानि ।
तस्मै अदात् ध्रुव गतिम् गृणते प्रसन्नः, दिव्याः स्तुवन्ति मुनयः यद् उपरि अधस्तात् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| विद्धः | ४. विंधे हुए (ध्रुव) | अदात् | ११. | दिया था |
| सपत्नी | २. सौतेली माँ के | ध्रुव, गतिम् | १०. | ध्रुव. पद |
| उदित, पत्रिभिः | ३. वचन, बाण से | गृणते, प्रसन्नः, | ८. | स्तुति से, प्रसन्न होकर |
| अन्ति, राज्ञः, | १. समीप (स्थित), राजा के | दिव्याः | १४. | स्वर्गलोक के |
| बालः, अपि सन् | ५. बालक, भी होने पर | स्तुवन्ति | १६. | स्तुति करते हैं |
| उपगतः | ७. चले गये | मुनयः | १५. | महर्षिगण (उनकी) |
| तपसे, वनानि। | ६. तपस्या करने, वन में | यद्, उपरि | १२. | जिनके, ऊपर और |
| तस्मै | ९. उन्हें (भगवान् ने) | अधस्तात् ।। | १३. | नीचे (परिक्रमा करते हुए) |

श्लोकार्थ—राजा उत्तानपाद के समीप स्थित सौतेली माँ के वचन-बाण से विंधे हुए ध्रुव बालक होने पर भी तपस्या करने वन में चले गये। उनकी स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान् ने उन्हें ध्रुवपद दिया था; जिनके ऊपर और नीचे परिक्रमा करते हुए स्वर्ग लोक के महर्षिगण उनकी स्तुति करते हैं।

## नवमः श्लोक

यद्वेनमुत्पथगतं द्विजवाक्यवज्र-विप्लुष्टपौरुषभगं निरये पतन्तम् ।
त्रात्वार्थितो जगति पुत्रपदं च लेभे, दुग्धावसूनि वसुधा सकलानि येन ॥९॥

पदच्छेद—यद् वेनम् उत्पथ गतम् द्विज वाक्य वज्र, विप्लुष्ट पौरुष भगम् निरये पतन्तम् ।
त्रात्वा अर्थितः जगति पुत्र पदम् च लेभे, दुग्ध वसूनि वसुधा सकलानि येन ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद्, वेनम् | ८. | जिस, राजा वेन को | त्रात्वा | ९. | बचाया और |
| उत्पथ गतम् | ७. | कुमार्गगामी | अर्थितः | १. | प्रार्थना करने पर |
| द्विज | २. | ब्राह्मणों के | जगति पुत्रपदम् | १०. | संसार में पुत्र नाम को |
| वाक्य, वज्र, | ३. | वचन रूप, वज्र से | च, लेभे, | ११. | तदनन्तर, सार्थक किया |
| विप्लुष्ट, पौरुष | ४. | भस्म हुए, पुरुषार्थ और | दुग्धा | १५. | दोहन किया था |
| भगम् | ५. | ऐश्वर्य वाले (तथा) | वसूनि | १४. | औषधियों का |
| निरये, पतन्तम् | ६. | नरक में, गिरते हुए | वसुधा सकलानि | १३. | पृथ्वी से, सम्पूर्ण |
| | | | येन ॥ | १२. | उन्होंने |

श्लोकार्थ—पृथु अवतार में भगवान् ने प्रार्थना करने पर ब्राह्मणों के वचन रूप वज्र से भस्म हुए पुरुषार्थ और ऐश्वर्य वाले तथा नरक में गिरते हुए कुमार्गगमी जिस राजा वेन को बचाया और संसार में पुत्र नाम को सार्थक किया । तदनन्तर उन्होंने पृथ्वी से सम्पूर्ण औषधियों का दोहन किया था ।

## दशमः श्लोकः

नाभेरसावृषभ आस सुदेविसूनु—र्यो वै चचार समदृग् जडयोगचर्याम् ।
यत् पारमहंस्यमृषयः पदमामनन्ति, स्वस्थः प्रशान्तकरणः परिमुक्तसङ्गः ॥१०॥

पदच्छेद—नाभेः असौ ऋषभः आस सुदेवि सूनुः, यः वै चचार समदृक् जड योग चर्याम् ।
यत् पारमहंस्यम् ऋषयः पदम् आमनन्ति, स्वस्थ प्रशान्त करणः परिमुक्त सङ्गः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाभेः | २. | राजा नाभि की (पत्नी) | यत् | १७. | उन (ऋषभदेव) को |
| असौ | १. | वे (भगवान्) | पारमहंस्यम् | १८. | परमहंस या अवधूत |
| ऋषभः, आस | ४. | ऋषभ नाम से, अवतरित हुए थे | ऋषयः | ११. | मुनि जन |
| सुदेवि, सूनुः, | ३. | सुदेवी के, पुत्र रूप में | पदम् | १९. | नाम से |
| यः | ६. | जिन्होंने | आमनन्ति, | २०. | जानते हैं |
| वै | ५. | तदनन्तर | स्वस्थः | १६. | आत्मानन्द में मग्न |
| चचार | १०. | किया था | प्रशान्त | १३. | वश में किये हुए |
| समदृक् | ७. | समदर्शी होकर | करणः | १२. | मन और इन्द्रिय को |
| जड | ८. | जड़ की भाँति | परिमुक्त | १५. | रहित (और) |
| योगचर्याम् । | ९. | तपोनुष्ठान | सङ्गः ॥ | १४. | आसक्ति से |

श्लोकार्थ—वे भगवान् राजा नाभि की पत्नी सुदेवी के पुत्ररूप में ऋषभ नाम से अवतरित हुए थे । तदनन्तर जिन्होंने समदर्शी होकर जड़ की भाँति तपोनुष्ठान किया था । मुनिजन मन और इन्द्रिय को वश में किये हुए, आसक्ति से रहित और आत्मानन्द में मग्न उन ऋषभदेव को परमहंस या अवधूत नाम से जानते हैं ।

## (ए)कादशः श्लोकः

**सत्रे ममास भगवान् हयशिरषाथो, साक्षात् स यज्ञपुरुषस्तपनीयवर्णः ।**
**छन्दोमयो मखमयोऽखिलदेवतात्मा, वाचो बभूवुरुशतीः श्वसतोऽस्य नस्तः ॥११॥**

पदच्छेद— **सत्रे मम आस भगवान् हयशिरषा अथो, साक्षात् सः यज्ञपुरुषः तपनीय वर्णः ।**
**छन्दोमयः मखमयः अखिलदेवता आत्मा, वाचः बभूवुः उशतीः श्वसतः अस्य नस्तः ॥**

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सत्रे | ६. यज्ञ में | छन्दोमयः | ९. वेदों के रूप में |
| मम | ५. मेरे | मखमयः | १०. यज्ञ स्वरूप और |
| आस | ७. प्रकट हुए थे | अखिल,देवता आत्मा, | ११. सर्व, देवमय हैं |
| भगवान् | ८. वे भगवान् | वाचः, बभूवुः | १६. वाणी, प्रकट हुई है |
| हयशीरषा | ४. हयग्रीव रूप से | उशतीः | १५. वेद |
| अथो, साक्षात् | १. तदनन्तर, स्वयम् | श्वसतः | १४. श्वास से |
| सः, यज्ञपुरुषः | २. वही, परमात्म | अस्य | १२. इन्हीं (भगवान्) की |
| तपनीय, वर्णः । | ३. सुवर्ण के समन, पीतवर्ण | नस्तः ॥ | १३. नासिका के |

श्लोकार्थ—तदनन्तर स्वयम् वही परमात्म सुवर्ण के समान पीतवर्ण हयग्रीव रूप से मेरे यज्ञ में प्रकट हुए थे । वे भगवान् वेदों केरूप मे यज्ञस्वरूप और सर्व देवमय हैं । इन्हीं भगवान् की नासिका के श्वास से वेदवाणी प्रकट हुईहै ।

## द्वादशः श्लोकः

**मत्स्यो युगान्तसमये मनुनोपलब्धः, क्षोणीमयो निखिलजीवनिकायकेतः ।**
**विस्रंसितानुरुभये सलिले मुखान्मे, आदाय तत्र विजहार ह वेदमार्गान् ॥ १२ ॥**

पदच्छेद— **मत्स्यः युगान्त समये मनुना उपलब्धः, क्षोणीमयः निखिल जीव निकाय केतः ।**
**विस्रंसितान् उरुभये सलिले मुखात् मे, आदाय तत्र विजहार ह वेद मार्गान् ॥**

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| मत्स्यः | ३. मछली के रूप में | उरु भये | १६. भयंकर |
| युगान्त समये | १. खण्ड प्रलय के समय | सलिले | १७. जल में |
| मनुना | २. (सत्यव्रत) मनुनें (भगवान् को) | मुखात् | ११. मुख से (निःसृत और) |
| उपलब्धः, | ४. प्राप्त किया था (उस समय) | मे, | १०. मेरे |
| क्षोणीमयः | ५. पृथ्वी रूपी नौका से | आदाय | १४. लेकर |
| निखिल | ६. सम्पूर्ण | तत्र | १५. उस |
| जीव, निकाय | ७. प्राणि, समूह की | विजहार | १८. विहार किया था |
| केतः । | ८. रक्षा की थी | ह | ९. तथा |
| विस्रंसितान् | १२. विच्छिन्न हुई | वेद, मार्गान् ॥ | १३. वेद की, शाखाओं को |

श्लोकार्थ—खण्ड प्रलय के समय सत्यव्रत मनु ने भगवान् को मछली के रूप में प्राप्त किया था । उस समय उन्होंने पृथ्वी रूपी नौका से सम्पूर्ण प्राणि-समूह की रक्षा की थी तथा मेरे मुख से निःसृत और विच्छिन्न हुई वेद की शाखाओं को लेकर उस भयंकर जल में विहार किया था ।

# त्रयोदश: श्लोक:

क्षीरोदधावमरदानवयूथपाना-मुन्मथ्नताममृतलब्धय आदिदेवः ।
पृष्ठेन कच्छपवपुर्विदधार । गोत्रं, निद्राक्षणद्रिपरिवर्तकषाणकण्डूः ।। १३ ।।

पदच्छेद— क्षीर उदधौ अमर दानव यूथपानाम्, उन्मथ्नताम् अमृत लब्धये आदि देवः ।
पृष्ठेन कच्छप वपुः विदधार गोत्रम्, निद्रा क्षणः अद्रि परिवर्त कषाण कण्डूः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षीर | १. | क्षीर | पृष्ठेन | ११. | (अपनी) पीठ पर |
| उदधौ | २. | सागर में | कच्छप, व | १०. | कच्छप, रूप से |
| अमर | ४. | देवताओं और | विदधार | १३. | धारण किया था (उस समय) |
| दानव | ५. | दानवों के द्वारा | गोत्रम्, | १२. | मंदराचल को |
| यूथपानाम्, | ३. | प्रमुख | निद्रा | १८. | (सुख की) नींद (ली थी) |
| उन्मथ्नताम् | ८. | मन्थन करने के समय | क्षणः | १७. | कुछ समय तक |
| अमृत | ६. | सुधा की | अद्रि, परिवर्त | १४. | पर्वत की, रगड़ से |
| लब्धये | ७ | प्राप्ति के लिए | कषाण | १६. | शांत हो जाने के कारण (उन्होंने) |
| आदिदेवः । | ९. | भगवान् ने | कण्डूः ।। | १५. | खुजली |

श्लोकार्थ—क्षीर सागर में प्रमुख देवताओं और दानवों के द्वारा सुधा की प्राप्ति के लिए मन्थन करने के समय भगवान् ने कच्छप रूप से अपनी पीठ पर मंदराचल को धारण किया था। उस समय पर्वत की रगड़ से खुजली शान्त हो जाने के कारण उन्होंने कुछ समय तक सुख की नींद ली थी।

# चतुर्दश: श्लोक:

त्रैविष्टपोरुभयहा स नृसिंहरूपं, कृत्वा भ्रमद् भ्रुकुटिदंष्ट्रकरालवक्त्रम् ।
दैत्येन्द्रमाशु गदयाभिपतन्तमारा—दूरौ निपात्य विददार नखैः स्फुरन्तम् ।। १४ ।।

पदच्छेद— त्रैविष्टप उरु भयहा सः नृसिंह रूपम्, कृत्वा भ्रमत् भ्रुकुटि दंष्ट्र कराल वक्त्रम् ।
दैत्येन्द्रम् आशु गदया अभिपतन्तम् आरात्, ऊरौ निपात्य विददार नखैः स्फुरन्तम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्रैविष्टप | २. | देवताओं के | दैत्येन्द्रम् | १३. | दैत्यराज हिरण्यकशिपु को |
| उरु | ३. | महान् | आशु | ११. | झपट कर |
| भयहा | ४. | संकट को काटने वाले | गदया | १०. | गदा के साथ |
| सः | १. | उन (भगवान्) ने | अभिपतन्तम् | १२. | सामने आते हुए |
| नृसिंह रूपम्, | ८. | नरसिंह के रूप को | आरात्, | १४. | खेल-खेल में |
| कृत्वा | ९. | धारण किया था (तथा) | ऊरौ, निपात्य | १५. | (अपनी) जंघाओं पर, गिराकर |
| भ्रमत्, भ्रुकुटि | ५. | टेढ़ी, भौहों और | विददार | १८. | फाड़ दिया था |
| दंष्ट्र | ६. | डाढ़ों के कारण | नखैः | १७. | नाखूनों से |
| कराल, वक्त्रम् । | ७. | भयंकर, मुख से युक्त | स्फुरन्तम् ।। | १६. | छटपटाते हुए (उसे) |

श्लोकार्थ—उन भगवान् ने देवताओं के महान् संकट को काटने वाले, टेढ़ी भौहों और डाढ़ों के कारण भयंकर मुख से युक्त नरसिंह के रूप को धारण किया था तथा गदा के साथ झपट कर सामने आते हुए दैत्यराज हिरण्यकशिपु को खेल-खेल में अपनी जंघाओं पर गिराकर छटपटाते हुए उसे नाखूनों से फाड़ दिया था।

## पञ्चदशः श्लोकः

**अन्तःसरस्युरुबलेन पदे गृहीतो, ग्राहेण यूथपतिरम्बुजहस्त आर्तः ।**
**आहेदमादिपुरुषाखिललोकनाथ, तीर्थश्रवः श्रवणमङ्गलनामधेय ॥ १५ ॥**

पदच्छेद— अन्तः सरसि उरु बलेन पदे गृहीतः, ग्राहेण यूथपतिः अम्बुज हस्तः आर्तः ।
आह इदम् आदि पुरुष अखिल लोक नाथ, तीर्थ श्रवः श्रवण मङ्गल नामधेय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अन्तः | २. अन्दर | आह | १८. | पुकार लगाई थी |
| सरसि | १. विशाल सरोवर के | इदम् | १७. | इस प्रकार |
| उरु, बलेन | ४. बड़े, जोर से | आदि पुरुष | १० | हे आदि पुरुष |
| पदे, गृहीतः, | ५. पैर, पकड़ लिए जाने पर | अखिल | ११. | हे सम्पूर्ण |
| ग्राहेण | ३. ग्राह के द्वारा | लोक नाथ, | १२. | ब्रह्माण्ड के स्वामिन् ! |
| यूथपतिः | ६. गजराज ने | तीर्थश्रवः | १३. | हे पुण्यकीर्ते ! |
| अम्बुज | ८. कमल लेकर | श्रवण | १४. | हे पवित्र और |
| हस्तः | ७. सूँड में | मङ्गल | १५. | कल्याणकारी |
| आर्तः । | ९. दीन-भाव से | नामधेय ॥ | १६. | नाम धारिन् ! |

श्लोकार्थ—विशाल सरोवर के अन्दर ग्राह के द्वारा बड़े जोर से पैर पकड़ लिए जाने पर गजराज ने सूँड़ में कमल लेकर दीन-भाव से हे आदि पुरुष ! हे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामिन् ! हे पुण्यकीर्ते ! हे पवित्र और कल्याणकारी नामधारिन् ! इस प्रकार पुकार लगाई थी ।

## षोडशः श्लोकः

**श्रुत्वा हरिस्तमरणार्थिनमप्रमेय – श्चक्रायुधः पतगराजभुजाधिरूढः ।**
**चक्रेण नक्रवदनं विनिपाट्य तस्मा-द्धस्ते प्रगृह्य भगवान्·कृपयोज्जहार ॥१६॥**

पदच्छेद—श्रुत्वा हरिः तम् अरणार्थिनम् अप्रमेयः, चक्र आयुधः पतगराज भुज अधिरूढः ।
चक्रेण नक्र वदनम् विनिपाट्य तस्मात्, हस्ते प्रगृह्य भगवान् कृपया उज्जहार ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| श्रुत्वा | ३. सुनकर | चक्रेण | ९. | चक्र सुदर्शन से |
| हरिः | ६. श्री हरि | नक्र, वदनम् | १०. | ग्राह के, मुख को |
| तम् | २. उस (गजराज) की (पुकार) | विनिपाट्य | ११. | काट दिये (इस प्रकार) |
| अरणार्थिनम् | १. हारे हुए | तस्मात्, | १५. | उस (ग्राह) से |
| अप्रमेयः, | ४. अतुल बलशाली (और) | हस्ते, प्रगृह्य | १४. | सूंड पकड़ कर |
| चक्र, आयुधः | ५. चक्र, सुदर्शनधारी | भगवान् | १३. | भगवान् ने |
| पतगराज, भुज | ७. गरुड़ के, पंख पर | कृपया | १२. | कृपा परवश |
| अधिरूढः । | ८. सवार होकर | उज्जहार ॥ | १६. | उद्धार किया था |

श्लोकार्थ—हारे हुए उस गजराज की पुकार सुनकर अतुल बलशाली और चक्र सुदर्शनधारी श्री हरि गरुड़ के पंख पर सवार होकर चक्र सुदर्शन से ग्राह के मुख को काट दिये । इस प्रकार कृपा परवश भगवान् ने सूंड पकड़ कर गजराज का उस ग्राह से उद्धार किया था ।

## सप्तदशः श्लोकः

ज्यायान् गुणैरवरजोऽप्यदितेः सुतानां, लोकान् विचक्रम इमान् यदथाधियज्ञः ।
क्ष्मां वामनेन जगृहे त्रिपदच्छलेन, याच्ञामृते पथि चरन् प्रभुभिर्न चाल्यः ।।१७।।

पदच्छेद—ज्यायान् गुणैः अवरजः अपि अदितेः सुतानाम्, लोकान् विचक्रमे इमान् यद् अथ अधियज्ञः ।
क्ष्माम् वामनेन जगृहे त्रिपद छलेन, याच्ञाम् ऋते पथि चरन् प्रभुभिः न चाल्यः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्यायान्, गुणैः | ३. | सबसे बड़े थे, गुणों के कारण | क्ष्माम् | ११. | पूरी पृथ्वी को |
| अवरजः, अपि | २. | छोटे होने पर, भी (भगवान्) | वामनेन | ६. | वामन रूप से, (भगवान्) ने |
| अदितेः, सुतानाम् | १. | माता अदिति के, पुत्रों में | जगृहे | १२. | ले लिया |
| लोकान् विचक्रमे | ८. | तीनों लोकों कोनाप लिया था | त्रिपद, छलेन, | १०. | तीन पग के, बहाने |
| इमान् | ७. | इन | याच्ञाम्, ऋते | १५. | याचना के, सिवाय |
| यद् | ४. | क्योंकि | पथि, चरन् | १४. | सन्मार्ग में, चलने वालों को |
| अथ | ६. | संकल्प करते ही (उन्होंने) | प्रभुभिः | १३. | समर्थ पुरुष भी |
| अधियज्ञः । | ५. | यज्ञ में (बलि के) | न चाल्यः ।। | १६. | विचलित नहीं कर सकते हैं |

श्लोकार्थ—माता अदिति के पुत्रों में छोटे होने पर भी भगवान् गुणों के कारण सबसे बड़े थे; क्योंकि यज्ञ में बलि के संकल्प करते ही उन्होंने इन तीनों लोकों को नाप लिया था । इस प्रकार वामन रूप से भगवान् ने तीन पग के बहाने पूरी पृथ्वी को ले लिया । समर्थ पुरुष भी सन्मार्ग में चलने वालों को याचना के सिवाय अन्य उपाय से विचलित नहीं कर सकते हैं ।

## अष्टादशः श्लोकः

नार्थो बलेरयमुरुक्रमपादशौच–मापः शिखाधृतवतो विबुधाधिपत्यम् ।
यो वै प्रतिश्रुतमृते न चिकीर्षदन्य–दात्मानमङ्गशिरसा हरयेऽभिमेने ।। १८ ।।

पदच्छेद— न अर्थः बलेः अयम् उरुक्रम पाद शौचम्, आपः शिखा धृतवतः विबुध आधिपत्यम् ।
यः वै प्रतिश्रुतम् ऋते न चिकीर्षत् अन्यत्, आत्मानम् अङ्ग शिरसा हरये अभिमेने ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न अर्थः | ५. | पुरुषार्थ नहीं है (कि उसे) | प्रतिश्रुतम् | १०. | (अपनी) प्रतिज्ञा के |
| बलेः, अयम् | ४. | बलि का, यह | ऋते | ११. | विपरीत |
| उरुक्रम, पाद | १ | वामन भगवान् के, चरणों के | न चिकीर्षत् | १४. | करने की इच्छा नहीं की थी |
| शौचम्, आपः | २. | धोवन, जल को | अन्यत्, | १२. | कुछ |
| शिखा, धृतवतः | ३. | शिर पर, धारण करने वाले | आत्मानम् | १७. | अपने को |
| विबुध | ६. | देवताओं के | अङ्ग | ८. | हे देवर्षि नारद ! |
| आधिपत्यम् । | ७. | राजा की पदवी (प्राप्त हुई) | शिरसा | १५. | (उसी ने) शिर झुकाकर |
| यः | ९. | जिस (बलि) ने | हरये | १६. | वामन भगवान् के (चरणों में |
| वै | १३. | भी | अभिमेने ।। | १८. | समर्पित कर दिया |

श्लोकार्थ—वामन भगवान् के चरणों के धोवन जल को शिर पर धारण करने वाले बलि का यह पुरुषार्थ नहीं है कि उसे देवताओं के राजा की पदवी प्राप्त हुई । हे देवर्षि नारद ! जिस बलि ने अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत कुछ भी करने की इच्छा नहीं की थी; उसी ने शिर झुकाकर वामन भगवान् के चरणों में अपने को समर्पित कर दिया ।

# एकोनविंशः श्लोकः

तुभ्यं च नारद भृशं भगवान् विवृद्ध–भावेन साधुपरितुष्ट उवाच योगम् ।
ज्ञानं च भागवतमात्मसतत्त्वदीपं, यद्वासुदेवशरणा विदुरञ्जसैव ।। १९ ।।

पदच्छेद-- तुभ्यम् च नारद भृशम् भगवान् विवृद्ध, भावेन साधु परितुष्टः उवाच योगम् ।
ज्ञानम् च भागवतम् आत्म सतत्त्व दीपम्, यद् वासुदेव शरणाः विदुः अञ्जसा एव ।।

शब्दार्थ——

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तुभ्यम् च | ६. | तुम्हें | च | ८. | और |
| नारद | १. | हे देवर्षि नारद ! (तुम्हारे) | भागवतम् | ११. | भागवत |
| भृशम् | २. | अत्यन्त | आत्म | ९. | आत्मा के |
| भगवान् | ५. | भगवान् ने हंस रूप धारण करके | सतत्त्व,दीपम् | १०. | स्वरूप का. दर्शन कराने वाले |
| विवृद्ध, भावेन | ३. | बढ़े हुए, प्रेम भाव से | यद् | १४. | जिसे |
| साधु, परितुष्टः | ४. | अच्छी तरह, प्रसन्न हुए | वासुदेव | १५. | भगवान् वासुदेव के |
| उवाच | १३. | उपदेश दिया था | शरणाः | १६. | शरणागत भक्त जन |
| योगम् । | ७. | योग शास्त्र का | विदुः | १८. | जान जाते हैं |
| ज्ञानम् | १२. | ज्ञान का | अञ्जसा एव ।। | १७. | सरलता से ही |

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! तुम्हारे अत्यन्त बढ़े हुए प्रेम-भाव से अच्छी तरह प्रसन्न हुए भगवान् ने हंस रूप धारण करके तुम्हें योग-शास्त्र का और आत्मा के स्वरूप का दर्शन कराने वाले भागवत-ज्ञान का उपदेश दिया था; जिसे भगवान् वासुदेव के शरणागत भक्तजन सरलता से ही जान जाते हैं ।

# विंशः श्लोकः

चक्रं च दिक्ष्वविहतं दशसु स्व तेजो, मन्वतरेषु मनुवंशधरो बिभर्ति ।
दुष्टेषु राजसु दमं व्यदधात् स्वकीर्तिम्, सत्ये त्रिपृष्ठ उशतीं प्रथयंश्चरित्रैः ।।२०।।

पदच्छेद— चक्रम् च दिक्षु अविहतम् दशसु स्व तेजः, मन्वन्तरेषु मनु वंश धरः बिभर्ति ।
दुष्टेषु राजसु दमम् व्यदधात् स्व कीर्तिम्, सत्ये त्रिपृष्ठे उशतीम् प्रथयन् चरित्रैः ।।

शब्दार्थ——

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चक्रम् | ८. | शासन को | दुष्टेषु राजसु | १७. | दुष्ट राजाओं का |
| च | ६. | और | दमम् व्यदधात् | १८. | दमन किया था |
| दिक्षु | ४. | दिशाओं में | स्व | १३. | अपनी |
| अविहतम् | ७. | निर्विघ्न | कीर्तिम्, | १५. | कीर्ति |
| दशसु | ३. | दसों | सत्ये | १२. | सत्यलोक तक |
| स्व तेजः, | ५. | अपने प्रताप | त्रिपृष्ठे | ११. | तीनों लोकों के ऊपर |
| मन्वन्तरेषु | १. | सभी मन्वन्तरों में | उशतीम् | १४. | सुन्दर |
| मनुवंश धरः | २. | मनुवंश में उत्पन्न होकर | प्रथयन् | १६. | फैलाते हुए |
| बिभर्ति । | ९. | धारण किया (तथा) | चरित्रैः ।। | १०. | अपने चरित्र से |

श्लोकार्थ—भगवान् ने सभी मन्वन्तरों में मनुवंश में उत्पन्न होकर दसों दिशाओं में अपने प्रताप और निर्विघ्न शासन को धारण किया तथा अपने चरित्र से तीनों लोकों के ऊपर सत्यलोक तक अपनी सुन्दर कीर्ति फैलाते हुए दुष्ट राजाओं का दमन किया था ।

## एकविंश: श्लोक:

धन्वन्तरिश्च भगवान् स्वयमेव कीर्ति—र्नाम्ना नृणां पुरुरुजां रुज आशु हन्ति ।
यज्ञे च भागममृतायुरवावरुन्ध, आयुश्च वेदमनुशास्त्यवतीर्य लोके ।।२१।।

पदच्छेद— धन्वन्तरिः च भगवान् स्वयम् एव कीर्तिः, नाम्ना नृणाम् पुरु रुजाम् रुजः आशु हन्ति ।
यज्ञे च भागम् अमृत आयुः अवावरुन्धे, आयुः च वेदम् अनुशास्ति अवतीर्य लोके ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धन्वन्तरिः च | ३. | धन्वन्तरि | यज्ञे | १०. | (उन्होंने) यज्ञ में |
| भगवान् | २. | भगवान् | च | १४. | तथा |
| स्वयम्एव,कीर्तिः, | १. | साक्षात्, यशोरूप | भागम् | १२. | भाग की |
| नाम्ना | ४. | (अपने) नाम से ही | अमृत आयुः | ११. | देवताओं के |
| नृणाम् | ६. | मनुष्यों के | अवावरुन्धे | १३. | रक्षा की थी |
| पुरु रुजाम् | ५. | बड़े-बड़े रोगों से ग्रस्त | आयुः च वेदम् | १७. | आयुर्वेद का |
| रुजः | ७. | रोगों को | अनुशास्ति | १८. | उपदेश किया था |
| आशु | ८. | तत्काल | अवतीर्य | १६. | अवतार लेकर |
| हन्ति । | ९. | दूर कर देते हैं | लोके ।। | १५. | संसार में |

श्लोकार्थ— साक्षात् यशोरूप भगवान् धन्वन्तरि अपने नाम से ही बड़े-बड़े रोगों से ग्रस्त मनुष्यों के रोगों को तत्काल दूर कर देते हैं । उन्होंने यज्ञ में देवताओं के भाग की रक्षा की थी तथा संसार में अवतार लेकर आयुर्वेद का उपदेश किया था ।

## द्वाविंश: श्लोक:

क्षत्रं क्षयाय विधिनोपभृतं महात्मा, ब्रह्मध्रुगुज्झितपथं नरकार्तिलिप्सु ।
उद्धन्त्यसाववनिकण्टकमुग्रवीर्य—स्त्रिः सप्तकृत्व उरुधारपरश्वधेन ।।२२।।

पदच्छेद—क्षत्रम् क्षयाय विधिना उपभृतम् महात्मा, ब्रह्मध्रुक् उज्झित पथम् नरक आर्ति लिप्सु ।
उद्धन्ति असौ अवनि कण्टकम् उग्रवीर्यः, त्रिः सप्तकृत्वः उरु धार परश्वधेन ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षत्रम् | १४. | क्षत्रियों का | लिप्सु । | ९. | इच्छुक |
| क्षयाय | १२. | (अपने) विनाश के लिए | उद्धन्ति | १६. | विनाश किया था |
| विधिना | ११. | दैव वश | असौ | १. | उन (भगवान्) ने |
| उपभृतम् | १३. | बढ़े हुए | अवनि, कण्टकम् | १०. | पृथ्वी के, काँटे (एवम्) |
| महात्मा, | ३. | परशुराम अवतार में | उग्र, वीर्यः, | २. | महान्, पराक्रमी |
| ब्रह्म, ध्रुक् | ६. | ब्राह्मण, द्रोही | त्रिःसप्तकृत्वः | १५. | इक्कीस बार |
| उज्झित पथम् | ७. | मर्यादा का उल्लंघन करने वाले | उरु, धार | ४. | तीखी, धार वाले |
| नरक, आर्ति | ८. | नारकीय, दुःखों के | परश्वधेन ।। | ५. | (अपने) फरसे से |

श्लोकार्थ— उन भगवान् ने महान् पराक्रमी परशुराम अवतार में तीखी धार वाले अपने फरसे से ब्राह्मण-द्रोही, मर्यादा का उल्लंघन करने वाले, नारकीय दुःखों के इच्छुक, पृथ्वी के काँटे एवं दैव-वश अपने विनाश के लिए बढ़े हुए क्षत्रियों का इक्कीस बार विनाश किया था ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

**अस्मत्प्रसादसुमुखः कलया कलेश—इक्ष्वाकुवंश अवतीर्य गुरोर्निदेशे ।**
**तिष्ठन् वनं सदयितानुज आविवेश, यस्मिन् विरुध्य दशकन्धर आर्तिमार्च्छत् ।।२३।।**

पदच्छेद—अस्मत् प्रसाद सुमुखः कलया कलेशः, इक्ष्वाकु वंशे अवतीर्य गुरोः निदेशे ।
तिष्ठन् वनम् सदयिता अनुजः आविवेश, यस्मिन् विरुध्य दशकन्धरः आर्तिम् आर्च्छत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अस्मत्, प्रसाद | १. | हम पर, कृपा करने के | वनम् | ११. | वन में |
| सुमुखः | २. | इच्छुक | स | १०. | साथ |
| कलया | ४. | (अपनी) कलाओं के साथ | दयिता अनुजः | ९ | पत्नी और छोटे भाई के |
| कलेशः, | ३. | माया पति भगवान् | आविवेश, | १२. | गये थे |
| इक्ष्वाकु वंशे | ५. | इक्ष्वाकु वंश में(श्रीरामरूपसे) | यस्मिन्, विरुध्य | १३. | जिनसे, विरोध करके |
| अवतीर्य | ६. | अवतार लेकर | दशकन्धरः | १४. | रावण |
| गुरोः, निदेशे । | ७. | पिता दशरथ के, आदेश का | आर्तिम् | १५. | मृत्यु को |
| तिष्ठन् | ८. | पालन करते हुए | आर्च्छत् ।। | १६. | प्राप्त किया था |

श्लोकार्थ—हम पर कृपा करने के इच्छुक मायापति भगवान् अपनी कलाओं के साथ इक्ष्वाकु वंश में श्रीराम रूप से अवतार लेकर पिता दशरथ के आदेश का पालन करते हुए अपनी पत्नी और छोटे भाई के साथ वन में गये थे; जिनसे विरोध करके रावण मृत्यु को प्राप्त किया था ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

**यस्मा अदादुदधिरूढभयाङ्गवेपो, मार्गं सपद्यरिपुरं हरवद् दिधक्षोः ।**
**दूरे सुहृन्मथितरोषसुशोणदृष्ट्या, तातप्यमानमकरोरगनक्रचक्रः ।।२४।।**

पदच्छेद— यस्मै अदात् उदधिः ऊढ भय अङ्ग वेपः, मार्गम् सपदि अरि पुरम् हरवत् दिधक्षोः ।
दूरे सुहृद् मथित रोष सुशोण दृष्ट्या, तातप्यमान मकर उरग नक्र चक्रः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्मै | १७. | जिस (श्रीराम जी) को | दूरे | २. | वियोग से |
| अदात् | २०. | दे दिया था | सुहृद् | १. | सीता के |
| उदधिः | ११. | समुद्र ने | मथित | ३. | उत्पन्न |
| ऊढ, भय | १२. | उत्पन्न, भय के कारण | रोष | ४. | क्रोध के कारण |
| अङ्ग वेपः, | १३. | काँपते शरीर से | सुशोण | ५. | लाल |
| मार्गम् | १९. | रास्ता | दृष्ट्या, | ६. | आँखों की (अग्नि से) |
| सपदि | १८. | तत्काल | तातप्यमान | ७. | जलते हुए |
| अरि पुरम् | १६. | शत्रु रावण की नगरी लंका को | मकर | ८. | मगरमच्छ |
| हरवत् | १५. | भगवान् शंकर के समान | उरग, नक्र | ९. | सर्प, ग्राह |
| दिधक्षोः । | १४. | भस्म करने के इच्छुक | चक्रः । | १०. | आदि जीवों से युक्त |

श्लोकार्थ—सीता के वियोग से उत्पन्न क्रोध के कारण लाल आँखों की अग्नि से जलते हुए मगरमच्छ, सर्प, ग्राह आदि जीवों से युक्त समुद्र ने उत्पन्न भय के कारण काँपते शरीर से त्रिपुर को भस्म करने के इच्छुक भगवान् शंकर के समान शत्रु रावण की नगरी लंका को भस्म करने के इच्छुक जिस श्रीराम जी को तत्काल मार्ग दे दिया था ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

वक्षःस्थलस्पर्शरुग्णमहेन्द्रवाह—दन्तैर्विडम्बितककुब्जुष ऊढहासम् ।
सद्योऽसुभिः सह विनेष्यति दारहर्तु—र्विस्फूर्जितैर्धनुष उच्चरतोऽधिसैन्ये ॥ २५ ॥

पदच्छेद— वक्षः स्थल स्पर्श रुग्ण महेन्द्र वाह, दन्तैः विडम्बित ककुप् जुषः ऊढ हासम् ।
सद्यः असुभिः सह विनेष्यति दार हर्तुः, विस्फूर्जितैः धनुषः उच्चरतः अधिसैन्ये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वक्षःस्थल | १. | छाती की | सद्यः | १५. | तत्काल |
| स्पर्श | २. | टक्कर से | असुभिः, सह | १४. | प्राणों के, साथ |
| रुग्ण | ३. | चूरा हुए | विनेष्यति | १६. | नष्ट हो जायेगा |
| महेन्द्रवाह, | ४. | ऐरावत के | दार हर्तुः | ८. | सीता का हरण करने वाले चोर रावण का |
| दन्तैः | ५. | दाँतों से | विस्फूर्जितैः | १३. | टंकार से (उसके) |
| विडम्बित | ७. | सफेद कर देने वाले (तथा) | धनुषः | १२. | (श्रीराम जी के) धनुष की |
| ककुप्, जुषः | ६. | दिशाओं की, कान्ति को | उच्चरतः | ११. | उतरने पर |
| ऊढ हासम् । | ९. | अट्टहास | अधिसैन्ये ॥ | १०. | लड़ाई के मैदान में |

श्लोकार्थ—छाती की टक्कर से चूरा हुए ऐरावत के दाँतों से दिशाओं की कान्ति को सफेद कर देने वाले तथा सीता का हरण करने वाले रावण का अट्टहास लड़ाई के मैदान में उतरने पर श्रीराम जी के धनुष की टंकार से उसके प्राणों के साथ तत्काल नष्ट हो जायेगा ।

# षड्विंशः श्लोकः

भूमेः सुरेतरवरूथविमर्दितायाः, क्लेशव्ययाय कलया सितकृष्णकेशः ।
जातः करिष्यति जनानुपलक्ष्यमार्गः, कर्माणि चात्ममहिमोपनिबन्धनानि ॥ २६ ॥

पदच्छेद— भूमेः सुर इतर वरूथ विमर्दितायाः, क्लेश व्ययाय कलया सित कृष्ण केशः ।
जातः करिष्यति जन अनपलक्ष्य मार्गः, कर्माणि च आत्म महिमन् उपनिबन्धनानि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूमेः | ३. | पृथ्वी के | जातः | ९. | अवतार लेंगे |
| सुर इतर, वरुथ | १. | दैत्य, समूह से | करिष्यति | १६. | करेंगे |
| विमर्दितायाः, | २. | रौंदी गयी | जन, अनुपलक्ष्य | ११. | लोगों से अज्ञात |
| क्लेश | ४. | भार को | मार्गः, | १२. | रहस्य वाले (वे भगवान्) |
| व्ययाय | ५. | उतारने के लिए (भगवान्) | कर्माणि | १५. | लीलाओं को |
| कलया | ६. | अपनी कला से | च | १०. | तथा |
| सित | ७. | बलराम और | आत्म, महिमन् | १३. | अपने सामर्थ्य को |
| कृष्ण केशः । | ८. | श्रीकृष्ण के रूप में | उपनिबन्धनानि । | १४. | प्रगट करने वाली |

श्लोकार्थ—दैत्य-समूह से रौंदी गयी पृथ्वी के भार को उतारने के लिए भगवान् अपनी कला से बलराम और श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लेंगे तथा लोगों से अज्ञात रहस्य वाले वे भगवान् अपने सामर्थ्य को प्रगट करने वाली लीलाओं को करेंगे ।

## सप्तविंशः श्लोकः

**तोकेन जीवहरणं यदुलूकिकाया—स्त्रैमासिकस्य च पदा शकटोऽपवृत्तः ।**
**यद् रिङ्गतान्तरगतेन दिविस्पृशोर्वा, उन्मूलनं त्वितरथार्जुनयोर्न भाव्यम् ॥ २७ ॥**

पदच्छेद— तोकेन जीव हरणम् यद् उलूकिकायाः, त्रैमासिकस्य च पदा शकटः अपवृत्तः ।
यद् रिङ्गता अन्तरगतेन दिविस्पृशोः वा, उन्मूलनम् तु इतरथा अर्जुनयोः न भाव्यम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तोकेन | १. | बचपन में | यद् | १५. | जो (उन्हें) |
| जीव, हरणम् | ४. | प्राण, हर लेना | रिङ्गता | ११. | घुटनों के बल चलते हुए |
| यद् | २. | जो | अन्तर, गतेन | १४. | बीच में, जाकर |
| उलूकिकायाः, | ३. | पूतना का | दिविस्पृशोः | १२. | आकाश को छूने वाले |
| त्रैमासिकस्य | ६ | तीन मास की आयु में | वा, | १०. | अथवा |
| च | ५. | तथा | उन्मूलनम् तु | १६. | उखाड़ देना है (उसे) |
| पदा | ७. | पैर से | इतरथा | १७. | भगवान् के सिवाय दूसरा |
| शकटः | ८. | छकड़ा | अर्जुनयोः | १३. | यमलार्जुन वृक्षों के |
| अपवृत्तः । | ९. | उलट देना | न भाव्यम् ॥ | १८ | नहीं कर सकता है |

श्लोकार्थ— बचपन में जो पूतना का प्राण हर लेना तथा तीन मास की आयु में पैर से छकड़ा उलट देना अथवा घुटनों के बल चलते हुए आकाश को छूने वाले यमलार्जुन वृक्षों के बीच में जाकर जो उन्हें उखाड़ देना है; उसे भगवान् के सिवाय दूसरा नहीं कर सकता है ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

**यद् वै व्रजे व्रजपशून् विषतोयपीथान्, पालांस्त्वजीवयदनुग्रहदृष्टिवृष्ट्या ।**
**तच्छुद्धयेऽतिविषवीर्यविलोलजिह्व—मुच्चाटयिष्यदुरगं विहरन् ह्रदिन्याम् ॥ २८ ॥**

पदच्छेद— यद् वै व्रजे व्रज पशून् विष तोय पीथान्, पालान् तु अजीवयत् अनुग्रह दृष्टि वृष्ट्या ।
तत् शुद्धये अतिविष वीर्य विलोल जिह्वम्, उच्चाटयिष्यत् उरगम् विहरन् ह्रदिन्याम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् वै | १. | जब (भगवान् श्रीकृष्ण) | वृष्ट्या । | ९. | वर्षा से |
| व्रजे | २. | व्रज में | तत्, शुद्धये | ११. | तब, शुद्ध करने के लिए |
| व्रज, पशून् | ५. | व्रज के, पशुओं | अतिविष, वीर्य | १४. | अधिक विषैली, शक्तिशाली और |
| विष, तोय | ३. | विष से दूषित, जल | विलोल | १५. | लपलपाती |
| पीथान्, | ४. | पीये हुए | जिह्वम्, | १६. | जीभ वाले |
| पालान् | ७. | ग्वालों को | उच्चाटयिष्यत् | १८. | निकालेंगे |
| तु | ६. | और | उरगम् | १७. | कालियनाग को |
| अजीवयत् | १०. | जीवित करेंगे | विहरन् | १३. | विहार करते हुए (वे भगवान्) |
| अनुग्रह, दृष्टि | ८. | सुधामयी, कृपा दृष्टि की | ह्रदिन्याम् ॥ | १२. | कालिय दह में |

श्लोकार्थ—जब भगवान् श्रीकृष्ण व्रज में विष से दूषित जल पीये हुए व्रज के पशुओं और ग्वालों को सुधामयी कृपा-दृष्टि की वर्षा से जीवित करेंगे, तब शुद्ध करने के लिए कालियदह में विहार करते हुए वे भगवान् अधिक विषैली, शक्तिशाली और लपलपाती जीभ वाले कालियनाग को निकालेंगे ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

तत्कर्म दिव्यमिव यन्निशि निःशयानं, दावाग्निना शुचिवने परिदह्यमाने ।
उन्नेष्यति व्रजमतोऽवसितान्तकालं, नेत्रे पिधाप्य सबलोऽनधिगम्यवीर्यः ।। २९ ।।

पदच्छेद— तत् कर्म दिव्यम् इव यद् निशि निःशयानम्, दाव अग्निना शुचिवने परिदह्यमाने ।
उन्नेष्यति व्रजम् अतः अवसित अन्त कालम्, नेत्रे पिधाप्य सबलः अनधिगम्य वीर्यः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्, कर्म | १६. | (उनकी) वह लीला | उन्नेष्यति | १५. | उबार लेंगे |
| दिव्यम् | १८. | अलौकिक (होगी) | व्रजम् | ११. | व्रजवासियों को |
| इव | १७. | भी | अतः | १३. | उस (संकट) से |
| यद् | १४. | जो | अवसित | १०. | पड़े हुए |
| निशि | ७. | रात्रि में | अन्त, कालम् | ९. | प्राण-संकट में |
| निः शयानम्, | ८. | आराम से सोये हुए (तथा) | नेत्रे, पिधाप्य | १२. | आँखें, बन्द कराकर |
| दाव अग्निना | ४. | दावाग्नि से | सबलः | ३. | बलराम जी के साथ |
| शुचि वने | ५. | मूंजवन के | अनधिगम्य | १. | अचिन्त्य |
| परिदह्यमाने । | ६. | जलते समय | वीर्यः ।। | २. | शक्ति (भगवान् श्रीकृष्ण) |

श्लोकार्थ—अचिन्त्य-शक्ति भगवान् श्री कृष्ण बलराम जी के साथ दावाग्नि से मूंज वन के जलते समय रात्रि में आराम से सोये हुए तथा प्राण-संकट में पड़े हुए व्रजवासियों को, आँखें बन्द कराकर उस संकट से जो उबार लेंगे, उनकी वह लीला भी अलौकिक होगी ।

# त्रिंशः श्लोकः

गृह्णीत यद् यदुपबन्धममुष्य माता, शुल्वं सुतस्य न तु तत् तदमुष्य माति ।
यज्जृम्भतोऽस्य वदने भुवनानि गोपी, संवीक्ष्य शङ्कितमनाः प्रतिबोधिताऽऽसीत् ।।३०।।

पदच्छेद— गृह्णीत यद् यद् उपबन्धम् अमुष्य माता, शुल्बम् सुतस्य न तु तत् तद् अमुष्य माति ।
यद् जृम्भतः अस्य वदने भुवनानि गोपी, संवीक्ष्य शङ्कित मनाः प्रतिबोधिता आसीत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गृह्णीत | ५. | लायेंगी | यद् | १३. | जब |
| यद् यद् उपबन्धम् | ४. | जो-जो रस्सी | जृम्भतः | १२. | जंभाई लेते समय |
| अमुष्य | २. | उस | अस्य, वदने | १४. | उसके, मुख में |
| माता | १. | माता (यशोदा) | भुवनानि | १५. | चौदह लोकों को |
| शुल्बम् | ८. | रस्सी | गोपी, | ११. | माता यशोदा (बालक के) |
| सुतस्य | ३. | पुत्र श्रीकृष्ण को बाँधने के लिए | संवीक्ष्य | १६. | देखेंगी (तब पहले) |
| न तु | ९. | नहीं | शङ्कितमनाः | १७. | भयभीत होंगी (किन्तु फिर) |
| तद् तद् | ७. | वह-वह | प्रतिबोधिता | १८. | सम्हल |
| अमुष्य | ६. | उनके लिए | आसीत् ।। | १९. | जायेंगी |
| माति । | १०. | पूरी पड़ेगी (तथा वह) | | | |

श्लोकार्थ—माता यशोदा उस पुत्र श्रीकृष्ण को बाँधने के लिए जो-जो रस्सी लायेंगी, उनके लिए वह-वह रस्सी पूरी नहीं पड़ेगी तथा वह माता यशोदा बालक के जंभाई लेते समय जब उसके मुख में चौदह

## एकत्रिंशः श्लोकः

**नन्दं च मोक्ष्यति भयाद् वरुणस्य पाशाद्, गोपान् बिलेषु पिहितान् मयसूनुना च।**
**अह्न्यापृतं निशि शयानमतिश्रमेण, लोकं विकुण्ठमुपनेष्यति गोकुलं स्म ॥३१॥**

पदच्छेद— नन्दम् च मोक्ष्यति भयात् वरुणस्य पाशात्, गोपान् बिलेषु पिहितान् मय सूनुना च।
अह्नि आपृतम् निशि शयानम् अतिश्रमेण, लोकम् विकुण्ठम् उपनेष्यति गोकुलम् स्म ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| नन्दम् | ४. नन्द बाबा को | अह्नि | ११. दिन भर |
| च | २. और | आपृतम् | १२. कामधन्धों में लगे रहने वाले |
| मोक्ष्यति | १०. छुड़ायेंगे (अन्त में) | निशि | १४. रात में |
| भयात् | १. (अजगर के) भयसे | शयानम् | १६. सोने वाले |
| वरुणस्य, पाशात्, | ३. वरुण के, फन्दे से | अतिश्रमेण, | १५. थक कर |
| गोपान् | ६. ग्वालों को | लोकम् | १९. धाम |
| बिलेषु | ७. पहाड़ की गुफाओं में | विकुण्ठम् | १८. वैकुण्ठ |
| पिहितान् | ८. बन्द किये गये | उपनेष्यति | २०. पहुँचायेंगे |
| मय सूनुना | ६. मयदानव के पुत्र के द्वारा | गोकुलम् | १७. व्रजवासियों को |
| च। | ५. तथा | स्म ॥ | १३. और |

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण अजगर के भय से और वरुण के फन्दे से नन्द बाबा को तथा मय दानव के पुत्र व्योमासुर के द्वारा पहाड़ की गुफाओं में बन्द किये गये ग्वालों को छुड़ायेंगे। अन्त में दिन भर काम-धन्धों में लगे रहने वाले और रात में थक कर सोने वाले व्रजवासियों को वैकुण्ठ धाम पहुँचायेंगे।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**गोपैर्मखे प्रतिहते व्रजविप्लवाय, देवेऽभिवर्षति पशून् कृपया रिरक्षुः।**
**धर्तोच्छिलीन्ध्रमिव सप्त दिनानि सप्त—वर्षो महीध्रमनघैककरे सलीलम् ॥३२॥**

पदच्छेद— गोपैः मखे प्रतिहते व्रज विप्लवाय, देवे अभिवर्षति पशून् कृपया रिरक्षुः।
धर्ता उच्छिलीन्ध्रम् इव सप्त दिनानि सप्त, वर्षः महीध्रम् अनघ एक करे सलीलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| गोपैः | २. ग्वालों के द्वारा | धर्ता | १६. धारण किये रहेंगे |
| मखे, प्रतिहते | ३. पूजन, बन्द कर देने पर | उच्छिलीन्ध्रम् | १२. कुकुरमुत्ते के |
| व्रज, विप्लवाय | ५. व्रजभूमि के, विनाश के लिए | इव, सप्त दिनानि | १३ समान, सात दिनों तक |
| देवे | ४. देवराज इन्द्र | सप्त, वर्षः | १०. सात, वर्ष की आयु वाले |
| अभिवर्षति | ६. (जब) वर्षा करने लगेंगे | महीध्रम् | ११. गोवर्धन पर्वत को |
| पशून् | ८. पशुओं की | अनघ | १. हे निष्पाप नारद जी ! |
| कृपया | ७. (उस समय) कृपावश | एक करे | १५. एक हाथ पर |
| रिरक्षुः। | ९. रक्षा करने की इच्छा से | सलीलम् ॥ | १४. खेल-खेल में |

श्लोकार्थ—हे निष्पाप नारद जी ! ग्वालों के द्वारा पूजन बन्द कर देने पर देवराज इन्द्र व्रजभूमि के विनाश के लिए जब वर्षा करने लगेंगे, उस समय कृपावश पशुओं की रक्षा करने की इच्छा से सात वर्ष की आयु वाले भगवान् श्रीकृष्ण गोवर्धन पर्वत को कुकुरमुत्ते के समान सात दिनों तक खेल-खेल में एक हाथ पर धारण किये रहेंगे।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

क्रीडन् वने निशि निशाकररश्मिगौर्यां, रासोन्मुखः कलपदायतमूर्च्छितेन ।
उद्दीपितस्मररुजां व्रजभृद्वधूनां, हर्तुर्हरिष्यति शिरोः धनदानुगस्य ॥३३॥

पदच्छेद— क्रीडन् वने निशि निशाकर रश्मि गौर्याम्, रास उन्मुखः कल पद आयत मूर्च्छितेन ।
उद्दीपित स्मर रुजाम् व्रजभृत् वधूनाम्, हर्तुः हरिष्यति शिरः धनद अनुगस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्रीडन् | ३. | विहार करते हुए (श्रीकृष्ण) | मूर्च्छितेन । | ९. | तान से |
| वने | २. | वन में | उद्दीपित | ११. | वश में हुई |
| निशि | ६. | रात्रि में | स्मर रुजाम् | १०. | प्रेम के |
| निशाकर | ४. | चन्द्रमा की | व्रजभृत् वधूनाम् | १२. | ग्वालों की स्त्रियों का |
| रश्मि, गौर्याम्, | ५. | चांदनी से, उज्ज्वल | हर्तुः | १३. | हरण करने वाले |
| रास, उन्मुखः | १. | रास लीला की, इच्छा से | हरिष्यति | १६. | उतार देंगे |
| कलपद | ७. | वंशी की | शिरः | १५. | मस्तक |
| आयत | ८. | लम्बी | धनद अनुगस्य । | १४. | कुबेर के सेवक का |

श्लोकार्थ—रासलीला की इच्छा से वन में विहार करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्रमा की चाँदनी से उज्ज्वल रात्रि में वंशी की लम्बी तान से प्रेम के वश में हुई ग्वालों की स्त्रियों का हरण करने वाले कुबेर के सेवक शंखचूड का मस्तक उतार देंगे ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ये च प्रलम्बखरदर्दुरकेश्यरिष्ट-मल्लेभकंसयवनाः कुजपौण्ड्रकाद्याः ।
अन्ये च शाल्वकपिबल्वलदन्तवक्त्र-सप्तोक्षशम्बरविदूरथरुक्मिमुख्याः ॥३४॥

पदच्छेद—ये च प्रलम्ब खर दर्दुर केशी अरिष्ट, मल्ल इभ कंस यवनाः कुज पौण्ड्रक आद्याः ।
अन्ये च शाल्व कपि बल्वल दन्तवक्त्र, सप्त उक्षन् शम्बर विदूरथ रुक्मि मुख्याः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये च | ८. | जो (राजा) थे | अन्ये | १५. | दूसरे |
| प्रलम्ब, खर | १. | प्रलम्बासुर, धेनुकासुर | च | ९. | तथा |
| दर्दुर, केशी | २. | वकासुर, केशी | शाल्व, कपि | १०. | शाल्व, द्विविद वानर |
| अरिष्ट | ३. | अरिष्टासुर, | बल्वल, दन्तवक्त्र | ११. | बल्वल, दन्तवक्त्र |
| मल्ल | ४. | चाणूरादि पहलवान | सप्त उक्षन् | १२. | (राजा नग्नजित के) सात बैल |
| इभ, कंस | ५. | कुवलयापीड हाथी, कंस | शम्बर, विदूरथ | १३. | शम्बरासुर, विदूरथ |
| यवनाः, कुज | ६. | कालयवन, भौमासुर | रुक्मि | १४. | रुक्मी, (आदि) |
| पौण्ड्रक, आद्याः । | ७. | मिथ्यावासुदेव, इत्यादि | मुख्याः ॥ | १६. | प्रधान (दुष्ट थे) |

श्लोकार्थ—प्रलम्बासुर, धेनुकासुर, वकासुर, केशी, अरिष्टासुर, चाणूरादि पहलवान, कुवलयापीड हाथी, कंस, कालयवन, भौमासुर, मिथ्या वासुदेव इत्यादि जो राजा थे तथा शाल्व, द्विविद वानर, बल्वल, दन्तवक्त्र, राजा नग्नजित के सात बैल, शम्बरासुर, विदूरथ, रुक्मी आदि दूसरे प्रधान दुष्ट राजा थे, भगवान् उनका वध करेंगे ।

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

**ये वा मृधे समितिशालिन आत्तचापाः, काम्बोजमत्स्यकुरुकैकयसृञ्जयाद्याः ।**
**यास्यन्त्यदर्शनमलं बलपार्थभीम, व्याजाह्वयेन हरिणा निलयं तदीयम् ॥३५॥**

**पदच्छेद**—ये वा मृधे समिति शालिनः आत्तचापाः, काम्बोज मत्स्य कुरु कैकय सृञ्जय आद्याः ।
यास्यन्ति अदर्शनम् अलम् बल पार्थ भीम, व्याज आह्वयेन हरिणा निलयम् तदीयम् ॥

**शब्दार्थ**—

| | | |
|---|---|---|
| ये वा | ५. | जो भी राजा |
| मृधे | ८. | लड़ाई के मैदान में |
| समिति शालिनः | ६. | युद्ध करने की इच्छा से |
| आत्त चापाः, | ७. | धनुष लेकर |
| काम्बोज, मत्स्य | १. | कम्बोज, मत्स्य |
| कुरु, कैकय | २. | कुरु, कैकय |
| सृञ्जय | ३. | सृञ्जय |
| आद्याः । | ४. | आदि देशों के |
| यास्यन्ति | ९. | जायेंगे (वे सब) |
| अदर्शनम् | १५ | मार दिये जायेंगे (और) |
| अलम् | १४. | तत्काल |
| बल, पार्थ, भीम | १०. | बलराम, अर्जुन, भीमसेन |
| व्याज | १२. | बहाने |
| आह्वयेन | ११. | नामों के |
| हरिणा | १३. | (स्वयं) श्री कृष्ण के द्वारा |
| निलयम् | १७. | निवास वैकुण्ठ लोक को चले जायेंगे |
| तदीयम् ॥ | १६. | उनके |

**श्लोकार्थ**—कम्बोज, मत्स्य, कुरु, कैकय, सृञ्जय आदि देशों के जो भी राजा युद्ध करने की इच्छा से धनुष लेकर लड़ाई के मैदान में जायेंगे; वे सब बलराम, अर्जुन, भीमसेन नामों के बहाने स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा तत्काल मार दिये जायेंगे और उनके निवास वैकुण्ठधाम को चले जायेंगे ।

# षट्त्रिंशः श्लोकः

**कालेन मीलितधियामवमृश्य नृणां, स्तोकायुषां स्वनिगमो बत दूर पारः ।**
**आविर्हितस्त्वनुयुगं स हि सत्यवत्यां, वेदद्रुमं विटपशो विभजिष्यति स्म ॥ ३६ ॥**

**पदच्छेद**— कालेन मीलित धियाम् अवमृश्य नृणाम्, स्तोक आयुषाम् स्वनिगमः बत दूर पारः ।
आविर्हितः तु अनुयुगम् सः हि सत्यवत्याम्, वेद द्रुमम् विटपशः विभजिष्यति स्म ॥

**शब्दार्थ**—

| | | |
|---|---|---|
| कालेन | १. | समय के फेर से |
| मीलित, धियाम् | ३. | मन्द, बुद्धि |
| अवमृश्य | ९. | विचार करके |
| नृणाम्, | २. | मनुष्यों की |
| स्तोक, आयुषाम् | ४. | अल्प, आयु |
| स्व निगमः | ६. | वेद वाणी के |
| बत | ५. | और |
| दूर | ८. | असमर्थता पर |
| पारः । | ७. | अध्ययन की |
| आविर्हितः, तु | १३. | अवतार लेंगे, तथा |
| अनुयुगम् | ११. | प्रत्येक युग में |
| सः, हि | १०. | वे भगवान्, ही |
| सत्यवत्याम् | १२. | सत्यवती के गर्भ से |
| वेद, द्रुमम् | १४. | वेद, वृक्ष को |
| विटपशः | १५. | शाखाओं में |
| विभजिष्यतिस्म ॥ | १६. | बाँट देंगे |

**श्लोकार्थ**—समय के फेर से मनुष्यों की मन्द-बुद्धि, अल्प-आयु और वेद वाणी के अध्ययन की असमर्थता पर विचार करके वे भगवान् ही प्रत्येक युग में सत्यवती के गर्भ से अवतार लेंगे तथा वेदवृक्ष को शाखाओं में बाँट देंगे ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

**देवद्विषां निगमवर्त्मनि निष्ठितानां, पूर्भिर्मयेन विहिताभिरदृश्यतूर्भिः ।**
**लोकान् घ्नतां मतिविमोहमतिप्रलोभं, वेषं विधाय बहु भाष्यत औपधर्म्यम् ।। ३७ ।।**

पदच्छेद— देवद्विषाम् निगम वर्त्मनि निष्ठितानाम्, पूर्भिः मयेन विहिताभिः अदृश्य तूर्भिः ।
लोकान् घ्नताम् मति विमोहम् अतिप्रलोभम्, वेषम् विधाय बहु भाष्यते औपधर्म्यम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवद्विषाम् | ८. | दैत्यों की | घ्नताम् | ७. | नाश करने वाले |
| निगम वर्त्मनि | १. | वेद के मार्ग का | मति, विमोहम् | ९. | बुद्धि में, भ्रम (और) |
| निष्ठितानाम्, | २. | सहारा लिये हुये | अति प्रलोभम् | १०. | अत्यन्त लोभ उत्पादक |
| पूर्भिः | ५. | नगरों में (रहने वाले) | वेषम्, विधाय | ११. | वेष को, धारण करके |
| मयेन विहिताभिः | ३. | मयदानव से बनाये हुये | बहु | १२. | बहुत से |
| अदृश्य तूर्भिः । | ४. | सूक्ष्म वेग वाले | भाष्यते | १४. | उपदेश देंगे |
| लोकान् | ६. | (और) लोगों का | औपधर्म्यम् ।। | १३. | उपधर्मों का |

श्लोकार्थ—वेद के मार्ग का सहारा लिये हुये, मयदानव से बनाये हुये सूक्ष्म वेग वाले नगरों में रहने वाले और लोगों का नाश करने वाले दैत्यों की बुद्धि में भ्रम और अत्यन्त लोभ उत्पादक वेष को धारण करके वे भगवान् बुद्धरूप से बहुत से उपधर्मों का उपदेश देंगे ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

**यर्ह्यालयेष्वपि सतां न हरेः कथाः स्युः, पाखण्डिनो द्विजजना वृषला नृदेवाः ।**
**स्वाहा स्वधा वषडिति स्म गिरो न यत्र, शास्ता भविष्यति कलेर्भगवान् युगान्ते ।।३८।।**

पदच्छेद— यर्हि आलयेषु अपि सताम् न हरेः कथाः स्युः, पाखण्डिनः द्विज जनाः वृषलाः नृदेवाः ।
स्वाहा स्वधा वषट् इति स्म गिरः न यत्र, शास्ता भविष्यति कलेः भगवान् युग अन्ते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यर्हि | १. | जब | स्वाहा, स्वधा | १३. | स्वाहा, स्वधा (और) |
| आलयेषु | ४. | घरों में | वषट्, इति | १४. | वषट्कार, ये |
| अपि | ३. | भी | स्म | १७. | सुनाई देंगे (तब) |
| सताम् | २. | सज्जनों के | गिरः, | १५. | शब्द, |
| न | ६ | नहीं | न | १६. | नहीं |
| हरेः, कथाः | ५. | भगवान् की, कथायें | यत्र | १२. | (तथा) जब |
| स्युः | ७. | होंगी | शास्ता | २०. | शासन करने वाले |
| पाखण्डिनः | ९. | पाखण्डी (और) | भविष्यति | २२. | अवतार लेंगे |
| द्विज, जनाः | ८. | ब्राह्मण जन | कलेः | १९. | कलियुग पर |
| वृषलाः | ११. | शूद्र (हो जावेंगे) | भगवान् | २१. | भगवान् (कल्कि रूप से) |
| नृदेवाः । | १०. | क्षत्रिय | युग, अन्ते ।। | १८. | कलियुग के, अन्त में |

श्लोकार्थ—जब सज्जनों के भी घरों में भगवान् की कथायें नहीं होंगी, ब्राह्मण जन पाखण्डी और क्षत्रिय शूद्र हो जावेंगे तथा जब स्वाहा, स्वधा और वषट्कार ये शब्द नहीं सुनाई देंगे, तब कलियुग के अन्त में कलियुग पर शासन करने वाले भगवान् कल्कि रूप से अवतार लेंगे ।

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

सर्गे तपोऽहमृषयो नव ये प्रजेशाः, स्थाने च धर्ममखमन्वमरावनीशाः ।
अन्ते त्वधर्महरमन्युवशासुराद्या, मायाविभूतय इमाः पुरुशक्तिभाजः ॥ ३९ ॥

पदच्छेद— सर्गे तपः अहम् ऋषयः नव ये प्रजेशाः, स्थाने च धर्म मख मनु अमर अवनीशाः ।
अन्ते तु अधर्म हर मन्युवश असुर आद्याः, माया विभूतयः इमाः पुरु शक्ति भाजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्गे | १. | (संसार की) सृष्टि के समय | अन्ते | १०. | संहार के समय |
| तपः, अहम् | २. | तपस्या, मैं | तु | ६. | तथा |
| ऋषयः, नव | ३. | सप्तर्षि, (और) नव | अधर्म, हर | ११. | अधर्म, रुद्र |
| ये | १४. | जो (प्रधान रूप हैं) | मन्युवश | १२. | मन्युवश नाग और |
| प्रजेशाः, | ४. | प्रजापति | असुर, आद्याः | १३. | दैत्य, इत्यादि |
| स्थाने | ६. | पालन के समय | माया | १७. | माया के |
| च | ५. | एवम् | विभूतयः | १८ | विशेष अवतार हैं |
| धर्म, मख, मनु | ७. | धर्म, विष्णु, मनु | इमाः, पुरु | १५. | ये, सर्व |
| अमर, अवनीशाः । | ८. | देवता, (और) राजगण | शक्तिभाजः ॥ | १६. | शक्तिमान् परमात्मा की |

श्लोकार्थ—संसार की सृष्टि के समय तपस्या, मैं, सप्तर्षि और नव प्रजापति एवम् पालन के समय धर्म, विष्णु, मनु, देवता और राजगण तथा संहार के समय अधर्म, रुद्र, मन्युवश नाग और दैत्य इत्यादि जो प्रधान रूप हैं; ये सर्व शक्तिमान् परमात्मा की माया के विशेष अवतार हैं ।

## चत्वारिंशः श्लोकः

विष्णोर्नु वीर्यगणनां कतमोऽर्हतीह, यः पार्थिवान्यपि कविर्विममे रजांसि ।
चस्कम्भ यः स्वरंहसास्खलता त्रिपृष्ठं, यस्मात् त्रिसाम्यसदनादुरुकम्पयानम् ॥४०॥

पदच्छेद— विष्णोः नु वीर्य गणनाम् कतमः अर्हति इह, यः पार्थिवानि अपि कविः विममे रजांसि ।
चस्कम्भ यः स्व रंहसा अस्खलता त्रिपृष्ठम्, यस्मात् त्रि साम्य सदनात्,उरु कम्पयानम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विष्णोः | ६. | भगवान् विष्णु के | रजांसि । | ४. | कणों को |
| नु | ७. | भला | चस्कम्भ | २०. | स्थिर किया था |
| वीर्य, गणनाम् | १०. | पराक्रम को, गिनती | यः | १२. | उन्होंने |
| कतमः | ८. | कौन (व्यक्ति) | स्व | १७. | अपने |
| अर्हति | ११. | कर सकता है | रंहसा | १६. | वेग से |
| इह, | ६. | यहाँ (उनमें से) | अस्खलता | १८. | अटल |
| यः | १. | जिस | त्रिपृष्ठम् | १६. | सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को |
| पार्थिवानि, अपि | ३. | पृथ्वी के, भी | यस्मात्, त्रिसाम्य | १३. | जिन, तीन बराबर पगों को |
| कविः | २. | प्रतिभाशाली ने | सदनात् | १४. | फैलाने के समय |
| विममे | ५. | माप लिया है | उरु, कम्पयानम् ॥ | १५. | जोर से, काँपते हुये |

श्लोकार्थ—जिस प्रतिभाशाली ने पृथ्वी के भी कणों को माप लिया है, यहाँ उनमें से भला कौन व्यक्ति भगवान् विष्णु के पराक्रम की गिनती कर सकता है ? उन्होंने जिन तीन बराबर पगों को फैलाने के समय जोर से काँपते हुये पृथ्वी से सत्य लोक तक के सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने अटल वेग से स्थिर किया था ।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

**नान्तं विदाम्यहममी मुनयोऽग्रजास्ते, मायाबलस्य पुरुषस्य कुतोऽपरे ये ।**
**गायन् गुणान् दशशतानन आदिदेवः, शेषोऽधुनापि समवस्यति नास्य पारम् ॥४१॥**

पदच्छेद— न अन्तम् विदामि अहम् अमी मुनयः अग्रजाः ते, माया बलस्य पुरुषस्य कुतः अपरे ये ।
गायन् गुणान् दशशत आननः आदिदेवः, शेषः अधुना अपि समवस्यति न अस्य पारम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| न | ८. नहीं | अपरे | ११. दूसरे लोग (हैं वे भला) |
| अन्तम् | ७. पार | ये । | १०. (फिर) जो |
| विदामि | ६. पा सका हूँ | गायन् | १६. गान करते हुये |
| अहम् | ४. मैं (भी) | गुणान् | १५. (उनके) गुणों का |
| अमी, मुनयः | ३. वे (सनकादि) मुनि (तथा) | दशशत, आननः | १४. हजार, मुखों से |
| अग्रजाः | २. बड़े भाई | आदिदेवः, शेषः | १३. आदिदेव, भगवान् शेष नाग |
| ते, | १. तुम्हारे | अधुना, अपि | १७. आज तक, भी |
| माया, बलस्य | ५. माया, शक्ति वाले | समवस्यति | २० निश्चय कर पाये हैं |
| पुरुषस्य | ६. भगवान् विष्णु का | न | १९. नहीं |
| कुतः | १२. कैसे (जान सकते हैं) | अस्य, पारम् ॥ | १८. उनके, अन्त का |

श्लोकार्थ—तुम्हारे बड़े भाई वे सनकादि मुनि तथा मैं भी माया शक्ति वाले भगवान् विष्णु का पार नहीं पा सका हूँ, फिर जो दूसरे लोग हैं, वे भला कैसे जान सकते हैं? आदिदेव भगवान् शेषनाग हजार मुखों से उनके गुणों का गान करते हुए आज तक भी उनके अन्त का निश्चय नहीं कर पाये हैं।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

**येषां स एव भगवान् दययेदनन्तः, सर्वात्मनाश्रितपदो यदि निर्व्यलीकम् ।**
**ते दुस्तरामतितरन्ति च देवमायां, नैषां ममाहमिति धीः श्वश्रृगालभक्ष्ये ॥४२॥**

पदच्छेद—येषाम् सः एव भगवान् दययेत् अनन्तः, सर्वात्मना आश्रित पदः यदि निर्व्यलीकम् ।
ते दुस्तराम् अतितरन्ति च देव मायाम्, न एषाम् मम अहम् इति धीः श्वन् शृगाल भक्ष्ये ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| येषाम् | ६. उन पर | ते, दुस्तराम् | ११. (तदनन्तर) वे, अपार |
| सः एव | ७. वे ही | अतितरन्ति, च | १३. पार कर लेते हैं, तथा |
| भगवान् | ८. भगवान् | देव, मायाम् | १२. देव, माया को |
| दययेत् | १०. कृपा करते हैं | न | २०. नहीं रहता है |
| अनन्तः, | ९. अनन्त | एषाम् | १९. उनमें |
| सर्वात्मना | ४. सभी तरह से | मम | १७. मेरा |
| आश्रित | ५. सहारा लिया गया है (तो) | अहम् | १६. मैं (और) |
| पदः | ३. (भगवान् के) श्रीचरणों का | इति, धीः | १८. यह, भाव |
| यदि | १. यदि | श्वन्, शृगाल | १४. कुत्ते और, सियार के |
| निर्व्यलीकम् । | २. निष्कपट भाव से | भक्ष्ये ॥ | १५. कलेवा रूप शरीर में |

श्लोकार्थ—यदि निष्कपट-भाव से भगवान् के श्री चरणों का सभी तरह से सहारा लिया गया है तो उन पर वे ही भगवान् अनन्त कृपा करते हैं। तदनन्तर वे लोग अपार देव माया को पार कर लेते हैं तथा कुत्ते और सियार के कलेवा रूप शरीर में 'मैं' और 'मेरा' यह भाव उनमें नहीं रहता है।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

वेदाहमङ्ग परमस्य हि योगमायां, यूयं भवश्च भगवानथ दैत्यवर्यः ।
पत्नी मनोः स च मनुश्च तदात्मजाश्च, प्राचीनबर्हिर्ऋभुरङ्ग उत ध्रुवश्च ॥४३॥

पदच्छेद— वेद अहम् अङ्ग परमस्य हि योग मायाम्, यूयम् भवः च भगवान् अथ दैत्य वर्यः ।
पत्नी मनोः सः च मनुः च तद् आत्मजाः च, प्राचीन बर्हिः ऋभुः अङ्गः उत ध्रुवः च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वेद | २२. | जानते हैं | मनोः | १०. | मनु की |
| अहम् | ४. | मैं | सः | १२. | वे |
| अङ्ग | १. | हे देवर्षि नारद ! | च | ९. | और |
| परमस्य | २. | परम पुरुष की | मनुः, च | १३. | मनु, तथा |
| हि | २१. | ही | तद्, आत्मजाः | १४. | उनके, पुत्र (प्रियव्रत आदि) |
| योग मायाम्, | ३. | माया शक्ति को | च, प्राचीनबर्हिः | १५. | एवम्, प्राचीनबर्हि |
| यूयम् | ५. | तुम लोग | ऋभुः | १७. | ऋभु |
| भवः | ७. | शंकर | अङ्गः | १९. | प्यारे |
| च, भगवान् | ६. | और, भगवान् | उत | १६. | तथा |
| अथ, दैत्यवर्यः । | ८. | तथा, प्रह्लाद | ध्रुवः | २०. | ध्रुव |
| पत्नी | ११. | स्त्री (शतरूपा) | च ॥ | १८. | एवम् |

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद ! परम पुरुष की माया शक्ति को मैं, तुम लोग और भगवान् शंकर तथा प्रह्लाद और मनु की स्त्री शतरूपा, वे मनु तथा उनके पुत्र प्रियव्रत आदि एवम् प्राचीनबर्हि तथा ऋभु एवम् प्यारे ध्रुव ही जानते हैं ।

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

इक्ष्वाकुरैलमुचुकुन्दविदेहगाधि, रघ्वम्बरीषसगरा गयनाहुषाद्याः ।
मान्धात्रलर्कशतधन्वनुरन्तिदेवा, देवव्रतो बलिरमूर्त्तरयो दिलीपः ॥४४॥

पदच्छेद— इक्ष्वाकुः ऐल मुचुकुन्द विदेह गाधि, रघु अम्बरीष सगराः गय नाहुष आद्याः ।
मान्धातृ अलर्क शतधनु अनु रन्तिदेवाः, देवव्रतः बलिः अमूर्त्तरयः दिलीपः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इक्ष्वाकुः | १. | राजा इक्ष्वाकु | मान्धातृ | ८. | मान्धाता |
| ऐल | २. | ऐल | अलर्क | ९. | अलर्क |
| मुचुकुन्द | ३. | मुचुकुन्द | शतधनु | १०. | शतधन्वा |
| विदेह, गाधि | ४. | जनक, गाधि | अनु, रन्तिदेवाः । | ११. | अनु, रन्तिदेव |
| रघु, अम्बरीष | ५. | रघु, अम्बरीष | देवव्रतः | १२. | भीष्म |
| सगराः | ६. | सगर | बलिः | १३. | बलि |
| गय, नाहुष | ७. | गय, ययाति | अमूर्त्तरयः | १४. | अमूर्त्तरय (तथा) |
| आद्याः । | १६. | इत्यादि (राजा लोग भी) | दिलीपः ॥ | १५. | दिलीप |

श्लोकार्थ—राजा इक्ष्वाकु, ऐल, मुचुकुन्द, जनक, गाधि, रघु, अम्बरीष, सगर, गय, ययाति, मान्धाता, अलर्क, शतधन्वा, अनु, रन्तिदेव, भीष्म, बलि, अमूर्त्तरय तथा दिलीप इत्यादि राजा लोग भी भगवान् की माया को जानते हैं ।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सौभर्युतङ्कशिबिदेवलपिप्पलाद, सारस्वतोद्धवपराशरभूरिषेणाः ।
येऽन्ये विभीषणहनूमदुपेन्द्रदत्त-पार्थार्ष्टिषेणविदुरश्रुतदेववर्याः ।।४५।।

पदच्छेद— सौभरि उतङ्क शिबि देवल पिप्पलाद, सारस्वत उद्धव पराशर भूरिषेणाः ।
ये अन्ये विभीषण हनूमत् उपेन्द्रदत्त, पार्थ आर्ष्टिषेण विदुर श्रुतदेव वर्याः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सौभरि | १. | सौभरि | ये, अन्ये | १५. | जो, दूसरे |
| उतङ्क | २. | उतङ्क | विभीषण | ९. | विभीषण |
| शिबि, देवल | ३. | शिबि, देवल | हनूमत् | १०. | हनुमत् |
| पिप्पलाद, | ४. | पिप्पलाद | उपेन्द्रदत्त, | ११. | शुकदेव मुनि |
| सारस्वत | ५. | सारस्वत | पार्थ | १२ | अर्जुन |
| उद्धव | ६. | उद्धव | आर्ष्टिषेण | १३. | आर्ष्टिषेण |
| पराशर | ७. | पराशर | विदुर, श्रुतदेव | १४. | विदुर, श्रुतदेव इत्यादि |
| भूरिषेणाः । | ८. | भूरिषेण | वर्याः ।। | १६. | श्रेष्ठ महात्मा हैं (वे भगवान् की माया को जानते हैं) |

श्लोकार्थ—सौभरि, उतङ्क, शिबि, देवल, पिप्पलाद, सारस्वत, उद्धव, पराशर, भूरिषेण, विभीषण, हनुमत्, शुकदेवमुनि, अर्जुन, आर्ष्टिषेण, विदुर, श्रुतदेव इत्यादि जो दूसरे श्रेष्ठ महात्मा हैं, वे भगवान् की माया को जानते हैं ।

# षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ते वै विदन्त्यतितरन्ति च देवमायां, स्त्रीशूद्रहूणशबरा अपि पापजीवाः ।
यद्यद्भुतक्रमपरायणशीलशिक्षा—स्तिर्यग्जना अपि किमु श्रुतधारणा ये ।।४६।।

पदच्छेद—
ते वै विदन्ति अतितरन्ति च देव मायाम्, स्त्री शूद्र हूण शबराः अपि पाप जीवाः ।
यदि अद्भुत क्रम परायण शील शिक्षाः, तिर्यक् जनाः अपि किमु श्रुत धारणाः ये ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ते, वै | १०. | वे, भी | यदि | ६. | यदि |
| विदन्ति | १२. | जानते हैं | अद्भुतक्रम | ७. | भगवान् के |
| अतितरन्ति | १४. | पार कर लेते हैं | परायण, शील | ८. | भक्तों के समान, स्वभाव वाले |
| च | १३. | और (उसे) | शिक्षाः, | ९. | बुद्धि वाले हैं (तो) |
| देव मायाम्, | ११. | भगवान् की माया को | तिर्यक् | ४. | पशु-पक्षी इत्यादि |
| स्त्री, शूद्र, हूण | १. | स्त्री, शूद्र, हूण | जनाः, अपि | ५. | जीव, भी |
| शबराः, अपि | २. | कोल-भील, तथा | किमु | १७. | उनका तो कहना ही क्या है |
| पाप जीवाः । | ३. | पाप योनि वाले | श्रुत, धारणाः | १६. | वेद के, ज्ञान से युक्त (हैं) |
| | | | ये ।। | १५ | (फिर) जो |

श्लोकार्थ—स्त्री, शूद्र, हूण, कोल-भील तथा पाप योनि वाले पशु-पक्षी इत्यादि जीव भी यदि भगवान् के भक्तों के समान स्वभाव वाले और बुद्धि वाले हैं तो वे भी भगवान् की माया को जानते हैं और उसे पार कर लेते हैं । फिर जो वेद के ज्ञान से युक्त हैं, उनका तो कहना ही क्या है ।

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

शश्वत् प्रशान्तमभयं प्रतिबोधमात्रं, शुद्धं समं सदसतः परमात्मतत्त्वम् ।
शब्दो न यत्र पुरुकारकवान् क्रियार्थो, माया परैत्यभिमुखे च विलज्जमाना ।।४७।।

पदच्छेद—
शश्वत् प्रशान्तम् अभयम् प्रतिबोध मात्रम्, शुद्धम् समम् सत् असतः परम् आत्म तत्त्वम् ।
शब्दः न यत्र पुरु कारकवान् क्रियार्थः, माया परैति अभिमुखे च विलज्जमाना ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शश्वत् | २. | सनातन | शब्दः | ११. | शब्द की (तथा) |
| प्रशान्तम् | ३. | अत्यन्त शान्त | न | १४. | (गति) नहीं है |
| अभयम् | ४. | अभय | यत्र | १०. | जहाँ पर |
| प्रतिबोध | ६. | ज्ञान रूप | पुरु, कारकवान् | १२. | अनेक, साधनों वाले |
| मात्रम्, | ५. | केवल | क्रियार्थः | १३. | यज्ञ फल की |
| शुद्धम्, | ७. | माया से रहित | माया, परैति | १८. | माया, दूर हो जाती है |
| समम् | ८. | सदा एक रस (और) | अभिमुखे | १६. | सामने |
| सत्, असतः, परम् | ९. | सत्, असत् से परे है | च | १५. | तथा (उनके) |
| आत्म तत्त्वम् ।। | १. | परमात्मा का, स्वरूप | विलज्जमाना।। | १७. | लजाती हुई |

श्लोकार्थ—परमात्मा का स्वरूप सनातन, अत्यन्त शान्त, अभय, केवल ज्ञानरूप, माया से रहित, सदा एक रस और सत्-असत् से परे है। जहाँ पर शब्द की तथा अक साधनों से किये जाने वाले यज्ञ फल की गति नहीं है तथा उनके सामने लजाती हुई माया उनसे दूर भाग जाती है।

## अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

तद् वै पदं भगवतः परमस्य पुंसो, ब्रह्मेति यद् विदुरजस्रसुखं विशोकम् ।
सध्र्यङ् नियम्य यतयो यमकर्तहेतिं, जह्युः स्वराडिव निपानखनित्रमिन्द्रः ।।४८।।

पदच्छेद— तद् वै पदम् भगवतः परमस्य पुंसः, ब्रह्म इति यद् विदुः अजस्र सुखम् विशोकम् ।
सध्र्यङ् नियम्य यतयः यमकर्त हेतिम्, जह्युः स्वराड् इव निपान खनित्रम् इन्द्रः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद्, वै | ३. | वह, ही | सध्र्यङ्, नियम्य | १५. | आत्मा में, स्थित रहकर |
| पदम् | ४. | परमपद है | यतयः | १४. | (उसी प्रकार) योगी जन |
| भगवतः | २. | भगवान् का | यमकर्त | १६. | भेद दूर करने वाले |
| परमस्य, पुंसः, | १. | परम, पुरुष | हेतिम्, | १७. | साधनों की |
| ब्रह्म, इति | ८. | ब्रह्म, इस नाम से | जह्युः | १८. | अपेक्षा नहीं करते हैं |
| यद् | ५. | जिसे (ज्ञानी जन) | स्वराड् | ११. | स्वयं (वर्षा) स्वरूप |
| विदुः | ९. | जानते हैं | इव | १०. | जैसे |
| अजस्र, सुखम् | ७. | अनन्त, आनन्द | निपान, खनित्रम् | १३. | कुआँ खोदने वाले, साधनों की |
| विशोकम् । | ६. | शोक रहित | इन्द्रः ।। | १२. | इन्द्र (वर्षा करने के लिये) |

श्लोकार्थ—परम पुरुष भगवान् का वही परम पद है, जिसे ज्ञानी जन शोक रहित, अनन्त आनन्द, और ब्रह्म इस नाम से जानते हैं। जसे स्वयं वर्षा स्वरूप इन्द्र वर्षा करने के लिये कुआँ आदि खोदनेवाले साधनों की अपेक्षा नहीं करते हैं, उसी प्रकार योगी जन आत्मा में स्थित रहकर भेद दूर करने वाले साधनों की अपेक्षा नहीं करते हैं।

# एकोनपञ्चाशः श्लोकः

स श्रेयसामपि विभुर्भगवान् यतोऽस्य, भावस्वभावविहितस्य सतः प्रसिद्धिः ।
देहे स्वधातुविगमेऽनुविशीर्यमाणे, व्योमेव तत्र पुरुषो न विशीर्यतेऽजः ॥४९॥

पदच्छेद— सः श्रेयसाम् अपि विभुः भगवान् यतः अस्य, भाव स्वभाव विहितस्य सतः प्रसिद्धिः ।
देहे स्वधातु विगमे अनुविशीर्यमाणे, व्योमा इव तत्र पुरुषः न विशीर्यंते अजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे | देहे | १३. | शरीर |
| श्रेयसाम् | ४. | कर्मों के फल में | स्वधातु | ११. | शरीर से पञ्चभूतों के |
| अपि | ३. | समस्त | विगमे | १२. | अलग हो जाने पर |
| विभुः | ५. | व्याप्त हैं | अनुविशीर्यमाणे, | १४. | नष्ट हो जाता है (किन्तु) |
| भगवान् | २. | भगवान् | व्योमा | १८. | आकाश की |
| यतः | ६. | क्योंकि | इव | १९. | भाँति |
| अस्य, | ९. | मनुष्य के | तत्र | १५. | उसमें रहने वाला |
| भाव, स्वभाव | ७. | अपने, स्वभाव से | पुरुषः | १७. | पुरुष |
| विहितस्य | ८. | किये गये | न, विशीर्यंते | २०. | नहीं, नष्ट होता है |
| सतः, प्रसिद्धिः । | १०. | शुभ कर्मों की, प्रेरणा ( उन्हीं से मिलती है) | अजः ॥ | १६. | अजन्मा |

श्लोकार्थ—वे भगवान् समस्त कर्मों के फल में व्याप्त हैं, क्योंकि अपने स्वभाव से किये गये मनुष्य के शुभ कर्मों को प्रेरणा उन्हीं से मिलती है। शरीर से पञ्चभूतों के अलग हो जाने पर शरीर नष्ट हो जाता है, किन्तु उसमें रहने वाला अजन्मा पुरुष आकाश की भाँति नष्ट नहीं होता है।

# पञ्चाशः श्लोकः

सोऽयं तेऽभिहितस्तात भगवान् विश्वभावनः ।
समासेन हरेर्नान्यदन्यस्मात् सदसच्च यत् ॥ ५० ॥

पदच्छेद—

सः अयम् ते अभिहितः तात, भगवान् विश्व भावनः ।
समासेन हरेः न अन्यत्, अन्यस्मात् सत् असत् चयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | उसी | समासेन | ८. | थोड़े में |
| अयम् | ५. | इस | हरेः | १३. | परमात्मा से |
| ते | ७. | तुमसे | न | १५. | नहीं है (और वह) |
| अभिहितः | ९. | वर्णन किया है | अन्यत् | १४. | भिन्न |
| तात | १. | बेटा नारद ! (मैंने) | अन्यस्मात् | १६. | सबसे (भिन्न है) |
| भगवान् | ६. | परमात्मा का | सत्, असत् | १०. | भाव और अभाव रूप |
| विश्व | २. | (संकल्प से) जगत् की | च | १२. | भी |
| भावनः । | ३. | सृष्टि करने वाले | यत् ॥ | ११. | कुछ |

श्लोकार्थ—बेटा नारद ! मैंने संकल्प से जगत् की सृष्टि करने वाले उसी इस परमात्मा का तुमसे थोड़े में वर्णन किया है। भाव और अभाव रूप कुछ भी परमात्मा से भिन्न नहीं है और वह सबसे भिन्न है।

# एकपञ्चाशः श्लोकः

इदं भागवतं नाम यन्मे भगवतोदितम् ।
संग्रहोऽयं विभूतीनां त्वमेतद् विपुलीकुरु ॥ ५१ ॥

पदच्छेद—

इदम् भागवतम् नाम, यत् मे भगवता उदितम् ।
संग्रहः अयम् विभूतीनाम्, त्वम् एतद् विपुली कुरु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इदम् | १. | यह | संग्रहः | १०. | संक्षेप से वर्णन है |
| भागवतम् | २. | भागवत | अयम् | ८. | इसमें |
| नाम | ३. | नाम का पुराण है | विभूतीनाम् | ९. | (भगवान् के) अवतारों का |
| यत् | ४. | जो | त्वम् | ११. | तुम |
| मे | ५. | मुझे | एतद् | १२. | इसका |
| भगवता | ६. | भगवान् ने | विपुली | १३. | विस्तार |
| उदितम् । | ७. | कहा था | कुरु ॥ | १४. | करो |

श्लोकार्थ—यह भागवत नाम का पुराण है, जो मुझे भगवान् ने कहा था। इसमें भगवान् के अवतारों का संक्षेप से वर्णन है। तुम उसका विस्तार करो।

# द्विपञ्चाशः श्लोकः

यथा हरौ भगवति नृणां भक्तिर्भविष्यति ।
सर्वात्मन्यखिलाधारे इति संकल्प्य वर्णय ॥५२॥

पदच्छेद—

यथा हरौ भगवति, नृणाम् भक्तिः भविष्यति ।
सर्व आत्मनि अखिल आधारे, इति संकल्प्य वर्णय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जिस प्रकार | सर्व, आत्मनि | ४. | सर्व स्वरूप |
| हरौ | ६. | श्री हरि में | अखिल | २. | सबके |
| भगवति | ५. | भगवान् | आधारे | ३. | आधार |
| नृणाम् | ७. | मनुष्यों की | इति | १०. | ऐसा |
| भक्तिः | ८. | प्रेमा भक्ति | संकल्प्य | ११. | निश्चय करके |
| भविष्यति । | ९. | बढ़े | वर्णय ॥ | १२. | (इसका) वर्णन करो |

श्लोकार्थ—जिस प्रकार सबके आधार, सर्वस्वरूप भगवान् श्री हरि में मनुष्यों की प्रेमा भक्ति बढ़े, ऐसा निश्चय करके इसका वर्णन करो।

# त्रिपञ्चाशः श्लोकः

मायां वर्णयतोऽमुष्य ईश्वरस्यानुमोदतः ।
शृण्वतः श्रद्धया नित्यं माययाऽऽत्मा न मुह्यति ।।५३।।

पदच्छेद—

मायाम् वर्णयतः अमुष्य, ईश्वरस्य अनुमोदतः ।
शृण्वतः श्रद्धया नित्यम्, मायया आत्मा न मुह्यति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मायाम् | ३. | लीला का | श्रद्धया | ७. | श्रद्धापूर्वक |
| वर्णयतः | ४. | वर्णन करने वाले | नित्यम् | ६. | नित्य |
| अमुष्य | १. | उस | मायया | १०. | माया से |
| ईश्वरस्य | २. | परमात्मा की | आत्मा | ९. | आत्मा |
| अनुमोदतः । | ५. | समर्थन करने वाले (और) | न | ११. | नहीं |
| शृण्वतः | ८. | सुनने वाले लोगों की | मुह्यति ।। | १२. | मोहित होती है |

श्लोकार्थ—उस परमात्मा की लीला का वर्णन करने वाले, समर्थन करने वाले और नित्य श्रद्धापूर्वक सुनने वाले लोगों की आत्मा माया से मोहित नहीं होती है ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
ब्रह्मनारदसंवादे सप्तमः अध्यायः ।। ७ ।।

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीयः स्कन्धः

अथ अष्टमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

राजोवाच—

ब्रह्मणा चोदितो ब्रह्मन् गुणाख्यानेऽगुणस्य च ।
यस्मै यस्मै यथा प्राह नारदो देवदर्शनः ॥१॥

पदच्छेद— ब्रह्मणा चोदितः ब्रह्मन्, गुण आख्याने अगुणस्य च ।
यस्मै यस्मै यथा प्राह, नारदः देव दर्शनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मणा | ६. | ब्रह्मा जी से | यस्मै | १२. | जिस |
| चोदितः | ७. | आदेश पाकर | यस्मै | १३. | जिसको |
| ब्रह्मन् | १. | हे मुनिवर ! | यथा | १४. | उपदेश दिया था (उसे कहें) |
| गुण | १०. | लीलाओं के | प्राह | ४. | देवर्षि |
| आख्याने | ११. | वर्णन का | नारदः | ५. | नारद ने |
| अगुणस्य | ८. | निर्गुण | देव | २. | भगवान् का |
| च । | ९. | और (सगुण परमात्मा की) | दर्शनः ॥ | ३. | दर्शन कराने वाले |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! भगवान् का दर्शन कराने वाले देवर्षि नारद ने ब्रह्मा जी से आदेश पाकर निर्गुण और सगुण परमात्मा की लीलाओं के वर्णन का जिस-जिसको उपदेश दिया था, उसे कहें ।

## द्वितीयः श्लोकः

एतद् वेदितुमिच्छामि तत्त्वं वेदविदां वर ।
हरेरद्भुतवीर्यस्य कथा लोकसुमङ्गलाः ॥२॥

पदच्छेद— एतद् वेदितुम् इच्छामि, तत्त्वम् वेद विदाम् वर ।
हरेः अद्भुत वीर्यस्य, कथाः लोक सुमङ्गलाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | ४. | इस | हरेः | १०. | परमात्मा की |
| वेदितुम् | ६. | जानना | अद्भुत | ८. | (क्योंकि) अलौकिक |
| इच्छामि | ७. | चाहता हूँ | वीर्यस्य | ९. | शक्तिशाली |
| तत्त्वम् | ५. | बात को | कथाः | ११. | लीलायें |
| वेद | १. | वेद | लोक | १२. | लोक |
| विदाम् | २. | ज्ञानियों में | सुमङ्गलाः ॥ | १३. | कल्याणकारी होती हैं |
| वर । | ३. | श्रेष्ठ हे मुनिवर ! (मैं) | | | |

श्लोकार्थ—वेद ज्ञानियों में श्रेष्ठ हे मुनिवर ! मैं इस बात को जानना चाहता हूँ, क्योंकि अलौकिक शक्तिशाली परमात्मा की लीलायें लोक कल्याणकारी होती हैं ।

# तृतीयः श्लोकः

कथयस्व महाभाग यथाहमखिलात्मनि ।
कृष्णे निवेश्य निःसङ्गं मनस्त्यक्ष्ये कलेवरम् ॥३॥

पदच्छेद—

कथयस्व महाभाग, यथा अहम् अखिल आत्मनि ।
कृष्णे निवेश्य निःसङ्गम्, मनः त्यक्ष्ये कलेवरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| कथयस्व | २. (वह उपाय) बतावें | कृष्णे | ७. भगवान् श्री कृष्ण में |
| महाभाग | १. हे भाग्यशाली शुकदेव जी आप | निवेश्य | १०. लगाकर |
| यथा | ३. जिससे | निःसङ्गम् | ८. आसक्ति से रहित |
| अहम् | ४. मैं | मनः | ९. मन को |
| अखिल | ५. सर्व | त्यक्ष्ये | १२. छोड़ सकूं |
| आत्मनि । | ६. आत्मा | कलेवरम् ॥ | ११. शरीर को |

श्लोकार्थ—हे भाग्यशाली शुकदेव जी ! आप वह उपाय बतावें जिससे मैं सर्व-आत्मा भगवान् श्री कृष्ण में आसक्ति से रहित मन को लगाकर शरीर को छोड़ सकूं ।

# चतुर्थः श्लोकः

शृण्वतः श्रद्धया नित्यं गृणतश्च स्वचेष्टितम् ।
कालेन नातिदीर्घेण भगवान् विशते हृदि ॥४॥

पदच्छेद—

शृण्वतः श्रद्धया नित्यम्, गृणतः च स्व चेष्टितम् ।
कालेन नातिदीर्घेण, भगवान् विशते हृदि ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| शृण्वतः | ४. श्रवण | कालेन | ८. समय में |
| श्रद्धया | २. भक्ति भाव से | नातिदीर्घेण | ७. बहुत थोड़े ही |
| नित्यम् | ३. सदा | भगवान् | ९. भगवान् श्री हरि |
| गृणतः | ६ कीर्तन करते रहने पर | विशते | ११. प्रवेश कर जाते हैं |
| च | ५. और | हृदि ॥ | १०. हृदय में |
| स्व चेष्टितम् । | १. भगवान् की लीलाओं का | | |

श्लोकार्थ—भगवान् की लीलाओं का भक्ति भाव से सदा श्रवण और कीर्तन करते रहने पर बहुत थोड़े ही समय में भगवान् श्री हरि हृदय में प्रवेश कर जाते हैं ।

## पञ्चमः श्लोकः

प्रविष्टः कर्णरन्ध्रेन स्वानां भावसरोरुहम् ।
धुनोति शमलं कृष्णः, सलिलस्य यथा शरत् ।।५।।

पदच्छेद—

प्रविष्टः कर्ण रन्ध्रेन, स्वानाम् भाव सरोरुहम् ।
धुनोति शमलम् कृष्णः, सलिलस्य यथा शरत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रविष्टः | ९. | प्रवेश करके (उनके) | धुनोति | ११. | दूर कर देते हैं |
| कर्ण, रन्ध्रेन | ५. | कान के, रास्ते से | शमलम् | १०. | मन के मल को |
| स्वानाम् | ६. | अपने भक्तों के | कृष्णः | ४. | भगवान् श्री कृष्ण |
| भाव | ७. | हृदय | सलिलस्य | ३. | जलकी (मलिनता को मिटा देती है उसी प्रकार) |
| सरोरुहम् । | ८. | कमल में | यथा | १. | जैसे |
| | | | शरत् । | २. | शरद ऋतु |

श्लोकार्थ—जैसे शरद् ऋतु जल की मलिनता को मिटा देती है उसी प्रकार भगवान् श्री कृष्ण कान के रास्ते से अपने भक्तों के हृदय-कमल में प्रवेश करके उनके मनके मल को दूर कर देते हैं।

## षष्ठः श्लोकः

धौतात्मा पुरुषः कृष्णपादमूलं न मुञ्चति ।
मुक्तसर्वपरिक्लेशः पान्थः स्वशरणं यथा ।।६।।

पदच्छेद—

धौत आत्मा पुरुषः कृष्ण, पाद मूलम् न मुञ्चति ।
मुक्त सर्व परिक्लेशः, पान्थः स्व शरणम् यथा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धौत | ८. | निर्मल हो जाने पर | मुक्त | ५. | रहित हुआ |
| आत्मा | ७. | अन्तः करण | सर्व | ३. | सभी |
| पुरुषः | ९. | मनुष्य | परिक्लेशः | ४. | प्रकार के कष्टों से |
| कृष्ण | १०. | भगवान् श्रीकृष्ण के | पान्थः | २. | पथिक |
| पाद, मूलम् | ११. | चरणों की सन्निधि को | स्व, शरणम् | ६. | अपने, घर को (फिर नहीं छोड़ता है उसी प्रकार) |
| न, मुञ्चति । | १२. | नहीं, छोड़ता है | यथा | १. | जैसे |

श्लोकार्थ—जैसे पथिक सभी प्रकार के कष्टों से रहित हुआ अपने घर को फिर नहीं छोड़ता है उसी प्रकार अन्तः करण निर्मल हो जाने पर मनुष्य भगवान् श्री कृष्ण के चरणों की सन्निधि को नहीं छोड़ता है।

## सप्तमः श्लोकः

यदधातुमतो ब्रह्मन् देहारम्भोऽस्य धातुभिः ।
यदृच्छया हेतुना वा भवन्तो जानते यथा ।।७।।

पदच्छेद—

यद् अधातुमतः ब्रह्मन्, देह आरम्भः अस्य धातुभिः ।
यदृच्छया हेतुना वा, भवन्तः जानते यथा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ५. | जो | यदृच्छया | ७. | अपने आप |
| अधातुमतः | २. | पञ्चमहाभूतों से रहित | हेतुना | ९. | किसी कारण से (होती है इसे) |
| ब्रह्मन् | १. | हे मुनिवर ! | वा | ८. | अथवा |
| देह, आरम्भः | ४. | शरीर की, रचना | भवन्तः | १०. | आप |
| अस्य | ३. | इस जीवात्मा के | जानते | १२. | जानते हैं |
| धातुभिः । | ६. | पञ्चमहाभूतों से (होती है वह) | यथा ।। | ११. | भली भांति |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! पञ्चमहाभूतों से रहित इस जीवात्मा के शरीर की रचना जो पञ्चमहाभूतों से होती है, वह अपने आप अथवा किसी कारण से होती है ? इसे आप भलीभाँति जानते हैं ।

## अष्टमः श्लोकः

आसीद् यदुदरात् पद्मं लोकसंस्थानलक्षणम् ।
यावानयं वै पुरुष इयत्तावयवैः पृथक् ।
तावानसाविति प्रोक्तः संस्थावयववानिव ।।८।।

पदच्छेद—

आसीत् यद् उदरात् पद्मम्, लोक संस्थान लक्षणम् ।
यावान् अयम् वै पुरुषः, इयत्ता अवयवैः पृथक् ।
तावान् असौ इति प्रोक्तः, संस्था अवयववान् इव ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आसीत् | ४. | उत्पन्न हुआ था (वही) | वै | १२. | भी |
| यद् | २. | जो | पुरुषः, इयत्ता | ८. | मनुष्य, अपने सीमित |
| उदरात् | १. | भगवान् की नाभि से | अवयवैः, पृथक् । | ९. | अङ्गों से, अलग |
| पद्मम् | ३. | कमल | तावान् | १६. | उसी प्रकार का है |
| लोक, संस्थान | ५. | ब्रह्माण्ड की, रचना का | असौ | ११. | वह (विराट् पुरुष) |
| लक्षणम् । | ६. | कारण (था) | इति, प्रोक्तः | १७. | ऐसा, बतलाया,गया है |
| यावान् | १०. | जिस आकार का है | संस्था | १३. | रूप और |
| अयम् | ७. | यह | अवयववान् | १४. | अङ्गों वाले के |
| | | | इव ।। | १५. | समान |

श्लोकार्थ—भगवान् की नाभि से जो कमल उत्पन्न हुआ था, वही ब्रह्माण्ड की रचना का कारण था। यह मनुष्य अपने सीमित अङ्गों से अलग जिस आकार का है, वह विराट् पुरुष भी रूप और अङ्गों वाले के समान उसी प्रकार का है, ऐसा बतलाया गया है ।

## नवमः श्लोकः

अजः सृजति भूतानि भूतात्मा यदनुग्रहात् ।
ददृशे येन तद्रूपं नाभिपद्मसमुद्भवः ।।९।।

पदच्छेद—

अजः सृजति भूतानि, भूत आत्मा यद् अनुग्रहात् ।
ददृशे येन तद् रूपम्, नाभि पद्म समुद्भवः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अजः | ३. | ब्रह्मा जी | ददृशे | १४. | देखने में समर्थ होते हैं |
| सृजति | १० | सृष्टि करते हैं | येन | ११. | जिसकी कृपा से (वे) |
| भूतानि | ९. | पञ्चभूतों की | तद् | १२. | उस (सृष्टि) के |
| भूत | १. | सभी शरीरों में | रूपम् | १३. | रूप को |
| आत्मा | २. | आत्मारूप से विद्यमान | नाभि | ४. | नाभि |
| यद् | ७. | जिस परमात्मा की | पद्म | ५. | कमल से |
| अनुग्रहात् । | ८. | कृपा से | समुद्भवः ।। | ६. | उत्पन्न होकर |

श्लोकार्थ - सभी शरीरों में आत्मारूप से विद्यमान ब्रह्माजी नाभि कमल से उत्पन्न होकर जिस परमात्मा की कृपा से पञ्चभूतों की सृष्टि करते हैं तथा जिसकी कृपा से वे उस सृष्टि के रूप को देखने में समर्थ होते हैं ।

## दशमः श्लोकः

स चापि यत्र पुरुषो विश्वस्थित्युद्भवाप्ययः ।
मुक्त्वाऽऽत्ममायां मायेशः शेते सर्वगुहाशयः ।।१०।।

पदच्छेद—

सः च अपि यत्र पुरुषः, विश्व स्थिति उद्भव अप्ययः ।
मुक्त्वा आत्म मायाम् मायेशः, शेते सर्व गुहा आशयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १०. | वे परमात्मा | मुक्त्वा | १३. | छोड़कर |
| च | १७. | उसे बतावें | आत्म | ११. | अपनी |
| अपि | १५. | भी | मायाम् | १२. | माया को |
| यत्र | १४. | जहाँ | मायेशः, | ८. | माया पति |
| पुरुषः, | ९. | परम पुरुष | शेते | १६. | शयन करते हैं |
| विश्व | ४. | जगत् के | सर्व | १. | सब की |
| स्थिति | ५. | पालन | गुहा | २. | बुद्धि में |
| उद्भव | ६. | जन्म (और) | आशयः ।। | ३. | रहने वाले |
| अप्ययः । | ७. | संहार के कारण | | | |

श्लोकार्थ—सब की बुद्धि में रहने वाले; जगत् के पालन, जन्म और संहार के कारण; मायापति, परम पुरुष वे परमात्मा अपनी माया को छोड़कर जहाँ भी शयन करते हैं, उसे बतावें ।

# एकादशः श्लोकः

पुरुषावयवैर्लोकाः सपालाः पूर्वकल्पिताः ।
लोकैरमुष्यावयवाः सपालैरिति शुश्रुम ॥११॥

पदच्छेद—

पुरुष अवयवैः लोकाः, सपालाः पूर्व कल्पिताः ।
लोकैः अमुष्य अवयवाः, सपालैः इति शुश्रुम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरुष | १. | विराट् पुरुष के | लोकैः | ८. | लोकों से |
| अवयवैः | २. | अङ्गों से | अमुष्य | ९. | उस पुरुष के |
| लोकाः | ४. | भुवनों की | अवयवाः | १०. | अङ्गों की (कल्पना की गई है) |
| सपालाः | ३. | लोकपालों (और) | सपालैः | ७. | लोकपालों (और) |
| पूर्व | ५. | पहले | इति | ११. | ऐसा (क्यों) |
| कल्पिताः । | ६. | रचना हुई (तथा) | शुश्रुम ॥ | १२. | बतलाया गया है |

श्लोकार्थ— विराट् पुरुष के अङ्गों से लोकपालों और भुवनों की पहले रचना हुई तथा लोकपालों और लोकों से उस पुरुष के अङ्गों की कल्पना की गई है, ऐसा क्यों बतलाया गया है ?

# द्वादशः श्लोकः

यावान् कल्पो विकल्पो वा यथा कालोऽनुमीयते ।
भूतभव्यभवच्छब्द आयुर्मानं च यत् सतः ॥१२॥

पदच्छेद—

यावान् कल्पः विकल्पः वा, यथा कालः अनुमीयते ।
भूत भव्य भवत् शब्दः, आयुः मानम् च यत् सतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावान् | ३. | जितने हैं | भव्य | ६. | भविष्य (और) |
| कल्पः | १. | महाकल्प (और) | भवत् | ७. | वर्तमान |
| विकल्पः | २. | उपकल्प | शब्दः, | ८. | नाम से |
| वा, | ४. | तथा | आयुः | १४. | आयु का |
| यथा | १०. | जितने | मानम् | १६. | मान (निर्धारित है उसे बतावें) |
| कालः | ९. | समय के | च | १२. | एवम् |
| अनुमीयते । | ११. | विभाग (हैं) | यत् | १५. | जो |
| भूत | ५. | भूत | सतः ॥ | १३. | स्थूल शरीर की |

श्लोकार्थ—महाकल्प और उपकल्प जितने हैं तथा भूत, भविष्य और वर्तमान नाम से समय के जितने विभाग हैं एवम् स्थूल शरीर की आयु का जो मान निर्धारित है, उसे बतावें ।

## त्रयोदशः श्लोकः

कालस्यानुगतिर्या तु लक्ष्यतेऽण्वी बृहत्यपि ।
यावत्यः कर्मगतयो यादृशीर्द्विजसत्तम ॥१३॥

पदच्छेद—

कालस्य अनुगतिः या तु, लक्ष्यते अण्वी बृहती अपि ।
यावत्यः कर्म गतयः, यादृशीः द्विज सत्तम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालस्य | ३. | समय का | अपि । | ५. | और |
| अनुगतिः | ८. | भेद | यावत्यः | १२ | जितनी |
| या | ७. | जो | कर्म | १३. | कर्म की |
| तु | १०. | तथा | गतयः | १४. | अवस्थायें हैं (उन्हें बतावें) |
| लक्ष्यते | ९. | देखा जाता है | यादृशीः | ११. | जैसी (एवम्) |
| अण्वी | ४. | छोटा से छोटा | द्विज | १. | हे ब्राह्मण ! |
| बृहती | ६. | बड़ा से बड़ा | सत्तम ॥ | २. | श्रेष्ठ शुकदेव जी ! |

श्लोकार्थ—हे ब्राह्मण श्रेष्ठ शुकदेव जी ! समय का छोटा से छोटा और बड़ा से बड़ा जो भेद देखा जाता है तथा जैसी एवम् जितनी कर्म की अवस्थायें हैं, उन्हें बतावें ।

## चतुर्दशः श्लोकः

यस्मिन् कर्मसमावायो यथा येनोपगृह्यते ।
गुणानां गुणिनां चैव, परिणाममभीप्सताम् ॥१४॥

पदच्छेद—

यस्मिन् कर्म समावायः, यथा येन उपगृह्यते ।
गुणानाम् गुणिनाम् च एव, परिणामम् अभीप्सताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्मिन् | १. | जिसमें | गुणानाम् | ७. | सत्त्वादि गुण (और) |
| कर्म | २. | कर्मों का | गुणिनाम् | ८. | जीवों में से |
| समावायः, | ३. | सम्बन्ध है | च | ४. | तथा |
| यथा | १०. | जिस रूप में (उसे) | एव, | १२. | उसे बतावें |
| येन | ९. | जो | परिणामम् | ५. | परिवर्तन के |
| उपगृह्यते । | ११. | ग्रहण करता है | अभीप्सताम् ॥ | ६. | इच्छुक |

श्लोकार्थ—जिसमें कर्मों का सम्बन्ध है तथा परिवर्तन के इच्छुक सत्त्वादि गुण और जीवों में से जो जिस रूप में उसे ग्रहण करता है, उसे बतावें ।

# पञ्चदशः श्लोकः

भूपातालककुब्व्योमग्रहनक्षत्रभूभृताम् ।
सरित्समुद्रद्वीपानां सम्भवश्चैतदोकसाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

भू पाताल ककुप् व्योमन्, ग्रह नक्षत्र भूभृताम् ।
सरित् समुद्र द्वीपानाम्, सम्भवः च एतद् ओकसाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भू | १. | पृथ्वी | सरित् | ८. | नदी |
| पाताल | २. | पाताल लोक | समुद्र | ९. | सागर |
| ककुप् | ३. | दिशा | द्वीपानाम् | १०. | द्वीप |
| व्योमन् | ४. | आकाश | सम्भवः | १४. | उत्पत्ति (कैसे होती है) |
| ग्रह | ५. | सूर्यादि ग्रह | च | ११. | और |
| नक्षत्र | ६. | तारा मण्डल | एतद् | १२ | इनमें |
| भूभृताम् । | ७. | पर्वत | ओकसाम् ॥ | १३. | रहने वाले (जीवों) की |

श्लोकार्थ—पृथ्वी, पाताल लोक, दिशा, आकाश, सूर्यादि ग्रह, तारा मण्डल, पर्वत, नदी, सागर, द्वीप और इनमें रहने वाले जीवों की उत्पत्ति कैसे होती है ?

# षोडशः श्लोकः

प्रमाणमण्डकोशस्य बाह्याभ्यन्तरभेदतः ।
महतां चानुचरितं वर्णाश्रमविनिश्चयः ॥१६॥

पदच्छेद—

प्रमाणम् अण्डकोशस्य, बाह्य आभ्यन्तर भेदतः ।
महताम् च अनुचरितम्, वर्ण आश्रम विनिश्चयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रमाणम् | ५. | परिमाण | महताम् | ६. | महान् पुरुषों की |
| अण्डकोशस्य | १. | ब्रह्माण्ड के | च | ८. | तथा |
| बाह्य | २. | बाहरी (और) | अनुचरितम् | ७. | कथा |
| आभ्यन्तर | ३. | भीतरी | वर्ण आश्रम | ९. | चारों वर्ण (और) आश्रमों का |
| भेदतः । | ४. | दोनों भागों का | विनिश्चयः ॥ | १०. | निर्णय (बतावें) |

श्लोकार्थ—ब्रह्माण्ड के बाहरी और भीतरी दोनों भागों का परिमाण, महान् पुरुषों की कथा तथा चारों वर्ण और आश्रमों का निर्णय बतावें ।

ॐ श्रीगणेशाय नमः

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## द्वितीयः स्कन्धः

## अथ अष्टमः अध्यायः

### प्रथमः श्लोकः

राजोवाच—

ब्रह्मणा चोदितो ब्रह्मन् गुणाख्यानेऽगुणस्य च।
यस्मै यस्मै यथा प्राह नारदो देवदर्शनः ॥१॥

पदच्छेद— ब्रह्मणा चोदितः ब्रह्मन्, गुण आख्याने अगुणस्य च।
यस्मै यस्मै यथा प्राह, नारदः देव दर्शनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मणा | ६. | ब्रह्मा जी से | यस्मै | १२. | जिस |
| चोदितः | ७. | आदेश पाकर | यस्मै | १३. | जिसको |
| ब्रह्मन् | १. | हे मुनिवर ! | यथा | १४. | उपदेश दिया था (उसे कहें) |
| गुण | १०. | लीलाओं के | प्राह | ४. | देवर्षि |
| आख्याने | ११. | वर्णन का | नारदः | ५. | नारद ने |
| अगुणस्य | ८. | निर्गुण | देव | २. | भगवान् का |
| च। | ९. | और (सगुण परमात्मा की) | दर्शनः ॥ | ३. | दर्शन कराने वाले |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! भगवान् का दर्शन कराने वाले देवर्षि नारद ने ब्रह्मा जी से आदेश पाकर निर्गुण और सगुण परमात्मा की लीलाओं के वर्णन का जिस-जिसको उपदेश दिया था, उसे कहें।

### द्वितीयः श्लोकः

एतद् वेदितुमिच्छामि तत्त्वं वेदविदां वर।
हरेरद्भुतवीर्यस्य कथा लोकसुमङ्गलाः ॥२॥

पदच्छेद— एतद् वेदितुम् इच्छामि, तत्त्वम् वेद विदाम् वर।
हरेः अद्भुत वीर्यस्य, कथाः लोक सुमङ्गलाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | ४. | इस | हरेः | १०. | परमात्मा की |
| वेदितुम् | ६. | जानना | अद्भुत | ८. | (क्योंकि) अलौकिक |
| इच्छामि | ७. | चाहता हूँ | वीर्यस्य | ९. | शक्तिशाली |
| तत्त्वम् | ५. | बात को | कथाः | ११. | लीलायें |
| वेद | १. | वेद | लोक | १२. | लोक |
| विदाम् | २. | ज्ञानियों में | सुमङ्गलाः ॥ | १३. | कल्याणकारी होती हैं |
| वर। | ३. | श्रेष्ठ हे मुनिवर ! (मैं) | | | |

श्लोकार्थ—वेद ज्ञानियों में श्रेष्ठ हे मुनिवर ! मैं इस बात को जानना चाहता हूँ, क्योंकि अलौकिक शक्तिशाली परमात्मा की लीलायें लोक कल्याणकारी होती हैं।

# तृतीयः श्लोकः

कथयस्व महाभाग यथाहमखिलात्मनि ।
कृष्णे निवेश्य निःसङ्गं मनस्त्यक्ष्ये कलेवरम् ॥३॥

पदच्छेद—

कथयस्व महाभाग, यथा अहम् अखिल आत्मनि ।
कृष्णे निवेश्य निःसङ्गम्, मनः त्यक्ष्ये कलेवरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| कथयस्व | २. (वह उपाय) बतावें | कृष्णे | ७. भगवान् श्री कृष्ण में |
| महाभाग | १. हे भाग्यशाली शुकदेव जी आप | निवेश्य | १०. लगाकर |
| यथा | ३. जिससे | निःसङ्गम् | ८. आसक्ति से रहित |
| अहम् | ४. मैं | मनः | ९. मन को |
| अखिल | ५. सर्व | त्यक्ष्ये | १२. छोड़ सकूं |
| आत्मनि । | ६. आत्मा | कलेवरम् ॥ | ११. शरीर को |

श्लोकार्थ—हे भाग्यशाली शुकदेव जी ! आप वह उपाय बतावें जिससे मैं सर्व-आत्मा भगवान् श्री कृष्ण में आसक्ति से रहित मन को लगाकर शरीर को छोड़ सकूं ।

# चतुर्थः श्लोकः

शृण्वतः श्रद्धया नित्यं गृणतश्च स्वचेष्टितम् ।
कालेन नातिदीर्घेण भगवान् विशते हृदि ॥४॥

पदच्छेद—

शृण्वतः श्रद्धया नित्यम्, गृणतः च स्व चेष्टितम् ।
कालेन नातिदीर्घेण, भगवान् विशते हृदि ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| शृण्वतः | ४. श्रवण | कालेन | ८. समय में |
| श्रद्धया | २. भक्ति भाव से | नातिदीर्घेण | ७. बहुत थोड़े ही |
| नित्यम | ३. सदा | भगवान् | ९. भगवान् श्री हरि |
| गृणतः | ६ कीर्तन करते रहने पर | विशते | ११. प्रवेश कर जाते हैं |
| च | ५. और | हृदि ॥ | १०. हृदय में |
| स्व चेष्टितम् । | १. भगवान् की लीलाओं का | | |

श्लोकार्थ—भगवान् की लीलाओं का भक्ति भाव से सदा श्रवण और कीर्तन करते रहने पर बहुत थोड़े ही समय में भगवान् श्री हरि हृदय में प्रवेश कर जाते हैं ।

# पञ्चमः श्लोकः

प्रविष्टः कर्णरन्ध्रेन स्वानां भावसरोरुहम् ।
धुनोति शमलं कृष्णः, सलिलस्य यथा शरत् ॥५॥

पदच्छेद—

प्रविष्टः कर्ण रन्ध्रेन, स्वानाम् भाव सरोरुहम् ।
धुनोति शमलम् कृष्णः, सलिलस्य यथा शरत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रविष्टः | ९. | प्रवेश करके (उनके) | धुनोति | ११. | दूर कर देते हैं |
| कर्ण, रन्ध्रेन | ५. | कान के, रास्ते से | शमलम् | १०. | मन के मल को |
| स्वानाम् | ६. | अपने भक्तों के | कृष्णः | ४. | भगवान् श्री कृष्ण |
| भाव | ७. | हृदय | सलिलस्य | ३. | जलकी (मलिनता को मिटा देती है उसी प्रकार) |
| सरोरुहम् । | ८. | कमल में | यथा | १. | जैसे |
| | | | शरत् । | २. | शरद् ऋतु |

श्लोकार्थ—जैसे शरद् ऋतु जल की मलिनता को मिटा देती है उसी प्रकार भगवान् श्री कृष्ण कान के रास्ते से अपने भक्तों के हृदय-कमल में प्रवेश करके उनके मनके मल को दूर कर देते हैं।

# षष्ठः श्लोकः

धौतात्मा पुरुषः कृष्णपादमूलं न मुञ्चति ।
मुक्तसर्वपरिक्लेशः पान्थः स्वशरणं यथा ॥६॥

पदच्छेद—

धौत आत्मा पुरुषः कृष्ण, पाद मूलम् न मुञ्चति ।
मुक्त सर्व परिक्लेशः, पान्थः स्व शरणम् यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धौत | ८. | निर्मल हो जाने पर | मुक्त | ५. | रहित हुआ |
| आत्मा | ७. | अन्तः करण | सर्व | ३. | सभी |
| पुरुषः | ९. | मनुष्य | परिक्लेशः | ४. | प्रकार के कष्टों से |
| कृष्ण | १०. | भगवान् श्रीकृष्ण के | पान्थः | २. | पथिक |
| पाद, मूलम् | ११. | चरणों की सन्निधि को | स्व, शरणम् | ६. | अपने, घर को (फिर नहीं छोड़ता है उसी प्रकार) |
| न, मुञ्चति । | १२. | नहीं, छोड़ता है | यथा | १. | जैसे |

श्लोकार्थ— जैसे पथिक सभी प्रकार के कष्टों से रहित हुआ अपने घर को फिर नहीं छोड़ता है उसी प्रकार अन्तः करण निर्मल हो जाने पर मनुष्य भगवान् श्री कृष्ण के चरणों की सन्निधि को नहीं छोड़ता है।

# सप्तमः श्लोकः

यदधातुमतो ब्रह्मन् देहारम्भोऽस्य धातुभिः ।
यदृच्छया हेतुना वा भवन्तो जानते यथा ।।७।।

पदच्छेद—

यद् अधातुमतः ब्रह्मन्, देह आरम्भः अस्य धातुभिः ।
यदृच्छया हेतुना वा, भवन्तः जानते यथा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ५. | जो | यदृच्छया | ७. | अपने आप |
| अधातुमतः | २. | पञ्चमहाभूतों से रहित | हेतुना | ६. | किसी कारण से (होती है इसे) |
| ब्रह्मन् | १. | हे मुनिवर ! | वा | ८. | अथवा |
| देह, आरम्भः | ४. | शरीर की, रचना | भवन्तः | १०. | आप |
| अस्य | ३. | इस जीवात्मा के | जानते | १२. | जानते हैं |
| धातुभिः । | ६. | पञ्चमहाभूतों से (होती है वह) | यथा ।। | ११. | भली भांति |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! पञ्चमहाभूतों से रहित इस जीवात्मा के शरीर की रचना जो पञ्चमहाभूतों से होती है, वह अपने आप अथवा किसी कारण से होती है ? इसे आप भलीभाँति जानते हैं ।

# अष्टमः श्लोकः

आसीद् यदुदरात् पद्मं लोकसंस्थानलक्षणम् ।
यावानयं वै पुरुष इयत्तावयवैः पृथक् ।
तावानसाविति प्रोक्तः संस्थावयववानिव ।।८।।

पदच्छेद—

आसीत् यद् उदरात् पद्मम्, लोक संस्थान लक्षणम् ।
यावान् अयम् वै पुरुषः, इयत्ता अवयवैः पृथक् ।
तावान् असौ इति प्रोक्तः, संस्था अवयववान् इव ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आसीत् | ४. | उत्पन्न हुआ था (वही) | वै | १२. | भी |
| यद् | २. | जो | पुरुषः, इयत्ता | ८. | मनुष्य, अपने सीमित |
| उदरात् | १. | भगवान् की नाभि से | अवयवैः, पृथक् । | ९. | अङ्गों से, अलग |
| पद्मम् | ३. | कमल | तावान् | १६. | उसी प्रकार का है |
| लोक, संस्थान | ५. | ब्रह्माण्ड की, रचना का | असौ | ११. | वह (विराट् पुरुष) |
| लक्षणम् । | ६. | कारण (था) | इति, प्रोक्तः | १७. | ऐसा, बतलाया गया है |
| यावान् | १०. | जिस आकार का है | संस्था | १३. | रूप और |
| अयम् | ७. | यह | अवयववान् | १४. | अङ्गों वाले के |
| | | | इव ।। | १५. | समान |

श्लोकार्थ—भगवान् की नाभि से जो कमल उत्पन्न हुआ था, वही ब्रह्माण्ड की रचना का कारण था । यह मनुष्य अपने सीमित अङ्गों से अलग जिस आकार का है, वह विराट् पुरुष भी रूप और अङ्गों वाले के समान उसी प्रकार का है, ऐसा बतलाया गया है ।

## नवमः श्लोकः

अजः सृजति भूतानि भूतात्मा यदनुग्रहात् ।
ददृशे येन तद्रूपं नाभिपद्मसमुद्भवः ॥९॥

पदच्छेद—

अजः सृजति भूतानि, भूत आत्मा यद् अनुग्रहात् ।
ददृशे येन तद् रूपम्, नाभि पद्म समुद्भवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अजः | ३. | ब्रह्मा जी | ददृशे | १४. | देखने में समर्थ होते हैं |
| सृजति | १० | सृष्टि करते हैं | येन | ११. | जिसकी कृपा से (वे) |
| भूतानि | ९. | पञ्चभूतों की | तद् | १२. | उस (सृष्टि) के |
| भूत | १. | सभी शरीरों में | रूपम् | १३. | रूप को |
| आत्मा | २. | आत्मारूप से विद्यमान | नाभि | ४. | नाभि |
| यद् | ७. | जिस परमात्मा की | पद्म | ५. | कमल से |
| अनुग्रहात् । | ८. | कृपा से | समुद्भवः ॥ | ६. | उत्पन्न होकर |

श्लोकार्थ—सभी शरीरों में आत्मारूप से विद्यमान ब्रह्माजी नाभि कमल से उत्पन्न होकर जिस परमात्मा की कृपा से पञ्चभूतों की सृष्टि करते हैं तथा जिसकी कृपा से वे उस सृष्टि के रूप को देखने में समर्थ होते हैं ।

## दशमः श्लोकः

स चापि यत्र पुरुषो विश्वस्थित्युद्भवाप्ययः ।
मुक्त्वाऽऽत्ममायां मायेशः शेते सर्वगुहाशयः ॥१०॥

पदच्छेद—

सः च अपि यत्र पुरुषः, विश्व स्थिति उद्भव अप्ययः ।
मुक्त्वा आत्म मायाम् मायेशः, शेते सर्व गुहा आशयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १०. | वे परमात्मा | मुक्त्वा | १३. | छोड़कर |
| च | १७. | उसे बतावें | आत्म | ११. | अपनी |
| अपि | १५. | भी | मायाम् | १२. | माया को |
| यत्र | १४. | जहाँ | मायेशः, | ८. | माया पति |
| पुरुषः, | ९. | परम पुरुष | शेते | १६. | शयन करते हैं |
| विश्व | ४. | जगत् के | सर्व | १. | सब की |
| स्थिति | ५. | पालन | गुहा | २. | बुद्धि में |
| उद्भव | ६. | जन्म (और) | आशयः ॥ | ३. | रहने वाले |
| अप्ययः । | ७. | संहार के कारण | | | |

श्लोकार्थ—सब की बुद्धि में रहने वाले; जगत् के पालन, जन्म और संहार के कारण; मायापति, परम पुरुष वे परमात्मा अपनी माया को छोड़कर जहाँ भी शयन करते हैं, उसे बतावें ।

## एकादशः श्लोकः

पुरुषावयवैर्लोकाः सपालाः पूर्वकल्पिताः ।
लोकैरमुष्यावयवाः सपालैरिति शुश्रुम ।।११।।

पदच्छेद—

पुरुष अवयवैः लोकाः, सपालाः पूर्व कल्पिताः ।
लोकैः अमुष्य अवयवाः, सपालैः इति शुश्रुम ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरुष | १. | विराट् पुरुष के | लोकैः | ८. | लोकों से |
| अवयवैः | २. | अङ्गों से | अमुष्य | ९. | उस पुरुष के |
| लोकाः | ४. | भुवनों की | अवयवाः | १०. | अङ्गों की (कल्पना की गई है) |
| सपालाः | ३. | लोकपालों (और) | सपालैः | ७. | लोकपालों (और) |
| पूर्व | ५. | पहले | इति | ११. | ऐसा (क्यों) |
| कल्पिताः । | ६. | रचना हुई (तथा) | शुश्रुम ।। | १२. | बतलाया गया है |

श्लोकार्थ— विराट् पुरुष के अङ्गों से लोकपालों और भुवनों की पहले रचना हुई तथा लोकपालों और लोकों से उस पुरुष के अङ्गों की कल्पना की गई है, ऐसा क्यों बतलाया गया है ?

## द्वादशः श्लोकः

यावान् कल्पो विकल्पो वा यथा कालोऽनुमीयते ।
भूतभव्यभवच्छब्द आयुर्मानं च यत् सतः ।।१२।।

पदच्छेद—

यावान् कल्पः विकल्पः वा, यथा कालः अनुमीयते ।
भूत भव्य भवत् शब्दः, आयुः मानम् च यत् सतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावान् | ३. | जितने हैं | भव्य | ६. | भविष्य (और) |
| कल्पः | १. | महाकल्प (और) | भवत् | ७. | वर्तमान |
| विकल्पः | २. | उपकल्प | शब्दः, | ८. | नाम से |
| वा, | ४. | तथा | आयुः | १४. | आयु का |
| यथा | १०. | जितने | मानम् | १६. | मान (निर्धारित है उसे बतावें) |
| कालः | ९. | समय के | च | १२. | एवम् |
| अनुमीयते । | ११. | विभाग (हैं) | यत् | १५. | जो |
| भूत | ५. | भूत | सतः ।। | १३. | स्थूल शरीर की |

श्लोकार्थ—महाकल्प और उपकल्प जितने हैं तथा भूत, भविष्य और वर्तमान नाम से समय के जितने विभाग हैं एवम् स्थूल शरीर की आयु का जो मान निर्धारित है, उसे बतावें ।

## त्रयोदशः श्लोकः

कालस्यानुगतिर्या तु लक्ष्यतेऽण्वी बृहत्यपि ।
यावत्यः कर्मगतयो यादृशीर्द्विजसत्तम ॥१३॥

पदच्छेद—

कालस्य अनुगतिः या तु, लक्ष्यते अण्वी बृहती अपि ।
यावत्यः कर्म गतयः, यादृशीः द्विज सत्तम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालस्य | ३. | समय का | अपि । | ५. | और |
| अनुगतिः | ८. | भेद | यावत्यः | १२ | जितनी |
| या | ७. | जो | कर्म | १३. | कर्म की |
| तु | १०. | तथा | गतयः | १४. | अवस्थायें हैं (उन्हें बतावें) |
| लक्ष्यते | ६. | देखा जाता है | यादृशीः | ११. | जैसी (एवम्) |
| अण्वी | ४. | छोटा से छोटा | द्विज | १. | हे ब्राह्मण ! |
| बृहती | ६. | बड़ा से बड़ा | सत्तम ॥ | २. | श्रेष्ठ शुकदेव जी ! |

श्लोकार्थ—हे ब्राह्मण श्रेष्ठ शुकदेव जी ! समय का छोटा से छोटा और बड़ा से बड़ा जो भेद देखा जाता है तथा जैसी एवम् जितनी कर्म की अवस्थायें हैं, उन्हें बतावें ।

## चतुर्दशः श्लोकः

यस्मिन् कर्मसमावायो यथा येनोपगृह्यते ।
गुणानां गुणिनां चैव, परिणाममभीप्सताम् ॥१४॥

पदच्छेद—

यस्मिन् कर्म समावायः, यथा येन उपगृह्यते ।
गुणानाम् गुणिनाम् च एव, परिणामम् अभीप्सताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्मिन् | १. | जिसमें | गुणानाम् | ७. | सत्त्वादि गुण (और) |
| कर्म | २. | कर्मों का | गुणिनाम् | ८. | जीवों में से |
| समावायः, | ३. | सम्बन्ध है | च | ४. | तथा |
| यथा | १०. | जिस रूप में (उसे) | एव, | १२. | उसे बतावें |
| येन | ६. | जो | परिणामम् | ५. | परिवर्तन के |
| उपगृह्यते । | ११. | ग्रहण करता है | अभीप्सताम् ॥ | ६. | इच्छुक |

श्लोकार्थ—जिसमें कर्मों का सम्बन्ध है तथा परिवर्तन के इच्छुक सत्त्वादि गुण और जीवों में से जो जिस रूप में उसे ग्रहण करता है, उसे बतावें ।

## पञ्चदशः श्लोकः

भूपातालककुब्व्योमग्रहनक्षत्रभूभृताम् ।
सरित्समुद्रद्वीपानां सम्भवश्चैतदोकसाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

भू पाताल ककुप् व्योमन्, ग्रह नक्षत्र भूभृताम् ।
सरित् समुद्र द्वीपानाम्, सम्भवः च एतद् ओकसाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भू | १. | पृथ्वी | सरित् | ८. | नदी |
| पाताल | २. | पाताल लोक | समुद्र | ९. | सागर |
| ककुप् | ३. | दिशा | द्वीपानाम् | १०. | द्वीप |
| व्योमन् | ४. | आकाश | सम्भवः | १४. | उत्पत्ति (कैसे होती है) |
| ग्रह | ५. | सूर्यादि ग्रह | च | ११. | और |
| नक्षत्र | ६. | तारा मण्डल | एतद् | १२ | इनमें |
| भूभृताम् । | ७. | पर्वत | ओकसाम् ॥ | १३. | रहने वाले (जीवों) की |

श्लोकार्थ—पृथ्वी, पाताल लोक, दिशा, आकाश, सूर्यादि ग्रह, तारा मण्डल, पर्वत, नदी, सागर, द्वीप और इनमें रहने वाले जीवों की उत्पत्ति कैसे होती है ?

## षोडशः श्लोकः

प्रमाणमण्डकोशस्य बाह्याभ्यन्तरभेदतः ।
महतां चानुचरितं वर्णाश्रमविनिश्चयः ॥१६॥

पदच्छेद—

प्रमाणम् अण्डकोशस्य, बाह्य आभ्यन्तर भेदतः ।
महताम् च अनुचरितम्, वर्ण आश्रम विनिश्चयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रमाणम् | ५. | परिमाण | महताम् | ६. | महान् पुरुषों की |
| अण्डकोशस्य | १. | ब्रह्माण्ड के | च | ८. | तथा |
| बाह्य | २. | बाहरी (और) | अनुचरितम् | ७. | कथा |
| आभ्यन्तर | ३. | भीतरी | वर्ण आश्रम | ९. | चारों वर्ण (और) आश्रमों का |
| भेदतः । | ४. | दोनों भागों का | विनिश्चयः ॥ | १०. | निर्णय (बतावें) |

श्लोकार्थ—ब्रह्माण्ड के बाहरी और भीतरी दोनों भागों का परिमाण, महान् पुरुषों की कथा तथा चारों वर्ण और आश्रमों का निर्णय बतावें ।

## सप्तदशः श्लोकः

युगानि युगमानं च धर्मो यश्च युगे युगे ।
अवतारानुचरितं यदाश्चर्यतमं हरेः ॥१७॥

पदच्छेद—

युगानि युगमानम् च, धर्मः यः च; युगे युगे ।
अवतार अनुचरितम्, यद् आश्चर्यतमम् हरेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| युगानि | १. चारों युग | युगे-युगे । | ४. प्रत्येक युग में |
| युगमानम् | २. युगों का प्रमाण | अवतार | ९. अवतारों की |
| च, | ३. और | अनुचरितम्, | १२. कथायें हैं (उन्हें बतावें) |
| धर्मः | ६. धर्म (है) | यद् | १०. जो |
| यः | ५. जो | आश्चर्यतमम् | ११. अत्यन्त अद्भुत |
| च | ७. तथा | हरेः ॥ | ८. भगवान् श्री हरि के |

श्लोकार्थ—चारों युग, युगों का प्रमाण और प्रत्येक युग में जो धर्म है तथा भगवान् श्री हरि के अवतारों की जो अत्यन्त अद्भुत कथायें हैं, उन्हें बतावें ।

## अष्टादशः श्लोकः

नृणां साधारणो धर्मः सविशेषश्च यादृशः ।
श्रेणीनां राजर्षीणां च धर्मः कृच्छ्रेषु जीवताम् ॥१८॥

पदच्छेद—

नृणाम् साधारणः धर्मः, सविशेषः च यादृशः ।
श्रेणीनाम् राजर्षीणाम् च, धर्मः कृच्छ्रेषु जीवताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| नृणाम् | १. मनुष्यों के | श्रेणीनाम् | ८. अनेक व्यवसाय वाले |
| साधारणः | २. सामान्य | राजर्षीणाम् | ९. राजर्षि (तथा) |
| धर्मः | ६. धर्म हैं (उन्हें) | च | ७. और |
| सविशेषः | ४. विशेष | धर्मः | १२. धर्म को (बतावें) |
| च | ३. और | कृच्छ्रेषु | १०. कष्ट में |
| यादृशः । | ५. जिस प्रकार के | जीवताम् ॥ | ११. जीने वाले मनुष्यों के |

श्लोकार्थ—मनुष्यों के सामान्य और विशेष जिस प्रकार के धर्म हैं, उन्हें और अनेक व्यवसाय वाले राजर्षि तथा कष्ट में जीने वाले मनुष्यों के धर्म को बतावें ।

# एकोनविंशः श्लोकः

तत्त्वानां परिसंख्यानं लक्षणं हेतुलक्षणम् ।
पुरुषाराधनविधिर्योगस्याध्यात्मिकस्य च ॥१६॥

पदच्छेद—

तत्त्वानाम् परिसंख्यानम्, लक्षणम् हेतु लक्षणम् ।
पुरुष आराधन विधिः, योगस्य आध्यात्मिकस्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्त्वानाम् | १. | सृष्टि के तत्त्वों की | पुरुष | ६. | परम पुरुष की |
| परिसंख्यानम् | २. | संख्या (उनके) | आराधन | ७. | पूजा का |
| लक्षणम् | ५. | लक्षण | विधिः | ८. | विधान |
| हेतु | ३. | कारण (और) | योगस्य | ११. | विद्या का (उपदेश करें) |
| लक्षणम् । | ४. | स्वरूप का | आध्यात्मिकस्य | १०. | उपनिषदों में वर्णित अध्यात्म |
| | | | च ॥ | ६. | और |

श्लोकार्थ—सृष्टि के तत्त्वों की संख्या, उनके कारण और स्वरूप का लक्षण, परम पुरुष की पूजा का विधान और उपनिषदों में वर्णित अध्यात्म विद्या का उपदेश करें।

# विंशः श्लोकः

योगेश्वरैश्वर्यगतिर्लिङ्गभङ्गस्तु योगिनाम् ।
वेदोपवेदधर्माणामितिहासपुराणयोः ॥२०॥

पदच्छेद—

योगेश्वर ऐश्वर्य गतिः, लिङ्ग भङ्गः तु योगिनाम् ।
वेद उपवेद धर्माणाम्, इतिहास पुराणयोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| योगेश्वर | १. | योगिराजों की | योगिनाम् । | ५. | योगियों के |
| ऐश्वर्य | २. | सिद्धि का | वेद | ८. | चारों वेद |
| गतिः | ३. | मार्ग | उपवेद | ६. | (आयुर्वेद इत्यादि) उपवेद |
| लिङ्गः | ६ | सूक्ष्म शरीर का | धर्माणाम् | १०. | धर्म शास्त्र |
| भङ्ग | ७. | विनाश | इतिहास | ११. | इतिहास (और) |
| तु | ४. | तथा | पुराणयोः ॥ | १२. | पुराण का (तात्पर्य बतावें) |

श्लोकार्थ—योगिराजों की सिद्धि का मार्ग तथा योगियों के सूक्ष्म शरीर का विनाश, चारों वेद, आयुर्वेद इत्यादि उपवेद, धर्मशास्त्र, इतिहास और पुराण का तात्पर्य बतावें।

# एकविंशः श्लोकः

सम्प्लवः सर्वभूतानां विक्रमः प्रतिसंक्रमः ।
इष्टापूर्तस्य काम्यानां त्रिवर्गस्य च यो विधिः ॥२१॥

पदच्छेद—

संप्लवः सर्व भूतानाम् , विक्रमः प्रतिसंक्रमः ।
इष्टा पूर्तस्य काम्यानाम्, त्रिवर्गस्य च यः विधिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| संप्लवः | ५. | विनाश | पूर्तस्य | ७. | कूप निर्माणादि स्मृति कर्म |
| सर्व | १. | सभी | काम्यानाम् | ८. | काम्य कर्म |
| भूतानाम् | २. | प्राणियों का | त्रिवर्गस्य | १०. | धर्म, अर्थ काम तीनों पुरुषार्थों के |
| विक्रमः | ४. | पालन | च | ६. | और |
| प्रतिसंक्रमः । | ३. | जन्म | यः | ११. | जो |
| इष्टा | ६. | यज्ञ आदि वैदिक कर्म | विधिः ॥ | १२. | विधान हैं (उसे बतावें) |

श्लोकार्थ— सभी प्राणियों का जन्म, पालन, विनाश, यज्ञ आदि वैदिक कर्म, कूप निर्माणादि स्मृति-कर्म, काम्यकर्म और धर्म, अर्थ, काम तीनों पुरुषार्थों के जो विधान हैं, उसे बतावें ।

# द्वाविंशः श्लोकः

यश्चानुशायिनां सर्गः पाखण्डस्य च सम्भवः ।
आत्मनो बन्धमोक्षौ च व्यवस्थानं स्वरूपतः ॥२२॥

पदच्छेद —

यः च अनुशायिनाम् सर्गः, पाखण्डस्य च सम्भवः ।
आत्मनः बन्ध मोक्षौ च, व्यवस्थानम् स्वरूपतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | २. | जो | आत्मनः | ८. | जीवात्मा का |
| च | ४. | और | बन्ध | ९. | जन्म-मरण |
| अनुशायिनाम् | १. | प्रकृति में लीन रहने वाले की | मोक्षौ | ११. | मुक्ति (एवं) |
| सर्गः | ३. | सृष्टि है (उसे) | च | १०. | और |
| पाखण्डस्य | ५. | पाखण्ड की | व्यवस्थानम् | १४. | स्थिति को (बतावें) |
| च | ७. | तथा | स्व | १२. | अपने |
| सम्भवः । | ६. | उत्पत्ति | रूपतः ॥ | १३. | रूप में आत्मा की |

श्लोकार्थ—प्रकृति में लीन रहने वाले जीवों की जो सृष्टि है, उसे और पाखण्ड की उत्पत्ति तथा जीवात्मा का जन्म-मरण और मुक्ति एवम् अपने रूप में आत्मा की स्थति को बतावें ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

यथाऽऽत्मतन्त्रो भगवान् विक्रीडत्यात्ममायया ।
विसृज्य वा यथा मायामुदास्ते साक्षिवद् विभुः ॥२३॥

पदच्छेद—

यथा आत्म तन्त्रः भगवान्, विक्रीडति आत्म मायया ।
विसृज्य वा यथा मायाम्, उदास्ते साक्षिवत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | ५. | जिस प्रकार | विसृज्य | ९. | छोड़कर |
| आत्म तन्त्रः | १. | परम स्वतन्त्र | वा | ७. | तथा |
| भगवान् | २. | परमात्मा | यथा | १२. | जिस प्रकार |
| विक्रीडति | ६. | खेल करते हैं | मायाम् | ८. | अपनी माया को |
| आत्म | ३. | अपनी | उदास्ते | १३. | उदासीन रहते हैं (उसे बतावें) |
| मायया । | ४. | माया से | साक्षिवत् | ११. | साक्षी के समान |
| | | | विभुः ॥ | १०. | वे भगवान् श्री हरि |

श्लोकार्थ—परम स्वतन्त्र परमात्मा अपनी माया से जिस प्रकार खेल करते हैं तथा अपनी माया को छोड़कर वे भगवान् श्री हरि साक्षी के समान जिस प्रकार उदासीन रहते हैं, उसे बतावें ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

सर्वमेतच्च भगवन् पृच्छते मेऽनुपूर्वशः ।
तत्त्वतोऽर्हस्युदाहर्तुं प्रपन्नाय महामुने ॥२४॥

पदच्छेद—

सर्वम् एतत् च भगवन्, पृच्छते मे अनुपूर्वशः ।
तत्त्वतः अर्हसि उदाहर्तुम्, प्रपन्नाय महामुने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वम् | ७. | सब-कुछ | अनुपूर्वशः । | ८. | क्रम से |
| एतत् | ६. | यह | तत्त्वतः | १०. | वास्तविक रूप से |
| च | ९. | और | अर्हसि | १२. | समर्थ हैं |
| भगवन् | २. | हे भगवन् शुकदेव जी ! आप | उदाहर्तुम् | ११. | बताने में |
| पृच्छते | ३. | प्रश्न करते हुये | प्रपन्नाय | ५. | शरणागत को |
| मे | ४. | मुझ | महामुने ॥ | १. | महामुनि |

श्लोकार्थ—महामुनि हे भगवन् शुकदेव जी ! आप प्रश्न करते हुये मुझ शरणागत को यह सब कुछ क्रम से और वास्तविक रूप से बताने में समर्थ हैं ।

# पञ्चविंश: श्लोकः

अत्र प्रमाणं हि भवान् परमेष्ठी यथाऽऽत्मभूः ।
परं चेहानुतिष्ठन्ति पूर्वेषां पूर्वजैः कृतम् ॥ २५ ॥

पदच्छेद—

अत्र प्रमाणम् हि भवान्, परमेष्ठी यथा आत्म भूः ।
परे च इह अनुतिष्ठन्ति, पूर्वेषाम् पूर्वजैः कृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अत्र | १. | इस विषय में | परे | १०. | दूसरे लोग |
| प्रमाणम् | ७ | प्रमाण (हैं) | च | ८. | तथा |
| हि | ३. | ही | इह | ९. | संसार में |
| भवान् | २. | आप | अनुतिष्ठन्ति | १४. | अनुसरण करते हैं |
| परमेष्ठी | ५. | ब्रह्मा के | पूर्वेषाम् | ११. | पूर्वजों के भी |
| यथा | ६. | समान | पूर्वजैः | १२. | पूर्वजों की परंपरा से |
| आत्म भूः । | ४. | स्वयंभू | कृतम् ॥ | १३. | किये हुए कार्य का |

श्लोकार्थ—इस विषय में आप ही स्वयंभू ब्रह्मा के समान प्रमाण हैं तथा संसार में दूसरे लोग पूर्वजों के भी पूर्वजों की परम्परा से किये हुये कार्य का अनुसरण करते हैं ।

# षड्विंश: श्लोकः

न मेऽसवः परायन्ति ब्रह्मन्ननशनादमी ।
पिबतोऽच्युतपीयूषमन्यत्र कुपिताद् द्विजात् ॥ २६ ॥

पदच्छेद—

न मे असवः परायन्ति, ब्रह्मन् अनशनात् अमी ।
पिबतः अच्युत पीयूषम्, अन्यत्र कुपितात् द्विजात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १२. | नहीं | पिबतः | ४. | पान करने वाले |
| मे | ५. | मेरे | अच्युत | २. | श्रीकृष्ण लीला रूप |
| असवः | ७. | प्राण | पीयूषम् | ३. | अमृत का |
| परायन्ति | १३. | चले जायेंगे | अन्यत्र | १०. | सिवाय |
| ब्रह्मन् | १. | ब्रह्मज्ञानी हे शुकदेव जी ! | कुपितात् | ८. | क्रुद्ध |
| अनशनात् | ११. | न खाने से | द्विजात् ॥ | ९. | ब्राह्मण के (शाप के) |
| अमी । | ६. | ये | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मज्ञानी हे शुकदेव जी ! श्री कृष्ण लीलारूप अमृत का पान करने वाले मेरे ये प्राण क्रुद्ध ब्राह्मण के शाप के सिवाय न खाने से नहीं चले जायेंगे ।

## सप्तविंशः श्लोकः

सूत उवाच—

स उपामन्त्रितो राज्ञा कथायामिति सत्पतेः ।
ब्रह्मरातो भृशं प्रीतो विष्णुरातेन संसदि ॥२७॥

पदच्छेद—

सः उपामन्त्रितः राज्ञा, कथायाम् इति सत्पतेः ।
ब्रह्मरातः भृशम् प्रीतः, विष्णुरातेन संसदि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ८. | वे | ब्रह्मरातः | ९. | शुकदेव जी |
| उपामन्त्रितः | ७. | प्रार्थना किये जाने पर | भृशम् | १०. | परम |
| राज्ञा | १. | राजा | प्रीतः | ११. | प्रसन्न हुये |
| कथायाम् | ५. | कथा सुनाने के लिये | विष्णुरातेन | २. | परीक्षित् के द्वारा |
| इति | ६. | इस प्रकार | संसदि ॥ | ३. | सभा में |
| सत्पतेः । | ४. | भगवान् श्रीकृष्ण की | | | |

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् के द्वारा सभा में भगवान् श्रीकृष्ण की कथा सुनाने के लिये इस प्रकार प्रार्थना किये जाने पर वे शुकदेव जी परम प्रसन्न हुये ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

प्राह भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
ब्रह्मणे भगवत्प्रोक्तं ब्रह्मकल्प उपागते ॥२८॥

पदच्छेद—

प्राह भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
ब्रह्मणे भगवत् प्रोक्तम्, ब्रह्म कल्पे उपागते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्राह | १२. | (श्री शुकदेव जी ने) कहा था | ब्रह्मणे | ५. | ब्रह्मा जी से |
| भागवतम् | ९. | श्री मद्भागवत | भगवत् | ४. | भगवान् के द्वारा |
| नाम | १०. | नाम के | प्रोक्तम् | ६. | कहे गये |
| पुराणम् | ११. | पुराण को | ब्रह्म | १. | ब्रह्म |
| ब्रह्म | ७. | वेद | कल्पे | २. | कल्प के |
| सम्मितम् । | ८. | तुल्य | उपागते ॥ | ३. | प्रारम्भ में |

श्लोकार्थ—तदनन्तर हे महर्षियों ! ब्रह्मकल्प के प्रारम्भ में भगवान् के द्वारा ब्रह्माजी से कहे गये वेद तुल्य श्रीमद्भागवत नाम के पुराण को श्री शुकदेव जी ने कहा था ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

यद् यत् परीक्षिदृषभः पाण्डूनामनुपृच्छति ।
आनुपूर्व्येण तत्सर्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥२९॥

पदच्छेद—

यत् यत् परीक्षित् ऋषभः, पाण्डूनाम् अनुपृच्छति ।
आनुपूर्व्येण तत् सर्वम्, आख्यातुम् उपचक्रमे ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यद् | ४. जो | आनुपूर्व्येण | ७. (शुकदेव मुनि ने) क्रम से |
| यत् | ५. जो प्रश्न | तत् | ८. उन |
| परीक्षित् | ३. राजा परीक्षित् ने | सर्वम् | ९. सबका |
| ऋषभः | २. श्रेष्ठ | आख्यातुम् | १०. उत्तर देना |
| पाण्डूनाम् | १. पाण्डुवंशियों में | उपचक्रमे ॥ | ११. प्रारम्भ किया |
| अनुपृच्छति । | ६. पूछे थे | | |

श्लोकार्थ—पाण्डुवंशियो में श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ने जो जो प्रश्न पूछे थे, शुकदेव मुनि ने क्रम से उन सबका उत्तर देना प्रारम्भ किया ।

इति श्रीमद्‌भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वितीयस्कन्धेप्रश्न विधिर्नाम आष्टमः अध्यायः ॥८॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## द्वितीयः स्कन्धः

### अथ नवमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

आत्ममायामृते राजन् परस्यानुभवात्मनः ।
न घटेतार्थसम्बन्धः स्वप्नद्रष्टुरिवाञ्जसा ॥१॥

पदच्छेद—

आत्म मायाम् ऋते राजन्, परस्य अनुभव आत्मनः ।
न घटेत अर्थ सम्बन्धः, स्वप्न द्रष्टुः इव अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्म | १०. | अपनी | न, घटेत | १४. | नहीं, हो सकता है |
| मायाम् | ११. | माया के | अर्थ | ८. | विषयों के साथ |
| ऋते | १२. | सिवाय (किसी दूसरे) | सम्बन्धः | ९. | सम्बन्ध |
| राजन् | १. | हे परीक्षित् ! | स्वप्न | ५. | स्वप्न |
| परस्य | ४. | आत्मा का | द्रष्टुः | ६. | देखने वाले के |
| अनुभव | २. | अनुभव में | इव | ७. | समान |
| आत्मनः । | ३. | आने वाली | अञ्जसा ॥ | १३. | सरल उपाय से |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! अनुभव में आने वाली आत्मा का स्वप्न देखने वाले के समान विषयों के साथ सम्बन्ध अपनी माया के सिवाय किसी दूसरे सरल उपाय से नहीं हो सकता है ।

## द्वितीयः श्लोकः

बहुरूप इवाभाति मायया बहुरूपया ।
रममाणो गुणेष्वस्या ममाहमिति मन्यते ॥२॥

पदच्छेद—

बहुरूपः इव आभाति, मायया बहु रूपया ।
रममाणः गुणेषु अस्याः, मम अहम् इति मन्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बहुरूपः | ४. | (यह आत्मा) बहुरूपिये के | रममाणः | ९. | विहार करता हुआ (यह) |
| इव | ५. | समान | गुणेषु | ८. | गुणों में |
| आभाति | ६. | मालूम पड़ता है | अस्याः | ७. | माया के |
| मायया | ३. | माया के कारण | मम | १०. | मेरी (और) |
| बहु | १. | बहुत | अहम्, इति | ११. | मैं, इस भाव को |
| रूपया । | २. | रूपों वाली | मन्यते ॥ | १२. | मानने लगता है |

श्लोकार्थ—बहुत रूपों वाली माया के कारण यह आत्मा बहुरूपिये के समान मालूम पड़ता है। माया के गुणों में विहार करता हुआ यह 'मेरी और मैं' इस भाव को मानने लगता है ।

## तृतीयः श्लोकः

र्यांह वाव महिम्नि स्वे परस्मिन् कालमाययोः ।
रमेत गतसम्मोहस्त्यक्त्वोदास्ते तदोभयम् ॥३॥

पदच्छेद—

र्यांह वाव महिम्नि स्वे, परस्मिन् काल माययोः ।
रमेत गत सम्मोहः, त्यक्त्वा उदास्ते तदा उभयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| र्यांह | २. | जब | रमेत | १०. | स्थित हो जाता है |
| वाव | १. | किन्तु | गत | ४. | रहित हुआ (आत्मा) |
| महिम्नि | ९. | स्वरूप में | सम्मोहः | ३. | अज्ञान से |
| स्वे | ८. | अपने | त्यक्त्वा | १३. | छोड़कर |
| परस्मिन् | ७. | परे | उदास्ते | १४. | उदासीन (गुणातीत हो जाता है) |
| काल | ५. | काल (और) | तदा | ११. | तब |
| माययोः । | ६. | माया से | उभयम् ॥ | १२. | मैं और मेरेपन को |

श्लोकार्थ—किन्तु जब अज्ञान से रहित हुआ आत्मा काल और माया से परे अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है, तब मैं और मेरेपन को छोड़कर उदासीन गुणातीत हो जाता है ।

## चतुर्थः श्लोकः

आत्मतत्त्वविशुद्ध्यर्थं यदाह भगवानृतम् ।
ब्रह्मणे दर्शयन् रूपमव्यलीकव्रतादृतः ॥४॥

पदच्छेद—

आत्म तत्त्व विशुद्ध्यर्थम्, यद् आह भगवान् ऋतम् ।
ब्रह्मणे दर्शयन् रूपम्, अव्यलीक व्रतात् ऋतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्म तत्त्व | ८. | आत्म स्वरूप के | ब्रह्मणे | ३. | ब्रह्मा जो को |
| विशुद्ध्यर्थम् | ९. | शोधन के लिये | दर्शयन् | ६. | दर्शन कराते हुये |
| यद् | १०. | जिस | रूपम् | ५. | स्वरूप का |
| आह | १२. | कहा था (उसे कहूँगा) | अव्यलीक | १. | निष्कपट |
| भगवान् | ७. | भगवान् ने | व्रतात् | २. | तपस्या के कारण |
| ऋतम् । | ११. | परम सत्य को | ऋतः ॥ | ४. | आत्मा के |

श्लोकार्थ—निष्कपट तपस्या के कारण ब्रह्मा जी को आत्मा के स्वरूप का दर्शन कराते हुये भगवान् ने आत्म स्वरूप के शोधन के लिये जिस परम सत्य को कहा था, उसे कहूँगा ।

## पञ्चमः श्लोकः

स आदिदेवो जगतां परो गुरुः, स्वधिष्ण्यमास्थाय सिसृक्षयैक्षत ।
तां नाध्यगच्छद् दृशमत्र सम्मतां, प्रपञ्चनिर्माणविधिर्यया भवेत् ॥ ५॥

पदच्छेद—

सः आदिदेवः जगताम् परः गुरुः, स्व धिष्ण्यम् आस्थाय सिसृक्षया ऐक्षत ।
ताम् न अध्यगच्छद् दृशम् अत्र सम्मताम्, प्रपञ्च निर्माण विधिः यया भवेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः, आदिदेवः | ३. | उन, ब्रह्मा जी ने | न, अध्यगच्छत् | १२. | नहीं, मिल पायी |
| जगताम् | १. | तीनों लोकों के | दृशम् | ११. | ज्ञान दृष्टि |
| परः, गुरुः | २. | परम, गुरु | अत्र | ८. | इस विषय में |
| स्व, धिष्ण्यम् | ४. | अपनी, जन्मभूमि कमल पर | सम्मताम् | १०. | उचित |
| आस्थाय | ५. | बैठकर | प्रपञ्च | १४. | संसार की |
| सिसृक्षया | ६. | सृष्टि करने की इच्छा से | निर्माण, विधिः | १५. | रचना का, विधान |
| ऐक्षत । | ७ | विचार किया (किन्तु) | यया | १३. | जिससे |
| ताम् | ९. | (उनको) वह | भवेत् ॥ | १६. | संभव हो |

श्लोकार्थ – तीनों लोकों के परम गुरु उन ब्रह्मा जी ने अपनी जन्मभूमि कमल पर बैठकर सृष्टि करने की इच्छा से विचार किया, किन्तु इस विषय में उनको वह उचित ज्ञान दृष्टि नहीं मिल पायी, जिससे संसार की रचना का विधान संभव हो ।

## षष्ठः श्लोकः

स चिन्तयन् द्व्यक्षरमेकदाम्भ--स्युपाशृणोद् द्विर्गदितं वचो विभुः ।
स्पर्शेषु यत्षोडशमेकविंशं, निष्किञ्चनानां नृप यद् धनं विदुः ॥६॥

पदच्छेद—

सः चिन्तयन् द्वि अक्षरम् एकदा अम्भसि, उपाशृणोत् द्विः गदितम् वचः विभुः ।
स्पर्शेषु यत् षोडशम् एकविंशम्, निष्किञ्चनानाम् नृप यद् धनम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ३. | उन | स्पर्शेषु | ६. | व्यञ्जनों में |
| चिन्तयन् | २. | चिन्तन करते हुये | यत् | ७. | जो |
| द्वि, अक्षरम् | १०. | दो अक्षरों वाली (तथा) | षोडशम् | ८. | सोलहवां त' (और) |
| एकदा | ५. | एक दिन | एकविंशम् | ९. | इक्कीसवां अक्षर 'प'(है इन) |
| अम्भसि | १. | प्रलय के जल में | निष्किञ्चनानाम् | १६. | निर्धन तपस्वियों की |
| उपाशृणोत् | १३. | सुनी | नृप | १४. | हे परीक्षित् ! |
| द्विः, गदितम् | ११. | दो बार, कही जाती हुई | यद् | १५. | जो (तप) |
| वचः | १२. | वाणी | धनम् | १७ | सम्पति |
| विभुः । | ४. | ब्रह्मा जी ने | विदुः ॥ | १८. | बताया गया है |

श्लोकार्थ —प्रलय के जल में चिन्तन करते हुये उन ब्रह्माजी ने एक दिन व्यञ्जनों में जो सोलहवाँ 'त' और इक्कीसवां अक्षर 'प' है, इन दो अक्षरों वाली तथा दो बार कही जाती हुई तप-तप इस प्रकार की वाणी सुनी । हे परीक्षित् ! जो तप निर्धन तपस्वियों की सम्पत्ति बताया गया है ।

# सप्तमः श्लोकः

निशम्य तद्वक्तृदिदृक्षया दिशो, विलोक्य तत्रान्यदपश्यमानः ।
स्वधिष्ण्यमास्थाय विमृश्य तद्धितं, तपस्युपादिष्ट इवादधे मनः ॥ ७ ॥

पदच्छेद— निशम्य तद् वक्तृ दिदृक्षया दिशः, विलोक्य तत्र अन्यत् अपश्यमानः ।
स्व धिष्ण्यम् आस्थाय विमृश्य तद् हितम्, तपसि उपादिष्टः इव आदधे मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निशम्य | २. | सुनकर (उसके) | स्व, धिष्ण्यम् | १०. | अपनी, जन्म भूमि कमल पर |
| तद् | १. | (ब्रह्मा जी ने) उस वाणी को | आस्थाय | ११ | बैठकर |
| वक्तृ | ३. | वक्ता को | विमृश्य | १३. | विचार किया (तथा) |
| दिदृक्षया | ४. | देखने की इच्छा से | तद्, हितम् | १२. | उसमें, हित का |
| दिशः | ५. | चारों दिशाओं में | तपसि | १७. | तपस्या में |
| विलोक्य | ६. | देखा (किन्तु) | उपादिष्टः | १४. | आदेश पाये हुये की |
| तत्र | ७. | वहाँ | इव | १५. | भाँति (अपने) |
| अन्यत् | ८. | दूसरे को | आदधे | १८. | लगा दिया |
| अपश्यमानः । | ९. | न देखते हुये (उन्होंने) | मनः ॥ | १६. | मन को |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने उस वाणी को सुनकर उसके वक्ता को देखने की इच्छा से चारों दिशाओं में देखा । किन्तु वहाँ दूसरे को न देखते हुए उन्होंने अपनी जन्मभूमि कमल पर बैठकर उसमें हित का विचार किया तथा आदेश पाये हुये की भाँति अपने मन को तपस्या में लगा दिया ।

# अष्टमः श्लोकः

दिव्यं सहस्राब्दममोघदर्शनो, जितानिलात्मा विजितोभयेन्द्रियः ।
अतप्यत स्माखिललोकतापनं तपस्तपीयांस्तपतां समाहितः ॥ ८ ॥

पदच्छेद— दिव्यम् सहस्र अब्दम् अमोघ दर्शनः, जित अनिल आत्मा विजित उभय इन्द्रियः ।
अतप्यत स्म अखिल लोक तापनम्, तपः तपीयान् तपताम् समाहितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दिव्यम् | १०. | देवताओं के | अतप्यत स्म | १७. | अनुष्ठान किया |
| सहस्र | ११. | एक हजार | अखिल | १३ | सम्पूर्ण |
| अब्दम् | १२. | वर्ष तक | लोक | १४. | संसार को |
| अमोघ, दर्शनः | १ | सफल, ज्ञान वाले | तापनम् | १५ | प्रकाशित करने वाली |
| जित | ३. | जीते हुये | तपः | १६. | तपस्या का |
| अनिल, आत्मा | २. | प्राण और, मन को | तपीयान् | ८ | परम तपस्वी ब्रह्मा जी ने |
| विजितः | ६. | वश में किये हुये (तथा) | तपताम् | ७. | तप करने वालों में |
| उभय | ५ | इन दोनों को | समाहितः ॥ | ९ | सावधान मन से |
| इन्द्रियः । | ४. | ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय | | | |

श्लोकार्थ—सफल ज्ञान वाले, प्राण और मन को जीते हुये, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय इन दोनों को वश में किये हुये तथा तप करने वालों में परम तपस्वी ब्रह्मा जी ने सावधान मन से देवताओं के एक हजार वर्ष तक सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित करने वाली तपस्या का अनुष्ठान किया ।

## नवमः श्लोकः

**तस्मै स्वलोकं भगवान् सभाजितः, सन्दर्शयामास परं न यत्परम् ।**
**व्यपेतसंक्लेशविमोहसाध्वसं, स्वदृष्टवद्भिर्विबुधैरभिष्टुतम् ॥ ९ ॥**

पदच्छेद—

तस्मै स्व लोकम् भगवान् सभाजितः, सन्दर्शयामास परम् न यत् परम् ।
व्यपेत संक्लेश विमोह साध्वसम्, स्व दृष्टवद्भिः विबुधैः अभिष्टुतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मै | ३. | उन्हें | व्यपेत | १२. | रहित (है तथा) |
| स्व लोकम् | ५. | अपना वैकुण्ठ धाम | संक्लेश | ९. | दुःख |
| भगवान् | २. | भगवान् ने | विमोह | १०. | अज्ञान (और) |
| सभाजितः, | १. | (तप से) प्रसन्न हुये | साध्वसम् | ११. | भय से |
| सन्दर्शयामास | ६. | दिखलाया | स्व | १३. | स्वयम् |
| परम् | ४. | सबसे श्रेष्ठ | दृष्टवद्भिः | १४. | दर्शन करने वाले |
| न | ८. | नहीं है (जो) | विबुधैः | १५. | देवताओं से |
| यत्, परम् । | ७. | जिससे, परे कोई दूसरा लोक | अभिष्टुतम् ॥ | १६. | प्रशंसित है |

श्लोकार्थ—तप से प्रसन्न हुये भगवान् ने उन्हें सबसे श्रेष्ठ अपना वैकुण्ठ धाम दिखलाया, जिससे परे कोई दूसरा लोक नहीं है, जो दुःख, अज्ञान और भय से रहित है तथा स्वयम् दर्शन करने वाले देवताओं से प्रशंसित है ।

## दशमः श्लोकः

**प्रवर्तते यत्र रजस्तमस्तयोः, सत्त्वं च मिश्रं न च कालविक्रमः ।**
**न यत्र माया किमुतापरे हरे—रनुव्रता यत्र सुरासुरार्चिताः ॥ १० ॥**

पदच्छेद—

प्रवर्तते यत्र रजः तमः तयोः, सत्त्वम् च मिश्रम् न च काल विक्रमः ।
न यत्र माया किमुत अपरे हरेः, अनुव्रताः यत्र सुर असुर अर्चिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रवर्तते | ९. | व्याप्त है | न | ११. | नहीं (है तो फिर) |
| यत्र | १. | जिस (वैकुण्ठलोक) में | यत्र, माया | १०. | जहाँ, माया भी |
| रजः, तमः | २. | रजोगुण, तमोगुण | किमुत | १३. | बात ही क्या है |
| तयोः | ४. | उन दोनों से | अपरे | १२. | दूसरे की |
| सत्त्वम् | ६. | सत्त्वगुण | हरेः, अनुव्रताः | १८. | भगवान् के, पार्षद रहते हैं |
| च | ३. | और | यत्र | १४. | वहाँ (केवल) |
| मिश्रम् | ५. | मिश्रित | सुर | १५. | देव (और) |
| न | ८. | नहीं | असुर | १६. | दानवों से |
| च, काम, विक्रमः । | ७. | तथा, काल की, गति | अर्चिताः ॥ | १७. | पूजित |

श्लोकार्थ—जिस वैकुण्ठ लोक में रजोगुण, तमोगुण और उन दोनों से मिश्रित सत्त्वगुण तथा काल की गति नहीं व्याप्त है । जहाँ माया भी नहीं है तो फिर दूसरे की बात ही क्या है ? वहाँ केवल देव और दानवों से पूजित भगवान् के पार्षद रहते हैं ।

# एकादशः श्लोकः

श्यामावदाताः शतपत्रलोचनाः, पिशङ्गवस्त्राः सुरुचः सुपेशसः ।
सर्वे चतुर्बाहव उन्मिषन्मणि—प्रवेकनिष्काभरणाः सुवर्चसः ।
प्रवालवैदूर्यमृणालवर्चसः, परिस्फुरत्कुण्डलमौलिमालिनः ॥११॥

पदच्छेद— श्याम अवदाताः शतपत्र लोचनाः, पिशङ्ग वस्त्राः सुरुचः सुपेशसः ।
सर्वे चतुर् बाहवः उन्मिषत् मणि, प्रवेक निष्क आभरणाः सुवर्चसः ।
प्रवाल वैदूर्य मृणाल वर्चसः, परिस्फुरत् कुण्डल मौलि मालिनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्याम, अवदाताः | २ | साँवली, आभा | निष्क | १४. | सोने के |
| शतपत्र, लोचनाः | ३ | कमल के समान, नयन | आभरणाः | १५. | गहने पहने हुये (एवं) |
| पिशङ्ग, वस्त्राः | ४ | पीले, कपड़े | सुवर्चसः । | १६. | अत्यन्त तेजस्वी हैं |
| सुरुचः, सुपेशसः । | ५. | सुंदर छवि, मनोहर कोमलता | प्रवाल, वैदूर्य | ६. | मूंगा, बिल्लौरी पत्थर (और) |
| सर्वे | १. | (भगवान् के वे) सभी पार्षद | मृणाल, वर्चसः | ७. | कमलनाल की, कांति (तथा) |
| चतुर्, बाहवः | ११. | चार, भुजाओं वाले | परिस्फुरत् | ८. | दमकते |
| उन्मिषत् | १२. | चमकीले | कुण्डल, मौलि | ९. | कुण्डल, मुकुट (और) |
| मणि, प्रवेक | १३. | रत्नों से, जड़ें | मालिनः ॥ | १०. | मालाओं से युक्त |

श्लोकार्थ—भगवान् के वे सभी पार्षद साँवली आभा, कमल के समान नयन, पीले कपड़े, सुन्दर छवि, मनोहर कोमलता, मूंगा, बिल्लौरी पत्थर और कमल नाल की कांति तथा दमकते कुण्डल, मुकुट और मालाओं से युक्त; चार भुजाओं वाले; चमकीले रत्नों से जड़े सोने के गहने पहने हुये एवं अत्यन्त तेजस्वी हैं ।

# द्वादशः श्लोकः

भ्राजिष्णुभिर्यः परितो विराजते, लसद्विमानावलिभिर्महात्मनाम् ।
विद्योतमानः प्रमदोत्तमाद्युभिः, सविद्युदभ्रावलिभिर्यथा नभः ॥१२॥

पदच्छेद— भ्राजिष्णुभिः यः परितः विराजते, लसद् विमान आवलिभिः महात्मनाम् ।
विद्योतमानः प्रमदा उत्तमा द्युभिः, सविद्युत् अभ्र आवलिभिः यथा नभः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भ्राजिष्णुभिः | १०. | प्रकाशमान | विद्योतमानः | १५. | चमकता हुआ |
| यः | ५. | जो (वैकुण्ठ लोक) | प्रमदा | ८. | अप्सराओं से (और) |
| परितः | १४. | चारों ओर | उत्तमा | ७. | श्रेष्ठ |
| विराजते, | १६. | शोभायमान है | द्युभिः, | ६. | स्वर्ग की |
| लसत् | ११. | सुन्दर | सविद्युत् | १ | बिजली से युक्त |
| विमान | १२. | विमानों की | अभ्र, आवलिभिः | २. | बादलों के, झुंड से |
| आवलिभिः | १३. | कतारों से | यथा | ४ | समान |
| महात्मनाम् । | ९. | पार्षदों के | नभः ॥ | ३. | (सुशोभित) आकाश के |

श्लोकार्थ—बिजली से युक्त बादलों के झुण्ड से सुशोभित आकाश के समान जो वैकुण्ठ लोक स्वर्ग की श्रेष्ठ अप्सराओं से और पार्षदों के प्रकाशमान सुन्दर विमानों की कतारों से चारों ओर चमकता हुआ शोभायमान है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

श्रीर्यत्र रूपिण्युरुगायपादयोः, करोति मानं बहुधा विभूतिभिः ।
प्रेङ्खं श्रिता या कुसुमाकरानुगै—र्विगीयमाना प्रियकर्म गायती ।।१३।।

पदच्छेद—

श्रीः यत्र रूपिणी उरुगाय पादयोः, करोति मानम् बहुधा विभूतिभिः ।
प्रेङ्खम् श्रिता या कुसुमाकर अनुगैः, विगीयमाना प्रिय कर्म गायती ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रीः | ३. | लक्ष्मी जी (अपनी) | प्रेङ्खम् | १३. | झूले पर |
| यत्र | १. | जिस वैकुण्ठ में | श्रिता | १४. | झूलती हुई |
| रूपिणी | २. | रूपवती | या | १२. | जो (लक्ष्मी जी) |
| उरुगाय, पादयोः, | ५. | भगवान् के, चरणों में | कुसुमाकर | ९. | वसन्त के |
| करोति | ८. | करती हैं (तथा) | अनुगैः, | १०. | साथी भौंरों से |
| मानम् | ७. | सेवा | विगीयमाना | ११. | गायी जाती हुई |
| बहुधा | ६. | अनेकों प्रकार से | प्रिय कर्म | १५. | भगवान् की मधुर लीलाओं का |
| विभूतिभिः । | ४. | सम्पदा के साथ | गायती ।। | १६. | गान करती रहती हैं |

श्लोकार्थ— जिस वैकुण्ठ में रूपवती लक्ष्मी जी अपनी सम्पदा के साथ भगवान् के चरणों में अनेकों प्रकार से सेवा करती हैं तथा वसन्त के साथी भौंरों से गायी जाती हुई जो लक्ष्मी जी झूले पर झूलती हुई भगवान् की मधुर लीलाओं का गान करती रहती हैं ।

## चतुर्दशः श्लोकः

ददर्श तत्राखिलसात्वतां पतिं, श्रियः पतिं यज्ञपतिं जगत्पतिम् ।
सुनन्दनन्दप्रबलार्हणादिभिः, स्वपार्षदमुख्यैः परिसेवितं विभुम् ।। १४ ।।

पदच्छेद—

ददर्श तत्र अखिल सात्वताम् पतिम्, श्रियः पतिम् यज्ञ पतिम् जगत् पतिम् ।
सुनन्द नन्द प्रबल अर्हण आदिभिः, स्व पार्षद मुख्यैः परिसेवितम् विभुम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ददर्श | १६. | देखा | सुनन्द, नन्द | ९. | सुनन्द, नन्द |
| तत्र | १. | वहाँ पर (ब्रह्मा जी ने) | प्रबल, अर्हण | १०. | प्रबल, अर्हण |
| अखिल | २. | सम्पूर्ण | आदिभिः, | ११. | इत्यादि |
| सात्वताम् | ३. | भक्तों के | स्व | १२. | अपने |
| पतिम्, | ४. | परिपालक | पार्षद | १४. | पार्षदों से |
| श्रियः पतिम् | ७. | लक्ष्मीनाथ | मुख्यैः | १३. | प्रधान |
| यज्ञ पतिम् | ६. | यज्ञों के स्वामी | परिसेवितम् | १५. | सेवा किये जाते हुये |
| जगत् पतिम् । | ५. | संसार के रक्षक (और) | विभुम् ।। | ८. | भगवान् को |

श्लोकार्थ— वहाँ पर ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण भक्तों के परिपालक, संसार के रक्षक और यज्ञों के स्वामी लक्ष्मीनाथ भगवान् को सुनन्द, नन्द, प्रबल, अर्हण इत्यादि अपने प्रधान पार्षदों से सेवा किये जाते हुये देखा ।

## पञ्चदशः श्लोकः

**भृत्यप्रसादाभिमुखं दृगासवं, प्रसन्नहासारुणलोचनाननम् ।**
**किरीटिनं कुण्डलिनं चतुर्भुजं, पीताम्बरं वक्षसि लक्षितं श्रिया ॥१५॥**

पदच्छेद— भृत्य प्रसाद अभिमुखम् दृग् आसवम्, प्रसन्न हास अरुण लोचन आननम् ।
किरीटिनम् कुण्डलिनम् चतुर्भुजम्, पीताम्बरम् वक्षसि लक्षिनम् श्रिया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भृत्य | १. | भक्तों पर | किरीटिनम् | ६. | मुकुट |
| प्रसाद | २. | कृपा करने में | कुण्डलिनम्, | १०. | कुण्डल |
| अभिमुखम् | ३. | तत्पर (वे भगवान) | चतुर्भुजम् | ११. | चार हाथ |
| दृग् | ५. | दृष्टि | पीताम्बरम् | १२. | पीले वस्त्र (और) |
| आसवम्, | ४. | मादक | वक्षसि | १३. | छाती पर |
| प्रसन्न, हास | ६. | खुली, हंसी | लक्षितम् | १५. | शोभा पा रहे थे |
| अरुण, लोचन | ७ | लाल आँखें (और) | श्रिया ॥ | १४. | लक्ष्मी जी से |
| आननम् । | ८. | मुख से युक्त (थे तथा) | | | |

श्लोकार्थ—भक्तों पर कृपा करने में तत्पर वे भगवान् मादक दृष्टि, खुली हँसी, लाल आँखें और सुन्दर मुख से युक्त थे तथा मुकुट, कुण्डल, चार हाथ, पीले वस्त्र और छाती पर लक्ष्मी जी से शोभा पा रहे थे।

## षोडशः श्लोकः

**अध्यर्हणीयासनमास्थितं परं, वृतं चतुःषोडशपञ्चशक्तिभिः ।**
**युक्तं भगैः स्वैरितरत्र चाध्रुवैः, स्व एव धामन् रममाणमीश्वरम् ॥१६॥**

पदच्छेद— अध्यर्हणीय आसनम् आस्थितम् परम्, वृतम् चतुः षोडश पञ्च शक्तिभिः ।
युक्तम् भगैः स्वैः इतरत्र च अध्रुवैः, स्वे एव धामन् रममाणम् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अध्यर्हणीय | २. | बहुमूल्य | भगैः | १२. | छओं प्रकार के ऐश्वर्योंके |
| आसनम् | ३. | आसन पर | स्वैः | ११. | अपने |
| आस्थितम् | ४. | बैठे हुये | इतरत्र | ६. | दूसरों में |
| परम्, | १. | सर्वोत्तम (और) | च | ८. | तथा |
| वृतम् | ७. | घिरे हुये | अध्रुवैः, | १०. | अनित्य रूप से रहने वाले |
| चतुः षोडश पञ्च | ५. | पच्चीस | स्वे, एव, धामन् | १५. | अपने, ही, लोक में |
| शक्तिभिः । | ६ | तत्त्वों से | रममाणम् | १६. | विहार करते हुये (देखा) |
| युक्तम् | १३. | सहित | ईश्वरम् ॥ | १४. | भगवान् को |

श्लोकार्थ –सर्वोत्तम और बहुमूल्य आसन पर बैठे हुये, पच्चीस तत्त्वों से घिरे हुये तथा दूसरों में अनित्य रूप से रहने वाले, अपने छओं प्रकार के ऐश्वर्यों के सहित भगवान् को अपने ही लोक में विहार करते हुये ब्रह्माजी ने देखा।

## सप्तदशः श्लोकः

**तद्दर्शनाह्लादपरिप्लुतान्तरो, हृष्यत्तनुः प्रेमभराश्रुलोचनः ।**
**ननाम पादाम्बुजमस्य विश्वसृग्, यत् पारमहंस्येन पथाधिगम्यते ।।१७।।**

पदच्छेद— तद् दर्शन आह्लाद परिप्लुत अन्तरः, हृष्यत तनुः प्रेम भर अश्रु लोचनः ।
ननाम पाद अम्बुजम् अस्य विश्वसृग्, यत् पारमहंस्येन पथा अधिगम्यते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद्, दर्शन | १. | उनके, दर्शन के कारण | ननाम | १२. | प्रणाम किया |
| आह्लाद | २. | आनन्द से | पाद, अम्बुजम् | ११. | चरण कमलों में |
| परिप्लुत | ३. | परिपूर्ण | अस्य | १०. | उन (भगवान्) के |
| अन्तरः, | ४. | हृदय वाले | विश्वसृग्, | ६. | ब्रह्मा जी ने |
| हृष्यत् | ५. | पुलकित | यत् | १३. | जिसे |
| तनुः | ६. | शरीर से युक्त (एवम्) | पारमहंस्येन | १४. | योगियों के |
| प्रेम, भर | ७. | प्रेम के, उमड़ आने से | पथा | १५. | निवृत्ति मार्ग से |
| अश्रु, लोचनः । | ८. | आँसु भरे, नेत्रों वाले | अधिगम्यते ।। | १६. | प्राप्त किया जाता है |

श्लोकार्थ— उनके दर्शन के कारण आनन्द से परिपूर्ण हृदयवाले, पुलकित शरीर से युक्त एवम् प्रेम के उमड़ आने से आँसु भरे नेत्रों वाले ब्रह्माजी ने उन भगवान् के चरण-कमलों में प्रणाम किया; जिसे योगियों के निवृत्ति मार्ग से प्राप्त किया जाता है ।

## अष्टादशः श्लोकः

**तं प्रीयमाणं समुपस्थितं तदा, प्रजाविसर्गे निजशासनार्हणम् ।**
**बभाष ईषत्स्मितशोचिषा गिरा, प्रियः प्रियं प्रीतमनाः करे स्पृशन् ।।१८।।**

पदच्छेद— तम् प्रीयमाणम् समुपस्थितम् तदा, प्रजा विसर्गे निज शासन अर्हणम् ।
बभाषे ईषत् स्मित शोचिषा गिरा, प्रियः प्रियम् प्रीत मनाः करे स्पृशन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ११. | उन ब्रह्मा जी से | बभाषे | १६. | कहा |
| प्रीयमाणम् | ५. | परम प्रिय | ईषत् | १२. | मन्द |
| समुपस्थितम् | ६. | सामने खड़े हुये (और) | स्मित | १३. | मुसकान भरी |
| तदा, | १. | उस समय | शोचिषा | १४. | सुन्दर |
| प्रजा, विसर्गे | ७. | प्रजा की, सृष्टि करने के लिये | गिरा, | १५. | वाणी में |
| निज | ८. | अपने | प्रियः, प्रियम् | ४. | भगवान् ने, प्यारे |
| शासन | ९. | आदेश देने के | प्रीत, मनाः | २. | प्रसन्न, मन से |
| अर्हणम् । | १०. | योग्य | करे, स्पृशन् ।। | ३. | हाथ, से सहलाते हुये |

श्लोकार्थ—उस समय प्रसन्न मन से हाथ से सहलाते हुये भगवान् ने प्यारे, परम प्रिय, सामने खड़े हुये और प्रजा की सृष्टि करने के लिये अपने आदेश देने के योग्य उन ब्रह्मा जी से मन्द-मुसकान भरी सुन्दर वाणी में कहा ।

# एकोनविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच–

त्वयाहं तोषितः सम्यग् वेदगर्भ सिसृक्षया।
चिरं भृतेन तपसा दुस्तोषः कूटयोगिनाम् ।। १६ ।।

पदच्छेद—

त्वया अहम् तोषितः सम्यग्, वेद गर्भ सिसृक्षया।
चिरम् भृतेन तपसा, दुस्तोषः कूट योगिनाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वया | ७. | आपसे | चिरम् | ४. | बहुत काल तक |
| अहम् | ८. | मैं | भृतेन | ५. | की गई |
| तोषितः | १०. | प्रसन्न किया गया हूँ (जबकि) | तपसा | ६. | तपस्या के द्वारा |
| सम्यग् | ९. | अच्छी प्रकार | दुः | १३. | प्रसन्न नहीं |
| वेद | १. | वेद ज्ञान से | तोषः | १४. | किया जा सकता हूँ |
| गर्भ | २. | परिपूर्ण हे ब्रह्मा जी ! | कूट | ११. | (मैं) कपटी |
| सिसृक्षया। | ३. | सृष्टि करने की इच्छा से | योगिनाम् ।। | १२. | योगियों के द्वारा |

श्लोकार्थ—वेद ज्ञान से परिपूर्ण हे ब्रह्मा जी ! सृष्टि करने की इच्छा से बहुत काल तक की गई तपस्या के द्वारा आपसे मैं अच्छी प्रकार प्रसन्न किया गया हूँ, जबकि मैं कपटी योगियों के द्वारा प्रसन्न नहीं किया जा सकता हूँ।

# विंशः श्लोकः

वरं वरय भद्रं ते वरेशं माभिवाञ्छितम्।
ब्रह्मञ्छ्रेयः परिश्रामः पुंसो मद्दर्शनावधिः ।। २० ।।

पदच्छेद—

वरम् वरय भद्रम् ते, वरेशम् मा अभिवाञ्छितम्।
ब्रह्मन् श्रेयः परिश्रामः, पुंसः मत् दर्शन अवधिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वरम् | ७. | वरदान को | ब्रह्मन् | १. | हे ब्रह्मा जी ! |
| वरय | ८. | माँगें | श्रेयः | १३ | कल्याणकारी साधनों का |
| भद्रम् | ३. | कल्याण हो (आप) | परिश्रामः | १४. | अन्त है |
| ते | २. | आपका | पुंसः | १२. | मनुष्यों के |
| वरेशम् | ४. | वरदान देने में समर्थ | मत् | ९. | मेरे |
| मा | ५. | मुझसे | दर्शन | १०. | साक्षात्कार की |
| अभिवाञ्छितम्। | ६. | चाहे गये | अवधिः ।। | ११. | सीमा ही |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मा जी ! आपका कल्याण हो। आप वरदान देने में समर्थ मुझसे चाहे गये वरदान को माँगें। मेरे साक्षात्कार की सीमा ही मनुष्यों के कल्याणकारी साधनों का अन्त है।

## एकविंशः श्लोकः

मनीषितानुभावोऽयं मम लोकावलोकनम् ।
यदुपश्रुत्य रहसि चकर्थ परमं तपः ॥२१॥

पदच्छेद—

मनीषित अनुभावः अयम्, मम लोक अवलोकनम् ।
यद् उपश्रुत्य रहसि, चकर्थ परमम् तपः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनीषित | २. | मेरी इच्छा का | यद् | ७. | क्योंकि (आपने) |
| अनभावः | ३ | प्रभाव (है कि आपको) | उपश्रुत्य | ९ | सुनकर |
| अयम् | १. | यह | रहसि | ८. | एकान्त में (मेरी वाणी) |
| मम | ४. | मेरे | चकर्थ | १२. | अनुष्ठान किया था |
| लोक | ५. | धाम का | परमम् | १०. | कठोर |
| अवलोकनम् । | ६. | दर्शन हुआ है | तपः ॥ | ११ | तपस्या का |

श्लोकार्थ—यह मेरी इच्छा का प्रभाव है कि आपको मेरे धाम का दर्शन हुआ है; क्योंकि आपने एकान्त में मेरी वाणी सुनकर कठोर तपस्या का अनुष्ठान किया था ।

## द्वाविंशः श्लोकः

प्रत्यादिष्टं मया तत्र त्वयि कर्मविमोहिते ।
तपो मे हृदयं साक्षादात्माहं तपसोऽनघ ॥२२॥

पदच्छेद—

प्रत्यादिष्टम् मया तत्र, त्वयि कर्म विमोहिते ।
तपः मे हृदयम् साक्षात्, आत्मा अहम् तपसः अनघ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रत्यादिष्टम् | ६. | आदेश दिया था | मे | ९. | मेरा |
| मया | ५. | मैंने ही | हृदयम् | १०. | हृदय है (और) |
| तत्र | ४. | वहाँ पर | साक्षात् | १२. | स्वयम् |
| त्वयि | १. | आपका | आत्मा | १४. | आत्मा हूँ |
| कर्म | २. | कर्म के प्रति | अहम् | ११. | मैं |
| विमोहिते । | ३. | विवेक न रहने पर | तपसः | १३. | तपस्या की |
| तपः | ८. | तपस्या | अनघ ॥ | ७. | हे निष्पाप ब्रह्मा जी ! |

श्लोकार्थ—आपका कर्म के प्रति विवेक न रहने पर वहाँ पर मैंने ही आदेश दिया था । हे निष्पाप ब्रह्मा जी ! तपस्या मेरा हृदय है और मैं स्वयम् तपस्या की आत्मा हूँ ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

सृजामि तपसैवेदं ग्रसामि तपसा पुनः ।
बिभर्मि तपसा विश्वं वीर्यं मे दुश्चरं तपः ॥ २३ ॥

पदच्छेद—

सृजामि तपसा एव इदम्, ग्रसामि तपसा पुनः ।
बिभर्मि तपसा विश्वम्, वीर्यम् मे दुश्चरम् तपः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सृजामि | ५. सृष्टि करता हूँ | बिभर्मि | ७. पालन करता हूँ |
| तपसा | १. (मैं) तपस्या से | तपसा | ६. तपस्या से |
| एव | २. ही | विश्वम् | ४. संसार की |
| इदम् | ३. इस | वीर्यम् | १४. शक्ति है |
| ग्रसामि | १०. संहार करता हूँ | मे | १२. मेरी |
| तपसा | ९. तप से (ही) | दुश्चरम् | १३. अनन्त |
| पुनः । | ८. फिर | तपः ॥ | ११. तपस्या |

श्लोकार्थ--मैं तपस्या से ही इस संसार की सृष्टि करता हूँ, तपस्या से पालन करता हूँ, फिर तप से ही संहार करता हूँ। तपस्या मेरी अनन्त शक्ति है।

# चतुर्विंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच

भगवन् सर्वभूतानामध्यक्षोऽवस्थितो गुहाम् ।
वेद ह्यप्रतिरुद्धेन प्रज्ञानेन चिकीर्षितम् ॥ २४ ॥

पदच्छेद—

भगवन् सर्व भूतानाम्, अध्यक्षः अवस्थितः गुहाम् ।
वेद हि अप्रतिरुद्धेन, प्रज्ञानेन चिकीर्षितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| भगवन् | १. हे प्रभु ! आप | वेद | ११. जानते हैं |
| सर्व | २. सभी | हि | ७. तथा (अपने) |
| भूतानाम् | ३. प्राणियों के | अप्रतिरुद्धेन | ८. असीमित |
| अध्यक्षः | ५. साक्षि रूप से | प्रज्ञानेन | ९. ज्ञान से |
| अवस्थितः | ६. स्थित हैं | चिकीर्षितम् ॥ | १०. मेरे मनोरथ को |
| गुहाम् । | ४. अन्तः करण में | | |

श्लोकार्थ—हे प्रभु ! आप सभी प्राणियों के अन्तः करण में साक्षी रूप से स्थित हैं तथा अपने असीमित

## पञ्चविंशः श्लोकः

तथापि नाथमानस्य नाथ नाथय नाथितम् ।
परावरे यथा रूपे जानीयां ते त्वरूपिणः ॥२५॥

पदच्छेद---

तथापि नाथमानस्य, नाथ नाथय नाथितम् ।
परावरे यथा रूपे, जानीयाम् ते तु अरूपिणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तथापि | १. | अतः | यथा | ११. | भली भाँति |
| नाथमानस्य | ३. | मुझ याचक की | रूपे | १० | स्वरूपों को |
| नाथ | २. | हे स्वामिन् ! | जानीयाम् | १२. | जान सकूं |
| नाथय | ५. | पूरी करें | ते | ८. | आपके |
| नाथितम् । | ४. | याचना | तु | ६. | जिससे मैं |
| परावरे | ९. | निर्गुण और सगुण | अरूपिणः । | ७. | रूप रहित |

श्लोकार्थ -अतः हे स्वामिन् ! आप मुझ याचक की याचना पूरी करें, जिससे मैं रूप रहित आपके निर्गुण और सगुण स्वरूपों को भली भाँति जान सकूं ।

## षड्विंशः श्लोकः

यथाऽऽत्ममायायोगेन, नानाशक्त्युपबृंहितम् ।
विलुम्पन् विसृजन् गृह्णन्, बिभ्रदात्मानमात्मना ॥२६॥

पदच्छेद—

यथा आत्मन् माया योगेन, नाना शक्ति उपबृंहितम् ।
विलुम्पन् विसृजन् गृह्णन्, बिभ्रत् आत्मानम् आत्मना ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | ८. | जिस प्रकार | विलुम्पन् | १३. | संहार करते हैं (उसे बतावें) |
| आत्मन् | १ | हे प्रभो ! (आप) | विसृजन् | ११. | संसार की सृष्टि |
| माया | २. | (अपनी) माया के | गृह्णन् | १२. | रक्षा (और) |
| योगेन | ३. | प्रभाव के कारण | बिभ्रत् | ९. | धारण करते हैं (तथा) |
| नाना | ४. | अनेक | आत्मानम् | ७. | अपने को (अनेक रूपों में) |
| शक्ति | ५. | शक्तियों से | आत्मना ॥ | १०. | अपने से ही |
| उपबृंहितम् । | ६. | परिपूर्ण | | | |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप अपनी माया के प्रभाव के कारण अनेक शक्तियों से परिपूर्ण अपने को अनेक रूपों में जिस प्रकार धारण करते हैं तथा अपने से ही संसार की सृष्टि, रक्षा और संहार करते हैं, उसे बतावें ।

## सप्तविंशः श्लोकः

क्रीडस्यमोघसंकल्प ऊर्णनाभिर्यथोर्णुते ।
तथा तद्विषयां धेहि मनीषां मयि माधव ॥ २७ ॥

पदच्छेद—

क्रीडसि अमोघ संकल्पः, ऊर्णनाभिः यथा ऊर्णुते ।
तथा तद् विषयाम् धेहि, मनीषाम् मयि माधव ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्रीडसि | ७. | लीला करते हैं | तथा | ४. | उसी प्रकार |
| अमोघ | ५. | सत्य | तद् | १०. | उस |
| संकल्पः | ६. | प्रतिज्ञा वाले (आप) | विषयाम् | ११. | विषय का |
| ऊर्णनाभिः | २ | मकड़ी | धेहि | १३. | देवें |
| यथा | १. | जिस प्रकार | मनीषाम् | १२. | ज्ञान |
| ऊर्णुते । | ३. | जाला बनाती है | मयि | ९. | मुझे |
| | | | माधव ॥ | ८. | हे श्रीकृष्ण ! (आप) |

श्लोकार्थ – जिस प्रकार मकड़ी जाला बनाती है, उसी प्रकार सत्य प्रतिज्ञा वाले आप लीला करते हैं। हे श्रीकृष्ण ! आप मुझे उस विषय का ज्ञान देवें।

## अष्टाविंशः श्लोकः

भगवच्छिक्षितमहं करवाणि ह्यतन्द्रितः ।
नेहमानः प्रजासर्गं बध्येयं यदनुग्रहात् ॥ २८ ॥

पदच्छेद—

भगवत् शिक्षितम् अहम्, करवाणि हि अतन्द्रितः ।
न ईहमानः प्रजा सर्गम्, बध्येयम् यत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवत् | १. | हे प्रभो ! | ईहमानः | ५. | चेष्टा करता हुआ |
| शिक्षितम् | २. | (आपके द्वारा) बताई गई | प्रजा | ३. | जीवों की |
| अहम् | ६. | मैं | सर्गम् | ४. | सृष्टि की |
| करवाणि | ९ | करता रहूँ (किन्तु) | बध्येयम् | १३. | बंध सकूं |
| हि | ८. | (उसे) अवश्य | यत् | १०. | जिस आपकी |
| अतन्द्रितः । | ७. | आलस्य रहित होकर | अनुग्रहात् ॥ | ११. | कृपा के कारण (कर्तापन के अभिमान से) |
| न | १२. | नहीं | | | |

श्लोकार्थ – हे प्रभो ! आपके द्वारा बताई गई जीवों की सृष्टि की चेष्टा करता हुआ मैं आलस्य रहित होकर उसे अवश्य करता रहूँ; किन्तु जिस आपकी कृपा के कारण कर्तापन के अभिमान से

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

यावत् सखा सख्युरिवेश ते कृतः, प्रजाविसर्गे विभजामि भो जनम् ।
अविक्लवस्ते परिकर्मणि स्थितो, मा मे समुन्नद्धमदोऽजमानिनः ॥२९॥

पदच्छेद— यावत् सखा सख्युः इव ईश ते कृतः, प्रजा विसर्गे विभजामि भो जनम् ।
अविक्लवः ते परिकर्मणि स्थितः, मा मे समुन्नद्ध मदः अज मानिनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावत् | २. | जब | भो | ७. | हे स्वामिन् ! |
| सखा | ५. | मित्र | जनम् । | १४. | मनुष्यों का (गुण कर्मानुसार) |
| सख्युः, इव | ४. | एक मित्र के, समान | अविक्लवः | १२. | सावधानी से |
| ईश | १. | हे भगवन् ! | ते | १०. | आपकी |
| ते | ३. | आपने (मुझे) | परिकर्मणि | ११. | सेवा में |
| कृतः, | ६. | स्वीकार किया है (तब) | स्थितः, | १३. | लगा हुआ (मैं) |
| प्रजा | ८. | जीवों की | मा | १९. | नहीं (होवे) |
| विसर्गे | ९. | सृष्टि रूप | मे | १६. | मुझे |
| विभजामि | १५ | विभाग करूँ (और) | समुन्नद्ध, मदः | १८. | बहुत बड़ा, अभिमान |
| | | | अज मानिनः॥ | १७ | अजन्मा होने का |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जब आपने मुझे एक मित्र के समान मित्र स्वीकार किया है तब हे स्वामिन् ! जीवों की सृष्टि रूप आपकी सेवा में सावधानी से लगा हुआ मैं मनुष्यों का गुण-कर्मानुसार विभाग करूँ और मुझे अजन्मा होने का बहुत बड़ा अभिमान नहीं होवे ।

# त्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—

ज्ञानं परमगुह्यं मे, यद् विज्ञानसमन्वितम् ।
सरहस्यं तदङ्गं च, गृहाण गदितं मया ॥३०॥

पदच्छेद— ज्ञानम् परम गुह्यम् मे, यद् विज्ञान समन्वितम् ।
सरहस्यम् तदङ्गम् च, गृहाण गदितम् मया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ९. | ज्ञान है | सरहस्यम् | १०. | रहस्यों के साथ (उसे) |
| परम् | ७. | अत्यन्त | तदङ्गम् | १२. | उसके अंगों को |
| गुह्यम | ८. | गोपनीय | च | ११. | और |
| मे | ६. | मेरा | गृहाण | १३. | आप ग्रहण करें |
| यद् | ५. | जो | गदितम् | २. | कहा गया |
| विज्ञान | ३. | तत्त्व ज्ञान से | मया ॥ | १. | मेरे द्वारा |
| समन्वितम् । | ४. | युक्त | | | |

श्लोकार्थ – मेरे द्वारा कहा गया, तत्त्व-ज्ञान से युक्त जो मेरा अत्यन्त गोपनीय ज्ञान है, रहस्यों के साथ ... उसके अंगों को आप ग्रहण करें ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः ।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥३१॥

पदच्छेद—

यावान् अहम् यथा भावः, यद् रूप गुण कर्मकः ।
तथैव तत्त्व विज्ञानम्, अस्तु ते मत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावान् | २ | जितना (बड़ा हूँ) | तथैव | १०. | उसी प्रकार |
| अहम् | १ | मैं | तत्त्व | १२. | वास्तविक स्वरूप का |
| यथा | ३. | (मेरा) जैसा | विज्ञानम् | १३ | ज्ञान |
| भावः | ४. | लक्षण है | अस्तु | १४. | हो |
| यद् रूप | ५. | जो स्वरूप | ते | ११ | आपको (उनके) |
| गुण | ६. | गुण (तथा) | मत् | ८. | मेरी |
| कर्मकः । | ७ | लीलायें हैं | अनुग्रहात् ॥ | ९. | कृपा से |

श्लोकार्थ मैं जितना बड़ा हूँ, मेरा जैसा लक्षण है, जो स्वरूप, गुण तथा लीलायें हैं । मेरी कृपा से उसी प्रकार आपको उनके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होवे ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत् सदसत् परम् ।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ॥३२॥

पदच्छेद— अहम् एव आसम् एव अग्रे, न अन्यत् सत् असत् परम् ।
पश्चात् अहम् यद् एतद् च, यः अवशिष्येत सः अस्मि अहम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम्, एव | ३. | मैं, ही | पश्चात् | १४. | अन्त में |
| आसम् | ४. | था | अहम् | १३. | मैं (ही हूँ और) |
| एव | २. | केवल | यद् | ११. | जो |
| अग्रे | १. | सृष्टि के पूर्व | एतद् | १२. | यह (जगत् है वह) |
| न | ६. | नहीं था | च | १०. | तथा |
| अन्यत् | ५. | दूसरा कोई | यः, अवशिष्येत | १५. | जो, बचा रहेगा |
| यत्, सत् | ७. | जो, स्थूल | सः | १६. | वह (भी) |
| असत् | ८. | सूक्ष्म (और) | अस्मि | १८ | हूँ |
| परम् । | ९. | (उसका) कारण अज्ञान है | अहम् ॥ | १७. | मैं (ही) |

श्लोकार्थ— सृष्टि के पूर्व केवल मैं ही था, दूसरा कोई नहीं था; जो स्थूल सूक्ष्म और उसका कारण अज्ञान है तथा जो यह जगत् है; वह मैं ही हूँ और अन्त में जो बचा रहेगा, वह भी मैं ही हूँ ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि ।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाऽऽभासो यथा तमः ॥३३॥

पदच्छेद— ऋते अर्थम् यत् प्रतीयेत, न प्रतीयेत च आत्मनि ।
तद् विद्यात् आत्मनः मायाम्, यथा आभासः यथा तमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऋते | २. | अभाव में | तद् | १३. | उसे |
| अर्थम् | १. | वस्तु के | विद्यात् | १६. | समझनी चाहिये |
| यत् | ७. | (उसी प्रकार मिथ्या होने पर) भी जिसकी | आत्मनः | १४. | परमात्मा की |
| | | | मायाम् | १५. | माया |
| प्रतीयेत | ९. | प्रतीति होती है | यथा | ३. | जैसे |
| न | ११. | नहीं भी | आभासः | ४. | भ्रम ज्ञान |
| प्रतीयेत | १२. | होती है | यथा | ५. | अथवा |
| च | १०. | और | तमः ॥ | ६. | राहु ग्रह की (प्रतीति होती है) |
| आत्मनि । | ८. | आत्मा में | | | |

श्लोकार्थ—वस्तु के अभाव में जैसे भ्रम ज्ञान अथवा राहु ग्रह की प्रतीती होती है, उसी प्रकार मिथ्या होने पर भी जिसकी आत्मा में प्रतीति होती है और नहीं भी होती है, उसे परमात्मा की माया समझनी चाहिये ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ॥३४॥

पदच्छेद— यथा महान्ति भूतानि, भूतेषु उच्चावचेषु अनु ।
प्रविष्टानि अप्रविष्टानि, तथा तेषु न तेषु अहम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे | अप्रविष्टानि | ८. | प्रवेश नहीं भी करते हैं |
| महान्ति | २. | पञ्च महा | तथा | ९. | उसी प्रकार (मैं शरीर दृष्टि से) |
| भूतानि | ३. | भूत | तेषु | १०. | उनमें प्रवेश करता हूँ |
| भूतेषु | ५. | जीव शरीरों की | न | १२. | (प्रवेश) नहीं भी |
| उच्चावचेषु | ४. | छोटे-बड़े | तेषु | ११. | और (आत्मदृष्टि से अपने अतिरिक्त कोई वस्तु न होने के कारण, |
| अनु । | ६. | रचना में | | | |
| प्रविष्टानि | ७. | प्रवेश करते हैं (और कारण रूप में पूर्व विद्यमान रहने से) | अहम् | १३. | (करता) हूँ |

श्लोकार्थ— जैसे पञ्चमहाभूत छोटे-बड़े जीव शरीरों की रचना में प्रवेश करते हैं और कारण रूप में पूर्व विद्यमान रहने से प्रवेश नहीं भी करते हैं, उसी प्रकार मैं शरीर दृष्टि से उनमें प्रवेश करता हूँ और आत्मदृष्टि से अपने अतिरिक्त कोई वस्तु न होने के कारण प्रवेश नहीं भी करता हूँ ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः ।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा ॥ ३५ ॥

पदच्छेद—

एतावत् एव जिज्ञास्यम्, तत्त्व जिज्ञासुना आत्मनः ।
अन्वय व्यतिरेकाभ्याम्, यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| एतावत् एव | ८. वही (स्वरूप) | | अन्वय | २. सद्भाव और |
| जिज्ञास्यम् | ११. जानने की वस्तु है | | व्यतिरेकाभ्याम् | ३. अभाव दोनों ही स्थितियों में |
| तत्त्व | ९. तत्त्व | | यत् | १. जो |
| जिज्ञासुना | १०. जिज्ञासु के | | स्यात् | ६. साथ रहता है |
| आत्मनः । | ७. आत्मा का | | सर्वत्र | ४. सब जगह और |
| | | | सर्वदा ॥ | ५. सब समय |

श्लोकार्थ—जो सद्भाव और अभाव दोनों ही स्थितियों में सब जगह और सब समय साथ रहता है, आत्मा का वही स्वरूप तत्त्व-जिज्ञासु के जानने की वस्तु है ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

एतन्मतं समातिष्ठ परमेण समाधिना ।
भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित् ॥ ३६ ॥

पदच्छेद—

एतद् मतम् समातिष्ठ, परमेण समाधिना ।
भवान् कल्प विकल्पेषु, न विमुह्यति कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| एतद् | ४. इस | | भवान् | १. हे ब्रह्माजी ! आप |
| मतम् | ५. सिद्धान्त पर | | कल्प | ७. युग |
| समातिष्ठ | ६. अटल रहें (जिससे) | | विकल्पेषु | ८. युगान्तरों में |
| परमेण | २. उत्तम | | न, विमुह्यति | १० नहीं, मोहित होंगे |
| समाधिना । | ३. समाधि के द्वारा | | कर्हिचित् ॥ | ९. कभी भी |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मा जी ! आप उत्तम समाधि के द्वारा इस सिद्धान्त पर अटल रहें, जिससे युग-युगान्तरों में कभी भी मोहित नहीं होंगे ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

सम्प्रदिश्यैवमजनो जनानां परमेष्ठिनम् ।
पश्यतस्तस्य तद् रूपमात्मनो न्यरुणद्धरिः ॥३७॥

पदच्छेद—

सम्प्रदिश्य एवम् अजनः, जनानाम् परमेष्ठिनम् ।
पश्यतः तस्य तद् रूपम्, आत्मनः न्यरुणत् हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सम्प्रदिश्य | ६. | उपदेश देकर | तस्य | ७. | उनके |
| एवम् | ५. | इस प्रकार | तद् | १०. | उस |
| अजनः | १. | अजन्मा | रूपम् | ११. | स्वरूप को |
| जनानाम् | ३. | लोकों के | आत्मनः | ६. | अपने |
| परमेष्ठिनम् । | ४. | पितामह ब्रह्मा को | न्यरुणत् | १२. | छिपा लिया |
| पश्यतः | ८. | देखते ही देखते | हरिः ॥ | २. | भगवान् श्री हरि ने |

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् श्री हरि ने लोकों के पितामह ब्रह्माजी को इस प्रकार उपदेश देकर उनके देखते ही देखते अपने उस स्वरूप को छिपा लिया ।

# अष्टात्रिंशः श्लोकः

अन्तर्हितेन्द्रियार्थाय हरये विहिताञ्जलिः ।
सर्वभूतमयो विश्वं ससर्जेदं स पूर्ववत् ॥३८॥

पदच्छेद—

अन्तर्हित इन्द्रिय अर्थाय, हरये विहित अञ्जलिः ।
सर्व भूतमयः विश्वम्, ससर्ज इदम् सः पूर्ववत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तर्हित | ३. | अन्तर्धान किये हुये | भूतमयः | ७. | प्राणी स्वरूप |
| इन्द्रिय | १. | इन्द्रिय | विश्वम् | ११. | जगत् की |
| अर्थाय | २. | गोचर शरीर का | ससर्ज | १२. | रचना की |
| हरये | ४. | भगवान् को | इदम् | १०. | इस |
| विहित अञ्जलिः । | ५. | हाथ जोड़ने के पश्चात् | सः | ८. | उन (ब्रह्मा जी) ने |
| सर्व | ६. | समस्त | पूर्ववत् ॥ | ६. | पूर्व कल्प की सृष्टि के समान |

श्लोकार्थ—इन्द्रिय गोचर शरीर का अन्तर्धान किये हुये भगवान् को हाथ जोड़ने के पश्चात् सर्वप्राणी स्वरूप उन ब्रह्मा जी ने पूर्व कल्प की सृष्टि के समान इस जगत् की रचना की ।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्रजापतिर्धर्मपतिरेकदा नियमान् यमान् ।
भद्रं प्रजानामन्विच्छन्नातिष्ठत् स्वार्थकाम्यया ॥३९॥

पदच्छेद—

प्रजापतिः धर्म पतिः, एकदा नियमान् यमान् ।
भद्रम् प्रजानाम् अन्विच्छन्, आतिष्ठत् स्वार्थ काम्यया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतिः | २. | प्रजाओं के रक्षक (और) | भद्रम् | ७. | कल्याण की |
| धर्मपतिः | ३. | धर्म के पालक (ब्रह्मा जी ने) | प्रजानाम् | ६. | प्रजाओं के |
| एकदा | १. | एक बार | अन्विच्छन् | ८. | कामना से |
| नियमान् | १०. | चान्द्रायणादि व्रतों का | आतिष्ठत् | ११. | अनुष्ठान किया |
| यमान् । | ९. | शम-दम आदि षड्विध यम (और) | स्वार्थ | ४. | अपने कार्य की |
| | | | काम्यया ॥ | ५. | पूर्ति के लिये (तथा) |

श्लोकार्थ—एक बार प्रजाओं के रक्षक और धर्म के पालक ब्रह्माजी ने अपने कार्य की पूर्ति के लिये तथा प्रजाओं के कल्याण की कामना से शम-दम आदि षड्विध यम और चान्द्रायणादि व्रतों का अनुष्ठान किया ।

# चत्वारिंशः श्लोकः

तं नारदः प्रियतमो रिक्थादानामनुव्रतः ।
शुश्रूषमाणः शीलेन प्रश्रयेण दमेन च ॥४०॥

पदच्छेद -

तम् नारदः प्रियतमः, रिक्थादानाम् अनुव्रतः ।
शुश्रूषमाणः शीलेन, प्रश्रयेण दमेन च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | १०. | उन्हें (प्रसन्न किया) | शुश्रूषमाणः | ५. | सेवा करते हुये |
| नारदः | ४. | देवर्षि नारद ने | शीलेन | ६. | अपने स्वभाव |
| प्रियतमः | २. | अत्यन्त प्रिय (और) | प्रश्रयेण | ७. | विनय |
| रिक्थादानाम् | १. | (उस समय) सभी दायाद पुत्रों में | दमेन | ९. | संयम से |
| अनुव्रतः । | ३. | आज्ञाकारी | च ॥ | ८. | और |

श्लोकार्थ—उस समय सभी दायाद पुत्रों में अत्यन्त प्रिय और आज्ञाकारी देवर्षि नारद ने सेवा करते हुये अपने स्वभाव, विनय और संयम से उन्हें प्रसन्न किया ।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

मायां विविदिषन् विष्णोर्मायेशस्य महामुनिः ।
महाभागवतो राजन् पितरं पर्यतोषयत् ।।४१।।

पदच्छेद—

मायाम् विविदिषन् विष्णोः, माया ईशस्य महामुनिः ।
महा भागवतः राजन्, पितरम् पर्यतोषयत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मायाम् | ५. | लीलाओं को | महा | ७. | महान् |
| विविदिषन् | ६. | जानने की इच्छा से | भागवतः | ८. | विष्णु भक्त |
| विष्णोः | ४. | भगवान् विष्णु की | राजन् | १. | हे परीक्षित् ! (उस समय) |
| माया | २. | माया | पितरम् | १० | (अपने) पिता ब्रह्मा को |
| ईशस्य | ३. | पति | पर्यतोषयत् ।। | ११. | प्रसन्न किया |
| महामुनिः । | ९. | देवर्षि नारद ने | | | |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! उस समय माया पति भगवान् विष्णु की लीलाओं को जानने की इच्छा से महान् विष्णु भक्त देवर्षि नारद ने अपने पिता ब्रह्मा को प्रसन्न किया ।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तुष्टं निशाम्य पितरं लोकानां प्रपितामहम् ।
देवर्षिः परिपप्रच्छ भवान् यन्मानुपृच्छति ।।४२।।

पदच्छेद—

तुष्टम् निशाम्य पितरम्, लोकानाम् प्रपितामहम् ।
देवर्षिः परिपप्रच्छ, भवान् यत् मा अनुपृच्छति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तुष्टम् | ४. | प्रसन्न | देवर्षिः | ६. | देवर्षि नारद ने (उनसे) |
| निशाम्य | ५. | देखकर | परिपप्रच्छ | ७. | (वही प्रश्न) पूछा |
| पितरम् | ३. | (अपने) पिता ब्रह्मा को | भवान् | ९. | आप |
| लोकानाम् | १. | लोकों के | यत् | ८. | जो |
| प्रपितामहम् । | २. | पितामह (और) | मा | १०. | मुझसे |
| | | | अनुपृच्छति ।। | ११. | पूछ रहे हैं |

श्लोकार्थ—लोकों के पितामह और अपने पिता ब्रह्मा को प्रसन्न देखकर देवर्षि नारद ने उनसे वही प्रश्न पूछा , जो आप मुझसे पूछ रहे हैं ।

# त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मा इदं भागवतं पुराणं दशलक्षणम् ।
प्रोक्तं भगवता प्राह प्रीतः पुत्राय भूतकृत् ॥४३॥

पदच्छेद—

तस्मै इदम् भागवतम्, पुराणम् दश लक्षणम् ।
प्रोक्तम् भगवता प्राह, प्रीतः पुत्राय भूत कृत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मै | ३. | अपने | प्रोक्तम् | ६. | कहे गये |
| इदम् | ६. | इस | भगवता | ५. | भगवान् के द्वारा |
| भागवतम् | १०. | श्री मद्भागवत | प्राह | १२. | उपदेश दिया |
| पुराणम् | ११. | महापुराण का | प्रीतः | २. | प्रसन्न होकर (उस समय) |
| दश | ७. | दश | पुत्राय | ४. | पुत्र नारद को |
| लक्षणम् । | ८. | लक्षणों वाले | भूतकृत् ॥ | १. | सृष्टि के रचयिता ब्रह्माजी ने |

श्लोकार्थ—सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी ने प्रसन्न होकर उस समय अपने पुत्र नारद को भगवान् के द्वारा कहे गये दश लक्षणों वाले इस श्रीमद्भागवत महापुराण का उपदेश दिया था।

# चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

नारदः प्राह मुनये सरस्वत्यास्तटे नृप ।
ध्यायते ब्रह्म परमं व्यासायामिततेजसे ॥४४॥

पदच्छेद—

नारदः प्राह मुनये, सरस्वत्याः तटे नृप ।
ध्यायते ब्रह्म परमम्, व्यासाय अमित तेजसे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नारदः | २. | देवर्षि नारद ने | ध्यायते | ७. | ध्यान करते हुये (अतः) |
| प्राह | १२. | सुनाया था | ब्रह्म | ६. | परमात्मा का |
| मुनये | ११. | मुनि को (वह भागवत) | परमम् | ५. | परात्पर |
| सरस्वत्याः | ३. | सरस्वती नदी के | व्यासाय | १०. | वेद व्यास |
| तटे | ४. | तट पर | अमित | ८. | परम |
| नृप । | १. | हे राजन् ! | तेजसे ॥ | ९. | तेजस्वी |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! देवर्षि नारद ने सरस्वती नदी के तट पर परात्पर परमात्मा का ध्यान करते हुये अतः परम तेजस्वी वेद व्यास मुनि को वह भागवत सुनाया था।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

यदुताहं त्वया पृष्टो वैराजात् पुरुषादिदम् ।
यथाऽऽसीत्तदुपाख्यास्ये प्रश्नानन्यांश्च कृत्स्नशः ।।४५।।

पदच्छेद—

यद् उत अहम् त्वया पृष्टः, वैराजात् पुरुषात् इदम् ।
यथा आसीत् तद् उपाख्यास्ये, प्रश्नान् अन्यान् च कृत्स्नशः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | १. | जैसा | यथा | ७. | जिस प्रकार |
| उत | २. | कि | आसीत् | १०. | उत्पन्न हुआ है |
| अहम् | ४. | मुझसे | तद् | ११. | उसे |
| त्वया | ३. | आपने | उपाख्यास्ये | १६. | बताऊँगा |
| पृष्टः | ५. | पूछा है | प्रश्नान् | १४. | प्रश्नों को (भी) |
| वैराजात् | ८. | विराट् | अन्यान् | १३. | दूसरे |
| पुरुषात् | ९. | पुरुष से | च | १२. | और |
| इदम् । | ६. | यह जगत् | कृत्स्नशः ।। | १५. | पूरी तरह से |

श्लोकार्थ---जैसा कि आपने मुझसे पूछा है, यह जगत् जिस प्रकार विराट्-पुरुष से उत्पन्न हुआ है, उसे और दूसरे प्रश्नों को भी पूरी तरह से बताऊँगा ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वितीयस्कन्धे नवमः अध्यायः ।।९।।
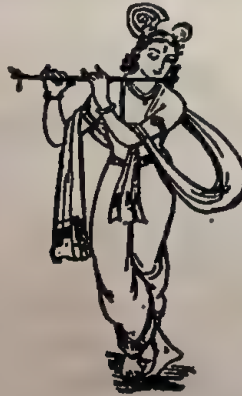
ॐ श्रीगणेशाय नमः

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## द्वितीयः स्कन्धः

### अथ दशमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणमूतयः ।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ॥१॥

पदच्छेद—

अत्र सर्गः विसर्गः च, स्थानम् पोषणम् ऊतयः ।
मन्वन्तर ईश अनुकथा, निरोधः मुक्तिः आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अत्र | १. | इस भगावत पुराण में | मन्वन्तर | ८. | मन्वन्तर |
| सर्गः | २. | सर्ग | ईश | ९. | ईश |
| विसर्गः | ३. | विसर्ग | अनुकथा | १०. | कथा |
| च | ४. | और | निरोधः | ११. | निरोध |
| स्थानम् | ५. | स्थान | मुक्तिः | १२. | मुक्ति (और) |
| पोषणम् | ६. | पोषण | आश्रयः ॥ | १३. | आश्रय (इन दस विषयों का वर्णन है |
| ऊतयः । | ७. | ऊती | | | |

श्लोकार्थ—इस भागवत पुराण में सर्ग, विसर्ग और स्थान, पोषण, ऊती, मन्वन्तर, ईश कथा, निरोध, मुक्ति और आश्रय; इन दस विषयों का वर्णन है ।

## द्वितीयः श्लोकः

दशमस्य विशुद्ध्यर्थं नवानामिह लक्षणम् ।
वर्णयन्ति महात्मानः श्रुतेनार्थेन चाञ्जसा ॥२॥

पदच्छेद—

दशमस्य विशुद्धि अर्थम्, नवानाम् इह लक्षणम् ।
वर्णयन्ति महात्मानः, श्रुतेन अर्थेन च अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दशमस्य | २. | दसवें आश्रय तत्त्व की | वर्णयन्ति | १२. | वर्णन किया है |
| विशुद्धि | ३. | प्राप्ति के | महात्मानः | १ | महात्माओं ने |
| अर्थम् | ४. | लिये | श्रुतेन | ६. | श्रुतियों से |
| नवानाम् | ९. | नौ तत्त्वों के | अर्थेन | ७. | उनके तात्पर्य से |
| इह | ५. | इस पुराण में | च | ८. | और (अपने अनुभव से) |
| लक्षणम् । | १०. | स्वरूप का | अञ्जसा ॥ | ११. | सुगमता पूर्वक |

श्लोकार्थ—महात्माओं ने दशवें आश्रय तत्त्व की प्राप्ति के लिये इस पुराण में श्रुतियों से, उनके तात्पर्य से और अपने अनुभव से नौ तत्त्वों के स्वरूप का सुगमता पूर्वक वर्णन किया है ।

# तृतीयः श्लोकः

भूतमात्रेन्द्रियधियां जन्म सर्ग उदाहृतः ।
ब्रह्मणो गुणवैषम्याद् विसर्गः पौरुषः स्मृतः ।।३।।

पदच्छेद—

भूत मात्रा इन्द्रिय धियाम्, जन्म सर्गः उदाहृतः ।
ब्रह्मणः गुण वैषम्याद्, विसर्गः पौरुषः स्मृतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूत | ४. | आकाशादि पञ्च महाभूत | ब्रह्मणः | १. | परमात्मा की प्रेरणा से |
| मात्रा | ५. | शब्दादि पञ्च तन्मात्रायें | गुण | २. | सत्त्वादि गुणों में |
| इन्द्रिय | ६. | इन्द्रिय, अहंकार (और) | वैषम्याद् | ३. | परिवर्तन के कारण |
| धियाम् | ७. | महत्तत्त्वों की | विसर्गः | १२. | विसर्ग |
| जन्म | ८. | उत्पत्ति को | पौरुषः | ११. | विराट् पुरुष से उत्पन्न ब्रह्मा की सृष्टि को |
| सर्गः | ९. | सर्ग | | | |
| उदाहृतः । | १०. | कहते हैं (तथा) | स्मृतः ।। | १३. | कहा गया है |

श्लोकार्थ—परमात्मा की प्रेरणा से सत्त्वादि गुणों में परिवर्तन के कारण आकाशादि पञ्चमहाभूत, शब्दादि पञ्च तन्मात्रायें, इन्द्रिय, अहंकार और महत्तत्त्वों की उत्पत्ति को सर्ग कहते हैं तथा विराट् पुरुष से उत्पन्न ब्रह्मा की सृष्टि को विसर्ग कहा गया है ।

# चतुर्थः श्लोकः

स्थितिर्वैकुण्ठविजयः पोषणं तदनुग्रहः ।
मन्वन्तराणि सद्धर्म ऊतयः कर्मवासनाः ।।४।।

पदच्छेद—

स्थितिः वैकुण्ठ विजयः, पोषणम् तद् अनुग्रहः ।
मन्वन्तराणि सत् धर्मः, ऊतयः कर्म वासनाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्थितिः | ३. | स्थान कहते हैं | मन्वन्तराणि | ९. | मन्वन्तर कहा गया है |
| वैकुण्ठ | १. | श्री हरि की | सत् | ७. | मन्वन्तर के अधिपतियों की भगवद् भक्ति और |
| विजयः | २. | श्रेष्ठता को | | | |
| पोषणम् | ६. | पोषण है | धर्मः | ८. | प्रजा पालन को |
| तद् | ४. | (जीवों पर) उनकी | ऊतयः | १२. | ऊती नाम से कहे जाते हैं |
| अनुग्रहः । | ५. | कृपा ही | कर्म | ११. | जीवों के कर्म |
| | | | वासनाः ।। | १०. | बन्धन में डालने वाले |

श्लोकार्थ—श्री हरि की श्रेष्ठता को स्थान कहते हैं । जीवों पर उनकी कृपा ही पोषण है । मन्वन्तर के अधिपतियों की भगवद् भक्ति और प्रजा पालन को मन्वन्तर कहा गया है । बन्धन में डालने वाले जीवों के कर्म ऊती नाम से कहे जाते हैं ।

## पञ्चमः श्लोकः

अवतारानुचरितं हरेश्चास्यानुवर्तिनाम् ।
सतामीशकथाः प्रोक्ता नानाख्यानोपबृंहिताः ॥५॥

पदच्छेद—

अवतार अनुचरितम्, हरेः च अस्य अनुवर्तिनाम् ।
सताम् ईश कथाः प्रोक्ताः, नाना आख्यान उपबृंहिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अवतार | २. | अवतारों की | सताम् | १०. | भक्तों की गाथायें |
| अनुचरितम् | ३. | लीलायें | ईश कथाः | ११. | ईश कथा |
| हरेः | १. | भगवान् श्री हरि के | प्रोक्ताः | १२. | कही गयी हैं |
| च | ४. | तथा | नाना | ५. | अनेक |
| अस्य | ८. | उनके | आख्यान | ६. | आख्यानों से |
| अनुवर्तिनाम् । | ९. | प्रेमी | उपबृंहिताः ॥ | ७. | युक्त |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के अवतारों की लीलायें तथा अनेक आख्यानों से युक्त, उनके प्रेमी भक्तों की गाथायें 'ईश कथा' कही गयी हैं ।

## षष्ठः श्लोकः

निरोधोऽस्यानुशयनमात्मनः सह शक्तिभिः ।
मुक्तिर्हित्वान्यथारूपं स्वरूपेण व्यवस्थितिः ॥६॥

पदच्छेद—

निरोधः अस्य अनुशयनम्, आत्मनः सह शक्तिभिः ।
मुक्तिः हित्वा अन्यथा रूपम्, स्व रूपेण व्यवस्थितिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निरोधः | ६. | निरोध कहा गया है | मुक्तिः | १२. | मुक्ति है |
| अस्य | ४. | इस परमात्मा का | हित्वा | ९. | छोड़कर (जीव का) |
| अनुशयनम् | ५. | योग निद्रा में शयन | अन्यथा | ७. | देहादि अनात्म |
| आत्मनः | १. | अपनी | रूपम् | ८. | भाव को |
| सह | ३. | साथ | स्व रूपेण | १०. | अपने रूप में |
| शक्तिभिः । | २. | शक्तियों के | व्यवस्थितिः ॥ | ११. | स्थित होना ही |

श्लोकार्थ—अपनी शक्तियों के साथ इस परमात्मा का योग निद्रा में शयन निरोध कहा गया है । देहादि अनात्म भाव को छोड़कर जीव का अपने रूप में स्थित होना ही मुक्ति है ।

## सप्तमः श्लोकः

आभासश्च निरोधश्च यतश्चाध्यवसीयते ।
स आश्रयः परं ब्रह्म परमात्मेति शब्द्यते ॥७॥

पदच्छेद—

आभासः च निरोधः च, यतः च अध्यवसीयते ।
सः आश्रयः परम् ब्रह्म, परमात्मा इति शब्द्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आभासः | २. | उत्पत्ति | सः | ६. | वह |
| च | ३. | और | आश्रयः | १०. | आश्रय है (जिसे) |
| निरोधः | ४. | प्रलय | परम् | ७. | परम |
| च | ९. | ही | ब्रह्म | ८. | ब्रह्म |
| यतः च | १. | जिस परमात्मा से | परमात्मा | ११. | परमात्मा |
| अध्यवसीयते । | ५. | प्रकाशित होते हैं | इति | १२. | इस नाम से |
| | | | शब्द्यते ॥ | १३ | कहा जाता है |

श्लोकार्थ जिस परमात्मा से उत्पत्ति और प्रलय प्रकाशित होते हैं, वह परमं ब्रह्म ही आश्रय है, जिसे परमात्मा इस नाम से कहा जाता है ।

## अष्टमः श्लोकः

योऽध्यात्मिकोऽयं पुरुषः सोऽसावेवाधिदैविकः ।
यस्तत्रोभयविच्छेदः पुरुषो ह्याधिभौतिकः ॥८॥

पदच्छेद—

यः अध्यात्मिकः अयम् पुरुषः, सः असौ एव आधिदैविकः ।
यः तत्र उभय विच्छेदः, पुरुषः हि आधिभौतिकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जो | यः | ९. | जो |
| अध्यात्मिकः | ३. | इन्द्रियाभिमानी | तत्र | ८. | उनमें |
| अयम् | २. | यह | उभय | १३. | (उन) दोनों को |
| पुरुषः | ४. | जीव है | विच्छेदः | १४. | अलग-अलग करता है |
| सः असौ | ५. | वह | पुरुषः | ११. | दृश्य देह है |
| एव | ६. | ही (इन्द्रिय) | हि | १२. | वही |
| आधिदैविकः । | ७. | अधिष्ठातृ देवता सूर्यादि के रूप में है | आधिभौतिकः ॥ | १०. | नेत्र आदि से युक्त |

श्लोकार्थ— जो यह इन्द्रियाभिमानी जीव है, वहीं इन्द्रिय-अधिष्ठातृ देवता सूर्यादि के रूप में है । उनमें जो नेत्र आदि से युक्त दृश्य देह है, वही उन दोनों को अलग-अलग करता है ।

## नवमः श्लोकः

एकमेकतराभावे यदा नोपलभामहे ।
त्रितयं तत्र यो वेद स आत्मा स्वाश्रयाश्रयः ॥६॥

पदच्छेद—

एकम् एकतर अभावे, यदा न उपलभामहे ।
त्रितयम् तत्र यः वेद, सः आत्मा स्व आश्रय आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एकम् | ४. | एक दूसरे की | तत्र | ७ | (किन्तु) उनमें से |
| एकतर | २. | किसी एक का | यः | ८. | जो |
| अभावे | ३. | अभाव होने पर | वेद | १०. | जानता है |
| यदा | १. | जब कि (उन तीनों में से) | सः | ११ | वही |
| न | ५. | नहीं | आत्मा | १४. | परमात्मा है |
| उपलभामहे | ६. | उपलब्धि होती है | स्व आश्रय | १२. | जीवों के अधिष्ठान का |
| त्रितयम् । | ६. | तीनों को | आश्रयः ॥ | १३. | आश्रय तत्त्व |

श्लोकार्थ—जब कि उन तीनों में से किसी एक का अभाव होने पर एक दूसरे की उपलब्धि नहीं होती है, किन्तु उनमें से जो तीनों को जानता है, वही जीवों के अधिष्ठान का आश्रय-तत्त्व परमात्मा है।

## दशमः श्लोकः

पुरुषोऽण्डं विनिर्भिद्य यदासौ स विनिर्गतः ।
आत्मनोऽयनमन्विच्छन्नपोऽस्राक्षीच्छुचिः शुचीः ॥१०॥

पदच्छेद—

पुरुषः अण्डम् विनिर्भिद्य, यदा असौ सः विनिर्गतः ।
आत्मनः अयनम् अन्विच्छन्, अपः अस्राक्षीत् शुचिः शुचीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरुषः | ३. | विराट् पुरुष | आत्मनः | ६. | अपने |
| अण्डम् | ४. | ब्रह्माण्ड का | अयनम् | १०. | निवास स्थान की |
| विनिर्भिद्य | ५. | भेदन करके | अन्विच्छन् | ११. | इच्छा की (और) |
| यदा | १. | जब | अपः | १३ | जल की |
| असौ | २. | वह | अस्राक्षीत् | १४. | सृष्टि की |
| सः | ७. | उस | शुचिः | ८. | पवित्र पुरुष ने |
| विनिर्गतः । | ६. | बाहर आया (तब) | शुचीः ॥ | १२. | शुद्ध |

श्लोकार्थ—जब वह विराट् पुरुष ब्रह्माण्ड का भेदन करके बाहर आया तब उस पवित्र पुरुष ने अपने निवास स्थान की इच्छा की और शुद्ध जल की सृष्टि की ।

# एकादशः श्लोकः

तास्ववात्सीत् स्वसृष्टासु सहस्रपरिवत्सरान् ।
तेन नारायणो नाम यदापः पुरुषोद्भवाः ।।११।।

पदच्छेद—

तासु अवात्सीत् स्व सृष्टासु, सहस्र परिवत्सरान् ।
तेन नारायणः नाम, यद् आपः पुरुष उद्भवाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तासु | ३. | उस जल में | तेन | ७. | इसलिये (उसका) |
| अवात्सीत् | ६. | निवास किया | नारायणः | ९. | नारायण (पड़ा) |
| स्व | १. | (विराट् पुरुष ने) अपने द्वारा | नाम | ८. | नाम |
| सृष्टासु | २. | निर्मित | यद् | १०. | क्योंकि |
| सहस्र | ४ | एक हजार | आपः | १३. | जल को (नार कहते हैं) |
| परिवत्सरान् । | ५. | वर्षों तक | पुरुष | ११. | विराट् पुरुष से |
| | | | उद्भवाः ।। | १२. | उत्पन्न |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष ने अपने द्वारा निर्मित उस जल में एक हजार वर्षों तक निवास किया । इसलिये उसका नाम नारायण पड़ा; क्योंकि विराट् पुरुष से उत्पन्न जल को 'नार' कहते हैं ।

# द्वादशः श्लोकः

द्रव्यं कर्म च कालश्च स्वभावो जीव एव च ।
यदनुग्रहतः सन्ति न सन्ति यदुपेक्षया ।।१२।।

पदच्छेद—

द्रव्यम् कर्म च कालः च, स्वभावः जीवः एव च ।
यद् अनुग्रहतः सन्ति, न सन्ति यद् उपेक्षया ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्रव्यम् | ३. | द्रव्य | च । | १२. | तथा |
| कर्म | ४. | कर्म | यद् | १. | जिस (नारायण) की |
| च | ५. | और | अनुग्रहतः | २. | कृपा से |
| कालः | ६. | काल | सन्ति | ११. | सत्तावान् रहते हैं |
| च | ७. | तथा | न | १५. | नहीं |
| स्वभावः | ८. | स्वभाव | सन्ति | १६. | (इनकी) स्थिति रहती है |
| जीवः | १०. | जीव | यद् | १३. | जिसकी |
| एव | ९ | और | उपेक्षया ।। | १४. | उपेक्षा से |

श्लोकार्थ—जिस नारायण की कृपा से द्रव्य, कर्म और काल तथा स्वभाव और जीव सत्तावान् रहते हैं, तथा जिसकी उपेक्षा से इनकी स्थिति ही नहीं रहती है ।

## त्रयोदश: श्लोक:

एको नानात्वमन्विच्छन् योगतल्पात् समुत्थितः ।
वीर्यं हिरण्मयं देवो मायया व्यसृजत् त्रिधा ॥१३॥

पदच्छेद—

एकः नानात्वम् अन्विच्छन्, योग तल्पात् समुत्थितः ।
वीर्यम् हिरण्मयम् देवः, मायया व्यसृजत् त्रिधा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एकः | ४. | अद्वितीय | वीर्यम् | ९. | वीर्य को |
| नानात्वम् | ६. | अनेक होने की | हिरण्मयम् | ८. | अपने सुवर्णमय |
| अन्विच्छन् | ७. | इच्छा से | देवः | ५. | भगवान् नारायण ने |
| योग | १. | योग | मायया | १०. | माया के द्वारा |
| तल्पात् | २. | निद्रा से | व्यसृजत् | १२. | विभक्त किया |
| समुत्थितः । | ३. | उठकर | त्रिधा ॥ | ११. | तीन भागों में |

श्लोकार्थ—योग निद्रा से उठकर अद्वितीय भगवान् नारायण ने अनेक होने की इच्छा से अपने सुवर्णमय वीर्य को माया के द्वारा तीन भागों में विभक्त किया ।

## चतुर्दश: श्लोक:

अधिदैवमथाध्यात्ममधिभूतमिति प्रभुः ।
यथैकं पौरुषं वीर्यं त्रिधाभिद्यत तच्छृणु ॥१४॥

पदच्छेद—

अधिदैवम् अथ अध्यात्मम्, अधिभूतम् इति प्रभुः ।
यथा एकम् पौरुषम् वीर्यम्, त्रिधा अभिद्यत तद् शृणु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अधिदैवम् | १. | (उन भागों को) अधिदैव | एकम् | ८. | एक |
| अथ | ३. | और | पौरुषम् | ७. | विराट् पुरुष के |
| अध्यात्मम् | २. | अध्यात्म | वीर्यम् | ९. | वीर्य को |
| अधिभूतम् | ४. | अधिभूत | त्रिधा | ११. | तीन भागों में |
| इति | ५. | नाम से (कहते हैं) | अभिद्यत | १२. | विभक्त किया |
| प्रभुः। | ६. | भगवान् नारायण ने | तद् | १३. | उसे |
| यथा | १०. | जिस प्रकार | शृणु ॥ | १४. | सुनो |

श्लोकार्थ— उन तीनों भागों को अधिदैव, अध्यात्म, और अधिभूत नाम से कहते हैं । हे परीक्षित् ! भगवान् नारायण ने विराट् पुरुष के एक वीर्य को जिस प्रकार तीन भागों में विभक्त किया, उसे सुनो ।

# पञ्चदशः श्लोकः

अन्तःशरीर आकाशात् पुरुषस्य विचेष्टतः ।
ओजः सहो बलं जज्ञे ततः प्राणो महानसुः ॥१५॥

पदच्छेद—

अन्तः शरीरे आकाशात्, पुरुषस्य विचेष्टतः ।
ओजः सहः बलम् जज्ञे, ततः प्राणः महान् असुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अन्तः | ४. अन्दर (विद्यमान) | सहः | ७. मनोबल (और) |
| शरीरे | ३. (उसके) शरीर के | बलम् | ८. शारीरिक बल की |
| आकाशात् | ५. आकाश तत्त्व से | जज्ञे | ९. उत्पत्ति हुई |
| पुरुषस्य | १. विराट् पुरुष के | ततः | १०. तदनन्तर |
| विचेष्टतः । | २. हिलने-डुलने पर | प्राणः | १३. प्राण उत्पन्न हुआ |
| ओजः | ६. इन्द्रिय बल | महान् | ११. सबसे |
| | | असुः ॥ | १२. शक्तिशाली |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के हिलने डुलने पर उसके शरीर के अन्दर विद्यमान आकाश तत्त्व से इन्द्रिय बल, मनोबल और शारीरिक बल की उत्पत्ति हुई । तदनन्तर सबसे शक्तिशाली प्राण उत्पन्न हुआ ।

# षोडशः श्लोकः

अनुप्राणन्ति यं प्राणाः, प्राणन्तं सर्वजन्तुषु ।
अपानन्तमपानन्ति, नरदेवमिवानुगाः ॥१६॥

पदच्छेद—

अनुप्राणन्ति यम् प्राणाः, प्राणन्तम् सर्व जन्तुषु ।
अपानन्तम् अपानन्ति, नरदेवम् इव अनुगाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अनुप्राणन्ति | ९. प्रबल होती हैं (और) | अपानन्तम् | १०. सुस्त होने पर |
| यम् | ७. जिस (प्राण) के | अपानन्ति | ११. सुस्त पड़ जाती हैं |
| प्राणाः | ६. इन्द्रियाँ | नरदेवम् | ३. राजा के पीछे-पीछे चलते हैं |
| प्राणन्तम् | ८. प्रबल होने पर | इव | १. जैसे |
| सर्व | ४. (उसी प्रकार) सभी | अनुगाः ॥ | २. सेवक |
| जन्तुषु । | ५. जीवों में विद्यमान | | |

श्लोकार्थ— जैसे सेवक राजा के पीछे-पीछे चलते हैं, उसी प्रकार सभी जीवों में विद्यमान इन्द्रियां जिस प्राण के प्रबल होने पर प्रबल होती हैं और सुस्त होने पर सुस्त पड़ जाती हैं ।

## सप्तदशः श्लोकः

प्राणेन क्षिपता क्षुत् तृडन्तरा जायते प्रभोः ।
पिपासतो जक्षतश्च प्राङ्मुखं निरभिद्यत ॥१७॥

पदच्छेद—

प्राणेन क्षिपता क्षुत् तृड्, अन्तरा जायते प्रभोः ।
पिपासतः जक्षतः च, प्राक् मुखम् निरभिद्यत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्राणेन | १. | प्राण में | पिपासतः | १०. | पीने की इच्छा होने पर |
| क्षिपता | २. | तेज गति होने पर | जक्षतः | ८. | खाने |
| क्षुत् | ५. | भूख और | च | ९. | और |
| तृड् | ६. | प्यास का | प्राक् | ११. | पहले |
| अन्तरा | ४. | अन्दर | मुखम् | १२. | मुख |
| जायते | ७. | अनुभव हुआ (तथा) | निरभिद्यत ॥ | १३. | प्रकट हुआ |
| प्रभोः । | ३. | विराट् पुरुष के | | | |

श्लोकार्थः— प्राण में तेज गति होने पर विराट् पुरुष के अन्दर भूख और प्यास का अनुभव हुआ तथा खाने और पीने की इच्छा होने पर पहले मुख प्रकट हुआ ।

## अष्टादशः श्लोकः

मुखतस्तालु निर्भिन्नं जिह्वा तत्रोपजायते ।
ततो नाना रसो जज्ञे जिह्वया योऽधिगम्यते ॥१८॥

पदच्छेद—

मुखतः तालु निर्भिन्नम्, जिह्वा तत्र उपजायते ।
ततः नाना रसः जज्ञे, जिह्वया यः अधिगम्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुखतः | १. | (विराट् पुरुष के) मुख से | ततः | ७. | तदनन्तर |
| तालु | २. | तालु | नाना | ८. | अनेक |
| निर्भिन्नम् | ३. | उत्पन्न हुआ और | रसः | ९. | रसों की |
| जिह्वा | ५. | जीभ | जज्ञे | १०. | उत्पत्ति हुई |
| तत्र | ४. | उसमें | जिह्वया | १२. | जीभ के |
| उपजायते । | ६. | उत्पन्न हुई | यः | ११. | जो |
| | | | अधिगम्यते ॥ | १३. | विषय हैं |

श्लोकार्थ :—विराट् पुरुष के मुख से तालु उत्पन्न हुआ और उसमें जीभ उत्पन्न हुई । तदनन्तर अनेक रसों की उत्पत्ति हुई, जो जीभ के विषय हैं ।

# एकोनविंशः श्लोकः

विवक्षोर्मुखतो भूम्नो वह्निर्वाग् व्याहृतं तयोः।
जले वै तस्य सुचिरं निरोधः समजायत ॥१९॥

पदच्छेद—

विवक्षोः मुखतः भूम्नः, वह्निः वाक् व्याहृतम् तयोः।
जले वै तस्य सुचिरम्, निरोधः समजायत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विवक्षोः | १. | बोलने की इच्छा होने पर | जले | १०. | जल में |
| मुखतः | ३. | मुख से | वै | ११. | ही |
| भूम्नः | २. | विराट् पुरुष के | तस्य | ८. | (तदनन्तर) उनकी |
| वह्निः | ५. | अग्नि (और) | सुचिरम् | ९. | बहुत समय तक |
| वाक् | ४. | वाणी (उसके अधिदेवता) | निरोधः | १२. | स्थिति |
| व्याहृतम् | ७. | बोलने की शक्ति उत्पन्न हुई | समजायत ॥ | १३. | बनी रही |
| तयोः। | ६. | उन दोनों के | | | |

श्लोकार्थ—बोलने की इच्छा होने पर विराट् पुरुष के मुख से वाणी, उसके अधिदेवता अग्नि और उन दोनों के बोलने की क्रिया-शक्ति उत्पन्न हुई। तदनन्तर उनकी बहुत समय तक जल में ही स्थिति बनी रही।

# विंशः श्लोकः

नासिके निरभिद्येतां, दोधूयति नभस्वति।
तत्र वायुर्गन्धवहो, घ्राणो नसि जिघृक्षतः ॥२०॥

पदच्छेद—

नासिके निरभिद्येताम्, दोधूयति नभस्वति।
तत्र वायुः गन्धवहः, घ्राणः नसि जिघृक्षतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नासिके | ३. | नासाछिद्र | वायुः | १०. | (अधिदेवता) वायु (उत्पन्न हुये |
| निरभिद्येताम् | ४. | प्रकट हुये (उनकी) | गन्धवहः | ९. | गन्ध को फैलाने वाले |
| दोधूयति | २. | वेग से | घ्राणः | ८. | घ्राणेन्द्रिय (और) |
| नभस्वति। | १. | (विराट् पुरुष के) श्वास के | नसि | ७. | नासाछिद्र में |
| तत्र | ६. | उस | जिघृक्षतः ॥ | ५. | सूंघने की इच्छा होने पर |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के श्वास के वेग से नासाछिद्र प्रकट हुए। उनकी सूंघने की इच्छा होने पर उस नासाछिद्र में घ्राणेन्द्रिय और गन्ध को फैलाने वाले अधिदेवता वायु उत्पन्न हुए।

## एकविंशः श्लोकः

यदाऽऽत्मनि निरालोकमात्मानं च दिदृक्षतः ।
र्विभिन्ने ह्यक्षिणी तस्य ज्योतिश्चक्षुर्गुणग्रहः ॥२१॥

पदच्छेद—

यदा आत्मनि निरालोकम्, आत्मानम् च दिदृक्षतः ।
निर्भिन्ने हि अक्षिणी तस्य, ज्योतिः चक्षुः गुण ग्रहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब | हि | १०. | और |
| आत्मनि | २. | (विराट् पुरुष के) शरीर में | अक्षिणी | ८. | आँखें |
| निरालोकम् | ३. | प्रकाश नहीं था (तब) | तस्य | ७. | उसकी |
| आत्मानम् | ४. | अपने को | ज्योतिः | ९. | अधिदेवता सूर्य |
| च | ५. | और (दूसरी वस्तु को) | चक्षुः | ११. | नेत्रेन्द्रिय |
| दिदृक्षतः । | ६. | देखने की इच्छा होने पर | गुण | १३. | रूप का |
| निर्भिन्ने | १२. | प्रकट हुई (जिससे) | ग्रहः ॥ | १४. | ज्ञान होता है |

श्लोकार्थ :—जब विराट् पुरुष के शरीर में प्रकाश नहीं था, तब अपने को और दूसरी वस्तुओं को देखने की इच्छा होने पर उसकी आँखें, अधिदेवता सूर्य और नेत्रेन्द्रिय प्रकट हुई; जिससे रूप का ज्ञान होता है।

## द्वाविंशः श्लोकः

बोध्यमानस्य ऋषिभिरात्मनस्तज्जिघृक्षतः ।
कर्णौ च निरभिद्येतां दिशः श्रोत्रं गुणग्रहः ॥२२॥

पदच्छेद—

बोध्यमानस्य ऋषिभिः, आत्मनः तद् जिघृक्षतः ।
कर्णौ च निरभिद्येताम्, दिशः श्रोत्रम् गुण ग्रहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बोध्यमानस्य | २. | जगाये जाने पर | च | ८. | और |
| ऋषिभिः | १. | वेदरूपी ऋषियों से | निरभिद्येताम् | १०. | उत्पन्न हुई (जिससे) |
| आत्मनः | ३. | विराट् पुरुष को स्वयं | दिशः | ७. | अधिदेवता दिशायें |
| तद् | ४. | वह | श्रोत्रम् | ९. | श्रोत्रेन्द्रिय |
| जिघृक्षतः । | ५. | सुनने की इच्छा हुई (तब) | गुण | ११. | शब्द का |
| कर्णौ | ६. | उसके दोनों कान | ग्रहः ॥ | १२. | श्रवण होता है |

श्लोकार्थ :—वेदरूप ऋषियों से जगाये जाने पर विराट् पुरुष को स्वयम् वह सुनने की इच्छा हुई, तब उसके दोनों कान, अधिदेवता दिशायें और श्रोत्रेन्द्रिय उत्पन्न हुई; जिससे शब्द का श्रवण होता है।

# त्रयोविंशः श्लोकः

वस्तुनो मृदुकाठिन्यलघुगुर्वोष्णशीतताम् ।
जिघृक्षतस्त्वङ्निर्भिन्ना तस्यां रोममहीरुहाः ।
तत्र चान्तर्बहिर्वातस्त्वचा लब्धगुणो वृतः ॥२३॥

पदच्छेद— वस्तुनः मृदु काठिन्य, लघु गुरु उष्ण शीतताम् ।
जिघृक्षतः त्वक् निर्भिन्ना, तस्याम् रोम महीरुहाः ।
तत्र च अन्तः बहिः वातः, त्वचा लब्ध गुणः वृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वस्तुनः, मृदु | १. | वस्तुओं की, कोमलता | महीरुहाः । | ८. | पृथ्वी पर वृक्षों के समान |
| काठिन्य, लघु | २. | कठोरता, हल्कापन | तत्र | १३. | उस देह के |
| गुरु, उष्ण | ३. | भारीपन, गर्मी (और) | च | १५. | और |
| शीतताम् । | ४. | सर्दी | अन्तः | १४. | अन्दर |
| जिघृक्षतः | ५. | जानने की इच्छा होने पर | बहिः, वातः | १६. | बाहर, वायु देवता (प्रकट हुये) |
| त्वक् | ६. | (उसके शरीर में) चमड़ी | त्वचा | ११. | चमड़ी से |
| निर्भिन्ना | ७. | उत्पन्न हुई | लब्ध | १८. | ज्ञान होता है |
| तस्याम् | ९. | उस चमड़ी में | गुणः | १७. | (जिससे) स्पर्श गुण का |
| रोम | १०. | रोयें उग आये (तथा) | वृतः ॥ | १२. | लिपटी हुई |

श्लोकार्थ—वस्तुओं की कोमलता, कठोरता, हल्कापन, भारीपन, गर्मी और सर्दी जानने की इच्छा होने पर उस विराट् पुरुष के शरीर में चमड़ी उत्पन्न हुई । पृथ्वी पर वृक्षों के समान उस चमड़ी में रोयें उग आये तथा चमड़ी से लिपटी हुई उस देह के अन्दर और बाहर वायु देवता प्रकट हुये; जिससे स्पर्श गुण का ज्ञान होता है ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

हस्तौ रुरुहतुस्तस्य नानाकर्मचिकीर्षया ।
तयोस्तु बलमिन्द्रश्च आदानमुभयाश्रयम् ॥२४॥

पदच्छेद— हस्तौ रुरुहतुः तस्य, नाना कर्म चिकीर्षया ।
तयोः तु बलम् इन्द्रः च, आदानम् उभय आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हस्तौ | ५. | दोनों हाथ | तु | ७. | तथा |
| रुरुहतुः | ६. | उग आये | बलम् | ९. | ग्रहण करने की शक्ति |
| तस्य | ४. | उस विराट् पुरुष के | इन्द्रः | १०. | इन्द्र देवता |
| नाना | १. | अनेक प्रकार के | च | ११. | और |
| कर्म | २. | कर्म | आदानम् | १४. | लेने-देने की क्रिया शक्ति हुई |
| चिकीर्षया । | ३. | करने की इच्छा से | उभय | १२. | दोनों के |
| तयोः | ८. | उन दोनों में | आश्रयम् ॥ | १३. | सहारे |

श्लोकार्थ—अनेक प्रकार के कर्म करने की इच्छा से उस विराट् पुरुष के दोनों हाथ उग आये तथा उन दोनों में ग्रहण करने की शक्ति इन्द्र देवता और दोनों के सहारे लेने-देने की क्रिया शक्ति उत्पन्न हुई ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

गतिं जिगीषतः पादौ रुरुहातेऽभिकामिकाम् ।
पद्भ्यां यज्ञः स्वयं हव्यं कर्मभिः क्रियते नृभिः ॥२५॥

पदच्छेद—

गतिम् जिगीषतः पादौ, रुरुहाते अभिकामिकाम् ।
पद्भ्याम् यज्ञः स्वयम् हव्यम्, कर्मभिः क्रियते नृभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| गतिम् | २. जाने की | | यज्ञः | ८. यज्ञ पुरुष विष्णु देवता (प्रकट हुये) |
| जिगीषतः | ३. इच्छा होने पर | | स्वयम् | ७. साक्षात् |
| पादौ | ४. दोनों चरण | | हव्यम् | ११. यज्ञ सामग्री |
| रुरुहाते | ५. उत्पन्न हुये | | कर्मभिः | १०. चलकर |
| अभिकामिकाम् । | १. विराट् पुरुष को (अभीष्ट स्थान पर) | | क्रियते | १२. एकत्रित करता है |
| पद्भ्याम् | ६. दोनों चरणों के साथ | | नृभिः ॥ | ९. मनुष्य (जिससे) |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष को अभीष्ट स्थान पर जाने की इच्छा होने पर दोनों चरण उत्पन्न हुये और दोनों चरणों के साथ साक्षात् यज्ञ पुरुष विष्णु देवता प्रकट हुये; मनुष्य जिससे चलकर यज्ञ सामग्री एकत्रित करता है ।

## षड्विंशः श्लोकः

निरभिद्यत शिश्नो वै प्रजानन्दामृतार्थिनः ।
उपस्थ आसीत् कामानां प्रियं तदुभयाश्रयम् ॥२६॥

पदच्छेद—

निरभिद्यत शिश्नः वै, प्रजा आनन्द अमृत अर्थिनः ।
उपस्थः आसीत् कामानाम्, प्रियम् तद् उभय आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| निरभिद्यत | ७. उत्पन्न हुआ | | उपस्थः | ८. (उसमें) जननेन्द्रिय |
| शिश्नः | ६. लिङ्ग | | आसीत् | ९. प्रकट हुई (तथा) |
| वै | ५. विराट् पुरुष में | | कामानाम् | १३. काम |
| प्रजा | १. सन्तान | | प्रियम् | १४. सुख (प्रकट हुआ) |
| आनन्द | २. रति सुख (और) | | तद् | १०. उन |
| अमृत | ३. स्वर्ग की | | उभय | ११. दोनों के |
| अर्थिनः । | ४. कामना से | | आश्रयम् ॥ | १२. सहारे होने वाला |

श्लोकार्थ—सन्तान, रति सुख और स्वर्ग की कामना से विराट् पुरुष में लिङ्ग उत्पन्न हुआ, उसमें जननेन्द्रिय प्रकट हुई तथा उन दोनों के सहारे होने वाला काम सुख प्रकट हुआ ।

## सप्तविंशः श्लोकः

उत्सिसृक्षोर्धातुमलं निरभिद्यत वै गुदम् ।
ततः पायुस्ततो मित्र उत्सर्ग उभयाश्रयः ।।२७।।

पदच्छेद—

उत्सिसृक्षोः धातु मलम्, निरभिद्यत वै गुदम् ।
ततः पायुः ततः मित्रः, उत्सर्गः उभय आश्रयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| उत्सिसृक्षोः | ४. त्याग की इच्छा होने पर | ततः, पायुः | ७. उससे, गुदा इन्द्रिय |
| धातु | २. शरीरिक | ततः | ८. और |
| मलम् | ३. मल के | मित्रः | ९. मित्र देवता |
| निरभिद्यत | ६. उत्पन्न हुआ | उत्सर्गः | १०. उत्पन्न हुये |
| वै | १. उस विराट पुरुष की | उभय | ११. उन दोनों के |
| गुदम् । | ५. गुदाद्वार | आश्रयः ।। | १२. सहारे (मल त्याग की क्रिया होती है ) |

श्लोकार्थ :—उस विराट् पुरुष की शरीरिक मल के त्याग की इच्छा होने पर गुदाद्वार उत्पन्न हुआ, उससे गुदा इन्द्रिय और मित्र देवता उत्पन्न हुये । उन दोनों के सहारे मल-त्याग की क्रिया होती है ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

आसिसृप्सोः पुरः पुर्या नाभिद्वारमपानतः ।
तत्रापानस्ततो मृत्युः पृथक्त्वमुभयाश्रयम् ।।२८।।

पदच्छेद—

आसिसृप्सोः पुरः पुर्याः, नाभिद्वारम् अपानतः ।
तत्र अपानः ततः मृत्युः, पृथक्त्वम् उभय आश्रयम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आसिसृप्सोः | ४. प्रवेश करने की इच्छा होने पर | अपानः | ७. अपान वायु |
| पुरः | ३. दूसरे शरीर में | ततः | ८. और |
| पुर्याः | २. एक शरीर से | मृत्युः | ९. मृत्यु देवता (प्रकट हुये) |
| नाभिद्वारम् | ५. नाभिद्वार (उत्पन्न हुआ) | पृथक्त्वम् | १२. प्राण और अपान का बिछोह |
| अपानतः । | १. (पुरुष को) अपान मार्ग के द्वारा | उभय | १०. उन दोनों के |
| तत्र | ६. उसमें | आश्रयम् ।। | ११. सहारे से |

श्लोकार्थ :—विराट् पुरुष को अपान मार्ग के द्वारा एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करने की इच्छा होने पर नाभिद्वार उत्पन्न हुआ, उसमें अपान वायु और मृत्यु देवता प्रकट हुये । उन दोनों के सहारे से प्राण और अपान का बिछोह होता है ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

आदित्सोरन्नपानानामासन् कुक्ष्यन्त्रनाडयः ।
नद्यः समुद्राश्च तयोस्तुष्टिः पुष्टिस्तदाश्रये ।।२९।।

पदच्छेद—

आदित्सोः अन्न पानानाम्, आसन् कुक्षि अन्त्र नाडयः ।
नद्यः समुद्राः च तयोः, तुष्टिः पुष्टिः तद् आश्रये ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आदित्सोः | ३. | ग्रहण करने की इच्छा होने पर | नद्यः | ८. | नदी |
| | | | समुद्राः | १०. | देवता समुद्र |
| अन्न | १. | (विराट् पुरुष को) अन्न और | च | ९. | और (उनके) |
| पानानाम् | २. | जल | तयोः | १२. | उन दोनों का विषय |
| आसन् | ७. | उत्पन्न हुई | तुष्टिः | १३. | तृप्ति (और) |
| कुक्षि | ४. | कोख | पुष्टिः | १४. | पोषण प्रकट हुये |
| अन्त्र | ५. | आँतें (और) | तद्, आश्रये ।। | ११. | उनके, सहारे |
| नाडयः । | ६. | नाड़ियाँ | | | |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष को अन्न और जल ग्रहण करने की इच्छा होने पर कोख, आँतें और नाड़ियाँ उत्पन्न हुईं। उनके साथ नदी और उनके देवता समुद्र और उनके सहारे उन दोनों का विषय तृप्ति तथा पोषण प्रकट हुये।

# त्रिंशः श्लोकः

निदिध्यासोरात्ममायां हृदयं निरभिद्यत ।
ततो मनस्ततश्चन्द्रः संकल्पः काम एव च ।।३०।।

पदच्छेद—

निदिध्यासोः आत्म मायाम्, हृदयम् निरभिद्यत ।
ततः मनः ततः चन्द्रः, संकल्पः कामः एव च ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निदिध्यासोः | ३. | विचार करने की इच्छा की तब | ततः | ८. | उससे |
| आत्म | १. | (जब उन्होंने) अपनी | चन्द्रः | ९. | अधिदेवता चन्द्र (प्रकट हुये) |
| मायाम् | २. | माया पर | संकल्पः | १०. | संकल्प |
| हृदयम् | ४. | (उनका) हृदय | कामः | १२. | कामना |
| निरभिद्यत । | ५. | उत्पन्न हुआ | एव | १३. | (उसका) कार्य है |
| ततः | ६. | उससे | च ।। | ११. | और |
| मनः | ७. | मन (और) | | | |

श्लोकार्थ—जब उन्होंने अपनी माया पर विचार करने की इच्छा की, तब उनका हृदय उत्पन्न हुआ। उससे मन और उससे अधिदेवता चन्द्रमा प्रकट हुए। संकल्प और कामना उसका कार्य है।

# एकत्रिंशः श्लोकः

त्वक्चर्ममांसरुधिरमेदोमज्जास्थिधातवः ।
भूम्यप्तेजोमयाः सप्त प्राणो व्योमाम्बुवायुभिः ॥३१॥

पदच्छेद—

त्वक् चर्म मांस रुधिर, मेदः मज्जा अस्थि धातवः ।
भूमि अप तेजोमयाः सप्त, प्राणः व्योम अम्बु वायुभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वक् | १. | त्वचा | भूमि | १०. | पृथ्वी |
| चर्म | २. | चमड़ी | अप | ११. | जल (और) |
| मांस | ३. | मांस | तेजोमयाः | १२. | तेज से निर्मित हैं (तथा) |
| रुधिर | ४. | रुधिर | सप्त | ८. | ये सात |
| मेदः | ५. | मेदा | प्राणः | १६. | प्राण (उत्पन्न हुआ है) |
| मज्जा | ६. | वसा | व्योम | १३. | आकाश |
| अस्थि | ७. | हड्डी | अम्बु | १४. | जल (और) |
| धातवः । | ९. | शारीरिक धातुयें | वायुभिः ॥ | १५. | वायु से |

श्लोकार्थ—त्वचा, चमड़ी, मास, रुधिर, मेदा वसा, हड्डी, ये सात शारीरिक धातुयें पृथ्वी, जल और तेज से निर्मित हैं तथा आकाश, जल और वायु से प्राण उत्पन्न हुआ है ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

गुणात्मकानीन्द्रियाणि भूतादिप्रभवा गुणाः ।
मनः सर्वविकारात्मा बुद्धिर्विज्ञानरूपिणी ॥३२॥

पदच्छेद—

गुण आत्मकानि इन्द्रियाणि, भूत आदि प्रभवाः गुणाः ।
मनः सर्व विकार आत्मा, बुद्धिः विज्ञान रूपिणी ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गुण | २. | शब्दादि गुणों को | मनः | ८. | मन |
| आत्मकानि | ३. | ग्रहण करती हैं | सर्व, विकार | ९. | सभी, विकारों का |
| इन्द्रियाणि | १. | श्रोत्रादि सभी इन्द्रियाँ | आत्मा | १०. | कारण है (और) |
| भूत | ५. | पञ्चमहाभूतों का | बुद्धिः | ११. | बुद्धि |
| आदि | ६. | कारण अहंकार से | विज्ञान | १२. | पदार्थों का ज्ञान |
| प्रभवाः | ७. | उत्पन्न हुये हैं | रूपिणी ॥ | १३. | कराने वाली है |
| गुणाः । | ४. | शब्दादि गुण | | | |

श्लोकार्थ—श्रोत्रादि सभी इन्द्रियां शब्दादि गुणों को ग्रहण करती हैं। शब्दादि गुण पञ्च-महाभूतों का कारण अहंकार से उत्पन्न हुये हैं। मन सभी विकारों का कारण है और बुद्धि पदार्थों का ज्ञान कराने वाली है ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

एतद्भगवतो रूपं स्थूलं ते व्याहृतं मया ।
मह्यादिभिश्चावरणैरष्टभिर्बहिरावृतम् ॥३३॥

पदच्छेद—

एतद् भगवतः रूपम्, स्थूलम् ते व्याहृतम् मया ।
मही आदिभिः च आवरणैः, अष्टभिः बहिः आवृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | १. | इस | मही | १०. | पृथ्वी (जल, तेज, वायु, आकाश, अहंकार, बुद्धि और प्रकृति) |
| भगवतः | २. | विराट् भगवान् के | आदिभिः | ११. | इन |
| रूपम् | ४. | रूप को | च | ८. | यह |
| स्थूलम् | ३. | विशाल | आवरणैः | १३. | आवरणों से |
| ते | ६. | तुम्हें | अष्टभिः | १२. | आठ |
| व्याहृतम् | ७. | सुनाया | बहिः | ९. | बाहर से |
| मया । | ५. | मैंने | आवृतम् । | १४. | ढका है |

श्लोकार्थ—इस विराट् भगवान् के विशाल रूप को मैंने तुम्हें सुनाया; यह बाहर से पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, अहंकार, बुद्धि और प्रकृति इन आठ आवरणों से ढका है ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अतः परं सूक्ष्मतममव्यक्तं निर्विशेषणम् ।
अनादिमध्यनिधनं नित्यं वाङ्मनसः परम् ॥३४॥

पदच्छेद—

अतः परम् सूक्ष्मतमम्, अव्यक्तम् निर्विशेषणम् ।
अनादि मध्य निधनम्, नित्यम् वाक् मनसः परम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः | १. | इससे | मध्य | ७. | मध्य (और) |
| परम् | २. | परे (भगवान् का जो) | निधनम् | ८. | अन्त से रहित (तथा) |
| सूक्ष्मतमम् | ३. | अति सूक्ष्म रूप है (वह) | नित्यम् | ९. | तीनों कालों में सत्य है |
| अव्यक्तम् | ४. | नहीं दिखाई देने वाला | वाक् | १०. | वाणी (और) |
| निर्विशेषणम् । | ५. | विशेष धर्मों से हीन | मनसः | ११. | मन से भी |
| अनादि | ६. | आदि | परम् ॥ | १२. | उसका वर्णन नहीं हो सकता |

श्लोकार्थ—इससे परे भगवान् का जो अति सूक्ष्म रूप है, वह नहीं दिखाई देने वाला, विशेष धर्मों से हीन, आदि-मध्य और अन्त से रहित तथा तीनों कालों में सत्य है । वाणी और मन से भी उसका वर्णन नहीं हो सकता है ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अमुनी भगवद्रूपे मया ते अनुवर्णिते ।
उभे अपि न गृह्णन्ति मायासृष्टे विपश्चितः ॥३५॥

पदच्छेद—

अमुनी भगवद् रूपे, मया ते अनुवर्णिते ।
उभे अपि न गृह्णन्ति, माया सृष्टे विपश्चितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अमुनी | ४. | इन दोनों | उभे | १०. | इन दोनों |
| भगवद् | ३. | भगवान् के | अपि | ११. | ही रूपों को |
| रूपे | ५. | रूपों का | न | १२. | नहीं |
| मया | १. | मैंने | गृह्णन्ति | १३. | स्वीकार करते हैं |
| ते | २. | तुम्हें | माया | ८. | माया से |
| अनुवर्णिते । | ६- | वर्णन सुनाया है | सृष्टे | ९. | रचित |
| | | | विपश्चितः ॥ | ७. | विद्वद् जन |

श्लोकार्थ—मैंने तुम्हें भगवान् के इन दोनों ही रूपों का वर्णन सुनाया है । विद्वद् जन माया से रचित इन दोनों ही रूपों को स्वीकार नहीं करते हैं ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

स वाच्यवाचकतया भगवान् ब्रह्मरूपधृक् ।
नामरूपक्रिया धत्ते सकर्माकर्मकः परः ॥३६॥

पदच्छेद—

सः वाच्य वाचकतया, भगवान् ब्रह्मरूप धृक् ।
नाम रूप क्रियाः धत्ते, सकर्म अकर्मकः परः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे | नामरूप | १०. | नाम रूप (और) |
| वाच्य | ६. | अर्थ (और) | क्रियाः | ११. | क्रिया को |
| वाचकतया | ७. | शब्द के रूप में | धत्ते | १२. | धारण करते हैं |
| भगवान् | २. | भगवान् | सकर्म | ५. | क्रियाशील होते हैं |
| ब्रह्म रूप | ८. | विराट् पुरुष का रूप | अकर्मकः | ४. | निष्क्रिय हैं (अपनी शक्ति से) |
| धृक् । | ९. | धारण करके | परः ॥ | ३. | वस्तुतः |

श्लोकार्थ—वे भगवान् वस्तुतः निष्क्रिय हैं, अपनी शक्ति से क्रियाशील होते हैं । वे अर्थ और शब्द के रूप में विराट् पुरुष का रूप धारण करके नाम, रूप और क्रिया को धारण करते हैं ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

प्रजापतीन्मनून् देवानृषीन् पितृगणान् पृथक् ।
सिद्धचारणगन्धर्वान् विद्याध्रासुरगुह्यकान् ।।३७।।

पदच्छेद—

प्रजापतीन् मनून् देवान्, ऋषीन् पितृ गणान् पृथक् ।
सिद्ध चारण गन्धर्वान्, विद्याध्रा असुर गुह्यकान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतीन् | १. | प्रजापति | सिद्ध | ६ | सिद्ध |
| मनून् | २. | मनु | चारण | ७. | चारण |
| देवान् | ३. | देवता | गन्धर्वान् | ८. | गन्धर्व |
| ऋषीन् | ४. | ऋषि | विद्याध्रा | ९ | विद्याधर |
| पितृ गणान् | ५. | पितर गण | असुर | १०. | असुर (और) |
| पृथक् । | १२. | अलग-अलग (भगवान् के रूप हैं) | गुह्यकान् ।। | ११. | यक्ष (ये) |

श्लोकार्थ—प्रजापति, मनु, देवता, ऋषि, पितर गण, सिद्ध, चारण, गन्धर्व, विद्याधर, असुर और यक्ष, ये अलग-अलग भगवान् के रूप हैं ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

किन्नराप्सरसो नागान् सर्पान् किम्पुरुषोरगान् ।
मातृ रक्षःपिशाचांश्च प्रेतभूतविनायकान् ।।३८।।

पदच्छेद—

किन्नर अप्सरसः नागान्, सर्पान् किम्पुरुष उरगान् ।
मातृः रक्षः पिशाचान् च, प्रेत भूत विनायकान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किन्नर | १. | किन्नर | मातृः | ७. | मातृकायें |
| अप्सरसः | २. | अप्सरायें | रक्षः | ८. | राक्षस |
| नागान् | ३. | नाग | पिशाचान् | ९. | पिशाच |
| सर्पान् | ४. | सर्प | च | १३. | ये सब भगवान् के रूप हैं |
| किम्पुरुष | ५. | किम्पुरुष | प्रेत | १०. | प्रेत |
| उरगान् । | ६. | उरग | भूत | ११. | भूत (और) |
| | | | विनायकान् ।। | १२. | विनायक |

श्लोकार्थ—किन्नर, अप्सरायें, नाग, सर्प, किम्पुरुष, उरग, मातृकायें, राक्षस, पिशाच, प्रेत, भूत और विनायक; ये सब भगवान् के रूप हैं ।

## एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

कूष्माण्डोन्मादवेतालान् यातुधानान् ग्रहानपि ।
खगान्मृगान् पशून् वृक्षान् गिरीन्नृप सरीसृपान् ॥३९॥

पदच्छेद—

कूष्माण्ड उन्माद वेतालान्, यातुधानान् ग्रहान् अपि ।
खगान् मृगान् पशून् वृक्षान्, गिरीन् नृप सरीसृपान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कूष्माण्ड | २. | कूष्माण्ड | खगान् | ७. | पक्षी |
| उन्माद | ३. | उन्माद | मृगान् | ८. | मृग |
| वेतालान् | ४. | वेताल | पशून् | ९. | पशु |
| यातुधानान् | ५. | यातुधान | वृक्षान् | १० | वृक्ष |
| ग्रहान् | ६. | ग्रह | गिरीन् | ११. | पर्वत (और) |
| अपि । | १३. | भी (भगवान् के रूप हैं) | नृप | १. | हे राजन् ! |
| | | | सरीसृपान् ॥ | १२. | सरीसृप (ये सब) |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कूष्माण्ड, उन्माद, वेताल, यातुधान, ग्रह, पक्षी, मृग, पशु, वृक्ष, पर्वत और सरीसृप ये सब भी भगवान् के रूप हैं।

## चत्वारिंशः श्लोकः

द्विविधाश्चतुर्विधा येऽन्ये जलस्थलनभौकसः ।
कुशलाकुशला मिश्राः कर्मणां गतयास्त्विमाः ॥४०॥

पदच्छेद—

द्विविधाः चतुर्विधाः ये अन्ये, जल स्थल नभ ओकसः ।
कुशल अकुशलाः मिश्राः, कर्मणाम् गतयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्विविधाः | २. | दो प्रकार के (चर और अचर) | कुशल | ११. | शुभ |
| चतुर्विधाः | ३. | चार प्रकार के | अकुशलाः | १२. | अशुभ (और) |
| ये | १. | जो | मिश्राः | १३. | मिश्रित |
| अन्ये | ४. | जितने (भी) | कर्मणाम् | १४. | कर्मों के |
| जल | ५. | जलचर | गतयः | १५. | फल हैं |
| स्थल | ६. | थलचर | तु | १०. | तो |
| नभ | ७. | नभ चर | इमाः ॥ | ९. | ये सब |
| ओकसः । | ८. | जीव हैं | | | |

श्लोकार्थ—जो दो प्रकार के चर और अचर तथा चार प्रकार के जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उदिभज् जितने भी जलचर, थलचर और नभचर जीव हैं, ये सब तो शुभ, अशुभ और मिश्रित कर्मों के फल हैं।

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इति तिस्रः सुरनृनारकाः ।
तत्राप्येकैकशो राजन् भिद्यन्ते गतयस्त्रिधा ।
यदैकैकतरोऽन्याभ्यां स्वभाव उपहन्यते ॥४१॥

पदच्छेद— सत्त्वम् रजः तमः इति, तिस्रः सुर नृ नारकाः ।
तत्र अपि एकैकशः राजन्, भिद्यन्ते गतयः त्रिधा ।
यदा एकैकतरः अन्याभ्याम्, स्वभावः उपहन्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत्त्वम् | २. | सत्त्वगुण | राजन् | १. | हे परीक्षित् ! |
| रजः, तमः | ३. | रजोगुण और तमोगुण के | भिद्यन्ते | १४. | भेद हो जाते हैं |
| इति | ४. | भेद से | गतयः, त्रिधा | १३. | योनि के, तीन प्रकार के |
| तिस्रः | ६. | तीन (योनियाँ हैं) | यदा, एकैकतरः | ८. | जब, एक-एक गुण का |
| सुर, नृ नारकाः। | ५. | देवता, मनुष्य और नारकीय | अन्याभ्याम् | १०. | दूसरे दो गुणों से |
| तत्र, अपि | ७. | उनमें, भी | स्वभावः | ९. | स्वभाव |
| एकैकशः | १२. | प्रत्येक | उपहन्यते ॥ | ११. | दब जाता है (तब) |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण के भेद से देवता, मनुष्य और नारकीय तीन योनियाँ हैं। उनमें भी जब एक-एक गुण का स्वभाव दूसरे दो गुणों से दब जाता है तब प्रत्येक योनि के तीन प्रकार के भेद और हो जाते हैं।

## द्विचत्वारिंशः श्लोकः

स एवेदं जगद्धाता भगवान् धर्मरूपधृक् ।
पुष्णाति स्थापयन् विश्वं तिर्यङ्नरसुरात्मभिः ॥४२॥

पदच्छेद— सः एव इदम् जगत् धाता, भगवान् धर्मरूप धृक् ।
पुष्णाति स्थापयन् विश्वम्, तिर्यक् नर सुर आत्मभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे | पुष्णाति | १४. | पालन-पोषण करते हैं |
| एव | २. | ही | स्थापयन् | १३. | रक्षा करते हुये (उसका) |
| इदम् | ४. | इस | विश्वम् | १२. | संसार की |
| जगत् | ५. | संसार को | तिर्यक् | १०. | पशु-पक्षी के |
| धाता | ६. | धारण करने के लिये | नर | ९. | मनुष्य और |
| भगवान् | ३. | भगवान् | सुर | ८. | देवता |
| धर्मरूप | ७. | धर्म स्वरूप विष्णु का रूप | आत्मभिः ॥ | ११. | रूप में अवतार लेते हैं (और) |
| धृक् । | ८. | धारण करते हैं | | | |

श्लोकार्थ—वे ही भगवान् इस संसार को धारण करने के लिये धर्म स्वरूप विष्णु का रूप धारण करते हैं, देवता, मनुष्य और पशु-पक्षी के रूप में अवतार लेते हैं तथा संसार की रक्षा करते हुये उसका पालन-पोषण करते हैं।

# त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

ततः कालाग्निरुद्रात्मा यत्सृष्टमिदमात्मनः ।
संनियच्छति कालेन घनानीकमिवानिलः ॥४३॥

पदच्छेद—

ततः कालाग्निः रुद्र आत्मा, यत् सृष्टम् इदम् आत्मनः ।
सन्नियच्छति कालेन, घन अनीकम् इव अनिलः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | उसके बाद | सन्नियच्छति | ९. | संहार करते हैं |
| कालाग्नि, रुद्र | ३. | कालरूप, रूद्र का | कालेन | २. | प्रलयकाल के समय ( वे) |
| आत्मा | ४. | स्वरूप धारण करके | | | |
| यत् | ७. | जो | घन | १२. | बादलों के |
| सृष्टम् | ६. | रचित | अनीकम् | १३. | झुण्ड को (हटा देता है) |
| इदम् | ८. | यह विश्व है (उसका) | इव | १० | जैसे |
| आत्मनः । | ५. | अपने से | अनिलः ॥ | ११. | वायु |

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रलय काल के समय वे भगवान् कालरूप रुद्र का स्वरूप धारण करके अपने से रचित जो यह विश्व है, उसका संहार करते हैं। जैसे वायु बादलों के झुण्ड को हटा देता है।

# चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

इत्थंभावेन कथितो भगवान् भगवत्तमैः ।
नेत्थंभावेन हि परं द्रष्टुमर्हन्ति सूरयः ॥४४॥

पदच्छेद—

इत्थम् भावेन कथितः, भगवान् भगवत्तमैः ।
न इत्थम् भावेन हि परम्, द्रष्टुम् अर्हन्ति सूरयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इत्थम् | ३. | इसी | इत्थम् | ८. | इसी |
| भावेन | ४. | रूप में | भावेन | ९. | रूप में |
| कथितः | ५. | वर्णन किया है | हि | १३ | क्योंकि ( वे इससे परे हैं ) |
| भगवान् | २. | भगवान् का | परम् | ६. | किन्तु |
| भगवत्तमैः । | १. | महात्माओं ने | द्रष्टुम् | ११. | देखना |
| न | १०. | नहीं | अर्हन्ति | १२. | चाहते हैं |
| | | | सूरयः ॥ | ७. | ज्ञानी जन (उन्हें) |

श्लोकार्थ—महात्माओं ने भगवान् का इसी रूप में वर्णन किया है, किन्तु ज्ञानी जन उन्हें इसी रूप में नहीं देखना चाहते हैं; क्योंकि वे भगवान् इससे भी परे हैं।

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

नास्य कर्मणि जन्मादौ परस्यानुविधीयते ।
कर्तृत्वप्रतिषेधार्थं माययारोपितं हि तत् ॥४५॥

पदच्छेद—

न अस्य कर्मणि जन्म आदौ, परस्य अनुविधीयते ।
कर्तृत्व प्रतिषेधार्थम्, मायया आरोपितम् हि तत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ६. | नहीं | कर्तृत्व | ८. | कर्तापन का |
| अस्य | ४. | इस | प्रतिषेधार्थम् | ९. | निषेध करने के लिये |
| कर्मणि | ३. | कर्म से | मायया | ११. | माया के द्वारा |
| जन्म | १. | जगत् की सृष्टि | आरोपितम् | १३. | आरोप किया गया है |
| आदौ | २. | पालन और संहार रूप | हि | १०. | ही |
| परस्य | ५. | परमात्मा का (सम्बन्ध) | तत् ॥ | १२. | उस सम्बन्ध का |
| अनुविधीयते । | ७. | जोड़ा गया है (वरन) | | | |

श्लोकार्थ—जगत् की सृष्टि, पालन और संहाररूप कर्म से इस परमात्मा का सम्बन्ध नहीं जोड़ा गया है, वरन कर्तापन का निषेध करने के लिये ही माया के द्वारा उस सम्बन्ध का आरोप किया गया है।

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

अयं तु ब्रह्मणः कल्पः सविकल्प उदाहृतः ।
विधिः साधारणो यत्र सर्गाः प्राकृतवैकृताः ॥४६॥

पदच्छेद—

अयम् तु ब्रह्मणः कल्पः, सविकल्पः उदाहृतः ।
विधिः साधारणः यत्र, सर्गाः प्राकृत वैकृताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अयम् | १. | यह (मैंने) | विधिः | ७. | सृष्टि का क्रम |
| तु | ९. | किन्तु (महाकल्प में) | साधारणः | ८. | एक सा है |
| ब्रह्मणः | २. | ब्रह्मा के | यत्र | ६. | इन दोनों कल्पों में |
| कल्पः | ३ | महाकल्प का | सर्गाः | १२ | सृष्टि होती है |
| सविकल्पः | ४. | बीच के कल्प के साथ | प्राकृत | १०. | प्रकृति से लेकर |
| उदाहृतः । | ५. | वर्णन किया है | वैकृताः ॥ | ११. | चराचर प्राणियों तक की |

श्लोकार्थ—यह मैंने ब्रह्मा के महाकल्प का, बीच के कल्प के साथ वर्णन किया है। इन दोनों कल्पों में सृष्टि का क्रम एकसा है। किन्तु महाकल्प में प्रकृति से लेकर चराचर प्राणियों तक की सृष्टि होती है।

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

परिमाणं च कालस्य कल्पलक्षणविग्रहम् ।
यथा पुरस्ताद् व्याख्यास्ये पाद्मं कल्पमथो शृणु ॥४७॥

पदच्छेद—

परिमाणम् च कालस्य, कल्प लक्षण विग्रहम् ।
यथा पुरस्ताद् व्याख्यास्ये, पाद्मम कल्पम् अथो शृणु ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| परिमाणम् | २. माप का | यथा | ७. क्रम से |
| च | ३. और | पुरस्ताद् | ८. आगे |
| कालस्य | १. काल के | व्याख्यास्ये | ९. वर्णन करूँगा |
| कल्प | ४. कल्प के | पाद्मम् | ११. पाद्म |
| लक्षण | ५. स्वरूप (एवं) | कल्पम् | १२. कल्प का |
| विग्रहम् । | ६. मन्वन्तरों का | अथो | १०. अब (आप) |
| | | शृणु ॥ | १३. वर्णन सुनें |

श्लोकार्थ—काल के माप का और कल्प के स्वरूप एवं मन्वन्तरों का क्रम से आगे वर्णन करूँगा । अब आप पाद्म-कल्प का वर्णन सुनें ।

## अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

शौनक उवाच—

यदाह नो भवान् सूत क्षत्ता भागवतोत्तमः ।
चचार तीर्थानि भुवस्त्यक्त्वा बन्धून् सुदुस्त्यजान् ॥४८॥

पदच्छेद—

यद आह नः भवान् सूत, क्षत्ता भागवत उत्तमः ।
चचार तीर्थानि भुवः त्यक्त्वा बन्धून् सुदुस्त्यजान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यद् | ५. कि | उत्तमः । | ६. परम |
| आह | ४. कहा है | चचार | १४. भ्रमण किया था |
| नः | ३. हमसे | तीर्थानि | १३. तीर्थों में |
| भवान् | २. आपने | भुवः | १२. पृथ्वी के |
| सूत | १. हे सूत जी ! | त्यक्त्वा | ११. छोड़कर |
| क्षत्ता | ८. विदुर जी ने | बन्धून् | १०. कुटुम्बियों को |
| भागवत | ७. भगवद् भक्त | सुदुस्त्यजान् ॥ | ९. अत्यन्त प्रेमी |

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! आपने हमसे कहा है कि परम भगवद् भक्त विदुर जी ने अत्यन्त प्रेमी कुटुम्बियों को छोड़कर पृथ्वी के तीर्थों में भ्रमण किया था ।

# एकोनपञ्चाशः श्लोकः

कुत्र कौषारवेस्तस्य संवादोऽध्यात्मसंश्रितः ।
यद्वा स भगवांस्तस्मै पृष्टस्तत्त्वमुवाच ह ॥४९॥

पदच्छेद—

कुत्र कौषारवेः तस्य, संवादः अध्यात्म संश्रितः ।
यद् वा सः भगवान् तस्मै, पृष्टः तत्त्वम् उवाच ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कुत्र | ६. | कहाँ पर हुई थी | वा | ७. | तथा |
| कौषारवेः | १. | मैत्रेय जी के साथ | सः, भगवान् | ८. | उन, भगवान् मैत्रेय जी ने |
| तस्य | ४. | उन विदुर जी की | तस्मै | ९. | उन विदुर जी के |
| संवादः | ५. | बात-चीत | पृष्टः | १०. | पूछने पर (किस) |
| अध्यात्म | २. | अध्यात्म तत्त्व के | तत्त्वम् | १२. | तत्त्व का |
| संश्रितः । | ३. | सम्बन्ध में | उवाच | १३. | वर्णन किया |
| यत् | ११. | किस | ह ॥ | १४. | था |

श्लोकार्थ—मैत्रेय जी के साथ अध्यात्म तत्त्व के सम्बन्ध में उन विदुर जी की बातचीत कहाँ पर हुई थी तथा उन भगवान् मैत्रेय जी ने उन विदुर जी के पूछने पर किस तत्त्व का वर्णन किया था ।

# पञ्चाशः श्लोकः

ब्रूहि नस्तदिदं सौम्य विदुरस्य विचेष्टितम् ।
बन्धुत्यागनिमित्तं च तथैवागतवान् पुनः ॥५०॥

पदच्छेद—

ब्रूहि नः तद् इदम् सौम्य, विदुरस्य विचेष्टितम् ।
बन्धु त्याग निमित्तम् च, तथैव आगतवान् पुनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रूहिः | ७. | वर्णन करें (उन्होंने) | बन्धु | ८. | कुटुम्बियों को |
| नः | ६. | हम लोगों से | त्याग | १०. | छोड़ा था |
| तद् | ४. | उस | निमित्तम् | ९. | किस कारण से |
| इदम् | २. | अब | च | ११. | और |
| सौम्य | १. | साधु स्वभाव हे सूत जी ! | तथैव | १३. | उसी प्रकार |
| विदुरस्य | ३. | विदुर जी के | आगतवान् | १४. | लौट आये |
| विचेष्टितम् । | ५. | चरित्र का | पुनः ॥ | १२. | फिर से (क्यों) |

श्लोकार्थ—साधु स्वभाव हे सूत जी ! अब विदुर जी के उस चरित्र का हम लोगों से वर्णन करें । उन्होंने कुटम्बियों को किस कारण से छोड़ा था और फिर से क्यों उसी प्रकार लौट आये ।

# एकपञ्चाशः श्लोकः

राज्ञा परीक्षिता पृष्टो यद्‌वोचन्महामुनिः ।
तद्वोऽभिधास्ये शृणुत राज्ञः प्रश्नानुसारतः ।।५१।।

पदच्छेद—

राज्ञा परीक्षिता पृष्टः, यद् अवोचत् महामुनिः ।
तद् वः अभिधास्ये शृणुत, राज्ञः प्रश्न अनुसारतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| राज्ञा | १. | राजा | तद्, वः | १०. | उसे, आप लोगों को |
| परीक्षिता | २. | परीक्षित् के | अभिधास्ये | ११. | बताऊँगा |
| पृष्टः | ३. | प्रश्न करने पर | शृणत | १२. | सुनें |
| यद् | ५. | जो | राज्ञः | ७. | राजा के |
| अवोचत् | ६. | उत्तर दिया था | प्रश्न | ८. | प्रश्न के |
| महामुनिः । | ४. | श्री शुकदेव मुनि ने | अनुसारतः ।। | ९. | अनुसार |

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् के प्रश्न करने पर श्री शुकदेव मुनि ने जो उत्तर दिया था, राजा के प्रश्न के अनुसार उसे आप लोगों को बताऊँगा, सुनें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
प्रश्नविधिर्नाम दशमः अध्यायः ।।१०।।

इति द्वितीयः स्कन्धः परिपूर्णः

ॐ ॐ ॐ

ॐ तत्सत्

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

# तृतीयः स्कन्धः

## अथ प्रथमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

एवमेतत् पुरा पृष्टो मैत्रेयो भगवान् किल।
क्षत्त्रा वनं प्रविष्टेन त्यक्त्वा स्वगृहमृद्धिमत् ॥१॥

पदच्छेद— एवम् एतत् पुरा पृष्टः, मैत्रेयः भगवान् किल।
क्षत्त्रा वनम् प्रविष्टेन, त्यक्त्वा स्व गृहम् ऋद्धिमत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १२. | इसी प्रकार | क्षत्त्रा | ६. | विदुर जी ने |
| एतत् | १३. | यह प्रश्न | वनम् | ७. | वन में |
| पुरा | १. | पहले की | प्रविष्टेन | ८. | गये हुये |
| पृष्टः | १४. | किया था | त्यक्त्वा | ६. | छोड़कर |
| मैत्रेयः | ११. | मैत्रेय जी से | स्व | ४. | अपने |
| भगवान् | १०. | भगवान् | गृहम् | ५. | घर को |
| किल। | २. | बात है (कि) | ऋद्धिमत् ॥ | ३. | धन-धान्य से सम्पन्न |

श्लोकार्थ—श्री शुकदेव जी कहते हैं, हे परीक्षित्! पहले की बात है कि धन-धान्य से सम्पन्न अपने घर को छोड़कर वन में गये हुये विदुर जी ने भगवान् मैत्रेय जी से इसी प्रकार यह प्रश्न किया था।

## द्वितीयः श्लोकः

यद्वा अयं मन्त्रकृद्वो भगवानखिलेश्वरः।
पौरवेन्द्रगृहं हित्वा प्रविवेशात्मसात्कृतम् ॥२॥

पदच्छेद— यद् वा अयम् मन्त्रकृत् वः, भगवान् अखिल ईश्वरः।
पौरवेन्द्र गृहम् हित्वा, प्रविवेश आत्मसात् कृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् वा | ५. | जब | पौरवेन्द्र | ८. | दुर्योधन के |
| अयम् | ३. | ये | गृहम् | ६. | घर को |
| मन्त्रकृत् | ७. | दूत बनकर गये थे (तब) | हित्वा | १०. | छोड़कर (उन्होंने) |
| वः | ६. | आप लोगों का | प्रविवेश | ११. | (विदुर जी के घर में) निवास किया था |
| भगवान् | ४. | भगवान् श्री कृष्ण | | | |
| अखिल | १. | सब के | आत्मसात् | १२. | (और उन्हें) अपना |
| ईश्वरः। | २. | स्वामी | कृतम् | १३. | बनाया था |

श्लोकार्थ—सबके स्वामी ये भगवान् श्री कृष्ण जब आप लोगों का दूत बन कर गये थे, तब दुर्योधन के घर को छोड़कर उन्होंने विदुर जी के घर में निवास किया था और उन्हें अपना बनाया था।

# तृतीयः श्लोकः

राजोवाच—

कुत्र क्षत्तुर्भगवता मैत्रेयेणास सङ्गमः ।
कदा वा सह संवाद एतद्वर्णय नः प्रभो ॥३॥

पदच्छेद—

कुत्र क्षत्तुः भगवता, मैत्रेयेण आस सङ्गमः ।
कदा वा सह संवादः, एतद् वर्णय नः प्रभो ॥

शव्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कुत्र | ५. | कहाँ पर | वा | ८. | और |
| क्षत्तुः | २. | विदुर जी की | सह | १०. | उनके साथ |
| भगवता | ३. | भगवान् | संवादः | ११. | बातचीत (हुई थी) |
| मैत्रेयेण | ४. | मैत्रेय जी के साथ | एतद् | १२. | यह |
| आस | ७. | हुई थो | वर्णः | १४. | बताइये |
| सङ्गमः । | ६. | भेंट | नः | १३. | हमें |
| कदा | ६. | कब | प्रभो । | १. | हे स्वामी |

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् ने कहा, हे स्वामी ! विदुर जी की भगवान् मैत्रेय जी के साथ कहाँ पर भेंट हुई थी और कब उनके साथ बातचीत हुई थी ? यह हमें बताइये ।

# चतुर्थः श्लोकः

न ह्यल्पार्थोदयस्तस्य विदुरस्यामलात्मनः ।
तस्मिन् वरीयसि प्रश्नः साधुवादोपबृंहितः ॥४॥

पदच्छेद—

न हि अल्प अर्थ उदयः तस्य, विदुरस्य अमल आत्मनः ।
तस्मिन् वरीयसि प्रश्नः, साधुवाद उपबृंहितः ॥

शव्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न हि | ११. | नहीं (किया होगा) | आत्मनः । | २. | अन्तःकरण वाले |
| अल्प | ७. | थोड़े | अस्मिन् | ५. | महात्मा |
| अर्थ | ८. | प्रयोजन को | वरीयसि | ६. | मैत्रेय जी से |
| उदयः | ६. | बताने वाला | प्रश्नः | १०. | प्रश्न |
| तस्य | ३. | उन | साधुवाद | १२. | ( क्योंकि वह प्रश्न ) अभिनन्दन पूर्वक |
| विदुरस्य | ४. | विदुर जी ने | | | |
| अमल | १. | शुद्ध | उपबृंहितः ॥ | १३ | सम्मानित किया गया था |

श्लोकार्थ—शुद्ध अन्तःकरण वाले उन विदुर जी ने महात्मा मैत्रेय जी से थोड़े प्रयोजन को बताने वाला प्रश्न नहीं किया होगा; क्योंकि वह प्रश्न अभिनन्दन पूर्वक सम्मानित किया गया था ।

## पञ्चमः श्लोकः

सूतउवाच—

स एवमृषिवर्योऽयं पृष्टो राज्ञा परीक्षिता ।
प्रत्याह तं सुबहुवित्प्रीतात्मा श्रूयतामिति ॥५॥

पदच्छेद—

सः एवम् ऋषि वर्यः अयम्, पृष्टः राज्ञा परीक्षिता ।
प्रत्याह तम् सुबहुवित्, प्रीत आत्मा श्रूयताम् इति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ८. | उन शुकदेव जी ने | प्रत्याह | १३. | उत्तर दिया |
| एवम् | ३. | इस प्रकार | तम् | १२. | उन्हें |
| ऋषि, वर्यः | ८. | मुनि. श्रेष्ठ | सुबहुवित् | ६. | सर्वज्ञ (एवम्) |
| अयम् | ५. | उस समय | प्रीति आत्मा | ७. | प्रसन्न चित्त |
| पृष्टः | ४. | पूछने पर | श्रूयताम् | १०. | सुनें |
| राज्ञा | १. | राजा | इति ॥ | ११. | ऐसा |
| परीक्षिता । | २. | परीक्षित् के | | | |

श्लोकार्थ—सूत जी ने कहा, हे ऋषियों ! राजा परीक्षित् के इस प्रकार पूछने पर उस समय सर्वज्ञ एवम प्रसन्नचित्त मुनि श्रेष्ठ उन शुकदेव जी ने सुनें, ऐसा उन्हें उत्तर दिया ।

## षष्ठः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

यदा तु राजा स्वसुतानसाधून्, पुष्णन्नधर्मेण विनष्टदृष्टिः ।
भ्रातुर्यविष्ठस्य सुतान् विबन्धून्, प्रवेश्य लाक्षाभवने ददाह ॥६॥

पदच्छेद—

यदा तु राजा स्व सुतान् असाधून्, पुष्णन् अधर्मेण विनष्ट दृष्टिः ।
भ्रातुः यविष्ठस्य सुतान् विबन्धून्, प्रवेश्य लाक्षा भवने ददाह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा तु | १. | जब | भ्रातुः | १०. | भाई पाण्डु के |
| राजा | ३. | राजा धृतराष्ट्र ने | यविष्ठस्य | ९. | छोटे |
| स्व | ५. | अपने | सुतान् | १२. | पुत्रों को |
| सुतान् | ७. | पुत्रों का | विबन्धून्, | ११. | अनाथ |
| असाधून्, | ६. | दुष्ट | प्रवेश्य | १४. | भेज कर |
| पुष्णन् | ८. | पालन करते हुये | लाक्षाभवने | १३. | लाक्षा गृह में |
| अधर्मेण | ४. | अन्याय से | ददाह ॥ | १५. | आग लगवा दी थी |
| विनष्ट दृष्टिः । | २. | अन्धे | | | |

श्लोकार्थ—श्री शुकदेव जी ने कहा, हे परीक्षित् ! जब अन्धे राजा धृतराष्ट्र ने अन्याय से अपने दुष्ट पुत्रों का पालन करते हुये छोटे भाई पाण्डु के अनाथ पुत्रों को लाक्षा गृह में भेज कर आग लगवा दी थी ।

# सप्तमः श्लोकः

यदा सभायां कुरुदेवदेव्याः, केशाभिमर्शं सुतकर्म गर्ह्यम् ।
न वारयामास नृपः स्नुषायाः, स्वास्रैर्हरन्त्याः कुचकुङ्कुमानि ॥७॥

पदच्छेद— यदा सभायाम् कुरुदेव देव्याः, केश अभिमर्शम् सुत कर्म गर्ह्यम् ।
न वारयामास नृपः स्नुषायाः, स्व अस्रैः हरन्त्याः कुच कुङ्कुमानि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब | न | १७. | नहीं |
| सभायाम् | २. | राजसभा में | वारयामास | १८. | निषेध किया था |
| कुरुदेव | ९. | युधिष्ठिर की | नृपः | १३. | राजा धृतराष्ट्र ने |
| देव्याः, | १०. | पटरानी (द्रौपदी) के | स्नुषायाः, | ८. | (अपनी) पुत्र वधू |
| केश | ११. | बालों को (दुःशासन ने) | स्व | ३. | अपने |
| अभिमर्शम् | १२. | खींचा था (उस समय) | अस्रैः | ४. | आँसुओं से |
| सुत | १४. | पुत्र के | हरन्त्याः | ७. | धोती हुई |
| कर्म | १६. | कर्म का | कुच | ५. | वक्षःस्थल में लगे |
| गर्ह्यम् । | १५. | निन्दित | कुङ्कुमानिः ॥ | ६. | केसर को |

श्लोकार्थ जब राजसभा में अपने आँसुओं से वक्षः स्थल में लगे केसर को धोती हुई अपनी पुत्रवधू अर्थात् युधिष्ठिर की पटरानी द्रौपदी के बालों को दुःशासन ने खींचा था, उस समय राजा धृतराष्ट्र ने पुत्र के निन्दित कर्म का निषेध नहीं किया था ।

# अष्टमः श्लोकः

द्यूते त्वधर्मेण जितस्य साधोः, सत्यावलम्बस्य वनागतस्य ।
न याचतोऽदात्समयेन दायं, तमो जुषाणो यदजातशत्रोः ॥८॥

पदच्छेद— द्यूते तु अधर्मेण जितस्य साधोः, सत्य अवलम्बस्य वन आगतस्य ।
न याचतः अदात् समयेन दायम्, तमः जुषाणः यत् अजातशत्रोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्यूते | १. | जूए में | न | १३. | नहीं |
| तु | ६. | तथा | याचतः | १२. | माँगने पर (दुर्योधन ने) |
| अधर्मेण | २. | अन्याय से | अदात् | १४. | लौटाया था |
| जितस्य | ३. | हराये गये | समयेन | ११. | प्रतिज्ञानुसार |
| साधोः, | ८. | महात्मा | दायम्, | १०. | राज्य भाग को |
| सत्य | ४. | सत्य का | तमः, जुषाणः | १६. | मोह से, मोहित (था) |
| अवलम्बस्य | ५. | सहारा लिये हुये | यत् | १५. | क्योंकि (वह) |
| वन आगतस्य। | ७. | वन से आये हुये | अजातशत्रोः ॥ | ९. | युधिष्ठिर के |

श्लोकार्थ—जूए में अन्याय से हराये गये, सत्य का सहारा लिये हुये तथा वन से आये हुये महात्मा युधिष्ठिर के राज्य भाग को प्रतिज्ञानुसार माँगने पर दुर्योधन ने नहीं लौटाया था, क्योंकि वह मोह से मोहित था ।

## नवम: श्लोक:

यदा च पार्थप्रहितः सभायां, जगद्गुरुर्यानि जगाद कृष्णः ।
न तानि पुंसाममृतायनानि, राजोरु मेने क्षतपुण्यलेशः ।। ९ ।।

पदच्छेद— यदा च पार्थ प्रहितः सभायाम्, जगद् गुरुः यानि जगाद कृष्णः ।
न तानि पुंसाम् अमृत अयनानि, राजा उरु मेने क्षत पुण्य लेशः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | २. जब | | न | १६. | नहीं |
| च | १. तथा | | तानि | १४. | उन (वचनों) का |
| पार्थ, प्रहितः | ३. युधिष्ठिर के द्वारा भेजे गये | | पुंसाम्, अमृत | १२. | मनुष्यों को, अमृत के समान |
| सभायाम्. | ६. राज सभा में | | अयनानि, | १३. | मधुर लगने वाले |
| जगद् गुरुः | ४. जगद् गुरु भगवान् | | राजा | ९. | राजा धृतराष्ट्र ने |
| यानि | ७. जिन वचनों को | | उरु | १५. | बिल्कुल भी |
| जगाद | ८. कहे (उस समय) | | मेने | १७. | आदर किया था |
| कृष्णः। | ५ श्री कृष्ण | | क्षत | ११ | क्षीण हो जाने से |
| | | | पुण्य लेशः ।। | १०. | सारा पुण्य |

श्लोकार्थ - तथा जब युधिष्ठिर के द्वारा भेजे गये जगद्गुरु भगवान् श्री कृष्ण राजसभा में जिन वचनों को कहे, उस समय राजा धृतराष्ट्रने सारा पुण्य क्षीण हो जाने से, मनुष्यों को अमृत के समान मधुर लगने वाले उन वचनों का बिल्कुल भी आदर नहीं किया था ।

## दशम: श्लोक:

यदोपहूतो भवनं प्रविष्टो, मन्त्राय पृष्टः किल पूर्वजेन ।
अथाह तन्मन्त्रदृशां वरीयान्, यन्मन्त्रिणो वैदुरिकं वदन्ति ।। १० ।।

पदच्छेद— यदा उपहूतः भवनम् प्रविष्टः, मन्त्राय पृष्टः किल पूर्वजेन ।
अथ आह तत् मन्त्र दृशाम् वरीयान्, यत् मन्त्रिणः वैदुरिकम् वदन्ति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. जब | | अथ | ७. | तब |
| उपहूतः | ६. बुलाये गये | | आह | १३. | दी थी |
| भवनम् | ९. राज भवन में | | तत् | १२. | वह (सम्मति) |
| प्रविष्टः, | १०. प्रवेश किया (और) | | मन्त्र दृशाम् | ३. | मन्त्रियों में |
| मन्त्राय | ५. सलाह के लिये | | वरीयान्, | ४. | श्रेष्ठ (विदुर जी) |
| पृष्टः | ११. भाई के पूछने पर | | यत् मन्त्रिणः | १४. | जिसे, नीतिशास्त्र के जानकार |
| किल | ८. उन्होंनें | | वैदुरिकम् | १५. | विदुर नीति |
| पूर्वजेन । | २. बड़े भाई (धृतराष्ट्र) के द्वारा | | वदन्ति ।। | १६. | कहते हैं |

श्लोकार्थ—जब बड़े भाई धृतराष्ट्र के द्वारा मन्त्रियों में श्रेष्ठ विदुर जी सलाह के लिये बुलाये गये, तब उन्होंने राज भवन में प्रवेश किया और भाई के पूछने पर वह सम्मति दी थी, जिसे नीतिशास्त्र के जानकार 'विदुर नीति' कहते हैं ।

## एकादशः श्लोकः

अजातशत्रोः प्रतियच्छ दायं, तितिक्षतो दुर्विषहं तवागः ।
सहानुजो यत्र वृकोदराहिः, श्वसन् रुषा यत्त्वमलं बिभेषि ।। ११ ।।

पदच्छेद— अजातशत्रोः प्रतियच्छ दायम्, तितिक्षतः दुर्विषहम् तव आगः ।
सह अनुजः यत्र वृकोदर अहिः, श्वसन् रुषा यत् त्वम् अलम् बिभेषि ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अजातशत्रोः | ५. महात्मा युधिष्ठिर के | | यत्र | ८. | जिस (युधिष्ठिर के पक्ष) में |
| प्रतियच्छ | ७. लौटा दो | | वृकोदर | १०. | भीमसेन रूपी |
| दायम्, | ६. राज्य भाग को | | अहिः, | ११. | नाग |
| तितिक्षतः | ४. सहन करने वाले | | श्वसन् | १३. | फुंफकार मार रहा है |
| दुर्विषहम् | २. असहनीय | | रुषा | १२. | क्रोध से |
| तव | १. तुम्हारे | | यत्, त्वम् | १४. | जिससे, तुम |
| आगः । | ३. अपराध को | | अलम् | १५. | बहुत |
| सह अनुजः | ९. छोटे भाइयों के साथ | | बिभेषि ।। | १६. | डरते हो |

श्लोकार्थ--विदुर जी ने कहा, तुम्हारे असहनीय अपराध को सहन करने वाले महात्मा युधिष्ठिर के राज्य भाग को लौटा दो । जिस युधिष्ठिर के पक्ष में छोटे भाइयों के साथ भीमसेन रूपी नाग क्रोध मे फुंफकार मार रहा है, जिससे तुम बहुत डरते हो ।

## द्वादशः श्लोकः

पार्थांस्तु देवो भगवान् मुकुन्दो, गृहीतवान् सक्षितिदेवदेवः ।
आस्ते स्वपुर्यां यदुदेवदेवो, विनिर्जिताशेषनृदेवदेवः ।।१२।।

पदच्छेद— पार्थान् तु देवः भगवान् मुकुन्दः, गृहीतवान् स क्षितिदेव देवः ।
आस्ते स्व पुर्याम् यदु देव देवः, विनिर्जित अशेष नृदेव देवः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पार्थान् | ३. | पाण्डवों को | आस्ते | १६. | विद्यमान हैं |
| तु | ५. | और (इस समय) | स्व | १४. | अपनी (राजधानी) |
| देवः | १. | पूज्य | पुर्याम् | १५. | द्वारका पुरी में |
| भगवान् मुकुन्दः, | २. | भगवान् श्री कृष्ण ने | यदुदेव | ९. | यादवों के |
| गृहीतवान् | ४. | अपना लिया है | देवः, | १० | आराध्य (वे भगवान्) |
| स | १३. | साथ | विनिर्जित | ८. | जीत कर |
| क्षितिदेव | ११. | ब्राह्मणों (और) | अशेष, नृदेव | ६. | सम्पूर्ण, राजा |
| देवः । | १२. | देवताओं के | देवः ।। | ७. | महाराजाओं को |

श्लोकार्थ—पूज्य भगवान् श्री कृष्ण ने पाण्डवों को अपना लिया है और इस समय सम्पूर्ण राजा-महाराजाओं को जीत कर यादवों के आराध्य वे भगवान् ब्राह्मणों और देवताओं के साथ अपनी राजधानी द्वारका पुरी में विद्यमान हैं ।

## त्रयोदशः श्लोकः

स एष दोषः पुरुषद्विडास्ते, गृहान् प्रविष्टो यमपत्यमत्या ।
पुष्णासि कृष्णाद् विमुखो गतश्री-स्त्यजाश्वशैवं कुलकौशलाय ॥१३॥

पदच्छेद— सः एषः दोषः पुरुष द्विड् आस्ते, गृहान् प्रविष्टः यम् अपत्य मत्या ।
पुष्णासि कृष्णात् विमुखः गत श्रीः, त्यज अश्व शैवम् कुल कौशलाय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः, एषः | ४. | वही, यह | पुष्णासि | ३. | पाल रहे हैं |
| दोषः | ५. | पापी (तथा) | कृष्णात् | १०. | श्री कृष्ण से |
| पुरुष, द्विड् | ६. | मनुष्य द्वेषी | विमुखः | ११. | अलग होने के कारण |
| आस्ते, | ९. | बैठा है (आप) | गत | १३. | हीन हो रहे हैं (अतः) |
| गृहान् | ७. | घर में | श्रीः, | १२. | कान्ति |
| प्रविष्टः | ८. | प्रवेश करके | त्यज | १६. | त्याग दें |
| यम्, अपत्य | १. | जिसे (आप) पुत्र | अश्व, शैवम् | १४. | घोड़े के, बच्चे मूर्ख को |
| मत्या । | २. | समझ कर | कुल कौशलाय॥ | १५. | कुरुवंश के कल्याण के लिये |

श्लोकार्थ—जिसे आप पुत्र समझ कर पाल रहे हैं, वही यह पापी तथा मनुष्य-द्वेषी घर में प्रवेश करके बैठा है। आप श्री कृष्ण से अलग होने के कारण कान्तिहीन हो रहे हैं, अतः इस घोड़े के बच्चे मूर्ख दुर्योधन को कुरुवंश के कल्याण के लिये त्याग दें।

## चतुर्दशः श्लोकः

इत्यूचिवांस्तत्र सुयोधनेन, प्रवृद्धकोपस्फुरिताधरेण ।
असत्कृतः सत्स्पृहणीयशीलः, क्षत्ता सकर्णानुजसौबलेन ॥१४॥

पदच्छेद— इति ऊचिवान् तत्र सुयोधनेन, प्रवृद्ध कोप स्फुरित अधरेण ।
असत्कृतः सत् स्पृहणीय शीलः, क्षत्ता सकर्ण अनुज सौबलेन ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ५ | ऐसा | असत्कृतः | १६. | तिरस्कार किया था |
| ऊचिवान् | ६. | कहा | सत् | १. | सज्जनों से |
| तत्र | ७. | (तदनन्तर) वहाँ पर | स्पृहणीय | २. | इच्छित |
| सुयोधनेन, | ११ | दुर्योधन ने | शीलः, | ३. | स्वभाव वाले |
| प्रवृद्ध | १२. | बढ़े हुये | क्षत्ता | ४. | विदुर जी ने |
| कोप | १३. | क्रोध के कारण | सकर्ण | ८. | कर्ण |
| स्फुरित | १४. | फड़कते | अनुज | ९. | दुःशासन और |
| अधरेण । | १५. | होठ से | सौबलेन ॥ | १०. | मामा शकुनि के साथ |

श्लोकार्थ सज्जनों से इच्छित स्वभाव वाले विदुर जी ने ऐसा कहा। तदनन्तर वहाँ पर कर्ण, दुःशासन और मामा शकुनि के साथ दुर्योधन ने बढ़े हुये क्रोध के कारण फड़कते होठ से उन विदुर जी का तिरस्कार किया था।

# पञ्चदशः श्लोकः

कः एनमत्रोपजुहाव जिह्मं दास्याः सुतं यद् बलिनैव पुष्टः ।
तस्मिन् प्रतीपः परकृत्य आस्ते, निर्वास्यतामाशु पुराच्छ्वसानः ॥१५॥

पदच्छेद— कः एनम् अत्र उपजुहाव जिह्मम्, दास्या सुतम् यत् बलिना एव पुष्टः ।
तस्मिन् प्रतीपः परकृत्ये आस्ते, निर्वास्यताम् आशु पुरात् श्वसानः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | ४. | किसने | तस्मिन् | ९. | उसी का |
| एनम् | १. | इस | प्रतीपः | १०. | विरोध करता हुआ |
| अत्र | ५. | यहाँ पर | परकृत्ये | ११. | शत्रु के काम को |
| उपजुहाव | ६. | बुलाया था (यह) | आस्ते, | १२. | बना रहा है (अतः इसे) |
| जिह्मम्, | २. | कुटिल | निर्वास्यताम् | १६ | निकाल दो |
| दास्याः, सुतम् | ३. | दासी, पुत्र को | आशु | १५. | तत्काल |
| यत्, बलिना | ७. | जिसके, अन्न से | पुरात् | १४. | नगर से |
| एव, पुष्टः । | ८. | ही, बड़ा हुआ है | श्वसानः ॥ | १३. | जीते-जी |

श्लोकार्थ—इस कुटिल दासी पुत्र को किसने यहाँ पर बुलाया था ? यह जिसके अन्न से ही बड़ा हुआ है, उसी का विरोध करता हुआ शत्रु के काम को बना रहा है, अतः इसे जीते-जी नगर से तत्काल निकाल दो ।

# षोडशः श्लोकः

स इत्थमत्युल्बणकर्णबाणै-र्भ्रातुः पुरो मर्मसु ताडितोऽपि ।
स्वयं धनुर्द्वारि निधाय मायां, गतव्यथोऽयादुरु मानयानः ॥ १६ ॥

पदच्छेद—

सः इत्थम् अति उल्बण कर्ण बाणैः, भ्रातुः पुरः मर्मसु ताडितः अपि ।
स्वयम् धनुः द्वारि निधाय मायाम्, गत व्यथः अयात् उरु मानयानः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे (विदुर जी) | स्वयम् | १४. | अपने आप |
| इत्थम् | ३. | इस प्रकार | धनुः, द्वारि | १५. | धनुष को, द्वार पर |
| अति | ६. | अत्यन्त | निधाय | १६. | रख कर |
| उल्बण | ७ | कठोर वचनों से | मायाम्, | ११. | भगवान् की माया को |
| कर्ण, | ४. | कानों को | गत व्यथः | १०. | दुःखित नहीं हुये (और) |
| बाणैः, | ५. | बाण के समान लगने वाले | अयात् | १७. | (नगर से) निकल गये |
| भ्रातुः, पुरः | २ | भाई (धृतराष्ट्र) के, सामने | उरु | १२. | प्रबल |
| मर्मसु | ८. | हृदय में | मानयानः ॥ | १३. | मानते हुये |
| ताडितः, अपि । | ९. | चोट खाकर, भी | | | |

श्लोकार्थ—वे विदुर जी भाई धृतराष्ट्र के सामने इस प्रकार कानों को बाण के समान लगने वाले अत्यन्त कठोर वचनों से हृदय में चोट खाकर भी दुःखित नहीं हुये और भगवान् की माया को प्रबल मानते हुये अपने आप धनुष को द्वार पर रख कर नगर से निकल गये ।

## सप्तदशः श्लोकः

स निर्गतः कौरवपुण्यलब्धो, गजाह्वयात्तीर्थपदः पदानि ।
अन्वाक्रमत् पुण्यचिकीर्षयोर्व्यां, स्वधिष्ठितो यानि सहस्रमूर्तिः ।।१७।।

पदच्छेद—

स: निर्गतः कौरव पुण्य लब्धः, गजाह्वयात् तीर्थपदः पदानि ।
अन्वाक्रमत् पुण्य चिकीर्षया उर्व्याम्, सु अधिष्ठितः यानि सहस्र मूर्तिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ३. | वे विदुर जी | अन्वाक्रमत | ११. | भ्रमण किया |
| निर्गतः | ५. | निकल गये (उन्होंने) | पुण्य | ७. | धर्म करने की |
| कौरव | १. | कौरवों को | चिकीर्षया | ८. | इच्छा से |
| पुण्य, लब्धः, | २. | भाग्य से, प्राप्त हुये | उर्व्याम्, | ६. | पृथ्वी पर |
| गजाह्वयात् | ४. | हस्तिनापुर से | सु अधिष्ठितः | १४. | विराजमान हैं |
| तीर्थ, पदः | ९. | तीर्थरूपी, पैर वाले भगवान् के | यानि | १२. | जहाँ पर |
| पदानि । | १०. | (उन) क्षेत्रों में | सहस्र मूर्तिः ।। | १३. | (भगवान्) की अनन्त मूर्तियाँ |

श्लोकार्थ—कौरवों को भाग्य से प्राप्त हुये वे विदुर जी हस्तिनापुर से निकल गये । उन्होंने पृथ्वी पर धर्म करने की इच्छा से तीर्थ रूपी पैर वाले भगवान् के उन क्षेत्रों में भ्रमण किया, जहाँ पर भगवान् की अनन्त मूर्तियाँ विराजमान हैं ।

## अष्टादशः श्लोकः

पुरेषु पुण्योपवनाद्रिकुञ्जे-ष्वपङ्कतोयेषु सरित्सरःसु ।
अनन्तलिङ्गैः समलंकृतेषु, चचार तीर्थायतनेष्वनन्यः ।।१८।।

पदच्छेद—

पुरेषु पुण्य उपवन अद्रि कुञ्जेषु, अपङ्क तोयेषु सरित् सरः सु ।
अनन्त लिङ्गैः समलङ्कृतेषु, चचार तीर्थ आयतनेषु अनन्यः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरेषु | २. | नगर | सरःसु । | १०. | तालावों में (तथा) |
| पुण्य | ३. | पवित्र | अनन्त | ११. | अनेक |
| उपवन | ४. | बगीचे | लिङ्गैः | १२. | मूर्तियों से |
| अद्रि | ५. | पर्वत | समलङ्कृतेषु, | १३. | सुशोभित |
| कुञ्जेषु, | ६. | लता-झुण्ड | चचार | १६. | विचरते रहे |
| अपङ्क | ७. | निर्मल | तीर्थ | १४. | तीर्थों और |
| तोयेषु | ८. | जलवाली | आयतनेषु | १५. | मन्दिरों में |
| सरित् | ९. | नदियों (और) | अनन्यः ।। | १. | (विदुर जी) अकेले ही |

श्लोकार्थ—विदुर जी अकेले ही नगर, पवित्र बगीचे, पर्वत, लता-झुण्ड, निर्मल जल वाली नदियों और तालाबों में तथा अनेक मूर्तियों से सुशोभित तीर्थों और मन्दिरों में विचरते रहे ।

# एकोनविंशः श्लोकः

गां पर्यटन् मेध्यविविक्तवृत्तिः, सदाप्लुतोऽधःशयनोऽवधूतः ।
अलक्षितः स्वैरवधूतवेषो, व्रतानि चेरे हरितोषणानि ।।१९।।

पदच्छेद— गाम् पर्यटन् मेध्य विविक्ति वृत्तिः, सदा आप्लुतः अधः शयनः अवधूतः ।
अलक्षितः स्वैः अवधूत वेषः, व्रतानि चेरे हरि तोषणानि ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गाम् | ११. | पृथ्वी पर | अलक्षितः | ४. | छिपकर |
| पर्यटन् | १२. | घूमते रहे (एवं) | स्वैः | ३. | अपने लोगों से |
| मेध्य, विविक्ति | ९. | पवित्र, और सादा | अवधूत | १. | (विदुर जी) अवधूत का |
| वृत्तिः, | १०. | आहार करते हुये | वेषः, | २. | वेष धारण करके (अतः) |
| सदा | ५. | हमेशा | व्रतानि | १५. | व्रतों को |
| आप्लुतः | ६. | तीर्थों में स्नान करते | चेरे | १६. | करते रहे |
| अधः, शयनः | ७. | भूमि पर, शयन करते (तथा) | हरि | १३. | भगवान् को |
| अवधूतः । | ८. | श्रृंगार से रहित होकर | तोषणानि ।। | १४. | प्रसन्न करने वाले |

श्लोकार्थ—विदुर जी अवधूत का वेश धारण करके अतः अपने लोगों से छिप कर हमेशा तीर्थों में स्नान करते, भूमि पर शयन करते तथा श्रृंगार से रहित होकर पवित्र और सादा आहार करते हुये पृथ्वी पर घूमते रहे एवम् भगवान् को प्रसन्न करने वाले व्रतों को करते रहे ।

# विंशः श्लोकः

इत्थं व्रजन् भारतमेव वर्षं, कालेन यावद्गतवान् प्रभासम् ।
तावच्छशास क्षितिमेकचक्रा-मेकातपत्रामजितेन पार्थः ।।२०।।

पदच्छेद— इत्थम् व्रजन् भारतम् एव वर्षम्, कालेन यावत् गतवान् प्रभासम् ।
तावत् शशास क्षितिम् एकचक्राम्, एक आतपत्राम् अजितेन पार्थः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इत्थम् | १. | (विदुर जी) इस प्रकार | प्रभासम् । | ८. | प्रभास क्षेत्र में |
| व्रजन् | ५. | घूमते हुये | तावत् | १०. | उस समय |
| भारतम् | २. | भारत | शशास | १६. | शासन कर रहे थे |
| एव | ४. | ही | क्षितिम् | १३. | पृथ्वी पर |
| वर्षम्, | ३. | वर्ष में | एक चक्राम्, | १४. | अखण्ड (एवम्) |
| कालेन | ६. | कुछ समय के बाद | एक आतपत्राम् | १५. | एक छत्र |
| यावत् | ७. | जब | अजितेन | ११. | श्रीकृष्ण की सहायता से |
| गतवान् | ९. | पहुँचे | पार्थः ।। | १२. | महाराज युधिष्ठिर |

श्लोकार्थ—विदुर जी इस प्रकार भारतवर्ष में ही घूमते हुये कुछ समय के बाद जब प्रभास क्षेत्र में पहुँचे, उस समय भगवान् श्री कृष्ण की सहायता से महाराज युधिष्ठिर पृथ्वी पर अखण्ड एवम् एकछत्र शासन कर रहे थे ।

## एकविंशः श्लोकः

तत्राथ शुश्राव सुहृद्विनष्टिं, वनं यथा वेणुजवह्निसंश्रयम् ।
संस्पर्धया दग्धमथानुशोचन्, सरस्वतीं प्रत्यगियाय तूष्णीम् ॥२१॥

पदच्छेद— तत्र अथ शुश्राव सुहृद् विनष्टिम्, वनम् यथा वेणुज वह्नि संश्रयम् ।
संस्पर्धया दग्धम् अथ अनुशोचन्, सरस्वतीम् प्रत्यग् इयाय तूष्णीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्र | ८. | वहाँ पर (विदुर जी) | संस्पर्धया | २. | (आपस की) रगड़ के कारण |
| अथ | ७. | उसी प्रकार | दग्धम् | ६. | जल जाता है |
| शुश्राव | १०. | सुने (और) | अथ | ११. | तत्पश्चात् |
| सुहृद्, विनष्टिम् | ९. | बान्धवों के, विनाश को | अनुशोचन्, | १२. | शोक करते हुये |
| वनम् | ५. | सारा जंगल | सरस्वतीम् | १४. | सरस्वती नदी के |
| यथा | १. | जैसे | प्रत्यग् | १५. | तट पर |
| वेणुज | ३. | बाँसों से उत्पन्न | इयाय | १६. | आ गये |
| वह्नि, संश्रयम् । | ४. | अग्नि के, सहारे | तूष्णीम् ॥ | १३. | चुपचाप |

श्लोकार्थ—जैसे आपस की रगड़ के कारण बाँसों से उत्पन्न अग्नि के सहारे सारा जंगल जल जाता है, उसी प्रकार वहाँ पर विदुर जी बान्धवों के विनाश को सुने और तत्पश्चात् शोक करते हुये चुपचाप सरस्वती नदी के तट पर आ गये ।

## द्वाविंशः श्लोकः

तस्यां त्रितस्योशनसो मनोश्च, पृथोरथाग्नेरसितस्य वायोः ।
तीर्थं सुदासस्य गवां गुहस्य, यच्छ्राद्धदेवस्य स आसिषेवे ॥२२॥

पदच्छेद—

तस्याम् त्रितस्य उशनसः मनोः च, पृथोः अथ अग्नेः असितस्य वायोः ।
तीर्थम् सुदासस्य गवाम् गुहस्य, यत् श्राद्ध देवस्य सः आसिषेवे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्याम् | १. | सरस्वती नदी के तट पर | तीर्थम् | १४. | तीर्थ थे (उनका) |
| त्रितस्य | २. | त्रित | सुदासस्य | ८. | सुदास |
| उशनसः | ३. | उशना | गवाम् | ९. | गऊ |
| मनोः, च, | ४. | मनु, और | गुहस्य, | १०. | गुह |
| पृथोः | ५. | पृथु | यत् | १३. | जो |
| अथ | ११. | तथा | श्राद्धदेवस्य | १२. | श्राद्ध देव से सम्बन्धित |
| अग्नेः,असितस्य | ६. | अग्नि, असित | सः | १५. | उन्होंने |
| वायोः । | ७. | वायु | आसिषेवे ॥ | १६. | सेवन किया |

श्लोकार्थ—सरस्वती नदी के तट पर त्रित, उशना, मनु और पृथु, अग्नि, असित, वायु, सुदास, गऊ, गुह तथा श्राद्ध देव से सम्बन्धित जो तीर्थ थे, उनका उन्होंने सेवन किया ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

अन्यानि चेह द्विजदेवदेवैः, कृतानि नानायतनानि विष्णोः ।
प्रत्यङ्गमुख्याङ्कितमन्दिराणि, यद्दर्शनात् कृष्णमनुस्मरन्ति ।।२३।।

पदच्छेद— अन्यानि च इह द्विजदेव देवैः, कृतानि नाना आयतनानि विष्णोः ।
प्रति अङ्ग मुख्य अङ्कित मन्दिराणि, यत् दर्शनात् कृष्णम् अनुस्मरन्ति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्यानि | २. | इसके अतिरिक्त (विदुर जी) | प्रति | ६. | प्रत्येक |
| च | १. | तथा | अङ्ग मुख्य | ११. | प्रधान आयुध |
| इह, द्विजदेव | ३. | पृथ्वी पर, ब्राह्मणों और | अङ्कित | १२. | बनाये गये थे |
| देवैः, | ४. | देवताओं के द्वारा | मन्दिराणि, | १०. | मन्दिरों के शिखरों पर |
| कृतानि | ५. | स्थापित किये गये | यत् | १३. | जिनके |
| नाना | ७. | अनेक | दर्शनात् | १४. | दर्शन से |
| आयतनानि | ८. | मन्दिरों में गये (जहाँ) | कृष्णम् | १५ | भगवान् श्रीकृष्ण का |
| विष्णोः । | ६. | भगनान् विष्णु के | अनुस्मरन्ति ।। | १६. | तत्काल स्मरण हो जाता था |

श्लोकार्थ—तथा इसके अतिरिक्त विदुर जी पृथ्वी पर ब्राह्मणों और देवताओं के द्वारा स्थापित किये गये भगवान् विष्णु के अनेक मन्दिरों में गये. जहाँ प्रत्येक मन्दिरों के शिखरों पर भगवान् के प्रधान आयुध बनाये गये थे, जिनके दर्शनसे भगवान् श्री कृष्ण का तत्काल स्मरण हो जाता था ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

ततस्त्वतिव्रज्य सुराष्ट्रमृद्धं, सौवीरमत्स्यान् कुरुजाङ्गलांश्च ।
कालेन तावद्यमुनामुपेत्य, तत्रोद्धवं भागवतं ददर्श ।।२४।।

पदच्छेद— ततः तु अतिव्रज्य सुराष्ट्रम् ऋद्धम्, सौवीर मत्स्यान् कुरु जाङ्गलान् च ।
कालेन तावत् यमुनाम् उपेत्य, तत्र उद्धवम् भागवतम् ददर्श ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः तु | १. | तत्पश्चात् (विदुर जी) | कालेन | ६. | कुछ समय के बाद (जब) |
| अतिव्रज्य | ८. | चलकर | तावत् | १२. | तब |
| सुराष्ट्रम् | ३. | सौराष्ट्र | यमुनाम् | १०. | यमुना नदी के तट पर |
| ऋद्धम्, | २. | धन-धान्य से पूर्ण | उपेत्य, | ११. | पहुँचे |
| सौवीर | ४. | सौवीर देश | तत्र | १३. | वहां पर (उन्होंने) |
| मत्स्यान् | ५. | मत्स्य देश | उद्धवम् | १५. | उद्धव जी को |
| कुरु जाङ्गलान् | ७. | कुरुजांगल देशों से | भागवतम् | १४. | भगवद् भक्त |
| च । | ६. | और | ददर्श ।। | १६. | देखा |

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् विदुर जी धन-धान्य से पूर्ण सौराष्ट्र, सौवीर, मत्स्य और कुरुजांगल देशों से चलकर कुछ समय के बाद जब यमुना नदी के तट पर पहुँचे, तब वहाँ पर उन्होंने भगवद्-भक्त उद्धव जी को देखा ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

स वासुदेवानुचरं प्रशान्तं, बृहस्पतेः प्राक् तनयं प्रतीतम् ।
आलिङ्ग्य गाढं प्रणयेन भद्रं, स्वानामपृच्छद् भगवत्प्रजानाम् ।।२५।।

पदच्छेद— सः वासुदेव अनुचरम् प्रशान्तम्, बृहस्पतेः प्राक् तनयम् प्रतीतम् ।
आलिङ्ग्य गाढम् प्रणयेन भद्रम्, स्वानाम् अपृच्छत् भगवत् प्रजानाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | उन (विदुर जी) ने | आलिङ्ग्य | ११. | आलिंगन करके |
| वासुदेव | २. | भगवान् श्री कृष्ण के | गाढम् | १०. | प्रगाढ़ |
| अनुचरम् | ३. | सेवक | प्रणयेन | ९. | प्रेम पूर्वक |
| प्रशान्तम्, | ४. | अतिशान्त स्वभाव वाले (तथा) | भद्रम्, | १५. | कुशल |
| बृहस्पतेः | ५. | आचार्य बृहस्पति के | स्वानाम् | १४. | स्वजनों का |
| प्राक् | ६. | प्राचीन | अपृच्छत् | १६. | पूछा |
| तनयम् | ७. | शिष्य के रूप में | भगवत् | १२. | भगवान् और उनके |
| प्रतीतम् । | ८. | प्रख्यात (उद्धव जी) का | प्रजानाम् ।। | १३. | आश्रित |

श्लोकार्थ—उन विदुर जी ने भगवान् श्रीकृष्ण के सेवक, अतिशान्त स्वभाव वाले तथा आचार्य बृहस्पति के प्राचीन शिष्य के रूप में प्रख्यात उद्धव जी का प्रेम पूर्वक प्रगाढ़ आलिगन करके भगवान् और उनके आश्रित स्वजनों का कुशल पूछा ।

## षड्विंशः श्लोकः

कच्चित्पुराणौ पुरुषौ स्वनाभ्य-पाद्मानुवृत्त्येह किलावतीर्णौ ।
आसात उर्व्याः कुशलं विधाय, कृतक्षणौ कुशलं शूरगेहे ।।२६।।

पदच्छेद— कच्चित् पुराणौ पुरुषौ स्वनाभ्य, पाद्म अनुवृत्त्या इह किल अवतीर्णौ ।
आसाते उर्व्याः कुशलम् विधाय, कृत क्षणौ कुशलम् शूर गेहे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ८. | क्या (वे) | आसाते | १६. | हैं |
| पुराणौ | १. | पुरातन | उर्व्याः, कुशलम् | ९. | पृथ्वी का, कल्याण |
| पुरुषौ | २. | पुरुष (बलराम और श्री कृष्ण जी) | विधाय, | १०. | करके |
| | | | कृत | १२. | देते हुये |
| स्व, नाभ्य, | ३. | अपनी, नाभि के कमल से उत्पन्न | क्षणौ | ११. | (सब को) आनन्द |
| | | | कुशलम् | १५. | कुशल से |
| पाद्म, अनुवृत्त्या | ४. | ब्रह्मा जी की, प्रार्थना से | शूर | १३. | वसुदेव जी के |
| इह | ६. | इस जगत् में | गेहे ।। | १४. | घर में |
| किल | ५. | ही | | | |
| अवतीर्णौ । | ७. | अवतरित हुये हैं | | | |

श्लोकार्थ—पुरातन पुरुष बलराम और श्री कृष्ण जी अपनी नाभि के, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा जी की प्रार्थना से ही इस जगत् में अवतरित हुए हैं। क्या वे पृथ्वी का कल्याण करके सबको आनन्द देते हुये वसुदेव जी के घर में कुशल से हैं ?

## सप्तविंशः श्लोकः

**कच्चित्कुरूणां परमः सुहृन्नो, भामः स आस्ते सुखमङ्ग शौरिः ।**
**यो वै स्वसॄणां पितृवद्ददाति, वरान् वदान्यो वरतर्पणेन ।।२७।।**

पदच्छेद— कच्चित् कुरूणाम् परमः सुहृत् नः, भामः सः आस्ते सुखम् अङ्ग शौरिः ।
यः वै स्वसॄणाम् पितृवत् ददाति, वरान् वदान्यः वर तर्पणेन ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ७. | क्या | यः | ११. | जो (वसुदेव जी) |
| कुरूणाम्, परमः | ३. | कुरुवंशियों के, अत्यन्त | वै | १६. | निश्चय ही |
| सुहृत् | ४. | हितैषी | स्वसॄणाम् | १३. | बहिन कुन्ती इत्यादि को |
| नः, | २. | हम | पितृवत् | १२. | पिता के समान |
| भामः, सः | ५. | पूज्य, वे | ददाति, | १८. | देते रहते हैं |
| आस्ते | ६. | हैं | वरान् | १७. | इच्छित वस्तुओं को |
| सुखम् | ८. | सुखपूर्वक | वदान्यः | १०. | उदार हृदय |
| अङ्ग | १. | हे तात ! | वर | १४. | स्वामियों को |
| शौरिः । | ६. | वसुदेव जी | तर्पणेन ।। | १५. | प्रसन्न करते हुये |

श्लोकार्थ—हे तात ! हम कुरुवंशियों के अत्यन्त हितैषी पूज्य वे वसुदेव जी क्या सुखपूर्वक हैं ? उदार हृदय जो वसुदेव जी पिता के समान बहिन कुन्ती इत्यादि को और उनके स्वामियों को प्रसन्न करते हुये निश्चय ही इच्छित वस्तुओं को देते रहते हैं ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

**कच्चिद्वरूथाधिपतिर्यदूनां, प्रद्युम्न आस्ते सुखमङ्ग वीरः ।**
**यं रुक्मिणी भगवतोऽभिलेभे, आराध्य विप्रान् स्मरमादिसर्गे ।।२८।।**

पदच्छेद— कच्चित् वरूथ अधिपतिः यदूनाम्, प्रद्युम्नः आस्ते सुखम् अङ्ग वीरः ।
यम् रुक्मिणी भगवतः अभिलेभे, आराध्य विप्रान् स्मरम् आदिसर्गे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ६. | क्या | यम् | ११. | जिन्हें |
| वरूथ, अधिपतिः | ३. | सेना के, सेनापति | रुक्मिणी | १२. | रुक्मिणी जी ने |
| यदूनाम्, | २. | यादवों की | भगवतः | १५. | भगवान् से |
| प्रद्युम्नः | ५. | प्रद्युम्न जी | अभिलेभे, | १६. | प्राप्त किया था |
| आस्ते | ८. | हैं | आराध्य | १४. | आराधना करके |
| सुखम् | ७. | सुख से | विप्रान् | १३. | ब्राह्मणों की |
| अङ्ग | १. | हे तात ! | स्मरम् | १०. | कामदेव (थे और) |
| वीरः । | ४. | महाबली | आदिसर्गे ।। | ६. | (जो) पूर्व जन्म में |

श्लोकार्थ—हे तात ! यादवों की सेना के सेनापति महाबली प्रद्युम्न जी क्या सुख से हैं ? जो पूर्व जन्म में कामदेव थे और जिन्हें रुक्मिणी जी ने ब्राह्मणों की आराधना करके भगवान् से प्राप्त किया था ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

**कच्चित्सुखं सात्वतवृष्णिभोज-दाशार्हकाणामधिपः स आस्ते ।**
**यमभ्यषिञ्चच्छतपत्रनेत्रो, नृपासनाशां परिहृत्य दूरात् ॥२९॥**

पदच्छेद— कच्चित् सुखम् सात्वत वृष्णि भोज, दाशार्हकाणाम् अधिपः सः आस्ते ।
यम् अभ्यषिञ्चत् शतपत्र नेत्रः, नृप आसन आशाम् परिहृत्य दूरात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ७. | क्या | आस्ते । | ९. | हैं (जिन्होंने) |
| सुखम् | ८. | सुख से | यम् | १५. | उनका |
| सात्वत | १. | सात्वत | अभ्यषिञ्चत् | १६. | राज्याभिषेक किया था |
| वृष्णि | २. | वृष्णि | शतपत्र नेत्रः, | १४. | कमलनयन श्री कृष्ण ने |
| भोज, | ३. | भोज और | नृप आसन | १०. | राजगद्दी की |
| दाशार्हकाणाम् | ४. | दाशार्हवंशी यादवों के | आशाम् | ११. | आशा को |
| अधिपः | ५. | स्वामी | परिहृत्य | १३. | छोड़ दिया था (किन्तु) |
| सः | ६ | वे (उग्रसेन जी) | दूरात् ॥ | १२. | सर्वथा |

श्लोकार्थ—सात्वत, वृष्णि, भोज और दाशार्हवंशी यादवों के स्वामी वे उग्रसेन जी क्या सुख से हैं ? जिन्होंने राजगद्दी की आशा को सर्वथा छोड़ दिया था, किन्तु कमल नयन भगवान् श्री कृष्ण ने उनका राज्याभिषेक किया था ।

# त्रिंशः श्लोकः

**कच्चिद्धरेः सौम्य सुतः सदृक्ष, आस्तेऽग्रणी रथिनां साधु साम्बः ।**
**असूत यं जाम्बवती व्रताढ्या, देवं गुहं योऽम्बिकया धृतोऽग्रे ॥३०॥**

पदच्छेद— कच्चित् हरेः सौम्य सुतः सदृक्षः, आस्ते अग्रणीः रथिनाम् साधु साम्बः ।
असूत यम् जाम्बवती व्रत आढ्या, देवम् गुहम् अम्बिकया धृतः अग्रे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ८. | क्या | असूत | १४. | उत्पन्न किया था (तथा) |
| हरेः | ४. | भगवान् श्री कृष्ण के | यम्, जाम्बवती | ११. | जिन्हें, जाम्बवती जी ने |
| सौम्य | १. | हे मनस्वी (उद्धव जी !) | व्रत | १३. | व्रत करके |
| सुतः | ६. | पुत्र | आढ्या | १२. | अनेक |
| सदृक्षः | ५. | समान (गुणवान्) | देवम् | १८. | स्वामी |
| आस्ते | १०. | हैं | गुहम् | १९. | कार्तिकेय के रूप में |
| अग्रणीः | ३. | आगे रहने वाले (तथा) | यः | १५. | जिन्हें |
| रथिनाम् | २. | महारथियों में | अम्बिकया | १७. | पार्वती जी ने |
| साधु | ९. | कुशल से | धृतः | २०. | धारण किया था |
| साम्बः । | ७. | साम्ब जी | अग्रे ॥ | १६. | पूर्व जन्म में |

श्लोकार्थ—हे मनस्वी उद्धव जी ! महारथियों में आगे रहने वाले तथा भगवान् श्री कृष्ण के समान गुण-वान् पुत्र साम्ब जी क्या कुशल से हैं ? जिन्हें जाम्बवती जी ने अनेक व्रत करके उत्पन्न किया था तथा जिन्हें पूर्व जन्म में पार्वती जी ने स्वामी कार्तिकेय के रूप में धारण किया था ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

क्षेमं स कच्चिद्युयुधान आस्ते, यः फाल्गुनाल्लब्धधनूरहस्यः ।
लेभेऽञ्जसाधोक्षजसेवयैव, गतिं तदीयां यतिभिर्दुरापाम् ॥३१॥

पदच्छेद— क्षेमम् सः कच्चित् युयुधानः आस्ते, यः फाल्गुनात् लब्ध धनुः रहस्यः ।
लेभे अञ्जसा अधोक्षज सेवया एव, गतिम् तदीयाम् यतिभिः दुरापाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| क्षेमम् | ८. कुशल पूर्वक | रहस्यः । | २. रहस्यों के साथ |
| सः | ५. वे | लेभे | १५. प्राप्त किया था (जो) |
| कच्चित् | ७. क्या | अञ्जसा | १४. अनायास |
| युयुधानः | ६. सात्यिकी | अधोक्षज | १०. भगवान् श्री कृष्ण की |
| आस्ते, | ९. हैं (उन्होंने) | सेवया, एव, | ११. सेवा से, ही |
| यः, फाल्गुनात् | १. जिन्होंने, अर्जुन से | गतिम् | १३. स्थिति को |
| लब्ध | ४. शिक्षा प्राप्त की थी | तदीयाम् | १२. उस |
| धनुः | ३. धनुर्विद्या की | यतिभिः, दुरापाम्॥ | १६. योगियों को, भी दुर्लभ (है) |

श्लोकार्थ—जिन्होंने अर्जुन से रहस्यों के साथ धनुर्विद्या की शिक्षा प्राप्त की थी, वे सात्यिकी क्या कुशल पूर्वक हैं ? उन्होंने भगवान् श्री कृष्ण की सेवा से ही उस स्थिति को अनायास प्राप्त किया किया था, जो योगियों को भी दुर्लभ है ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

कच्चिद् बुधः स्वस्त्यनमीव आस्ते, श्वफल्कपुत्रो भगवत्प्रपन्नः ।
यः कृष्णपादाङ्कितमार्गपांसु-ष्वचेष्टत प्रेमविभिन्नधैर्यः ॥३२॥

पदच्छेद— कच्चित् बुधः स्वस्ति अनमीवः आस्ते, स्वफल्क पुत्रः भगवत् प्रपन्नः ।
यः कृष्ण पाद अङ्कित मार्ग पांसुषु, अचेष्टत प्रेम विभिन्न धैर्यः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| कच्चित् | १. क्या | यः | ९. जो |
| बुधः | ५. विद्वान् (अक्रूर जी) | कृष्ण पाद | १२. भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों से |
| स्वस्ति | ७. कुशल से | अङ्कित | १३. चिह्नित |
| अनमीवः | ६. स्वस्थ और | मार्ग | १४. (व्रज के) रास्ते की |
| आस्ते, | ८. हैं | पांसुषु, | १५. रज में |
| स्वफल्क पुत्रः | ४. स्वफल्क के पुत्र | अचेष्टत | १६. लोटने लगे थे |
| भगवत् | २. भगवान् के | प्रेम | १०. प्रेम में |
| प्रपन्नः । | ३. शरणागत | विभिन्न धैर्यः ॥ | ११. अधीर होकर |

श्लोकार्थ—क्या भगवान् के शरणागत, स्वफल्क के पुत्र, विद्वान् अक्रूर जी स्वस्थ और कुशल से हैं ? जो प्रेम में अधीर हो कर भगवान् श्री कृष्ण के चरणों से चिह्नित व्रज के रास्ते की रज में लोटने लगे थे ।

## त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

कच्चिच्छिवं देवकभोजपुत्र्या, विष्णुप्रजाया इव देवमातुः ।
या वै स्वगर्भेण दधार देवं, त्रयी यथा यज्ञवितानमर्थम् ॥३३॥

पदच्छेद— कच्चित् शिवम् देवक भोज पुत्र्याः, विष्णु प्रजायाः इव देव मातुः ।
या वै स्व गर्भेण दधार देवम्, त्रयी यथा यज्ञ वितानम् अर्थम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ८. | हैं न | या | ६. | जिन्होंने |
| शिवम् | ७. | अच्छी प्रकार से | वै | १२. | उसी प्रकार से |
| देवक | ५. | राजा देवक जी | स्वगर्भेण | १०. | अपने गर्भ में |
| भोज | ४. | भोजवंशी | दधार | १३. | धारण किया था |
| पुत्र्याः, | ६. | पुत्री (देवकी जी) | देवम्, | ११. | भगवान् श्रीकृष्ण को |
| विष्णु, प्रजायाः | १. | विष्णु को, उत्पन्न करने वाली | त्रयी | १५. | चारों वेद |
| इव | ३. | समान | यथा | १४. | जैसे |
| देव मातुः । | २. | देवमाता अदिति के | यज्ञ, वितानम् | १६. | यज्ञ के, विस्तारक |
| | | | अर्थम् ॥ | १७. | अर्थ को (धारण किये हैं) |

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु को उत्पन्न करने वाली देवमाता अदिति के समान भोजवंशी राजा देवक की पुत्री देवकी जी अच्छी प्रकार से हैं न ? जिन्होंने अपने गर्भ में भगवान् श्री कृष्ण को उसी प्रकार से धारण किया था, जैसे चारों वेद यज्ञ के विस्तारक अर्थ को धारण किये हैं ।

## चतुस्त्रिंश: श्लोक:

अपिस्विदास्ते भगवान् सुखं वो, यः सात्वतां कामदुघोऽनिरुद्धः ।
यमामनन्ति स्म ह शब्दयोनिं, मनोमयं सत्त्वतुरीयतत्त्वम् ॥३४॥

पदच्छेद— अपिस्वित् आस्ते भगवान् सुखम् वः, यः सात्वताम् कामदुघः, अनिरुद्धः ।
यम् आमनन्ति स्म ह शब्द योनिम्, मनोमयम् सत्त्व तुरीय तत्त्वम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अपिस्वित् | ६. | क्या | यम् | ६. | जिन्हें |
| आस्ते | ८. | हैं | आमनन्ति स्म | १६. | माना गया है |
| भगवान् | ४. | भगवान् | ह | ११. | और |
| सुखम् | ७. | सुखपूर्वक | शब्द, योनिम्, | १०. | वेद का, कारण |
| वः, | २. | आप जैसे | मनोमयम् | १५. | मन का अधिष्ठाता |
| यः | १. | जो | सत्त्व | १२. | सत्त्वगुण वाले |
| सात्वताम् कामदुघः | ३. | भक्त वांछा-कल्पतरु हैं वे | तुरीय | १३. | (अन्तःकरण का) चौथा |
| अनिरुद्धः । | ५. | अनिरुद्ध जी | तत्त्वम् ॥ | १४. | अंश |

श्लोकार्थ—जो आप जैसे भक्तजनों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं, वे भगवान् अनिरुद्ध जी क्या सुखपूर्वक हैं ? जिन्हें वेद का कारण और सत्त्वगुण वाले अन्तःकरण का चौथा अंश, मन का अधिष्ठाता माना गया है ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अपिस्विदन्ये च निजात्मदैव—मनन्यवृत्त्या समनुव्रता ये ।
हृदीकसत्यात्मजचारुदेष्ण—गदादयः स्वस्ति चरन्ति सौम्य ॥३५॥

पदच्छेद— अपिस्वित् अन्ये च निज आत्म दैवम्, अनन्य वृत्त्या समनुव्रताः ये ।
हृदीक सत्या आत्मज चारुदेष्ण, गद आदयः स्वस्ति चरन्ति सौम्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अपिस्वित् | १४. | क्या | हृदीक | ७. | हृदीक |
| अन्ये | १३. | दूसरे (भगवान् के) पुत्र | सत्या, आत्मज | ८. | सत्यभामा के, पुत्र |
| च | १२. | और | चारुदेष्ण, | ९. | चारुदेष्ण |
| निज, आत्म | ३. | अपने, हृदयेश्वर | गद | १०. | गद |
| दैवम्, | ४. | भगवान् श्री कृष्ण का | आदयः | ११. | इत्यादि |
| अनन्य वृत्त्या | ५. | अनन्य भाव से | स्वस्ति | १५. | कुशल से |
| समनुव्रताः | ६. | अनुकरण करने वाले हैं (वे) | चरन्ति | १६. | हैं |
| ये । | २. | जो | सौम्य ॥ | १. | सौम्य स्वभाव वाले हे उद्धव जी ! |

श्लोकार्थ—सौम्य स्वभाव वाले हे उद्धव जी ! जो अपने हृदयेश्वर भगवान् श्री कृष्ण का अनन्य भाव से अनुकरण करने वाले हैं; वे हृदीक, सत्यभामा के पुत्र चारुदेष्ण, गद इत्यादि और भगवान् के दूसरे पुत्र क्या कुशल से हैं ?

## षट्त्रिंशः श्लोकः

अपि स्वदोर्भ्यां विजयाच्युताभ्यां, धर्मेण धर्मः परिपाति सेतुम् ।
दुर्योधनोऽतप्यत यत्सभायां, साम्राज्यलक्ष्म्या विजयानुवृत्त्या ॥३६॥

पदच्छेद— अपि स्व दोर्भ्याम् विजय अच्युताभ्याम्, धर्मेण धर्मः परिपाति सेतुम् ।
दुर्योधनः अतप्यत यत् सभायाम्, साम्राज्य लक्ष्म्या विजय अनुवृत्त्या ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अपि | १. | क्या | दुर्योधनः | ११. | दुर्योधन |
| स्व, दोर्भ्याम् | ५. | अपनी, भुजाओं से | अतप्यत | १६. | दुःखी हुआ था |
| विजय | ३. | अर्जुन (और) | यत् | ९. | जिनकी |
| अच्युताभ्याम्, | ४. | श्री कृष्ण रूपी | सभायाम्, | १०. | राजसभा में |
| धर्मेण | ७. | धर्मपूर्वक | साम्राज्य | १२. | (उनके) राज्य |
| धर्मः | २. | धर्मराज युधिष्ठर | लक्ष्म्या | १३. | वैभव से (और) |
| परिपाति | ८. | पालन कर रहे हैं | विजय | १४. | सर्वत्र |
| सेतुम् । | ६. | मर्यादा का | अनुवृत्त्या ॥ | १५. | जीत के कारण |

श्लोकार्थ—क्या धर्मराज युधिष्ठिर अजुन और श्रीकृष्ण रूपी अपनी भुजाओं से मर्यादा का धर्मपूर्वक पालन कर रहे हैं ? जिनकी मयदानव द्वारा बनाई गई राजसभा में दुर्योधन उनके राज्य वैभव से और सर्वत्र जीत के कारण दुःखी हुआ था ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

किं वा कृताघेष्वघमत्यमर्षी, भीमोऽहिवद्दीर्घतमं व्यमुञ्चत् ।
यस्याङ्घ्रिपातं रणभूर्न सेहे, मार्गं गदायाश्चरतो विचित्रम् ।।३७।।

पदच्छेद— किम् वा कृत अघेषु अघम् अति अमर्षी, भीमः अहिवत् दीर्घतमम् व्यमुञ्चत् ।
यस्य अङ्घ्रि पातम् रण भूः न सेहे, मार्गम् गदायाः चरतः विचित्रम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किम् वा | ५. | क्या | यस्य | १४. | जिस (भीमसेन) के |
| कृत | २. | करने वालों के प्रति | अङ्घ्रि | १५. | चरणों की |
| अघेषु | १. | अपराध | पातम् | १६. | चोट को |
| अघम् | ८. | (अपने) क्रोध को | रण, भूः | १७. | युद्ध, भूमि |
| अति, अमर्षी, | ३. | अत्यन्त, असहनशील | न, सेहे | १८ | नहीं, सह सकी थी |
| भीमः | ४. | भीमसेन ने | मार्गम् | १२. | युद्ध |
| अहिवत् | ६. | साँप के समान | गदायाः | ११. | गदा |
| दीर्घतमम् | ७. | लम्बे समय से चले आ रहे | चरतः | १३ | करते हुये |
| व्यमुञ्चत् । | ९. | छोड़ दिया है | विचित्रम् ।। | १०. | अद्भुत |

श्लोकार्थ—अपराध करने वालों के प्रति अत्यन्त असहनशील भीमसेन ने क्या साँप के समान लम्बे समय से चले आ रहे अपने क्रोध को छोड़ दिया है ? अद्भुत गदा युद्ध करते हुये जिस भीमसेन के चरणों की चोट को युद्ध भूमि नहीं सह सकी थी ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

कच्चिद्यशोधा रथयूथपानां, गाण्डीवधन्वोपरतारिरास्ते ।
अलक्षितो यच्छरकूटगूढो, मायाकिरातो गिरिशस्तुतोष ।।३८।।

पदच्छेद--- कच्चित् यशोधाः रथ यूथपानाम्, गाण्डीव धन्वा उपरत अरिः आस्ते ।
अलक्षितः यत् शर कूट गूढः, माया किरातः गिरिशः तुतोष ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कच्चित् | ५. | क्या | अलक्षितः | १२. | नहीं दिखाई देते हुये |
| यशोधाः | ३. | यश को बढ़ाने वाले | यत्, शर | ९. | जिनके बाणों के |
| रथ | १. | महारथियों और | कूट | १०. | जाल में |
| यूथपानाम्, | २. | सेनापतियों के | गूढः, | ११. | छिपे हुये (अतः) |
| गाण्डीव, धन्वा | ४. | गाण्डीव, धनुर्धर (अर्जुन) | माया | १४. | वेषधारी |
| उपरत | ७. | नष्ट हो जाने से | किरातः | १३. | किरात |
| अरिः | ६. | शत्रुओं के | गिरिशः | १५. | भगवान् शंकर |
| आस्ते । | ८. | (सकुशल) हैं | तुतोष ।। | १६. | प्रसन्न हुये थे |

श्लोकार्थ—महारथियों और सेनापतियों के यश को बढ़ाने वाले गाण्डीव धनुर्धर अर्जुन क्या शत्रुओं के नष्ट हो जाने से सकुशल हैं ? जिनके बाणों के जाल में छिपे हुए अतः नहीं दिखाई देते हुये किरात वेषधारी भगवान् शंकर प्रसन्न हुये थे ।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यमावुतस्वित्तनयौ पृथायाः, पार्थैर्वृतौ पक्ष्मभिरक्षिणीव ।
रेमात उद्दाय मृधे स्वरिक्थं, परात्सुपर्णाविव वज्रिवक्त्रात् ॥३९॥

पदच्छेद— यमौ उतस्वित् तनयौ पृथायाः, पार्थैः वृतौ पक्ष्मभिः अक्षिणी इव ।
रेमाते उद्दाय मृधे स्व रिक्थम्, परात् सुपर्णौ इव वज्रि वक्त्रात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यमौ | ७. (माद्री के) जुड़वे पुत्र | रेमाते | १६. सुशोभित हुये थे |
| उतस्वित् | ८. कुशल से तो हैं | उद्दाय | १५. छीन कर |
| तनयौ | ६. पालन किये गये | मृधे | १२. युद्ध में |
| पृथायाः, | ५. कुन्ती के द्वारा | स्वरिक्थम्, | १४. अपने राज्य भाग को |
| पार्थैः | ३. पुत्र युधिष्ठिरादि से | परात् | १३. शत्रुओं से |
| वृतौ | ४. रक्षित (तथा) | सुपर्णौ इव | ११. दो गरुड़ के समान (वे दोनों) |
| पक्ष्मभिः | १. पलकों से (रक्षित) | वज्रि | ९. इन्द्र के |
| अक्षिणी, इव । | २. आँखों के, समान | वक्त्रात् ॥ | १०. मुख से (अमृत अपहारी) |

श्लोकार्थ—पलकों से रक्षित आँखों के समान कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिरादि से रक्षित तथा कुन्ती के द्वारा पालन किये गये माद्री के जुड़वे पुत्र नकुल और सहदेव कुशल से तो हैं? इन्द्र के मुख से अमृत छीन लेने वाले दो गरुड़ के समान वे दोनों युद्ध मे शत्रुओं से अपने राज्य भाग को छीन कर सुशोभित हुये थे ।

# चत्वारिंशः श्लोकः

अहो पृथापि ध्रियतेऽर्भकार्थे, राजर्षिवर्येण विनापि तेन ।
यस्त्वेकवीरोऽधिरथो विजिग्ये, धनुर्द्वितीयः ककुभश्चतस्रः ॥४०॥

पदच्छेद— अहो पृथा अपि ध्रियते अर्भक अर्थे, राजर्षि वर्येण विना अपि तेन ।
यः तु एकवीरः अधिरथः विजिग्ये, धनुः द्वितीयः ककुभः चतस्रः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अहो, पृथा | १. अरे (बेचारी), कुन्ती | यः | ९. जिस |
| अपि | ७. ही | तु | १२. ही |
| ध्रियते | ८. जीवन धारण किये है | एकवीरः | ११. अकेले |
| अर्भक अर्थे, | ६. बालकों के लिए | अधिरथः | १०. महारथी (पाण्डु) ने |
| राजर्षि | ३. राजर्षि | विजिग्ये, | १७. जीत लिया था |
| वर्येण | ४. श्रेष्ठ (पाण्डु के) | धनुः | १४. धनुष से |
| विना, अपि | ५. विरह में, भी | द्वितीयः | १३. केवल |
| तेन । | २. उन | ककुभः | १६. दिशाओं को |
| | | चतस्रः ॥ | १५. चारों |

श्लोकार्थ—अरे बेचारी कुन्ती उन राजर्षि-श्रेष्ठ पाण्डु के विरह में भी बालकों के लिये ही जीवन धारण किये है । जिस महारथी पाण्डु ने अकेले ही केवल धनुष से चारों दिशाओं को जीत

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

सौम्यानुशोचे तमधःपतन्तं भ्रात्रे परेताय विदुद्रुहे यः ।
निर्यापितो येन सुहृत्स्वपुर्या, अहं स्वपुत्रान् समनुव्रतेन ॥४१॥

पदच्छेद— सौम्य अनुशोचे तम् अधःपतन्तम्, भ्रात्रे परेताय विदुद्रुहे यः ।
निर्यापितः येन सुहृत् स्वपुर्याः, अहम् स्व पुत्रान् समनुव्रतेन ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सौम्य | १. | सौम्य स्वभाव वाले | निर्यापितः | १६. | निकलवा दिया |
| अनुशोचे | ४. | (मैं) शोक कर रहा हूँ | येन | ९. | जिन्होंने |
| तम् | ३. | उन (धृतराष्ट्र) के प्रति | सुहृत् | १४. | हितचिन्तक को |
| अधः, पतन्तम्, | २. | अधः पतन को, प्राप्त | स्वपुर्याः, | १५. | अपनी राजधानी से |
| भ्रात्रे | ७. | भाई (पाण्डु के पुत्रों) से | अहम् | १३. | मुझ |
| परेताय | ६. | परलोक वासी | स्व | १०. | अपने |
| विदुद्रुहे | ८. | विरोध किया (तथा) | पुत्रान् | ११. | पुत्रों की |
| यः । | ५. | जिन्होंने | समनुव्रतेन ॥ | १२. | बात मान कर |

श्लोकार्थ—सौम्य स्वभाव वाले हे उद्धव जी ! अधः पतन को प्राप्त उन धृतराष्ट्र के प्रति मैं शोक कर रहा हूँ, जिन्होंने परलोक वासी भाई पाण्डु के पुत्रों से विरोध किया तथा जिन्होंने अपने पुत्रों की बात मान कर मुझ हितचिन्तक को अपनी राजधानी से निकलवा दिया था ।

## द्विचत्वारिंशः श्लोकः

सोऽहं हरेर्मर्त्यविडम्बनेन, दृशो नृणां चालयतो विधातुः ।
नान्योपलक्ष्यः पदवीं प्रसादा-च्चरामि पश्यन् गतविस्मयोऽत्र ॥४२॥

पदच्छेद— सः अहम् हरेः मर्त्य विडम्बनेन, दृशः नृणाम् चालयतः विधातुः ।
न अन्य उपलक्ष्यः पदवीम् प्रसादात्, चरामि पश्यन् गत विस्मयः अत्र ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः, अहम् | १०. | वही, मैं | उपलक्ष्यः | ९. | देखता हुआ |
| हरेः | ६. | भगवान् श्री कृष्ण की | पदवीम् | ८. | महिमा को |
| मर्त्य, विडम्बनेन, | १. | मनुष्य, शरीर से | प्रसादात्, | ७. | कृपा से (उनकी) |
| दृशः | ३. | बुद्धि को | चरामि | १६. | विचरण कर रहा हूँ |
| नृणाम् | २. | मनुष्यों की | पश्यन् | १४. | देखा जाता हुआ |
| चालयतः | ४. | मोहित करने वाले, | गत | १२. | रहित होकर (तथा) |
| विधातुः । | ५. | संसार के रचियता | विस्मयः | ११. | आश्चर्य और शोक से |
| न, अन्य | १३. | नहीं, दूसरों से | अत्र ॥ | १५. | यहां पर |

श्लोकार्थ—मनुष्य शरीर से मनुष्यों की बुद्धि को मोहित करने वाले, संसार के रचयिता भगवान् श्री कृष्ण की कृपा से उनकी महिमा को देखता हुआ वही मैं आश्चर्य और शोक से रहित होकर तथा दूसरों से नहीं देखा जाता हुआ यहां पर विचरण कर रहा हूँ ।

# त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

नूनं नृपाणां त्रिमदोत्पथानां, महीं मुहुश्चालयतां चमूभिः ।
वधात्प्रपन्नार्तिजिहीर्षयेशो-ऽप्युपैक्षताघं भगवान् कुरूणाम् ॥४३॥

पदच्छेद— नूनम् नृपाणाम् त्रिमद उत्पथानाम्, महीम् मुहुः चालयताम् चमूभिः ।
वधात् प्रपन्न आर्ति जिहीर्षया ईशः, अपि उपैक्षत अघम् भगवान् कुरूणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नूनम् | १०. | ही | प्रपन्न, आर्ति | ८. | शरणागत भक्तों के, दुःख को |
| नृपाणाम् | ३ | राजाओं का (तथा) | जिहीर्षया | ९. | दूर करने की इच्छा से |
| त्रिमद | १. | तीनों मदों के कारण | ईशः, | १२. | समर्थ होने पर |
| उत्पथानाम्, | २. | कुमार्ग गामी | अपि | १३. | भी |
| महीम्, मुहुः | ४. | पृथ्वी को, वार-वार | उपैक्षत | १६ | सहते रहे |
| चालयताम् | ५. | कँपा देने वाली | अघम् | १५. | अपराध को (इतने दिनों तक) |
| चमूभिः । | ६. | (उनकी) सेनाओं का | भगवान् | ११. | भगवान् श्री कृष्ण |
| वधात् | ७. | एक साथ वध करके | कुरूणाम् ॥ | १४. | कौरवों के |

श्लोकार्थ—धन, विद्या और जाति तीनों मदों के कारण कुमार्गगामी राजाओं का तथा पृथ्वी को वार-वार कँपा देने वाली उनकी सेनाओं का एक साथ वध करके शरणागत भक्तों के दुःख को दूर करने की इच्छा से ही भगवान् श्री कृष्ण समर्थ होने पर भी कौरवों के अपराध को इतने दिनों तक सहते रहे ।

# चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

अजस्य जन्मोत्पथनाशनाय, कर्माण्यकर्तुर्ग्रहणाय पुंसाम् ।
नन्वन्यथा कोऽर्हति देहयोगं, परो गुणानामुत कर्मतन्त्रम् ॥४४॥

पदच्छेद— अजस्य जन्म उत्पथ नाशनाय, कर्माणि अकर्तुः ग्रहणाय पुंसाम् ।
ननु अन्यथा कः अर्हति देह योगम्, परः गुणानाम् उत कर्म तन्त्रम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अजस्य, जन्म | १. | अजन्मा भगवान् का, जन्म | कः | ११. | कौन (व्यक्ति) |
| उत्पथ, नाशनाय, | २. | दुष्टों के, विनाश के लिये | अर्हति | १५. | चाहेगा |
| कर्माणि | ५. | कर्म | देह, योगम्, | १४. | शरीर, बन्धन को |
| अकर्तुः | ४. | अकर्ता भगवान् के | परः | १०. | ऊपर उठा हुआ |
| ग्रहणाय | ७. | आकर्षित करने के लिये (हैं) | गुणानाम् | ९. | तीनों गुणों से |
| पुंसाम् । | ६. | मनुष्यों को | उत | १६. | फिर (भगवान् की क्या) |
| ननु | ३. | और | कर्म | १२. | कर्म के |
| अन्यथा | ८. | नहीं तो | तन्त्रम् ॥ | १३. | पराधीन |

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् का जन्म कुमार्गगामियों के विनाश के लिये और अकर्ता भगवान् के कर्म मनुष्यों को आकर्षित करने के लिये हैं, नहीं तो तीनों गुणों से ऊपर उठा हुआ कौन व्यक्ति कर्म के पराधीन शरीर बन्धन को चाहेगा ? फिर भगवान् की तो बात ही क्या है ?

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तस्य प्रपन्नाखिललोकपाना—मवस्थितानामनुशासने स्वे ।
अर्थाय जातस्य यदुष्वजस्य, वार्तां सखे कीर्तय तीर्थकीर्तेः ॥४५॥

पदच्छेद—

तस्य प्रपन्न अखिल लोकपानाम्, अवस्थितानाम् अनुशासने स्वे ।
अर्थाय जातस्य यदुषु अजस्य, वार्ताम् सखे कीर्तय तीर्थकीर्तेः ॥

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| तस्य | १२. | उन |
| प्रपन्न | ७. | परम भक्तों के |
| अखिल | ५. | सम्पूर्ण |
| लोकपानाम्, | ६. | लोकपालों (और) |
| अवस्थितानाम् | ४. | आये हुये |
| अनुशासने | ३. | शरण में |
| स्वे । | २. | अपनी |
| अर्थाय | ८. | कल्याण के लिये (ही) |
| जातस्य | ११ | उत्पन्न हुये |
| यदुषु | १०. | यदुकुल में |
| अजस्य, | ९. | अजन्मा होकर (भी) |
| वार्ताम् | १४. | लीलायें |
| सखे | १. | हे सखे ! |
| कीर्तय | १५. | सुनावें |
| तीर्थ, कीर्तेः ॥ | १३. | पवित्र, कीर्ति (श्री कृष्ण) की |

श्लोकार्थ—हे सखे ! अपनी शरण में आये हुये सम्पूर्ण लोकपालों और परम भक्तों के कल्याण के लिये ही अजन्मा होकर भी यदुकुल में उत्पन्न हुये उन पवित्र कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलायें सुनावें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे विदुरोद्धवसंवादे प्रथमः अध्यायः ॥१॥
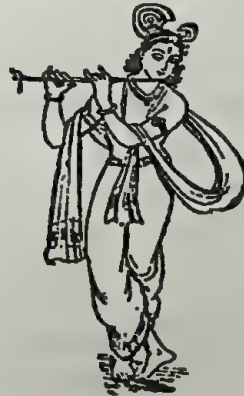
ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### अथ द्वितीयः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— इति भागवतः पृष्टः, क्षत्त्रा वार्तां प्रियाश्रयाम् ।
प्रतिवक्तुं न चोत्सेह, औत्कण्ठ्यात्स्मारितेश्वरः ॥१॥

पदच्छेद— इति भागवतः पृष्टः, क्षत्त्रा वर्ताम् प्रिय आश्रयाम् ।
प्रतिवक्तुम् न च उत्सेहे, औत्कण्ठ्यात् स्मारित ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | प्रतिवक्तुम् | १२. | उत्तर देने में (वे) |
| भागवतः | ७. | परम भक्त (उद्धव जी को) | न | १३. | नहीं |
| पृष्टः, | ६. | पूछने पर | च | १०. | और |
| क्षत्त्रा | २. | विदुर जी के द्वारा | उत्सेहे, | १४. | समर्थ हो सके |
| वार्ताम् | ५. | लीला | औत्कण्ठ्यात् | ११. | हृदय भर जाने के कारण |
| प्रिय | ३. | परम प्रिय भगवान् श्रीकृष्ण से | स्मारित | ९. | स्मरण हो आया |
| आश्रयाम् । | ४. | सम्वन्धित | ईश्वरः ॥ | ८. | भगवान् श्री कृष्ण का |

श्लोकार्थ—इस प्रकार विदुर जी के द्वारा परम प्रिय भगवान् श्रीकृष्ण से सम्वन्धित लीला पूछने पर परम भगवद् भक्त उद्धव जी को भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण हो आया और प्रेम से हृदय भर जाने के कारण उत्तर देने में वे समर्थ नहीं हो सके ।

## द्वितीयः श्लोकः

यः पञ्चहायनो मात्रा, प्रातराशाय याचितः ।
तन्नैच्छद्रचयन् यस्य, सपर्यां बाललीलया ॥२॥

पदच्छेद—

यः पञ्चहायनः मात्रा, प्रातराशाय याचितः ।
तत् न ऐक्षत् रचयन् यस्य, सपर्याम् बाल लीलया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | २. | जो (उद्धव जी) | न | १२. | नहीं |
| पञ्च, हायनः | १. | पांच, वर्ष की अवस्था में | ऐक्षत् | १३. | इच्छा करते थे |
| मात्रा, | ८. | माता के द्वारा | रचयन् | ७. | लगे रहते थे (और) |
| प्रातराशाय | ९. | कलेवे के लिये | यस्य, | ५. | जिस (भगवान् श्रीकृष्ण) की |
| याचितः । | १०. | वार-वार कहे जाने पर (भी) | सपर्याम् | ६. | सेवा में |
| तत् | ११. | उसकी | बाल | ३. | वाल |
| | | | लीलया ॥ | ४. | क्रीडा के माध्यम से |

श्लोकार्थ—पाँच वर्ष की अवस्था में जो उद्धव जी वाल क्रीड़ा के माध्यम से जिस भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा में लगे रहते थे और माता के द्वारा कलेवे के लिये वार-वार कहे जाने पर भी उसकी इच्छा नहीं करते थे ।

## तृतीयः श्लोकः

स कथं सेवया तस्य, कालेन जरसं गतः ।
पृष्टो वार्तां प्रतिब्रूयाद्भर्तुः पादावनुस्मरन् ॥३॥

पदच्छेद—

सः कथम् सेवया तस्य, कालेन जरसम् गतः ।
पृष्टः वार्ताम् प्रतिब्रूयात्, भर्तुः पादौ अनुस्मरन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वही (उद्धव जी) | पृष्टः | ११ | पूछने पर भी (वे) |
| कथम् | १२. | कैसे | वार्ताम् | १०. | कृष्ण लीला के बारे में |
| सेवया | ३. | सेवा करते-करते | प्रतिब्रूयात् | १३. | उत्तर दे सकते थे |
| तस्य, | २. | भगवान् श्री कृष्ण की | भर्तुः | ७. | (अपने) स्वामी श्री कृष्ण के |
| कालेन | ४. | समय के साथ | पादौ | ८. | चरणों में |
| जरसम् | ५ | बुढ़ापे को | अनुस्मरन् ॥ | ९. | लीन थे (अतः) |
| गतः । | ६. | प्राप्त हो गये थे (वे) | | | |

श्लोकार्थ—वही उद्धव जी भगवान् श्री कृष्ण की सेवा करते करते समय के साथ बुढ़ापे को प्राप्त हो गये थे। वे अपने स्वामी श्री कृष्ण के चरणों में लीन थे, अतः कृष्ण लीला के बारे में पूछने पर भी वे कैसे उत्तर दे सकते थे ?

## चतुर्थः श्लोकः

स मुहूर्तमभूत्तूष्णीं कृष्णाङ्घ्रिसुधया भृशम् ।
तीव्रेण भक्तियोगेन निमग्नः साधु निर्वृतः ॥४॥

पदच्छेद—

सः मुहूर्तम् अभूत् तूष्णीम्, कृष्ण अङ्घ्रि सुधया भृशम् ।
तीव्रेण भक्तियोगेन, निमग्नः साधु निर्वृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे (उद्धव जी) | भृशम् । | ७. | अत्यन्त |
| मुहूर्तम् | ११. | दो घड़ी तक | तीव्रेण | २. | तीव्र |
| अभूत् | १३. | रहे | भक्ति योगेन, | ३. | भक्ति योग के द्वारा |
| तूष्णीम्, | १२. | मौन | निमग्नः | ८. | डूबे हुये |
| कृष्ण | ४. | भगवान् श्री कृष्ण के | साधु | ९. | परम |
| अङ्घ्रि | ५. | चरणारविन्द के | निर्वृतः ॥ | १०. | आनन्द मग्न थे (अतः) |
| सुधया | ६. | अमृत रस में | | | |

श्लोकार्थ—वे उद्धव जी तीव्र भक्ति योग के द्वारा भगवान् श्री कृष्ण के चरणारविन्द के अमृत रस में अत्यन्त डूबे हुये परम आनन्द मग्न थे, अतः दो घड़ी तक मौन रहे ।

## पञ्चमः श्लोकः

पुलकोद्भिन्नसर्वाङ्गो मुञ्चन्मीलद्दृशा शुचः ।
पूर्णार्थो लक्षितस्तेन स्नेहप्रसरसम्प्लुतः ।।५।।

पदच्छेद—

पुलक उद्भिन्न सर्व अङ्गः, मुञ्चत् मीलत् दृशा शुचः ।
पूर्ण अर्थः लक्षितः तेन, स्नेह प्रसर सम्प्लुतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुलक | ३. | रोंगटे | शुचः । | ७. | आंसुओं की धारा |
| उद्भिन्न | ४ | खड़े हो गये थे (और उनकी) | पूर्ण अर्थः | १३. | कृत-कृत्य |
| सर्व | १. | (उद्धव जी के) सारे | लक्षितः | १४. | माना |
| अङ्गः, | २. | शरीर में | तेन, | १२. | विदुर जी ने |
| मुञ्चत् | ८. | वह रही थी (इस प्रकार) | स्नेह | ९. | प्रेम के |
| मीलत् | ५. | मुँदी हुई | प्रसर | १०. | प्रवाह में |
| दृशा | ६. | आंखों से | सम्प्लुतः ।। | ११. | डूबे हुये (उद्धव जी को) |

श्लोकार्थ—उद्धव जी के सारे शरीर में रोंगटे खड़े हो गये थे और उनकी मुँदी हुई आँखों से आँसुओं की धारा वह रही थी । इस प्रकार प्रेम के प्रवाह में डूबे हुये उद्धव जी को विदुर जी ने कृत-कृत्य माना ।

## षष्ठः श्लोकः

शनकैर्भगवल्लोकान्नृलोकं पुनरागतः ।
विमृज्य नेत्रे विदुरं प्रत्याहोद्धव उत्स्मयन् ।।६।।

पदच्छेद—

शनकैः भगवत् लोकात्, नृ लोकम् पुनः आगतः ।
विमृज्य नेत्रे विदुरम्, प्रत्याह उद्धवः उत्स्मयन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शनकैः | ५. | धीरे-धीरे | विमृज्य | ९. | पोछ कर |
| भगवत् | ३. | भगवान् के | नेत्रे | ८. | आंखो को |
| लोकात्, | ४. | प्रेमधाम से | विदुरम्, | ११. | विदुर जी से |
| नृ लोकम् | ६. | मनुष्य लोक में | प्रत्याह | १२. | बोले |
| पुनः | १. | तदनन्तर | उद्धवः | २. | उद्धव जी |
| आगतः । | ७. | उतर आये (और) | उत्स्मयन् ।। | १० | विस्मित होते हुये |

श्लोकार्थ—तदनन्तर उद्धव जी भगवान् के प्रेमधाम से धीरे-धीरे मनुष्य लोक में उतर आये और आंखों को पोछ कर विस्मित होते हुये विदुर जी से बोले ।

## सप्तमः श्लोकः

उद्धव उवाच—

कृष्णद्युमणिनिम्लोचे गीर्णेष्वजगरेण ह ।
किं नु नः कुशलं ब्रूयां गतश्रीषु गृहेष्वहम् ।।७।।

पदच्छेद—

कृष्ण द्युमणि निम्लोचे, गीर्णेषु अजगरेण ह ।
किम् नु नः कुशलम् ब्रूयाम्, गत श्रीषु गृहेषु अहम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृष्ण | १. | श्रीकृष्ण रूप | नः | ११. | उनकी |
| द्युमणि | २. | सूर्य के | कुशलम् | १३. | कुशल |
| निम्लोचे, | ३. | अस्त हो जाने से | ब्रूयाम्, | १४. | बताऊँ |
| गीर्णेषु | ६. | निगल लिया है (और वे) | गत | ८. | रहित हो गये हैं |
| अजगरेण | ५. | काल रूप अजगर ने | श्रीषु | ७. | शोभा से |
| ह । | ९. | अतः | गृहेषु | ४. | हमारे घरों को |
| किम् नु | १२. | क्या | अहम् ।। | १०. | मैं |

श्लोकार्थ—श्री कृष्ण रूप सूर्य के अस्त हो जाने से हमारे घरों को काल रूप अजगर ने निगल लिया है और वे शोभा से रहित हो गये हैं, अतः मैं उनकी क्या कुशल बताऊँ ।

## अष्टमः श्लोकः

दुर्भगो बत लोकोऽयं यदवो नितरामपि ।
ये संवसन्तो न विदुर्हरिं मीना इवोडुपम् ।।८।।

पदच्छेद—

दुर्भगः बत लोकः अयम्, यदवः नितराम् अपि ।
ये संवसन्तः न विदुः, हरिम् मीनाः इव उडुपम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दुर्भगः | ४. | अभागा है | संवसन्तः | ९. | साथ रहते हुये भी |
| बत | १. | दुःख की बात है कि | न | ११. | नहीं |
| लोकः | ३. | संसार | विदुः, | १२. | पहचान सके |
| अयम्, | २. | यह | हरिम् | १०. | भगवान् श्रीकृष्ण को |
| यदवः | ५. | यादव लोग तो | मीनाः | १४. | मछलियाँ (समुद्र में) |
| नितराम् | ७. | अधिक (अभागे हैं) | इव | १३ | जैसे |
| अपि । | ६. | और भी | उडुपम् ।। | १५. | चन्द्रमा को (नहीं जान सकीं) |
| ये | ८. | जो | | | |

श्लोकार्थ—दुःख की बात है कि यह संसार अभागा है । यादव लोग तो और भी अधिक अभागे हैं, जो साथ रहते हुये भी भगवान् श्रीकृष्ण को नहीं पहचान सके । जैसे मछलियां समुद्र में रहते समय चन्द्रमा को नहीं जान सकीं ।

# नवमः श्लोकः

इङ्गितज्ञाः पुरुप्रौढा एकारामाश्च सात्वताः ।
सात्वतामृषभं सर्वे भूतावासममंसत ॥९॥

पदच्छेद—

इङ्गितज्ञाः पुरु प्रौढाः, एक आरामाः च सात्वताः ।
सात्वताम् ऋषभम् सर्वे, भूत आवासम् अमंसत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इङ्गितज्ञाः | २. | मनोभावों को जानने वाले | सात्वताम् | ११. | (केवल) यादवों में |
| पुरु | ३. | बड़े | ऋषभम् | १२. | प्रधान |
| प्रौढाः, | ४. | बुद्धिमान् | सर्वे, | ८. | वे सभी |
| एक | ६. | एक साथ | भूत | ९. | प्राणि मात्र के |
| आरामाः | ७. | खेलने वाले (थे) | आवासम् | १०. | आश्रय (श्री कृष्ण) को |
| च | ५. | और | अमंसत ॥ | १३. | मानते रहे |
| सात्वताः । | १. | यादव लोग | | | |

श्लोकार्थ—यादव लोग मनोभावों को जानने वाले, बड़े बुद्धिमान् और एक साथ खेलने वाले थे। वे सभी प्राणि-मात्र के आश्रय भगवान् श्री कृष्ण को केवल यादवों में प्रधान मानते रहे।

# दशमः श्लोकः

देवस्य मायया स्पृष्टा ये चान्यदसदाश्रिताः ।
भ्राम्यते धीर्न तद्वाक्यैरात्मन्युप्तात्मनो हरौ ॥१०॥

पदच्छेद—

देवस्य मायया स्पृष्टाः, ये च अन्यत् असत् आश्रिताः ।
भ्राम्यते धीः न तद् वाक्यैः, आत्मनि उप्त आत्मनः हरौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवस्य | २. | भगवान् की | भ्राम्यते | १६. | भ्रम में पड़ती थी |
| मयया | ३. | माया से | धीः | १४. | बुद्धि |
| स्पृष्टाः, | ४. | मोहित | न | १५. | नहीं |
| ये | ५. | जो | तद् | ९. | उनके |
| च | १. | किन्तु | वाक्यैः, | १०. | निन्दित वचनों से |
| अन्यत् | ६. | दूसरे (शिशुपाल आदि) | आत्मनि | ११. | आत्म रूप |
| असत् | ७. | अन्याय मार्ग पर | उप्त-आत्मनः | १३. | भक्ति करने वालों की |
| आश्रिताः। | ८. | चलने वाले थे | हरौ ॥ | १२. | भगवान् श्री कृष्ण में |

श्लोकार्थ—किन्तु भगवान् की माया से मोहित जो दूसरे शिशुपाल आदि अन्याय मार्ग पर चलने वाले थे, उनके निन्दित वचनों से आत्मरूप भगवान् श्रीकृष्ण में भक्ति करने वाले महात्माओं की बुद्धि भ्रम में नहीं पड़ती थी।

## एकादशः श्लोकः

प्रदर्श्यातप्ततपसामवितृप्तदृशां नृणाम् ।
आदायान्तरधाद्यस्तु स्वबिम्बं लोकलोचनम् ॥११॥

पदच्छेद—

प्रदर्श्य अतप्त तपसाम्, अवितृप्त दृशाम् नृणाम् ।
आदाय अन्तरधात् यः तु, स्व बिम्बम् लोक लोचनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| प्रदर्श्य | ५. दर्शन देकर | अन्तरधात् | १४. अन्तर्धान हो गये |
| अतप्त | ३. नहीं करने वाले | यः | १ वे (भगवान् श्री कृष्ण) |
| तपसाम्, | २. तपस्या | तु | ६. तथा |
| अवितृप्त | ८. तृप्त किये विना (ही) | स्व | ११. अपने |
| दृशाम् | ७. उनके नेत्रों को | बिम्बम् | १२ श्री विग्रह को |
| नृणाम् । | ४. मनुष्यों को (भी) | लोक | ९ तीनों लोकों को |
| आदाय | १३. छिपा कर | लोचनम् ॥ | १०. मोहने वाले |

श्लोकार्थ—वे भगवान् श्री कृष्ण तपस्या नहीं करने वाले मनुष्यों को भी दर्शन देकर तथा उनके नेत्रों को तृप्त किये विना ही तीनों लोकों को मोहने वाले अपने श्री विग्रह को छिपा कर अन्तर्धान हो गये।

## द्वादशः श्लोकः

यन्मर्त्यलीलौपयिकं स्वयोग—मायाबलं दर्शयता गृहीतम् ।
विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धेः, परं पदं भूषणभूषणाङ्गम् ॥१२॥

पदच्छेद—

यत् मर्त्य लीला औपयिकम् स्व योग, माया बलम् दर्शयता गृहीतम् ।
विस्मापनम् स्वस्य च सौभग ऋद्धेः, परम् पदम् भूषण भूषण अङ्गम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यत् | ७. जिस (श्री विग्रह) को | विस्मापनम् | १०. आश्चर्यचकित (रहते थे वह) |
| मर्त्य, लीला | ५. मनुष्य, लीला के | स्वस्य | ९. (उससे) स्वयं (भी) |
| औपयिकम् | ६. योग्य | च | १३ तथा |
| स्व | १. अपनी | सौभग, ऋद्धेः, | ११ सौभाग्य (और), सुन्दरता का |
| योग, माया | २. वैष्णवी शक्ति के | परम्, पदम् | १२. सबसे उत्तम, स्थान |
| बलम् | ३. प्रभाव को | भूषण | १५. आभूषणों का भी |
| दर्शयता | ४. दिखाते हुये (भगवान् ने) | भूषण | १६ आभूषण (था) |
| गृहीतम् । | ८. धारण किया था | अङ्गम् ॥ | १४. शरीर के |

श्लोकार्थ—अपनी वैष्णवी शक्ति के प्रभाव को दिखाते हुये भगवान् ने मनुष्य लीला के योग्य जिस श्री विग्रह को धारण किया था, उससे स्वयं भी आश्चर्य चकित रहते थे। वह सौभाग्य और सुन्दरता का सबसे उत्तम स्थान तथा शरीर के आभूषणों का भी आभूषण था।

# त्रयोदशः श्लोकः

यद्धर्मसूनोर्बत राजसूये, निरीक्ष्य दृक्स्वस्त्ययनं त्रिलोकः ।
कार्त्स्न्येन चाद्येह गतं विधातु-रर्वाक्सृतौ कौशलमित्यमन्यत ।।१३।।

पदच्छेद—
यत् धर्म सूनोः बत राजसूये, निरीक्ष्य दृक् स्वस्त्ययनम् त्रिलोकः ।
कार्त्स्न्येन च अद्य इह गतम् विधातुः, अर्वाक् सृतौ कौशलम् इति अमन्यत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | ७. | जिस (श्री विग्रह) को | कार्त्स्न्येन | १५. | पूरी तरह से |
| धर्मसूनोः | ३. | धर्मराज युधिष्ठिर के | च | १०. | कि |
| बत | १. | आश्चर्य है कि | अद्य, इह | १४. | आज, इसी रूप में |
| राजसूये, | ४. | राजसूय यज्ञ में | गतम् | १६. | समा गई है |
| निरीक्ष्य | ८. | देखकर | विधातुः, | ११. | ब्रह्मा की |
| दृक् | ५. | आंखों के लिये | अर्वाक् | १२. | अब तक की |
| स्वस्त्ययनम् | ६. | कल्याणकारी | सृतौ, कौशलम् | १३. | सृष्टि रचना की चतुराई |
| त्रिलोकः । | २. | तीनों लोकों के लोगों ने | इति, अमन्यत ।। | ९. | ऐसा, माना था |

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि तीनों लोकों के लोगों ने धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आंखों के लिये कल्याणकारी जिस श्री विग्रह को देख कर ऐसा माना था कि ब्रह्मा की अब तक की सृष्टि रचना की चतुराई आज इसी रूप में पूरी तरह से समा गई है ।

# चतुर्दशः श्लोकः

यस्यानुरागप्लुतहासरास-लीलावलोकप्रतिलब्धमानाः ।
व्रजस्त्रियो दृग्भिरनुप्रवृत्त-धियोऽवतस्थुः किल कृत्यशेषाः ।।१४।।

पदच्छेद—
यस्य अनुराग प्लुत हास रास, लीला अवलोक प्रतिलब्ध मानाः ।
व्रज स्त्रियः दृग्भिः अनुप्रवृत्त, धियः अवतस्थुः किल कृत्य शेषाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्य | १. | जिस (भगवान् श्रीकृष्ण) की | व्रज, स्त्रियः | ९. | व्रज की गोपियाँ |
| अनुराग | २. | प्रेम से | दृग्भिः | १०. | दृष्टि से |
| प्लुत | ३. | परिपूर्ण | अनुप्रवृत्त, | १२. | (उन्हीं में) लगा कर |
| हास | ४. | हँसी | धियः | ११. | अपने ध्यान को |
| रास, | ५. | विनोद (और) | अवतस्थुः | १६. | बैठी ही रहती थीं |
| लीला | ६ | तिरछी | किल | १३. | तथा |
| अवलोक | ७. | चितवन से | कृत्य | १४. | सारा काम-काज |
| प्रतिलब्ध मानाः। | ८. | सम्मानित की गई | शेषाः ।। | १५. | छोड़ कर |

श्लोकार्थ—जिस भगवान् श्रीकृष्ण की प्रेम से परिपूर्ण हँसी, विनोद और तिरछी चितवन से सम्मानित की गई व्रज की गोपियां दृष्टि से अपने ध्यान को उन्हीं में लगा कर तथा सारा काम-काज छोड़ कर बैठी ही रहती थीं ।

# पञ्चदशः श्लोकः

स्वशान्तरूपेष्वितरैः स्वरूपै-रभ्यर्द्यमानेष्वनुकम्पितात्मा ।
परावरेशो महदंशयुक्तो, ह्यजोऽपि जातो भगवान् यथाग्निः ॥१५॥

पदच्छेद— स्व शान्त रूपेषु इतरैः स्वरूपैः, अभ्यर्द्यमानेषु अनकम्पित आत्मा ।
पर अवर ईशः महत् अंश युक्तः, हि अजः अपि जातः भगवान् यथा अग्निः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्न | ७. | अपने (भक्तों को) | ईशः | २. | स्वामी |
| शान्त रूपेषु | ६. | शान्त स्वरूप | महत्, अंश | १२. | महान् अंश, बलराम जी के |
| इतरैः | ४. | अशान्त | युक्तः, हि | १३. | साथ, हो |
| स्वरूपैः, | ५. | स्वरूप (असुरों) से | अजः, अपि | ११. | अजन्मा होने पर, भी |
| अभ्यर्द्यमानेषु | ८ | पीड़ित देखे (और) | जातः | १४ | उत्पन्न हुये |
| अनुकम्पित | ९ | दया से द्रवित | भगवान् | ३. | भगवान् श्री कृष्ण |
| आत्मा । | १०. | होकर | यथा | १५. | जैसे (काष्ठ से) |
| पर अवर | १. | चराचर के | अग्निः ॥ | १६. | अग्नि उत्पन्न होती है |

श्लोकार्थः—चराचर के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण अशान्त स्वरूप असुरों से शान्त स्वरूप अपने भक्तों को पीड़ित देखे और दया से द्रवित होकर अजन्मा होने पर भी अपने महान् अंश बलराम जी के साथ ही उत्पन्न हुये । जैसे काष्ठ से अग्नि उत्पन्न होती है ।

# षोडशः श्लोकः

मां खेदयत्येतदजस्य जन्म, विडम्बनं यद्वसुदेवगेहे ।
व्रजे च वासोऽरिभयादिस्वयंद्, पुराद् व्यवात्सीद् यदनन्तवीर्यः ॥१६॥

पदच्छेद— माम् खेदयति एतद् अजस्य जन्म, विडम्बनम् यद् वसुदेव गेहे ।
व्रज च वासः अरि भयात् इव स्वयम्, पुरात् व्यवात्सीत् यद् अनन्त वीर्यः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| माम् | १५. | मुझे | च | १०. | और |
| खेदयति | १६. | बेचैन कर रही हैं | वासः | ९. | छिप कर रहना |
| एतद् | १४. | ये (सब लीलाएँ) | अरि, भयात् | ६. | शत्रु कंस के, भय से |
| अजस्य | १. | अजन्मा भगवान् का | इव | ५. | मानो |
| जन्म,विडम्बनम् | ४. | जन्म लेने की, लीला करना | स्वयम्, | ७ | अपने आप |
| यद् | २. | जो | पुरात्,व्यवात्सीत् | १३. | मथुरा पुरी से, भागजाना है |
| वसुदेव, गेहे । | ३. | वसुदेव जी के घर में | यद् | १२. | जो (कालयवन के डर से) |
| व्रजे | ८. | व्रज में | अनन्त वीर्यः | ११. | अनन्त शक्तिशाली होकर |

श्लोकार्थ :—अजन्मा होकर भी भगवान् का जो वसुदेव जी के घर में जन्म लेने की लीला करना है, मानो शत्रु कंस के भय से अपने आप व्रज में छिप कर रहना है और अनन्त शक्तिशाली होकर भी जो कालयवन के डर से मथुरा पुरी से भाग जाना है, ये सब लीलायें मुझे बेचैन कर रही हैं ।

## सप्तदशः श्लोकः

**दुनोति चेतः स्मरतो ममैतद्, यदाह पादावभिवन्द्य पित्रोः ।**
**ताताम्ब कंसादुरुशङ्कितानां, प्रसीदतं नोऽकृतनिष्कृतीनाम् ॥१७॥**

पदच्छेद—

दुनोति चेत स्मरतः मम एतद्, यद् आह पादौ अभिवन्द्य पित्रोः ।
तात अम्ब कंसात् उरु शङ्कितानाम्, प्रसीदतम् नः अकृत निष्कृतीनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दुनोति | १६ | दुःख हो रहा है | तात, अम्ब | ५. | हे तात ! हे मातः ! |
| चेतः | १५. | मन में (बहुत) | कंसात् | ६. | कंस से |
| स्मरतः, मम | १४. | स्मरण करते हुये, मेरे | उरु | ७ | बहुत |
| एतद्, | १३. | इसका | शङ्कितानाम्, | ८. | डरे हुये (तथा आपकी) |
| यद्, आह | ४. | जो (यह), कहा था (कि) | प्रसीदतम् | १२ | प्रसन्न होवें |
| पादौ | २. | चरणों की | नः | १०. | मुझ |
| अभिवन्द्य | ३. | वन्दना करके (भगवान् ने) | अकृत | ९. | सेवा न करने वाले |
| पित्रोः । | १. | माता-पिता के | निष्कृतीनाम्॥ | ११. | अपराधी पर (आप) |

श्लोकार्थ माता-पिता के चरणों की वन्दना करके भगवान् ने जो यह कहा था कि 'हे तात ! हे मातः ! कंस से बहुत डरे हुये तथा आपकी सेवा न करने वाले मुझ अपराधी पर आप प्रसन्न होवें, इसका स्मरण करते हुये मेरे मन में बहुत दुःख हो रहा है ।

## अष्टादशः श्लोकः

**को वा अमुष्याङ्घ्रिसरोजरेणुं, विस्मर्तुमीशीत पुमान् विजिघ्रन् ।**
**यो विस्फुरद्भ्रूविटपेन भूमे—र्भारं कृतान्तेन तिरश्चकार ॥१८॥**

पदच्छेद—

कः वा अमुष्य अङ्घ्रि सरोज रेणुम्, विस्मर्तुम् ईशीत पुमान् विजिघ्रन् ।
यः विस्फुरत् भ्रू विटपेन भूमेः, भारम् कृतान्तेन तिरश्चकार ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | १३. | कौन | यः | १ | जिन्होंने |
| वा | १५. | उन्हें | विस्फुरत् | ३. | फड़कती |
| अमुष्य | ९. | उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के | भ्रू | ४. | भौंहों के |
| अङ्घ्रि, सरोज | १०. | चरण, कमल के | विटपेन | ५ | विलास से |
| रेणुम्, | ११. | पराग का | भूमेः, | ६. | पृथ्वी के |
| विस्मर्तुम्, ईशीत | १६ | भूल, सकेगा | भारम् | ७. | बोझ को |
| पुमान् | १४. | पुरुष | कृतान्तेन | २. | काल रूप |
| विजिघ्रन् । | १२. | सेवन करता हुआ | तिरश्चकार ॥ | ८. | उतार दिया |

श्लोकार्थ—जिन्होंने कालरूप फड़कती भौंहों के विलास से पृथ्वी के बोझ को उतार दिया, उन भगवान् श्रीकृष्ण के चरण कमल के पराग का सेवन करता हुआ कौन पुरुष उन्हें भूल सकेगा ?

## एकोनविंश: श्लोक:

दृष्टा भवद्भिर्ननु राजसूये, चैद्यस्य कृष्णं द्विषतोऽपि सिद्धिः ।
यां योगिनः संस्पृहयन्ति सम्यग्, योगेन कस्तद्विरहं सहेत ॥१९॥

पदच्छेद—

दृष्टा भवद्भिः ननु राजसूये, चैद्यस्य कृष्णम् द्विषतः अपि सिद्धिः ।
याम् योगिनः संस्पृहयन्ति सम्यग्, योगेन कः तद् विरहम् सहेत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दृष्टा | ८. | देखी होगी | याम् | ११. | जिस (उत्तम गति) की |
| भवद्भिः | २. | आप लोगों ने | योगिनः | ९. | योगीजन (भी) |
| ननु | ७. | संभवतः | संस्पृहयन्ति | १२. | इच्छा करते हैं (अतः) |
| राजसूये, | १. | (युधिष्ठिर के) राजसूय यज्ञ में | सम्यग्, योगेन | १०. | तीव्र, योग के द्वारा |
| चैद्यस्य | ५. | शिशुपाल की | कः | १३ | कौन (व्यक्ति) |
| कृष्णम् | ३. | भगवान् श्रीकृष्ण से | तद् | १४. | उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के |
| द्विषतः, अपि | ४. | वैर करने पर, भी | विरहम् | १५. | वियोग को |
| सिद्धिः । | ६ | उत्तम गति | सहेत ॥ | १६. | सह सकता है |

श्लोकार्थ—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में आप लोगों ने भगवान् श्रीकृष्ण से वैर करने पर भी शिशुपाल की उत्तम गति संभवतः देखी होगी । योगीजन भी तीव्र योग के द्वारा जिस उत्तम गति की इच्छा करते हैं । अतः कौन व्यक्ति उन भगवान् श्रीकृष्ण के वियोग को सह सकता है ।

## विंश: श्लोक:

तथैव चान्ये नरलोकवीरा, य आहवे कृष्णमुखारविन्दम् ।
नेत्रैः पिबन्तो नयनाभिरामं, पार्थास्त्रपूताः पदमापुरस्य ॥२०॥

पदच्छेद—

तथैव च अन्ये नरलोक वीराः, ये आहवे कृष्ण मुख अरविन्दम् ।
नेत्रैः पिबन्तः नयन अभिरामम्, पार्थ अस्त्र पूताः पदम् आपुः अस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तथैव, च | १. | उसी प्रकार, और | नेत्रैः, पिबन्तः | ११. | आंखों से, पान करते हुये |
| अन्ये | ३. | दूसरे | नयन | ७. | नेत्रों को |
| नरलोक | ४. | मनुष्य लोक के | अभिरामम्, | ८. | सुन्दर लगने वाले |
| वीराः | ५. | योद्धा थे (वे) | पार्थ, अस्त्र | १२. | अर्जुन के, गाण्डीव धनुष से |
| ये | २. | जो | पूताः | १३. | पवित्र होकर |
| आहवे | ६. | युद्ध में | पदम् | १५. | धाम को |
| कृष्ण मुख | ९. | भगवान् श्रीकृष्ण के मुख | आपुः | १६. | प्राप्त कर लिये थे |
| अरविन्दम् । | १०. | कमल का | अस्य ॥ | १४. | इन के |

श्लोकार्थ—उसी प्रकार और जो दूसरे मनुष्य-लोक के योद्धा थे, वे युद्ध में नेत्रों को सुन्दर लगने वाले भगवान् श्रीकृष्ण के मुख-कमल का आंखों से पान करते हुये अर्जुन के गाण्डीव धनुष से पवित्र होकर इनके धाम को प्राप्त कर लिये थे ।

## एकविंशः श्लोकः

स्वयं त्वसाम्यातिशयस्त्र्यधीशः, स्वाराज्यलक्ष्म्याप्तसमस्तकामः ।
बलिं हरद्भिश्चिरलोकपालैः, किरीटकोट्येडितपादपीठः ।।२१।।

पदच्छेद—

स्वयम् तु असाम्य अतिशयः त्रि अधीशः, स्वाराज्य लक्ष्म्या आप्त समस्त कामः ।
बलिम् हरद्भिः चिर लोकपालैः, किरीट कोट्या ईडित पाद पीठः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वयम् | ३. | (भगवान् श्रीकृष्ण) स्वयं | बलिम् | १०. | भेंट-पूजा |
| तु | ५. | तथा | हरद्भिः | ११. | चढ़ाते हुये |
| असाम्य | १. | बरावर और | चिर,लोकपालैः, | ९. | असंख्य; लोकपाल |
| अतिशयः | २. | अधिक महिमा वालों से रहित | किरीट | १२. | मुकुटों के |
| त्रि अधीशः, | ४. | तीनों लोकों के अधिपति हैं | कोट्या | १३. | अग्रभाग से (उनके) |
| स्वाराज्य,लक्ष्म्या | ६. | अपनी राज्य लक्ष्मी के कारण | ईडित | १६. | प्रणाम करते रहते हैं |
| आप्त | ८. | परिपूर्ण हैं | पाद | १४. | चरणों की |
| समस्त, कामः । | ७. | सभी कामनाओं से | पीठः ।। | १५. | चौकी को |

श्लोकार्थ—बरावर और अधिक महिमा वालों से रहित भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं तीनों लोकों के अधिपति हैं तथा अपनी राज्यलक्ष्मी के कारण सभी कामनाओं से परिपूर्ण हैं। असंख्य लोकपाल भेंट पूजा चढ़ाते हुये मुकुटों के अग्रभाग से उनके चरणों की चौकी को प्रणाम करते रहते हैं।

## द्वाविंशः श्लोकः

तत्तस्य कैङ्कर्यमलं भृतान्नो, विग्लापयत्यङ्ग यदुग्रसेनम् ।
तिष्ठन्निषण्णं परमेष्ठिधिष्ण्ये, न्यबोधयद्देव निधारयेति ।।२२।।

पदच्छेद—

तत् तस्य कैङ्कर्यम् अलम् भृताम् नः, विग्लापयति अङ्ग यद् उग्रसेनम् ।
तिष्ठन् निषण्णम् परमेष्ठि धिष्ण्ये, न्यबोधयत् देव निधारय इति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | १२. | वह कहना | उग्रसेनम् । | ४. | उग्रसेन के सामने |
| तस्य | ११. | उनका | तिष्ठन् | ५. | खड़े होकर |
| कैङ्कर्यम् | १३. | सेवा-टहल | निषण्णम् | ३. | आसीन |
| अलम् | १५. | बहुत | परमेष्ठि, धिष्ण्ये | २. | राजा के, सिंहासन पर |
| भृताम्, नः, | १४. | करने वाले, हम (सेवकों) को | न्यबोधयत् | ७. | निवेदन करते थे |
| विग्लापयति | १६. | व्यथित कर देता है | देव | ९. | हे महाराज ! |
| अङ्ग | १. | हे तात ! (भगवान् श्रीकृष्ण) | निधारय | १०. | मेरी प्रार्थना सुनें |
| यद् | ६. | जो | इति ।। | ८. | कि |

श्लोकार्थ—हे तात ! भगवान् श्रीकृष्ण राजा के सिंहासन पर आसीन उग्रसेन के सामने खड़े होकर जो निवेदन करते थे कि 'हे महाराज ! मेरी प्रार्थना सुनें' उनका वह कहना सेवा-टहल करने वाले हम सेवकों को बहुत व्यथित कर देता है।

## त्रयोविंश: श्लोक:

अहो बकी यं स्तनकालकूटं, जिघांसयापाययदप्यसाध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं, कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ॥२३॥

**पदच्छेद—**

अहो बकी यम् स्तन कालकूटम्, जिघांसया अपाययत् अपि असाध्वी ।
लेभे गतिम् धात्री उचिताम् ततः अन्यम्, कम् वा दयालुम् शरणम् व्रजेम ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहो, बकी | १. | अरे ! पूतना ने | लेभे | ११. | प्राप्त की थी |
| यम् | २. | जिन (भगवान् श्रीकृष्ण) को | गतिम् | १०. | उत्तम गति |
| स्तन | ४. | स्तनों में | धात्री, उचिताम् | ९. | धाय के, योग्य |
| कालकूटम्, | ५. | हलाहल विष लगाकर | ततः, अन्यम्, | १२. | अतः उनके, अतिरिक्त |
| जिघांसया | ३. | मारने की इच्छा से | कम् | १४. | किस |
| अपाययत् | ६. | (दूध) पिलाया (किन्तु) | वा | १३. | और |
| अपि | ८. | भी (उसने जिनसे) | दयालुम् | १५. | कृपालु की |
| असाध्वी । | ७. | पापिनी होने पर | शरणम्,व्रजेम॥ | १६. | शरण, ग्रहण करें |

**श्लोकार्थ—**अरे ! पूतना ने जिन भगवान् श्रीकृष्ण को मारने की इच्छा से स्तनों में हलाहल विष लगा कर दूध पिलाया, किन्तु पापिनी होने पर भी उसने जिनसे धाय के योग्य उत्तम गति प्राप्त की । अतः उनके अतिरिक्त और किस कृपालु की शरण ग्रहण करें ।

## चतुर्विंश: श्लोक:

मन्येऽसुरान् भागवतांस्त्र्यधीशे, संरम्भमार्गाभिनिविष्टचित्तान् ।
ये संयुगेऽचक्षत ताक्ष्यपुत्र-मंसे सुनाभायुधमापतन्तम् ॥२४॥

**पदच्छेद—**

मन्ये असुरान् भागवतान् त्रि अधीशे, संरम्भ मार्ग अभिनिविष्ट चित्तान् ।
ये संयुगे अचक्षत ताक्ष्यपुत्रम्, अंसे सुनाभ आयुधम् आपतन्तम् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मन्ये | ८. | मानता हूँ | ये | ९. | जिन्होंने |
| असुरान् | ६. | असुरों को (मैं) | संयुगे | १०. | युद्ध में |
| भागवतान् | ७. | भगवद् भक्त | अचक्षत | १६. | देखा था |
| त्रि, अधीशे, | १. | तीनों लोकों के, स्वामी में | ताक्ष्यपुत्रम्, | १५. | गरुड़ को |
| संरम्भ | २. | क्रोध के | अंसे | १३. | कन्धे पर बैठा कर |
| मार्ग | ३. | द्वारा | सुनाभ | ११. | सुदर्शन चक्र |
| अभिनिविष्ट | ५. | लगाये हुये | आयुधम् | १२. | धारी भगवान् श्रीकृष्ण को |
| चित्तान् । | ४. | मन को | आपतन्तम् ॥ | १४. | झपटते हुये |

**श्लोकार्थ—**तीनों लोकों के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण में क्रोध के द्वारा मन को लगाये हुये असुरों को मैं भगवाद् भक्त मानता हूं. जिन्होंने युद्ध में सुदर्शन चक्रधारी भगवान् श्रीकृष्ण को कन्धे पर बैठा कर झपटते हुये गरुड़ को देखा था ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

वसुदेवस्य देवक्यां जातो भोजेन्द्रबन्धने ।
चिकीर्षुर्भगवानस्याः शमजेनाभियाचितः ॥२५॥

पदच्छेद—

वसुदेवस्य देवक्याम्, जातः भोजेन्द्र बन्धने ।
चिकीर्षुः भगवान् अस्याः, शम् अजेन अभियाचितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वसुदेवस्य | ९. | वसुदेव जी की (पत्नी) | चिकीर्षुः | ६. | करने के लिये (ही) |
| देवक्याम्, | १०. | देवकी के गर्भ से | भगवान् | ३. | भगवान् श्रीकृष्ण ने |
| जातः | ११. | अवतार लिया था | अस्याः, | ४. | इस (पृथ्वी) का |
| भोजेन्द्र | ७. | भोजराज कंस के | शम् | ५. | कल्याण |
| बन्धने। | ८. | कारागार में | अजेन | १. | ब्रह्मा जी के द्वारा |
| | | | अभियाचितः ॥ | २. | प्रार्थना करने पर |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के द्वारा प्रार्थना करने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने इस पृथ्वी का कल्याण करने के लिये ही भोजराज कंस के कारागार में वसुदेव जी की पत्नी देवकी के गर्भ से अवतार लिया था ।

## षड्विंशः श्लोकः

ततो नन्दव्रजमितः पित्रा कंसाद्विबिभ्यता ।
एकादश समास्तत्र गूढार्चिः सबलोऽवसत् ॥२६॥

पदच्छेद—

ततः नन्द व्रजम् इतः, पित्रा कंसात् विबिभ्यता ।
एकदश समाः तत्र, गूढ अर्चिः सबलः अवसत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | उस समय | एकादश | १२. | ग्यारह |
| नन्द | ६. | नन्द बाबा के | समाः | १३. | वर्ष की आयु तक |
| व्रजम् | ७. | व्रज में (पहुँचा दिया) | तत्र, | ८. | वहां पर (भगवान् ने) |
| इतः, | ५. | (भगवान् श्रीकृष्ण को) वहाँ से | गूढ | १०. | छिपा कर |
| पित्रा | ४. | पिता वसुदेव जी ने | अर्चिः | ९. | अपने प्रभाव को |
| कंसात् | २. | कंस से | सबलः | ११. | बलराम जी के साथ |
| विबिभ्यता। | ३. | डरते हुये | अवसत् ॥ | १४. | निवास किया था |

श्लोकार्थ—उस समय कंस से डरते हुये पिता वसुदेव जी ने भगवान् श्रीकृष्ण को वहाँ से नन्द बाबा के व्रज में पहुँचा दिया । वहाँ पर भगवान् ने अपने प्रभाव को छिपा कर बलराम जी के साथ ग्यारह वर्ष की आयु तक निवास किया ।

## सप्तविंशः श्लोकः

परीतो वत्सपैर्वत्सांश्चारयन् व्यहरद्विभुः ।
यमुनोपवने कूजद् द्विजसंकुलिताङ्घ्रिपे ॥२७॥

पदच्छेद—

परीतः वत्सपैः वत्सान्, चारयन् व्यहरत् विभुः ।
यमुना उपवने कूजत्, द्विज संकुलित अङ्घ्रिपे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परीतः | ११. | साथ | यमुना | ५. | यमुना नदी के |
| वत्सपैः | १०. | ग्वालों के | उपवने | ६. | उपवन में |
| वत्सान्, | ७. | बछड़ों को | कूजत्, | १. | (वहां) कलरव करते |
| चारयन् | ८. | चराते हुये | द्विज | २. | पक्षियों के झुण्ड से |
| व्यहरत् | १२. | विहार किया था | संकुलित | ३. | व्याप्त |
| विभुः । | ९. | भगवान् श्रीकृष्ण ने | अङ्घ्रिपे ॥ | ४. | वृक्षों वाले |

श्लोकार्थ—वहाँ कलरव करते पक्षियों के झुण्ड से व्याप्त वृक्षों वाले यमुना नदी के उपवन में बछड़ों को चराते हुये भगवान् श्रीकृष्ण ने ग्वालों के साथ विहार किया था ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

कौमारीं दर्शयंश्चेष्टां प्रेक्षणीयां व्रजौकसाम् ।
रुदन्निव हसन्मुग्धबालसिंहावलोकनः ॥२८॥

पदच्छेद—

कौमारीम् दर्शयन् चेष्टाम्, प्रेक्षणीयाम् व्रज ओकसाम् ।
रुदन् इव हसन् मुग्ध, बाल सिंह अवलोकनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कौमारीम् | ८. | बाल | रुदन् | ११. | कभी रोते थे (और) |
| दर्शयन् | १०. | दिखाते हुये श्री कृष्ण | इव | १२. | कभी |
| चेष्टाम्, | ९. | लीला | हसन् | १३. | हँसते थे |
| प्रेक्षणीयाम् | ७. | मनोहर | मुग्ध, | ४. | भोले |
| व्रज | १. | व्रज | बाल | ५. | बच्चे के |
| ओकसाम् । | २. | वासियों को | सिंह | ३. | सिंह के |
| | | | अवलोकनः ॥ | ६. | समान |

श्लोकार्थ—व्रज-वासियों को सिंह के भोले बच्चे के समान मनोहर बाल-लीला दिखाते हुये भगवान् श्रीकृष्ण कभी रोते थे और कभी हँसते थे ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

स एव गोधनं लक्ष्म्या निकेतं सितगोवृषम् ।
चारयन्ननुगान् गोपान् रणद्वेणुररीरमत् ॥२६॥

पदच्छेद—

सः एव गोधनम् लक्ष्म्याः, निकेतम् सित गोवृषम् ।
चारयन् अनुगान् गोपान्, रणत् वेणुः अरीरमत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | (कुछ बड़े होने पर) वे | चारयन् | ८. | चराते हुये |
| एव | २ | ही (भगवान् श्रीकृष्ण) | अनुगान् | ६. | अपने साथी |
| गोधनम् | ७. | गौओं को | गोपान्, | १०. | ग्वालों को |
| लक्ष्म्याः, | ५. | शोभा को | रणत् | १२. | तान से |
| निकेतम् | ६. | मूर्ति | वेणुः | ११. | वंशी की |
| सित | ३. | सफेद | अरीरमत् ॥ | १३. | रिझाते थे |
| गोवृषम् । | ४. | बैलों (और) | | | |

श्लोकार्थ—कुछ बड़े होने पर वे ही भगवान् श्रीकृष्ण सफेद बैलों और शोभा की मूर्ति गौओं को चराते हुये अपने साथी ग्वालों को वंशी की तान से रिझाते थे ।

# त्रिंशः श्लोकः

प्रयुक्तान् भोजराजेन मायिनः कामरूपिणः ।
लीलया व्यनुदत्तांस्तान् बालः क्रीडनकानिव ॥३०॥

पदच्छेद—

प्रयुक्तान् भोजराजेन, मायिनः कामरूपिणः ।
लीलया व्यनुदत् तान् तान्,बालः क्रीडनकान् इव ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रयुक्तान् | २. | भेजे गये (तथा) | व्यनुदत् | ७ | मार डाला था |
| भोजराजेन, | १. | भोजराज कंस के द्वारा | तान्-तान् | ५. | उन-उन (राक्षसों) को |
| मायिनः | ४. | मायावी | बालः | ६. | बालक |
| कामरूपिणः । | ३. | मनमाना रूप बदलने वाले | क्रीडनकान् | १०. | खिलौनों को(तोड़ डालता है) |
| लीलया | ६. | (भगवान् श्रीकृष्ण ने) खेल-खेल में ही | इव ॥ | ८. | जैसे |

श्लोकार्थ—भोजराज कंस के द्वारा भेजे गये तथा मनमाना रूप धारण करने वाले मायावी उन-उन राक्षसों को भगवान् श्रीकृष्ण ने खेल-खेल में ही मार डाला था, जैसे बालक खिलौनों को तोड़ डालता है ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

विपन्नान् विषपानेन निगृह्य भुजगाधिपम् ।
उत्थाप्यापाययद्गावस्तत्तोयं प्रकृतिस्थितम् ॥३१॥

पदच्छेद—

विपन्नान् विष पानेन, निगृह्य भुजग अधिपम् ।
उत्थाप्य अपाययत् ,गावः, तत् तोयम् प्रकृति स्थितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विपन्नान् | ६. | मरी हुयी | उत्थाप्य | ८. | जीवित करके (श्रीकृष्ण ने) |
| विष | ४. | जहर मिला हुआ जल | अपाययत् | १०. | पीने योग्य बनाया था |
| पानेन, | ५. | पीने से | गावः, | ७. | गउओं को |
| निगृह्य | ३. | दमन करके (तथा) | तत् | ९. | कालिय,दह के |
| भुजग | २. | कालिय नाग का | तोयम् | १०. | जल को |
| अधिपम् । | १. | नागराज | प्रकृति स्थितम् | ११. | निर्दोष |

श्लोकार्थ—नागराज कालिय नाग का दमन करके तथा जहर मिला हुआ जल पीने से मरी हुयी गउओं को जीवित करके भगवान् श्रीकृष्ण ने कालियदह के जल को निर्दोष पीने योग्य बनाया था ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

अयाजयद्गोसवेन गोपराजं द्विजोत्तमैः ।
वित्तस्य चोरुभारस्य चिकीर्षन् सद्व्ययं विभुः ॥३२॥

पदच्छेद—

अयाजयत् गोसवेन, गोपराजम् द्विज उत्तमैः ।
वित्तस्य च उरु भारस्य, चिकीर्षन् सद् व्ययम् विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अयाजयत् | १२. | गोयज्ञ कराया था | च | १. | तदनन्तर |
| गोसवेन, | ११. | गोवर्धन पूजा रूप | उरु भारस्य | ३. | बढ़े हुये |
| गोपराजम् | १०. | गोपराज नन्द बाबा से | चिकीर्षन् | ७. | कराने की इच्छा से |
| द्विज | ९. | ब्राह्मणों के द्वारा | सद् | ५. | सन्मार्ग में |
| उत्तमैः । | ८. | श्रेष्ठ | व्ययम् | ६. | व्यय |
| वित्तस्य | ४. | धन का | विभुः ॥ | २. | भगवान् श्रीकृष्ण ने |

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् श्रीकृष्ण ने बढ़े हुये धन का सन्मार्ग में व्यय कराने की इच्छा से श्रेष्ठ ब्राह्मणों के द्वारा गोपराज नन्द बाबा से गोवर्धन पूजा रूप गोयज्ञ कराया था ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

वर्षतीन्द्रे व्रजः कोपाद्भग्नमानेऽतिविह्वलः ।
गोत्रलीलातपत्रेण त्रातो भद्रानुगृह्णता ॥३३॥

पदच्छेद—

वर्षति इन्द्रे व्रजः कोपात्, भग्नमाने अति विह्वलः ।
गोत्र लीला आतपत्रेण, त्रातः भद्र अनुगृह्णता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वर्षति | ४. | मूसलाधार वर्षा करने लगे | गोत्र | ६. | गोवर्धन पर्वत को उठा कर |
| इन्द्रे | ३. | देवराज इन्द्र (उस समय) | लीला | ८. | खेल-खेल में |
| व्रजः | १२. | व्रजवासियों की | आतपत्रेण, | ७. | छत्ते के समान |
| कोपात्, | २. | क्रोध के कारण | त्रातः | १३. | रक्षा की थी |
| भग्नमाने | १. | (उससे) मान भंग समझ कर | भद्र | ५. | हे विदुर जी ! (उस समय भगवान् श्रीकृष्ण ने) |
| अति | १०. | बहुत | | | |
| विह्वलः । | ११. | घबड़ाये हुये | अनुगृह्णता ॥ | ६. | कृपा करके |

श्लोकार्थ—उस कर्म से मान भंग समझ कर क्रोध के कारण देवराज इन्द्र उस समय मूसलाधार वर्षा करने लगे । हे विदुर जी ! उस समय भगवान् श्रीकृष्ण ने कृपा करके छत्ते के समान खेल-खेल में गोवर्धन पर्वत को उठा कर बहुत घबड़ाये हुये व्रजवासियों की रक्षा की थी ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

शरच्छशिकरैर्मृष्टं मानयन् रजनीमुखम् ।
गायन् कलपदं रेमे स्त्रीणां मण्डलमण्डनः ॥३४॥

पदच्छेद—

शरत् शशि करैः मृष्टम्, मानयन् रजनी मुखम् ।
गायम् कल पदम् रेमे, स्त्रीणाम् मण्डल मण्डनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शरत् | १. | शरद् ऋतु के | गायन् | ८. | गाते हुये (भगवान् ने) |
| शशि | २. | चन्द्रमा की | कल पदम् | ७. | मनोहर गीत |
| करैः | ३. | चाँदनी से | रेमे, | १२. | रासलीला की थी |
| मृष्टम् | ४. | चमकती | स्त्रीणाम् | ९. | स्त्रियों के |
| मानयन् | ६. | सम्मान करते हुये (तथा) | मण्डल | १०. | समूह को |
| रजनी मुखम् । | ५. | संध्या का | मण्डनः ॥ | ११. | सुशोभित किया था और |

श्लोकार्थ—शरद् ऋतु के चन्द्रमा की चाँदनी से चमकती सन्ध्या का सम्मान करते हुये तथा मनोहर गीत गाते हुये भगवान् श्रीकृष्ण ने स्त्रियों के समूह को सुशोभित किया था और रासलीला की थी ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे द्वितीयः अध्यायः ॥२॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
तृतीयः स्कन्धः
अथ तृतीयः अध्यायः

# प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—

ततः स आगत्य पुरं स्वपित्रोश्चिकीर्षया शं बलदेवसंयुतः ।
निपात्य तुङ्गाद्रिपुयूथनाथं हतं व्यकर्षद् व्यसुमोजसोर्व्याम् ॥१॥

पदच्छेद— ततः सः आगत्य पुरम् स्व पित्रोः, चिकीर्षया शम् बलदेव संयुतः ।
निपात्य तुङ्गात् रिपु यूथ नाथम्, हतम् व्यकर्षद् व्यसुम् ओजसा उर्व्याम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः, सः | १. | उसके बाद, श्री कृष्ण | निपात्य | १२. | पटक कर |
| आगत्य | ८. | पधारे (वहां पर उन्होंने) | तुङ्गात् | ११. | ऊँचे सिंहासन से |
| पुरम् | ७. | मथुरा पुरी में | रिपु | ९. | शत्रु |
| स्व पित्रोः, | २. | अपने माता-पिता को | यूथ, नाथम | १०. | समूह के, स्वामी कंस को |
| चिकीर्षया | ४. | देने की इच्छा से | हतम् | १३. | मार डाला (तथा) |
| शम् | ३. | सुख | व्यकर्षत् | १६. | घसीटा था |
| बलदेव | ५. | बलराम जी के | व्यसुम् | १४. | (उसके) शव को |
| संयुतः । | ६. | साथ | ओजसा, उर्व्याम् | १५. | बड़े जोर से, पृथ्वी पर |

श्लोकार्थ—उसके बाद भगवान् श्रीकृष्ण अपने माता-पिता देवकी-वसुदेव को सुख देने की इच्छा से बलराम जी के साथ मथुरापुरी में पधारे । वहाँ पर उन्होंने शत्रु समूह के स्वामी कंस को ऊँचे सिंहासन से पटक कर मार डाला तथा उसके शव को बड़े जोर से पृथ्वी पर घसीटा था ।

# द्वितीयः श्लोकः

सान्दीपनेः सकृत्प्रोक्तं ब्रह्माधीत्य सविस्तरम् ।
तस्मै प्रादाद्वरं पुत्रं मृतं पञ्चजनोदरात् ॥२॥

पदच्छेद— सान्दीपनेः सकृत् प्रोक्तम्, ब्रह्म अधीत्य सविस्तरम् ।
तस्मै प्रादात् वरम् पुत्रम्, मृतम् पञ्चजन उदरात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सान्दीपनेः | १. | (भगवान् ने) सान्दीपनि मुनि के | तस्मै | १२. | उन्हें (जीवित रूप में) |
| | | | प्रादात् | १३. | प्रदान किया था |
| सकृत् | २. | मात्र एक बार के | वरम् | ७ | दक्षिणा के रूप में |
| प्रोक्तम्, | ३. | उच्चारण से | पुत्रम्, | ९. | पुत्र को |
| ब्रह्म | ४. | वेद का | मृतम् | ८ | (उनके) मरे हुये |
| अधीत्य | ६. | अध्ययन कर लिया (तथा) | पञ्चजन | १०. | पञ्चजन नामक राक्षस के |
| सविस्तरम् । | ५. | साङ्गोपांग | उदरात् ॥ | ११. | पेट से निकाल कर |

श्लोकार्थ—भगवान् ने सान्दीपनि मुनि के मात्र एक बार उच्चारण से वेद का सांगोपांग अध्ययन कर लिया तथा दक्षिणा के रूप में उनके मरे हुये पुत्र को पञ्चजन नामक राक्षस के पेट से निकाल कर उन्हें जीवित रूप में प्रदान किया था ।

# तृतीयः श्लोकः

**समाहुता भीष्मककन्यया ये, श्रियः सवर्णेन बुभूषयैषाम् ।**
**गान्धर्ववृत्त्या मिषतां स्वभागं, जह्रे पदं मूर्ध्नि दधत्सुपर्णः ।।३।।**

पदच्छेद— समाहुताः भीष्मक कन्यया ये, श्रियः सवर्णेन बुभूषया एषाम् ।
गान्धर्व वृत्त्या मिषताम् स्वभागम्, जह्रे पदम् मूर्ध्नि दधत् सुपर्णः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| समाहुताः | ६. | बुलाया था | वृत्त्या | १३. | विधि से (विवाह किया और) |
| भीष्मक | २. | पिता भीष्मक की | मिषताम् | ८. | देखते-देखते |
| कन्यया | ३. | पुत्री रुक्मिणी के साथ | स्वभागम्, | १४. | अपनी, अंशभूता रुक्मिणी का |
| ये, | ५. | जिन (शिशुपालादि) को | जह्रे | १५. | अपहरण किया |
| श्रियः, सवर्णेन | १. | रुक्मिणी के, भाई रुक्मी ने | पदम् | १०. | पैर |
| बुभूषया | ४. | विवाह कराने की इच्छा से | मूर्ध्नि | ९. | (उनके) मस्तक पर |
| एषाम् । | ७. | उनके | दधत् | ११. | रखकर (भगवान् श्रीकृष्ण ने) |
| गान्धर्व | १२. | गान्धर्व | सुपर्णः ।। | १६ | (जैसे) गरुड़ (अमृत कलश हर लिये थे) |

श्लोकार्थ—रुक्मिणी के भाई रुक्मी ने पिता भीष्मक की पुत्री रुक्मिणी के साथ विवाह कराने की इच्छा से जिन शिशुपालादि को बुलाया था, उनके देखते-देखते उनके मस्तक पर पैर रख कर भगवान् श्रीकृष्ण ने गान्धर्व विधि से विवाह किया और अपनी अंश भूता रुक्मिणी जी का अपहरण किया । जैसे गरुड़ अमृत कलश हर लिये थे ।

# चतुर्थः श्लोकः

**ककुद्मतोऽविद्धनसो दमित्वा, स्वयंवरे नाग्नजितीमुवाह ।**
**तद्भग्नमानानपि गृध्यतोऽज्ञाञ्जघ्नेऽक्षतः शस्त्रभृतः स्वशस्त्रैः ।।४।।**

पदच्छेद— ककुद्मतः अविद्धनसः दमित्वा, स्वयंवरे नाग्नजितीम् उवाह,
तद् भग्नमानान् अपि गृध्यतः अज्ञान्, जघ्ने अक्षतः शस्त्रभृतः स्व शस्त्रैः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ककुद्मतः | ३. | ऊँची डीलवाले (बैलों) को | अपि | १०. | तथा |
| अविद्धनसः | २. | बिना नथे | गृध्यतः | ९. | छीनने की इच्छा वाले |
| दमित्वा, | ४. | नाथ कर (भगवान् श्रीकृष्णने) | अज्ञान् | १२. | मूर्ख राजाओं को |
| स्वयंवरे | १. | स्वयंवर में | जघ्ने | १६. | मार डाला था |
| नाग्नजितीम् | ५. | नाग्नजिती (सत्या) के साथ | अक्षतः | १३. | स्वयं बिना घायल हुये |
| उवाह । | ६. | विवाह किया था | शस्त्रभृतः | ११. | शस्त्रधारी |
| तद् | ७. | उससे | स्व | १४. | अपने |
| भग्नमानान् | ८. | मान भङ्ग होने के कारण | शस्त्रैः ।। | १५. | शस्त्रों से |

श्लोकार्थ—स्वयंवर में बिना नथे ऊंची डील वाले सात बैलों को नाथ कर भगवान् श्रीकृष्ण ने नाग्नजिती (सत्या) के साथ विवाह किया था । उससे मान भङ्ग होने के कारण छीनने की इच्छा वाले तथा शस्त्रधारी मूर्ख राजाओं को स्वयं बिना घायल हुये अपने शस्त्रों से मार डाला था ।

## पञ्चमः श्लोकः

प्रियं प्रभुर्ग्राम्य इव प्रियाया, विधित्सुरार्च्छद् द्युतरुं यदर्थे ।
वज्र्याद्रवत्तं सगणो रुषान्धः, क्रीडामृगो नूनमयं वधूनाम् ।।५।।

पदच्छेद— प्रियम् प्रभुः ग्राम्यः इव प्रियायाः, विधित्सुः आर्च्छत् द्युतरुम् यद् अर्थे ।
वज्री आद्रवत् तम् सगणः रुषा अन्धः, क्रीडामृगः नूनम् अयम् वधूनाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रियम् | ४. | प्रसन्न | वज्री | १०. | इन्द्र ने |
| प्रभुः | २. | भगवान् श्रीकृष्ण | आद्रवत् | १३. | आक्रमण कर दिया |
| ग्राम्यः, इव | १. | विलासी पुरुष के, समान | तम् | १२. | उनके ऊपर |
| प्रियायाः, | ३. | सत्यभामा को | सगणः | ११. | सेना के साथ |
| विधित्सुः | ५. | करने की इच्छा से | रुषा, अन्धः, | ९. | क्रोध से, अन्धा होकर |
| आर्च्छत् | ८. | उठा लाये (उस समय) | क्रीडामृगः | १७. | खिलौना बना हुआ था |
| द्यु तरुम् | ७. | कल्प वृक्ष | नूनम् | १५. | निश्चय ही |
| यद्, अर्थे । | ६. | उनके, लिये | अयम् | १४. | (क्योंकि) यह |
| | | | वधूनाम् ।। | १६. | अपनी स्त्रियों का |

श्लोकार्थ—विलासी पुरुष के समान भगवान् श्रीकृष्ण सत्यभामा को प्रसन्न करने की इच्छा से उनके लिये कल्पवृक्ष उठा लाये थे। उस समय क्रोध से अन्धा होकर इन्द्र ने सेना के साथ उनके ऊपर आक्रमण कर दिया, क्योंकि यह निश्चय ही अपनी स्त्रियों का खिलौना बना हुआ था ।

## षष्ठः श्लोकः

सुतं मृधे खं वपुषा ग्रसन्तं, दृष्ट्वा सुनाभोन्मथितं धरित्र्या ।
आमन्त्रितस्तत्तनयाय शेषं, दत्त्वा तदन्तःपुरमाविवेश ।।६।।

पदच्छेद— सुतम् मृधे खम् वपुषा ग्रसन्तम्, दृष्ट्वा सुनाभ उन्मथितम् धरित्र्या ।
आमन्त्रितः तत् तनयाय शेषम्, दत्त्वा तद् अन्तःपुरम् आविवेश ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सुतम् | ५. | पुत्र | आमन्त्रितः | ९. | प्रार्थना की (तदनन्तर) |
| मृधे | १. | युद्ध में | तत् | १०. | (भगवान् श्रीकृष्ण ने) उसके |
| खम् | ३. | आकाश को | तनयाय | ११. | पुत्र (भगदत्त) को |
| वपुषा | २. | (अपने) शरीर से | शेषम्, | १२. | बचा हुआ राज्य |
| ग्रसन्तम्, | ४. | ढक देने वाले | दत्त्वा | १३. | देकर |
| दृष्ट्वा | ७. | देख कर | तद् | १४. | उसके |
| सुनाभ, उन्मथितम् | ६. | भौमासुर को, मारा गया | अन्तः पुरम् | १५. | रनिवास में |
| धरित्र्या । | ८. | पृथ्वी ने | आविवेश ।। | १६. | प्रवेश किया था |

श्लोकार्थ—युद्ध में अपने शरीर से आकाश को ढक देने वाले पुत्र भौमासुर को मारा गया देखकर पृथ्वी ने प्रार्थना की थी। तदनन्तर भगवान् श्री कृष्ण ने उसके पुत्र भगदत्त को बचा हुआ राज्य देकर उसके रनिवास में प्रवेश किया था ।

## सप्तमः श्लोकः

तत्राहृतास्ता नरदेवकन्याः, कुजेन दृष्ट्वा हरिमार्तबन्धुम् ।
उत्थाय सद्यो जगृहुः प्रहर्ष-व्रीडानुरागप्रहितावलोकैः ॥७॥

पदच्छेद—

तत्र आहृताः ताः नरदेव कन्याः, कुजेन दृष्ट्वा हरिम् आर्त बन्धुम् ।
उत्थाय सद्यः जगृहुः प्रहर्ष, व्रीडा अनुराग प्रहित अवलोकैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तत्र | १. वहाँ पर | उत्थाय | ६. खड़ी होकर |
| आहृताः, ताः | ३. हर कर लाई गईं, उन | सद्यः | १५. तत्काल (पति रूप में) |
| नरदेव | ४. राजाओं की | जगृहुः | १६. वरण कर लिया |
| कन्याः, | ५. कुमारियों ने | प्रहर्ष, | १०. महान् हर्ष |
| कुजेन | २. भौमासुर के द्वारा | व्रीडा | ११. लज्जा (और) |
| दृष्ट्वा | ८. देखा तथा | अनुराग | १२. प्रेम |
| हरिम् | ७. भगवान् श्रीकृष्ण को | प्रहित | १३. पूर्ण |
| आर्त, बन्धुम् । | ६. दुःखियों के, सहायक | अवलोकैः ॥ | १४. चितवन से (उनका) |

श्लोकार्थ—वहाँ पर भौमासुर के द्वारा हर कर लाई गईं उन राजाओं की कुमारियों ने दुःखियों के सहायक भगवान् श्रीकृष्ण को देखा तथा खड़ी होकर महान् हर्ष, लज्जा और प्रेमपूर्ण चितवन से उनका तत्काल पतिरूप में वरण कर लिया ।

## अष्टमः श्लोकः

आसां मुहूर्त एकस्मिन्नानागारेषु योषिताम् ।
सविधं जगृहे पाणीननुरूपः स्वमायया ॥८॥

पदच्छेद—

आसाम् मुहूर्ते एकस्मिन्, नाना आगारेषु योषिताम् ।
सविधम् जगृहे पाणीन्, अनुरूपः स्व मायया ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आसाम् | ८. इन | सविधम् | १०. विधिपूर्वक |
| मुहूर्ते | ७. शुभ-समय में | जगृहे | १२. ग्रहण किया था |
| एकस्मिन्, | ६. एक ही | पाणीन्, | ११. पाणि |
| नाना | ४. (भगवान् श्रीकृष्ण ने) अनेक | अनुरूपः | ३. अनेक रूप होकर |
| आगारेषु | ५. महलों में | स्व | १. अपनी |
| योषिताम् । | ६. राजकुमारियों का | मायया ॥ | २. माया से |

श्लोकार्थ—अपनी माया से अनेक रूप हो कर भगवान् श्रीकृष्ण ने अनेक महलों में एक ही शुभ-समय में इन राजकुमारियों का विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया था ।

## नवमः श्लोकः

तास्वपत्यान्यजनयदात्मतुल्यानि　सर्वतः ।
एकैकस्यां　दश　दश　प्रकृतेर्विबुभूषया ॥९॥

पदच्छेद—

तासु अपत्यानि अजनयत्, आत्म तुल्यानि सर्वतः ।
एकैकस्याम् दश दश, प्रकृतेः विबुभूषया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तासु | ३. | (भगवान् श्रीकृष्ण) उन | सर्वतः । | ५. | सभी तरह से |
| अपत्यानि | ९. | पुत्र | एकैकस्याम् | ४. | प्रत्येक स्त्रियों के गर्भ से |
| अजनयत्, | १०. | उत्पन्न किये | दश-दश, | ८. | दस-दस |
| आत्म | ६. | अपने | प्रकृतेः | १. | अपनी लीला का |
| तुल्यानि | ७. | समान | विबुभूषया ॥ | २. | विस्तार करने की इच्छा से |

श्लोकार्थ—अपनी लीला का विस्तार करने की इच्छा से भगवान् श्रीकृष्ण उन प्रत्येक स्त्रियों के गर्भ से सभी तरह अपने समान दस-दस पुत्र उत्पन्न किये ।

## दशमः श्लोकः

कालमागधशाल्वादीननीकैः　रुन्धतः　पुरम् ।
अजीघनत्स्वयं दिव्यं　स्वपुंसां तेज आदिशत् ॥१०॥

पदच्छेद—

काल मागध शाल्व आदीन्, अनीकैः रुन्धतः पुरम् ।
अजीघनत् स्वयम् दिव्यम्, स्व पुंसाम् तेजः आदिशत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| काल | १. | काल यवन | अजीघनत् | १३. | मरवाया था |
| मागध | २. | जरासन्ध (और) | स्वयम्, | ८. | भगवान् श्रीकृष्ण ने |
| शाल्व | ३. | शाल्व | दिव्यम्, | १०. | अलौकिक |
| आदीन्, | ४. | इत्यादि राजाओं की | स्व पुंसाम् | ९. | अपने लोगों को |
| अनीकैः | ५. | सेनाओं के द्वारा | तेजः | ११. | शक्ति |
| रुन्धतः | ७. | घेरे जाने पर | आदिशत् ॥ | १२. | देकर (उन्हें) |
| पुरम् । | ६. | मथुरा और द्वारकापुरी के | | | |

श्लोकार्थ—काल यवन, जरासन्ध और शाल्व इत्यादि राजाओं की सेनाओं के द्वारा मथुरा और द्वारका पुरी के घेरे जाने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने लोगों को अलौकिक शक्ति देकर उन्हें मरवाया था ।

# एकादशः श्लोकः

शम्बरं द्विविदं बाणं मुरं बल्वलमेव च ।
अन्यांश्च दन्तवक्त्रादीनवधीत्कांश्च घातयत् ॥११॥

पदच्छेद—

शम्बरम् द्विविदम् बाणम्, मुरम् बल्वलम् एव च ।
अन्यान् च दन्तवक्त्र आदीन्, अवधीत् कान् च घातयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शम्बरम् | १. | (भगवान् श्रीकृष्ण ने) शम्बर | अन्यान् | ९. | दूसरे |
| द्विविदम् | २. | द्विविद | च | ८. | और |
| बाणम्, | ३. | बाण | दन्तवक्त्र | १०. | दन्तवक्त्र |
| मुरम् | ४. | मुर | आदीन्, | ११. | इत्यादि दुष्टों को |
| बल्वलम् | ५. | बल्वल | अवधीत् | १२. | स्वयं मारा था |
| एव | ७. | इसी प्रकार | कान् | १४. | कुछ को (दूसरों से) |
| च । | ६. | तथा | च | १३. | और |
| | | | घातयत् ॥ | १५. | मरवाया था |

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण ने शम्बर, द्विविद, बाण, मुर, बल्वल तथा इसी प्रकार और दूसरे दन्तवक्त्र इत्यादि दुष्टों को स्वयं मारा था और कुछ को दूसरों से मरवाया था ।

# द्वादशः श्लोकः

अथ ते भ्रातृपुत्राणां पक्षयोः पतितान्नृपान् ।
चचाल भूः कुरुक्षेत्रं येषामापततां बलैः ॥१२॥

पदच्छेद—

अथ ते भ्रातृ पुत्राणाम्, पक्षयोः पतितान् नृपान् ।
चचाल भूः कुरुक्षेत्रम्, येषाम आपतताम् बलैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | इसके बाद | चचाल | १३. | डगमगाने लगी थी |
| ते | २. | (उन्होंने) आपके | भूः | १२. | पृथ्वी |
| भ्रातृ | ३. | भाई धृतराष्ट्र और पाण्डु के | कुरुक्षेत्रम् | ८. | कुरुक्षेत्र में |
| पुत्राणाम्, | ४. | पुत्रों का | येषाम् | १०. | जिन (राजाओं) के |
| पक्षयोः | ५. | पक्ष लेकर | आपतताम् | ११. | आने पर |
| पतितान् | ६. | आये हुये | बलैः ॥ | ९. | (अपनी) सेना के साथ |
| नृपान् । | ७. | राजाओं को (मरवाया था) | | | |

श्लोकार्थ—उसके बाद उन्होंने आपके भाई धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्रों का पक्ष लेकर आये हुये राजाओं को मरवाया था । कुरुक्षेत्र में अपनी सेना के साथ जिन राजाओं के आने पर पृथ्वी डगमगाने लगी थी ।

## त्रयोदशः श्लोकः

स कर्णदुश्शासनसौबलानां, कुमन्त्रपाकेन हतश्रियायुषम् ।
सुयोधनं सानुचरं शयानं, भग्नोरुमुर्व्यां न ननन्द पश्यन् ॥१३॥

पदच्छेद— सः कर्ण दुःशासन सौबलानाम्, कुमन्त्र पाकेन हत श्री आयुषम् ।
सुयोधनम् स अनुचरम् शयानम्, भग्न उरुम् उर्व्याम् न ननन्द पश्यन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १५. | वे (भगवान् श्रीकृष्ण) | सुयोधनम् | ८. | दुर्योधन को |
| कर्ण | १. | कर्ण | स अनुचरम् | ११. | (अपने) साथियों के साथ |
| दुःशासन | २. | दुःशासन (और) | शयानम्, | १३. | मरा पड़ा |
| सौबलानाम्, | ३. | शकुनि की | भग्न | १०. | टूट जाने से |
| कुमन्त्र, पाकेन | ४. | दुष्ट सलाह के, फलस्वरूप | उरुम् | ९. | जाँघ के |
| हत | ७. | नष्ट हो चुकी थी (उस) | उर्व्याम् | १२. | पृथ्वी पर |
| श्री | ५. | जिसकी शोभा और | न, ननन्द | १६. | नहीं, सन्तुष्ट हुये थे |
| आयुषम् । | ६. | आयु | पश्यन् ॥ | १४. | देख कर (भी) |

श्लोकार्थ—कर्ण, दुःशासन और शकुनि की दुष्ट सलाह के फलस्वरूप जिसकी शोभा और आयु नष्ट हो चुकी थी, उस दुर्योधन को जाँघ के टूट जाने से अपने साथियों के साथ पृथ्वी पर मरा पड़ा देख कर भी वे भगवान् श्रीकृष्ण सन्तुष्ट नहीं हुये थे ।

## चतुर्दशः श्लोकः

कियान् भुवोऽयं क्षपितोरुभारो, यद्द्रोणभीष्मार्जुनभीममूलैः ।
अष्टादशाक्षौहिणिको मदंशै—रास्ते बलं दुर्विषहं यदूनाम् ॥१४॥

पदच्छेद— कियान् भुवः अयम् क्षपित उरु भारः, यद् द्रोण भीष्म अर्जुन भीम मूलैः ।
अष्टादश अक्षौहिणिकः मद् अंशैः, आस्ते बलम् दुर्विषहम् यदूनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कियान् | १०. | (यह) कितना है ? (क्योंकि) | अष्टादश | ५. | अठारह |
| भुवः | ७. | पृथ्वी का | अक्षौहिणिकः | ६. | अक्षौहिणी सेना रूप |
| अयम् | ५. | यह | मद् | ११. | मेरे |
| क्षपित | ९. | नष्ट हुआ है | अंशैः, | १२. | अंश से उत्पन्न |
| उरु, भारः, | ८. | भारी बोझ | आस्ते | १६. | बचा ही है |
| यद् | ३. | जो | बलम् | १५. | दल (तो अभी) |
| द्रोण, भीष्म | १. | द्रोण, भीष्म | दुर्विषहम् | १४. | असहनीय |
| अर्जुन भीम मूलैः | २. | अर्जुन (और), भीम के द्वारा | यदूनाम् ॥ | १३. | यादवों का |

श्लोकार्थ—भगवान् ने सोचा कि द्रोण, भीष्म, अर्जुन और भीम के द्वारा जो यह अठारह अक्षौहिणी सेना रूप पृथ्वी का भारी बोझ नष्ट हुआ है, यह कितना है ? क्योंकि मेरे अंश से उत्पन्न यादवों का असहनीय दल तो अभी बचा ही है ।

# पञ्चदशः श्लोकः

मिथो यदैषां भविता विवादो, मध्वामदाताम्रविलोचनानाम् ।
नैषां वधोपाय इयानतोऽन्यो मय्युद्यतेऽन्तर्दधते स्वयं स्म ॥१५॥

पदच्छेद—

मिथः यदा एषाम् भविता विवादः, मधु आमद आताम्र विलोचनानाम् ।
न एषाम् वध उपायः इयान् अतः अन्यः, मयि उद्यते अन्तर्दधते स्वयम् स्म ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मिथः | ६. | आपस में | न | १३. | नहीं है (उस समय) |
| यदा | ५. | जब | एषाम्, वध | १०. | इनके, विनाश का |
| एषाम् | ४. | इन (यादवों) का | उपायः | ११. | कारण होगा |
| भविता | ८. | होगा | इयान् | ९. | यही |
| विवादः, | ७. | कलह | अतः, अन्यः, | १२. | इसके, अतिरिक्त और कारण |
| मधु, आमद | १. | शराब के नशे से | मयि, उद्यते | १४. | मेरे, संकल्प मात्र से |
| आताम्र | २. | लाल | अन्तर्दधते | १६. | अन्तर्धान हो जायेंगे |
| विलोचनानाम् । | ३. | आंखों वाले | स्वयम्, स्म ॥ | १५. | अपने आप, ही |

श्लोकार्थ—शराब के नशे से लाल आँखों वाले इन यादवों का जब आपस में कलह होगा, यही इनके विनाश का कारण होगा, इसके अतिरिक्त और कारण नहीं है। उस समय ये यादव मेरे संकल्प मात्र से अपने आप ही अन्तर्धान हो जायेंगे।

# षोडशः श्लोकः

एवं सञ्चिन्त्य भगवान् स्वराज्ये स्थाप्य धर्मजम् ।
नन्दयामास सुहृदः साधूनां वर्त्म दर्शयन् ॥१६॥

पदच्छेद—

एवम् सञ्चिन्त्य भगवान्, स्वराज्ये स्थाप्य धर्मजम् ।
नन्दयामास सुहृदः, साधूनाम् वर्त्म दर्शयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | ऐसा | नन्दयामास | ११. | आनन्दित किया था |
| सञ्चिन्त्य | २. | विचार कर | सुहृदः, | १०. | सम्बन्धियों को |
| भगवान्, | ३. | भगवान् श्रीकृष्ण ने | साधूनाम् | ७. | महात्माओं का |
| स्वराज्ये | ५. | अपने राज्य में | वर्त्म | ८. | मार्ग |
| स्थाप्य | ६. | प्रतिष्ठित किया (तथा) | दर्शयन् ॥ | ९. | दिखाते हुये |
| धर्मजम् । | ४. | धर्मराज युधिष्ठर को | | | |

श्लोकार्थ—ऐसा विचार कर भगवान् श्रीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठर को अपने राज्य में प्रतिष्ठित किया तथा महात्माओं का मार्ग दिखाते हुये सम्बन्धियों को आनन्दित किया था।

## सप्तदशः श्लोकः

उत्तरायां धृतः पूरोर्वंशः साध्वभिमन्युना ।
स वै द्रौण्यस्त्रसंछिन्नः पुनर्भगवता धृतः ॥१७॥

पदच्छेद—

उत्तरायाम् धृतः पूरोः, वंशः साधु अभिमन्युना ।
सः वै द्रौणि अस्त्र संछिन्नः, पुनः भगवता धृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उत्तरायाम् | २. | उत्तरा के गर्भ में | वै | ११. | किन्तु |
| धृतः | ६. | बीज स्थापित किया था | द्रौणि | ८. | अश्वत्थामा के |
| पूरोः, | ३. | पुरु | अस्त्र | ९. | ब्रह्मास्त्र से |
| वंशः | ४. | वंश का (जो) | संछिन्नः, | १०. | नष्ट हो गया था |
| साधु | ५. | सुन्दर | पुनः | १३. | (उसे) फिर से |
| अभिमन्युना । | १. | अभिमन्यु ने | भगवता | १२. | भगवान् श्रीकृष्ण ने |
| सः | ७. | वह | धृतः ॥ | १४. | बचा लिया |

श्लोकार्थ—अभिमन्यु ने उत्तरा के गर्भ में पुरुवंश का जो सुन्दर बीज स्थापित किया था, वह अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से नष्ट हो गया था; किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने उसे फिर से बचा लिया ।

## अष्टादशः श्लोकः

अयाजयद्धर्मसुतमश्वमेधैस्त्रिभिर्विभुः ।
सोऽपि क्ष्मामनुजैः रक्षन् रेमे कृष्णमनुव्रतः ॥१८॥

पदच्छेद—

अयाजयत् धर्मसुतम्, अश्वमेधैः त्रिभिः विभुः ।
सः अपि क्ष्माम् अनुजैः रक्षन्, रेमे कृष्णम् अनुव्रतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अयाजयत् | ५. | यज्ञ कराये थे | अपि | ७. | भी |
| धर्मसुतम् | २. | धर्मराज युधिष्ठिर से | क्ष्माम् | ११. | पृथ्वी की |
| अश्वमेधैः | ४. | अश्वमेध | अनुजैः, | १०. | भाइयों के साथ |
| त्रिभिः | ३. | तीन | रक्षन् | १२. | रक्षा करते हुये |
| विभुः । | १. | भगवान् श्रीकृष्ण ने | रेमे | १३. | आनन्द से रहने लगे |
| सः | ६. | वे युधिष्ठिर | कृष्णम् | ८. | भगवान् श्रीकृष्ण के |
| | | | अनुव्रतः ॥ | ९. | अनुगामी होकर |

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठिर से तीन अश्वमेध यज्ञ कराये थे। वे युधिष्ठर भी भगवान् श्रीकृष्ण के अनुगामी होकर भाइयों के साथ पृथ्वी की रक्षा करते हुये आनन्द से रहने लगे ।

# एकोनविंशः श्लोकः

भगवानपि विश्वात्मा लोकवेदपथानुगः ।
कामान् सिषेवे द्वार्वत्यामसक्तः सांख्यमास्थितः ॥१९॥

पदच्छेद—

भगवान् अपि विश्व आत्मा, लोक वेद पथ अनुगः ।
कामान् सिषेवे द्वार्वत्याम्, असक्तः सांख्यम् आस्थितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | ३. | भगवान् श्री कृष्ण | अनुगः । | ८. | पालन करते हुये |
| अपि | ४. | भी | कामान् | १०. | सभी भोगों को |
| विश्व | १. | सबकी | सिषेवे | ११. | भोगे (किन्तु) |
| आत्मा, | २. | आत्मा | द्वार्वत्याम्, | ९. | द्वारकापुरी में रह कर |
| लोक | ५. | लोक और | असक्तः | १४. | आसक्त नहीं हुये |
| वेद | ६. | वेद की | सांख्यम् | १२. | ज्ञानमार्ग में |
| पथ | ७. | मर्यादा का | आस्थितः ॥ | १३. | स्थिति रहने से (वे उनमें) |

श्लोकार्थ—सबकी आत्मा भगवान् श्रीकृष्ण भी लोक और वेद की मर्यादा का पालन करते हुये द्वारकापुरी में रह कर सभी भोगों को भोगे, किन्तु ज्ञानमार्ग में स्थित रहने से वे उनमें आसक्त नहीं हुये ।

# विंशः श्लोकः

स्निग्धस्मितावलोकेन वाचा पीयूषकल्पया ।
चरित्रेणानवद्येन श्रीनिकेतेन चात्मना ॥२०॥

पदच्छेद—

स्निग्ध स्मित अवलोकेन, वाचा पीयूष कल्पया ।
चरित्रेण अनवद्येन, श्रीनिकेतेन च आत्मना ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्निग्ध | १. | (भगवान् श्रीकृष्ण ने) मधुर | चरित्रेण | ८. | चरित्र |
| स्मित | २. | मुसकान | अनवद्येन, | ७. | निर्मल |
| अवलोकेन, | ३. | मनोहर चितवन | श्री | १०. | शोभा का |
| वाचा | ६. | वाणी | निकेतेन | ११. | निवास स्थान |
| पीयूष | ४. | सुधा | च | ९. | और |
| कल्पया । | ५. | मयी | आत्मना ॥ | १२. | अपने श्री विग्रह से (सबको आनन्दित किया था ) |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री कृष्ण ने मधुर मुसकान, मनोहर चितवन, सुधामयी वाणी, निर्मल चरित्र और शोभा का निवास स्थान अपने श्रीविग्रह से सबको आनन्दित किया था ।

## एकविंशः श्लोकः

इमं लोकममुं चैव रमयन् सुतरां यदून् ।
रेमे क्षणदया दत्तक्षणस्त्रीक्षणसौहृदः ॥२१॥

पदच्छेद—

इमम् लोकम् अमुम् च एव, रमयन् सुतराम् यदून् ।
रेमे क्षणदया दत्त, क्षण स्त्री क्षण सौहृदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इमम् | १. | ( उन्होंने श्रीविग्रह से ) इस | यदून् । | ७. | यादवों को |
| लोकम् | २. | लोक | रेमे | १४. | विहार किया |
| अमुम् | ४. | परलोक को | क्षणदया | ९. | रात्रि में |
| च | ३. | और | दत्त, | १३. | देते हुये |
| एव, | ५. | तथा | क्षण | १२. | आनन्द |
| रमयन् | ८. | आनन्दित करते हुये (एवम्) | स्त्री, क्षण | १०. | अपनी पत्नियों को, क्षणिक |
| सुतराम् | ६. | विशेष रूप से | सौहृदः ॥ | ११. | सुख का |

श्लोकार्थ—उन्होंने अपने श्रीविग्रह से इस लोक और परलोक को तथा विशेष रूप से यादवों को आनन्दित करते हुये एवम् रात्रि में अपनी पत्नियों को क्षणिक सुख का आनन्द देते हुये विहार किया ।

## द्वाविंशः श्लोकः

तस्यैवं रममाणस्य संवत्सरगणान् बहून् ।
गृहमेधेषु योगेषु विरागः समजायत ॥२२॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् रममाणस्य, संवत्सर गणान् बहून् ।
गृहमेधेषु योगेषु, विरागः समजायत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ५. | उन्हें | गृहमेधेषु | ६. | गृहस्थ आश्रम के |
| एवम् | १. | इस प्रकार | योगेषु, | ७. | भोग पदार्थों से |
| रममाणस्य, | ४. | विहार करते-करते | विरागः | ८. | वैराग्य |
| संवत्सर गणान्' | ३. | वर्षों तक | समजायत ॥ | ९. | उत्पन्न हो गया |
| बहून् । | २. | बहुत | | | |

श्लोकार्थ— इस प्रकार बहुत वर्षों तक विहार करते-करते उन्हें गृहस्थ आश्रम के भोग पदार्थों से वैराग्य उत्पन्न हो गया ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

दैवाधीनेषु कामेषु दैवाधीनः स्वयं पुमान् ।
को विस्रम्भेत योगेन योगेश्वरमनुव्रतः ।।२३।।

पदच्छेद—

दैव अधीनेषु कामेषु, दैव अधीनः स्वयम् पुमान् ।
कः विस्रम्भेत योगेन, योगेश्वरम् अनुव्रतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| दैव | २. भगवान् के | | पुमान् । | ५. जीव (भी) |
| अधीनेषु | ३. वश में हैं (तथा) | | कः | ११. कौन व्यक्ति (भोगपदार्थों) में |
| कामेषु, | १. सारे भोग पदार्थ | | विस्रम्भेत | १२. विश्वास कर सकता है |
| दैव | ६. भगवान् के | | योगेन, | ८. भक्ति योग के द्वारा |
| अधीनः | ७. वश में है (अतः) | | योगेश्वरम् | ९. योगिराज श्रीकृष्ण का |
| स्वयम् | ४. अपने आप | | अनुव्रतः ।। | १०. अनुगमन करने वाला |

श्लोकार्थ—सारे भोग पदार्थ भगवान् के वश में हैं तथा अपने आप जीव भी भगवान् के वश में है, अतः भक्ति योग के द्वारा योगिराज श्रीकृष्ण का अनुगमन करने वाला कौन व्यक्ति भोग पदार्थों में विश्वास कर सकता है ?

# चतुर्विंशः श्लोकः

पुर्यां कदाचित्क्रीडद्भिर्यदुभोजकुमारकैः ।
कोपिता मुनयः शेपुर्भगवन्मतकोविदाः ।।२४।।

पदच्छेद—

पुर्याम् कदाचित् क्रीडद्भिः, यदु भोज कुमारकैः ।
कोपिताः मुनयः शेपुः, भगवत् मत कोविदाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पुर्याम् | २. द्वारका पुरी में, | | कोपिताः | ८. क्रुद्ध कर दिया (जिससे) |
| कदाचित् | १. एक बार | | मुनयः | ७. ऋषियों को |
| क्रीडद्भिः, | ६. खेल-खेल में | | शेपुः, | १२. शाप दे डाला |
| यदु | ३. यदुकुल और | | भगवत् | ९. भगवान् की |
| भोज | ४. भोजवंश के | | मत | १०. इच्छा को |
| कुमारकैः । | ५. बालकों ने | | कोविदाः ।। | ११. जानने वाले (उन ऋषियों ने उन्हें) |

श्लोकार्थ—एकबार द्वारका पुरी में यदुकुल और भोज वंश के बालकों ने खेल-खेल में ऋषियों को क्रुद्ध कर दिया था, जिससे भगवान् की इच्छा को जानने वाले उन ऋषियों ने उन्हें शाप दे डाला।

## पञ्चविंशः श्लोकः

ततः कतिपयैर्मासैर्वृष्णिभोजान्धकादयः ।
ययुः प्रभासं संहृष्टा रथैर्देवविमोहिताः ।।२५।।

पदच्छेद—

ततः कतिपयैः मासैः, वृष्णि भोज अन्धक आदयः ।
ययुः प्रभासम् संहृष्टाः, रथैः देव विमोहिताः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | तदनन्तर | ययुः | १३. | गये |
| कतिपयैः | २. | कुछ | प्रभासम् | १२. | प्रभास क्षेत्र में |
| मासैः, | ३. | महीनों के बाद | संहृष्टाः, | १०. | प्रसन्न होकर |
| वृष्णि | ६. | वृष्णि | रथैः | ११. | रथों से |
| भोज | ७. | भोज (और) | देव | ४. | भाग्य वश |
| अन्धक | ८. | अन्धक वंश के | विमोहिताः ।। | ५. | मोहित हुये |
| आदयः । | ९. | यादव गण | | | |

श्लोकार्थ—तदनन्तर कुछ महीनों के बाद भाग्यवश मोहित हुये वृष्णि, भोज और अन्धक वंश के यादव गण प्रसन्न होकर रथों से प्रभास क्षेत्र में गये ।

## षड्विंशः श्लोकः

तत्र स्नात्वा पितॄन्देवानृषींश्चैव तदम्भसा ।
तर्पयित्वाथ विप्रेभ्यो गावो बहुगुणा ददुः ।।२६।।

पदच्छेद—

तत्र स्नात्वा पितॄन् देवान्, ऋषीन् च एव तद् अम्भसा ।
तर्पयित्वा अथ विप्रेभ्यः, गावः बहुगुणाः ददुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्र | १. | (उन्होंने) वहाँ पर | अम्भसा । | ४. | जल से |
| स्नात्वा | २. | स्नान करके | तर्पयित्वा | १०. | तर्पण किया |
| पितॄन् | ५. | पितरों | अथ | ११. | तथा |
| देवान्, | ६. | देवताओं | विप्रेभ्यः, | १२. | ब्राह्मणों को |
| ऋषीन्, | ८. | ऋषियों का | गावः | १४. | गायों का |
| च | ७. | और | बहुगुणाः | १३. | उत्तम |
| एव | ९. | भी | ददुः ।। | १५. | दान दिया |
| तद् | ३. | उसके | | | |

श्लोकार्थ—उन्होंने वहाँ पर स्नान करके उसके जल से पितरों, देवताओं और ऋषियों का भी तर्पण किया तथा ब्राह्मणों को उत्तम गायों का दान दिया ।

## सप्तविंशः श्लोकः

हिरण्यं रजतं शय्यां वासांस्यजिनकम्बलान् ।
यानं रथानिभान् कन्या धरां वृत्तिकरीमपि ॥२७॥

पदच्छेद— हिरण्यम् रजतम् शय्याम्, वासांसि अजिन कम्बलान् ।
यानम् रथान् इभान् कन्याः, धराम् वृत्ति करीम् अपि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हिरण्यम् | १. | ( ब्राह्मणों को ) सोना | रथान् | ८. | रथ |
| रजतम् | २. | चाँदी | इभान् | ९. | हाथी |
| शय्याम्, | ३. | पलंग | कन्याः, | १०. | कन्यायें |
| वासांसि | ४. | वस्त्र | धराम् | १४. | भूमि का (दान दिया) |
| अजिन | ५. | मृगचर्म | वृत्ति | १२. | जीविका |
| कम्बलान् । | ६. | कम्बल | करीम् | १३. | चला सकने वाली |
| यानम् | ७. | पालकी | अपि ॥ | ११. | तथा |

श्लोकार्थ—यादवों ने ब्राह्मणों को सोना, चाँदी, पलंग, वस्त्र, मृगचर्म, कम्वल, पालकी, रथ, हाथी, कन्यायें तथा जीविका चला सकने वाली भूमि का दान दिया ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

अन्नं चोरुरसं तेभ्यो दत्त्वा भगवदर्पणम् ।
गोविप्रार्थासवः शूराः प्रणेमुर्भुवि मूर्धभिः ॥२८॥

पदच्छेद— अन्नम् च उरु रसम् तेभ्यः, दत्त्वा भगवत् अर्पणम् ।
गो विप्र अर्थ असवः शूराः, प्रणेमुः भुवि मूर्धभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्नम् | ४. | अन्न | गो | ९. | गऊ (और) |
| च | १. | तथा (उन्होंने) | विप्र | १०. | ब्राह्मणों के |
| उरु | २. | नाना प्रकार का | अर्थ | ११. | निमित्त |
| रसम् | ३. | सरस | असवः | १२. | जीने वाले |
| तेभ्यः, | ७. | उन ब्राह्मणों को | शूराः, | १३. | वीर (यादवों ने) |
| दत्त्वा | ८. | दिया (तदनन्तर) | प्रणेमुः | १६. | प्रणाम किया |
| भगवत् | ५. | भगवान् को | भुवि | १४. | पृथ्वी पर |
| अर्पणम् । | ६. | समर्पित किया (और) | मूर्धभिः ॥ | १५. | मस्तक टेककर |

श्लोकार्थ—तथा उन्होंने नाना प्रकार का सरस अन्न भगवान् को समर्पित किया और उन ब्राह्मणों को दिया । तदनन्तर गऊ और ब्राह्मणों के निमित्त जीने वाले वीर यादवों ने पृथ्वी पर मस्तक टेक कर प्रणाम किया ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे तृतीयः अध्यायः ॥ ३ ॥

# तृतीयः स्कन्धः

## अथ चतुर्थः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—

अथ ते तदनुज्ञाता भुक्त्वा पीत्वा च वारुणीम् ।
तया विभ्रंशितज्ञाना दुरुक्तैर्मर्म पस्पृशुः ॥१॥

पदच्छेद— अथ ते तद् अनुज्ञाताः, भुक्त्वा पीत्वा च वारुणीम् ।
तया विभ्रंशित ज्ञानाः, दुरुक्तैः मर्म पस्पृशुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | उसके बाद | वारुणीम् । | ७. | मदिरा का |
| ते | ४. | उन (यादवों) ने | तया | ९. | उससे |
| तद् | २. | उन (ब्राह्मणों) से | विभ्रंशित | ११. | भ्रष्ट हो जाने के कारण |
| अनुज्ञाताः, | ३. | अनुमति पाकर | ज्ञानाः, | १०. | बुद्धि |
| भुक्त्वा | ५. | भोजन किया | दुरुक्तैः | १२. | दुर्वचनों के द्वारा |
| पीत्वा | ८. | पान किया | मर्म | १३. | (एक दूसरे के) हृदय में |
| च | ६. | और | पस्पृशुः ॥ | १४. | चोट पहुँचाने लगे |

श्लोकार्थ—उसके बाद उन ब्राह्मणों से अनुमति पाकर उन यादवों ने भोजन किया और मदिरा का पान किया। उससे बुद्धि भ्रष्ट हो जाने के कारण वे दुर्वचनों के द्वारा एक दूसरे के हृदय में चोट पहुँचाने लगे।

## द्वितीयः श्लोकः

तेषां मैरेयदोषेण विषमीकृतचेतसाम् ।
निम्लोचति रवावासीद्वेणूनामिव मर्दनम् ॥२॥

पदच्छेद— तेषाम् मैरेय दोषेण, विषमीकृत चेतसाम् ।
निम्लोचति रवौ आसीत्, वेणूनाम् इव मर्दनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषाम् | ५. | यादवों में | निम्लोचति | ७. | अस्त होने तक |
| मैरेय | १. | मदिरा के | रवौ | ६. | सूर्य के |
| दोषेण, | २. | नशे से | आसीत्, | ११. | होने लगी |
| विषमीकृत | ३. | बदली हुई | वेणूनाम् | ८. | बाँसों (में रगड़) के |
| चेतसाम् । | ४. | बुद्धि वाले | इव | ९. | समान |
| | | | मर्दनम् ॥ | १०. | (आपस में) मार काट |

श्लोकार्थ—मदिरा के नशे से बदली हुई बुद्धि वाले यादवों में सूर्य के अस्त होने तक बाँसों में रगड़ के समान आपस में मार-काट होने लगी।

# तृतीयः श्लोकः

भगवान् स्वात्ममायाया गतिं तामवलोक्य सः ।
सरस्वतीमुपस्पृश्य वृक्षमूलमुपाविशत् ॥३॥

पदच्छेद—

भगवान् स्वात्म मायायाः, गतिम् ताम् अवलोक्य सः ।
सरस्वतीम् उपस्पृश्य, वृक्ष मूलम् उपाविशत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | २. | भगवान् श्रीकृष्ण | सः । | १. | उस समय |
| स्वात्म | ३. | अपनी | सरस्वतीम् | ८. | सरस्वती नदी के जल से |
| मायायाः, | ४. | माया की | उपस्पृश्य, | ९. | आचमन करके |
| गतिम् | ६. | लीला को | वृक्ष | १०. | एक वृक्ष के |
| ताम् | ५. | उस विचित्र | मूलम् | ११. | नीचे |
| अवलोक्य | ७. | देख कर | उपाविशत् ॥ | १२. | बैठ गये |

श्लोकार्थ उस समय भगवान् श्रीकृष्ण अपनी माया की उस विचित्र लीला को देख कर सरस्वती नदी के जल से आचमन करके एक वृक्ष के नीचे बैठ गये ।

# चतुर्थः श्लोकः

अहं चोक्तो भगवता प्रपन्नार्तिहरेण ह ।
बदरीं त्वं प्रयाहीति स्वकुलं संजिहीर्षुणा ॥४॥

पदच्छेद—

अहम् च उक्तः भगवता, प्रपन्न आर्ति हरेण ह ।
बदरीम् त्वम् प्रयाहि इति, स्वकुलम् संजिहीर्षुणा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम् | ९. | मुझसे | ह । | ७. | ही |
| च | ८. | उस समय | बदरीम् | १३. | बदरिकाश्रम |
| उक्तः | १०. | कहा था | त्वम् | १२. | तुम |
| भगवता, | ४. | भगवान् श्रीकृष्ण ने | प्रयाहि | १४. | चले जाओ |
| प्रपन्न | १. | शरणागत भक्तों के | इति, | ११. | कि |
| आर्ति | २. | दुःख को | स्वकुलम् | ५. | अपने वंश के |
| हरेण | ३. | दूर करने वाले | संजिहीर्षुणा ॥ | ६. | संहार की इच्छा से |

श्लोकार्थ—तथा शरणागत भक्तों के दुःख को दूर करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने वंश के संहार की इच्छा से ही उस समय मुझसे कहा था कि तुम बदरिकाश्रम चले जाओ ।

## पञ्चमः श्लोकः

अथापि तदभिप्रेतं जानन्नहमरिन्दम ।
पृष्ठतोऽन्वगमं भर्तुः पादविश्लेषणाक्षमः ।।५।।

पदच्छेद—

अथापि तद् अभिप्रेतम्, जानन् अहम् अरिन्दम ।
पृष्ठतः अन्वगमम् भर्तुः, पाद विश्लेषण अक्षमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथापि | २. | फिर भी | पृष्ठतः | ११. | (उनके) पीछे-पीछे |
| तद् | ३. | उन (भगवान्) के | अन्वगमम् | १२. | चल दिया |
| अभिप्रेतम्, | ४. | आशय को | भर्तुः, | ६. | (उन) स्वामी के |
| जानन् | ५. | जानता हुआ (तथा) | पाद | ७. | चरणारविन्द के |
| अहम् | १०. | मैं | विश्लेषण | ८. | वियोग को |
| अरिन्दम । | १. | हे विदुर जी ! | अक्षमः ।। | ९. | सहने में असमर्थ |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! फिर भी उन भगवान् के आशय को जानता हुआ तथा उन स्वामी के चरणारविन्द के वियोग को सहने में असमर्थ मैं उनके पीछे-पीछे चल दिया ।

## षष्ठः श्लोकः

अद्राक्षमेकमासीनं विचिन्वन्दयितं पतिम् ।
श्रीनिकेतं सरस्वत्यां, कृतकेतमकेतनम् ।।६।।

पदच्छेद—

अद्राक्षम् एकम् आसीनम्, विचिन्वन् दयितम् पतिम् ।
श्रीनिकेतम् सरस्वत्याम्, कृत केतम् अकेतनम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अद्राक्षम् | १०. | देखा | पतिम् । | ४. | स्वामी को |
| एकम् | ८. | अकेले | श्रीनिकेतम् | २. | शोभा के धाम |
| आसीनम्, | ९. | बैठे हुये | सरस्वत्याम्, | ६. | (उन्हें) सरस्वती के तट पर |
| विचिन्वन् | ५. | खोजता हुआ (मैंने) | कृत केतम् | ७. | आश्रय लेकर (उस समय) |
| दयितम् | ३. | (अपने) परम प्रिय | अकेतनम् ।। | १. | आश्रय रहित (तथा) |

श्लोकार्थ—आश्रय रहित तथा शोभा के धाम अपने परम प्रिय स्वामी को खोजता हुआ मैंने उन्हें सरस्वती नदी के तट पर आश्रय लेकर उस समय अकेले बैठे हुये देखा ।

## सप्तमः श्लोकः

श्यामावदातं विरजं प्रशान्तारुणलोचनम् ।
दोर्भिश्चतुर्भिर्विदितं पीतकौशाम्बरेण च ।।७।।

पदच्छेद—

श्याम अवदातम् विरजम्, प्रशान्त अरुण लोचनम् ।
दोर्भिः चतुर्भिः विदितम्, पीत कौश अम्बरेण च ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्याम | ३. | साँवली (देह) | दोर्भिः | ८. | भुजाओं से |
| अवदातम् | २. | चमकती | चतुर्भिः | ७. | चार |
| विरजम्, | १. | (भगवान् की) सत्त्वगुणमयी | विदितम्, | १३. | पहचान लिया |
| प्रशान्त | ४. | अत्यन्त शान्त | पीत | १०. | पीले |
| अरुण | ५. | रतनारी | कौश | ११. | रेशमी |
| लोचनम् । | ६. | आँखें | अम्बरेण | १२. | वस्त्र से (मैंने उन्हें) |
| | | | च ।। | ९. | और |

श्लोकार्थ—भगवान् की सत्त्वगुणमयी चमकती साँवली देह, अत्यन्त शान्त रतनारी आँखें, चार भुजाओं से और पीले रेशमी वस्त्र से मैंने उन्हें पहचान लिया ।

## अष्टमः श्लोकः

वाम ऊरावधिश्रित्य दक्षिणाङ्घ्रिसरोरुहम् ।
अपाश्रितार्भकाश्वत्थमकृशं त्यक्तपिप्पलम् ।।८।।

पदच्छेद—

वामे ऊरौ अधिश्रित्य, दक्षिण अङ्घ्रि सरोरुहम् ।
अपाश्रित अर्भक अश्वत्थम्, अकृशम् त्यक्त पिप्पलम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वामे | ७. | बायीं | अपाश्रित | ३. | सहारा लिये हुये (वे भगवान्) |
| ऊरौ | ८. | जाँघ पर | अर्भक | १. | छोटे से |
| अधिश्रित्य, | ९. | रक्खे थे (तथा) | अश्वत्थम्, | २. | पीपल वृक्ष का |
| दक्षिण | ४. | अपने दाहिने | अकृशम् | १२. | प्रसन्न वदन (थे) |
| अङ्घ्रि | ५. | चरण | त्यक्त | ११. | छोड़ने पर भी |
| सरोरुहम् । | ६. | कमल को | पिप्पलम् ।। | १०. | खाना-पीना |

श्लोकार्थ—छोटे से पीपल वृक्ष का सहारा लिये हुये वे भगवान् अपने दाहिने चरण-कमल को बायीं जाँघ पर रखे थे तथा खाना-पीना छोड़ने पर भी प्रसन्न-वदन थे ।

# नवमः श्लोकः

तस्मिन्महाभागवतो द्वैपायनसुहृत्सखः ।
लोकाननुचरन् सिद्ध आससाद यदृच्छया ॥६॥

पदच्छेद—

तस्मिन् महाभागवतः, द्वैपायन सुहृत् सखः ।
लोकान् अनुचरन् सिद्धः, आससाद यदृच्छया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मिन् | ६. | (उस समय) वहाँ पर | लोकान् | ६. | तीनों लोकों में |
| महाभागवतः, | ४. | परम भगवद् भक्त (व) | अनुचरन् | ८. | विचरण करते हुये |
| द्वैपायन | १. | व्यास जी के | सिद्धः, | ५. | सिद्ध मैत्रेय जी |
| सुहृत् | २. | प्रिय | आससाद | १०. | आ गये |
| सखः । | ३. | मित्र | यदृच्छया ॥ | ७. | स्वच्छन्द |

श्लोकार्थ—व्यास जी के प्रिय मित्र, परम भगवद् भक्त व सिद्ध मैत्रेय जी तीनों लोकों में स्वच्छन्द विचरण करते हुये उस समय वहाँ पर आ गये ।

# दशमः श्लोकः

तस्यानुरक्तस्य मुनेर्मुकुन्दः, प्रमोदभावानतकन्धरस्य ।
आशृण्वतो मामनुरागहास—समीक्षया विश्रमयन्नुवाच ॥१०॥

पदच्छेद—

तस्य अनुरक्तस्य मुनेः मुकुन्दः, प्रमोद भाव आनत कन्धरस्य ।
आशृण्वतः माम् अनुराग हास, समीक्षया विश्रमयन् उवाच ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | २. | उन | आशृण्वतः | ८. | उनके सामने ही |
| अनुरक्तस्य | १. | (उस समय) परम अनुरागी | माम् | १३. | मुझे |
| मुनेः | ३. | महर्षि मैत्रेय जी के | अनुराग | १०. | प्रेम (एवम्) |
| मुकुन्दः, | ६. | भगवान् श्रीकृष्ण ने | हास, | ११. | मुस्कान भरी |
| प्रमोद | ५. | आनन्द और | समीक्षया | १२. | चितवन से |
| भाव | ६. | भक्ति भाव से | विश्रमयन् | १४. | आनन्दित करते हुये |
| आनत | ७. | झुक गये थे | उवाच ॥ | १५. | कहा था |
| कन्धरस्य । | ४. | कन्धे | | | |

श्लोकार्थ—उस समय परम अनुरागी उन महर्षि मैत्रेय जी के कन्धे आनन्द और भक्ति भाव से झुक गये थे । उनके सामने ही भगवान् श्रीकृष्ण ने प्रेम एवं मुस्कान भरी चितवन से मुझे आनन्दित करते हुये कहा था ।

# एकादशः श्लोकः

वेदाहमन्तर्मनसीप्सितं ते, ददामि यत्तद्दुरवापमन्यैः ।
सत्त्रे पुरा विश्वसृजां वसूनां, मत्सिद्धिकामेन वसो त्वयेष्टः ॥११॥

पदच्छेद— वेद अहम् अन्तर्मनसि ईप्सितम् ते, ददामि यत् तद् दुरवापम् अन्यैः ।
सत्त्रे पुरा विश्वसृजाम् वसूनाम्, मत् सिद्धि कामेन वसो त्वया इष्टः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वेद | ५. | जानता हूँ | सत्त्रे | १४. | यज्ञ में |
| अहम् | १. | (हे उद्धव जी !) मैं | पुरा | १०. | पूर्वजन्म में (तुम) |
| अन्तर्मनसि | ३. | आन्तरिक | विश्वसृजाम् | १२. | प्रजापतियों (और) |
| ईप्सितम् | ४. | अभिलाषा को | वसूनाम्, | १३. | वसुओं के |
| ते, | २. | तुम्हारी | मत्, सिद्धि | १६. | मेरी, प्राप्ति की |
| ददामि, यत् | ७. | (तुम्हें) देता हूं. जो | कामेन | १७. | कामना से |
| तद् | ६. | (मैं) वह साधन | वसो | ११ | वसु (थे) |
| दुरवापम् | ९. | दुर्लभ है | त्वया | १५. | तुमने |
| अन्यैः । | ८. | दूसरों को | इष्टः ॥ | १८. | आराधना की थी |

श्लोकार्थ—हे उद्धव जी ! मैं तुम्हारी आन्तरिक अभिलाषा को जानता हूँ । मैं वह साधन तुम्हें देता हूँ, जो दूसरों को दुर्लभ है । पूर्वजन्म में तुम वसु थे । प्रजापतियों और वसुओं के यज्ञ में तुमने मेरी प्राप्ति की कामना से आराधना की थी ।

# द्वादशः श्लोकः

स एष साधो चरमो भवाना-मासादितस्ते मदनुग्रहो यत् ।
यन्मां नृलोकान् रह उत्सृजन्तं, दिष्टया ददृश्वान् विशदानुवृत्त्या ॥१२॥

पदच्छेद— सः एषः साधो चरमः भवानाम्, आसादितः ते मद् अनुग्रहः यत् ।
यत् माम् नृलोकान् रहः उत्सृजन्तम्, दिष्टया ददृश्वान् विशद अनुवृत्त्या ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः, एषः | ३. | अबकी, यह | यत्, माम् | ११. | ही (तुम), मुझे |
| साधो | १ | हे साधु स्वभाव उद्धव जी ! | नृलोकान् | १२. | मर्त्यलोक |
| चरमः | ५. | अन्तिम (जन्म है) | रहः | १४. | एकान्त में |
| भवानाम्, | २. | अनेक जन्मों में से | उत्सृजन्तम्, | १३. | छोड़ते समय |
| आसादितः | ८. | प्राप्त की है (तथा) | दिष्टया | १५. | बड़े भाग्य से |
| ते | ४. | तुम्हारा | ददृश्वान् | १६. | दिखलाई पड़े हो |
| मद, अनुग्रहः | ७. | (तुमने) मेरी, कृपा | विशद | ९. | अनन्य |
| यत् । | ६. | क्योंकि (इस जन्म में) | अनुवृत्त्या ॥ | १०. | भक्ति के कारण |

श्लोकार्थ—हे साधु स्वभाव उद्धव जी ! अनेक जन्मों में से अब की यह तुम्हारा अन्तिम जन्म है, क्योंकि इस जन्म में तुमने मेरी कृपा प्राप्त की है तथा अनन्य भक्ति के कारण ही तुम मुझे मर्त्यलोक छोड़ते समय एकान्त में बड़े भाग्य से दिखलाई पड़े हो ।

## त्रयोदशः श्लोकः

पुरा मया प्रोक्तमजाय नाभ्ये, पद्मे निषण्णाय ममादिसर्गे।
ज्ञानं परं मन्महिमावभासं, यत्सूरयो भागवतं वदन्ति ॥१३॥

पदच्छेद— पुरा मया प्रोक्तम् अजाय नाभ्ये, पद्मे निषण्णाय मम आदि सर्गे।
ज्ञानम् परम् मत् महिमा अवभासम्, यत् सूरयः भागवतम् वदन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| पुरा | १४. सबसे पहले | सर्गे। | १. सृष्टि के |
| मया | ३. मैंने | ज्ञानम् | १३. ज्ञान को |
| प्रोक्तम् | १५. बताया था | परम् | १२ सर्वोत्तम |
| अजाय | ८. ब्रह्मा जी से | मत् | ९. मेरे |
| नाभ्ये, | ५. नाभि के | महिमन् | १०. सामर्थ्य को |
| पद्मे | ६. कमल पर | अवभासम् | ११. प्रकाशित करने वाले |
| निषण्णाय | ७. बैठे हुये | यत्, सूरयः | १६ जिसे, विद्वज्जन |
| मम | ४. अपनी | भागवतम्, | १७. भागवत ज्ञान |
| आदि | २. प्रारम्भ में | वदन्ति ॥ | १८. कहते हैं |

श्लोकार्थ—सृष्टि के प्रारम्भ में मैंने अपनी नाभि के कमल पर बैठे हुये ब्रह्मा जी ने मेरे सामर्थ्य को प्रकाशित करने वाले सर्वोत्तम ज्ञान को सबसे पहले बताया था, जिसे विद्वज्जन 'भागवत ज्ञान' कहते हैं।

## चर्तुदशः श्लोकः

इत्यादृतोक्तः परमस्य पुंसः, प्रतिक्षणानुग्रहभाजनोऽहम्।
स्नेहोत्थरोमा स्खलिताक्षरस्तं, मुञ्चञ्छुचः प्राञ्जलिराबभाषे ॥१४॥

पदच्छेद— इति आदृत उक्तः परमस्य पुंसः, प्रतिक्षण अनुग्रह भाजनः अहम्।
स्नेह उत्थ रोमा स्खलित अक्षरः तम्, मुञ्चन् शुचः प्राञ्जलिः आबभाषे ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| इति | ५. इस प्रकार | स्नेह | ८. अनुराग से |
| आदृत | ६. आदर के साथ | उत्थ रोमा | ९. रोमाञ्च हो आया (और) |
| उक्तः | ७. कहने पर (मुझे) | स्खलित, अक्षरः | १४. गद्गद, वाणी में |
| परमस्य | १. परम | तम्, | १५. उनसे |
| पुंसः, | २. पुरुष (भगवान् श्रीकृष्ण) की | मुञ्चन् | १२. बहाता हुआ |
| प्रतिक्षण | ३. निरन्तर | शुचः | ११. आँसू |
| अनुग्रह, भाजनः | ४. कृपा का पात्र (मुझसे) | प्राञ्जलिः | १३. हाथ जोड़ कर |
| अहम्। | १०. मैं | आबभाषे ॥ | १६. बोला |

श्लकार्थ—परम पुरुष भगवान् श्रीकृष्ण की निरन्तर कृपा का पात्र मुझसे इस प्रकार आदर के साथ कहने पर मुझे अनुराग से रोमाञ्च हो आया और मैं आँसू बहाता हुआ हाथ जोड़ कर गद्गद वाणी में उनसे बोला।

## पञ्चदशः श्लोकः

को न्वीश ते पादसरोजभाजां, सुदुर्लभोऽर्थेषु चतुर्ष्वपीह ।
तथापि नाहं प्रवृणोमि भूमन्, भवत्पदाम्भोजनिषेवणोत्सुकः ॥१५॥

पदच्छेद— कः नु ईश ते पाद सरोज भाजाम्, सुदुर्लभः अर्थेषु चतुर्षु अपि इह ।
तथापि न अहम् प्रवृणोमि भूमन्, भवत् पद अम्भोज निषेवण उत्सुकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | ८. | कौन सा (पुरुषार्थ) | इह । | ३. | इस संसार में |
| नु | ७. | भला | तथापि | १०. | फिर भी |
| ईश, ते, पाद | १. | हे प्रभो ! आपके, चरण | न | १५. | नहीं |
| सरोज, भाजाम् | २. | कमल के, अनुराग (भक्तों को) | अहम् | १४. | मैं (उन पुरुषार्थों को) |
| सुदुर्लभः | ९. | दुर्लभ है | प्रवृणोमि | १६. | चाहता हूँ |
| अर्थेषु | ६. | पुरुषार्थों में से | भूमन्, भवत् | ११. | हे स्वामिन् !, आपके |
| चतुर्षु | ४. | धर्म, अर्थ, काम मोक्ष चारों | पद, अम्भोज | १२. | चरण, कमल की |
| अपि | ५. | ही | निषेवण,उत्सुकः ॥ | १३. | सेवा, चाहने वाला |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपके चरण-कमल के अनुरागी भक्तों को इस संसार में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों ही पुरुषार्थों में से भला कौन सा पुरुषार्थ दुर्लभ है ? फिर भी हे स्वामिन् ! आपके चरण कमल की सेवा चाहने वाला मैं उन पुरुषार्थों को नहीं चाहता हूँ ।

## षोडशः श्लोकः

कर्माण्यनीहस्य भवोऽभवस्य ते, दुर्गाश्रयोऽथारिभयात्पलायनम् ।
कालात्मनो यत्प्रमदायुताश्रयः, स्वात्मन्रतेः खिद्यति धीर्विदामिह ॥१६॥

पदच्छेद— कर्माणि अनीहस्य भवः अभवस्य ते, दुर्ग आश्रयः अथ अरि भयात् पलायनम् ।
काल आत्मनः यत् प्रमदा अयुत आश्रयः, स्वात्मन् रतेः खिद्यति धीः विदाम् इह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कर्माणि | ३. | कर्म करना | यत् | १५. | जो |
| अनीहस्य | २. | इच्छा रहित होने पर भी | प्रमदा | १४. | युवतियों के साथ |
| भवः | ५. | जन्म लेना | अयुत | १३. | सोलह हजार |
| अभवस्य | ४. | अजन्मा होने पर भी | आश्रयः, | १६. | रमण करना है (उससे) |
| ते, | १. | हे प्रभो ! आपका | स्वात्मन् | ११. | अपनी आत्मा के |
| दुर्ग, आश्रयः | १०. | किले का, सहारा लेना (और) | रतेः | १२. | आनन्द में रहने पर भी |
| अथ | ९. | तथा | खिद्यति | २०. | भ्रम में पड़ जाती है |
| अरि, भयात् | ७. | शत्रुओं के, भय से | धीः | १९. | बुद्धि |
| पलायनम् । | ८. | भाग जाना | विदाम् | १८. | विद्वानों की |
| काल, आत्मनः | ६ | काल, स्वरूप होने पर भी | इह ॥ | १७. | इस संसार में |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपका इच्छा रहित होने पर भी कर्म करना, अजन्मा होने पर भी जन्म लेना, काल स्वरूप होने पर भी शत्रुओं के भय से भाग जाना तथा किले का सहारा लेना और अपनी आत्मा के आनन्द में रहने पर भी सोलह हजार युवतियों के साथ जो रमण करना है उससे इस संसार में विद्वानों की बुद्धि भ्रम में पड़ जाती है ।

## सप्तदशः श्लोकः

**मन्त्रेषु मां वा उपहूय यत्त्व—मकुण्ठिताखण्डसदात्मबोधः ।**
**पृच्छेः प्रभो मुग्ध इवाप्रमत्तस्तन्नो मनो मोहयतीव देव ॥१७॥**

पदच्छेद — मन्त्रेषु माम् वा उपहूय यत् त्वम्, अकुण्ठित अखण्ड सदा आत्मबोधः ।
पृच्छेः प्रभो मुग्धः इव अप्रमत्तः, तत् नः मनः मोहयति इव देव ॥

शब्दार्थ---

| | | | |
|---|---|---|---|
| मन्त्रेषु | ८. सलाह के लिये | पृच्छेः | १२. पूछते थे |
| माम्, वा | ७. मुझे | प्रभो | १. हे स्वामिन् ! |
| उपहूय | ९. बुला कर | मुग्धः, इव | १०. भोले मनुष्य के, समान |
| यत् | ६. जो | अप्रमत्तः, | ११. सावधान होकर |
| त्वम्, | ५. आप | तत्, नः | १४. (आपकी) वह लीला, हमारे |
| अकुण्ठित, अखण्ड | ३. अवाध (और) अखण्ड | मनः | १५ मन को |
| सदा | २. सर्वदा | मोहयति, इव | १६. मोहित-सा करती है |
| आत्मबोधः । | ४. आत्मज्ञान वाले | देव ॥ | १३. हे भगवन् ! |

श्लोकार्थ--हे स्वामिन् ! सर्वदा अवाध और अखण्ड आत्मज्ञान वाले आप जो मुझे सलाह के लिये बुला कर भोले मनुष्य के समान सावधान होकर पूछते थे, हे भगवन् ! आपकी वह लीला हमारे मन को मोहित-सा करती है ।

## अष्टादशः श्लोकः

**ज्ञानं परं स्वात्मरहः प्रकाशं, प्रोवाच कस्मै भगवान् समग्रम् ।**
**अपि क्षमं नो ग्रहणाय भर्तर्वदाञ्जसा यद् वृजिनं तरेम ॥१८॥**

पदच्छेद— ज्ञानम् परम् स्व आत्मरहः प्रकाशम्, प्रोवाच कस्मै भगवान् समग्रम् ।
अपि क्षमम् नः ग्रहणाय भर्तः, वद अञ्जसा यद् वृजिनम् तरेम ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ७. ज्ञान को | समग्रम् । | ५. सम्पूर्ण (और) |
| परम् | ६. सर्वश्रेष्ठ | अपि | १०. यदि (वह) |
| स्व | २. अपनी | क्षमम् | १२. योग्य हो (तो) |
| आत्म रहः | ३. आत्मा के, गूढ़ रहस्य को | नः, ग्रहणाय | ११. हमारे, जानने के |
| प्रकाशम्, | ४. प्रकट करने वाले (जिस) | भर्तः, वद | १३. हे स्वमिन् !, (उसे) बताइये |
| प्रोवाच | ९. कहा था | अञ्जसा | १५. सरलता से |
| कस्मै | ८. ब्रह्मा जी से | यद्, वृजितम् | १४. जिससे, दुःखरूप संसार को |
| भगवान् | १. भगवान् श्रीहरि ने | तरेम ॥ | १६. पार कर सकें |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि ने अपनी आत्मा के गूढ़ रहस्य को प्रकट करने वाले जिस सम्पूर्ण और सर्वश्रेष्ठ ज्ञान को ब्रह्मा जी से कहा था, यदि वह हमारे जानने के योग्य हो तो हे स्वामिन् ! उसे बताइये, जिससे हम दुःख रूप संसार को सरलता से पार कर सकें ।

# एकोनविंशः श्लोकः

इत्यावेदितहार्दाय मह्यं स भगवान् परः ।
आदिदेशारविन्दाक्ष आत्मनः परमां स्थितिम् ॥१६॥

पदच्छेद—

इति आवेदित हार्दाय, मह्यम् सः भगवान् परः ।
आदिदेश अरविन्द अक्षः, आत्मनः परमाम् स्थितिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | परः । | ५. | परात्पर |
| आवेदित | ३. | कहने पर | आदिदेश | १२. | उपदेश किया था |
| हार्दाय | २. | हृदय की बात | अरविन्द अक्षः | ४. | कमल नयन |
| मह्यम् | ८. | मुझे | आत्मनः | ६. | अपनी |
| सः | ६. | उन | परमाम् | १०. | सर्वोत्तम |
| भगवान् | ७. | भगवान् श्रीकृष्ण ने | स्थितिम् ॥ | ११. | अवस्था का |

श्लोकार्थ—इस प्रकार हृदय की बात कहने पर कमल नयन, परात्पर उन भगवान् श्रीकृष्ण ने मुझे अपनी सर्वोत्तम अवस्था का उपदेश किया था ।

# विंशः श्लोकः

स एवमाराधितपादतीर्था—दधीततत्त्वात्मविबोधमार्गः ।
प्रणम्य पादौ परिवृत्य देव—मिहागतोऽहं विरहातुरात्मा ॥२०॥

पदच्छेद—

सः एवम् आराधित पाद तीर्थात्, अधीत तत्त्व आत्म विबोध मार्गः ।
प्रणम्य पादौ परिवृत्य देवम्, इह आगत अहम् विरह आतुर आत्मा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १४. | वही | प्रणम्य | १०. | प्रणाम (और) |
| एवम् | १. | इस प्रकार | पादौ | ६. | चरणों में |
| आराधित, पाद | २. | पूज्य, पाद | परिवृत्य | ११. | परिक्रमा करके |
| तीर्थात् | ३. | गुरु (भगवान् श्रीकृष्ण) से | देवम् | ८. | उनके |
| अधीत | ७. | अध्ययन करके (तथा) | इह, आगतः | १६. | यहाँ पर, आया हूँ |
| तत्त्व | ५. | स्वरूप के | अहम् | १५. | मैं |
| आत्म | ४. | आत्म | विरह, आतुर | १२. | (उनके) वियोग से, दुःखित |
| विबोध, मार्गः । | ६. | ज्ञान के, साधन का | आत्मा ॥ | १३. | चित्त वाला |

श्लोकार्थ—इस प्रकार पूज्य-पाद गुरु भगवान् श्रीकृष्ण से आत्म स्वरूप के ज्ञान के साधन का अध्ययन करके तथा उनके चरणों में प्रमाण और परिक्रमा करके उनके वियोग से दुःखित चित्तवाला वही मैं यहाँ पर आया हूँ ।

## एकविंश: श्लोक:

सोऽहं तद्दर्शनाह्लादवियोगार्तियुतः प्रभो ।
गमिष्ये दयितं तस्य बदर्याश्रममण्डलम् ॥२१॥

पदच्छेद—

सः अहम् तद् दर्शन आह्लाद, वियोग आर्ति युतः प्रभो ।
गमिष्ये दयितम् तस्य, बदरी आश्रम मण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ८. | वही | युतः | ७. | दुःखी |
| अहम् | ९. | मैं | प्रभो । | १. | हे विदुर जी ! |
| तद् | २. | उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के | गमिष्ये | १४. | जा रहा हूँ |
| दर्शन | ३. | दर्शन से | दयितम् | ११. | प्रिय |
| आह्लाद | ४. | प्रसन्न और | तस्य | १०. | उन (भगवान् श्रीकृष्ण) के |
| वियोग | ५. | (उनके) वियोग के | बदरी आश्रम | १२. | बदरिकाश्रम |
| आर्ति | ६. | दुःख से | मण्डलम् ॥ | १३. | क्षेत्र को |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उन भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन से प्रसन्न और उनके वियोग के दुःख से दुःखी वही मैं उन भगवान् श्रीकृष्ण के प्रिय बदरिकाश्रम क्षेत्र को जा रहा हूँ ।

## द्वाविंश: श्लोक:

यत्र नारायणो देवो नरश्च भगवानृषिः ।
मृदु तीव्रं तपो दीर्घं तेपाते लोकभावनौ ॥२२॥

पदच्छेद—

यत्र नारायणः देवः, नरः च भगवान् ऋषिः ।
मृदु तीव्रम् तपः दीर्घम्, तेपाते लोक भावनौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्र | १. | जिस (बदरिकाश्रम) में | मृदु | १०. | सौम्य |
| नारायणः | ३. | नारायण | तीव्रम् | ११. | कठोर (और) |
| देवः, | ४. | देव | तपः | १३. | तपस्या |
| नरः | ६. | नर | दीर्घम्, | १२. | बड़ी लम्बी |
| च | ५. | और | तेपाते | १४. | किये थे |
| भगवान् | २. | भगवान् | लोक | ८. | संसार के |
| ऋषिः । | ७. | ऋषि | भावनौ ॥ | ९. | कल्याण के लिये |

श्लोकार्थ—जिस बदरिकाश्रम में भगवान् नारायण देव और नर ऋषि संसार के कल्याण के लिये सौम्य, कठोर और बड़ी लम्बी तपस्या किये थे ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

इत्युद्धवादुपाकर्ण्य सुहृदां दुःसहं वधं ।
ज्ञानेनाशमयत्क्षत्ता शोकमुत्पतितं बुधः ॥२३॥

पदच्छेद—

इति उद्धवात् उपाकर्ण्य, सुहृदाम् दुःसहम् वधम् ।
ज्ञानेन अशमयत् क्षत्ता, शोकम् उत्पतितम् बुधः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | ज्ञानेन | ९. | आत्मज्ञान के द्वारा |
| उद्धवात् | २. | उद्धवजी से | अशमयत् | १२. | शान्त किया था |
| उपाकर्ण्य, | ६. | सुन कर | क्षत्ता, | ८. | विदुर जी ने |
| सुहृदाम् | ३. | सम्बन्धियों के | शोकम् | ११. | शोक को |
| दुःसहम् | ४. | असहनीय | उत्पतितम् | १०. | (अपने) बढ़े हुये |
| वधम् । | ५. | विनाश को | बुधः ॥ | ७. | ज्ञानी |

श्लोकार्थ—इस प्रकार उद्धव जी से सम्बन्धियों के असहनीय विनाश को सुन कर ज्ञानी विदुर जी ने आत्म ज्ञान के द्वारा अपने बढ़े हुये शोक को शान्त किया था ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

स तं महाभागवतं व्रजन्तं कौरवर्षभः ।
विश्रम्भादभ्यधत्तेदं मुख्यं कृष्णपरिग्रहे ॥२४॥

पदच्छेद—

सः तम् महा भागवतम्, व्रजन्तम् कौरव ऋषभः ।
विश्रम्भात् अभ्यधत्त इदम्, मुख्यम् कृष्ण परिग्रहे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ३. | उन (विदुर जी) ने | विश्रम्भात् | ११. | विश्वास पूर्वक |
| तम् | ९. | उन (उद्धव जी) से | अभ्यधत्त | १३. | कहा |
| महा | ७. | परम | इदम्, | १२. | यह |
| भागवतम्, | ८. | भगवद् भक्त | मुख्यम् | ६. | प्रधान (एवम्) |
| व्रजन्तम् | १०. | जाते हुये | कृष्ण | ४. | भगवान् श्रीकृष्ण के |
| कौरव | १. | कौरवों में | परिग्रहे ॥ | ५. | अनुचरों में |
| ऋषभः । | २. | श्रेष्ठ | | | |

श्लोकार्थ—कौरवों में श्रेष्ठ उन विदुर जी ने भगवान् श्रीकृष्ण के अनुचरों में प्रधान एवम् परम भगवद भक्त उन उद्धव जी से जाते हुये विश्वास पूर्वक यह कहा ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

विदुर उवाच—

**ज्ञानं परं स्वात्मरहः प्रकाशं, यदाह योगेश्वर ईश्वरस्ते।**
**वक्तुं भवान्नोऽर्हति यद्धि विष्णोर्भृत्याः स्वभृत्यार्थकृतश्चरन्ति ॥२५॥**

पदच्छेद—

**ज्ञानम् परम् स्व आत्म रहः प्रकाशम्, यद् आह योगेश्वरः ईश्वरः ते।**
**वक्तुम् भवान् नः अर्हति यद् हि विष्णोः, भृत्याः स्वभृत्य अर्थकृतः चरन्ति ॥**

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ६. ज्ञान | वक्तुम् | १०. बताने में |
| परम् | ५. परम | भवान्, नः | ९. (उसे) आप, हमें |
| स्व आत्म | २. अपनी आत्मा के | अर्हति, यद् | ११. समर्थ हैं, क्योंकि |
| रहः | ३. छिपे रहस्य को | हि | १५. ही |
| प्रकाशम्, यद् | ४. बताने वाला, जो | विष्णोः, भृत्याः | १२. भगवान् श्री हरि के, सेवक गण |
| आह | ८. कहा था | स्वभृत्य | १३. अपने सेवकों के |
| योगेश्वरः, ईश्वरः | १. योगिराज, भगवान् श्रीकृष्ण ने | अर्थकृतः | १४. प्रयोजन की सिद्धि के लिये |
| ते। | ७. आपसे | चरन्ति ॥ | १६. विचरते हैं |

श्लोकार्थ—योगिराज भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी आत्मा के छिपे रहस्य को बताने वाला जो परम ज्ञान आपसे कहा था, उसे आप हमें बताने में समर्थ हैं। क्योंकि भगवान् श्रीहरि के सेवक गण अपने सेवकों के प्रयोजन की सिद्धि के लिये ही विचरते हैं।

## षड्विंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—

**ननु ते तत्त्वसंराध्य ऋषिः कौषारवोऽन्ति मे।**
**साक्षाद्भगवताऽऽदिष्टो मर्त्यलोकं जिहासता ॥२६॥**

पदच्छेद—

**ननु ते तत्त्व संराध्यः, ऋषिः कौषारवः अन्ति मे।**
**साक्षात् भगवता आदिष्टः, मर्त्यलोकम् जिहासता ॥**

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ननु | ५. अवश्य | मे। | ११. मेरे |
| ते | १. (हे विदुर जी !) आप | साक्षात् | ९. स्वयम् |
| तत्त्व | २. आत्म तत्त्व के ज्ञान के लिये | भगवता | १०. भगवान् श्रीकृष्ण ने |
| संराध्यः, | ६. आराधना करें | आदिष्टः, | १३. आज्ञा दी थी |
| ऋषिः | ४. ऋषि की | मर्त्यलोकम् | ७. मृत्यु लोक को |
| कौषारवः | ३. मैत्रेय | जिहासता ॥ | ८. छोड़ते समय |
| अन्ति | १२. सामने (उन्हें उपदेश करने की) | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! आप आत्म तत्त्व के ज्ञान के लिये मैत्रेय ऋषि की अवश्य आराधना करें। मृत्यु लोक को छोड़ते समय स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने मेरे सामने उन्हें आपको उपदेश करने की आज्ञा दी थी।

## सप्तविंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

**इति सह विदुरेण विश्वमूर्ते-र्गुणकथया सुधया प्लावितोरुतापः ।**
**क्षण मिव पुलिने यमस्वसुस्तां, समुषित औपगविर्निशां ततोऽगात् ॥२७॥**

पदच्छेद— इति सह विदुरेण विश्वमूर्तेः, गुण कथया सुधया प्लावित उरु तापः ।
क्षणम् इव पुलिने यमस्वसुः ताम्, समुषितः औपगविः निशाम् ततः अगात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | क्षणम्, इव | १४. | एक क्षण के, समान |
| सह | ३. | साथ | पुलिने | ११. | किनारे |
| विदुरेण | २. | विदुर जी के | यमस्वसुः | १०. | यमुना जी के |
| विश्वमूर्तेः, | ४. | भगवान् श्री कृष्ण की | ताम्, | १२. | उस (पूरी) |
| गुण, कथया | ६. | लीला, चर्चा से | समुषितः | १५. | विता कर |
| सुधया | ५. | अमृतमयी | औपगविः | ७. | उद्धव जी का |
| प्लावित | ६. | शान्त हो गया (और वे) | निशाम् | १३. | रात को |
| उरु, तापः । | ८. | (शोक जनित) महान्, कष्ट | ततः, अगात् ॥ | १६. | (सवेरे) वहाँ से, चल दिये |

श्लोकार्थ—इस प्रकार विदुर जी के साथ भगवान् श्रीकृष्ण की अमृतमयी लीला चर्चा से उद्धव जी का शोक जनित महान् कष्ट शान्त हो गया और वे यमुना जी के किनारे उस पूरी रात को एक क्षण के समान विता कर सवेरे वहाँ से आगे चल दिये।

## अष्टाविंशः श्लोकः

राजोवाच—

**निधनमुपगतेषु वृष्णिभोजे-ष्वधिरथयूथपयूथपेषु मुख्यः ।**
**स तु कथमवशिष्ट उद्धवो यद्धरिरपि तत्यज आकृतिं त्र्यधीशः ॥२८॥**

पदच्छेद— निधनम् उपगतेषु वृष्णि भोजेषु, अधिरथ यूथप यूथपेषु मुख्यः ।
सः तु कथम् अवशिष्टः उद्धवः यद्, हरिः अपि तत्यज आकृतिम् त्रि अधीशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| निधनम्, उपगतेषु | ५. मृत्यु को, प्राप्त हो गये | कथम्,अवशिष्टः | १६. कैसे, बचे रहे |
| वृष्णि | ३. वृष्णि कुल (और) | उद्धवः | १५. उद्धव जी |
| भोजेषु, | ४. भोजवंशी यादव (जब) | यद्, | ६. यहाँ तक कि |
| अधिरथ | १. महारथियों (तथा) | हरिः, अपि | ६. भगवान् श्री कृष्ण ने, भा |
| यूथप, यूथपेषु | २. सेनापतियों के भी, सेनापति | तत्यज | ११. त्याग दिया |
| मुख्यः । | १३. (यादवों में) प्रधान | आकृतिम् | १०. (अपने) श्री विग्रह को |
| सः | १४. वे | त्रि | ७. त्रिलोकी के |
| तु | १२. तो फिर | अधीशः ॥ | ८. स्वामी |

श्लोकार्थ—महारथियों तथा सेनापतियों के भी सेनापति वृष्णिकुल और भोजवंशी यादव जब मृत्यु को प्राप्त हो गये, यहाँ तक कि त्रिलोकी के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण ने भी अपने श्री विग्रह को त्याग दिया, तो फिर यादवों में प्रधान वे उद्धव जी कैसे बचे रहे ?

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

ब्रह्मशापापदेशेन कालेनामोघवाञ्छितः ।
संहृत्य स्वकुलं नूनं त्यक्ष्यन्देहमचिन्तयत् ॥२६॥

पदच्छेद—

ब्रह्म शाप अपदेशेन, कालेन अमोघ वाञ्छितः ।
संहृत्य स्वकुलम् नूनम्, त्यक्ष्यन् देहम् अचिन्तयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्म, शाप | ४. | ब्राह्मणों के, शाप के | संहृत्य | ७. | संहार करके |
| अपदेशेन, | ५. | बहाने से | स्वकुलम् | ६. | अपने कुल का |
| कालेन | ३. | काल रूप | नूनम्, | १०. | निश्चय ही (यह) |
| अमोघ | १ | सफल | त्यक्ष्यन् | ६ | छोड़ते समय |
| वाञ्छितः । | २. | इच्छा वाले ( श्री कृष्ण ने ) | देहम् | ८ | (अपने) शरीर को |
| | | | अचिन्तयत् ॥ | ११. | सोचा |

श्लोकार्थ— सफल इच्छा वाले भगवान श्री कृष्ण ने कालरूप ब्राह्मणों के शाप के बहाने से अपने कुल का संहार करके अपने शरीर को छोड़ते समय निश्चय ही यह सोचा ।

# त्रिंशः श्लोकः

अस्माल्लोकादुपरते मयि ज्ञानं मदाश्रयम् ।
अर्हत्युद्धव एवाद्धा सम्प्रत्यात्मवतां वरः ॥३०॥

पदच्छेद—

अस्मात् लोकात् उपरते, मयि ज्ञानम् मत् आश्रयम् ।
अर्हति उद्धवः एव अद्धा, सम्प्रति आत्मवताम् वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अस्मात् | २. | इस | अर्हति | १४. | अधिकारी हैं |
| लोकात् | ३. | लोक से | उद्धवः | ८. | उद्धव जी |
| उपरते, | ५. | चले जाने पर | एव | ६. | ही |
| मयि | ४. | मेरे | अद्धा, | १३. | सच्चे |
| ज्ञानम् | १२. | (अध्यात्म) ज्ञान के | सम्प्रति | १. | अब |
| मत् | १०. | मुझसे | आत्मवताम् | ६. | आत्म ज्ञानियों में |
| आश्रयम् । | ११. | सम्बन्धित | वरः ॥ | ७. | श्रेष्ठ |

श्लोकार्थ—अब इस लोक से मेरे चले जाने पर आत्म ज्ञानियों में श्रेष्ठ उद्धव जी ही मुझसे सम्बन्धित अध्यात्म ज्ञान के सच्चे अधिकारी हैं ।

## एकत्रिंशः श्लोकः

नोद्धवोऽण्वपि मन्न्यूनो यद् गुणैर्नार्दितः प्रभुः ।
अतो मद्वयुनं लोकं ग्राहयन्निह तिष्ठतु ॥३१॥

पदच्छेद—

न उद्धवः अणु अपि मत् न्यूनः, यद् गुणैः न अर्दितः प्रभुः ।
अतः मत् वयुनम् लोकम्, ग्राहयन् इह तिष्ठतु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ५. | नहीं हैं | अर्दितः | ९. | आधीन |
| उद्धवः | १. | उद्धव जी | प्रभुः । | ७. | जितेन्द्रिय (हैं और) |
| अणु, अपि | ३. | अणुमात्र, भी | अतः | ११. | इसलिये (वे) |
| मत् | २. | मुझसे | मत्, वयुनम्, | १३. | मेरे, ज्ञान को |
| न्यूनः, | ४. | कम | लोकम्, | १२. | संसार में |
| यद् | ६. | क्योंकि (वे) | ग्राहयन् | १४. | सिखाते हुये |
| गुणैः | ८. | विषयों के | इह | १५. | यहीं पर |
| न | १०. | नहीं हैं | तिष्ठतु ॥ | १६. | रहें |

श्लोकार्थ—उद्धव जी मुझसे अणुमात्र भी कम नहीं हैं, क्योंकि वे जितेन्द्रिय हैं और विषयों के आधीन नहीं हैं । इसलिये वे संसार में मेरे ज्ञान को सिखाते हुये यहीं पर रहें ।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

एवं त्रिलोकगुरुणा सन्दिष्टः शब्दयोनिना ।
बदर्याश्रममासाद्य हरिमीजे समाधिना ॥३२॥

पदच्छेद—

एवम् त्रिलोक गुरुणा, सन्दिष्टः शब्द योनिना ।
बदरी आश्रमम् आसाद्य, हरिम् ईजे समाधिना ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | बदरी आश्रमम् | ७. | बदरिकाश्रम में |
| त्रिलोक | ४. | तीनों लोकों के | आसाद्य, | ८. | जाकर |
| गुरुणा, | ५. | गुरु (भगवान् श्री कृष्ण) का | हरिम् | १०. | भगवान् श्री हरि की |
| सन्दिष्टः | ६. | सन्देश पाकर (उद्धव जी) | ईजे | ११. | उपासना करने लगे |
| शब्द | २. | वेद के | समाधिना ॥ | ९. | समाधि के द्वारा |
| योनिना । | ३ | कारण (तथा) | | | |

श्लोकार्थ—इस प्रकार वेद के कारण तथा तीनों लोकों के भगवान् श्री कृष्ण का सन्देश पाकर उद्धव जी बदरिकाश्रम में जाकर समाधि के द्वारा भगवान् श्री हरि की उपासना करने लगे ।

# त्रयस्त्रिंश: श्लोकः

विदुरोऽप्युद्धवाच्छ्रुत्वा कृष्णस्य परमात्मनः ।
क्रीडयोपात्तदेहस्य कर्माणि श्लाघितानि च ॥३३॥

पदच्छेद—

विदुरः अपि उद्धवात् श्रुत्वा, कृष्णस्य परमात्मनः ।
क्रीडया उपात्त देहस्य, कर्माणि श्लाघितानि च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विदुरः | १. | विदुर जी ने | क्रीडया | ४. | लीला के लिये |
| अपि | २. | भी | उपात्त | ६. | धारण करने वाले |
| उद्धवात् | ३. | उद्धव जी से | देहस्य, | ५. | शरीर |
| श्रुत्वा, | १२. | सुना | कर्माणि | ११. | लीलाओं को |
| कृष्णस्य | ८. | श्री कृष्ण की | श्लाघितानि | ९. | प्रशंसा को |
| परमात्मनः । | ७. | भगवान् | च ॥ | १०. | और |

श्लोकार्थ—विदुर जी ने भी उद्धव जी से लीला के लिये शरीर धारण करने वाले भगवान् श्री कृष्ण की प्रशंसा को और लीलाओं को सुना ।

# चतुस्त्रिंश: श्लोकः

देहन्यासं च तस्यैवं धीराणां धैर्यवर्धनम् ।
अन्येषां दुष्करतरं पशूनां विक्लवात्मनाम् ॥३४॥

पदच्छेद—

देह न्यासम् च तस्य एवम्, धीराणाम् धैर्य वर्धनम् ।
अन्येषाम् दुष्करतरम्, पशूनाम् विक्लव आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देह | ३. | (अपना) शरीर | वर्धनम् । | ७. | बढ़ाने वाला है |
| न्यासम् | ४. | त्याग | अन्येषाम् | १२. | अन्य मनुष्यों के लिये |
| च | ८. | तथा | दुष्करतरम्, | १३. | बड़ा कठिन है |
| तस्य | १. | भगवान् श्री कृष्ण का | पशूनाम् | ९. | पशुओं के समान |
| एवम्, | २. | इस प्रकार | विक्लव | १०. | भय से |
| धीराणाम् | ५. | धीर पुरुषों के | आत्मनाम् ॥ | ११. | भयभीत |
| धैर्य | ६. | साहस को | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री कृष्ण का इस प्रकार अपना शरीर त्याग धीर पुरुषों के साहस को बढ़ाने वाला है तथा पशुओं के समान भय से भयभीत अन्य मनुष्यों के लिये बड़ा कठिन है ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

आत्मानं च कुरुश्रेष्ठ कृष्णेन मनसेक्षितम् ।
ध्यायन् गते भागवते, रुरोद प्रेमविह्वलः ॥३५॥

पदच्छेद—

आत्मानम् च कुरुश्रेष्ठ, कृष्णेन मनसा ईक्षितम् ।
ध्यायन् गते भागवते, रुरोद प्रेम विह्वलः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मानम् | ३. | मुझे | ध्यायन् | ७. | सोचकर (विदुर जी) |
| च | ६. | ऐसा | गते | ९. | चले जाने पर |
| कुरुश्रेष्ठः | १. | हे परीक्षित् !(अन्त समय में) | भागवते, | ८. | महाभागवत (उद्धव जी) के |
| कृष्णेन | २. | भगवान् श्री कृष्ण ने | रुरोद | १२. | रोने लगे |
| मनसा | ४. | मन से | प्रेम | १०. | प्रेम में |
| ईक्षितम् । | ५. | स्मरण किया है | विह्वलः ॥ | ११. | व्याकुल होकर |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! अन्त समय में भगवान् श्री कृष्ण ने मुझे मन से स्मरण किया है, ऐसा सोच कर विदुर जी महाभागवत उद्धव जी के चले जाने पर प्रेम में व्याकुल होकर रोने लगे ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

कालिन्द्याः कतिभिः सिद्ध अहोभिर्भरतर्षभः ।
प्रापद्यत स्वःसरितं यत्र मित्रासुतो मुनिः ॥३६॥

पदच्छेद—

कलिन्द्याः कतिभिः सिद्धः, अहोभिः भरतर्षभः ।
प्रापद्यत स्वः सरिसम्, यत्र मित्रासुतः मुनिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालिन्द्याः | ३. | यमुना जी से (चलकर) | प्रापद्यत | ७. | पहुँचे |
| कतिभिः | ४. | कुछ | स्वः, सरितम् | ६. | स्वर्ग नदी गंगाजी के तट पर |
| सिद्धः, | १. | सिद्ध | यत्र | ८. | जहाँ |
| अहोभिः | ५. | दिनों में | मित्रासुतः | ९. | मैत्रेय |
| भरतर्षभः । | २. | विदुर जी | मुनिः ॥ | १०. | ऋषि रहते थे |

श्लोकार्थ—सिद्ध विदुर जी यमुना नदी से चल कर कुछ दिनों में स्वर्ग नदी गंगा जी के तट पर पहुँचे, जहाँ मैत्रेय ऋषि रहते थे ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे चतुर्थः अध्याय ॥४॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### अथ पञ्चमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

द्वारि द्युनद्या ऋषभः कुरूणां, मैत्रेयमासीनमगाधबोधम् ।
क्षत्तोपसृत्याच्युतभावशुद्धः, पप्रच्छ सौशील्यगुणाभितृप्तः ॥१॥

पदच्छेद— द्वारि द्युनद्याः ऋषभः कुरूणाम्, मैत्रेयम् आसीनम् अगाध बोधम् ।
क्षत्ता उपसृत्य अच्युत भाव शुद्धः, पप्रच्छ सौशील्य गुण अभितृप्तः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वारि | ७. | हरिद्वार में | उपसृत्य | १२. | पास जाकर |
| द्युनद्याः | ८. | गंगा जी के तट पर | अच्युत | १. | भगवान् श्री कृष्ण की |
| ऋषभः | ५. | श्रेष्ठ | भाव | २. | भक्ति से |
| कुरूणाम्, | ४. | कुरुवंशियों में | शुद्धः, | ३. | पवित्र अन्तःकरण वाले (और) |
| मैत्रेयम् | ११. | मैत्रेय जी के | पप्रच्छ | १६. | (उनसे) पूछा |
| आसीनम् | ९. | बैठे हुये | सौशील्य | १३ | (उनके) विनम्रता |
| अगाध,बोधम्। | १०. | परम, ज्ञानी | गुण | १४. | (आदि) गुणों से |
| क्षत्ता | ६. | विदुर जी ने | अभितृप्तः ॥ | १५. | बहुत प्रसन्न होते हुये |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री कृष्ण की भक्ति से पवित्र अन्तःकरण वाले और कुरुवंशियों में श्रेष्ठ विदुर जी ने हरिद्वार में गंगा जी के तट पर बैठे हुये परम ज्ञानी मैत्रेय जी के पास जाकर उनके विनम्रता आदि गुणों से बहुत प्रसन्न होते हुये उनसे पूछा ।

## द्वितीयः श्लोकः

सुखाय कर्माणि करोति लोको, न तैः सुखं वान्यदुपारमं वा ।
विन्देत भूयस्तत एव दुःखं, यदत्र युक्तं भगवान् वदेन्नः ॥२॥

पदच्छेद— सुखाय कर्माणि करोति लोकः, न तैः सुखम् वा अन्यत् उपारमम् वा ।
विन्देत भूयः ततः एव दुःखम्, यत् अत्र युक्तम् भगवान् वदेत् नः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सुखाय | २. | सुख पाने के लिये | विन्देत | ११. | पाते हैं |
| कर्माणि, करोति | ३. | कर्म, करते हैं | भूयः, ततः | ९. | उससे, और अधिक |
| लोकः, | १. | लोग | एव, दुःखःम्. | १०. | ही, दुःख |
| न | ८. | नहीं (होती है) | यत् | १२. | इसलिये |
| तैः, सुखम् | ५. | उनसे, सुख (नहीं मिलता) | अत्र, युक्तम् | १५. | इस विषय में, उचित बात |
| वा | ४. | किन्तु | भगवान् | १३. | हे भगवन् ! आप |
| अन्यत्,उपारमम् | ७. | दुःखों की, शान्ति (भी) | वदेत् | १६. | बतावें |
| वा । | ६. | और | नः ॥ | १४. | हमें |

श्लोकार्थ—लोग सुख पाने के लिये कर्म करते हैं, किन्तु उनसे सुख नहीं मिलता और दुःखों की शान्ति भी नहीं होती है, उल्टे उससे और अधिक ही दुःख पाते हैं । इसलिये आप हमें इस विषय में उचित बात बतावें ।

## तृतीयः श्लोकः

जनस्य कृष्णाद्विमुखस्य दैवा-दधर्मशीलस्य सुदुःखितस्य ।
अनुग्रहायेह चरन्ति नूनं, भूतानि भव्यानि जनार्दनस्य ॥३॥

पदच्छेद—

जनस्य कृष्णात् विमुखस्य दैवात्, अधर्म शीलस्य सुदुःखितस्य ।
अनुग्रहाय इह चरन्ति नूनम्, भूतानि भव्यानि जनार्दनस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जनस्य | ७. | लोगों का | अनुग्रहाय | ८. | कल्याण करने के लिये |
| कृष्णात् | २. | भगवान् श्री कृष्ण से | इह | १०. | इस संसार में |
| विमुखस्य | ३ | विमुख हुये | चरन्ति | १४. | विचरण करते हैं |
| दैवात्, | १. | दुर्भाग्यवश | नूनम्, | ६. | ही |
| अधर्म | ४. | पाप | भूतानि | १३. | भक्तगण |
| शीलस्य | ५. | परायण (अतः) | भव्यानि | १२. | भाग्यशाली |
| सुदुःखितस्य । | ६. | सदा दुःख पाने वाले | जनार्दनस्य ॥ | ११. | भगवान् श्री हरि के |

श्लोकार्थ—दुर्भाग्यवश भगवान् श्रीकृष्ण से विमुख हुये, पाप परायण अतः सदा दुःख पाने वाले लोगों का कल्याण करने के लिये ही इस संसार में भगवान् श्री हरि के भाग्यशाली भक्तगण विचरण करते हैं ।

## चतुर्थः श्लोकः

तत्साधुवर्यादिश वर्त्म शं नः, संराधितो भगवान् येन पुंसाम् ।
हृदि स्थितो यच्छति भक्तिपूते, ज्ञानं सतत्त्वाधिगमं पुराणम् ॥४॥

पदच्छेद—

तत् साधुवर्य आदिश वर्त्म शम् नः, संराधितः भगवान् येन पुंसाम् ।
हृदि स्थितः यच्छति भक्ति पूते, ज्ञानम् सतत्त्व अधिगमम् पुराणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | १. | इसलिये | पुंसाम् । | १०. | मनुष्यों के |
| साधुवर्य | २. | हे साधु शिरोमणे ! आप | हृदि, स्थितः | ११. | हृदय में, विराजमान होते हैं |
| आदिश | ६. | उपदेश करें | यच्छति | १६. | देते हैं |
| वर्त्म | ५. | मार्ग का | भक्ति, पूते, | ६. | भक्ति से, पवित्र |
| शम् | ४. | कल्याणकारी | ज्ञानम् | १५. | ज्ञान |
| नः, | ३. | हमें | सतत्त्व | १२. | अपने स्वरूप को |
| संराधितः,भगवान् | ८. | प्रसन्न होकर, भगवान् श्री हरि | अधिगमम् | १३. | बताने वाला |
| येन | ७. | जिससे | पुराणम् ॥ | १४. | सनातन |

श्लोकार्थ—इसलिये हे साधु शिरोमणे ! आप हमें कल्याणकारी मार्ग का उपदेश करें, जिससे प्रसन्न होकर भगवान् श्री हरि भक्ति से पवित्र मनुष्यों के हृदय में विराजमान होते हैं और अपने स्वरूप को बताने वाला सनातन ज्ञान देते हैं ।

## पञ्चमः श्लोकः

करोति कर्माणि कृतावतारो, यान्यात्मतन्त्रो भगवांस्त्र्यधीशः ।
यथा ससर्जाग्र इदं निरीहः, संस्थाप्य वृत्तिं जगतो विधत्ते ।।५।।

पदच्छेद—

करोति कर्माणि कृत अवतारः, यानि आत्म तन्त्रः भगवान् त्रि अधीशः ।
यथा ससर्ज अग्रे इदम् निरीहः, संस्थाप्य वृत्तिम् जगतः विधत्ते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| करोति | ८. | करते हैं | यथा | ९. | जिस प्रकार |
| कर्माणि | ७. | लीलाओं को | ससर्ज | १३. | सृष्टि करते हैं (और इसे) |
| कृत | ५. | लेकर | अग्रे, इदम् | ११. | कल्प के प्रारम्भ में, इस |
| अवतारः, | ४. | अवतार | निरीहः, | १०. | अकर्ता होने पर भी |
| यानि | ६. | जिन | संस्थाप्य | १४. | स्थापित करके |
| आत्म, तन्त्रः | १. | परम, स्वतन्त्र | वृत्तिम् | १५. | (जीवों की) जीविका का |
| भगवान् | ३. | भगवान् श्री हरि | जगतः | १२. | संसार की |
| त्रि, अधीशः । | २. | त्रिलोकी नाथ | विधत्ते ।। | १६. | निर्माण करते हैं (उसे बतावें) |

श्लोकार्थ—परम स्वतन्त्र, त्रिलोकीनाथ, भगवान् श्री हरि अवतार लेकर जिन लीलाओं को करते हैं, जिस प्रकार अकर्ता होने पर भी कल्प के प्रारम्भ में इस संसार की सृष्टि करते हैं और इसे स्थापित करके जीवों की जीविका का निर्माण करते हैं; उसे बतावें ।

## षष्ठः श्लोकः

यथा पुनः स्वे ख इदं निवेश्य, शेते गुहायां स निवृत्तवृत्तिः ।
योगेश्वराधीश्वर एक एत-दनुप्रविष्टो बहुधा यथाऽऽसीत् ।।६।।

पदच्छेद—

यथा पुनः स्वे खे इदम् निवेश्य, शेते गुहायाम् सः निवृत्त वृत्तिः ।
योगेश्वर अधीश्वरः एकः एतद्, अनुप्रविष्टः बहुधा यथा आसीत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | ४. | जिस प्रकार | वृत्तिः । | १. | सृष्टि क्रिया से |
| पुनः | ६. | फिर से | योगेश्वर | ११. | योगिराजों के |
| स्वे, खे | ५. | अपने, हृदयाकाश में | अधीश्वरः | १२. | स्वामी (वे भगवान्) |
| इदम्, निवेश्य, | ७. | इस (विश्व) को, लीन करके | एकः, एतद् | १३. | अकेले ही, इस (जगत्) में |
| शेते | ९. | शयन करते हैं (तथा) | अनुप्रविष्टः | १४. | प्रवेश करके |
| गुहायाम् | ८. | योग निद्रा में | बहुधा | १५. | अनेक रूपों में |
| सः | ३. | वे (भगवान्) | यथा | १०. | जिस प्रकार |
| निवृत्त | २. | विरत होने पर | आसीत् ।। | १६. | प्रकट होते हैं (उसे बतावें) |

श्लोकार्थ—सृष्टि क्रिया से विरत होने पर वे भगवान् जिस प्रकार अपने हृदयाकाश में फिर से इस विश्व को लीन करके योग निद्रा में शयन करते हैं तथा जिस प्रकार योगिराजों के स्वामी वे भगवान् अकेले ही इस जगत् में प्रवेश करके अनेक रूपों में प्रकट होते हैं; उसे बतावें ।

# सप्तमः श्लोकः

**क्रीडन् विधत्ते द्विजगोसुराणां, क्षेमाय कर्माण्यवतारभेदैः ।**
**मनो न तृप्यत्यपि शृण्वतां नः, सुश्लोकमौलेश्चरितामृतानि ।।७।।**

पदच्छेद—

क्रीडन् विधत्ते द्विज गो सुराणाम्, क्षेमाय कर्माणि अवतार भेदैः ।
मनः न तृप्यति अपि शृण्वताम् नः, सुश्लोक मौलेः चरित अमृतानि ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| क्रीडन् | ३. लीला करते हुये (श्री हरि) | मनः | १५. | मन |
| विधत्ते | ८. करते हैं | न तृप्यति | १६. | तृप्त नहीं हो रहा है |
| द्विज, गो | ४. ब्राह्मणों, गउओं (और) | अपि | १३. | भी |
| सुराणाम्, | ५. देवताओं के | शृण्वताम् | १२. | पान करते रहने पर |
| क्षेमाय | ६. कल्याण के लिये | नः, | १४. | हमारा |
| कर्माणि | ७. अनेक कर्मों को | सुश्लोक | ९. | यशस्वियों के |
| अवतार | २. अवतारों में | मौलेः | १०. | मुकुट मणि (उन श्री हरि) के |
| भेदैः । | १. अनेक | चरित,अमृतानि | ११. | लीला रूपी, सुधा रस का |

श्लोकार्थ—अनेक अवतारों में लीला करते हुये श्री हरि ब्राह्मणों, गउओं और देवताओं के कल्याण के लिये अनेक कर्मों को करते हैं । यशस्वियों के मुकुट मणि उन श्री हरि के लीला रूपी सुधा-रस का पान करते रहने पर भी हमारा मन तृप्त नहीं हो रहा है ।

# अष्टमः श्लोकः

**यैस्तत्त्वभेदैरधिलोकनाथो, लोकानलोकान् सहलोकपालान् ।**
**अचीक्लृपद्यत्र हि सर्वसत्त्व-निकायभेदोऽधिकृतः प्रतीतः ।।८।।**

पदच्छेद—

यैः तत्त्व भेदैः अधिलोकनाथः, लोकान् अलोकान् सह लोकपालान् ।
अचीक्लृपत् यत्र हि सर्व सत्त्व, निकाय भेदः अधिकृतः प्रतीतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यैः | २. किन | अचीक्लृपत् | ९. | रचना की है |
| तत्त्व | ४. तत्त्वों से | यत्र हि | १०. | जहाँ पर |
| भेदैः | ३. भिन्न-भिन्न | सर्व | १३. | सभी |
| अधिलोकनाथः, | १. लोकपतियों के स्वामी ने | सत्त्व, | १४. | जीवों के |
| लोकान् | ७. लोकों (और) | निकाय | १२. | समुदायों के |
| अलोकान् | ८. अलोकों की | भेदः | ११. | भिन्न-भिन्न |
| सह | ६. साथ | अधिकृतः | १५. | (भिन्न-भिन्न) अधिकार |
| लोकपालान् । | ५. लोकपालों के | प्रतीतः ।। | १६. | स्पष्ट मालुम पड़ते हैं |

श्लोकार्थ—लोकपतियों के स्वामी श्री हरि ने किन भिन्न-भिन्न तत्त्वों से लोकपालों के साथ लोकों और अलोकों की रचना की है ? जहाँ पर भिन्न-भिन्न समुदायों के सभी जीवों के भिन्न-भिन्न अधिकार स्पष्ट मालुम पड़ते हैं ।

## नवमः श्लोकः

येन प्रजानामुत आत्मकर्म-रूपाभिधानां च भिदां व्यधत्त ।
नारायणो विश्वसृडात्मयोनि-रेतच्च नो वर्णय विप्रवर्य ॥९॥

पदच्छेद—

येन प्रजानाम् उत आत्म कर्म, रूप अभिधानाम् च भिदाम् व्यधत्त ।
नारायणः विश्व सृट् आत्मयोनिः, एतद् च नः वर्णय विप्रवर्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| येन | ५. | जिस साधन से | नारायणः | ४. | भगवान् श्री हरि ने |
| प्रजानाम् | ६. | जीवों की | विश्व | १. | संसार को |
| उत, आत्म | ७. | तथा (उनके) स्वभाव | सृट् | २. | बनाने वाले |
| कर्म, रूप | ८. | कर्म, रूप और | आत्मयोनिः, | ३. | स्वयम्भू |
| अभिधानाम | ९. | नामों की | एतद् च | १४. | उसे |
| च | १०. | एवम् | नः | १५. | हमें |
| भिदाम् | ११. | (उनके) भेदों की | वर्णय | १६. | बतावें |
| व्यधत्त । | १२. | रचना की है | विप्रवर्य ॥ | १३. | हे मुनिवर ! |

श्लोकार्थः—संसार को बनाने वाले स्वयम्भू भगवान् श्री हरि ने जिस साधन से जीवों की तथा उनके स्वभाव, कर्म, रूप और नामों की एवम् उनके भेदों की रचना की है; हे मुनिवर ! उसे हमें बतावें ।

## दशमः श्लोकः

परावरेषां भगवन् व्रतानि, श्रुतानि मे व्यासमुखादभीक्ष्णम् ।
अतृप्नुम क्षुल्लसुखावहानां, तेषामृते कृष्णकथामृतौघात् ॥१०॥

पदच्छेद—

परावेरषाम् भगवन् व्रतानि, श्रुतानि मे व्यास मुखात् अभीक्ष्णम् ।
अतृप्नुम क्षुल्ल सुख आवहानाम्, तेषाम् ऋते कृष्ण कथा अमृत ओघात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परावरेषाम् | ५. | परात्पर श्री हरि के | अतृप्नुम | १६. | तृप्ति नहीं हो रही है |
| भगवन् | १. | हे मुनिवर ! | क्षुल्ल | १२. | तुच्छ |
| व्रतानि, | ६. | अनेक धर्मों को | सुख | १३. | सुखों को |
| श्रुतानि | ८. | सुना है (किन्तु) | आवहानाम्, | १४. | देने वाले |
| मे | ४. | मैंने | तेषाम् | १५. | उन धर्मों से (मुझे) |
| व्यास | २. | भगवान् वेद व्यास के | ऋते | ११. | छोड़ कर |
| मुखात् | ३. | मुख से | कृष्ण, कथा | ९. | भगवान् श्रीहरि के, कथारूपी |
| अभीक्ष्णम् । | ७. | निरन्तर | अमृत,ओघात्॥ | १०. | सुधारस के, प्रवाह को |

श्लोकार्थः—हे मुनिवर ! भगवान् वेद व्यास के मुख से मैंने परात्पर श्री हरि के अनेक धर्मों को निरन्तर सुना है, किन्तु भगवान् श्री हरि के कथा रूपी सुधारस के प्रवाह को छोड़ कर तुच्छ सुखों को देने वाले उन धर्मों से मुझे तृप्ति नहीं हो रही है ।

# एकादशः श्लोकः

कस्तृप्नुयात्तीर्थपदोऽभिधानात्, सत्रेषु वः सूरिभिरीड्यमानात् ।
यः कर्णनाडीं पुरुषस्य यातो, भयप्रदां गेहरतिं छिनत्ति ॥११॥

पदच्छेद—

कः तृप्नुयात् तीर्थपदः अभिधानात्, सत्रेषु वः सूरिभिः ईड्यमानात् ।
यः कर्णनाडीम् पुरुषस्य यातः, भव प्रदाम् गेह रतिम् छिनत्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | ७. | कौन | यः | ९. | जो |
| तृप्नुयात् | ८. | तृप्त हो सकता है | कर्णनाडीम् | ११. | कान की नाड़ी में |
| तीर्थपदः | ५. | पवित्र नाम वाले श्रीहरि के | पुरुषस्य | १०. | मनुष्य के |
| अभिधानात्, | ६. | गुणानुवाद से | यातः, | १२. | पहुँच कर |
| सत्रेषु | २. | ज्ञानयज्ञों में | भव, प्रदाम् | १३. | जन्म-मरण को, देने वाली |
| वः | १. | आप लोगों के | गेह | १४. | घर की |
| सूरिभिः | ३ | महात्माओं के द्वारा | रतिम् | १५. | आसक्ति को |
| ईड्यमानात् । | ४. | प्रशंसित | छिनत्ति ॥ | १६. | काट देता है |

श्लोकार्थ—आप लोगों के ज्ञान-यज्ञों में महात्माओं के द्वारा प्रशंसित पवित्र नाम वाले श्री हरि के गुणानुवाद से कौन तृप्त हो सकता है ? जो मनुष्य के कान की नाड़ी में पहुँच कर, जन्म-मरण को देने वाली घर की आसक्ति को काट देता है ।

# द्वादशः श्लोकः

मुनिर्विवक्षुर्भगवद्गुणानां, सखापि ते भारतमाह कृष्णः ।
यस्मिन्नृणां ग्राम्यसुखानुवादै-र्मतिर्गृहीता नु हरेः कथायाम् ॥१२॥

पदच्छेद—

मुनिः विवक्षुः भगवद् गुणानाम्, सखा अपि ते भारतम् आह कृष्णः ।
यस्मिन् नृणाम ग्राम्य सुख अनुवादैः, मतिः गृहीता नु हरेः कथायाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुनिः | ३. | मुनिवर | यस्मिन् | ९. | जिसमें |
| विवक्षुः | ६. | वर्णन की इच्छा से | नृणाम् | १२. | मनुष्यों की |
| भगवद्,गुणानाम्, | ५. | भगवान् श्रीहरि के गुणों के | ग्राम्य, सुख | १०. | विषयों के, सुखों का |
| सखा | २. | मित्र | अनुवादैः | ११. | वर्णन करके |
| अपि | ७. | ही | मतिः | १३. | बुद्धि |
| ते | १. | आपके | गृहीता | १६. | लगाई गई है |
| भारतम्, आह | ८. | महाभारत ग्रन्थ, रचा है | नु | १५. | ही |
| कृष्णः । | ४. | वेद व्यास जी ने | हरेः,कथायाम्॥ | १४. | श्रीहरि की, कथा की ओर |

श्लोकार्थ—आपके मित्र मुनिवर वेदव्यास जी ने भगवान् श्री हरि के गुणों के वर्णन की इच्छा से ही महाभारत ग्रन्थ रचा है, जिसमें विषयों के सुखों का वर्णन करके मनुष्यों की बुद्धि श्री हरि की कथा की ओर ही लगाई गई है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

सा श्रद्दधानस्य विवर्धमाना, विरक्तिमन्यत्र करोति पुंसः ।
हरेः पदानुस्मृतिनिर्वृतस्य, समस्तदुःखात्ययमाशु धत्ते ।।१३।।

पदच्छेद—

सा श्रद्दधानस्य विवर्धमाना, विरक्तिम् अन्यत्र करोति पुंसः ।
हरेः पद अनुस्मृति निर्वृतस्य, समस्त दुःख अत्ययम् आशु धत्ते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा | १. | वह बुद्धि | पद | ६. | चरणों के |
| श्रद्दधानस्य | २. | श्रद्धालु | अनुस्मृति | १०. | ध्यान में |
| विवर्धमाना, | ४. | बढ़ती हुई | निर्वृतस्य, | ११. | आनन्द मग्न (उस मनुष्य के) |
| विरक्तिम् | ६. | वैराग्य | समस्त | १२. | सम्पूर्ण |
| अन्यत्र | ५. | विषयों से | दुःख | १३. | कष्टों का |
| करोति | ७. | उत्पन्न करती है (तदनन्तर) | अत्ययम् | १५. | नाश |
| पुंसः । | ३. | मनुष्यों के (हृदय में) | आशु | १४. | तत्काल |
| हरेः | ८. | (वह) श्री हरि के | धत्ते ।। | १६. | कर देता है |

श्लोकार्थ—भगवान् की ओर लगी हुई वह बुद्धि श्रद्धालु मनुष्यों के हृदय में बढ़ती हुई विषयों से वैराग्य उत्पन्न करती है । तदनन्तर वह श्री हरि के चरणों के ध्यान में आनन्द मग्न उस मनुष्य के सम्पूर्ण कष्टों का तत्काल नाश कर देती है ।

## चतुर्दशः श्लोकः

ताञ्छोच्यशोच्यनाविदोऽनुशोचे, हरेः कथायां विमुखानघेन ।
क्षिणोति देवोऽनिमिषस्तु येषा-मायुर्वृथावादगतिस्मृतीनाम् ।।१४।।

पदच्छेद—

तान् शोच्य शोच्यान् अविदः अनुशोचे, हरेः कथायाम् विमुखान् अघेन ।
क्षिणोति देवः अनिमिषः तु येषाम्, आयुः वृथा वाद गति स्मृतीनाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तान्, शोच्य | ५. | उन, तुच्छों से भी | क्षिणोति | १६. | नष्ट कर रहे हैं |
| शोच्यान् | ६. | तुच्छ | देवः | ११. | भगवान् |
| अविदः | ७. | अज्ञानी जनों के लिये | अनिमिषः | १०. | काल |
| अनुशोचे, | ८. | मुझे खेद हो रहा है | तु | ६. | क्योंकि |
| हरेः | २. | भगवान् श्री हरि की | येषाम्, | १४. | उन लोगों की |
| कथायाम् | ३. | कथा से | आयुः | १५. | आयु को |
| विमुखान् | ४. | विरत रहने वाले | वृथा, वाद | १२. | व्यर्थ के, वाद |
| अघेन । | १. | पाप के कारण | गति,स्मृतीनाम्।। | १३. | विवाद (और) चिन्तन में मग्न |

श्लोकार्थ—पाप के कारण भगवान् श्री हरि की कथा से विरत रहने वाले उन तुच्छों से भी तुच्छ अज्ञानी जनों के लिये मुझे खेद हो रहा है, क्योंकि काल भगवान् व्यर्थ के वाद-विवाद और चिन्तन में लगे हुये उन लोगों की आयु को नष्ट कर रहे हैं ।

## पञ्चदशः श्लोकः

तदस्य कौषारव शर्म दातुर्हरेः कथामेव कथासु सारम् ।
उद्धृत्य पुष्पेभ्य इवार्तबन्धो, शिवाय नः कीर्तय तीर्थकीर्तेः ॥१५॥

पदच्छेद—

तद् अस्य कौषारव शर्म दातुः, हरेः कथाम् एव कथासु सारम् ।
उद्धृत्य पुष्पेभ्यः इव आर्तबन्धो, शिवाय नः कीर्तय तीर्थ कीर्तेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ३. | इसलिये | उद्धृत्य | ६. | निकालता है (उसी प्रकार) |
| अस्य | १२. | उन | पुष्पेभ्यः | ५. | फूलों से (सार अंश) |
| कौषारव | १. | हे मैत्रेय जी ! आप (हम) | इव | ४. | जैसे (भँवरा) |
| शर्म | ९. | कल्याण | आर्त बन्धो, | २. | दीनों के हितैषी हैं |
| दातुः, | १०. | कारी (और) | शिवाय | ८. | कल्याण के लिये |
| हरेः | १३. | श्री हरि की | नः | ७. | हमारे |
| कथाम्, एव | १५. | कथा, ही | कीर्तय | १६. | सुनावें |
| कथासु, सारम् । | १४. | कथाओं में से, सारभूत | तीर्थ कीर्तेः ॥ | ११. | पवित्र नामधारी |

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! आप हम दीनों के हितैषी हैं, इसलिये जैसे भंवरा फूलों से सार अंश निकाल लेता है, उसी प्रकार हमारे कल्याण के लिये कल्याणकारी और पवित्र नामधारी उन श्री हरि की कथाओं में से सारभूत कथा ही सुनावें ।

## षोडशः श्लोकः

स विश्वजन्मस्थितिसंयमार्थे, कृतावतारः प्रगृहीतशक्तिः ।
चकार कर्माण्यतिपूरुषाणि, यानीश्वरः कीर्तय तानि मह्यम् ॥१६॥

पदच्छेद—

सः विश्व जन्म स्थिति संयमार्थे, कृत अवतारः प्रगृहीत शक्तिः ।
चकार कर्माणि अतिपूरुषाणि, यानि ईश्वरः कीर्तय तानि मह्यम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | उन (भगवान्) | चकार | १३. | की थीं (अब) |
| विश्व, जन्म | ३. | संसार की, उत्पत्ति | कर्माणि | १२. | लीलायें |
| स्थिति | ४. | पालन (और) | अतिपूरुषाणि, | ११. | अलौकिक |
| संयमार्थे, | ५. | संहार के लिये | यानि | १०. | जो |
| कृत | ९. | धारण करके | ईश्वरः | २. | सर्वेश्वर ने |
| अवतारः | ८. | राम, कृष्णादि अवतार | कीर्तय | १६. | सुनावें |
| प्रगृहीत | ७. | स्वीकार करने के उपरान्त | तानि | १४. | उन्हें |
| शक्तिः । | ६. | (अपनी) माया शक्ति को | मह्यम् ॥ | १५. | मुझे |

श्लोकार्थ—उन भगवान् सर्वेश्वर ने संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये अपनी माया शक्ति को स्वीकार करने के उपरान्त राम, कृष्णादि अवतार धारण करके जो अलौकिक लीलायें की थीं; अब उन्हें मुझे सुनावें ।

## सप्तदशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

स एवं भगवान् पृष्टः क्षत्त्रा कौषारविर्मुनिः ।
पुंसां निःश्रेयसार्थेन तमाह बहु मानयन् ॥१७॥

पदच्छेद—

सः एवम् भगवान् पृष्टः, क्षत्त्रा कौषारविः मुनिः ।
पुंसाम् निःश्रेयस अर्थेन, तम् आह बहु मानयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ७. | उन | पुंसाम् | १. | मनुष्यों के |
| एवम् | ५. | इस प्रकार | निःश्रेयस | २. | परम कल्याण |
| भगवान् | ९. | भगवान् | अर्थेन, | ३. | के लिये |
| पृष्टः, | ६. | पूछे जाने पर | तम् | ११. | उनका |
| क्षत्त्रा | ४. | विदुर जी के द्वारा | आह | १४. | कहा था |
| कौषारविः | १०. | मैत्रेय जी ने | बहु | १२. | बहुत |
| मुनिः । | ८. | मुनिवर | मानयन् ॥ | १३. | सम्मान करते हुये |

श्लोकार्थ—श्री शुकदेव मुनि ने कहा, हे राजन् ! मनुष्यों के परम कल्याण के लिये विदुर जी के द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर उन मुनिवर भगवान् मैत्रेय जी ने उनका बहुत सम्मान करते हुये कहा था ।

## अष्टादशः श्लोकः

साधु पृष्टं त्वया साधो लोकान् साध्वनुगृह्णता ।
कीर्तिं वितन्वता लोके आत्मनोऽधोक्षजात्मनः ॥१८॥

पदच्छेद—

साधु पृष्टम् त्वया साधो, लोकान् साधु अनुगृह्णता ।
कीर्तिम् वितन्वता लोके, आत्मनः अधोक्षज आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| साधु | ६. | अच्छी बात | कीर्तिम् | १२. | सुयश |
| पृष्टम् | ७. | पूछी है (इससे) | वितन्वता | १३. | फैलेगा |
| त्वया | २. | आपने | लोके, | ११. | संसार में |
| साधो, | १. | हे साधु स्वभाव उद्धव जी ! | आत्मनः | १०. | आपका |
| लोकान् | ३. | लोगों पर | अधोक्षज | ८. | भगवान् श्री हरि को |
| साधु | ४. | अत्यन्त | आत्मनः ॥ | ९. | सर्वस्व मानने वाले |
| अनुगृह्णता । | ५. | कृपा करके | | | |

श्लोकार्थ—हे साधु स्वभाव उद्धव जी ! आपने लोगों पर अत्यन्त कृपा करके अच्छी बात पूछी है । इससे भगवान् श्री हरि को सर्वस्व मानने वाले आपका संसार में सुयश फैलेगा ।

## एकोनविंशः श्लोकः

नैतच्चित्रं त्वयि क्षत्तर्बादरायणवीर्यजे ।
गृहीतोऽनन्यभावेन यत्त्वया हरिरीश्वरः ॥१९॥

पदच्छेद—

न एतद् चित्रम् त्वयि क्षत्तः, बादरायण वीर्यजे ।
गृहीतः अनन्य भावेन, यत् त्वया हरिः ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| न | ७. नहीं है | गृहीतः | १४. स्वीकार किया है |
| एतद् | ५. यह (कोई) | अनन्य | १०. अनन्य |
| चित्रम् | ६. आश्चर्य | भावेन, | ११. भाव से |
| त्वयि | ४. आपके विषय में | यत् | ८. क्योंकि |
| क्षत्तः, | १. हे विदुर जी ! | त्वया | ९. आपने |
| बादरायण | २. भगवान् वेद व्यास के | हरिः | १३. श्री हरि को (ही) |
| वीर्यजे । | ३. वीर्य से उत्पन्न | ईश्वरः ॥ | १२. भगवान् |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! भगवान् वेद व्यास के वीर्य से उत्पन्न आपके विषय में यह कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि आपने अनन्य भाव से भगवान् श्री हरि को ही स्वीकार किया है।

## विंशः श्लोकः

माण्डव्यशापाद्भगवान् प्रजासंयमनो यमः ।
भ्रातुः क्षेत्रे भुजिष्यायां जातः सत्यवतीसुतात् ॥२०॥

पदच्छेद—

माण्डव्य शापात् भगवान्, प्रजा संयमनः यमः ।
भ्रातुः क्षेत्रे भुजिष्यायाम्, जातः सत्यवती सुतात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| माण्डव्य | ५. माण्डव्य ऋषि के | भ्रातुः | ९. भाई (विचित्र वीर्य) की |
| शापात् | ६. शाप के कारण | क्षेत्रे | ११. दासी के गर्भ में |
| भगवान्, | ३. भगवान् | भुजिष्यायाम्, | १०. भोगपत्नी |
| प्रजा | १. (आप) जीवों को | जातः | १२. उत्पन्न हुये हैं |
| संयमनः | २. दण्ड देने वाले (साक्षात्) | सत्यवती | ७. सत्यवती |
| यमः । | ४. यमराज हैं | सुतात् ॥ | ८. नन्दन (वेद व्यास के वीर्य से) |

श्लोकार्थ—आप जीवों को दण्ड देने वाले साक्षात् भगवान् यमराज हैं। माण्डव्य ऋषि के शाप के कारण सत्यवती नन्दन वेद व्यास के वीर्य से भाई विचित्र वीर्य की भोगपत्नी दासी के गर्भ में उत्पन्न हुये हैं।

## एकविंशः श्लोकः

भवान् भगवतो नित्यं सम्मतः सानुगस्य च।
यस्य ज्ञानोपदेशाय माऽऽदिशद्भगवान् व्रजन् ॥२१॥

पदच्छेद—

भवान् भगवतः नित्यम्, सम्मतः स अनुगस्य च।
यस्य ज्ञान उपदेशाय, मा आदिशत् भगवान् व्रजन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भवान् | १. | आप | यस्य | ८ | (अतः) आपको |
| भगवतः | २. | भगवान् के | ज्ञान | ९. | आत्मज्ञान का |
| नित्यम्, | ६. | सदा | उपदेशाय, | १०. | उपदेश देने के लिये |
| सम्मतः | ७. | प्रिय हैं | मा | १३. | मुझे |
| स | ४. | उनके | आदिशत् | १४. | आदेश दिया था |
| अनुगस्य | ५. | भक्तों के | भगवान् | १२. | भगवान् श्रीकृष्ण ने |
| च। | ३. | और | व्रजन् ॥ | ११. | (अपने धाम) जाते समय |

श्लोकार्थ—आप भगवान् के और उनके भक्तों के सदा प्रिय हैं, अतः आपको आत्मज्ञान का उपदेश देने के लिये अपने धाम जाते समय भगवान् श्रीकृष्ण ने मुझे आदेश दिया था।

## द्वाविंशः श्लोकः

अथ ते भगवल्लीला योगमायोपबृंहिताः।
विश्वस्थित्युद्भवान्तार्था वर्णयाम्यनुपूर्वशः ॥२२॥

पदच्छेद—

अथ ते भगवत् लीलाः, योगमाया उपबृंहिताः।
विश्व स्थिति उद्भव अन्त अर्थाः, वर्णयामि अनुपूर्वशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | अब मैं | विश्व | ५. | जगत् की |
| ते | २. | आपसे | स्थिति | ७. | पालन (और) |
| भगवत् | १०. | भगवान् श्रीहरि की | उद्भव | ६. | उत्पति |
| लीलाः, | ११. | लीलाओं का | अन्त | ८. | संहार |
| योगमाया | ३. | योगमाया शक्ति के द्वारा | अर्थाः, | ९. | करने वाली |
| उपबृंहिताः। | ४. | विस्तारित | वर्णयामि | १३. | वर्णन करता हूँ |
| | | | अनुपूर्वशः ॥ | १२. | क्रम से |

श्लोकार्थ—अब मैं आपसे योगमाया शक्ति के द्वारा विस्तारित जगत् की उत्पति, पालन और संहार करने वाली भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का क्रम से वर्णन करता हूँ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

भगवानेक आसेदमग्र आत्माऽऽत्मनां विभुः ।
आत्मेच्छानुगतावात्मा नानामत्युपलक्षणः ॥२३॥

पदच्छेद--

भगवान् एकः आस इदम्, अग्रे आत्मा आत्मनाम् विभुः ।
आत्म इच्छा अनुगतौ आत्मा, नाना मति उपलक्षणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | ७. | भगवान् श्री हरि | आत्म | १०. | अपनी |
| एकः | ५. | एक | इच्छा | ११. | इच्छा से (और) |
| आस | ८. | विद्यमान थे | अनुगतौ | १५. | युक्त था |
| इदम्, | १. | इस (जगत्) की | आत्मा, | ९. | (उस समय वह) परमात्मा |
| अग्रे | २. | सृष्टि के पूर्व | नाना | १४. | अनेकता से |
| आत्मा | ४. | आत्मा | मति | १२. | वृत्तियों के |
| आत्मनाम् | ३. | आत्माओं के | उपलक्षणः ॥ | १३. | सम्बन्ध से प्रतीत होने वाली |
| विभुः । | ६. | पूर्ण परमात्मा | | | |

श्लोकार्थ—इस जगत् की सृष्टि के पूर्व सभी आत्माओं के आत्मा एक पूर्ण परमात्मा भगवान् श्री हरि विद्यमान थे। उस समय वह परमात्मा अपनी इच्छा से और वृत्तियों के सम्बन्ध से प्रतीत होने वाली अनेकता से युक्त था।

# चतुर्विंशः श्लोकः

स वा एष तदा द्रष्टा नापश्यद् दृश्यमेकराट् ।
मेनेऽसन्तमिवात्मानं सुप्तशक्तिरसुप्तदृक् ॥२४॥

पदच्छेद--

सः वा एषः तदा द्रष्टा, न अपश्यत् दृश्यम् एकराट् ।
मेने असन्तम् इव आत्मानम्, सुप्त शक्तिः असुप्त दृक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | प्रसिद्ध | मेने | १२. | समझा था (उस समय उसकी) |
| वा | ६. | परमात्मा ने | असन्तम | १०. | असत् के |
| एषः | ५. | इस | इव | ११. | समान |
| तदा | १. | उस समय | आत्मानम्, | ९. | अपने को |
| द्रष्टा, | ३. | द्रष्टा रूप में | सुप्त | १४. | सोई हुई थी (किन्तु) |
| न अपश्यत् | ८. | नहीं, देखा (और) | शक्तिः | १३. | माया शक्ति |
| दृश्यम् | ७. | संसार को | असुप्त | १६. | प्रकाशित (था) |
| एकराट् । | २. | स्वयं प्रकाशमान (तथा) | दृक् ॥ | १५. | ज्ञान |

श्लोकार्थ—उस समय स्वयं प्रकाशमान तथा द्रष्टा रूप में प्रसिद्ध इस परमात्मा ने संसार को नहीं देखा और अपने को असत् के समान समझा था। उम समय उसकी माया शक्ति सोई हुई थी, किन्तु ज्ञान प्रकाशित था।

## पञ्चविंशः श्लोकः

सा वा एतस्य संद्रष्टुः शक्तिः सदसदात्मिका ।
माया नाम महाभाग ययेदं निर्ममे विभुः ॥२५॥

पदच्छेद—

सा वा एतस्य संद्रष्टुः, शक्तिः सद् असद् आत्मिका ।
माया नाम महाभाग, यया इदम् निर्ममे विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा वा | ४. | वही | माया | ८. | माया |
| एतस्य | ३. | इस (परमात्मा) की | नाम | ९. | नाम की |
| संद्रष्टुः, | २. | (सबको) देखने वाले | महाभाग. | १. | हे महाभाग विदुर जी ! |
| शक्तिः | १०. | शक्ति (है) | यया | ११. | जिसके द्वारा |
| सद् | ५. | भाव (और) | इदम् | १३. | इस (जगत्-प्रपञ्च) को |
| असद् | ६. | अभाव | निर्ममे | १४. | रचा है |
| आत्मिका । | ७. | स्वरूप वाली | विभुः ॥ | १२. | भगवान् श्री हरि ने |

श्लोकार्थ—हे महाभाग विदुर जी ! सबको देखने वाले इस परमात्मा की वही भाव और अभाव स्वरूप वाली माया नाम की शक्ति है, जिसके द्वारा भगवान् श्री हरि ने इस जगत्-प्रपञ्च को रचा है ।

## षड्विंशः श्लोकः

कालवृत्त्या तु मायायां गुणमय्यामधोक्षजः ।
पुरुषेणात्मभूतेन वीर्यमाधत्त वीर्यवान् ॥२६॥

पदच्छेद—

काल वृत्त्या तु मायायाम्, गुणमय्याम् अधोक्षजः ।
पुरुषेण आत्म भूतेन, वीर्यम् आधत्त वीर्यवान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| काल | ३. | काल | पुरुषेण | १०. | पुरुष रूप से |
| वृत्त्या | ४. | शक्ति के द्वारा | आत्म | ८. | अपने |
| तु | ५. | ही | भूतेन, | ९. | अंशभूत |
| मायायाम्, | ७. | माया में | वीर्यम् | ११. | बीज को |
| गुणमय्याम् | ६. | त्रिगुण स्वरूप वाली | आधत्त | १२. | स्थापित किया था |
| अधोक्षजः । | २. | भगवान् श्रीहरि ने | वीर्यवान् ॥ | १. | शक्तिशाली |

श्लोकार्थ—शक्तिशाली भगवान् श्री हरि ने काल शक्ति के द्वारा ही त्रिगुण स्वरूप वाली माया में अपने अंशभूत पुरुष रूप से बीज को स्थापित किया था ।

# सप्तविंशः श्लोकः

तनोऽभवन्महत्तत्त्वमव्यक्तात्कालचोदितात् ।
विज्ञानात्माऽऽत्मदेहस्थं विश्वं व्यञ्जंस्तमोनुदः ।।२७।।

पदच्छेद—

ततः अभवत् महत्तत्त्वम्, अव्यक्तात् काल चोदितात् ।
विज्ञान आत्मा आत्म देहस्थम्, विश्वम् व्यञ्जन् तमः नुदः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | तदनन्तर | आत्मा | ८. | स्वरूप वाला |
| अभवत् | ६. | प्रकट हुआ | आत्म | ९. | अपने |
| महत्तत्त्वम्, | ५. | महत्तत्त्व | देहस्थम्, | १०. | शरीर में सूक्ष्म रूप से स्थित |
| अव्यक्तात् | ४. | अव्यक्त माया से | विश्वम् | ११. | संसार को |
| काल | २. | काल शक्ति की | व्यञ्जन् | १२. | व्यक्त करने वाला (और) |
| चोदितात् । | ३. | प्रेरणा होने पर | तमः | १३. | अज्ञान का |
| विज्ञान | ७. | (वह) विशेष ज्ञान | नुदः ।। | १४. | नाशक था |

श्लोकार्थ—तदनन्तर काल शक्ति की प्रेरणा होने पर अव्यक्त माया से महत्तत्त्व प्रकट हुआ। वह विशेष ज्ञान स्वरूप वाला, अपने शरीर में सूक्ष्म रूप से स्थित संसार को व्यक्त करने वाला और अज्ञान का नाशक था।

# अष्टाविंशः श्लोकः

सोऽप्यंशगुणकालात्मा भगवद्दृष्टिगोचरः ।
आत्मानं व्यकरोदात्मा विश्वस्यास्य सिसृक्षया ।।२८।।

पदच्छेद--

सः अपि अंश गुण काल आत्मा, भगवत् दृष्टि गोचरः ।
आत्मानम् व्यकरोत् आत्मा, विश्वस्य अस्य सिसृक्षया ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. | वह (महत्तत्त्व) | गोचरः । | ९. | पड़ने पर |
| अपि | ६. | भी | आत्मानम् | १४. | अपने में |
| अंश | १. | चिदाभास | व्यकरोत् | १५. | विकार उत्पन्न किया |
| गुण | २. | तीनों गुण (और) | आत्मा, | १३. | स्वयम् |
| काल | ३. | काल शक्ति के | विश्वस्य | ११. | संसार की |
| आत्मा, | ४. | संयोग से उत्पन्न | अस्य | १०. | इस |
| भगवत् | ७. | भगवान् श्री हरि की | सिसृक्षया ।। | १२. | सृष्टि के लिये |
| दृष्टि | ८. | दृष्टि | | | |

श्लोकार्थ—चिदाभास, तीनों गुण और काल शक्ति के संयोग से उत्पन्न वह महत्तत्त्व भी भगवान् श्री हरि की दृष्टि पड़ने पर इस संसार की सृष्टि के लिये स्वयं अपने में विकार उत्पन्न किया।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

महत्तत्त्वाद्विकुर्वाणादहंतत्त्वं व्यजायत ।
कार्यकारणकर्त्रात्मा भूतेन्द्रियमनोमयः ॥२९॥

पदच्छेद—

महत् तत्त्वात् विकुर्वाणात्, अहंतत्त्वम् व्यजायत ।
कार्य कारण कर्तृ आत्मा, भूत इन्द्रिय मनोमयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महत् तत्त्वात् | २. | महत्तत्त्व से | कारण | ७. | कारण रूप |
| विकुर्वाणात्, | १. | विकार होने पर | कर्तृ | ६. | कर्ता |
| अहंतत्त्वम् | ३. | अहंकार | आत्मा, | १०. | स्वरूप |
| व्यजायत । | ४. | उत्पन्न हुआ (वह) | भूत | ६. | पञ्चमहाभूत का |
| कार्य | ५. | कार्य रूप | इन्द्रिय | ८. | दसों इन्द्रियों का (और) |
| | | | मनोमयः ॥ | ११. | मन का (उत्पादक है) |

श्लोकार्थ—विकार होने पर महत्तत्त्व से अहंकार उत्पन्न हुआ । वह कार्यरूप पञ्च महाभूत का, कारण रूप दसों इन्द्रियों का और कर्ता स्वरूप मन का उत्पादक है ।

# त्रिंशः श्लोकः

वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिधा ।
अहंतत्त्वाद्विकुर्वाणान्मनो वैकारिकादभूत् ।
वैकारिकाश्च ये देवा अर्थाभिव्यञ्जनं यतः ॥३०॥

पदच्छेद—

वैकारिकः तैजसः च, तामसः च इति अहम् त्रिधा ।
अहंतत्त्वात् विकुर्वाणात्, मनः वैकारिकात् अभूत् ।
वैकारिकाः च ये देवाः, अर्थ अभिव्यञ्जनम् यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैकारिकः, तैजसः | १. | सात्त्विक, राजस | वैकारिकात् | ८. | सात्त्विक (अहंकार से) |
| च, तामसः | २. | और, तामस | अभूत् | १३. | उत्पन्न हुये |
| च | ५. | उस | वैकारिकाः | ११. | सात्त्विक |
| इति, अहम् | ३. | भेद से, अहंकार | च, ये | १०. | एवम्, जो |
| त्रिधा । | ४. | तीन प्रकार का है | देवाः | १२. | देवता हैं (वे) |
| अहंतत्त्वात् | ६. | अहंकार में | अर्थ | १५. | पदार्थों का |
| विकुर्वाणात् | ७. | विकार होने पर | अभिव्यञ्जनम् | १६. | ज्ञान होता है |
| मनः | ६. | मन | यतः ॥ | १४. | जिनसे |

श्लोकार्थ—सात्त्विक, राजस और तामस भेद से अहंकार तीन प्रकार का है । उस अहंकार में विकार होने पर सात्त्विक अहंकार से मन एवम् जो सात्त्विक देवता हैं, वे उत्पन्न हुये; जिनसे पदार्थों का ज्ञान होता है ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

**तैजसानीन्द्रियाण्येव ज्ञानकर्ममयानि च ।**
**तामसो भूतसूक्ष्मादिर्यतः खं लिङ्गमात्मनः ।।३१।।**

पदच्छेद—

**तैजसानि इन्द्रियाणि एव, ज्ञान कर्ममयानि च ।**
**तामसः भूत सूक्ष्म आदिः, यतः खम् लिङ्गम् आत्मनः ।।**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **तैजसानि** | १. | तैजस अहंकार से | **भूत** | ८. | पञ्च महाभूतों का |
| **इन्द्रियाणि** | ५. | इन्द्रियाँ | **सूक्ष्म** | १०. | पञ्च तन्मात्राएँ (उत्पन्न हुई) |
| **एव,** | ६. | ही (उत्पन्न हुई) | **आदिः,** | ९. | कारण |
| **ज्ञान** | २. | ज्ञानेन्द्रिय | **यतः** | ११. | जिससे |
| **कर्ममयानि** | ४. | कर्मेन्द्रिय (ये) | **खम्** | १४. | आकाश (उत्पन्न हुआ) |
| **च ।** | ३. | और | **लिङ्गम्** | १३. | बोध कराने वाला |
| **तामसः** | ७. | तामस अहंकार से | **आत्मनः ।।** | १२. | परमात्मा का |

**श्लोकार्थ**—तैजस अहंकार से ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय, ये इन्द्रियाँ ही उत्पन्न हुई । तामस अहंकार से पञ्च महाभूतों का कारण पञ्च तन्मात्राएं उत्पन्न हुई; जिससे परमात्मा का बोध कराने वाला आकाश उत्पन्न हुआ ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

**कालमायांशयोगेन भगवद्वीक्षितं नभः ।**
**नभसोऽनुसृतं स्पर्शं विकुर्वन्निर्ममेऽनिलम् ।।३२।।**

पदच्छेद—

**काल माया अंश योगेन, भगवत् वीक्षितम् नभः ।**
**नभसः अनुसृतम् स्पर्शम्, विकुर्वन् निर्ममे अनिलम् ।।**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **काल** | १. | काल | **नभसः** | ७. | आकाश से |
| **माया** | २. | माया (और) | **अनुसृतम्** | ९. | उत्पन्न हुई (उसमें) |
| **अंश योगेन,** | ३. | पुरुष के संयोग से | **स्पर्शम्,** | ८. | स्पर्श तन्मात्रा |
| **भगवत्** | ५. | भगवान् की | **विकुर्वन्** | १०. | विकार होने पर (उसने) |
| **वीक्षितम्** | ६. | दृष्टि पड़ी (तब) | **निर्ममे** | १२. | उत्पन्न किया |
| **नभः ।** | ४. | आकाश पर (जब) | **अनिलम् ।।** | ११. | वायु को। |

**श्लोकार्थ**—काल, माया और पुरुष के संयोग से आकाश पर जब भगवान् की दृष्टि पड़ी तब आकाश से स्पर्श तन्मात्रा उत्पन्न हुई । उसमें विकार होने पर उसने वायु को उत्पन्न किया ।

# त्रयस्त्रिंश: श्लोक:

अनिलोऽपि विकुर्वाणो नभसोरुबलान्वितः ।
ससर्ज रूपतन्मात्रं ज्योतिर्लोकस्य लोचनम् ।।३३।।

पदच्छेद—

अनिलः अपि विकुर्वाणः, नभसा उरु बल अन्वितः ।
ससर्ज रूप तन्मात्रम्, ज्योतिः लोकस्य लोचनम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अनिलः | ४. | वायु ने | ससर्ज | ८. | उत्पन्न किया (जिससे) |
| अपि | ५. | भी | रूपतन्मात्रम्, | ७. | रूप तन्मात्रा को |
| विकुर्वाणः, | ६. | विकार होने पर | ज्योतिः | ११. | तेज (उत्पन्न हुआ) |
| नभसा | १. | आकाश के साथ | लोकस्य | ९. | संसार का |
| उरु, बल | २. | महान्, शक्ति | लोचनम् ।। | १०. | प्रकाशक |
| अन्वितः । | ३. | सम्पन्न | | | |

श्लोकार्थ—आकाश के साथ महान् शक्ति सम्पन्न वायु ने भी विकार होने पर रूप-तन्मात्रा को उत्पन्न किया, जिससे संसार का प्रकाशक तेज उत्पन्न हुआ ।

# चतुस्त्रिंश: श्लोक:

अनिलेनान्वितं ज्योतिर्विकुर्वत्परवीक्षितम् ।
आधत्ताम्भो रसमयं, कालमायांशयोगतः ।।३४।।

पदच्छेद—

अनिलेन अन्वितम ज्योतिः, विकुर्वत् पर वीक्षितम् ।
आधत्त अम्भः रसमयम्, काल माया अंश योगतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अनिलेन | ६. | वायु से | अम्भः | ११. | जल को |
| अन्वितम् | ७. | युक्त | रसमयम्, | १०. | रस तन्मात्रा वाले |
| ज्योतिः, | ८. | तेज ने | काल | १. | काल |
| विकुर्वत् | ९. | विकार होते ही | माया | २. | माया (और) |
| पर, वीक्षितम् । | ५. | भगवान् की, दृष्टि पड़ने पर | अंश | ३. | पुरुष के |
| आधत्त | १२. | उत्पन्न किया था | योगतः ।। | ४. | प्रभाव के कारण |

श्लोकार्थ—काल, माया और पुरुष के प्रभाव के कारण भगवान् की दृष्टि पड़ने पर वायु से युक्त तेज ने विकार होते ही रस-तन्मात्रा वाले जल को उत्पन्न किया था ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ज्योतिषाम्भोऽनुसंसृष्टं विकुर्वद्ब्रह्मवीक्षितम् ।
महीं गन्धगुणामाधात्कालमायांशयोगतः ।।३५।।

पदच्छेद—

ज्योतिषा अम्भः अनुसंसृष्टम्, विकुर्वत् ब्रह्म वीक्षितम् ।
महीम् गन्ध गुणाम् आधात्, काल माया अंश योगतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्योतिषा | ६. | तेज से | महीम् | १२. | पृथ्वी को |
| अम्भः | ८. | जल ने | गन्ध | १०. | गन्ध |
| अनुसंसृष्टम्, | ७. | मिले हुये | गुणाम् | ११. | गुण वाली |
| विकुर्वत् | ९. | विकार होने पर | आधात्, | १३. | उत्पन्न किया था |
| ब्रह्म | ४. | भगवान् की | काल | १. | काल |
| वीक्षितम् । | ५. | दृष्टि पड़ने पर | माया | २. | माया (और) |
| | | | अंशयोगतः ।। | ३. | पुरुष के प्रभाव से |

श्लोकार्थ—काल, माया और पुरुष के प्रभाव से भगवान् की दृष्टि पड़ने पर तेज में मिले हुये जल ने विकार होने पर गन्ध गुण वाली पृथ्वी को उत्पन्न किया था ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

भूतानां नभआदीनां यद्यद्भव्यावरावरम् ।
तेषां परानुसंसर्गाद्यथासंख्यं गुणान् विदुः ।।३६।।

पदच्छेद—

भूतानाम् नभः आदीनाम्, यद्-यद् भव्य अवर-अवरम् ।
तेषाम् पर अनुसंसर्गात्, यथासंख्यम् गुणान् विदुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूतानाम् | ३. | पञ्च महाभूतों में | तेषाम् | ७. | उनमें |
| नभः | १. | आकाश | पर | ८. | (अपने) कारण का |
| आदीनाम्, | २. | इत्यादि | अनुसंसर्गात्, | ९. | सम्बन्ध होने से |
| यद्-यद् | ५. | जो-जो तत्त्व | यथासंख्यम् | १०. | क्रम से (उन्हें) |
| भव्य | ६. | उत्पन्न हुये हैं | गुणान् | ११. | (कारण के) गुणों से भी युक्त |
| अवर-अवरम् । | ४. | एक के बाद एक | विदुः ।। | १२. | समझना चाहिये |

श्लोकार्थ—आकाश इत्यादि पञ्च महाभूतों में एक के बाद एक जो-जो तत्त्व उत्पन्न हुये हैं, उनमें अपने कारण का सम्बन्ध होने से क्रम से उन्हें कारण के गुणों से भी युक्त समझना चाहिये ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

एते देवाः कला विष्णोः कालमायांशलिङ्गिनः ।
नानात्वात्स्वक्रियानीशाः प्रोचुः प्राञ्जलयो विभुम् ॥३७॥

पदच्छेद—

एते देवाः कलाः विष्णोः, काल माया अंश लिङ्गिनः ।
नानात्वात् स्वक्रिया अनीशाः, प्रोचुः प्राञ्जलयः विभुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एते | ५. | ये (अभिमानी) | लिङ्गिनः । | ४. | बोध कराने वाले |
| देवाः | ६. | देवगण | नानात्वात् | ९. | अनेक होने से |
| कलाः | ८. | कला (हैं ये) | स्वक्रिया | १०. | अपनी क्रिया में |
| विष्णोः, | ७. | भगवान् विष्णु की | अनीशाः, | ११. | असमर्थ होने के कारण |
| काल | १. | काल | प्रोचुः | १४. | बोले |
| माया | २. | माया (और) | प्राञ्जलयः | १२. | हाथ जोड़ कर |
| अंश | ३. | पुरुष का | विभुम् ॥ | १३. | भगवान् से |

श्लोकार्थ—काल, माया और पुरुष का बोध कराने वाले ये अभिमानी देवगण भगवान् विष्णु की कला हैं। ये अनेक होने से अपनी क्रिया में असमर्थ होने के कारण हाथ जोड़ कर भगवान् से बोले।

# अष्टात्रिंशः श्लोकः

देवा ऊचुः—

नमाम ते देव पदारविन्दं, प्रपन्नतापोपशमातपत्रम् ।
यन्मूलकेता यतयोऽञ्जसोरु, संसारदुःखं बहिरुत्क्षिपन्ति ॥३८॥

पदच्छेद—

नमाम ते देव पद अरविन्दम्, प्रपन्न ताप उपशम आतपत्रम् ।
यद् मूल केताः यतयः अञ्जसा उरु, संसार दुःखम् बहिः उत्क्षिपन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमाम | ७. | नमस्कार करते हैं | मूल, केताः | ९. | तलवे का, आश्रय लेकर |
| ते | ५. | आपके | यतयः | १०. | मुनिजन |
| देव | १. | हे भगवान् ! | अञ्जसा | १४. | अनायास |
| पद, अरविन्दम् | ६. | चरण, कमलों में (हम) | उरु, | १२. | महान् |
| प्रपन्न, ताप | २. | शरणागत जनों के कष्ट को | संसार | ११. | जगत् के |
| उपशम | ३. | शान्त करने में | दुःखम् | १३. | कष्ट को |
| आतपत्रम् । | ४. | छत्र के समान | बहिः | १५. | बाहर |
| यद् | ८. | जिस आपके | उत्क्षिपन्ति ॥ | १६. | फेंक देते हैं |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! शरणागत जनों के कष्ट को शान्त करने में छत्र के समान आपके चरण कमलों में हम नमस्कार करते हैं। जिस आपके तलवे का आश्रय लेकर मुनिजन जगत् के महान् कष्ट को अनायास बाहर फेंक देते हैं।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

धातर्यदस्मिन् भव ईश जीवास्—तापत्रयेणोपहता न शर्म ।
आत्मँल्लभन्ते भगवंस्तवाङ्घ्रि—च्छायां सविद्यामत आश्रयेम ।।३९।।

पदच्छेद— धातः यद् अस्मिन् भवे ईश जीवाः, ताप त्रयेण उपहताः न शर्म ।
आत्मन् लभन्ते भगवन् तव अङ्घ्रि, छायाम् सविद्याम् अतः आश्रयेम ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धातः | १. | हे जगत्कर्ता | आत्मन् | ११. | हे परमात्मन् ! |
| यद्, अस्मिन् | ३. | क्योंकि, इस | लभन्ते | ९. | पा सकते हैं |
| भवे | ४. | संसार में | भगवन्, तव | १२. | हे भगवन् ! आपके |
| ईश | २. | जगदीश्वर ! | अङ्घ्रि, | १३. | चरणों की |
| जीवाः, | ७. | प्राणी | छायाम् | १५. | छाया की (हम) |
| ताप, त्रयेण | ५. | तीनों, तापों से | सविद्याम् | १४. | विद्यामयी |
| उपहताः | ६. | पीड़ित | अतः | १०. | इसलिये |
| न, शर्म । | ८. | कल्याण को, नहीं | आश्रयेम ।। | १६. | शरण लेते हैं |

श्लोकार्थ—हे जगत्कर्ता जगदीश्वर ! क्योंकि इस संसार में तीनों तापों से पीड़ित प्राणी कल्याण को नहीं पा सकते हैं, इसलिये हे परमात्मन् ! हे भगवन् ! आपके चरणों की विद्यामयी छाया की हम शरण लेते हैं ।

# चत्वारिंशः श्लोकः

मार्गन्ति यत्ते मुखपद्मनीडैश्—छन्दःसुपर्णैर्ऋषयो विविक्ते ।
यस्याघमर्षोदसरिद्वरायाः, पदं पदं तीर्थपदः प्रपन्नाः ।।४०।।

पदच्छेद— मार्गन्ति यत् ते मुख पद्म नीडैः, छन्दः सुपर्णैः ऋषयः विविक्ते ।
यस्य अघ मर्ष उद सरित् वरायाः, पदम् पदम् तीर्थपदः प्रपन्नाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मार्गन्ति | ७. | अनुसन्धान करते हैं (तथा जो) | अघ, मर्ष | ९. | पाप, विनाशन |
| यत् | ६. | जिन (चरणों) का | उद | १०. | जल वाली |
| ते, मुख | ३. | आपके, मुख | सरित् | १२. | नदी गंगाजी का |
| पद्म, नीडैः, | ४. | कमल को, आश्रय बना कर | वरायाः, | ११. | श्रेष्ठ |
| छन्दः, सुपर्णैः | ५. | वेदमन्त्र रूपी, पक्षियों के द्वारा | पदम् | १३. | उद्‌गम स्थान (हैं) |
| ऋषयः | २. | मुनिजन | पदम् | ८. | चरण |
| विविक्ते । | १. | एकान्त स्थान में रह कर | तीर्थपदः | १४. | (उन) पवित्र चरणों वाले |
| यस्य | १५. | आपके | प्रपन्नाः ।। | १६. | (हम) शरणागत हैं |

श्लोकार्थ—एकान्त स्थान में रह कर मुनिजन आपके मुख कमल को आश्रय बना कर वेद मंत्र रूपी पक्षियों के द्वारा जिन चरणों का अनुसन्धान करते हैं तथा जो चरण पाप विनाशन जल वाली श्रेष्ठ नदी गंगा जी का उद्‌गम स्थान हैं, उन पवित्र चरणों वाले आपके हम शरणागत हैं ।

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

यच्छ्रद्धया श्रुतवत्या च भक्त्या, संमृज्यमाने हृदयेऽवधाय ।
ज्ञानेन वैराग्यबलेन धीरा, व्रजेम तत्तेऽङ्घ्रिसरोजपीठम् ॥४१॥

पदच्छेद—
यत् श्रद्धया श्रुतवत्या च भक्त्या, संमृज्यमाने हृदये अवधाय ।
ज्ञानेन वैराग्य बलेन धीराः, व्रजेम तत् ते अङ्घ्रि सरोज पीठम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्, श्रद्धया | ६. | जिसे; श्रद्धा | वैराग्य | १३ | वैराग्य से |
| श्रुतवत्या | ८. | श्रवण आदि | बलेन | १४. | पुष्ट हुये |
| च | ७. | और | धीराः, | १६. | योगी (हो जाते हैं) |
| भक्त्या, | ९. | भक्ति के द्वारा | व्रजेम | ५. | शरण लेते हैं |
| संमृज्यमाने | १०. | निर्मल किये हुये | तत् | २. | उस |
| हृदये | ११. | अन्तःकरण में | ते | १. | (हम लोग) आपके |
| अवधाय । | १२. | धारण करके (लोग) | अङ्घ्रि, सरोज | ३. | चरण, कमल की |
| ज्ञानेन | १५. | ज्ञान के द्वारा | पीठम् ॥ | ४. | चौकी को |

श्लोकार्थ—हम लोग आपके उस चरण कमल की चौकी की शरण लेते हैं, जिसे श्रद्धा और श्रवण आदि भक्ति के द्वारा निर्मल किये हुये अन्तःकरण में धारण करके लोग वैराग्य से पुष्ट हुये ज्ञान के द्वारा योगी हो जाते हैं ।

## द्विचत्वारिंशः श्लोकः

विश्वस्य जन्मस्थितिसंयमार्थे, कृतावतारस्य पदाम्बुजं ते ।
व्रजेम सर्वे शरणं यदीश, स्मृतं प्रयच्छत्यभयं स्वपुंसाम् ॥४२॥

पदच्छेद—
विश्वस्य जन्म स्थिति संयम अर्थे, कृत अवतारस्य पद अम्बुजम् ते ।
व्रजेम सर्वे शरणम् यद् ईश, स्मृतम् प्रयच्छति अभयम् स्व पुंसाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विश्वस्य | २. | संसार की | सर्वे | ९. | हम सब |
| जन्म, स्थिति | ३. | उत्पत्ति, पालन और | शरणम् | १०. | आश्रय |
| संयम, अर्थे, | ४. | संहार के, लिये | यद् | १२. | जो चरण-कमल |
| कृत | ६. | लेने वाले | ईश, | १. | हे जगदीश ! |
| अवतारस्य | ५. | अवतार | स्मृतम् | १३. | स्मरण करते ही |
| पद, अम्बुजम् | ८. | चरण, कमल का | प्रयच्छति | १६. | प्रदान करते हैं |
| ते । | ७. | आपके | अभयम् | १५. | अभय पद |
| व्रजेम | ११. | लेते हैं | स्व, पुंसाम् ॥ | १४. | अपने, भक्तों को |

श्लोकार्थ—हे जगदीश ! संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये अवतार लेने वाले आपके चरण-कमल का हम सब आश्रय लेते हैं; जो चरण-कमल स्मरण करते ही अपने भक्तों को अभय पद प्रदान करते हैं ।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

यत्सानुबन्धेऽसति देहगेहे, ममाहमित्यूढदुराग्रहाणाम् ।
पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां, भजेम तत्ते भगवन् पदाब्जम् ॥४३॥

पदच्छेद— यत् सानुबन्धे असति देह गेहे, मम अहम् इति ऊढ दुराग्रहाणाम् ।
पुंसाम् सुदूरम् वसतः अपि पुर्याम्, भजेम तत् ते भगवन् पद अब्जम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | ११. | जो | सुदूरम् | १२. | अत्यन्त दूर हैं |
| सानुबन्धे,असति | ३. | सम्बन्धी, तुच्छ वस्तुओं में | वसतः, अपि | १०. | रहने पर, भी |
| देह, गेहे, | २. | शरीर, घर (और उनसे) | पुर्याम्, | ६. | शरीर में (सदा) |
| मम | ४. | ममता (तथा) | भजेम | १६. | भजन करते हैं |
| अहम्, इति | ५. | अहंकार के, कारण | तत् | १४. | उन्हीं |
| ऊढ | ७. | करने वाले | ते | १३. | (हम) आपके |
| दुराग्रहाणाम् । | ६. | हठ | भगवन् | १. | हे भगवन् ! |
| पुंसाम् | ८. | लोगों के | पद, अब्जम् ॥ | १५. | चरण, कमलों का |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! शरीर, घर और उनसे सम्बन्ध रखने वाली तुच्छ वस्तुओं में ममता तथा अहंकार के कारण हठ करने वाले लोगों के शरीर में सदा रहने पर भी जो अत्यन्त दूर हैं, हम आपके उन्हीं चरण-कमलों का भजन करते हैं।

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

तान् वै ह्यसद्वृत्तिभिरक्षिभिर्ये, पराहृतान्तर्मनसः परेश ।
अथो न पश्यन्त्युरुगाय नूनं, ये ते पदन्यासविलासलक्ष्म्याः ॥४४॥

पदच्छेद— तान् वै हि असद् वृत्तिभिः अक्षिभिः ये, पराहृत अन्तर्मनसः परेश ।
अथो न पश्यन्ति उरुगाय नूनम्, ये ते पद न्यास विलास लक्ष्म्याः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तान् | १०. | उन्हें | अथो | ८. | उन चरणों को |
| वै हि | ६. | ही | न, पश्यन्ति | १३. | नहीं, देखते हैं |
| असद्, वृत्तिभिः | ४. | विषयों में, आसक्त | उरुगाय | १. | विशाल कीर्ति वाले |
| अक्षिभिः | ५. | इन्द्रियों के कारण | नूनम्, | १२. | निश्चय ही |
| ये, | ३. | जो लोग | ये | १४. | जो भक्तजन |
| पराहृत | ६. | दूर कर दिये हैं | ते | ११. | वे (भक्तजन) |
| अन्तर्मनसः | ७. | अपने अन्तःकरण से | पद, न्यास | १६. | चरणों को, रखने की |
| परेश । | २. | हे परमेश्वर ! | विलास | १५. | हाव-भाव से |
| | | | लक्ष्म्याः ॥ | १७. | शोभा को (जानते हैं) |

श्लोकार्थ—विशाल कीर्ति वाले हे परमेश्वर ! जो लोग विषयों में आसक्त इन्द्रियों के कारण ही अपने अन्तःकरण से उन चरणों को दूर कर दिये हैं, उन्हें वे भक्तजन निश्चय ही नहीं देखते हैं, जो भक्तजन हाव-भाव से चरणों को रखने की शोभा को जानते हैं।

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

**पानेन ते देव कथासुधायाः, प्रवृद्धभक्त्या विशदाशया ये ।**
**वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं, यथाञ्जसान्वीयुरकुण्ठधिष्ण्यम् ।।४५।।**

**पदच्छेद—** पानेन ते देव कथा सुधायाः, प्रवृद्ध भक्त्या विशद आशयाः ये ।
वैराग्य सारं प्रतिलभ्य बोधम्, यथा अञ्जसा अन्वीयुः अकुण्ठ धिष्ण्यम् ।।

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पानेन | ४. | पान करने से | वैराग्य, सारम् | ६. | वैराग्य, उत्पादक |
| ते | २. | आपके | प्रतिलभ्य | ११. | प्राप्त करके |
| देव | १. | हे प्रभो ! | बोधम्, | १०. | ज्ञान को |
| कथा, सुधायाः, | ३. | लीलारूप, अमृत का | यथा | १२. | जिस प्रकार |
| प्रवृद्ध, भक्त्या | ५. | बढ़ी हुई, भक्ति के कारण | अञ्जसा | १३. | अनायास (ही) |
| विशद | ८. | निर्मल हो गया है (वे भक्तजन) | अन्वीयुः | १६. | प्राप्त कर लेते हैं |
| आशयाः | ७. | अन्तःकरण | अकुण्ठ | १४. | वैकुण्ठ |
| ये । | ६. | जिनका | धिष्ण्यम् ।। | १५. | लोक को |

**श्लोकार्थ—**हे प्रभो ! आपके लीलारूप अमृत का पान करने से बढ़ी हुई भक्ति के कारण जिनका अन्तःकरण निर्मल हो गया है, वे भक्तजन वैराग्य उत्पादक ज्ञान को प्राप्त करके जिस प्रकार अनायास ही वैकुण्ठ लोक को प्राप्त कर लेते हैं ।

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

**तथापरे चात्मसमाधियोग—बलेन जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम् ।**
**त्वामेव धीराः पुरुषं विशन्ति, तेषां श्रमः स्यान्न तु सेवया ते ।।४६।।**

**पदच्छेद—** तथा अपरे च आत्म समाधि योग, बलेन जित्वा प्रकृतिम् बलिष्ठाम् ।
त्वाम् एव धीराः पुरुषम् विशन्ति, तेषाम् श्रमः स्यात् न तु सेवया ते ।।

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तथा, अपरे | १. | उस प्रकार से, दूसरे | धीराः | २. | योगीजन (भी) |
| च | १२. | अन्तर यह है कि | पुरुषम् | ६. | आदि पुरुष में |
| आत्म, समाधि | ३. | चित्त, निरोध रूप समाधि | विशन्ति, | ११. | लीन होते हैं |
| योग, बलेन | ४. | योग के प्रभाव से | तेषाम्, श्रमः, | १३. | उन्हें, परिश्रम |
| जित्वा | ७. | जीत कर | स्यात् | १४. | होता है |
| प्रकृतिम् | ६. | माया को | न | १८. | श्रम नहीं होता |
| बलिष्ठाम् । | ५. | अत्यन्त बलवती | तु | १५. | किन्तु |
| त्वाम् | ८. | आप | सेवया. | १७. | सेवा भक्ति से |
| एव | १०. | ही | ते ।। | १६. | आपकी, |

**श्लोकार्थ—**उस प्रकार से दूसरे योगीजन भी चित्त-निरोध रूप समाधि-योग के प्रभाव से अत्यन्त बलवती माया को जीतकर आप आदि पुरुष में ही लीन होते हैं । अन्तर यह है कि उन्हें परिश्रम होता है, किन्तु आपकी सेवा भक्ति से श्रम नहीं होता ।

# सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तत्ते वयं लोकसिसृक्षयाऽऽद्य, त्वयानुसृष्टास्त्रिभिरात्मभिः स्म ।
सर्वे वियुक्ताः स्वविहारतन्त्रं, न शक्नुमस्तत्प्रतिहर्तवे ते ।।४७।।

पदच्छेद— तत् ते वयम् लोक सिसृक्षया आद्य, त्वया अनुसृष्टाः त्रिभिः आत्मभिः स्म ।
सर्वे वियुक्ताः स्व विहार तन्त्रम्, न शक्नुमः तत् प्रतिहर्तवे ते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | ११. | इसलिये (हम) | सर्वे | ८. | हम सभी |
| ते | २. | अपनी | वियुक्ताः | १०. | अलग-अलग (हैं) |
| वयम् | ४. | हम लोगों को | स्व, विहार | १२. | आपकी, लीला के |
| लोक, सिसृक्षया | ३. | विश्व, रचना की इच्छा से | तन्त्रम् | १३. | अधीन |
| आद्य, त्वया | १. | हे आदि पुरुष ! आपने | न | १७. | नहीं |
| अनुसृष्टाः | ६. | बनाया | शक्नुमः | १८. | समर्थ हो रहे हैं |
| त्रिभिः | ५. | तीन गुणों से | तत् | १४. | उस विश्व को |
| आत्मभिः | ९. | अपने स्वभाव से | प्रतिहर्तवे | १६. | समर्पित करने में |
| स्म । | ७. | है | ते ।। | १५. | आपको |

श्लोकार्थ—हे आदि पुरुष ! आपने अपनी विश्व रचना की इच्छा से हम लोगों को तीन गुणों से बनाया है । हम सभी अपने स्वभाव से अलग-अलग हैं । इसलिये हम आपकी लीला के अधीन उस विश्व को आपको समर्पित करने में समर्थ नहीं हो रहे हैं ।

# अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

यावद्बलिं तेऽज हराम काले, यथा वयं चान्नमदाम यत्र ।
यथोभयेषां त इमे हि लोका, बलिं हरन्तोऽन्नमदन्त्यनूहाः ।।४८।।

पदच्छेद— यावद् बलिम् ते अज हराम काले, यथा वयम् च अन्नम् अदाम यत्र ।
यथा उभयेषाम् ते इमे हि लोकाः, बलिम् हरन्तः अन्नम् अदन्ति अनूहाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावद् | ७. | जिससे (स्वयं) | यथा | ९. | तथा |
| बलिम्, ते | ४. | आपकी, भोग पूजा | उभयेषाम् | १४. | हम दोनों को |
| अज | १. | हे अजन्मा! (ऐसा स्थान बतावें) | ते, इमे | १०. | ये, सब |
| हराम, काले, | ५. | समय से, कर सकें | हि | १२. | भी |
| यथा | ६. | और | लोकाः, | ११. | प्राणी |
| वयम् | ३. | हम लोग | बलिम्, हरन्तः | १५. | भोग, समर्पित करते हुये |
| च, अन्नम्, अदाम | ८. | भी, भोग, प्राप्त कर सकें | अन्नम्, अदन्ति | १६. | अन्न का, भक्षण कर सकें |
| यत्र । | २. | जहाँ रह कर | अनूहाः ।। | १३. | निर्विघ्नता से |

श्लोकार्थ—हे अजन्मा ! ऐसा स्थान बतावें, जहाँ रह कर हम लोग आपकी भोग पूजा समय से कर सकें और जिससे अपना भी भोग प्राप्त कर सकें तथा ये सब प्राणी भी निर्विघ्नता से हम दोनों को भोग समर्पित करते हुये अपने अन्न का भक्षण कर सकें ।

# एकोनपञ्चाशः श्लोकः

त्वं नः सुराणामसि सान्वयानां, कूटस्थ आद्यः पुरुषः पुराणः ।
त्वं देव शक्त्यां गुणकर्मयोनौ, रेतस्त्वजायां कविमादधेऽजः ॥४९॥

पदच्छेद— त्वम् नः सुराणाम् असि सान्वयानाम्, कूटस्थः आद्यः पुरुषः पुराणः ।
त्वम् देव शक्त्याम् गुण कर्मयोनौ, रेतः तु अजायाम् कविम् आदधे अजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम् | ३. | आप | शक्त्याम् | १५. | अपनी शक्ति |
| नः, सुराणाम् | ५. | हम, देवताओं के भी | गुण, | १२. | सत्त्वादि गुण और |
| असि | ७. | हैं | कर्म, | १३. | जन्मादि कर्मों की |
| सान्वयानाम्, | ४. | कार्य समूह के साथ-साथ | योनौ, | १४. | कारण भूता |
| कूटस्थः | १. | निर्विकार | रेतः | १७ | बीज को |
| आद्यः | ६. | आदि कारण | तु | ११ | ही |
| पुरुषः, पुराणः । | २. | सनातन, पुरुष | अजायाम्, कविम् | १६. | माया में, चेतन रूप |
| त्वम् | १०. | आपने | आदधे | १८. | स्थापित किया था |
| देव | ८. | हे भगवन् ! | अजः ॥ | ९ | अजन्मा |

श्लोकार्थ—निर्विकार सनातन पुरुष आप कार्य समूह के साथ-साथ हम देवताओं के भी आदि कारण हैं । हे भगवन् ! अजन्मा आपने ही सत्त्वादि गुण और जन्मादि कर्मों की कारणभूता अपनी शक्ति माया में चेतन रूप बीज स्थापित किया था ।

# पञ्चाशः श्लोकः

ततो वयं सत्प्रमुखा यदर्थे, बभूविमात्मन् करवाम किं ते ।
त्वं नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या, देव क्रियार्थे यदनुग्रहाणाम् ॥५०॥

पदच्छेद— ततः वयम् सत् प्रमुखाः यदर्थे, बभूविम आत्मन् करवाम किम् ते ।
त्वम् नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या, देव क्रियार्थे यद् अनुग्रहाणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | ५. | उस विषय में (हम) | त्वम् | १४. | आप |
| वयम् | ३. | हम देवगण | नः | १३. | हमें |
| सत्, प्रमुखाः | २ | महत्तत्त्व, इत्यादि के अभिमानी | स्वचक्षुः, परदेहि | १६. | अपना ज्ञान, प्रदान करें |
| यदर्थे, बभूविम | ४. | जिसके लिये, उत्पन्न हुये हैं | शक्त्या, | १५. | शक्ति के साथ-साथ |
| आत्मन् | १. | हे परमात्मन् ! | देव | ९. | हे भगवन् ! (हम) |
| करवाम | ८. | करें | क्रियार्थे | १२. | सृष्टि करने के लिये |
| किम् | ७ | क्या | यद् | १०. | आपके |
| ते । | ६. | आपका | अनुग्रहाणाम् ॥ | ११. | कृपा-पात्र (हैं) |

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! महत्तत्त्व इत्यादि के अभिमानी हम देवगण जिस काम के लिये उत्पन्न हुये हैं, उस विषय में हम आपका क्या करें ? हे भगवन् ! हम आपके कृपा पात्र हैं । सृष्टि करने के लिये हमें आप शक्ति के साथ-साथ अपना ज्ञान भी प्रदान करें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे पञ्चमः अध्यायः ॥५॥

अथ षष्ठः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

ऋषिरुवाच—

इति तासां स्वशक्तीनां सतीनामसमेत्य सः ।
प्रसुप्तलोकतन्त्राणां निशाम्य गतिमीश्वरः ॥१॥

पदच्छेद—

इति तासाम् स्व शक्तीनाम्, सतीनाम् असमेत्य सः ।
प्रसुप्त लोक तन्त्राणाम्, निशाम्य गतिम् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ३. | इस प्रकार | प्रसुप्त | ८. | असमर्थ |
| तासाम् | ९. | उन | लोक | ६. | विश्व की |
| स्वशक्तीनाम्, | १० | अपनी शक्तियों की | तन्त्राणाम्, | ७. | रचना करने में |
| सतीनाम् | ५. | रहती हुई (अतएव) | निशाम्य | १२. | देखी |
| असमेत्य | ४. | अलग-अलग रूप में | गतिम् | ११. | (असहाय) दशा |
| सः । | १. | उस | ईश्वरः ॥ | २. | सर्वशक्तिमान् ने |

श्लोकार्थ—उस सर्वशक्तिमान् ने इस प्रकार अलग-अलग रूप में रहती हुई अतएव विश्व की रचना करने में असमर्थ उन अपनी शक्तियों की असहाय दशा देखी ।

## द्वितीयः श्लोकः

कालसंज्ञां तदा देवीं बिभ्रच्छक्तिमुरुक्रमः ।
त्रयोविंशतितत्त्वानां गणं युगपदाविशत् ॥२॥

पदच्छेद—

काल संज्ञाम् तदा देवीम्, बिभ्रत् शक्तिम् उरुक्रमः ।
त्रयोविंशति तत्त्वानाम्, गणम् युगपत् आविशत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| काल | ३. | काल | उरुक्रमः । | २. | भगवान् त्रिविक्रम ने |
| संज्ञाम् | ४. | नाम की | त्रयोविंशति | ८. | तेईस |
| तदा | १ | उस समय | तत्त्वानाम्, | ९. | तत्त्वों के |
| देवीम्, | ५. | प्रकाशमान | गणम् | १०. | समुदाय में |
| बिभ्रत् | ७. | धारण करके | युगपत् | ११. | एक साथ |
| शक्तिम् | ६. | शक्ति को | आविशत् ॥ | १२. | प्रवेश किया था |

श्लोकार्थ—उस समय भगवान् त्रिविक्रम ने काल नाम की प्रकाशमान शक्ति धारण करके तेईस तत्त्वों के समुदाय में एक साथ प्रवेश किया था ।

## तृतीयः श्लोकः

सोऽनुप्रविष्टो भगवांश्चेष्टारूपेण तं गणम् ।
भिन्नं संयोजयामास सुप्तं कर्म प्रबोधयन् ॥३॥

पदच्छेद—

सः अनुप्रविष्टः भगवान्, चेष्टा रूपेण तम् गणम् ।
भिन्नम् संयोजयामास, सुप्तम् कर्म प्रबोधयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | उन | गणम् । | ५. | तत्त्व समुदाय,में |
| अनुप्रविष्टः | ८. | प्रवेश किया (तथा) | भिन्नम् | ३. | अलग हुये |
| भगवान्, | २. | भगवान् श्री हरि ने | संयोजयामास, | १२. | (आपस में) मिला दिया |
| चेष्टा | ६. | क्रिया | सुप्तम् | ६. | सोये हुये (जीवों के) |
| रूपेण | ७. | रूप से | कर्म | १०. | अदृष्ट को |
| तम् | ४. | उस | प्रबोधयन् ॥ | ११. | जागृत करके (उन्हें) |

श्लोकार्थ—उन भगवान् श्री हरि ने अलग हुये उस तत्त्व समुदाय में क्रिया रूप से प्रवेश किया तथा सोये हुये जीवों के अदृष्ट को जागृत करके उन्हें आपस में मिला दिया ।

## चतुर्थः श्लोकः

प्रबुद्धकर्मा दैवेन त्रयोविंशतिको गणः ।
प्रेरितोऽजनयत्स्वाभिर्मात्राभिरधिपूरुषम् ॥४॥

पदच्छेद—

प्रबुद्ध कर्मा दैवेन, त्रयोविंशतिकः गणः ।
प्रेरितः अजनयत् स्वाभिः, मात्राभिः अधिपूरुषम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रबुद्ध | ३. | जागृत कर दिये जाने पर | प्रेरितः | ४. | प्रेरणा पाकर |
| कर्मा | २. | अदृष्ट के | अजनयत् | १०. | उत्पन्न किया |
| दैवेन, | १. | भगवान् के द्वारा | स्वाभिः, | ७. | अपने |
| त्रयोविंशतिकः | ५. | तेईस तत्त्वों के | मात्राभिः | ८. | अंशों सहित |
| गणः । | ६. | समुदाय ने | अधिपूरुषम् ॥ | ६. | विराट् पुरुष को |

श्लोकार्थ—भगवान् के द्वारा अदृष्ट के जागृत कर दिये जाने पर प्रेरणा पाकर तेईस तत्त्वों के समुदाय ने अपने अंशों सहित विराट् पुरुष को उत्पन्न किया ।

## पञ्चमः श्लोकः

परेण विशता स्वस्मिन्मात्रया विश्वसृग्गणः ।
चुक्षोभान्योऽन्यमासाद्य यस्मिंल्लोकाश्चराचराः ॥५॥

पदच्छेद—

परेण विशता स्वस्मिन्, मात्रया विश्वसृक् गणः ।
चुक्षोभ अन्योन्यम् आसाद्य, यस्मिन् लोकाः चर अचराः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परेण | १. | परात्पर भगवान् ने | चुक्षोभ | ९. | परिवर्तन किया |
| विशता | ४. | प्रवेश करके | अन्योन्यम् | ७. | एक दूसरे से |
| स्वस्मिन्, | ३. | अपने (महत्तत्वादि) में | आसाद्य, | ८. | मिला कर |
| मात्रया | २. | अंशों से | यस्मिन् | १० | जिन तत्त्वों में |
| विश्वसृक् | ५. | संसार की रचना करने वाले | लोकाः | १३ | संसार (विद्यमान है) |
| गणः । | ६. | तत्त्व समुदाय को | चर | १२. | चेतन रूप |
| | | | अचराः ॥ | ११. | जड़ और |

श्लोकार्थ—परात्पर भगवान् ने अंशों से अपने महत्तत्वादि में प्रवेश करके संसार की रचना करने वाले तत्त्व समुदाय को एक दूसरे से मिला कर परिवर्तन किया, जिन तत्त्वों में जड़ और चेतन रूप संसार सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहता है ।

## षष्ठः श्लोकः

हिरण्मयः स पुरुषः सहस्रपरिवत्सरान् ।
आण्डकोश उवासाप्सु सर्वसत्त्वोपबृंहितः ॥६॥

पदच्छेद—

हिरण्मयः सः पुरुषः, सहस्र परिवत्सरान् ।
आण्डकोशे उवास अप्सु, सर्व सत्त्व उपबृंहितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हिरण्मयः | १. | सुवर्णमय | आण्डकोशे | ८. | विराट् देह में रूप आश्रय में |
| सः | २. | उस | उवास | ११. | निवास किया |
| पुरुषः, | ३. | विराट् पुरुष ने | अप्सु, | ७. | जल में (स्थित) |
| सहस्र | ९. | एक हजार | सर्व | ४. | सभी |
| परिवत्सरान् । | १०. | दिव्य वर्षों तक | सत्त्व | ५. | जीवों को |
| | | | उपबृंहितः ॥ | ६. | साथ लेकर |

श्लोकार्थ—सुवर्णमय उस विराट् पुरुष ने सभी जीवों को साथ लेकर जल में स्थित विराट् देह रूप आश्रय में एक हजार दिव्य वर्षों तक निवास किया ।

## सप्तमः श्लोकः

स वै विश्वसृजां गर्भो देवकर्मात्मशक्तिमान् ।
विबभाजात्मनाऽऽत्मानमेकधा दशधा त्रिधा ॥७॥

पदच्छेद—

सः वै विश्व सृजाम् गर्भः, देव कर्म आत्म शक्तिमान् ।
विबभाज आत्मना आत्मानम्, एकधा दशधा त्रिधा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | वह विराट् पुरुष | शक्तिमान् । | ७ | शक्ति से सम्पन्न (था) |
| वै | १२. | और | विबभाज | १४. | विभक्त किया |
| विश्व | १. | संसार की | आत्मना | ८. | (उसने) अपने आप |
| सृजाम्, | २. | रचना करने वाले तत्त्वों से | आत्मानम्, | ९. | अपने को |
| गर्भः | ३. | उत्पन्न | एकधा | १० | एक रूप में |
| देव, कर्म | ५. | ज्ञान, क्रिया (और) | दशधा | ११. | दस रूपों में |
| आत्म | ६. | अपनी | त्रिधा ॥ | १३. | तीन रूपों में |

श्लोकार्थ—संसार की रचना करने वाले तत्त्वों से उत्पन्न वह विराट् पुरुष ज्ञान, क्रिया और अपनी शक्ति से सम्पन्न था। उसने अपने आप अपने को एक रूप में, दस रूपों में और तीन रूपों में विभक्त किया।

## अष्टमः श्लोकः

एषः ह्यशेषसत्त्वानामात्मांशः परमात्मनः ।
आद्योऽवतारो यत्रासौ भूतग्रामो विभाव्यते ॥८॥

पदच्छेद—

एषः हि अशेष सत्त्वानाम्, आत्मा अंशः परमात्मनः ।
आद्यः अवतारः यत्र असौ, भूत ग्रामः विभाव्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः हि | १. | यही (विराट् पुरुष) | आद्यः | ७. | (यह) पहला |
| अशेष | ४. | सम्पूर्ण | अवतारः | ८. | अवतार है |
| सत्त्वानाम्, | ५. | जीवों की | यत्र | ९. | जिसमें |
| आत्मा | ६. | आत्मा है | असौ, | ११. | वह (स्थूल) |
| अंशः | ३. | अंश (और) | भूत | १०. | पञ्च महाभूतों का |
| परमात्मनः । | २. | परमात्मा का | ग्रामः | १२. | समूह |
| | | | विभाव्यते ॥ | १३. | प्रकट होता है |

श्लोकार्थ—यही विराट् पुरुष परमात्मा का अंश और सम्पूर्ण जीवों की आत्मा है। श्री हरि का यह पहला अवतार है, जिसमें पञ्च महाभूतों का वह स्थूल समूह प्रकट होता है।

## नवमः श्लोकः

साध्यात्मः साधिदैवश्च साधिभूत इति त्रिधा ।
विराट् प्राणो दशविध एकधा हृदयेन च ॥६॥

पदच्छेद—

साध्यात्मः साधिदैवः च, साधिभूतः इति त्रिधा ।
विराट् प्राणः दशविधः, एकधा हृदयेन च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| साध्यात्मः | २. | आध्यात्मिक | विराट | १. | विराट् पुरुष |
| साधिदैवः | ३. | आधिदैविक | प्राणः | ८. | प्राण वायु रूप से |
| च, | ४. | और | दशविधः, | ६. | दस प्रकार का |
| साधिभूतः | ५. | आधिभौतिक | एकधा | १२. | एक प्रकार का (है) |
| इति | ६. | रूप से | हृदयेन | ११. | हृदय रूप से |
| त्रिधा । | ७. | तीन प्रकार का | च ॥ | १०. | तथा |

श्लोकार्थ—वह विराट् पुरुष आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक रूप से तीन प्रकार का, प्राण-वायु रूप से दस प्रकार का तथा हृदय रूप से एक प्रकार का है ।

## दशमः श्लोकः

स्मरन् विश्वसृजामीशो विज्ञापितमधोक्षजः ।
विराजमतपत्स्वेन तेजसैषां विवृत्तये ॥१०॥

पदच्छेद—

स्मरन् विश्व सृजाम् ईशः, विज्ञापितम् अधोक्षजः ।
विराजम् अतपत् स्वेन, तेजसा एषाम् विवृत्तये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्मरन् | ४. | स्मरण करके | विराजम् | ११. | विराट् पुरुष को |
| विश्व | १. | संसार की | अतपत् | १२. | जागृत किया था |
| सृजाम् | २. | रचना करने वाले तत्त्वों की | स्वेन, | ६. | अपने |
| ईशः, | ५. | (उनके) अधिपति | तेजसा | १०. | तेज से |
| विज्ञापितम् | ३. | प्रार्थना का | एषाम् | ७. | उन्हें |
| अधोक्षजः । | ६. | भगवान् श्री हरि ने | विवृत्तये ॥ | ८. | क्रियाशील बनाने के लिये |

श्लोकार्थ—संसार की रचना करने वाले तत्त्वों की प्रार्थना का स्मरण करके उनके अधिपति भगवान् श्री हरि ने उन्हें क्रियाशील बनाने के लिये अपने तेज से विराट् पुरुष को जागृत किया था ।

## एकादशः श्लोकः

अथ तस्याभितप्तस्य कति चायतनानि ह ।
निरभिद्यन्त देवानां तानि मे गदतः शृणु ।।११।।

पदच्छेद—

अथ तस्य अभितप्तस्य, कति च आयतनानि ह ।
निरभिद्यन्त देवानाम्, तानि मे गदतः शृणु ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर | निरभिद्यन्त | ८. | प्रकट हो गये |
| तस्य | २. | उस विराट् पुरुष के | देवानाम्, | ४. | देवताओं के |
| अभितप्तस्य, | ३. | जागृत हो जाने पर | तानि | ९. | उन्हें |
| कति च | ५. | कितने | मे | १०. | मेरी |
| आयतनानि | ७. | स्थान | गदतः | ११. | वाणी में |
| ह । | ६. | ही | शृणु ।। | १२. | सुनें |

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस विराट् पुरुष के जागृत हो जाने पर देवताओं के कितने ही स्थान प्रकट हो गये, उन्हें मेरी वाणी में आप सुनें ।

## द्वादशः श्लोकः

तस्याग्निरास्यं निर्भिन्नं लोकपालोऽविशत्पदम् ।
वाचा स्वांशेन वक्तव्यं ययासौ प्रतिपद्यते ।।१२।।

पदच्छेद—

तस्य अग्निः आस्यम् निर्भिन्नम्, लोकपालः अविशत् पदम् ।
वाचा स्व अंशेन वक्तव्यम्, यया असौ प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | १. | उस (विराट् पुरुष) का | वाचा | ६. | वाणी के साथ |
| अग्निः | ८. | अग्नि ने | स्व अंशेन | ५. | अपने अंश |
| आस्यम् | २. | पहले मुख | वक्तव्यम्, | १२. | शब्द |
| निर्भिन्नम्, | ३. | उत्पन्न हुआ | यया | १०. | जिससे |
| लोकपालः | ७. | लोकपाल | असौ | ११. | वह जीव |
| अविशत् | ९. | प्रवेश किया | प्रतिपद्यते ।। | १३. | बोलता है |
| पदम् । | ४. | उसमें | | | |

श्लोकार्थ—उस विराट् पुरुष का पहले मुख उत्पन्न हुआ । उसमें अपने अंश वाणी के साथ लोकपाल अग्नि ने प्रवेश किया, जिससे वह जीव शब्द बोलता है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

निर्भिन्नं तालु वरुणो लोकपालोऽविशद्धरेः ।
जिह्वयांशेन च रसं ययासौ प्रतिपद्यते ।।१३।।

पदच्छेद—

निर्भिन्नम् तालु वरुणः, लोकपालः अविशत् हरेः ।
जिह्वया अंशेन च रसम्, यया असौ प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्भिन्नम् | ३. | उत्पन्न हुआ | जिह्वया | ६. | रसना के साथ |
| तालु | २. | तालु | अंशेन | ५. | अपने अंशभूत |
| वरुणः, | ८. | वरुण ने | च | ४. | उसमें |
| लोकपालः | ७. | लोकपाल | रसम्, | १२. | रस का |
| अविशत् | ६. | प्रवेश किया | यया | १०. | जिस (रसना) से |
| हरेः । | १. | भगवान् का | असौ | ११. | वह (जीव) |
| | | | प्रतिपद्यते ।। | १३. | ग्रहण करता है |

श्लोकार्थ—उसके बाद भगवान् का तालु उत्पन्न हुआ । उसमें अपने अंशभूत रसना के साथ लोकपाल वरुण ने प्रवेश किया, जिस रसना से वह जीव रस का ग्रहण करता है ।

## चतुर्दशः श्लोकः

निर्भिन्ने अश्विनौ नासे विष्णोराविशतां पदम् ।
घ्राणेनांशेन गन्धस्य प्रतिपत्तिर्यतो भवेत् ।।१४।।

पदच्छेद—

निर्भिन्ने अश्विनौ नासे, विष्णोः आविशताम् पदम् ।
घ्राणेन अंशेन गन्धस्य, प्रतिपत्तिः यतः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्भिन्ने | ३. | उत्पन्न हुआ | घ्राणेन | ६. | घ्राणेन्द्रिय के साथ |
| अश्विनौ | ७. | दोनों अश्विनी कुमारों ने | अंशेन | ५. | अपने अंशभूत |
| नासे, | २. | नासा पुट | गन्धस्य, | १०. | गन्ध का |
| विष्णोः | १. | विराट् भगवान् का | प्रतिपत्तिः | ११. | अनुभव |
| आविशताम् | ८. | प्रवेश किया | यतः | ६. | जिस (इन्द्रिय) से |
| पदम् । | ४. | उस स्थान में | भवेत् ।। | १२. | होता है |

श्लोकार्थ—तदनन्तर विराट् भगवान् का नासा पुट उत्पन्न हुआ । उस स्थान में अपने अंशभूत घ्राणेन्द्रिय के साथ दोनों अश्विनी कुमारों ने प्रवेश किया, जिस इन्द्रिय से गन्ध का अनुभव होता है ।

## पञ्चदशः श्लोकः

निर्भिन्ने अक्षिणी त्वष्टा लोकपालोऽविशद्विभोः ।
चक्षुषांशेन रूपाणां प्रतिपत्तिर्यतो भवेत् ॥१५॥

पदच्छेद—

निर्भिन्ने अक्षिणी त्वष्टा, लोकपालः अविशत् विभोः ।
चक्षुषा अंशेन रूपाणाम्, प्रतिपत्तिः यतः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्भिन्ने | ३. | उत्पन्न हुई (उसमें) | चक्षुषा | ७. | नेत्रेन्द्रिय के साथ |
| अक्षिणी | २. | आंखें | अंशेन | ६. | अपने अंश |
| त्वष्टा, | ५. | सूर्य ने | रूपाणाम्, | १०. | रूप का |
| लोकपालः | ४. | लोकपाल | प्रतिपत्तिः | ११. | ज्ञान |
| अविशत् | ८. | प्रवेश किया | यतः | ९. | जिससे |
| विभोः । | १. | (तदनन्तर) विराट् भगवान की | भवेत् ॥ | १२. | होता है |

श्लोकार्थ— तदनन्तर विराट् भगवान् की आँखें उत्पन्न हुई। उसमें लोकपाल सूर्य ने अपने अंश नेत्रेन्द्रिय के साथ प्रवेश किया, जिससे रूप का ज्ञान होता है।

## षोडशः श्लोकः

निर्भिन्नान्यस्य चर्माणि लोकपालोऽनलोऽविशत् ।
प्राणेनांशेन संस्पर्शं येनासौ प्रतिपद्यते ॥१६॥

पदच्छेद—

निर्भिन्नानि अस्य चर्माणि, लोकपालः अनिलः अविशत् ।
प्राणेन अंशेन सस्पर्शम्, येन असौ प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्भिन्नानि | ३. | उत्पन्न हुई (उसमें) | प्राणेन | ७. | प्राण के साथ |
| अस्य | १. | फिर इसकी | अंशेन | ६. | अपनी शक्ति |
| चर्माणि, | २. | त्वचा | संस्पर्शम्, | ११. | स्पर्श का |
| लोकपालः | ४. | लोकपाल | येन | ९. | जिससे |
| अनिलः | ५. | वायु ने | असौ | १०. | यह (जीव) |
| अविशत् । | ८. | प्रवेश किया | प्रतिपद्यते ॥ | १२. | अनुभव करता है |

श्लोकार्थ—फिर इस विराट् भगवान् की त्वचा उत्पन्न हुई। उसमें लोकपाल वायु ने अपनी शक्ति प्राण के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव स्पर्श का अनुभव करता है।

## सप्तदशः श्लोकः

कर्णावस्य विनिर्भिन्नौ धिष्ण्यं स्वं विविशुर्दिशः ।
श्रोत्रेणांशेन शब्दस्य सिद्धिं येन प्रपद्यते ॥१७॥

पदच्छेद—

कर्णौ अस्य विनिर्भिन्नौ, धिष्ण्यम् स्वम् विविशुः दिशः ।
श्रोत्रेण अंशेन शब्दस्य, सिद्धिम् येन प्रपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कर्णौ | २. | दोनों कान | श्रोत्रेण | ८. | श्रवणेन्द्रिय के साथ |
| अस्य | १. | (तत्पश्चात्) विराट् भगवान् के | अंशेन | ७. | अपनी शक्ति |
| विनिर्भिन्नौ, | ३. | उत्पन्न हुये | शब्दस्य, | ११. | शब्द का |
| धिष्ण्यम् | ५. | आश्रय में | सिद्धिम् | १२. | श्रवण |
| स्वम् | ४. | अपने (उस) | येन | १०. | जिससे |
| विविशुः | ६ | प्रवेश किया | प्रपद्यते ॥ | १३. | होता है |
| दिशः । | ६. | दिशाओं ने | | | |

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् विराट् भगवान् के दोनों कान उत्पन्न हुये । अपने उस आश्रय में दिशाओं ने अपनी शक्ति श्रवणेन्द्रिय के साथ प्रवेश किया, जिससे शब्द का श्रवण होता है ।

## अष्टादशः श्लोकः

त्वचमस्य विनिर्भिन्नां विविशुर्धिष्ण्यमोषधीः ।
अंशेन रोमभिः कण्डूं यैरसौ प्रतिपद्यते ॥१८॥

पदच्छेद—

त्वचम् अस्य विनिर्भिन्नाम्, विविशुः धिष्ण्यम् ओषधीः ।
अंशेन रोमभिः कण्डूम्, यैः असौ प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वचम् | २. | चमड़ी | अंशेन | ६. | अपने अंश |
| अस्य | १. | (फिर) इस विराट् भगवान् की | रोमभिः | ७. | रोमावलियों के साथ |
| विनिर्भिन्नाम्, | ३. | उत्पन्न हुई | कण्डूम्, | ११. | खुजली का |
| विविशुः | ८. | प्रवेश किया | यैः | ९. | जिससे |
| धिष्ण्यम् | ४. | उसमें | असौ | १०. | यह (जीव) |
| ओषधीः । | ५. | औषधियों ने | प्रतिपद्यते ॥ | १२. | अनुभव करता है |

श्लोकार्थ—फिर इस विराट् भगवान् की चमड़ी उत्पन्न हुई । उसमें औषधियों ने अपने अंश रोमावलियों के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव खुजली का अनुभव करता है ।

## एकोनविंशः श्लोकः

मेढ्रं तस्य विनिर्भिन्नं स्वधिष्ण्यं क उपाविशत् ।
रेतसांशेन येनासावानन्दं प्रतिपद्यते ॥१९॥

पदच्छेद—

मेढ्रम् तस्य विनिर्भिन्नम्, स्वधिष्ण्यम् कः उपाविशत् ।
रेतसा अंशेन येन असौ, आनन्दम् प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मेढ्रम् | २. | जननेन्द्रिय | रेतसा | ७. | वीर्य के साथ |
| तस्य | १. | विराट् भगवान् की देह में | अंशेन | ६. | अपने अंश |
| विनिर्भिन्नम्, | ३. | उत्पन्न हुई | येन | ९. | जिससे |
| स्वधिष्ण्यम् | ४. | अपने उस आश्रय में | असौ, | १०. | यह जीव |
| कः | ५. | प्रजापति ने | आनन्दम् | ११. | आनन्द का |
| उपाविशत् । | ८. | प्रवेश किया | प्रतिपद्यते ॥ | १२. | अनुभव करता है |

श्लोकार्थ—उसके बाद विराट् भगवान् की देह में जननेन्द्रिय उत्पन्न हुई । अपने उस आश्रय में प्रजापति ने अपने अंश वीर्य के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव आनन्द का अनुभव करता है ।

## विंशः श्लोकः

गुदं पुंसो विनिर्भिन्नं मित्रो लोकेश आविशत् ।
पायुनांशेन येनासौ विसर्गं प्रतिपद्यते ॥२०॥

पदच्छेद—

गुदम् पुंसः विनिर्भिन्नम्, मित्रः लोकेशः आविशत् ।
पायुना अंशेन येन असौ, विसर्गम् प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गुदम् | २. | गुदा | पायुना | ७. | पायु के साथ |
| पुंसः | १. | विराट् पुरुष के शरीर में | अंशेन | ६. | अपने अंश |
| विनिर्भिन्नम्, | ३. | उत्पन्न हुई (उसमें) | येन | ९. | जिससे |
| मित्रः | ५. | मित्र देवता ने | असौ, | १०. | यह (जीव) |
| लोकेशः | ४. | लोकपति | विसर्गम् | ११. | मल-त्याग |
| आविशत् । | ८. | प्रवेश किया | प्रतिपद्यते ॥ | १२. | करता है |

श्लोकार्थ—तदनन्तर विराट् पुरुष के शरीर में गुदा उत्पन्न हुई । उसमें लोकपति मित्र देवता ने अपने अंश पायु इन्द्रिय के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव मल-त्याग करता है ।

# एकविंशः श्लोकः

हस्तावस्य विनिर्भिन्नाविन्द्रः स्वर्पतिराविशत् ।
वार्तयांशेन पुरुषो यया वृत्तिं प्रपद्यते ॥२१॥

पदच्छेद—

हस्तौ अस्य विनिर्भिन्नौ, इन्द्रः स्वर्पतिः आविशत् ।
वार्तया अंशेन पुरुषः, यया वृत्तिम् प्रपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| हस्तौ | २. दोनों हाथ | | वार्तया | ७. आदान-प्रदान के साथ |
| अस्य | १. (फिर) इस विराट् पुरुष के | | अंशेन | ६. अपनी शक्ति |
| विनिर्भिन्नौ, | ३. उत्पन्न हुये (उसमें) | | पुरुष | १०. जीव (अपनी) |
| इन्द्रः | ५. इन्द्र ने | | यया | ९. जिस (शक्ति) से |
| स्वर्पतिः | ४. देवराज | | वृत्तिम् | ११. जीविका |
| आविशत् । | ८. प्रवेश किया | | प्रपद्यते ॥ | १२. प्राप्त करता है |

श्लोकार्थ—फिर इस विराट् पुरुष के दोनों हाथ उत्पन्न हुये । उसमें देवराज इन्द्र ने अपनी शक्ति आदान-प्रदान के साथ प्रवेश किया, जिस शक्ति से जीव अपनी जीविका प्राप्त करता है ।

# द्वाविंशः श्लोकः

पादावस्य विनिर्भिन्नौ लोकेशो विष्णुराविशत् ।
गत्या स्वांशेन पुरुषो यया प्राप्यं प्रपद्यते ॥२२॥

पदच्छेद—

पादौ अस्य विनिर्भिन्नौ, लोकेशः विष्णुः आविशत् ।
गत्या स्वांशेन पुरुषः, यया; प्राप्यम् प्रपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पादौ | २. दोनों पैर | | गत्या | ७. गमन शक्ति के साथ |
| अस्य | १. इस विराट् भगवान् के | | स्वांशेन | ६. अपनी अंशभूता |
| विनिर्भिन्नौ, | ३. उत्पन्न हुये (उसमें) | | पुरुषः, | १०. पुरुष |
| लोकेशः | ४. लोकेश्वर | | यया | ९. जिस शक्ति से |
| विष्णुः | ५. भगवान् विष्णु ने | | प्राप्यम् | ११. गन्तव्य स्थान में |
| आविशत् । | ८. प्रवेश किया | | प्रपद्यते ॥ | १२. पहुँचता है |

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् इस विराट् भगवान् के दोनों पैर उत्पन्न हुये । उसमें लोकेश्वर भगवान् विष्णु ने अपनी अंशभूता गमन शक्ति के साथ प्रवेश किया, जिस शक्ति से पुरुष गन्तव्य स्थान में पहुँचता है ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

बुद्धिं चास्य विनिर्भिन्नां वागीशो धिष्ण्यमाविशत् ।
बोधेनांशेन बोद्धव्यप्रतिपत्तिर्यतो भवेत् ॥२३॥

पदच्छेद—

बुद्धिम् च अस्य विनिर्भिन्नाम्, वागीशः धिष्ण्यम् आविशत् ।
बोधेन अंशेन बोद्धव्य, प्रतिपत्तिः यतः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बुद्धिम् | ३. | बुद्धि | बोधेन | ७. | ज्ञान शक्ति के साथ |
| च | १. | तदनन्तर | अंशेन | ६. | अपनी अंशभूत |
| अस्य | २. | इस (विराट् भगवान्) की | बोद्धव्य, | ११. | जानने योग्य विषयों का |
| विनिर्भिन्नाम्, | ४. | उत्पन्न हुई | प्रतिपत्तिः | १२. | ज्ञान |
| वागीशः | ८. | वाणी के स्वामी ब्रह्मा ने | यतः | १०. | जिससे |
| धिष्ण्यम् | ५. | उस आश्रय में | भवेत् ॥ | १३. | होता है |
| आविशत् । | ९. | प्रवेश किया | | | |

श्लोकार्थ— तदनन्तर इस विराट् भगवान् की बुद्धि उत्पन्न हुई । उस आश्रय में अपनी अंशभूत ज्ञान शक्ति के साथ वाणी के स्वामी ब्रह्मा ने प्रवेश किया, जिससे जानने योग्य विषयों का ज्ञान होता है ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

हृदयं चास्य निर्भिन्नं चन्द्रमा धिष्ण्यमाविशत् ।
मनसांशेन येनासौ विक्रियां प्रतिपद्यते ॥२४॥

पदच्छेद—

हृदयम् च अस्य निर्भिन्नम्, चन्द्रमाः धिष्ण्यम् आविशत् ।
मनसा अंशेन येन असौ, विक्रियाम् प्रतिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हृदयम् | ३. | हृदय | आविशत् । | ९. | प्रवेश किया |
| च | १. | उसके पश्चात् | मनसा | ८. | मन के साथ |
| अस्य | २. | इस (विराट् भगवान्) का | अंशेन | ७. | अपने अंशभूत |
| निर्भिन्नम्, | ४. | उत्पन्न हुआ | येन, असौ, | १०. | जिससे, यह जीव |
| चन्द्रमाः | ६. | चन्द्रमा ने | विक्रियाम् | ११. | संकल्प-विकल्पादि विकार को |
| धिष्ण्यम् | ५. | (उस) आश्रय में | प्रतिपद्यते ॥ | १२. | प्राप्त करता है। |

श्लोकार्थ—उसके पश्चात् इस विराट् भगवान का हृदय उत्पन्न हुआ । उस आश्रय में चन्द्रमा ने अपने अंशभूत मन के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव संकल्प-विकल्पादि विकार को प्राप्त करता है ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

आत्मानं चास्य निर्भिन्नमभिमानोऽविशत्पदम् ।
कर्मणांशेन येनासौ कर्तव्यं प्रतिपद्यते ।।२५।।

पदच्छेद—

आत्मानम् च अस्य निर्भिन्नम्, अभिमानः अविशत् पदम् ।
कर्मणा अंशेन येन असौ, कर्तव्यम् प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मानम् | ३. | अहंकार | पदम् । | ५. | उसमें |
| च | १. | तत्पश्चात् | कर्मणा | ८. | क्रिया शक्ति के साथ |
| अस्य | २. | उस के शरीर में | अंशेन | ७. | अपनी अंशभूता |
| निर्भिन्नम्, | ४. | उत्पन्न हुआ | येन, असौ, | १०. | जिससे, यह जीव |
| अभिमानः | ६. | रुद्र ने | कर्तव्यम् | ११. | अपने कार्य में |
| अविशत् | ६. | प्रवेश किया | प्रतिपद्यते ।। | १२. | प्रवृत्त होता है |

श्लोकार्थ-- तत्पश्चात् उस विराट् भगवान् के शरीर में अहंकार उत्पन्न हुआ। उसमें रुद्र ने अपनी अंशभूता क्रिया शक्ति के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव अपने कार्य में प्रवृत्त होता है।

## षड्विंशः श्लोकः

सत्त्वं चास्य विनिर्भिन्नं महान्धिष्ण्यमुपाविशत् ।
चित्तेनांशेन येनासौ विज्ञानं प्रतिपद्यते ।।२६।।

पदच्छेद—

सत्त्वम् च अस्य विनिर्भिन्नम्, महान् धिष्ण्यम् उपाविशत् ।
चित्तेन अंशेन येन असौ, विज्ञानम् प्रतिपद्यते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत्त्वम् | ३. | सत्त्वगुण | उपाविशत् । | ६. | प्रवेश किया |
| च | १. | उसके बाद | चित्तेन | ८. | चित्त के साथ |
| अस्य | २. | उस (विराट् पुरुष) में | अंशेन | ७. | अपने अंशभूत |
| विनिर्भिन्नम्, | ४. | उत्पन्न हुआ | येन, असौ | १०. | जिससे, यह जीव |
| महान् | ६. | महत्तत्त्व ब्रह्मा ने | विज्ञानम् | ११. | ज्ञान का निश्चय |
| धिष्ण्यम् | ५. | उसमें | प्रतिपद्यते ।। | १२. | करता है |

श्लोकार्थ—उसके बाद उस विराट् पुरुष में सत्त्वगुण उत्पन्न हुआ। उसमें महत्तत्त्व ब्रह्मा ने अपने अंशभूत चित्त के साथ प्रवेश किया, जिससे यह जीव ज्ञान का निश्चय करता है।

# सप्तविंशः श्लोकः

शीर्ष्णोऽस्य द्यौर्धरा पद्भ्यां खं नाभेरुदपद्यत ।
गुणानां वृत्तयो येषु प्रतीयन्ते सुरादयः ॥२७॥

पदच्छेद—

शीर्ष्णः अस्य द्यौः धरा पद्भ्याम्, खम् नाभेः उदपद्यत ।
गुणानाम् वृत्तयः येषु, प्रतीयन्ते सुर आदयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शीर्ष्णः | २. | सिर से | उदपद्यत । | ८. | उत्पन्न हुआ |
| अस्य | १. | इस (विराट् भगवान्) के | गुणानाम् | १०. | सत्त्व, रज और तमोगुण की |
| द्यौः | ३. | स्वर्ग लोक | वृत्तयः | ११. | प्रधानता वाले (क्रमशः) |
| धरा | ५. | पृथ्वी (और) | येषु, | ९. | जिन लोकों में |
| पद्भ्याम्, | ४. | दोनों पैरों से | प्रतीयन्ते | १४. | देखे जाते हैं |
| खम् | ७. | आकाश | सुर | १२. | देवता |
| नाभेः | ६. | नाभि से | आदयः ॥ | १३. | जीव और भूत-प्रेत |

श्लोकार्थ—फिर इस विराट् भगवान् के सिर से स्वर्ग लोक, दोनों पैरों से पृथ्वी और नाभि से आकाश उत्पन्न हुआ; जिन लोकों में सत्त्व, रज और तमोगुण की प्रधानता वाले क्रमशः देवता, जीव और भूत-प्रेत देखे जाते हैं ।

# अष्टाविंशः श्लोकः

आत्यन्तिकेन सत्त्वेन दिवं देवाः प्रपेदिरे ।
धरां रजःस्वभावेन पणयो ये च ताननु ॥२८॥

पदच्छेद—

आत्यन्तिकेन सत्त्वेन, दिवम् देवाः प्रपेदिरे ।
धराम् रजः स्वभावेन, पणयः ये च तान् अनु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्यन्तिकेन | २. | अधिकता से | रजः | ५. | रजोगुणी |
| सत्त्वेन, | १. | सत्त्वगुण की | स्वभावेन, | ६. | स्वभाव के कारण |
| दिवम् | ४. | स्वर्ग लोक में (तथा) | पणयः | ७. | मनुष्य |
| देवाः | ३. | देवता लोग | ये, च | ८. | और, जो |
| प्रपेदिरे । | १२. | निवास करते हैं | तान् | ९. | उनके |
| धराम् | ११. | पृथ्वी लोक में | अनु ॥ | १०. | उपयोगी हैं (वे जीव) |

श्लोकार्थ—सत्त्वगुण की अधिकता से देवता लोग स्वर्ग लोक में तथा रजोगुणी स्वभाव के कारण मनुष्य और जो उनके उपयोगी हैं, वे जीव पृथ्वी लोक में निवास करते हैं ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

तार्तीयेन स्वभावेन भगवन्नाभिमाश्रिताः ।
उभयोरन्तरं व्योम ये रुद्रपार्षदां गणाः ।।२६।।

पदच्छेद—

तार्तीयेन स्वभावेन, भगवत् नाभिम् आश्रिताः ।
उभयोः अन्तरम् व्योम, ये रुद्र पार्षदाम् गणाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तार्तीयेन | ५. | तमोगुणी | अन्तरम् | ८. | मध्य (अर्थात्) |
| स्वभावेन, | ६. | स्वभाव के कारण | व्योम, | ११. | अंतरिक्ष लोक में |
| भगवत् | ६. | भगवान् के | ये | १. | जो |
| नाभिम् | १०. | नाभि स्थान | रुद्र | २. | रुद्र के |
| आश्रिताः । | १२. | निवास करते हैं | पार्षदाम् | ३. | पार्षद |
| उभयोः | ७. | पृथ्वी और स्वर्ग के | गणाः ।। | ४. | गण (हैं वे) |

श्लोकार्थ—जो रुद्र के पार्षद गण हैं, वे तमोगुणी स्वभाव के कारण पृथ्वी और स्वर्ग के मध्य अर्थात् भगवान् के नाभि स्थान अंतरिक्ष लोक में निवास करते हैं ।

# त्रिंशः श्लोकः

मुखतोऽवर्तत ब्रह्म पुरुषस्य कुरूद्वह ।
यस्तून्मुखत्वाद्वर्णानां मुख्योऽभूद् ब्राह्मणो गुरुः ।।३०।।

पदच्छेद—

मुखतः अवर्तत ब्रह्म, पुरुषस्य 'कुरूद्वह ।
यः तु उन्मुखत्वात् वर्णानाम्, मुख्यः अभूत् ब्राह्मणः गुरुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुखतः | ३. | मुख से | तु | ६. | ही |
| अवर्तत | ५. | प्रकट हुआ | उन्मुखत्वात् | ८. | मुख से उत्पन्न होने के कारण |
| ब्रह्म, | ४. | ब्राह्मण | वर्णानाम्, | १०. | वर्णों में |
| पुरुषस्य | २. | विराट् पुरुष के | मुख्यः | ११. | प्रधान (और) |
| कुरुद्वह । | १. | हे विदुर जी ! | अभूत् | १३. | माना गया है |
| यः | ६. | जो | ब्राह्मणः | ७. | ब्राह्मण |
| | | | गुरुः ।। | १२. | सब का गुरु |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! विराट् पुरुष के मुख से ब्राह्मण प्रकट हुआ, जो ब्राह्मण मुख से उत्पन्न होने के कारण ही वर्णों में प्रधान और सब का गुरु माना गया है ।

## एकत्रिंश: श्लोक:

बाहुभ्योऽवर्तत क्षत्रं क्षत्रियस्तदनुव्रतः ।
यो जातस्त्रायते वर्णान् पौरुषः कण्टकक्षतात् ॥३१॥

**पदच्छेद—**

बाहुभ्यः अवर्तत क्षत्रम्, क्षत्रियः तद् अनुव्रतः ।
यः जातः त्रायते वर्णान्, पौरुषः कण्टक क्षतात् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बाहुभ्यः | १. | (विराट् पुरुष की) दोनों भुजाओं में | जातः | ८ | उत्पन्न होकर |
| अवर्तत | ५. | उत्पन्न हुआ | त्रायते | १२. | रक्षा करता है |
| क्षत्रम्, | २. | रक्षा शक्ति (और) | वर्णान्, | ११. | सभी वर्णों की |
| क्षत्रियः | ४. | क्षत्रिय वर्ण | पौरुषः | ७. | पुरुष से |
| तद्, अनुव्रतः । | ३. | उसका, अनुगामी | कण्टक | ९. | चोर आदि के |
| यः | ६. | जो | क्षतात् ॥ | १०. | उपद्रवों से |

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष की दोनों भुजाओं से रक्षा शक्ति और उसका अनुगामी क्षत्रिय वर्ण उत्पन्न हुआ, जो पुरुष से उत्पन्न होकर चोर आदि के उपद्रवों मे सभी वर्णों की रक्षा करता है।

## द्वात्रिंश: श्लोक:

विशोऽवर्तन्त तस्योर्वोर्लोकवृत्तिकरीर्विभोः ।
वैश्यस्तदुद्भवो वार्तां नृणां यः समवर्तयत् ॥३२॥

**पदच्छेद—**

विशः अवर्तन्त तस्य ऊर्वोः, लोक वृतिकरीः विभोः ।
वैश्यः तद उद्भवः वार्ताम्, नृणाम् यः समवर्तयत् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विशः | ६. | वैश्य वृत्ति | वैश्यः | ११. | वैश्य वर्ण है (वह) |
| अवर्तन्त | ७. | उत्पन्न हुई | तद् | ८. | उसी (वृत्ति) से |
| तस्य | १. | उस | उद्भवः | ९. | उत्पन्न |
| ऊर्वोः, | ३. | दोनों जंघाओं से | वार्ताम्, | १३. | जीविका का |
| लोक | ४. | लोगों की | नृणाम् | १२. | मनुष्यों की |
| वृत्तिकरीः | ५. | जीविका चलाने वाली | यः | १०. | जो |
| विभोः । | २. | विराट् पुरुष की | समवर्तयत् ॥ | १४. | निर्वाह करता है |

श्लोकार्थ—उस विराट् पुरुष की दोनों जंघाओं से लोगों की जीविका चलाने वाली वैश्य वृत्ति उत्पन्न हुई। उसी वृत्ति से उत्पन्न जो वैश्य वर्ण है, वह मनुष्यों की जीविका का निर्वाह करता है।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

पद्भ्यां भगवतो जज्ञे शुश्रूषा धर्मसिद्धये ।
तस्यां जातः पुरा शूद्रो यद्वृत्त्या तुष्यते हरिः ॥३३॥

पदच्छेद—

पद्भ्याम् भगवतः जज्ञे, शुश्रूषा धर्म सिद्धये ।
तस्याम् जातः पुरा शूद्रः, यद् वृत्त्या तुष्यते हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पद्भ्याम् | २. | दोनों पैरों से | जातः | १०. | उत्पन्न हुआ |
| भगवतः | १. | विराट् भगवान् के | पुरा | ८. | पहले |
| जज्ञे, | ६. | उत्पन्न हुई | शूद्रः, | ९. | शूद्र वर्ण |
| शुश्रूषा | ५. | सेवा वृत्ति | यद् | ११. | जिसकी |
| धर्म | ३. | सभी धर्मों की | वृत्त्या | १२. | सेवा वृत्ति से |
| सिद्धये । | ४. | सिद्धि के लिये | तुष्यते | १४. | प्रसन्न होते हैं |
| तस्याम् | ७. | उससे | हरिः ॥ | १३. | भगवान् श्री हरि |

श्लोकार्थ—विराट् भगवान् के दोनों पैरों से सभी धर्मों की सिद्धि के लिये सेवा वृत्ति उत्पन्न हुई । उससे पहले शूद्र वर्ण उत्पन्न हुआ, जिसकी सेवा वृत्ति से भगवान् श्री हरि प्रसन्न होते हैं ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एते वर्णाः स्वधर्मेण यजन्ति स्वगुरुं हरिम् ।
श्रद्धयाऽऽत्मविशुद्ध्यर्थं यज्जाताः सह वृत्तिभिः ॥३४॥

पदच्छेद—

एते वर्णाः स्वधर्मेण, यजन्ति स्व गुरुम् हरिम् ।
श्रद्धया आत्म विशुद्धि अर्थम्, यद् जाताः सह वृत्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एते | १. | ये | श्रद्धया | १०. | आदर-पूर्वक |
| वर्णाः | २. | सभी वर्ण | आत्म | ६. | (अपने) चित्त को |
| स्वधर्मेण, | ९. | अपने-अपने कर्त्तव्यों के द्वारा | विशुद्धि | ७. | परम पवित्र |
| यजन्ति | १४. | पूजन करते हैं | अर्थम्, | ८. | करने के लिये |
| स्व | ११. | अपने | यद्, जाताः | ५. | जिससे, उत्पन्न हुये हैं (वे) |
| गुरुम् | १२. | गुरु (उन) | सह | ४. | साथ |
| हरिम् । | १३. | भगवान् श्री हरि का | वृत्तिभिः ॥ | ३. | (अपनी) शक्तियों के |

श्लोकार्थ—ये सभी वर्ण अपनी शक्तियों के साथ जिससे उत्पन्न हुये हैं, वे अपने चित्त को परम पवित्र करने के लिये अपने-अपने कर्त्तव्यों के द्वारा आदर पूर्वक अपने गुरु उन भगवान् श्री हरि का पूजन करते हैं ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एतत्क्षत्तर्भगवतो दैवकर्मात्मरूपिणः ।
कः श्रद्दध्यादुपाकर्तुं योगमायाबलोदयम् ॥३५॥

पदच्छेद —

एतत् क्षत्तः भगवतः, दैव कर्म आत्मरूपिणः ।
कः श्रद्दध्यात् उपाकर्तुम्, योगमाया बल उदयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतत् | ९. | इस रूप का | कः | ११. | कौन मनुष्य |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी ! | श्रद्दध्यात् | १२. | समर्थ हो सकता है |
| भगवतः, | ५. | भगवान् श्रीहरि की | उपाकर्तुम्, | १०. | वर्णन करने में |
| दैव | २. | काल | योगमाया | ६. | योग शक्ति के |
| कर्म | ३. | कर्म और | बल | ७. | प्रभाव से |
| आत्मरूपिणः । | ४. | आत्मशक्ति वाले | उदयम् ॥ | ८. | उत्पन्न |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! काल, कर्म और आत्मशक्ति वाले भगवान् श्री हरि की योगशक्ति के प्रभाव से उत्पन्न इस रूप का वर्णन करने में भला कौन मनुष्य समर्थ हो सकता है ?

## षट्त्रिंशः श्लोकः

अथापि कीर्तयाम्यङ्ग यथामति यथाश्रुतम् ।
कीर्तिं हरेः स्वां सत्कर्तुं गिरमन्याभिधासतीम् ॥३६॥

पदच्छेद—

अथापि कीर्तयामि अङ्ग, यथामति यथाश्रुतम् ।
कीर्तिम् हरेः स्वाम् सत् कर्तुम्, गिरम् अन्य अभिधा असतीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथापि | १. | फिर भी | स्वाम् | ६. | अपनी |
| कीर्तयामि | १४. | वर्णन करता हूँ | सत् | ८. | पवित्र |
| अङ्ग, | २. | हे प्यारे विदुर जी ! | कर्तुम्, | ९. | करने के लिये |
| यथामति | १०. | बुद्धि के अनुसार (और) | गिरम् | ७. | वाणी को |
| यथाश्रुतम् । | ११. | अध्ययन के अनुसार | अन्य | ३. | लौकिक |
| कीर्तिम् | १३. | सुयश का | अभिधा | ४. | चर्चाओं से |
| हरेः | १२. | भगवान् श्री हरि के | असतीम् ॥ | ५. | अपवित्र |

श्लोकार्थ—फिर भी हे प्यारे विदुर जी ! लौकिक चर्चाओं से अपवित्र अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये बुद्धि के अनुसार और अध्ययन के अनुसार भगवान् श्री हरि के सुयश का वर्णन करता हूँ ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

एकान्तलाभं वचसो नु पुंसां, सुश्लोकमौलेर्गुणवादमाहुः ।
श्रुतेश्च विद्वद्भिरुपाकृतायां, कथासुधायामुपसम्प्रयोगम् ।।३७।।

पदच्छेद—

एकान्त लाभम् वचसः नु पुंसाम्, सुश्लोक मौलेः गुण वादम् आहुः ।
श्रुतेः च विद्वद्भिः उपाकृतायाम्, कथा सुधायाम् उपसम्प्रयोगम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एकान्त | १४. | परम | आहुः । | १६. | कहा गया है |
| लाभम् | १५. | लाभ | श्रुतेः | १३. | कानों का |
| वचसः | ६. | वाणी का | च | ७. | और |
| नु | ४. | ही | विद्वद्भिः | ८. | विद्वानों से |
| पुंसाम्, | ५. | मनुष्यों की | उपाकृतायाम्, | ९. | प्राप्त |
| सुश्लोक | १. | प्रशंसनीयों में | कथा | १० | कथा रूपी |
| मौलेः | २. | मुकुटमणि (भगवान्) की | सुधायाम् | ११. | अमृत रस का |
| गुण वादम् | ३. | लीलाओं का वर्णन | उपसम्प्रयोगम्।। | १२. | पान करना |

श्लोकार्थ—प्रशंसनीयों में मुकुटमणि भगवान् की लीलाओं का वर्णन ही मनुष्यों की वाणी का और विद्वानों से प्राप्त कथा रूपी अमृत-रस का पान करना कानों का परम लाभ कहा गया है।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

आत्मनोऽवसितो वत्स महिमा कविनाऽऽदिना ।
संवत्सरसहस्रान्ते धिया योगविपक्वया ।।३८।।

पदच्छेद—

आत्मनः अवसितः वत्स, महिमा कविना आदिना ।
संवत्सर सहस्र अन्ते, धिया योग विपक्वया ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मनः | १०. | (क्या) परमात्मा के | संवत्सर | ५ | दिव्य वर्षों की |
| अवसितः | १२. | वर्णन कर सके | सहस्र | ४. | एक हजार |
| वत्स, | १. | हे विदुर जी ! | अन्ते, | ६. | तपस्या के बाद |
| महिमा | ११. | सामर्थ्य का | धिया | ९. | बुद्धि के द्वारा भी |
| कविना | ३. | कवि ब्रह्मा जी | योग | ७. | समाधि में |
| आदिना । | २. | आदि | विपक्वया ।। | ८. | कुशल |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! आदि कवि ब्रह्मा जी एक हजार दिव्य वर्षों की तपस्या के बाद समाधि में कुशल बुद्धि के द्वारा भी क्या परमात्मा के सामर्थ्य का वर्णन कर सके ?

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अतो भगवतो माया मायिनामपि मोहिनी ।
यत्स्वयं चात्मवर्त्मात्मा न वेद किमुतापरे ।।३९।।

पदच्छेद—

अतः भगवतः माया, मायिनाम् अपि मोहिनी ।
यत् स्वयम् च आत्म वर्त्म आत्मा, न वेद किमुत अपरे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः | १. | इसलिये | च | १०. | भी |
| भगवतः | २. | भगवान् की | आत्म | ११. | उसकी |
| माया, | ३. | माया | वर्त्म | १२. | गति को |
| मायिनाम् | ४. | मायावियों को | आत्मा, | ९. | परमात्मा |
| अपि | ५. | भी | न | १३. | नहीं |
| मोहिनी । | ६. | मोहित करने वाली है | वेद | १४. | जानते हैं (तब) |
| यत् | ७. | क्योंकि | किमुत | १६. | बात ही क्या है |
| स्वयम् | ८. | अपने आप | अपरे ।। | १५. | दूसरों की तो |

श्लोकार्थ—इसलिये भगवान् की माया मायावियों को भी मोहित करने वाली हैं, क्योंकि अपने आप परमात्मा भी उसकी गति को नहीं जानते हैं, तब दूसरों की तो बात ही क्या है ?

# चत्वारिंशः श्लोकः

यतोऽप्राप्य न्यवर्तन्त वाचश्च मनसा सह ।
अहं चान्य इमे देवास्तस्मै भगवते नमः ।।४०।।

पदच्छेद—

यतः अप्राप्य न्यवर्तन्त, वाचः च मनसा सह ।
अहम् च अन्ये इमे देवाः, तस्मै भगवते नमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यतः | १. | जहाँ | अन्ये | ७. | दूसरे |
| अप्राप्य | २. | नहीं पहुंच कर | इमे | ६. | ये |
| न्यवर्तन्त, | ९. | लौट जाते हैं | देवाः, | ८. | देवगण (वहाँ से) |
| वाचः, च | ४. | वाणी, तथा | तस्मै | १०. | उन |
| मनसा, सह । | ३. | मन के, साथ | भगवते | ११. | भगवान् श्री हरि को |
| अहम्, च | ५. | अहंकार के देवता रुद्र, और | नमः ।। | १२. | नमस्कार है |

श्लोकार्थ—जहाँ नहीं पहुँच कर मन के साथ वाणी तथा अहंकार के देवता रुद्र और ये दूसरे देवगण वहाँ से लौट जाते हैं, उन भगवान् श्री हरि को नमस्कार हो ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
विदुरोद्धवसंवादे षष्ठः अध्यायः ।। ६ ।।

अथ सप्तमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

एवं ब्रुवाणं मैत्रेयं द्वैपायनसुतो बुधः ।
प्रीणयन्निव भारत्या विदुरः प्रत्यभाषत ।।१।।

पदच्छेद—

एवम् ब्रुवाणम् मैत्रेयम्, द्वैपायन सुतः बुधः ।
प्रीणयन् इव भारत्या, विदुरः प्रत्यभाषत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | प्रीणयन् | ९. | प्रसन्न करते हुये |
| ब्रुवाणम्, | २. | वर्णन करते हुये | इव | १०. | से |
| मैत्रेयम्, | ३. | मैत्रेय जी से | भारत्या, | ८. | सुन्दर शब्दों के द्वारा (उन्हें) |
| द्वैपायन | ४. | महर्षि व्यास के | विदुरः | ७. | विदुर जी |
| सुतः | ५. | पुत्र | प्रत्यभाषत ।। | ११. | बोले |
| बुधः । | ६. | विद्वान् | | | |

श्लोकार्थ—इस प्रकार वर्णन करते हुये मैत्रेय जी से महर्षि व्यास के पुत्र विद्वान् विदुर जी सुन्दर शब्दों के द्वारा उन्हें प्रसन्न करते हुये से बोले ।

## द्वितीयः श्लोकः

विदुर उवाच—

ब्रह्मन् कथं भगवतश्चिन्मात्रस्याविकारिणः ।
लीलया चापि युज्येरन्निर्गुणस्य गुणाः क्रियाः ।।२।।

पदच्छेद—

ब्रह्मन् कथम् भगवतः, चिन्मात्रस्य अविकारिणः ।
लीलया च अपि युज्येरन्, निर्गुणस्य गुणाः क्रियाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मन् | १. | हे मुनिवर ! | च | ४. | और |
| कथम् | ११. | कैसे | अपि | ८. | भी |
| भगवतः, | ६. | भगवान् में | युज्येरन्, | १२. | सम्बन्ध हो सकता है |
| चिन्मात्रस्य | २. | ज्ञान-स्वरूप | निर्गुणस्य | ५. | गुणातीत |
| अविकारिणः । | ३. | निर्विकार | गुणाः | ९. | सत्त्वादि गुणों (तथा) |
| लीलया | ७. | लीला के लिये | क्रियाः ।। | १०. | कर्मों का |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! ज्ञान-स्वरूप, निर्विकार और गुणातीत भगवान् में लीला के लिये भी सत्त्वादि गुणों तथा कर्मों का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ?

## तृतीयः श्लोकः

क्रीडायामुद्यमोऽर्भस्य कामश्चिक्रीडिषान्यतः ।
स्वतस्तृप्तस्य च कथं निवृत्तस्य सदान्यतः ॥३॥

पदच्छेद—

क्रीडायाम् उद्यमः अर्भस्य, कामः चिक्रीडिषा अन्यतः ।
स्वतः तृप्तस्य च कथम्, निवृत्तस्य सदा अन्यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्रीडायाम् | ७. | खेल में | स्वतः | २. | स्वयं |
| उद्यमः | ८. | तत्पर | तृप्तस्य, च | ३. | पूर्ण काम, और |
| अर्भस्य, | ९. | बालक के (समान) | कथम्, | १२. | कैसे (होगी) |
| कामः | १०. | कामना (तथा) | निवृत्तस्य | ६. | असंग (परमात्मा) की |
| चिक्रीडिषा | ११. | खेलने की इच्छा | सदा | ५. | नित्य |
| अन्यतः । | १. | दूसरे विषयों से | अन्यतः । | ४. | अन्य विषयों से |

श्लोकार्थ—दूसरे विषयों से स्वयं पूर्णकाम और अन्य विषयों से नित्य असंग परमात्मा की खेल में तत्पर बालक के समान कामना तथा खेलने की इच्छा कैसे होगी ?

## चतुर्थः श्लोकः

अस्राक्षीद्भगवान् विश्वं गुणमय्याऽऽत्ममायया ।
तथा संस्थापयत्येतद्भूयः प्रत्यपिधास्यति ॥४॥

पदच्छेद—

अस्राक्षीत् भगवान् विश्वम्, गुणमय्या आत्म मायया ।
तथा संस्थापयति एतत्, भूयः प्रत्यपिधास्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अस्राक्षीत् | ६. | रचना की है | तथा | ७. | उसी से |
| भगवान् | १. | परमात्मा ने | संस्थापयति | ८. | पालन करते हैं |
| विश्वम्, | ५. | संसार की | एतत्, | १०. | इसका |
| गुणमय्या | ३. | तीन गुणों वाली | भूयः | ९. | फिर (कैसे उसी से) |
| आत्म | २. | अपनी | प्रत्यपिधास्यति॥ | ११. | संहार करेंगे |
| मायया । | ४. | माया से | | | |

श्लोकार्थ—परमात्मा ने अपनी तीन गुणों वाली माया से संसार की रचना की है, उसी से पालन करते हैं फिर कैसे उसी से इसका संहार करेंगे ?

## पञ्चमः श्लोकः

देशतः कालतो योऽसाववस्थातः स्वतोऽन्यतः ।
अविलुप्तावबोधात्मा स युज्येताजया कथम् ॥५॥

पदच्छेद—

देशतः कालतः यः असौ, अवस्थातः स्वतः अन्यतः ।
अविलुप्त अवबोध आत्मा, सः युज्येत अजया कथम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देशतः | ३. | देश | अविलुप्त | ८. | अविनाशी |
| कालतः | ४. | काल (और) | अवबोध | ९. | ज्ञान |
| यः | १. | जो | आत्मा, | १०. | स्वरूप (है) |
| असौ, | २. | वह (परमात्मा) | सः | ११. | वह |
| अवस्थातः | ५. | अवस्था से | युज्येत | १४. | सम्वन्ध करेगा |
| स्वतः | ६. | स्वयं (या) | अजया | १३. | माया के साथ |
| अन्यतः । | ७. | दूसरों से | कथम् । | १२. | कैसे |

श्लोकार्थ—जो वह परमात्मा देश, काल और अवस्था से स्वयं या दूसरों से अविनाशी, ज्ञान स्वरूप है; वह कैसे माया के साथ सम्बन्ध करेगा ?

## षष्ठः श्लोकः

भगवानेक एवैष सर्वक्षेत्रेष्ववस्थितः ।
अमुष्य दुर्भगत्वं वा क्लेशो वा कर्मभिः कुतः ॥६॥

पदच्छेद—

भगवान् एकः एव एषः, सर्व क्षेत्रेषु अवस्थितः ।
अमुष्य दुर्भगत्वम् वा, क्लेशः वा कर्मभिः कुतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | २. | परमात्मा | अमुष्य | ८. | उसमें |
| एकः | ३. | अकेले | दुर्भगत्वम् | १०. | दीनता |
| एव | ४. | ही | वा, | ११. | अथवा |
| एषः, | १. | यह | क्लेशः | १२. | कष्ट |
| सर्व | ५. | सभी | वा | १४. | सम्भव है |
| क्षेत्रेषु | ६. | शरीरों में | कर्मभिः | ९. | कर्मों से |
| अवस्थितः । | ७. | विराजमान | कुतः ॥ | १३. | कैसे |

श्लोकार्थ—यह परमात्मा अकेले ही सभी शरीरों में विराजमान है। उसमें कर्मों से दीनता अथवा कष्ट कैसे सम्भव है ?

## सप्तमः श्लोकः

एतस्मिन्मे मनो विद्वन् खिद्यतेऽज्ञानसङ्कटे ।
तन्नः पराणुद विभो कश्मलं मानसं महत् ।।७।।

पदच्छेद—

एतस्मिन् मे मनः विद्वन्, खिद्यते अज्ञान सङ्कटे ।
तद् नः पराणुद विभो, कश्मलम् मानसम् महत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतस्मिन् | २. | इस | तद् | ८. | इसलिये |
| मे | ५. | मेरा | नः | १०. | हमारे |
| मनः | ६. | मन | पराणुद | १४. | दूर करें |
| विद्वन् | १. | हे ज्ञानी मैत्रेय जी ! | विभो, | ९. | हे भगवन् ! आप |
| खिद्यते | ७. | खिन्न हो रहा है | कश्मलम् | १३. | कष्ट को |
| अज्ञान | ३. | अज्ञान के | मानसम् | ११. | मन के |
| सङ्कटे । | ४. | संकट में पड़ कर | महत् ।। | १२. | महान् |

श्लोकार्थ—हे ज्ञानी मैत्रेय जी ! इस अज्ञान के संकट में पड़ कर मेरा मन खिन्न हो रहा है, इसलिये हे भगवन् ! आप हमारे मन के महान् कष्ट को दूर करें ।

## अष्टमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

स इत्थं चोदितः क्षत्त्रा तत्त्वजिज्ञासुना मुनिः ।
प्रत्याह भगवच्चित्तः स्मयन्निव गतस्मयः ।।८।।

पदच्छेद—

सः इत्थम् चोदितः क्षत्त्रा, तत्त्व जिज्ञासुना मुनिः ।
प्रत्याह भगवत् चित्तः, स्मयन् इव गत स्मयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ६. | वे | प्रत्याह | १४. | बोले |
| इत्थम् | ४. | इस प्रकार | भगवत् | ८. | भगवान् में |
| चोदितः | ५. | पूछने पर | चित्तः, | ९. | मन लगा कर (तथा) |
| क्षत्त्रा, | ३. | विदुर जी के द्वारा | स्मयन् | १२. | मुसकराते हुये |
| तत्त्व | १. | तत्त्वों को | इव | १३. | से |
| जिज्ञासुना | २. | जानने के इच्छुक | गत | ११. | रहित होकर |
| मुनिः । | ७. | मैत्रेय जी | स्मयः ।। | १०. | अहंकार से |

श्लोकार्थ—तत्त्वों को जानने के इच्छुक विदुर जी के द्वारा इस प्रकार पूछने पर वे मैत्रेय जी भगवान् में मन लगा कर तथा अहंकार से रहित होकर मुसकराते हुये से बोले ।

## नवमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

सेयं भगवतो माया यन्नयेन विरुध्यते ।
ईश्वरस्य विमुक्तस्य कार्पण्यमुत बन्धनम् ॥९॥

पदच्छेद—

सा इयम् भगवतः माया, यत् नयेन विरुध्यते ।
ईश्वरस्य विमुक्तस्य, कार्पण्यम् उत बन्धनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा | ८. | वह | विरुध्यते । | १२. | विपरीत प्रतीत होती है |
| इयम् | ७. | यही | ईश्वरस्य | १. | सबके स्वामी का |
| भगवतः | ६. | भगवान् की | विमुक्तस्य, | ४. | बन्धनों से रहित होने पर भी |
| माया, | ९. | माया है | कर्पण्यम् | २. | दीन होना |
| यत् | १० | जो | उत | ३. | तथा |
| नयेन | ११. | युक्ति से | बन्धनम् ॥ | ५. | बन्धन युक्त होना |

श्लोकार्थ—सब के स्वामी का दीन होना तथा बन्धनों से रहित होने पर भी बन्धन युक्त होना, भगवान् की यही वह माया है; जो युक्ति से विपरीत प्रतीत होती है ।

## दशमः श्लोकः

यदर्थेन विनामुष्य पुंस आत्मविपर्ययः ।
प्रतीयत उपद्रष्टुः स्वशिरश्छेदनादिकः ॥१०॥

पदच्छेद—

यत् अर्थेन विना अमुष्य, पुंसः आत्म विपर्ययः ।
प्रतीयते उपद्रष्टुः, स्वशिरः छेदन आदिकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | १ | जिस प्रकार | विपर्ययः । | १२. | मिथ्या धर्मों की प्रतीति होती है |
| अर्थेन | ७. | ज्ञान के | प्रतीयते | ६. | प्रतीति होती है (उसी प्रकार) |
| विना | ८. | विना | उपद्रष्टुः, | २. | स्वप्न देखने वाले को |
| अमुष्य, | ९. | उस | स्वशिरः | ३. | अपने सिर का. |
| पुंसः | १० | पुरुष को | छेदन | ४. | कटना |
| आत्म | ११. | आत्मा में | आदिकः ॥ | ५. | इत्यादि (मिथ्या) |

श्लोकार्थ—जिस प्रकार स्वप्न देखने वाले को अपने सिर का कटना इत्यादि मिथ्या प्रतीति होती है, उसी प्रकार ज्ञान के विना उस पुरुष को आत्मा में मिथ्या धर्मों की प्रतीति होती है ।

# एकादशः श्लोकः

यथा जले चन्द्रमसः कम्पादिस्तत्कृतो गुणः ।
दृश्यतेऽसन्नपि द्रष्टुरात्मनोऽनात्मनो गुणः ।।११।।

पदच्छेद—

यथा जले चन्द्रमसः, कम्प आदिः तत् कृतः गुणः ।
दृश्यते असन् अपि द्रष्टुः, आत्मनः अनात्मनः गुणः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे | दृश्यते | १०. | दिखलाई पड़ती हैं उसी प्रकार |
| जले | २. | जल में स्थित | असन् | ६. | न होने पर |
| चन्द्रमसः, | ३. | चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब में | अपि | ७. | भी |
| कम्प, आदिः | ४. | कम्पन, इत्यादि | द्रष्टुः, | ११. | साक्षी |
| तत् | ८. | जल की चंचलता के | आत्मनः | १२. | परमात्मा में |
| कृतः | ९. | कारण | अनात्मनः | १३. | शरीर आदि के |
| गुणः । | ५. | क्रियायें | गुणः ।। | १४. | धर्म (मिथ्या होने पर भी दिखलाई पड़ते हैं) |

श्लोकार्थ—जैसे जल में स्थित चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब में कम्पन इत्यादि क्रियायें न होने पर भी जल की चंचलता के कारण दिखलाई पड़ती हैं, उसी प्रकार साक्षी परमात्मा में शरीर आदि के धर्म मिथ्या होने पर भी दिखलाई पड़ते हैं ।

# द्वादशः श्लोकः

स वै निवृत्तिधर्मेण वासुदेवानुकम्पया ।
भगवद्भक्तियोगेन तिरोधत्ते शनैरिह ।।१२।।

पदच्छेद—

सः वै निवृत्ति धर्मेण, वासुदेव अनुकम्पया ।
भगवत् भक्ति योगेन, तिरोधत्ते शनैः इह ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ९. | वह | भगवत् | ६. | भगवान् के |
| वै | १०. | मिथ्या प्रतीति | भक्ति | ७. | भक्ति |
| निवृत्ति | २. | निष्काम | योगेन, | ८. | योग के द्वारा (पुरुष की) |
| धर्मेण, | ३. | धर्म के साथ-साथ | तिरोधत्ते | १२. | समाप्त हो जाती है |
| वासुदेव | ४. | भगवान् श्रीकृष्ण की | शनैः | ११. | धीरे-धीरे |
| अनुकम्पया । | ५. | कृपा से प्राप्त | इह ।। | १. | इस संसार में |

श्लोकार्थ—इस संसार में निष्काम धर्म के साथ-साथ भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा से प्राप्त भगवान् के भक्ति योग के द्वारा पुरुष की वह मिथ्या प्रतीति धीरे-धीरे समाप्त हो जाती है ।

# त्रयोदशः श्लोकः

**यदेन्द्रियोपरामोऽथ द्रष्ट्रात्मनि परे हरौ ।**
**विलीयन्ते तदा क्लेशाः संसुप्तस्येव कृत्स्नशः ॥१३॥**

पदच्छेद—

**यदा इन्द्रिय उपरामः अथ, द्रष्ट्रात्मनि परे हरौ ।**
**विलीयन्ते तदा क्लेशाः, संसुप्तस्य इव कृत्स्नशः ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | २. | जब | विलीयन्ते | ७. | विलीन हो जाती हैं |
| इन्द्रिय | ३. | इन्द्रियाँ | तदा | ८. | तब |
| उपरामः | ४. | विषयों से विराग लेकर | क्लेशाः, | १२. | कष्ट (समाप्त हो जाते हैं) |
| अथ, | १. | तदनन्तर | संसुप्तस्य | ९. | गाढ़ निद्रा में सोये हुये की |
| द्रष्ट्रात्मनि | ५. | साक्षी | इव | १०. | भाँति (मनुष्य के) |
| परे, हरौ। | ६. | परमात्मा, श्री हरि में | कृत्स्नशः ॥ | ११. | सभी प्रकार के |

श्लोकार्थ—तदनन्तर जब इन्द्रियाँ विषयों से विराग लेकर साक्षी परमात्मा श्री हरि में विलीन हो जाती हैं, तब गाढ़ निद्रा में सोये हुये की भाँति मनुष्य के सभी प्रकार के कष्ट समाप्त हो जाते हैं।

# चतुर्दशः श्लोकः

**अशेषसंक्लेशशमं विधत्ते, गुणानुवादश्रवणं मुरारेः ।**
**कुतः पुनस्तच्चरणारविन्द-परागसेवारतिरात्मलब्धा ॥१४॥**

पदच्छेद—

**अशेष संक्लेश शमम् विधत्ते, गुण अनुवाद श्रवणम् मुरारेः ।**
**कुतः पुनः तत् चरण अरविन्द, पराग सेवा रतिः आत्म लब्धा ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अशेष | ५. | सम्पूर्ण | कुतः | १६. | कहना ही क्या है |
| संक्लेश | ६. | दुःखों को | पुनः | ९. | तो फिर |
| शमम् | ७. | दूर | तत् | १०. | उनके |
| विधत्ते, | ८. | कर देता है | चरण, अरविन्द, | ११. | पाद, पद्म की |
| गुण | २. | लीलाओं का | पराग, सेवा | १२. | धूली के, सेवन में |
| अनुवाद | ३. | वर्णन करना (और) | रतिः | १३. | अनुराग |
| श्रवणम् | ४. | सुनना | आत्म | १५. | पुरुष का |
| मुरारेः । | १. | (जब) भगवान् श्रीकृष्ण की | लब्धा ॥ | १४. | प्राप्त करने वाले |

श्लोकार्थ—जब भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन करना और सुनना सम्पूर्ण दुःखों को दूर कर देता है, तो फिर उनके पाद पद्म की धूली के सेवन में अनुराग प्राप्त करने वाले पुरुष का कहना ही क्या है ?

## पञ्चदशः श्लोकः

विदुर उवाच—

**संछिन्नः संशयो मह्यं तव सूक्तासिना विभो ।**
**उभयत्रापि भगवन्मनो मे सम्प्रधावति ॥१५॥**

पदच्छेद—

**संछिन्नः संशयः मह्यम्, तव सूक्त असिना विभो ।**
**उभयत्र अपि भगवन्, मनः मे सम्प्रधावति ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| संछिन्नः | ७. | छिन्न-भिन्न हो गया है | उभयत्र अपि | ११. | भगवान् की स्वतन्त्रता और जीव की परतन्त्रता इन दोनों ही विषयों को |
| संशयः | ६. | संदेह | | | |
| मह्यम्, | ५. | मेरा | | | |
| तव | २. | आपके | भगवन्, | ८. | हे मुनिवर ! (अब) |
| सूक्त | ३. | उत्तम वचन रूपी | मनः | १०. | बुद्धि |
| असिना | ४. | तलवार से | मे | ९. | मेरी |
| विभो ।, | १. | हे भगवन् ! | सम्प्रधावति ॥ | १२. | खूब समझ रही है |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपके उत्तम वचन रूपी तलवार से मेरा संदेह छिन्न-भिन्न हो गया है । हे मुनिवर ! अब मेरी बुद्धि भगवान् की स्वतन्त्रता और जीव की परतन्त्रता इन दोनों ही विषयों को खूब समझ रही है ।

## षोडशः श्लोकः

**साध्वेतद् व्याहृतं विद्वन्नात्ममायायनं हरेः ।**
**आभात्यपार्थं निर्मूलं विश्वमूलं न यद्बहिः ॥१६॥**

पदच्छेद—

**साधु एतद् व्याहृतम् विद्वन्, आत्ममाया अयनम् हरेः ।**
**आभाति अपार्थम् निर्मूलम्, विश्वमूलम् न यद् बहिः ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| साधु | ३. | ठीक ही | आभाति | १०. | प्रतीत हो रहा है (क्योंकि) |
| एतद् | २. | यह | अपार्थम् | ८. | मिथ्या (और) |
| व्याहृतम् | ४. | कहा है (कि) | निर्मूलम्, | ९. | निराधार होने पर भी |
| विद्वन्, | १. | हे ज्ञानी मैत्रेय जी ! आपने | विश्वमूलम् | ११. | संसार का मूल कारण |
| आत्ममाया | ६. | अपनी माया के | न | १४. | नहीं (है) |
| अयनम् | ७. | कारण ही (यह संसार) | यद् | १२. | जिस माया के |
| हरेः । | ५. | भगवान् श्री हरि की | बहिः ॥ | १३. | अतिरिक्त कुछ |

श्लोकार्थ—हे ज्ञानी मैत्रेय जी ! आपने यह ठीक ही कहा है कि भगवान् श्री हरि की अपनी माया के कारण ही यह संसार मिथ्या और निराधार होने पर भी प्रतीत हो रहा है, क्योंकि संसार का मूल कारण जिस माया के अतिरिक्त कुछ नहीं है ।

## सप्तदशः श्लोकः

यश्च मूढतमो लोके यश्च बुद्धेः परं गतः ।
तावुभौ सुखमेधेते क्लिश्यत्यन्तरितो जनः ॥१७॥

पदच्छेद—

यः च मूढतमः लोके, यः च बुद्धेः परम् गतः ।
तौ उभौ सुखम् एधेते, क्लिश्यति अन्तरितः जनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | २. | जो | गतः । | ७. | प्राप्त कर लिया है |
| च | ४. | और | तौ, उभौ | ८. | वे, दोनों |
| मूढतमः | ३. | अत्यन्त अज्ञानी है | सुखम् | ९. | आनन्द |
| लोके | १. | संसार में | एधेते, | १०. | प्राप्त करते हैं |
| यः | ५. | जिसने | क्लिश्यति | १४. | कष्ट पाते हैं |
| च | ११. | तथा | अन्तरितः | १२. | बीच के संदेह करने वाले |
| बुद्धेः, परम् | ६. | बुद्धि से, परे परमात्मा को | जनः ॥ | १३. | लोग |

श्लोकार्थ—संसार में जो अत्यन्त अज्ञानी है और जिसने बुद्धि से परे परमात्मा को प्राप्त कर लिया है, वे दोनों आनन्द प्राप्त करते हैं तथा बीच के सन्देह करने वाले लोग कष्ट पाते हैं ।

## अष्टादशः श्लोकः

अर्थाभावं विनिश्चित्य प्रतीतस्यापि नात्मनः ।
तां चापि युष्मच्चरणसेवयाहं पराणुदे ॥१८॥

पदच्छेद—

अर्थ अभावम् विनिश्चित्य, प्रतीतस्य अपि न आत्मनः ।
ताम् च अपि युष्मत् चरण, सेवया अहम् पराणुदे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्थ | ५. | पदार्थों के | च | ८. | तथा (अब) |
| अभावम् | ६. | अभाव का | अपि | १३. | भी |
| विनिश्चित्य, | ७. | निश्चय कर लिया है | युष्मत् | ९. | आपके |
| प्रतीतस्य | ३. | प्रतीत होने वाले | चरण, | १० | चरण कमलों की |
| अपि | २. | केवल | सेवया | ११. | सेवा से |
| न आत्मनः । | ४. | आत्मा से भिन्न शरीरादि | अहम् | १. | मैंने (संसार में) |
| ताम् | १२. | उस प्रतीति को | पराणुदे ॥ | १४. | समाप्त कर रहा हूँ |

श्लोकार्थ—मैंने संसार में केवल प्रतीत होने वाले आत्मा से भिन्न शरीरादि पदार्थों के अभाव का निश्चय कर लिया है तथा अब आपके चरण कमलों की सेवा से उस प्रतीति को भी समाप्त कर रहा हूँ ।

## एकोनविंशः श्लोकः

यत्सेवया भगवतः कूटस्थस्य मधुद्विषः ।
रतिरासो भवेत्तीव्रः पादयोर्व्यसनार्दनः ।।१९।।

पदच्छेद—

यत् सेवया भगवतः, कूटस्थस्य मधुद्विषः ।
रतिरासः भवेत् तीव्रः, पादयोः व्यसन अर्दनः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | १. | जिन संतों की | रतिरासः | ८. | अनुराग |
| सेवया | २. | सेवा से | भवेत् | ९. | होता है (जो) |
| भगवतः, | ४. | भगवान् | तीव्रः | ७. | उत्कट |
| कूटस्थस्य | ३. | नित्य निरञ्जन | पादयोः | ६. | चरणों में |
| मधुद्विषः । | ५. | मधुसूदन के | व्यसन | १०. | आवागमन के कष्ट को |
| | | | अर्दनः । | ११. | मिटा देता है |

श्लोकार्थ—जिन सन्तों की सेवा से नित्य निरञ्जन भगवान् मधुसूदन के चरणों में उत्कट अनुराग होता है, जो अनुराग आवागमन के कष्ट को मिटा देता है ।

## विंशः श्लोकः

दुरापा ह्यल्पतपसः सेवा वैकुण्ठवर्त्मसु ।
यत्रोपगीयते नित्यं देवदेवो जनार्दनः ।।२०।।

पदच्छेद—

दुरापा हि अल्प तपसः, सेवा वैकुण्ठ वर्त्मसु ।
यत्र उपगीयते नित्यम् देवदेवः जनार्दनः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दुरापा | ७. | दुर्लभ है | वर्त्मसु । | ४. | कराने वाले (उनकी) |
| हि | ६. | अत्यन्त | यत्र | ८. | जिनके यहाँ |
| अल्प | १. | कम | उपगीयते | १२. | कीर्तन गान होता रहता है |
| तपसः, | २. | पुण्य वाले लोगों को (भी) | नित्यम्, | ९. | सदा |
| सेवा | ५. | भक्ति | देव देवः | १०. | देवाधिदेव |
| वैकुण्ठ | ३. | भगवत्प्राप्ति | जनार्दनः ।। | ११. | भगवान् श्री हरि का |

श्लोकार्थ—कम पुण्य वाले लोगों को भी भगवत्प्राप्ति कराने वाले उन महात्माओं की भक्ति अत्यन्त दुर्लभ है, जिनके यहां सदा देवाधिदेव भगवान् श्री हरि का कीर्तन गान होता रहता है ।

# एकविंशः श्लोकः

सृष्ट्वाग्रे महदादीनि सविकाराण्यनुक्रमात् ।
तेभ्यो विराजमुद्धृत्य तमनु प्राविशद्विभुः ॥२१॥

पदच्छेद—

सृष्ट्वा अग्रे महत् आदीनि, सविकाराणि अनुक्रमात् ।
तेभ्यः विराजम् उद्धृत्य, तम् अनु प्राविशत् विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सृष्ट्वा | ७. रच कर | | तेभ्यः | ८. उनके अंशों से |
| अग्रे | २. सृष्टि के प्रारम्भ में | | विराजम् | ९. विराट् शरीर को |
| महत् | ४. महान् | | उद्धृत्य | १०. उत्पन्न किया |
| आदीनि, | ५. इत्यादि (तत्त्वों को और) | | तम् | १२. उसमें (स्वयं) |
| सविकाराणि | ६. उनके विकारों को | | अनु | ११. तत्पश्चात् |
| अनुक्रमात् । | ३. क्रमशः | | प्राविशत् | १३. प्रवेश किया था |
| | | | विभुः ॥ | १. भगवान् ने |

श्लोकार्थ—भगवान् ने सृष्टि के प्रारम्भ में क्रमशः महान् इत्यादि तत्त्वों को और उनके विकारों को रच कर, उनके अंशों से विराट् शरीर को उत्पन्न किया, तत्पश्चात् उसमें स्वयं प्रवेश किया था।

# द्वाविंशः श्लोकः

यमाहुराद्यं पुरुषं सहस्राङ्घ्र्यूरुबाहुकम् ।
यत्र विश्व इमे लोकाः सविकासं समासते ॥२२॥

पदच्छेद—

यम् आहुः आद्यम् पुरुषम्, सहस्र अङ्घ्रि-ऊरु बाहुकम् ।
यत्र विश्वे इमे लोकाः, सविकासम् समासते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यम् | १. जिन्हें (हम) | | बाहुकम् । | ५. बाहों से युक्त |
| आहुः | ८. कहते हैं (तथा) | | यत्र | ९. जिसमें |
| आद्यम् | ६. आदि | | विश्वे | ११. सम्पूर्ण |
| पुरुषम्, | ७. पुरुष | | इमे | १०. यह |
| सहस्र | २. हजारों | | लोकाः, | १२. ब्रह्माण्ड |
| अङ्घ्रि | ३. चरणों | | सविकासम् | १३. विस्तार के साथ |
| ऊरु | ४. जाँघों और | | समासते ॥ | १२. स्थित है |

श्लोकार्थ—जिन्हें हम हजारों चरणों, जाँघों और बाहों से युक्त आदि पुरुष कहते हैं तथा जिनमें यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड विस्तार के साथ स्थित है।

## त्रयोविंशः श्लोकः

यस्मिन् दशविधः प्राणः सेन्द्रियार्थेन्द्रियस्त्रिवृत् ।
त्वयेरितो यतो वर्णास्तद्विभूतीर्वदस्व नः ॥२३॥

पदच्छेद—

यस्मिन् दशविधः प्राणः, स इन्द्रिय अर्थ इन्द्रियः त्रिवृत् ।
त्वया ईरितः यतः वर्णाः, तद् विभूतीः वदस्व नः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्मिन् | १. | जिस (विराट् पुरुष) में | त्वया, ईरितः | ८. | भगवान् से, प्रेरणा पाकर |
| दशविधः | २. | दस प्रकार की | यतः | ९. | जिस विराट् पुरुष से |
| प्राणः, | ३. | प्राण वायु | वर्णाः, | १०. | ब्राह्मणादि चारों वर्ण उत्पन्न हुये हैं |
| स | ५. | और | | | |
| इन्द्रिय, अर्थ | ४. | इन्द्रियों के, विषय | तद् | ११. | उस विराट् को |
| इन्द्रियः | ६. | इन्द्रियाँ (तथा) | विभूतीः | १२. | ब्राह्मादि विभूतियों को |
| त्रिवृत् । | ७. | त्रिविध अन्तःकरण स्थित हैं (तथा) | वदस्व | १४. | बताइयें |
| | | | नः ॥ | १३. | हमें |

श्लोकार्थ—जिस विराट् पुरुष में दस प्रकार की प्राण वायु, इन्द्रियों के विषय और इन्द्रियाँ तथा त्रिविध अन्तःकरण स्थित हैं तथा भगवान् से प्रेरणा पाकर जिस विराट् पुरुष से ब्राह्मणादि चारों वर्ण उत्पन्न हुये हैं; उस विराट् की ब्राह्मादि विभूतियों को हमें बताइये ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

यत्र पुत्रैश्च पौत्रैश्च नप्तृभिः सहः गोत्रजैः ।
प्रजा विचित्राकृतय आसन् याभिरिदं ततम् ॥२४॥

पदच्छेद—

यत्र पुत्रैः च पौत्रैः च, नप्तृभिः सह गोत्रजैः ।
प्रजाः विचित्र आकृतयः, आसन् याभिः इदम् ततम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्र | १. | जिस (विराट् शरीर) में | गोत्रजैः । | ७. | कुटुम्बियों के |
| पुत्रैः | २. | पुत्र | प्रजाः | ११. | जीव |
| च | ४. | और | विचित्र | ९. | तरह-तरह के |
| पौत्रैः | ३. | पौत्र | आकृतयः, | १०. | रूप वाले |
| च, | ६. | तथा | आसन् | १२. | विद्यमान हैं |
| नप्तृभिः | ५. | नाती | याभिः | १३. | जिन से |
| सह | ८. | साथ | इदम्,ततम् ॥ | १४. | यह ब्रह्माण्ड, व्याप्त है |

श्लोकार्थ—जिस विराट् शरीर में पुत्र, पौत्र और नाती तथा कुटुम्बियों के साथ तरह-तरह के रूप वाले जीव विद्यमान हैं, जिनसे यह सारा ब्रह्माण्ड व्याप्त है ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

प्रजापतीनां स पतिश्चक्लृपे कान् प्रजापतीन् ।
सर्गांश्चैवानुसर्गांश्च मनून्मन्वन्तराधिपान् ।।२५।।

पदच्छेद—

प्रजापतीनाम् सः पतिः, चक्लृपे कान् प्रजापतीन् ।
सर्गान् च एव अनुसर्गान् च, मनून् मन्वन्तर अधिपान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतीनाम् | १. | ब्रह्मादि प्रजापतियों के | च | ७. | तदनन्तर (आप) |
| सः | ३. | वे भगवान् | एव | १४. | भी (वर्णन करें) |
| पतिः, | २. | स्वामी | अनुसर्गान् | ९. | बाद की सृष्टि |
| चक्लृपे | ६. | उत्पन्न किये | च, | १०. | और |
| कान् | ४. | किन-किन | मनून् | १३. | मनुओं का |
| प्रजापतीन् । | ५. | प्रजापतियों को | मन्वन्तर | ११. | मन्वन्तरों के |
| सर्गान् | ८. | प्रधान सृष्टि | अधिपान् । | १२. | अधिपति |

श्लोकार्थ—ब्रह्मादि प्रजापतियों के स्वामी वे भगवान् किन-किन प्रजापतियों को उत्पन्न किये ? तदनन्तर आप प्रधान सृष्टि, बाद की सृष्टि और मन्वन्तरों के अधिपति मनुओं का भी वर्णन करें ।

# षड्विंशः श्लोकः

एतेषामपि वंशांश्च वंशानुचरितानि च ।
उपर्यधश्च ये लोका भूमेर्मित्रात्मजासते ।।२६।।

पदच्छेद—

एतेषाम् अपि वंशान् च, वंश अनुचरितानि च ।
उपरि अधः च ये लोकाः, भूमेः मित्रात्मज आसते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतेषाम् | २. | इन मनुओं के | उपरि | १०. | ऊपर |
| अपि | ३. | भी | अधः | १२. | नीचे |
| वंशान् | ४. | वंशों का | च | ११. | और |
| च | ५. | और | ये, लोकाः, | १३. | जो, चौदह भुवन |
| वंश | ६. | उनके वंश में उत्पन्न | भूमेः | ९. | पृथ्वी के |
| अनुचरितानि | ७. | राजाओं के चरित्रों का | मित्रात्मज | १. | हे मैत्रेय जी ! |
| च । | ८. | तथा | आसते ।। | १४. | हैं (उनका भी वर्णन करें) |

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! इन मनुओं के भी वंशों का और उनके वंश में उत्पन्न राजाओं के चरित्रों का तथा पृथ्वी के ऊपर और नीचे जो चौदह भुवन हैं, उनका भी वर्णन करें ।

## सप्तविंशः श्लोकः

तेषां संस्थां प्रमाणं च भूर्लोकस्य च वर्णय ।
तिर्यङ्मानुषदेवानां सरीसृपपतत्त्रिणाम् ।
वद नः सर्गसंव्यूहं गार्भस्वेदद्विजोद्भिदाम् ॥२७॥

पदच्छेद— तेषाम् संस्थाम् प्रमाणम् च, भूर्लोकस्य च वर्णय ।
तिर्यक् मानुष देवानाम्, सरीसृप पतत्त्रिणाम् ।
वद नः सर्ग संव्यूहम्, गार्भ स्वेद द्विज उद्भिदाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषाम् | १. | उन लोकों के | सरीसृप | ११. | रेंगने वाले सांप |
| संस्थाम् | ६. | स्थिति का | पतत्त्रिणाम्, | १२. | पक्षियों तथा |
| प्रमाणम् | ४. | विस्तार | वद | २०. | बतावें |
| च, | ५. | और | नः | १९. | हमें |
| भूर्लोकस्य | ३. | पृथ्वी लोक के | सर्ग | १७. | सृष्टि का |
| च | २. | तथा | संव्यूहम्, | १८. | रहस्य |
| वर्णय । | ७. | वर्णन करें | गार्भ | १३. | जरायुज |
| तिर्यक् | ८. | पशु-पक्षी | स्वेद | १४. | स्वेदज |
| मानुष | ९. | मनुष्य | द्विज | १५. | अण्डज (और) |
| देवानाम्, | १०. | देवताओं के (और) | उद्भिदाम् ॥ | १६. | उद्भिज्ज (जीवों की) |

श्लोकार्थ—उन लोकों के तथा पृथ्वी लोक के विस्तार और स्थिति का वर्णन करें। पशु-पक्षी, मनुष्य, देवताओं के और रेंगने वाले सांप, पक्षियों तथा जरायुज, स्वेदज, अण्डज और उद्भिज्ज जीवों की सृष्टि का रहस्य हमें बतावें।

## अष्टाविंशः श्लोकः

गुणावतारैर्विश्वस्य सर्गस्थित्यप्ययाश्रयम् ।
सृजतः श्रीनिवासस्य व्याचक्ष्वोदारविक्रमम् ॥२८॥

पदच्छेद— गुण अवतारैः विश्वस्य, सर्ग स्थिति अप्यय आश्रयम् ।
सृजतः श्रीनिवासस्य, व्याचक्ष्व उदार विक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गुण | ८. | प्रधान | आश्रयम् । | ६. | के लिये |
| अवतारैः | ९. | अवतार (ब्रह्मा, विष्णु और महादेव की) | सृजतः | १. | सृष्टि करते समय |
| | | | श्रीनिवासस्य, | ७. | भगवान् श्री हरि के |
| विश्वस्य, | २. | संसार की | व्याचक्ष्व | १२. | वर्णन करें |
| सर्ग | ३. | उत्पत्ति | उदार | १०. | कल्याणकारी |
| स्थिति | ४. | पालन (और) | विक्रमम् ॥ | ११. | लीलाओं का |
| अप्यय | ५. | संहार | | | |

श्लोकार्थ—सृष्टि करते समय संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये भगवान् श्री हरि के प्रधान अवतार ब्रह्मा, विष्णु और महादेव की कल्याणकारी लीलाओं का वर्णन करें।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

वर्णाश्रमविभागांश्च रूपशीलस्वभावतः ।
ऋषीणां जन्मकर्मादि वेदस्य च विकर्षणम् ॥२९॥

पदच्छेद—

वर्ण आश्रम विभागान् च, रूप शील स्वभावतः ।
ऋषीणाम् जन्म कर्म आदि, वेदस्य च विकर्षणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वर्ण | ५. | ब्रह्माणादि वर्णों और | ऋषीणाम् | ८. | ऋषियों की |
| आश्रम | ६. | ब्रह्मचर्यादि आश्रमों के | जन्म | ९. | उत्पत्ति और |
| विभागान | ७. | विभागों को | कर्म | १०. | (उनके) कार्य कलाप |
| च, | ३. | और | आदि, | ११. | इत्यादि को |
| रूप | १. | (आप हमें) स्वरूप | वेदस्य | १३. | वेद के |
| शील | २. | आचरण | च | १२. | तथा |
| स्वभावतः । | ४. | स्वभाव के अनुसार | विकर्षणम्॥ | १४. | विस्तार को (बतावें) |

श्लोकार्थ—आप हमें स्वरूप, आचरण और स्वभाव के अनुसार ब्राह्मणादि वर्णों और ब्रह्मचर्यादि आश्रमों के विभागों को, ऋषियों की उत्पत्ति और उनके कार्य-कलाप इत्यादि को तथा वेद के विस्तार को बतावें ।

# त्रिंशः श्लोकः

यज्ञस्य च वितानानि योगस्य च पथः प्रभो ।
नैष्कर्म्यस्य च सांख्यस्य तन्त्रं वा भगवत्स्मृतम् ॥३०॥

पदच्छेद—

यज्ञस्य च वितानानि, योगस्य च पथः प्रभो ।
नैष्कर्म्यस्य च सांख्यस्य, तन्त्रम् वा भगवत् स्मृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यज्ञस्य | २. | यज्ञ के | नैष्कर्म्यस्य | ८. | निष्काम कर्म |
| च | ४. | और | च | ९. | और |
| वितानानि, | ३. | विस्तार को | सांख्यस्य, | १०. | सांख्य शास्त्र को |
| योगस्य | ५. | योग के | तन्त्रम् | १४. | नारद पाञ्चरात्र संहिता को |
| च | ७. | तथा | वा | ११. | एवम् |
| पथः | ६. | मार्ग को | भगवत् | १२. | भगवान् के द्वारा |
| प्रभो । | १. | हे स्वामिन् ! (आप) | स्मृतम् ॥ | १३. | कही गई |

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आप यज्ञ के विस्तार को और योग के मार्ग तथा निष्काम कर्म और सांख्य शास्त्र को एवं भगवान् के द्वारा कही गई नारद पाञ्चरात्र संहिता को भी बतावें ।

## एकत्रिंशः श्लोकः

पाखण्डपथवैषम्यं प्रतिलोमनिवेशनम् ।
जीवस्य गतयो याश्च यावतीर्गुणकर्मजाः ॥३१॥

पदच्छेद—

पाखण्ड पथ वैषम्यम्, प्रतिलोम निवेशनम् ।
जीवस्य गतयः याः च, यावतीः गुण कर्मजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पाखण्ड | १. | पाखण्डियों के मत के | जीवस्य | ८. | प्राणियों की |
| पथ | २. | प्रचार से | गतयः | ११. | दशायें हैं (उनका वर्णन करें) |
| वैषम्यम्, | ३ | उत्पन्न होने वाली विषमता | याः, च, | ९. | जैसी, और |
| प्रतिलोम | ४. | नीच वर्ण के पुरुष से उच्च वर्ण की स्त्री में उत्पन्न संतान की | यावतीः | १०. | जितनी |
| | | | गुण | ६. | धर्म |
| | | | कर्मजाः ॥ | ७. | कर्म से उत्पन्न होने वाली |
| निवेशनम् | ५. | स्थिति (और) | | | |

श्लोकार्थ—पाखण्डियों के मत के प्रचार से उत्पन्न होने वाली विषमता, नीचवर्ण के पुरुष से उच्च वर्ण की स्त्री में उत्पन्न सन्तान की स्थिति और धर्म-कर्म से उत्पन्न होने वाली प्राणियों की जैसी और जितनी दशायें हैं, उनका भी वर्णन करें।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

धर्मार्थकाममोक्षाणां निमित्तान्यविरोधतः ।
वार्ताया दण्डनीतेश्च श्रुतस्य च विधिं पृथक् ॥३२॥

पदच्छेद—

धर्म अर्थ काम मोक्षाणाम्, निमित्तानि अविरोधतः ।
वार्तायाः दण्डनीतेः च, श्रुतस्य च विधिम पृथक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्म | १. | धर्म | वार्तायाः | ७. | वाणिज्य |
| अर्थ | २. | अर्थ | दण्डनीतेः | ९. | राजनीति |
| काम | ३. | काम और | च | ८. | और |
| मोक्षाणाम्, | ४. | मोक्ष के | श्रुतस्य | ११. | वेद-शास्त्र के अध्ययन की |
| निमित्तानि | ६. | साधनों को | च | १०. | तथा |
| अविरोधतः । | ५. | परस्पर सहयोगी | विधिम् | १२. | रीति को (भी) |
| | | | पृथक् ॥ | १३. | अलग-अलग (बतावें) |

श्लोकार्थ—धर्म, अर्थ काम और मोक्ष के परस्पर सहयोगी साधनों को, वाणिज्य और राजनीति तथा वेद-शास्त्र के अध्ययन की रीति को भी अलग-अलग बतावें।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

श्राद्धस्य च विधिं ब्रह्मन् पितृणां सर्गमेव च ।
ग्रहनक्षत्रताराणां, कालावयवसंस्थितिम् ॥३३॥

पदच्छेद—

श्राद्धस्य च विधिम् ब्रह्मन्, पितृणाम् सर्गम् एव च ।
ग्रह नक्षत्र ताराणाम्, काल अवयव संस्थितिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्राद्धस्य | २. | श्राद्ध की | च । | ७. | तथा |
| च | ४. | और | ग्रह | १०. | ग्रह |
| विधिम् | ३. | विधि का | नक्षत्र | ११. | नक्षत्र और |
| ब्रह्मन्, | १. | हे परम ज्ञानी शुकदेव जी ! | ताराणाम्, | १२. | तारागणों की |
| पितृणाम् | ५. | पितृगणों की | काल | ८. | काल |
| सर्गम् | ६. | सृष्टि का | अवयव | ९. | चक्र में |
| एव | १४. | भी (वर्णन करें) | संस्थितिम् ॥ | १३. | स्थिति का |

श्लोकार्थ—हे परम ज्ञानी शुकदेव जी ! श्राद्ध की विधि का और पितृगणों की सृष्टि का तथा काल-चक्र में ग्रह, नक्षत्र और तारागणों की स्थिति का भी वर्णन करें ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

दानस्य तपसो वापि यच्चेष्टापूर्तयोः फलम् ।
प्रवासस्थस्य यो धर्मो, यश्च पुंस उतापदि ॥३४॥

पदच्छेद—

दानस्य तपसः वा अपि, यत् च इष्टा पूर्तयोः फलम् ।
प्रवासस्थस्य यः धर्मः, यः च पुंसः उत आपदि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दानस्य, तपसः | १. | दान, तपस्या | फलम् । | ६. | फल है |
| वा | ७. | तथा | प्रवासस्थस्य | ८. | परदेश में गये हुये |
| अपि, | १३. | (उसे) भी | यः, धर्मः, | १०. | जो, धर्म है |
| यत् | ५. | जो | यः | १२. | जो (धर्म है) |
| च | ३. | और | च | १४. | बतावें |
| इष्टा | २. | यज्ञानुष्ठान | पुंसः | ९. | मनुष्य का |
| पूर्तयोः | ४. | कूप आदि के निर्माण का | उत, आपदि ॥ | ११. | अथवा, विपत्ति में |

श्लोकार्थ—दान, तपस्या, यज्ञानुष्ठान और कूप आदि के निर्माण का जो फल है तथा परदेश में गये हुये मनुष्य का जो धर्म है अथवा विपत्ति में जो धर्म है; उसे भी बतावें ।

## पञ्चत्रिंश: श्लोकः

येन वा भगवांस्तुष्येद्धर्मयोनिर्जनार्दनः ।
सम्प्रसीदति वा येषामेतदाख्याहि चानघ ॥३५॥

पदच्छेद—

येन वा भगवान् तुष्येत्, धर्म योनिः जनार्दनः ।
सम्प्रसीदति वा येषाम्, एतद् आख्याहि च अनघ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यन वा | ६. | जिस साधन में | सम्प्रसीदति | १०. | प्रसन्न होते हैं |
| भगवान् | ४. | भगवान् | वा | ८. | तथा |
| तुष्येत्, | ७. | प्रसन्न होते हैं | येषाम् | ९. | जिस पर |
| धर्म | २. | धर्म के | एतद् | ११. | उसे |
| योनिः | ३. | मूल कारण | आख्याहि | १३. | बतावें |
| जनार्दनः । | ५. | जनार्दन | च | १२. | भी |
| | | | अनघ ॥ | १. | हे निष्पाप शुकदेव जी ! |

श्लोकार्थ—हे निष्पाप शुकदेव जी ! धर्म के मूल कारण भगवान् जनार्दन जिस साधन से प्रसन्न होते है तथा जिस पर प्रसन्न होते हैं; उसे भी बतावें ।

## षट्त्रिंश: श्लोकः

अनुव्रतानां शिष्याणां पुत्राणां च द्विजोत्तम ।
अनापृष्टमपि ब्रूयुर्गुरवो दीनवत्सलाः ॥३६॥

पदच्छेद—

अनुव्रतानाम् शिष्याणाम्, पुत्राणाम् च द्विजोत्तम ।
अनापृष्टम् अपि ब्रूयुः, गुरवः दीनवत्सलाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अनुव्रतानाम् | ४. | आज्ञाकारी | अनापृष्टम् | ८. | बिना पूछे |
| शिष्याणाम्, | ५. | शिष्यों को | अपि | ९. | ही (हित की बात) |
| पुत्राणाम् | ७. | पुत्रों को | ब्रूयुः, | १०. | बताते हैं |
| च | ६. | और | गुरवः | ३. | गुरुजन |
| द्विजोत्तम । | १. | हे मुनिवर ! | दीनवत्सलाः ॥ | २. | दीन-दुखियों के प्रेमी |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! दीन दुःखियों के प्रेमी गुरुजन आज्ञाकारी शिष्यों को और पुत्रों को बिना पूछे ही हित की बात बताते हैं ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

तत्त्वानां भगवंस्तेषां कतिधा प्रतिसंक्रमः ।
तत्रेमं क उपासीरन् क उ स्विदनुशेरते ।।३७।।

पदच्छेद—

तत्त्वानाम् भगवन् तेषाम्, कतिधा प्रतिसंक्रमः ।
तत्र इमम कः उपासीरन्, कः उ स्वित् अनुशेरते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्त्वानाम् | ३. | महदादि तत्त्वों में | इमम् | ८. | इन भगवान् की |
| भगवन् | १. | हे भगवन् ! | कः | ७. | कौन तत्त्व |
| तेषाम्, | २. | उन | उपासीरन्, | ६. | सेवा करता है |
| कतिधा | ४. | कितने प्रकार की | कः | ११. | कौन तत्त्व |
| प्रतिसंक्रमः। | ५. | अवस्थायें हैं | उ स्वित् | १०. | तथा |
| तत्र | ६. | उन में | अनुशेरते ।। | १२. | विलीन हो जाता है |

श्लोकार्थ--हे भगवन् ! उन महदादि तत्त्वों में कितने प्रकार की अवस्थाये हैं। उनमें कौन तत्त्व इन भगवान् की सेवा करता है तथा कौन तत्त्व विलीन हो जाता है।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

पुरुषस्य च संस्थानं स्वरूपं वा परस्य च ।
ज्ञानं च नैगमं यत्तद् गुरुशिष्यप्रयोजनम् ।।३८।।

पदच्छेद—

पुरुषस्य च संस्थानम्, स्वरूपम् वा परस्य च ।
ज्ञानम् च नैगमम् यत् तद्, गुरु शिष्य प्रयोजनम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरुषस्य | २. | जीव का | ज्ञानम्, | ६. | ज्ञान, और |
| च | १. | तथा | च नैगमम् | ८. | उपनिषद् का |
| संस्थानम्, | ३. | आकार-प्रकार | यत् | १२. | जो |
| स्वरूपम् | ६. | स्वरूप | तद् | १४. | उसका (भी वर्णन करें) |
| वा | ४. | और | गुरु | १०. | गुरु |
| परस्य | ५. | परमेश्वर का | शिष्य | ११. | शिष्य का |
| च। | ७. | तथा | प्रयोजनम् ।। | १३. | सम्बन्ध है |

श्लोकार्थ—तथा जीव का आकार-प्रकार और परमेश्वर का स्वरूप तथा उपनिषद् का ज्ञान और गुरु-शिष्य का जो म्सवन्ध है; उसका भी वर्णन करें।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

निमित्तानि च तस्येह प्रोक्तान्यनघ सूरिभिः ।
स्वतो ज्ञानं कुतः पुंसां भक्तिर्वैराग्यमेव वा ।।३९।।

पदच्छेद—

निमित्तानि च तस्य इह, प्रोक्तानि अनघ सूरिभिः ।
स्वतः ज्ञानम् कुतः पुंसाम् भक्तिः वैराग्यम् एव वा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निमित्तानि | ५. | उपाय | स्वतः | १३. | अपने आप |
| च | ७. | नहीं तो | ज्ञानम् | ९. | ज्ञान |
| तस्य | ४. | उस (परम पुरुषार्थ मोक्ष) के | कुतः | १५ | कैसे (हो सकता है) |
| इह, | २. | इस संसार में | पुंसाम्, | ८. | मनुष्यों को |
| प्रोक्तानि | ६. | बताये गये हैं | भक्तिः | १०. | भक्ति |
| अनघ | १. | हे पवित्रात्मन् ! | वैराग्यम् | १२. | वैराग्य |
| सूरभिः । | ३. | विद्वानों के द्वारा | एव | १४. | ही |
| | | | वा ।। | ११. | अथवा |

श्लोकार्थ—हे पवित्रात्मन् ! इस संसार में विद्वानों के द्वारा उस परम पुरुषार्थ मोक्ष के उपाय बताये गये हैं, नही तो मनुष्यों को ज्ञान, भक्ति अथवा वैराग्य अपने आप ही कैसे हो सकता है ?

# चत्वारिंशः श्लोकः

एतान्मे पृच्छतः प्रश्नान् हरेः कर्मविवित्सया ।
ब्रूहि मेऽज्ञस्य मित्रत्वादजया नष्टचक्षुषः ।।४०।।

पदच्छेद—

एतान् मे पृच्छतः प्रश्नान्, हरेः कर्म विवित्सया ।
ब्रूहि मे अज्ञस्य मित्रत्वात्, अजया नष्ट चक्षुषः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतान् | १२. | इन | ब्रूहि | १४. | उत्तर देवें |
| मे | १०. | मेरे द्वारा | मे | ४. | मुझ |
| पृच्छतः | ११. | पूछे गये | अज्ञस्य | ५. | अज्ञानी के (आप) |
| प्रश्नान्, | १३. | प्रश्नों का | मित्रत्वात्, | ६. | सुहृद हैं (अतः) |
| हरेः | ७. | श्रीहरि की | अजया | १. | माया-मोह के कारण |
| कर्म | ८. | लीला | नष्ट | ३. | समाप्त हो गई है |
| विवित्सया । | ९. | जानने की इच्छा से | चक्षुषः ।। | २. | (मेरी) ज्ञान दृष्टि |

श्लोकार्थ—माया-मोह के कारण मेरी ज्ञान दृष्टि समाप्त हो गई है। मुझ अज्ञानी के आप सुहृद हैं, अतः श्रीहरि की लीला जानने की इच्छा से मेरे द्वारा पूछे गये इन प्रश्नों का उत्तर देवें।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ ।
जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ॥४१॥

पदच्छेद—

सर्वे वेदाः च यज्ञाः च, तपः दानानि च अनघ ।
जीव अभय प्रदानस्य, न कुर्वीरन् कलाम् अपि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वे, वेदाः | २. | चारों, वेद | जीव, अभय | ७. | जीवों को, मोक्ष पद |
| च, यज्ञाः | ३. | और, यज्ञ | प्रदानस्य, | ८. | दिलाने वाले साधन के |
| च, तपः | ४. | तथा, तपस्या | न | ११. | नहीं |
| दानानि | ६. | दान आदि कर्म | कुर्वीरन् | १२. | बराबरी कर सकते हैं |
| च | ५. | एवम् | कलाम् | ९. | सोलहवें भाग की |
| अनघ । | १. | हे पुण्यात्मन् ! | अपि ॥ | १०. | भी |

श्लोकार्थ—हे पुण्यात्मन् ! चारों वेद और यज्ञ तथा तपस्या एवं दान आदि कर्म जीवों को मोक्ष पद दिलाने वाले साधन के सोलहवें भाग की भी बराबरी नहीं कर सकते हैं ।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

स इत्थमापृष्टपुराणकल्पः, कुरुप्रधानेन मुनिप्रधानः ।
प्रवृद्धहर्षो भगवत्कथायां, सञ्चोदितस्तं प्रहसन्निवाह ॥४२॥

पदच्छेद—

सः इत्थम् आपृष्ट पुराण कल्पः, कुरु प्रधानेन मुनि प्रधानः ।
प्रवृद्ध हर्षः भगवत् कथायाम्, सञ्चोदितः तम् प्रहसन् इव आह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १४. | मैत्रेय जी | प्रवृद्ध | १२. | अत्यन्त |
| इत्थम् | ५. | इस प्रकार | हर्षः | १३. | प्रसन्न होते हुये |
| आपृष्ट | ८. | पूछी थी | भगवत् | ९. | भगवान् श्री हरि की |
| पुराण | ६. | पुराणों की | कथायाम्, | १०. | कथा सुनाने की |
| कल्पः, | ७. | कथा | सञ्चोदितः | ११. | प्रार्थना से |
| कुरु | १. | कुरुवंश में | तम् | १७. | उन विदुर जी से |
| प्रधानेन | २. | प्रधान विदुर जी ने | प्रहसन् | १५. | मुसकराते हुये |
| मुनि | ४. | महर्षि मैत्रेय से | इव | १६. | से |
| प्रधानः । | ३. | मुनियों में श्रेष्ठ | आह ॥ | १८. | बोले |

श्लोकार्थ—कुरुवंश में प्रधान विदुर जी ने मुनियों में श्रेष्ठ महर्षि मैत्रेय से इस प्रकार पुराणों की कथा पूछी थी । तदनन्तर भगवान् श्री हरि की कथा सुनाने की प्रार्थना से अत्यन्त प्रसन्न होते हुये मैत्रेय जी मुसकराते हुये से उन विदुर जी से बोले ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे सप्तमः अध्याय ॥ ७ ॥

अथ अष्टमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

सत्सेवनीयो बत पूरुवंशो यल्लोकपालो भगवत्प्रधानः ।
बभूविथेहाजितकीर्तिमालां पदे पदे नूतनयस्यभीक्ष्णम् ॥१॥

पदच्छेद— सत् सेवनीयः बत पूरुवंशः, यद् लोकपालः भगवत् प्रधानः ।
बभूविथ इह अजित कीर्ति मालाम्, पदे-पदे नूतनयसि अभीक्ष्णम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत् | ३. | संतों के | बभूविथ | ८. | जन्म लिये हैं (आप) |
| सेवनीयः | ४. | सेवा करने योग्य हैं | इह | ९. | इस संसार में |
| बत | १. | अहोभाग्य है कि | अजित | १०. | भगवान् श्री हरि की |
| पूरुवंशः, | २. | राजा पूरु का वंश | कीर्ति,मालाम्, | ११. | यशोमयी, माला को |
| यद् | ५. | क्योंकि (उसमें) | पदे-पदे | १२. | पग-पग पर |
| लोकपालः | ७. | (साक्षात्) यमराज ही | नूतनयसि | १४. | नई बना रहे हैं |
| भगवत्,प्रधानः। | ६. | भगवान् के, प्रधान भक्त(आप) | अभीक्ष्णम् ॥ | १३. | नित |

श्लोकार्थ—अहो भाग्य है कि राजा पूरु का वंश संतों के सेवा करने योग्य है, क्योंकि उसमें भगवान् के प्रधान भक्त आप साक्षात् यमराज ही जन्म लिये हैं। आप इस संसार में भगवान् श्री हरि की यशोमयी माला को पग-पग पर नित नई बना रहे हैं।

## द्वितीयः श्लोकः

सोऽहं नृणां क्षुल्लसुखाय दुःखं महद्गतानां विरमाय तस्य ।
प्रवर्तये भागवतं पुराणं यदाह साक्षाद्भगवानृषिभ्यः ॥२॥

पदच्छेद— सः अहम् नृणाम् क्षुल्ल सुखाय दुःखम्, महत् गतानाम् विरमाय तस्य ।
प्रवर्तये भागवतम् पुराणम्, यद् आह साक्षात् भगवान् ऋषिभ्यः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः, अहम् | ७. | अब, मैं | प्रवर्तये | १०. | प्रारम्भ करता हूँ |
| नृणाम् | ४. | मनुष्यों के | भागवतम्, | ८. | श्रीमद्भागवत |
| क्षुल्ल सुखाय | १. | क्षुद्र विषय सुख के लिये | पुराणम्, | ९. | महापुराण की (कथा) |
| दुःखम्, महत् | २. | महान्, दुःख में | यद् | ११. | जिसे |
| गतानाम् | ३. | पड़े हुये | आह | १४. | कहा था |
| विरमाय | ६. | विनाश करने के लिये | साक्षात्,भगवान् | १२. | स्वयं, भगवान् अनन्त ने |
| तस्य । | ५. | उस दुःख का | ऋषिभ्यः ॥ | १३. | सनकादि ऋषियों से |

श्लोकार्थ—क्षुद्र विषय सुख के लिये महान् दुःख में पड़े हुये मनुष्यों के उस दुःख का विनाश करने के लिये अब मैं श्रीमद्भागवत महापुराण की कथा प्रारम्भ करता हूँ, जिसे स्वयं भगवान् अनन्त ने सनकादि ऋषियों से कहा था।

# तृतीयः श्लोकः

आसीनमुर्व्यां भगवन्तमाद्यं सङ्कर्षणं देवमकुण्ठसत्त्वम् ।
विवित्सवस्तत्त्वमतः परस्य कुमारमुख्या मुनयोऽन्वपृच्छन् ॥३॥

पदच्छेद—

आसीनम् उर्व्याम् भगवन्तम् आद्यम्, सङ्कर्षणम् देवम् अकुण्ठ सत्त्वम् ।
विवित्सवः तत्त्वम् अतः परस्य, कुमार मुख्याः मुनयः अन्वपृच्छन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आसीनम् | ७. | बैठे हुये थे | विवित्सवः | ११. | जानने की इच्छा से |
| उर्व्याम् | ६. | पाताल लोक में | तत्त्वम् | १०. | स्वरूप को |
| भगवन्तम् | ४. | भगवान् | अतः | ८. | उन से |
| आद्यम्, | २. | आदि | परस्य, | ९. | परमात्मा के |
| सङ्कर्षणम् | ५. | अनन्त | कुमार, मुख्याः | १२. | सनकादि, प्रधान |
| देवम् | ३. | देव | मुनयः | १३. | ऋषियों ने |
| अकुण्ठ, सत्त्वम् । | १. | अखण्ड, ज्ञान वाले | अन्वपृच्छन् ॥ | १४. | प्रश्न किया था |

श्लोकार्थ—अखण्ड ज्ञान वाले, आदि देव भगवान् अनन्त पाताल लोक में बैठे हुये थे। उन से परमात्मा के स्वरूप को जानने की इच्छा से सनकादि प्रधान ऋषियों ने प्रश्न किया था।

# चतुर्थः श्लोकः

स्वमेव धिष्ण्यं बहु मानयन्तं यं वासुदेवाभिधमामनन्ति ।
प्रत्यग्धृताक्षाम्बुजकोशमीषदुन्मीलयन्तं विबुधोदयाय ॥४॥

पदच्छेद—

स्वम् एव धिष्ण्यम् बहु मानयन्तम्, यम् वासुदेव अभिधम् आमनन्ति ।
प्रत्यम् धृत अक्ष अम्बुज कोशम् ईषत्, उन्मीलयन्तम् विबुध उदयाय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वम् | १. | (वे) अपने | प्रत्यम् धृत | ९. | बिल्कुल बन्द किये हुये |
| एव | ३. | ही | अक्ष | १०. | (अपने) नेत्रों को |
| धिष्ण्यम् | २. | आधार परमात्मा की | अम्बुज, कोशम् | ८. | कमल, कोश के समान |
| बहु, मानयन्तम्, | ४. | मानसिक, पूजा कर रहे थे | ईषत्, | १३. | कुछ, |
| यम्, वासुदेव | ५. | जिन्हें, वासुदेव | उन्मीलयन्तम् | १४. | खोल कर (देखा) |
| अभिधम् | ६. | नाम से | विबुध | ११. | ज्ञानी जनों के |
| आमनन्ति । | ७. | जाना जाता है (उन्होंने) | उदयाय ॥ | १२. | आनन्द के लिये |

श्लोकार्थ—वे अपने आधार परमात्मा की ही मानसिक पूजा कर रहे थे, जिन्हें वासुदेव नाम से जाना जाता है। उन्होंने उस समय कमल कोश के समान बिल्कुल बन्द किये हुये अपने नेत्रों को ज्ञानी जनों के आनन्द के लिये कुछ खोल कर देखा।

# पञ्चमः श्लोकः

स्वर्धुन्युदार्द्रैः स्वजटाकलापैरुपस्पृशन्तश्चरणोपधानम् ।
पद्मं यदर्चन्त्यहिराजकन्याः सप्रेम नानाबलिभिर्वरार्थाः ॥५॥

पदच्छेद —

स्वर्धुनी उद आर्द्रैः स्व जटा कलापैः, उपस्पृशन्तः चरण उपधानम् ।
पद्मम् यद् अर्चन्ति अहिराज कन्याः, सप्रेम नाना बलिभिः वरार्थाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| स्वर्धुनी | १. (उन मुनियों ने) गंगा जी के | पद्मम् | ७. (उस) कमल का |
| उद, आर्द्रैः | २. जल से, गीले | यद्, अर्चन्ति | १४. जिसकी, पूजा करती हैं |
| स्व, जटा | ३. अपने, जटा | अहिराज | ९. नागराज की |
| कलापैः, | ४. जूट से | कन्याः, | १०. कुमारियाँ |
| उपस्पृशन्तः | ८. स्पर्श किया | सप्रेम | १३. प्रेमपूर्वक |
| चरण | ५. उनके चरणों की | नाना, बलिभिः | १२. अनेकों; उपहारों से |
| उपधानम् । | ६. चौकी के रूप में स्थित | वरार्थाः ॥ | ११. मनोरथ की प्राप्ति के लिये |

श्लोकार्थ—उन मुनियों ने गंगा जी के जल से गीले अपने जटा-जूट से उनके चरणों की चौकी के रूप में स्थित उस कमल का स्पर्श किया, नागराज की कुमारियाँ मनोरथ की प्राप्ति के लिये अनेकों उपहारों से प्रेमपूर्वक जिसकी पूजा करती हैं।

# षष्ठः श्लोकः

मुहुर्गृणन्तो वचसानुरागस्खलत्पदेनास्य कृतानि तज्ज्ञाः ।
किरीटसाहस्रमणिप्रवेकप्रद्योतितोद्दामफणासहस्रम् ॥६॥

पदच्छेद—

मुहुः गृणन्तः वचसा अनुराग, स्खलत् पदेन अस्य कृतानि तज्ज्ञाः ।
किरीट साहस्र मणि प्रवेक, प्रद्योतित उद्दाम फणा सहस्रम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| मुहुः | ६. बार-बार | किरीट | ११. मुकुटों की |
| गृणन्तः | ७. गान कर रहे थे (उस समय) | साहस्र | १०. हजारों |
| वचसा | ५. वाणी से (उनका) | मणि | १२. मणियों की |
| अनुराग, | ३. प्रेम के कारण | प्रवेक, | १३. किरणों से |
| स्खलत्, पदेन | ४. गद्‌गद, अक्षरों वाली | प्रद्योतित | १४. चमक रहे थे |
| अस्य, कृतानि | १. उनकी, लीलाओं के | उद्दाम | ८. (उनके) उठे हुये |
| तज्ज्ञाः । | २. जानकार मुनिगण | फणा, सहस्रम् ॥ | ९. हजारों, फन |

श्लोकार्थ—उनकी लीलाओं के जानकार, मुनिगण प्रेम के कारण गद्‌गद अक्षरों वाली वाणी से उनका बार-बार यशोगान कर रहे थे। उस समय उनके उठे हुये हजारों फन हजारों मुकुटों की मणियों की किरणों से चमक रहे थे।

## सप्तमः श्लोकः

प्रोक्तं किलैतद्भगवत्तमेन निवृत्तिधर्माभिरताय तेन ।
सनत्कुमाराय स चाह पृष्टः सांख्यायनायाङ्ग धृतव्रताय ॥७॥

पदच्छेद—

प्रोक्तम् किल एतद् भगवत्तमेन, निवृत्ति धर्म अभिरताय तेन ।
सनत्कुमाराय सः च आह पृष्टः, सांख्यायनाय अङ्ग धृत व्रताय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रोक्तम्, किल | ७. | कहा था, यह प्रसिद्ध है | सः | १०. | उन सनकादिकों ने |
| एतद् | ६. | यह भागवत पुराण | च | ८. | तदनन्तर |
| भगवत्तमेन, | २. | भगवान् अनन्त ने | आह | १४. | सुनाया था |
| निवृत्ति, धर्म | ३. | निष्काम, धर्म में | पृष्टः, | १३. | पूछने पर (यह पुराण) |
| अभिरताय | ४. | परायण | सांख्यायनाय | १२. | सांख्यायन ऋषि को |
| तेन । | १. | उन | अङ्ग | ९. | हे तात ! |
| सनत्कुमाराय | ५. | सनत् कुमार जी से | धृत, व्रताय ॥ | ११. | कठिन व्रत, करने वाले |

श्लोकार्थ—उन भगवान् अनन्त ने निष्काम धर्म में परायण सनत्कुमार जी से यह भागवत पुराण कहा था, यह प्रसिद्ध है । तदनन्तर हे तात ! उन सनकादिकों ने कठिन व्रत करने वाले सांख्यायन ऋषियों को पूछने पर यह पुराण सुनाया था ।

## अष्टमः श्लोकः

सांख्यायनः पारमहंस्यमुख्यो विवक्षमाणो भगवद्विभूतीः ।
जगाद सोऽस्मद्गुरवेऽन्विताय पराशरायाथ बृहस्पतेश्च ॥८॥

पदच्छेद—

सांख्यायनः पारमहंस्य मुख्यः, विवक्षणमाणः भगवत् विभूतीः ।
जगाद सः अस्मद् गुरवे अन्विताय, पराशराय अथ बृहस्पतेः च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सांख्यायनः | ४. | सांख्यायन ऋषि ने | सः | ३. | उन |
| पारमहंस्य | १. | परम हंसों में | अस्मद्, गुरवे | ८. | हमारे, गुरु (और अपने) |
| मुख्यः, | २. | प्रधान | अन्विताय, | ९. | आज्ञाकारी शिष्य |
| विवक्षमाणः | ७. | कहने की इच्छा में | पराशराय | १०. | पराशर मुनि को |
| भगवत् | ५. | भगवान् की | अथ | १३. | यह कथा |
| विभूतीः । | ६. | लीलाओं को | बृहस्पतेः | १२. | बृहस्पति जी को |
| जगाद | १४. | सुनायी | च ॥ | ११. | तथा |

श्लोकार्थ—परमहंसों में प्रधान उन सांख्यायन ऋषि ने भगवान् की लीलाओं को कहने की इच्छा से हमारे गुरु और अपने आज्ञाकारी शिष्य पराशर मुनि को तथा बृहस्पति जी को यह कथा सुनायी थी ।

# नवमः श्लोकः

प्रोवाच मह्यं स दयालुरुक्तो मुनिः पुलस्त्येन पुराणमाद्यम् ।
सोऽहं तवैतत्कथयामि वत्स श्रद्धालवे नित्यमनुव्रताय ॥९॥

पदच्छेद—

प्रोवाच मह्यम् सः दयालुः उक्तः, मुनिः पुलस्त्येन पुराणम् आद्यम् ।
सः अहम् तव एतत् कथयामि ,वत्स, श्रद्धालवे नित्यम् अनुव्रताय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रोवाच | ९. | सुनाया था | आद्यम् । | ६. | (यह) श्रीमद्भागवत |
| मह्यम् | ८. | मुझे | सः, अहम् | ११. | अब, मैं |
| सः | २. | उन | तव, एतत् | १५. | तुम्हें, यह |
| दयालुः | १. | कृपालु | कथयामि | १६. | सुना रहा हूँ |
| उक्तः, | ५. | कहने पर | वत्स, | १०. | हे तात ! |
| मुनिः | ३. | पराशर मुनि ने | श्रद्धालवे | १२. | श्रद्धा रखने वाले (और) |
| पुलस्त्येन | ४. | पुलस्त्य जी के | नित्यम् | १३. | सदा |
| पुराणम् | ७. | पुराण | अनुव्रताय ॥ | १४. | आज्ञाकारी |

श्लोकार्थ—कृपालु उन पराशर मुनि ने पुलस्त्य जी के कहने पर यह श्रीमद्भागवत पुराण मुझे सुनाया था । हे तात ! अब मैं श्रद्धा रखने वाले और सदा आज्ञाकारी तुम्हें यह सुना रहा हूँ ।

# दशमः श्लोकः

उदाप्लुतं विश्वमिदं तदाऽऽसीद् यन्निद्रयामीलितदृङ् न्यमीलयत् ।
अहीन्द्रतल्पेऽधिशयान एकः कृतक्षणः स्वात्मरतौ निरीहः ॥१०॥

पदच्छेद—

उद् आप्लुतम् विश्वम् इदम् तदा आसीत्, यद् निद्रया अमीलित दृक् न्यमीलयत् ।
अहीन्द्र तल्पे अधिशयानः एकः, कृत क्षणः स्वात्म रतौ निरीहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उद्, आप्लुतम् | ४. | जल में, डूबा हुआ | न्यमीलयत् । | १४. | (नेत्रों को) बन्द किये हुये थे |
| विश्वम् | ३. | ब्रह्माण्ड | अहीन्द्र, तल्पे | १०. | सर्पराज की, शय्या पर |
| इदम् | २. | यह (सम्पूर्ण) | अधिशयानः | १२. | सोये हुये |
| तदा | १. | सृष्टि के पूर्व | एकः, | ११. | अकेले |
| आसीत्, यद् | ५. | था, उसमें | कृत क्षणः | ८. | तल्लीन (और) |
| निद्रया | १३. | योग निद्रा से | स्वात्मरतौ | ७. | आत्मानन्द में |
| अमीलित, दृक् | ६. | अखण्ड, ज्ञान वाले | निरीहः ॥ | ९. | इच्छा से रहित (परमात्मा) |

श्लोकार्थ—सृष्टि के पूर्व यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जल में डूबा हुआ था । उसमें अखण्ड ज्ञान वाले, आत्मानन्द में तल्लीन और इच्छा से रहित परमात्मा सर्पराज की शय्या पर अकेले सोये हुये योग-निद्रा से नेत्रों को बन्द किये हुये थे ।

## एकादशः श्लोकः

सोऽन्तःशरीरेऽर्पितभूतसूक्ष्मः कालात्मिकां शक्तिमुदीरयाणः ।
उवास तस्मिन् सलिले पदे स्वे यथानलो दारुणि रुद्धवीर्यः ।।११।।

पदच्छेद—

सः अन्तः शरीरे अर्पित भूत सूक्ष्मः, कालात्मिकाम् शक्तिम् उदीरयाणः ।
उवास तस्मिन् सलिले पदे स्वे, यथा अनलः दारुणि रुद्ध वीर्यः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. | उस (परमात्मा) ने | उवास | १६. | निवास किया था |
| अन्तः, शरीरे | ६. | (अपने) शरीर के, अन्दर | तस्मिन्,सलिले | १५. | उस, जल में |
| अर्पित | ९. | लीन करके (तथा) | पदे | १४. | आश्रय |
| भूत | ७. | पंच महाभूतों और | स्वे, | १३. | अपने |
| सूक्ष्मः, | ८. | सूक्ष्म शरीरों को | यथा, अनलः | १ | जैसे, अग्नि |
| कालात्मिकाम् | १०. | काल स्वरूप | दारुणि | २. | लकड़ी में |
| शक्तिम् | ११. | शक्ति को | रुद्ध | ४. | छिपाये रहता है (उसी प्रकार) |
| उदीरयाणः । | १२. | जाग्रत रखते हुये | वीर्यः ।। | ३. | अपनी शक्ति को |

श्लोकार्थ—जैसे अग्नि लकड़ी में अपनी शक्ति को छिपाये रहता है, उसी प्रकार उस परमात्मा ने अपने शरीरे के अन्दर पंचमहाभूतों और सूक्ष्म शरीरों को लीन करके तथा काल-स्वरूप शक्ति को जाग्रत रखते हुये अपने आश्रय उस जल में निवास किया था ।

## द्वादशः श्लोकः

चतुर्युगानां च सहस्रमप्सु स्वपन् स्वयोदीरितया स्वशक्त्या ।
कालाख्ययाऽऽसादितकर्मतन्त्रो लोकानपीतान्ददृशे स्वदेहे ।।१२।।

पदच्छेद—

चतुर्युगानाम् च सहस्रम् अप्सु, स्वपन् स्वया उदीरितया स्व शक्त्या ।
काल आख्यया आसादित कर्म तन्त्रः, लोकान् अपीतान् ददृशे स्व देहे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चतुर्युगानाम् | २. | चतुर्युगों तक | काल, आख्यया | ५. | काल, नाम की |
| च | ४. | पश्चात् (परमात्मा) ने | आसादित | १०. | प्राप्त करके |
| सहस्रम् | १. | एक हजार | कर्म तन्त्रः, | ९. | कर्म की अधीनता को |
| अप्सु, स्वपन् | ३. | जल में, सोये रहने के | लोकान् | १३. | सभी लोकों को |
| स्वया | ६. | स्वयं | अपीतान् | १२. | स्थित |
| उदीरितया | ७. | जाग्रत | ददृशे | १४. | देखा था |
| स्व, शक्त्या । | ८. | अपनी, शक्ति के द्वारा | स्व, देहे ।। | ११. | अपने, शरीर में |

श्लोकार्थ—एक हजार चतुर्युगों तक जल में सोये रहने के पश्चात् परमात्मा ने काल नाम की स्वयं जाग्रत अपनी शक्ति के द्वारा कर्म की अधीनता को प्राप्त करके अपने शरीर में स्थित सभी लोकों को देखा था ।

# त्रयोदशः श्लोकः

तस्यार्थसूक्ष्माभिनिविष्टदृष्टेरन्तर्गतोऽर्थो रजसा तनीयान् ।
गुणेन कालानुगतेन विद्धः सूष्यंस्तदाभिद्यत नाभिदेशात् ॥१३॥

पदच्छेद—
तस्य अर्थ सूक्ष्म अभिनिविष्ट दृष्टेः, अन्तर्गतः अर्थः रजसा तनीयान् ।
गुणेन काल अनुगतेन विद्धः, सूष्यन् तदा अभिद्यत नाभि देशात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | १. | उस (परमात्मा) ने | तनीयान् । | १२. | सूक्ष्म |
| अर्थ | ३. | तत्त्वों में | गुणेन | १०. | गुण से |
| सूक्ष्म | २. | सूक्ष्म शरीरादि | काल,अनुगतेन | ८. | काल से, सम्बन्धित (और) |
| अभिनिविष्ट | ५. | लगाई | विद्धः, | ११. | युक्त |
| दृष्टेः, | ४. | (अपनी) दृष्टि | सूष्यन् | १४. | उत्पन्न होकर |
| अन्तर्गतः | ७. | (उनके) अन्दर स्थित | तदा | ६. | उस समय |
| अर्थः | १३. | तत्त्व | अभिद्यत | १६. | बाहर निकला |
| रजसा | ९. | रजो | नाभि देशात् ॥ | १५ | नाभि स्थान से |

श्लोकार्थ—उस परमात्मा ने सूक्ष्म शरीरादि तत्त्वों में अपनी दृष्टि लगाई । उस समय उनके अन्दर स्थित काल से सम्बन्धित और रजोगुण से युक्त सूक्ष्म तत्त्व उत्पन्न होकर नाभि स्थान से बाहर निकला ।

# चतुर्दशः श्लोकः

स पद्मकोशः सहसोदतिष्ठत् कालेन कर्मप्रतिबोधनेन ।
स्वरोचिषा तत्सलिलं विशालं विद्योतयन्नर्क इवात्मयोनिः ॥१४॥

पदच्छेद—
सः पद्म कोशः सहसा उदतिष्ठत्, कालेन कर्म प्रतिबोधनेन ।
स्वरोचिषा तत् सलिलम् विशालम्, विद्योतयन् अर्कः इव आत्मयोनिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | वह | स्वरोचिषा | १०. | अपने प्रकाश से |
| पद्म कोशः | ५. | कमल कोश | तत् | ११. | उस |
| सहसा | ६. | एकाएक | सलिलम् | १३. | जलराशि को |
| उदतिष्ठत्, | ७. | ऊपर उठ गया (तदनन्तर) | विशालम्, | १२. | विशाल |
| कालेन | ३. | काल के प्रभाव से | विद्योतयन् | १४. | प्रकाशित कर दिया |
| कर्म | १. | कर्म को | अर्कः, इव | ९ | सूर्य के, समान |
| प्रतिबोधनेन । | २. | जगाने वाले | आत्मयोनिः ॥ | ८. | स्वयं उत्पन्न (कमल) ने |

श्लोकार्थ—कर्म को जगाने वाले काल के प्रभाव से वह कमल कोश एकाएक ऊपर उठ गया । तदनन्तर स्वयम् उत्पन्न कमल ने सूर्य के समान अपने प्रकाश से उस विशाल जल राशि को प्रकाशित कर दिया ।

# पञ्चदशः श्लोकः

तल्लोकपद्मं स उ एव विष्णुः प्रावीविशत्सर्वगुणावभासम् ।
तस्मिन् स्वयं वेदमयो विधाता स्वयम्भुवं यं स्म वदन्ति सोऽभूत् ॥१५॥

पदच्छेद—
तद् लोक पद्मम् सः उ एव विष्णुः, प्रावीविशत् सर्वगुण अवभासम् ।
तस्मिन् स्वयम् वेदमयः विधाता, स्वयम्भुवम् यम् स्म वदन्ति सः अभूत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद्, लोक | ३. | लोक उत्पादक, उस | स्वयम् | १२. | अपने आप |
| पद्मम्, सः उ | ४. | कमल में, स्वयम् | वेदमयः | ९. | वेद मूर्ति |
| एव | ६. | ही | विधाता, | ११. | ब्रह्मा जी |
| विष्णुः, | ५. | भगवान् विष्णु | स्वयम्भुवम् | १५ | स्वयम्भू |
| प्रावीविशत् | ७. | प्रवेश कर गये (तदनन्तर) | यम् | १४. | जिन्हें (हम) |
| सर्व गुण | १. | सभी गुणों को | स्म वदन्ति | १६. | कहते हैं |
| अवभासम् । | २. | प्रकाशित करने वाले | सः | १०. | वे |
| तस्मिन् | ८. | उसमें से | अभूत् ॥ | १३. | प्रकट हुये |

श्लोकार्थ—सभी गुणों को प्रकाशित करने वाले लोक उत्पादक उस कमल में स्वयं भगवान् विष्णु ही प्रवेश कर गये। तदनन्तर उसमें से वेदमूर्ति वे ब्रह्मा जी अपने आप प्रकट हुये, जिन्हें हम स्वयम्भू कहते हैं।

# षोडशः श्लोकः

तस्यां स चाम्भोरुहकर्णिकायामवस्थितो लोकमपश्यमानः ।
परिक्रमन् व्योम्नि विवृत्तनेत्रश्चत्वारि लेभेऽनुदिशं मुखानि ॥१६॥

पदच्छेद—
तस्याम् सः च अम्भोरुह कर्णिकायाम्, अवस्थितः लोकम् अपश्यमानः ।
परिक्रमन् व्योम्नि विवृत्त नेत्रः, चत्वारि लेभे अनुदिशम् मुखानि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्याम् | १. | उस | परिक्रमन् | १३. | (गर्दन) घुमायी |
| सः | ८. | उन ब्रह्मा जी ने | व्योम्नि | ९. | आकाश में |
| च | ५ | तथा | विवृत्त | ११. | फाड़ कर |
| अम्भोरुह | २. | कमल की | नेत्रः | १०. | आँख |
| कर्णिकायाम्, | ३. | गद्दी पर | चत्वारि | १४. | (उस समय उन्होंने) चार |
| अवस्थितः | ४. | बैठे हुये | लेभे | १६. | प्राप्त किया |
| लोकम् | ६. | लोक को | अनुदिशम् | १२. | चारों दिशाओं में |
| अपश्यमानः । | ७. | नहीं देखते हुये | मुखानि ॥ | १५. | मुखों को |

श्लोकार्थ—उस कमल की गद्दी पर बैठे हुये तथा लोक को नहीं देखते हुये उन ब्रह्मा जी ने आकाश में आँख फाड़ कर चारों दिशाओं में गर्दन घुमायी उस समय उन्होंने चार मुखों को प्राप्त किया।

## सप्तदशः श्लोकः

तस्माद्युगान्तश्वसनावघूर्णजलोर्मिचक्रात्सलिलाद्विरूढम् ।
उपाश्रितः कञ्जमु लोकतत्त्वं नात्मानमद्धाविददादिदेवः ॥१७॥

पदच्छेद—
तस्मात् युगान्त श्वसन अवघूर्ण, जल ऊर्मि चक्रात् सलिलात् विरूढम् ।
उपाश्रितः कञ्जम् उ लोक तत्त्वम् न आत्मानम् अद्धा अविदत् आदिदेवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | ४. | (उठ रही थीं) उस | कञ्जम् उ | ८. | कमल में |
| युगान्त, श्वसन | १. | प्रलय काल की, वायु के | लोक तत्त्वम् | ७. | ब्रह्माण्ड स्वरूप |
| अवघूर्ण, जल | २. | झकोरों से जल में | न | १३. | नहीं |
| ऊर्मि, चक्रात् | ३. | उत्ताल तरंग, मालायें | आत्मानम | ११. | अपने विषय में |
| सलिलात् | ५. | जल से | अद्धा | १२. | कुछ भी |
| विरूढम् । | ६. | ऊपर उठे हुये | अविदत् | १४ | समझ पा रहे थे |
| उपाश्रितः | ९. | बैठे हुये | आदिदेवः ॥ | १०. | ब्रह्मा जी (उस समय) |

श्लोकार्थ—प्रलय काल की वायु के झकोरों से जल में उत्ताल तरंग मालायें उठ रही थीं। उस जल से ऊपर उठे हुये ब्राह्माण्ड स्वरूप कमल में बैठे हुये ब्रह्मा जी उस समय अपने विषय में कुछ भी नहीं समझ पा रहें थे ।

## अष्टादशः श्लोकः

क एष योऽसावहमब्जपृष्ठ एतत्कुतो वाब्जमनन्यदप्सु ।
अस्ति ह्यधस्तादिह किञ्चनैतदधिष्ठितं यत्र सता नु भाव्यम् ॥१८॥

पदच्छेद—
कः एषः यः असौ अहम् अब्ज पृष्ठे, एतत् कुतः वा अब्जम् अनन्यत् अप्सु ।
अस्ति हि अधस्तात् इह किञ्चन एतत्, अधिष्ठितम् यत्र सता नु भाव्यम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | ४. | कौन हूँ | अस्ति | १८. | है |
| एषः, यः | १. | यह, जो | हि | १६. | भली-भाँति |
| असौ, अहम् | ३. | वह, मैं | अधस्तात्, इह | १०. | इसके, नीचे |
| अब्ज, पृष्ठे, | २. | कमल के, ऊपर (बैठा है) | किञ्चन | ११. | कोई न कोई |
| एतत् | ७. | यह | एतत्, | १५. | यह (कमल) |
| कुतः | ९. | कहाँ से (उत्पन्न हुआ) | अधिष्ठितम् | १७. | स्थित |
| वा | ५. | तथा | यत्र | १४. | जिस पर |
| अब्जम् | ८. | कमल | सता, नु | १२. | सद्वस्तु, अवश्य |
| अनन्यत्, अप्सु । | ६. | जल में, आधार रहित | भाव्यम् ॥ | १३. | होनी चाहिये |

श्लोकार्थ—यह जो कमल के ऊपर बैठा है, वह मैं कौन हूँ ? तथा जल में आधार रहित यह कमल कहाँ से उत्पन्न हुआ ? इसके नीचे कोई न कोई सद्वस्तु अवश्य होनी चाहिये, जिस पर यह कमल भली-भाँति स्थित है ।

# एकोनविंशः श्लोकः

स इत्थमुद्वीक्ष्य तदब्जनालनाडीभिरन्तर्जलमाविवेश ।
नार्वाग्गतस्तत्खरनालनालनाभिं विचिन्वंस्तदविन्दताजः ॥१६॥

पदच्छेद—

सः इत्थम् उद्वीक्ष्य तद् अब्ज नाल, नाडीभिः अन्तर्जलम् आविवेश ।
न अर्वाक् गतः तत् खरनाल नाल, नाभिम् विचिन्वन् तद् अविन्दत् अजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वे | अर्वाक्, गतः | ११. | समीप में, जाकर (भी) |
| इत्थम्, उद्वीक्ष्य | १. | इस प्रकार, विचार करके | तत्, खरनाल | ८. | उस, कमल नाल के |
| तद्, अब्ज | ४. | उस, कमल | नाल, नाभिम् | ६. | आधार स्वरूप, नाभि को |
| नाल, नाडीभिः | ५. | नाल के, सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा | विचिन्वन् | १०. | खोजते-खोजते |
| अन्तर्जलम् | ६. | जल के अन्दर | तद् | १२. | उसे |
| आविवेश । | ७. | प्रवेश कर गये (तथा) | अविन्दत् | १४. | पा सके |
| न | १३. | नहीं | अजः ॥ | ३. | ब्रह्मा जी |

श्लोकार्थ—इस प्रकार विचार करके वे ब्रह्मा जी उस कमल नाल के सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा जल के अन्दर प्रवेश कर गये तथा उस कमल नाल के आधार स्वरूप नाभि को खोजते-खोजते समीप में जा कर भी उसे नहीं पा सके ।

# विंशः श्लोकः

तमस्यपारे विदुरात्मसर्गं विचिन्वतोऽभूत्सुमहांस्त्रिणेमिः ।
यो देहभाजां भयमीरयाणः परिक्षिणोत्यायुरजस्य हेतिः ॥२०॥

पदच्छेद—

तमसि अपारे विदुर आत्मसर्गम्, विचिन्वतः अभूत् सुमहान् त्रिणेमिः ॥
यः देहभाजाम् भयम् ईरयाणः, परिक्षिणोति आयुः अजस्य हेतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तमसि | ३. | अन्धकार में | यः | ६. | जो |
| अपारे | २. | घोर | देहभाजाम् | ११. | शरीरधारी जीवों में |
| विदुर | १. | हे विदुर जी ! | भयम्,ईरयाणः, | १२. | भय, उत्पन्न करता हुआ |
| आत्मसर्गम्, | ४. | अपने उत्पत्ति स्थान को | परिक्षिणोति | १४. | (क्रमशः) नष्ट करता है |
| विचिन्वतः | ५. | खोजते-खोजते | आयुः | १३. | (उनकी) आयु को |
| अभूत् | ८. | बीत गया | अजस्य | ६. | ब्रह्मा जी का |
| सुमहान्, त्रिणेमिः। | ७. | बहुत बड़ा, समय | हेतिः ॥ | १०. | समय-चक्र |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! घोर अन्धकार में अपने उत्पत्ति स्थान को खोजते-खोजते ब्रह्मा जी का बहुत बड़ा समय बीत गया, जो समय-चक्र शरीरधारी जीवों में भय उत्पन्न करता हुआ उनकी आयु को क्रमशः नष्ट करता है ।

## एकविंश: श्लोक:

ततो निवृत्तोऽप्रतिलब्धकामः स्वधिष्ण्यमासाद्य पुनः स देवः ।
शनैर्जितश्वासनिवृत्तचित्तो न्यषीददारूढसमाधियोगः ॥२१॥

पदच्छेद—

ततः निवृत्तः अप्रतिलब्ध कामः, स्वधिष्ण्यम् आसाद्य पुनः सः देवः ।
शनैः जित श्वास निवृत्त चित्तः, न्यषीदत् आरूढ समाधियोगः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः, निवृत्तः | ४. | वहाँ से, लौट आये | शनैः | ८. | धीरे-धीरे |
| अप्रतिलब्ध | ३. | विफल हो जाने के कारण | जित | १०. | रोक कर (तथा) |
| कामः, | २. | मनोरथ के | श्वास | ९. | श्वास को |
| स्वधिष्ण्यम् | ६. | अपने स्थान (कमल) में | निवृत्त, चित्तः, | ११. | मन को, विषयों से हटा कर |
| आसाद्य | ७. | आकर | न्यषीदत् | १४. | स्थित हो गये |
| पुनः | ५. | फिर | आरूढ | १२. | संकल्प पूर्वक |
| सः, देवः । | १. | वे, ब्रह्मा जी | समाधियोगः ॥ | १३. | समाधि में |

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा जी मनोरथ के विफल हो जाने के कारण वहां से लौट गये । फिर अपने स्थान कमल में आकर, धीरे-धीरे श्वास को रोक कर तथा मन को विषयों से हटा कर संकल्प पूर्वक समाधि में स्थित हो गये ।

## द्वाविंश: श्लोक:

कालेन सोऽजः पुरुषायुषाभिप्रवृत्तयोगेन विरूढबोधः ।
स्वयं तदन्तर्हृदयेऽवभातमपश्यतापश्यत यन्न पूर्वम् ॥२२॥

पदच्छेद—

कालेन सः अजः पुरुष आयुषा अभि, प्रवृत्त योगेन विरूढ बोधः ।
स्वयम् तद् अन्तर्हृदये अवभातम्, अपश्यत अपश्यत यद् न पूर्वम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालेन | २. | काल तक | स्वयम् | १२. | अपने आप |
| सः, अजः | ५. | उन, ब्रह्मा जी को | तद् | ११. | उस आधार को |
| पुरुष, आयुषा | १. | मनुष्य की, पूर्ण आयु के बराबर | अन्तर्हृदये | १३. | हृदय देश में |
| अभि, प्रवृत्त | ३. | किये गये | अवभातम्, | १४. | प्रकाशमान |
| योगेन | ४. | समाधियोग के द्वारा | अपश्यत | १५. | देखा |
| विरूढ | ७. | हुआ (तदन्तर उन्होंने) | अपश्यत | १०. | देखा था |
| बोधः । | ६. | ज्ञान | यद्, न | ९. | जिस आधार को, नहीं |
| | | | पूर्वम् ॥ | ८. | पहले |

श्लोकार्थ—मनुष्य की पूर्ण आयु के बराबर काल तक किये गये समाधियोग के द्वारा उन ब्रह्मा जी को ज्ञान हुआ । तदनन्तर उन्होंने पहले जिस आधार को नहीं देखा था, उस आधार को अपने आप अपने हृदय देश में प्रकाशमान देखा ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

मृणालगौरायतशेषभोगपर्यङ्क एकं पुरुषं शयानम् ।
फणातपत्रायुतमूर्धरत्नद्युभिर्हतध्वान्तयुगान्ततोये ॥२३॥

पदच्छेद—

मृणाल गौर आयत शेष भोग, पर्यङ्के एकम् पुरुषम् शयानम् ।
फण आतपत्र अयुत मूर्धरत्न, द्युभिः हत ध्वान्त युगान्त तोये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मृणाल | ३. | कमल नाल के समान | आतपत्र | ६. | छत्र के समान |
| गौर, आयत | ४. | सफेद (और), विशाल | अयुत | १०. | (उठे हुए) दस हजार |
| शेष, भोग, | ५. | शेषनाग के, शरीर की | मूर्ध | १२. | फणों की |
| पर्यङ्के, एकम् | ६. | शय्या पर, अकेले | रत्न, द्युभिः | १३. | मणियों के, प्रकाश से |
| पुरुषम् | ८. | पुरुषोत्तम भगवान् को(देखा) | हत ध्वान्त | १४. | अन्धकार दूर हो रहा था |
| शयानम् । | ७. | सोये हुये | युगान्त | १. | प्रलय काल के |
| फण | ११. | फणों के | तोये ॥ | २. | जल में (ब्रह्मा जी ने) |

श्लोकार्थ—प्रलय काल के जल में ब्रह्मा जी ने कमल के समान सफेद और विशाल शेष नाग के शरीर की शय्या पर अकेले सोये हुये पुरुषोत्तम भगवान् को देखा । उनके ऊपर छत्र के समान उठे हुए दस हजार फणों की मणियों के प्रकाश से अन्धकार दूर हो रहा था ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

प्रेक्षां क्षिपन्तं हरितोपलाद्रेः सन्ध्याभ्रनीवेरुरुरुक्ममूर्ध्नः ।
रत्नोदधारौषधिसौमनस्य वनस्रजो वेणुभुजाङ्घ्रिपाङ्घ्रेः ॥२४॥

पदच्छेद—

प्रेक्षाम् क्षिपन्तम् हरित उपल अद्रेः, सन्ध्या अभ्र नीवेः उरु रुक्म मूर्ध्नः ।
रत्न उदधारा ओषधि सौमनस्य, वनस्रजः वेणु भुज अङ्घ्रिप अङ्घ्रेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रेक्षाम् | १४. | शोभा को | मूर्ध्नः । | ५. | (मस्तक का) मुकुट |
| क्षिपन्तम् | १५. | लज्जित कर रहे थे | रत्न, उदधारा | ८. | मणि, जल प्रपात |
| हरित | १. | श्याम वर्ण मरकत | ओषधि, सौमनस्य | ९. | ओषधि (और), पुष्पों की |
| उपल, अद्रेः, | २. | मणि के, पर्वत की | वन स्रज,ः | ७. | वन माला |
| सन्ध्या, अभ्र | ४. | सायंकालीन, मेघ की | वेणु | ११. | बांसों की (तथा) |
| नीवेः | ३. | कमर का पीत पट्ट | भुज | १०. | भुज दण्ड |
| उरु, रुक्म | ६. | उत्तम, सुवर्ण की | अङ्घ्रिप | १३. | वृक्षों की |
| | | | अङ्घ्रेः ॥ | १२. | (उनके) चरण |

श्लोकार्थ—भगवान् का श्याम वर्ण मरकत मणि के पर्वत की; कमर का पीत पट्ट सायंकालीन मेघ की; मस्तक का मुकुट उत्तम सुवर्ण की; वनमाला मणि, जल प्रपात, ओषधि और पुष्पों की; भुजदण्ड बांसो की तथा उनके चरण वृक्षों की शोभा को लज्जित कर रहे थे ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

आयामतो विस्तरतः स्वमान-देहेन लोकत्रयसंग्रहेण ।
विचित्रदिव्याभरणांशुकानां कृतश्रियापाश्रितवेषदेहम् ।।२५।।

पदच्छेद—

आयामतः विस्तरतः स्वमान, देहेन लोकत्रय संग्रहेण ।
विचित्र दिव्य आभरण अंशुकानाम्, कृत श्रिया अपाश्रित वेष देहम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आयामतः | ३. | लम्बाई (और) | दिव्य | ११. | अलौकिक |
| विस्तरतः | ४. | चौड़ाई में | आभरण | १२. | आभूषण (तथा) |
| स्वमान, | २. | अपने परिमाण से | अंशुकानाम्, | १३. | वस्त्रों को भी |
| देहेन | १. | (भगवान् का) शरीर | कृतश्रिया | १४. | सुशोभित करने वाला था |
| लोकत्रय | ५. | त्रलोकी को | अपाश्रित | ६. | सुसज्जित था (तथापि वह) |
| संग्रहेण । | ६. | समेटे हुये था | वेष | ८. | पीताम्बर से |
| विचित्र | १०. | अद्भुत (और) | देहम् ।। | ७. | (यद्यपि वह) शरीर |

श्लोकार्थ—भगवान् का शरीर अपने परिमाण से लम्बाई और चौड़ाई में त्रलोकी को समेटे हुये था। यद्यपि वह शरीर पीताम्बर से सुसज्जित था तथापि वह अद्भुत और अलौकिक आभूषण तथा वस्त्रों को भी सुशोभित करने वाला था।

# षड्विंशः श्लोकः

पुंसां स्वकामाय विविक्तमार्गैरभ्यर्चतां कामदुघाङ्घ्रिपद्मम् ।
प्रदर्शयन्तं कृपया नखेन्दुमयूखभिन्नाङ्गुलिचारुपत्रम् ।।२६।।

पदच्छेद—

पुंसाम् स्व कामाय विविक्त मार्गैः, अभ्यर्चताम् कामदुघ अङ्घ्रि पद्मम् ।
प्रदर्शयन्तम् कृपया नख इन्दु, मयूख भिन्न अङ्गुलि चारु पत्रम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुंसाम् | ५. | भक्त जनों को (भगवान्) | प्रदर्शयन्तम् | ६. | दर्शन दे रहे थे |
| स्व | १. | अपने | कृपया | ८. | कृपा पूर्वक |
| कामाय | २. | मनोरथ की सिद्धि के लिये | नख, इन्दु, | १३. | नखरूप, चन्द्रमा की |
| विविक्त, मार्गैः, | ३. | भिन्न-भिन्न, पद्धतियों से | मयूख, | १४. | किरणों से |
| अभ्यर्चताम् | ४. | पूजा करने वाले | भिन्न | १५. | स्पष्ट दिखाई दे रहे थे |
| कामदुघ | ६. | (अपने) कामना पूरक | अङ्गुलि | ११. | अंगुलि |
| अङ्घ्रि, पद्मम् । | ७. | चरण, कमलों का | चारु | १०. | (जिनके) मनोहर |
| | | | पत्रम् । | १२. | दल |

श्लोकार्थ—अपने मनोरथ की सिद्धि के लिये भिन्न-भिन्न पद्धतियों से पूजा करने वाले भक्त जनों को भगवान् अपने कामना-पूरक-चरण कमलों का कृपापूर्वक दर्शन दे रहे थे, जिनके मनोहर अंगुलिदल नखरूप चन्द्रमा की किरणों से स्पष्ट दिखाई दे रहे थे।

## सप्तविंशः श्लोकः

मुखेन लोकार्तिहरस्मितेन परिस्फुरत्कुण्डलमण्डितेन ।
शोणायितेनाधरबिम्बभासा प्रत्यर्हयन्तं सुनसेन सुभ्र्वा ॥२७॥

पदच्छेद —

मुखेन लोक आर्तिहर स्मितेन, परिस्फुरत् कुण्डल मण्डितेन ।
शोणायितेन अधर बिम्ब भासा, प्रत्यर्हयन्तम् सुनसेन सुभ्र्वा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुखेन | १. | (उस समय अपने) मुख से | शोणायितेन | ८. | लाल |
| लोक | २. | संसार के | अधर बिम्ब | ९. | ओठों की |
| आर्तिहर | ३. | कष्ट को दूर करने वाली | भासा, | १०. | चमक से |
| स्मितेन, | ४. | मुसकान से | प्रत्यर्हयन्तम् | १३. | सम्मान करते हुये (देखा) |
| परिस्फुरत् | ५. | चमकदार | सुनसेन | ११. | सुन्दर नासिका से (और) |
| कुण्डल | ६. | कुण्डलों की | सुभ्र्वा ॥ | १२. | सुन्दर भौंहों से (भक्तों का) |
| मण्डितेन । | ७. | शोभा से | | | |

श्लोकार्थ—उस समय अपने मुख से संसार के कष्ट को दूर करने वाली मुस्कान से, चमकदार कुण्डलों की शोभा से, लाल ओठों की चमक से, सुन्दर नासिक से और सुन्दर भौंहों से भक्तों का सम्मान करते हुये भगवान् को मैंने देखा ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

कदम्बकिञ्जल्कपिशङ्गवाससा स्वलंकृतं मेखलया नितम्बे ।
हारेण चानन्तधनेन वत्स श्रीवत्सवक्षःस्थलवल्लभेन ॥२८॥

पदच्छेद—

कदम्ब किञ्जल्क पिशङ्ग वाससा, सु अलंकृतम् मेखलया नितम्बे ।
हारेण च अनन्त धनेन वत्स, श्रीवत्स वक्षःस्थल वल्लभेन ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कदम्ब | ३. | कदम्ब पुष्प के | हारेण | ११. | हार |
| किञ्जल्क | ४. | केसर के समान | च | १२. | और |
| पिशङ्ग | ५. | पीले | अनन्तधनेन | १०. | अमूल्य |
| वाससा, | ६. | वस्त्र से (और) | वत्स, | १. | हे तात ! (भगवान्) |
| सु अलंकृतम् | ८. | अत्यन्त सुशोभित थे | श्रीवत्स | १३. | श्रीवत्स की सुनहरी रेखा की |
| मेखलया | ७. | (सोने की) करधनी से | वक्षःस्थल | ९. | (उनकी) छाती में |
| नितम्बे । | २. | कटिभाग में | वल्लभेन ॥ | १४. | प्यारी शोभा हो रही थी |

श्लोकार्थ—हे तात ! भगवान् कटि भाग में कदम्ब पुष्प के केसर के समान पीले वस्त्र से और सोने की करधनी से अत्यन्त सुशोभित थे। उनकी छाती में अमूल्य हार और श्रीवत्स की सुनहरी रेखा की प्यारी शोभा हो रही थी ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

परार्ध्यकेयूरमणिप्रवेकपर्यस्तदोर्दण्डसहस्रशाखम् ।
अव्यक्तमूलं भुवनाङ्घ्रिपेन्द्रमहीन्द्रभोगैरधिवीतवल्शम् ॥२९॥

पदच्छेद—
परार्ध्य केयूर मणि प्रवेक, पर्यस्त दोर्दण्ड सहस्र शाखम् ।
अव्यक्त मूलम् भुवन अङ्घ्रिपेन्द्र, महीन्द्र भोगैः अधिवीत वल्शम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परार्ध्य | ६. | बहुमूल्य | अव्यक्त, मूलम् | २. | अज्ञात. मूल वाले |
| केयूर | ७. | बाजूबन्द (और) | भुवन | ३. | संसार रूपी |
| मणि | ९. | मणियों से | अङ्घ्रिपेन्द्र, | ४. | चन्दन वृक्ष के समान |
| प्रवेक, | ८. | उत्तम | महीन्द्र | १२. | नागराज के |
| पर्यस्त | १०. | विभूषित थे | भोगैः | १३. | फण |
| दोर्दण्ड | ५. | (भगवान् के) भुजदण्ड | अधिवीत | १४. | लिपटे हुये थे |
| सहस्र, शाखम् । | १. | हजारों, शाखाओं वाले (तथा) | वल्शम् ॥ | ११. | उनके कन्धों पर |

श्लोकार्थ—हजारों शाखाओं वाले तथा अज्ञात मूल वाले संसार रूपी चन्दन वृक्ष के समान भगवान् के भुजदण्ड बहुमूल्य बाजूबन्द और उत्तम मणियों से विभूषित थे। उनके कन्धों पर नागराज के फण लिपटे हुये थे।

# त्रिंशः श्लोकः

चराचरौको भगवन्महीध्रमहीन्द्रबन्धुं सलिलोपगूढम् ।
किरीटसाहस्रहिरण्यशृङ्गमाविर्भवत्कौस्तुभरत्नगर्भम् ॥३०॥

पदच्छेद—
चराचर ओकः भगवत् महीध्र, महीन्द्र बन्धुम् सलिल उपगूढम् ।
किरीट साहस्र हिरण्य शृङ्गम्, आविर्भवत् कौस्तुभरत्न गर्भम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चराचर | १. | जड़-चेतन रूप संसार के | किरीट | ९. | मुकुट (मानो) |
| ओकः | २. | आश्रय (तथा) | साहस्र | ८. | (शेषनाग के) हजारोंफणों के |
| भगवत् | ४. | (वे) भगवान् | हिरण्य | १०. | उसके सुवर्ण |
| महीध्र, | ७. | पर्वत के समान (लग रहे थे) | शृङ्गम्, | ११. | शिखर हों (और) |
| महीन्द्र, बन्धुम् | ३. | शेषनाग के, बन्धु | आविर्भवत् | १४. | निकला हुआ (रत्न हो) |
| सलिल | ५. | जल से | कौस्तुभरत्न | १२. | कौस्तुभ मणि |
| उपगूढम् । | ६. | घिरे हुये | गर्भम् ॥ | १३. | (उसके) अन्दर से |

श्लोकार्थ—जड़ चेतन रूप संसार के आश्रय तथा शेषनाग के बन्धु वे भगवान् जल से घिरे हुये पर्वत राज के समान लग रहे थे। शेषनाग के हजारों फणों के मुकुट मानो उसके सुवर्ण शिखर हों और कौस्तुभ मणि उसके अन्दर से निकला हुआ रत्न हो।

# एकत्रिंशः श्लोकः

निवीतमाम्नायमधुव्रतश्रिया स्वकीर्तिमय्या वनमालया हरिम् ।
सूर्येन्दुवाय्वग्न्यगमं त्रिधामभिः परिक्रमत्प्राधनिकैर्दुरासदम् ।।३१।।

पदच्छेद—

निवीतम् आम्नाय मधुव्रत श्रिया, स्वकीर्तिमय्या वनमालया हरिम् ।
सूर्य इन्दु वायु अग्नि अगमम् त्रिधामभिः, परिक्रमत् प्राधनिकैः दुरासदम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निवीतम् | ७. | सुशोभित थे | सूर्य, इन्दु | ८. | (उनके समीप) सूर्य, चन्द्रमा |
| आम्नाय | २. | वेदरूपी | वायु, अग्नि | ९. | वायु, (और), अग्नि भी |
| मधुव्रत | ३. | भौंरों की | अगमम् | १०. | नहीं पहुँच सकते थे |
| श्रिया, | ४. | गुंजार वाली | त्रिधामभिः, | ११. | (वे) त्रिलोकी में |
| स्वकीर्तिमय्या | ५. | अपनी कीर्तिमयी | परिक्रमत् | १२. | विचरण करने वाले |
| वनमालया | ६. | वनमाला से | प्राधनिकैः | १३. | चक्र सुदर्शन से भी |
| हरिम् । | १. | वे भगवान् | दुरासदम् ।। | १४. | दुर्लभ थे |

श्लोकार्थ—वे भगवान् वेद रूपी भँवरों की गुंजार वाली अपनी कीर्तिमयी वनमाला से सुशोभित थे। उनके समीप सूर्य, चन्द्रमा, वायु और अग्नि भी नहीं पहुंच सकते थे। वे त्रिलोकी में विचरण करने वाले चक्र सुदर्शन से भी दुर्लभ थे।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

तर्ह्येव तन्नाभिसरः सरोजमात्मानमम्भः श्वसनं वियच्च ।
ददर्श देवो जगतो विधाता नातः परं लोकविसर्गदृष्टिः ।।३२।।

पदच्छेद—

तर्हि एव तत् नाभिसरः सरोजम्, आत्मानम् अम्भः श्वसनम् वियत् च ।
ददर्श देवः जगतः विधाता, न अतः परम् लोक विसर्ग दृष्टिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तर्हि एव | ५. | उस समय | ददर्श | १३. | देखा |
| तत् | ६. | उन (भगवान्) के | देवः | ४. | ब्रह्मा जी ने |
| नाभिसरः | ७. | नाभिरूपी सरोवर के | जगतः, विधाता | ३. | लोक के रचयिता |
| सरोजम्, | ८ | कमल को | न | १५. | नहीं (दिखाई दिया) |
| आत्मानम् | ९. | अपने को | अतः, परम् | १४. | (उन्हें) इसके, सिवाय और कुछ |
| अम्भः, श्वसनम् | १०. | जल को, वायु को | लोक, विसर्ग | १. | संसार की, रचना करने की |
| वियत् | १२. | आकाश को | दृष्टिः ।। | २. | इच्छा वाले |
| च । | ११. | और | | | |

श्लोकार्थ—संसार की रचना करने की इच्छा वाले, लोक के रचयिता ब्रह्मा जी ने उस समय उन भगवान् के नाभिरूपी सरोवर के कमल को, अपने को, जल को, वायु को और आकाश को देखा। उन्हें इसके सिवाय और कुछ नहीं दिखाई दिया।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**स कर्मबीजं रजसोपरक्तः प्रजाः सिसृक्षन्नियदेव दृष्ट्वा ।**
**अस्तौद्विसर्गाभिमुखस्तमीड्यमव्यक्तवर्त्मन्यभिवेशितात्मा ।।३३।।**

पदच्छेद—

**सः कर्म बीजम् रजसा उपरक्तः, प्रजाः सिसृक्षन् इयत् एव दृष्ट्वा ।**
**अस्तौत् विसर्ग अभिमुखः तम् ईड्यम्, अव्यक्त वर्त्मनि अभिवेशित आत्मा ।।**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. | वे ब्रह्मा जी | अस्तौत् | १८. | स्तुति करने लगे |
| कर्मबीजम् | ६. | सृष्टि के कारण रूप में | विसर्ग | १०. | सृष्टि करने की |
| रजसा | १. | रजोगुण से | अभिमुखः | ११. | इच्छा से |
| उपरक्तः, | २. | व्याप्त (अतएव) | तम् | १६. | उन |
| प्रजाः | ३. | प्रजाओं की | ईड्यम्, | १७. | परम पूजनीय भगवान् की |
| सिसृक्षन् | ४. | सृष्टि करने की इच्छा वाले | अव्यक्त | १२. | श्रीहरि के अज्ञात |
| इयत् | ७. | इन्हीं पाँच | वर्त्मनि | १३. | स्वरूप में |
| एव | ८. | तत्त्वों को | अभिवेशित | १५. | लगा कर |
| दृष्ट्वा । | ९. | देखकर | आत्मा ।। | १४. | चित्त को |

श्लोकार्थ—रजोगुण से व्याप्त अतएव प्रजाओं की सृष्टि करने की इच्छा वाले वे ब्रह्मा जी सृष्टि के कारण रूप में कमल, जल, आकाश, वायु और अपना शरीर इन्हीं पाँच तत्त्वों को देखकर सृष्टि करने की इच्छा से श्रीहरि के अज्ञात स्वरूप में चित्त को लगा कर उन परम पूजनीय भगवान् की स्तुति करने लगे ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे अष्टमः अध्यायः ।।८।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### अथ नवमः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—ज्ञातोऽसि मेऽद्य सुचिरान्ननु देहभाजां, न ज्ञायते भगवतो गतिरित्यवद्यम् ।
नान्यत्त्वदस्ति भगवन्नपि तन्न शुद्धं, मायागुणव्यतिकराद्यदुरुर्विभासि ।।1।।

पदच्छेद—ज्ञातः असि मे अद्य सुचिरात् ननु देहभाजाम्, न ज्ञायते भगवतः गतिः इति अवद्यम् ।
न अन्यत् त्वत् अस्ति भगवन् अपि तद् न शुद्धम्, माया गुण व्यतिकरात् यद् उरुः विभासि ।।

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| ज्ञातः असि | ४. | ज्ञात हुए हैं |
| मे | ३. | मुझे |
| अद्य सुचिरात् | २. | आज बहुत समय के बाद |
| ननु | १७. | ही |
| देह भाजाम्, | ६. | शरीर धारियों को |
| न ज्ञायते | ८. | नहीं ज्ञान होता है |
| भगवतः गतिः | ७. | आपके स्वरूप का |
| इति अवद्यम्। | ५. | यह दुर्भाग्य है (कि) |
| न | १०. | सत् नहीं |
| अन्यत्, त्वत् | ९. | भिन्न कोई वस्तु, आपसे |
| अस्ति | ११. | है |
| भगवन् | १. | हे भगवान् ! (आप) |
| अपि, तद् | १२. | तथा जो है, वह |
| न, शुद्धम्, | १३. | नहीं, है सत्य |
| माया गुण | १५. | माया के सत्त्वादि गुणों के |
| व्यतकरात् | १६. | सम्बन्ध से (आप) |
| यद् | १४. | क्योंकि |
| उरुः विभासि ।। | १८. | उनमें दिखाई देते हैं |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप आज बहुत समय के बाद मुझे ज्ञात हुए हैं । यह दुर्भाग्य है कि शरीर-धारियों को आपके स्वरूप का ज्ञान नहीं होता । आपके अतिरिक्त कोई वस्तु सत् नहीं है तथा जो है वह सत्य नहीं है, क्योंकि माया के सत्त्वादि गुणों के सम्बन्ध से आप ही उन वस्तु रूपों में दिखाई देते हैं ।

## द्वितीयः श्लोकः

रूपं यदेतदवबोधरसोदयेन, शश्वन्निवृत्ततमसः सदनुग्रहाय ।
आदौ गृहीतमवतारशतैकबीजं, यन्नाभिपद्मभवनादहमाविरासम् ।।२।।

पदच्छेद—रूपम् यद् एतद् अवबोध रस उदयेन, शश्वत् निवृत्त तमसः सद् अनुग्रहाय ।
आदौ गृहीतम् अवतार शत एक बीजम्, यत् नाभि पद्म भवनात् अहम् आविरासम् ।।

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| रूपम् | २. | स्वरूप है (वह) |
| यद् एतद् | १. | (आपका) जो यह |
| अवबोध रस | ३. | ज्ञान शक्ति के |
| उदयेन | ४. | प्रकाशित रहने के कारण |
| शश्वत् | ५. | सदा |
| निवृत्त | ७. | दूर रहता है |
| तमसः | ६. | अज्ञान से |
| सद् अनुग्रहाय। | ८. | सन्तों पर कृपा करने के लिए |
| आदौ गृहीतम् | ९. | प्रारम्भ में धारण किया है |
| अवतार | ११. | अवतारों का |
| शत | १०. | (यह स्वरूप) सैकड़ों |
| एक बीजम् | १२. | प्रधान कारण (है) |
| यद् नाभिपद्म | १३. | जिसके नाभिकमल के |
| भवनात् | १४. | मध्य से |
| अहम् | १५. | मैं |
| आविरासम् ।। | १६. | प्रकट हुआ हूँ |

श्लोकार्थ—आपका जो यह स्वरूप है, वह ज्ञान शक्ति के प्रकाशित रहने के कारण सदा अज्ञान से दूर रहता है । आपने सन्तों पर कृपा करने के लिए सृष्टि के प्रारंभ में इसे धारण किया है । यह स्वरूप सैकड़ों अवतारों का प्रधान कारण है, जिसके नाभि कमल के मध्य से मैं प्रकट हुआ हूँ ।

## तृतीयः श्लोकः

**नातः परं परम यद्भवतः स्वरूप—मानन्दमात्रमविकल्पमविद्धवर्चः ।**

**पश्यामि विश्वसृजमेकमविश्वमात्मन्, भूतेन्द्रियात्मकमदस्त उपाश्रितोऽस्मि।।३।।**

पदच्छेद—न अतः परम् परम यद् भवतः स्वरूपम्, आनन्द मात्रम् अविकल्पम् अविद्ध वर्चः ।
पश्यामि विश्वसृजम् एकम् अविश्वम् आत्मन्, भूत इन्द्रिय आत्मकम् अदः ते उपाश्रितः अस्मि ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ८. | नहीं (मानता हूँ) | विश्वसृजम् | १०. | विश्वकी रचना करने वाले |
| अतः, परम् | ७. | इससे, भिन्न | एकम् | १४. | अद्वितीय रूप को |
| परम | १ | हे परमात्मन् ! | अविश्वम् | १३. | (इस) अलौकिक (और) |
| यद्, भवतः | २. | जो, आपका | आत्मन् | ९. | हे भगवन् ! |
| स्वरूपम्, | ६. | स्वरूप है (उसे मैं) | भूत | ११. | पञ्च महाभूतों एवं |
| अनन्द, मात्रम् | ३. | आनन्द, घन | इन्द्रिय आत्मकम् | १२. | इन्द्रियों के आश्रय |
| अविकल्पम् | ४. | भेद रहित (तथा) | अदः | १७. | इस रूप की |
| अविद्ध, वर्चः । | ५. | अखण्ड, तेजोमय | ते | १६. | आपके |
| पश्यामि | १५. | देख रहा हूँ (अतः मैं) | उपाश्रितः, अस्मि ।। | १८. | शरण में, हूँ |

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! जो आपका आनन्द-घन, भेद-रहित तथा अखण्ड तेजोमय स्वरूप है, उसे मैं इससे भिन्न नहीं मानता हूँ । हे भगवन् ! विश्व की रचना करने वाले पञ्च महाभूतों एवं इन्द्रियों के आश्रय इस अलौकिक और अद्वितीय रूप को देख रहा हूँ। अतः मैं आपके इस रूप की शरण में हूँ ।

## चतुर्थः श्लोकः

**तद्वा इदं भुवनमङ्गल मङ्गलाय, ध्याने स्म नो दर्शितं त उपासकानाम् ।**

**तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं, योऽनादृतो नरकभाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ।।४।।**

पदच्छेद—तद् वा इदम् भुवन मङ्गल मङ्गलाय, ध्याने स्म नः दर्शितम् ते उपासकानाम् ।
तस्मै नमः भवगते अनुविधेम तुभ्यम्, यः अनादृतः नरक भाग्भिः असत् प्रसङ्गैः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् वा, इदम् | ८ | वह रूप, अब | तस्मै | १५. | उस |
| भुवन मङ्गल | १. | लोक कल्याणकारिन् ! | नमः | १७. | प्रणाम |
| मङ्गलाय | ५. | कल्याण के लिए | भगवते | १६. | स्वरूप को |
| ध्याने | ७. | समाधि में | अनुविधेम | १८. | निवेदन करते हैं |
| स्म | ६. | ही | तुभ्यम् | १४. | (हम) आपके |
| नः | ३. | हम | यः | १२. | जिस रूप का |
| दर्शितम् | ९. | दिखलाया (है) | अनादृतः | १३. | अनादर करते हैं |
| ते | २. | आपने | नरकः भाग्भिः | ११. | पाप के, भागी (जीव) |
| उपासकानाम् । | ४. | भक्तों के | असत्प्रसङ्गैः।। | १०. | विषयों में आसक्त (अतः) |

श्लोकार्थ—लोक कल्याणकारी हे भगवन् ! आपने हम भक्तों के कल्याण के लिए ही समाधि में अब वह रूप दिखलाया है । विषयों में आसक्त, अतः पाप के भागी जीव जिस रूप का अनादर करते हैं, हम आपके उस स्वरूप को प्रणाम निवेदन करते हैं ।

## पञ्चमः श्लोकः

ये तु त्वदीयचरणाम्बुजकोशगन्धं, जिघ्रन्ति कर्णविवरैः श्रुतिवातनीतम् ।
भक्त्या गृहीतचरणः परया च तेषां, नापैषि नाथ हृदयाम्बुरुहात्स्वपुंसाम् ॥५॥

पदच्छेद—ये तु त्वदीय चरण अम्बुज कोश गन्धम्, जिघ्रन्ति कर्ण विवरैः श्रुति वात नीतम् ।
भक्त्या गृहीत चरणः परया च तेषाम्, न अपैषि नाथ हृदय अम्बुरुहात् स्व पुंसाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये तु | १. | जो लोग | गृहीत | १३ | बाँध रक्खे हैं |
| त्वदीय, चरण | ४. | आपके, चरण | चरणः | १२. | (आपके) चरणों को |
| अम्बुज, कोश | ५. | कमल, कोश की | परया | १० | परा |
| गन्धम्, | ६. | सुगन्ध रूप कथा को | च | ९. | और |
| जिघ्रन्ति | ८. | ग्रहण करते हैं | तेषाम्, | १५. | उन |
| कर्ण, विवरैः | ७. | कानों के, छिद्रों से | न, अपैषि | १८. | नहीं, दूर होते हैं |
| श्रुति, वात | २. | वेद रूप, वायु के द्वारा | नाथ | १४. | हे स्वामिन् ! आप |
| नीतम् । | ३. | लाई गयी | हृदय, अम्बुरुहात् | १७. | हृदय कमल से |
| भक्त्या | ११. | भक्ति के बन्धन से | स्व, पुंसाम् ॥ | १६. | अपने, भक्त जनों के |

श्लोकार्थ—जो लोग वेद रूप वायु के द्वारा लाई गयी आपके चरण-कमल कोश की सुगन्ध रूप कथा को कानों के छिद्रों से ग्रहण करते हैं और परा-भक्ति के बन्धन से आपके चरणों को बाँध रक्खे हैं; हे स्वामिन् ! आप अपने उन भक्त जनों के हृदय कमल से दूर नहीं होते हैं ।

## षष्ठः श्लोकः

तावद्भयं द्रविणगेहसुहृन्निमित्तं, शोकः स्पृहा परिभवो विपुलश्च लोभः ।
तावन्ममेत्यसदवग्रह आर्तिमूलं, यावन्न तेऽङ्घ्रिमभयं प्रवृणीत लोकः ॥६॥

पदच्छेद—तावत् भयम् द्रविण गेह सुहृद् निमित्तम्, शोकः स्पृहा परिभवः विपुलः च लोभः ।
तावत् मम इति असत् अवग्रहः आर्तिमूलम्, यावत् न ते अङ्घ्रिम् अभयम् प्रवृणीत लोकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तावत् | ८. | तभी तक (उसे) | मम, इति | १९. | मैं मेरा, इस प्रकार का |
| भयम् | ११. | डर | असत् अव ग्रहः | २०. | दुष्ट, विचार (रहता है) |
| द्रविण, गेह | ९. | धन, घर और | आर्ति, मूलम्, | १८. | दुःख का, कारण |
| सुहृद्,निमित्तम् | १०. | बान्धवों के, कारण होने वाला | यावत् | १. | जब तक |
| शोकः, स्पृहा | १२. | शोक, लालसा | न | ६. | नहीं |
| परिभवः | १३. | अनादर | ते, | ४. | आपके |
| विपुलः | १५. | बहुत बड़ी | अङ्घ्रिम् | ५. | चरणों की |
| च | १४. | और | अभयम् | ३. | अभय देने वाले |
| लोभः । | १६. | लालच (बनी रहती है) | प्रवृणीत | ७. | शरण लेता है |
| तावत् | १७. | (तथा) तभी तक | लोकः ॥ | २. | मनुष्य |

श्लोकार्थ—जब तक मनुष्य अभय देने वाले आपके चरणों की शरण नहीं लेता है, तभी तक उसे धन, घर और बान्धवों के कारण होने वाला डर, शोक, लालसा, अनादर और बहुत बड़ी लालच बनी रहती है तथा तभी तक दुःख का कारण मैं-मेरा इस प्रकार का दुष्ट विचार बना रहता है ।

## सप्तमः श्लोकः

दैवेन ते हतधियो भवतः प्रसङ्गात्, सर्वाशुभोपशमनाद्विमुखेन्द्रिया ये ।
कुर्वन्ति कामसुखलेशलवाय दीना, लोभाभिभूतमनसोऽकुशलानि शश्वत् ॥७॥

पदच्छेद—दैवेन ते हत धियः भवतः प्रसङ्गात्, सर्व अशुभ उपशमनात् विमुख इन्द्रियाः ये ।
कुर्वन्ति काम सुख लेश लवाय दीनाः, लोभ अभिभूत मनसः अकुशलानि शश्वत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दैवेन, ते | ८. | भाग्य ने उनकी | ये । | १. | जिन लोगों का |
| हत | १०. | मार दी है | कुर्वन्ति | १८. | करते रहते हैं |
| धियः | ९. | मति | काम, सुख | १५ | काम, सुख के लिए |
| भवतः | ५. | आपकी | लेश लवाय | १४. | तनिक मात्र |
| प्रसङ्गात्, | ६. | भक्ति से | दीनाः, | ११ | बेचारे (वे लोग) |
| सर्व, अशुभ | ३. | सब प्रकार के, अमंगलों को | लोभ, अधिभूत | १३. | लोभ से ग्रस्त होकर |
| उपशमनात् | ४. | शान्त करने वाली | मनसः | १२ | मन में |
| विमुख | ७ | दूर रहता है | अकुशलानि | १७ | पापों को |
| इन्द्रियाः | २. | अन्तःकरण | शश्वत् ॥ | १६. | सदा |

श्लोकार्थ—जिन लोगों का अन्तःकरण सब प्रकार के अमंगलों को शान्त करने वाली आपकी भक्ति से दूर रहता है, भाग्य ने उनकी मति मार दी है। बेचारे वे लोग मन में लोभ से ग्रस्त होकर तनिक मात्र काम सुख के लिए सदा पापों को करते रहते हैं।

## अष्टमः श्लोकः

क्षुत्तृट्त्रिधातुभिरिमा मुहुरर्द्यमानाः, शीतोष्णवातवर्षैरितरेतराच्च ।
कामाग्निनाच्युतरुषा च सुदुर्भरेण, सम्पश्यतो मन उरुक्रम सीदते मे ॥८॥

पदच्छेद—क्षुत् तृट् त्रिधातुभिः इमाः मुहुः अर्द्यमानाः, शीत उष्ण वात वर्षैः इतरेतरात् च ।
काम अग्निना अच्युत रुषा च सुदुर्भरेण, सम्पश्यतः मनः उरुक्रम सीदते मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षुत्, तृट् | ४. | भूख, प्यास | अच्युत | १. | हे भगवन्! |
| त्रिधातुभिः | ५. | वात, पित्त और कफ से | रुषा | १३. | क्रोध से |
| इमाः | ३. | इस प्रजा को | च | ११. | और |
| मुहुः, अर्द्यमानाः | १४. | बार-बार, पीड़ित होते हुए | सुदुर्भरेण | १२. | असहनीय |
| शीत, उष्ण | ६. | सर्दी, गर्मी | सम्पश्यतः | १५. | देखकर |
| वात, वर्षैः | ७. | हवा और वर्षा से | मनः | १७. | मन |
| इतरेतरात् | ८. | परस्पर एक दूसरे से | उरुक्रम | २. | हे त्रिविक्रम! |
| च । | ९. | तथा | सीदते | १८. | बड़ा खिन्न होता है |
| काम अग्निना | १०. | कामनाओं की आग से | मे ॥ | १६. | मेरा |

श्लोकार्थ—हे भगवन् त्रिविक्रम! इस प्रजा को भूख, प्यास, वात, पित्त और कफ से; सर्दी, गर्मी, हवा और वर्षा से; परस्पर एक दूसरे से तथा कामनाओं की आग से और असहनीय क्रोध से बार-बार पीड़ित होते हुए देखकर मेरा मन बड़ा खिन्न होता है।

## नवमः श्लोकः

यावत्पृथक्त्वमिदमात्मन इन्द्रियार्थ-मायाबलं भगवतो जन ईश पश्येत् ।
तावन्न संसृतिरसौ प्रतिसंक्रमेत, व्यर्थापि दुःखनिवहं वहती क्रियार्था ॥९॥

पदच्छेद—यावत् पृथक्त्वम् इदम् आत्मनः इन्द्रिय अर्थ—माया बलम् भगवतः जनः ईश पश्येत् ।
तावत् न संसृतिः असौ प्रति संक्रमेत, व्यर्था अपि दुःख निवहम् वहती क्रिया अर्था ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यावत् | ३. | जब तक | तावत् | ११. | तब तक (उसके) |
| पृथक्त्वम् | ६. | भेद को | न | १३. | नही |
| इदम् | ८. | इस | संसृतिः | १२. | जन्म-मरण का चक्र |
| आत्मनः | ७. | अपने | असौ | १६. | यह (संसार) |
| इन्द्रिय, अर्थ, | ४. | इन्द्रिय और विषयों के | प्रतिसंक्रमेत, | १४. | समाप्त होता |
| माया, बलम् | ५. | जाल में, फँसकर | व्यर्था | १७. | मिथ्या है (फिर भी) |
| भगवतः | ६. | भगवान् से | अपि | १५. | यद्यपि |
| जनः | २. | मनुष्य | दुःख, निवहम् | १९. | दुःखों के समूह को |
| ईश | १. | हे स्वामिन् ! | वहती | २०. | उत्पन्न करता रहता है |
| पश्येत् । | १०. | स्थापित किये रहता है | क्रिया, अर्था ॥ | १८. | कर्म के फल भोग के लिए |

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! मनुष्य जब तक इन्द्रिय और विषयों के जाल में फँसकर भगवान् से अपने इस भेद को स्थापित किये रहता है, तब तक उनके जन्म-मरण का चक्र समाप्त नही होता । यद्यपि यह संसार मिथ्या है, फिर भी कर्म फल के भोग के लिए यह दुःखों के समूह को उत्पन्न करता रहता है ।

## दशमः श्लोकः

अह्न्यापृतार्तकरणा निशि निःशयाना, नानामनोरथधिया क्षणभग्ननिद्राः ।
दैवाहतार्थरचना ऋषयोऽपि देव, युष्मत्प्रसङ्गविमुखा इह संसरन्ति ॥१०॥

पदच्छेद—अह्नि आपृत आर्त करणाः निशि निःशयाना, नाना मनोरथ धिया क्षण भग्न निद्राः ।
दैव आहत अर्थ रचनाः ऋषयः अपि देव, युष्मत् प्रसङ्ग विमुखाः इह संसरन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अह्नि | ७. | (वे लोग) दिन के | दैव | १६. | भाग्य से |
| आपृत | ८. | कामों से | आहत | १८. | असफल हो जाते हैं |
| आर्त, करणाः | ९. | अशान्त, चित्त (और) | अर्थ, रचनाः | १७. | अर्थ सिद्धि के सारे उपाय |
| निशि | १०. | रात में | ऋषयः, अपि | २. | ऋषि लोग, भी |
| निःशयानाः, | ११. | अचेत सोये रहते हैं | देव | १. | हे भगवन् ! |
| नाना, मनोरथ | १३. | अनेक, कामनाओं से | युष्मत्, प्रसंग | ३. | आपके, कथा प्रसंग से |
| धिया | १२. | (उस समय भी) मन में | विमुखाः | ४. | दूर रहने के कारण |
| क्षण, भग्न | १५. | पल-पल में टूटती रहती है | इह | ५. | इस संसार में |
| निद्राः । | १४. | (उनकी) नींद | संसरन्ति ॥ | ६. | भटकते रहते हैं |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सामान्य जन क्या, ऋषि लोग भी आपके कथा प्रसंग से दूर रहने के कारण इस संसार में भटकते रहते हैं। वे लोग दिन के कामों से अशान्त-चित्त और रात में अचेत होकर सोये रहते हैं। उस समय भी मन में अनेक कामनाओं से उनकी नींद पल-पल में टूटती रहती है और भाग्य से अर्थसिद्धि के सारे उपाय असफल हो जाते हैं।

# एकादशः श्लोकः

**त्वं भावयोगपरिभावितहृत्सरोज, आस्से श्रुतेक्षितपथो ननु नाथ पुंसाम् ।**
**यद्यद्धिया त उरुगाय विभावयन्ति, तत्तद्वपुः प्रणयसे सदनुग्रहाय ॥११॥**

पदच्छेद—त्वम् भाव योग परिभावित हृत् सरोजे, आस्से श्रुत ईक्षित पथः ननु नाथ पुंसाम् ।
यद् यद् धिया ते उरुगाय विभावयन्ति, तद् तद् वपुः प्रणयसे सत् अनुग्रहाय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम्, भाव योग | ४. | आप, भक्ति योग से | यद् यद् | १२. | जिस-जिस |
| परिभावित | ५. | निर्मल | धिया | १३. | भावना से |
| हृत्, सरोजे, | ७. | हृदय, कमल में | ते | ११. | वे (भक्त जन) |
| आस्से | ९. | विराजमान रहते हैं | उरुगाय | १०. | अनन्त कीर्ति हे भगवन् ! |
| श्रुत | २. | वेदादि शास्त्रों से | विभावयन्ति | १४. | (आपका) ध्यान करते हैं |
| ईक्षित, पथः | ३. | ज्ञात, स्वरूप वाले | तद् तद्, वपुः | १७. | उस-उस, रूप को |
| ननु | ८. | अवश्य | प्रणयसे | १८. | धारण करते हैं |
| नाथ | १. | हे स्वामिन् ! | सत् | १५. | सन्तों पर |
| पुंसाम् । | ६. | भक्तों के | अनुग्रहाय ॥ | १६. | कृपा करने के लिए (आप) |

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! वेदादि शास्त्रों में ज्ञात स्वरूप वाले आप भक्ति योग से निर्मल भक्तों के हृदय-कमल में अवश्य विराजमान रहते हैं । अनन्तकीर्ति हे भगवन् ! वे भक्त जन जिस-जिस भावना से आपका ध्यान करते हैं, सन्तों पर कृपा करने के लिए आप उस-उस रूप को धारण करते हैं ।

# द्वादशः श्लोकः

**नातिप्रसीदति तथोपचितोपचारै--राराधितः सुरगणैर्हृदि बद्धकामैः ।**
**यत्सर्वभूतदयया सदलभ्ययैको, नानाजनेष्ववहितः सुहृदन्तरात्मा ॥१२॥**

पदच्छेद—न अति प्रसीदति तथा उपचित उपचारैः, आराधितः सुर गणैः हृदि बद्ध कामैः ।
यत् सर्व भूत दयया असत् अलभ्यया एकः, नाना जनेषु अवहितः सुहृद् अन्तरात्मा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ८. | नहीं | यत् | १०. | जितना |
| अति प्रसीदति | ९. | प्रसन्न होते हैं | सर्वभूत | १२. | सभी प्राणियों पर |
| तथा | ७. | उतना | दयया | १३. | दया करने से (प्रसन्न होते हैं) |
| उपचित | ४. | अर्पित विविध | असत्, अलभ्यया | ११. | दुर्जनों को, दुर्लभ |
| उपचारैः, | ५. | पूजा सामग्रियों से | एकः, | १५. | एकमात्र |
| आराधितः | ६. | पूजित होने पर (भी आप) | नाना, जनेषु | १४. | सभी जीवों के |
| सुर गणैः | ३. | देवताओं के द्वारा | अवहितः | १७. | (उनमें) स्थित |
| हृदि | १. | हृदय में | सुहृद् | १६. | मित्र हैं (और) |
| बद्धकामैः । | २. | कामना लिए हुए | अन्तरात्मा ॥ | १८. | (उनकी) आत्मा (हैं) |

श्लोकार्थ—हृदय में कामना लिए हुए देवताओं के द्वारा अर्पित विविध पूजा सामग्रियों से पूजित होने पर भी आप उतना प्रसन्न नहीं होते, जितना दुर्जनों को दुर्लभ सभी प्राणियों पर दया करने से प्रसन्न होते हैं । आप सभी जीवों के एकमात्र मित्र हैं और उनमें स्थित उनकी आत्मा हैं ।

## त्रयोदशः श्लोकः

**पुंसामतो विविधकर्मभिरध्वराद्यै—र्दानेन चोग्रतपसा व्रतचर्यया च ।**
**आराधनं भगवतस्तव सत्क्रियार्थो, धर्मोऽर्पितः कर्हिचिद् ध्रियते न यत्र ॥१३॥**

पदच्छेद— पुंसाम् अतः विविध कर्मभिःअध्वर आद्यैः, दानेन च उग्र तपसा व्रत चर्यया च ।
आराधनम् भगवतः तव सत् क्रिया अर्थः, धर्मः अर्पितः कर्हिचित् ह्रियते न यत्र ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुंसाम् | १६. | मनुष्यों के | भगवतः | १४. | भगवान् की |
| अतः | ६. | इसलिए | तव | १३. | आप |
| विविध, कर्मभिः | ८. | अनेक, अनुष्ठानों से | सत् क्रिया | १७. | उत्तम, कर्म का |
| अध्वर, आद्यैः, | ७. | यज्ञ, यागादि | अर्थः, | १८. | फल (है) |
| दानेन, च | ९. | दान, और | धर्मः | ३. | धर्म का |
| उग्र, तपसा | १०. | कठोर, तप से | अर्पितः | २. | समर्पण किये हुए |
| व्रत, चर्यया | १२. | व्रतों को, करने से | कर्हिचित् | ४. | कभी |
| च । | ११. | तथा | ह्रियते, न | ५. | नाश नहीं होता है |
| आराधनम् | १५. | आराधना ही | यत्र ॥ | १. | जिस परमात्मा को |

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा को समर्पण किये हुये धर्म का कभी नाश नहीं होता, इसलिए यज्ञ-यागादि अनेक अनुष्ठानों से, दान और कठोर तप से तथा व्रतों को करने से आप भगवान् की आराधना ही मनुष्यों के उत्तम कर्म का फल है ।

## चतुर्दशः श्लोकः

**शश्वत्स्वरूपमहसैव निपीतभेद—मोहाय बोधधिषणाय नमः परस्मै ।**
**विश्वोद्भवस्थितिलयेषु निमित्तलीला—रासाय ते नम इदं चकृमेश्वराय ॥१४॥**

पदच्छेद— शश्वत् स्वरूप महसा एव निपीत भेद, मोहाय बोध धिषणाय नमः परस्मै ।
विश्व उद्भव स्थिति लयेषु निमित्त लीला, रासाय ते नमः इदम् चकृम ईश्वराय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शश्वत् | ३. | सदा | स्थिति, लयेषु | ९. | पालन और संहार के |
| स्वरूप महसा एव | १. | अपने स्वरूप के प्रकाश से ही | निमित्त लीला, | १०. | प्रयोजन से लीला का |
| निपीत | ४. | दूर कर देने वाले (तथा) | रासाय ते | ११. | खेल करने वाले, आप |
| भेद मोहाय | २. | भेद बुद्धि और अज्ञान को | नमः | १४. | प्रणाम |
| बोध धिषणाय | ५. | ज्ञान के आश्रय (आप) | इदम् | १३. | यह |
| नमः | ७. | नमस्कार है | चकृम | १५. | निवेदन करते हैं |
| परस्मै । | ६. | परमात्मा को | ईश्वराय ॥ | १२. | परमेश्वर को (हम) |
| विश्व उद्भव | ८. | जगत् की उत्पत्ति | | | |

श्लोकार्थ—अपने स्वरूप के प्रकाश से ही भेद-बुद्धि और अज्ञान को सदा दूर कर देने वाले तथा ज्ञान के आश्रय आप परमात्मा को नमस्कार है । जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार के प्रयोजन से लीला का खेल करने वाले आप परमेश्वर को हम यह प्रणाम निवेदन करते हैं ।

# पञ्चदशः श्लोकः

यस्यावतारगुणकर्मविडम्बनानि, नामानि येऽसुविगमे विवशा गृणन्ति ।
ते नैकजन्मशमलं सहसैव हित्वा, संयान्त्यपावृतमृतं तमजं प्रपद्ये ॥१५॥

पदच्छेद— यस्य अवतार गुण कर्म विडम्बनानि, नामानि ये असु विगमे विवशाः गृणन्ति ।
ते न एक जन्म शमलम् सहसा एव हित्वा, संयान्ति अपावृतम् ऋतम् तम् अजम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्य, अवतार | ४. | जिस भगवान् के, अवतार की | जन्म, शमलम् | १०. | जन्मों के, पाप से |
| गुण, कर्म | ५. | कीर्ति और, लीलाओं को | सहसा, एव | ११. | तत्काल, ही |
| विडम्बनानि, | ६. | बताने वाले | हित्वा, | १२. | मुक्त होकर |
| नामानि | ७. | नामों का | संयान्ति | १५. | प्राप्त करते हैं |
| ये, असु | १. | जो लोग, प्राण | अपावृतम् | १३. | (माया के) आवरण से रहित |
| विगमे | २. | छोड़ते समय | ऋतम् | १४. | सत्यलोक को |
| विवशाः | ३. | विवश होकर (भी) | तम् | १६. | (मैं) उस |
| गृणन्ति । | ८. | उच्चारण करते हैं | अजम् | १७. | अजन्मा (भगवान् की) |
| ते, न एक | ९. | वे लोग, अनेकों | प्रपद्ये ॥ | १८. | शरण लेता हूँ |

श्लोकार्थ—जो लोग प्राण छोड़ते समय विवश होकर भी जिस भगवान् के अवतार की कीर्ति और लीलाओं को बताने वाले नामों का उच्चारण करते हैं; वे लोग अनेकों जन्मों के पाप से तत्काल ही मुक्त होकर माया के आवरण से रहित सत्यलोक को प्राप्त करते हैं। मैं उस अजन्मा भगवान् की शरण लेता हूँ ।

# षोडशः श्लोकः

यो वा अहं च गिरिशश्च विभुः स्वयं च, स्थित्युद्भवप्रलयहेतव आत्ममूलम् ।
भित्त्वा त्रिपाद्ववृध एक उरुप्ररोहस्, तस्मै नमो भगवते भुवनद्रुमाय ॥१६॥

पदच्छेद—यः वा अहम् च गिरिशः च विभुः स्वयम् च, स्थिति उद्भव प्रलय हेतवः आत्म मूलम् ।
भित्त्वा त्रिपाद् ववृधे एकः उरु प्ररोहः, तस्मै नमः भगवते भुवन द्रुमाय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ३. | जो | भित्त्वा | १४. | बँट कर |
| वा | ५. | जो | त्रिपाद् | १३. | तीन प्रधान शाखाओं में |
| अहम्, च | ४. | मैं हूँ, और | ववृधे | १५. | फैले हुए हैं |
| गिरिशः, च | ६. | महादेव हैं, तथा | एकः | १२. | अकेले ही |
| विभुः | ९. | भगवान् विष्णु हैं (उनके) | उरु, प्ररोहः, | ११. | अनेक, शाखाओं वाले (आप) |
| स्वयम् | ८. | साक्षात् | तस्मै | १७. | उस आप |
| च, | ७. | जो | नमः | १९. | नमस्कार है |
| स्थिति, उद्भव | १. | (संसार के) पालन, उत्पत्ति | भगवते | १८. | भगवान् को |
| प्रलय, हेतवः | २. | (और) संहार का, कारण | भुवन, द्रुमाय ॥ | १६. | विश्व, वृक्ष के रूप में |
| आत्म, मूलम् । | १०. | आप ही, मूल कारण हैं | | | |

श्लोकार्थ—संसार के पालन, उत्पत्ति और संहार का कारण जो मैं हूँ और जो महादेव हैं तथा जो साक्षात् भगवान् विष्णु हैं, उनके आप ही मूल कारण हैं। अनेक शाखाओं वाले आप अकेले ही तीन प्रधान शाखाओं में बँटकर फैले हुए हैं। विश्व वृक्ष के रूप में उस आप भगवान् को नमस्कार है।

## सप्तदशः श्लोकः

**लोको विकर्मनिरतः कुशले प्रमत्तः, कर्मण्ययं त्वदुदिते भवदर्चने स्वे ।**
**यस्तावदस्य बलवानिह जीविताशां, सद्यश्छिनत्त्यनिमिषाय नमोऽस्तु तस्मै ॥१७॥**

**पदच्छेद**—लोकः विकर्म निरतः कुशले प्रमत्तः, कर्मणि अयम् त्वद् उदिते भवत् अर्चने स्वे ।
यः तावत् अस्य बलवान् इह जीवित आशाम्, सद्यः छिनत्ति अनिमिषाय नमः अस्तु तस्मै ॥

**शब्दार्थ**—

| | | | |
|---|---|---|---|
| लोकः | ८. संसार | यः तावत् | १०. जो, किन्तु |
| विकर्म, निरतः | ९. कुकर्म में, लगा हुआ है | अस्य | १२. इस संसारी जीव की |
| कुशले | ४. कल्याण कारी | बलवान् | ११. शक्तिमान् भगवान् काल |
| प्रमत्तः, | ६. प्रमादी होकर | इह | १३. संसार में |
| कर्मणि | ५. कर्म को करने में | जीवित, आशाम् | १४. जीने की, आशा को |
| अयम् | ७. यह | सद्यः, छिनत्ति | १५. शीघ्रता से, काट रहा है |
| त्वद्, उदिते | १. आपके द्वारा, बताये गये | अनिमिषाय | १७. आप काल रूप को |
| भवत् अर्चने | २. आपकी, आराधना रूप | नमः, अस्तु | १८. नमस्कार, है |
| स्वे । | ३. अपने | तस्मै ॥ | १६. उस |

**श्लोकार्थ**—आपके द्वारा बताये गये आपकी आराधना रूप अपने कल्याणकारी कर्म को करने में प्रमादी होकर यह संसार कुकर्म में लगा हुआ है; किन्तु जो शक्तिमान् भगवान् काल इस संसारी जीव की संसार में जीने की आशा को शीघ्रता से काट रहा है, उस आप कालरूप परमात्मा को नमस्कार है।

## अष्टादशः श्लोकः

**यस्माद्बिभेम्यहमपि द्विपरार्धधिष्ण्यम्, अध्यासितः सकललोकनमस्कृतं यत् ।**
**तेपे तपोः बहुसवोऽवरुरुत्समानस्, तस्मै नमो भगवतेऽधिमखाय तुभ्यम् ॥१८॥**

**पदच्छेद**— यस्मात् बिभेमि अहम् अपि द्विपरार्ध धिष्ण्यम्, अध्यासितः सकल लोक नमस्कृतम् यत् ।
तेपे तपः बहु सवः अवरुरुत्समानः, तस्मै नमः भगवते अधिमखाय तुभ्यम् ॥

**शब्दार्थ**—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यस्मात्, बिभेमि | ७. जिस काल से, डरता हूँ | तपः | १०. तपस्या का |
| अहम्, अपि | ६. मैं, भी | बहु सवः | ९. अनेकों वर्षों तक (मैंने) |
| द्विपरार्ध, धिष्ण्यम् | २. दो परार्धवर्ष. स्थायी | अवरुरुत्समानः, | ८. (उसे) रोकने की इच्छा से |
| अध्यासितः | ५. स्वामी | तस्मै | १३. उस |
| सकल, लोक | ३. सारे, विश्व से | नमः | १६. नमस्कार है |
| नमस्कृतम् | ४. वन्दित है (उसका) | भगवते | १५. भगवान् को (मेरा) |
| यत् । | १. जो सत्यलोक | अधिमखाय | १२. (मेरे) तप के साक्षी |
| तेपे | ११. अनुष्ठान किया | तुभ्यम् ॥ | १४. आप |

**श्लोकार्थ**—जो सत्यलोक दो परार्ध वर्ष तक स्थायी और सारे विश्व से वन्दित है, उसका स्वामी मैं भी जिस काल से डरता हूँ, उसे रोकने की इच्छा से अनेकों वर्षों तक मैंने तपस्या का अनुष्ठान किया, मेरे तप के साक्षी उस आप भगवान् को मेरा नमस्कार है।

# एकोनविंशः श्लोकः

**तिर्यङ्मनुष्यविबुधादिषु जीवयोनि—ष्वात्मेच्छयाऽऽत्मकृतसेतुपरीप्सया यः ।**
**रेमे निरस्तरतिरप्यवरुद्धदेहस्, तस्मै नमो भगवते पुरुषोत्तमाय ॥१६॥**

पदच्छेद—तिर्यक् मनुष्य विबुध आदिषु जीव योनिषु, आत्म इच्छया आत्म कृत सेतु परीप्सया यः ।
रेमे निरस्त रतिः अपि अवरुद्ध देहः, तस्मै नमः भगवते पुरुषोत्तमाय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तिर्यक्, मनुष्य | ५. | पशु-पक्षी, मनुष्य | निरस्त रतिः | ११. | विषय सुख से रहित होकर |
| विबुध, आदिषु | ६. | देवता, इत्यादि अनेक | अपि | १०. | और |
| जीव, योनिषु, | ७. | जीवों की, योनियों में | अवरुद्ध | ६. | धारण किया |
| आत्म, इच्छया | ४. | अपनी, इच्छा से | देहः, | ८. | अवतार |
| आत्म, कृत | २. | अपने द्वारा, बनाई गयी | तस्मै | १३. | उन |
| सेतु, परीप्सया | ३. | धर्म-मर्यादा की, रक्षा के लिए | नमः | १६. | नमस्कार है |
| यः । | १. | जिन्होंने | भगवते | १५. | भगवान को |
| रेमे | १२ | (उसमें) विहार किया | पुरुषोत्तमाय ॥ | १४ | पुरुषोत्तम |

श्लोकार्थ—जिन्होंने अपने द्वारा बनाई गयी धर्म-मर्यादा की रक्षा के लिए अपनी इच्छा से पशु-पक्षी, मनुष्य, देवता इत्यादि अनेक जीवों की योनियों में अवतार धारण किया और विषय-सुख से रहित होकर उसमें विहार किया; उन पुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार है ।

# विंशः श्लोकः

**योऽविद्ययानुपहतोऽपि दशार्धवृत्त्या, निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्रः ।**
**अन्तर्जलेऽहिकशिपुस्पर्शानुकूलाम्, भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन् ॥२०॥**

पदच्छेद—यः अविद्यया अनुपहतः अपि दशार्ध वृत्त्या, निद्राम् उवाह जठरी कृत लोक यात्रः ।
अन्तर् जले अहि कशिपु स्पर्श अनुकूलाम्, भीम ऊर्मि मालिनि जनस्य सुखम् विवृण्वन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जिन्होंने | अन्तर् जले | १२. | जल के अन्दर |
| अविद्यया | ८. | योगमाया से | अहि, कशिपु | १४. | शेषनाग की, शय्या पर |
| अनुपहतः, अपि | ६. | दूर रहकर भी | स्पर्श अनुकूलाम् | १३. | सुखदायी कोमल |
| दशार्ध, वृत्त्या, | ७. | पाँच, शक्तियों वाली | भीम, ऊर्मि | १०. | भयंकर, तरंग |
| निद्राम् | १५. | योग निद्रा का | मालिनि | ११. | मालाओं वाले समुद्र के |
| उवाह | १६. | आश्रय लिया था | जनस्य | ४. | (उन) जीवों को |
| जठरी कृत | ३. | उदर में रखकर | सुखम् | ५. | सुख |
| लोक यात्रः । | २. | सभी जीवों को | विवृण्वन् ॥ | ६. | पहुँचाते हुए |

श्लोकार्थ—जिन्होंने सभी जीवों को उदर में रखकर उन जीवों को सुख पहुँचाते हुए एवं (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश) पाँच शक्तियों वाली योगमाया से दूर रहकर भी भयंकर तरंग मालाओं वाले समुद्र के जल के अन्दर शेषनाग की सुखदायी कोमल शय्या पर योगनिद्रा का आश्रय लिया था ।

## एकविंशः श्लोकः

**यन्नाभिपद्मभवनादहमासमीड्य, लोकत्रयोपकरणो यदनुग्रहेण ।**
**तस्मै नमस्त उदरस्थभवाय योग–निद्रावसानविकसन्नलिनेक्षणाय ।।२१।।**

**पदच्छेद**—यद् नाभि पद्म भवनात् अहम् आसम् ईड्य, लोक त्रय उपकरणः यद् अनुग्रहेण ।
तस्मै नमः ते उदरस्थ भवाय योग, निद्रा वसान विकसत् नलिन ईक्षणाय ।।

**शब्दार्थ**—

| शब्द | क्रम | अर्थ |
|---|---|---|
| यद्, नाभि | ६ | जिनके; नाभि |
| पद्म, भवनात् | ७. | कमल के, मध्य |
| अहम् | ५. | मैं |
| आसम् | ८ | उत्पन्न हुआ |
| ईड्य, | १. | हे पूजनीय भगवन् ! |
| लोक त्रय | ३. | तीनों लोकों की |
| उपकरणः | ४. | सृष्टि का कारण |
| यद, अनुग्रहेण । | २. | जिनकी, कृपा से |
| तस्मै | १६. | उन |
| नमः | १८. | नमस्कार है |
| ते | १७. | आपको |
| उदरस्थ | १०. | उदर में रखने वाले (तथा) |
| भवाय | ९. | सभी जीवों को |
| योग, निद्रा | ११. | योग, माया का |
| अवसान | १२. | अन्त हो जाने से |
| विकसत् | १३. | विकसित |
| नलिन | १४. | कमल |
| ईक्षणाय ।। | १५. | नयन |

**श्लोकार्थ**—हे पूजनीय भगवन ! जिनकी कृपा से तीनों लोकों की सृष्टि का कारण मैं जिनके नाभि कमल के मध्य उत्पन्न हुआ; सभी जीवों को उदर में रखने वाले तथा योग-माया का अन्त हो जाने से विकसित कमल नयन उन आपको नमस्कार है ।

## द्वाविंशः श्लोकः

**सोऽयं समस्तजगतां सुहृदेक आत्मा, सत्त्वेन यन्मृडयते भगवान् भगेन ।**
**तेनैव मे दृशमनुस्पृशताद्यथाहम्, स्रक्ष्यामि पूर्ववदिदं प्रणतप्रियोऽसौ ।।२२।।**

**पदच्छेद**—सः अयम् समस्त जगताम् सुहृद् एकः आत्मा, सत्त्वेन यद् मृडयते भगवान् भगेन ।
तेन एव मे दृशम् अनुस्पृशतात् यथा अहम्, स्रक्ष्यामि पूर्ववत् इदम् प्रणत प्रियः असौ ।।

**शब्दार्थ**—

| शब्द | क्रम | अर्थ |
|---|---|---|
| सः अयम् | ५. | वे ही, ये |
| समस्त, जगताम् | १. | सम्पूर्ण, प्राणियों के |
| सुहृद् | ३. | मित्र (और) |
| एकः | २. | एकमात्र |
| आत्मा, | ४. | आत्मा |
| सत्त्वेन | ८. | ज्ञान (और) |
| यद् | ७. | जिस |
| मृडयते | १०. | सुख पहुँचाते हैं |
| भगवान् | ६. | भगवान् |
| भगेन । | ९. | ऐश्वर्य से |
| तेन एव | १३. | उसी ज्ञान और ऐश्वर से |
| मे, दृशम् | १४. | मेरी, बुद्धि को |
| अनुस्पृशतात् | १५. | युक्त करें |
| यथा, अहम्, | १६. | जिससे, मैं |
| स्रक्ष्यामि | १९. | रचना कर सकूँ |
| पूर्ववत्, | १७. | पूर्वकल्प के समान |
| इदम् | १८. | इस विश्व की |
| प्रणत, प्रियः | ११. | शरणागत, वत्सल |
| असौ ।। | १२. | वे भगवान् |

**श्लोकार्थ**—सम्पूर्ण प्राणियों के एकमात्र मित्र और आत्मा वे ही ये भगवान् जिस ज्ञान और ऐश्वर्य से सुख पहुँचाते हैं, शरणागत-वत्सल वे भगवान् उसी ज्ञान और ऐश्वर्य से मेरी बुद्धि को युक्त करें; जिससे मैं पूर्वकल्प के समान इस विश्व की रचना कर सकूँ ।

## त्रयोविंश: श्लोक:

**एष प्रपन्नवरदो रमयाऽऽत्मशक्त्या, यद्यत्करिष्यति गृहीतगुणावतारः ।**
**तस्मिन् स्वविक्रममिदं सृजतोऽपि चेतो, युञ्जीत कर्मशमलं च यथा विजह्याम्।।२३।।**

पदच्छेद—एषः प्रपन्न वरदः रमया आत्म शक्त्या, यद् यद् करिष्यति गृहीत गुण अवतारः ।
तस्मिन् स्व विक्रमम् इदम् सृजतः अपि चेतः, युञ्जीत कर्म शमलम् च तथा विजह्याम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः | २. | ये भगवान् | इदम् | ६. | यह |
| प्रपन्न, वरदः | १. | भक्तों के, वरदायक | सृजतः | १३. | सृष्टि करते समय |
| रमया | ४. | लक्ष्मी जी के साथ | अपि | ११. | भी |
| आत्म शक्त्या, | ३. | अपनी शक्ति | चेतः | १४. | (मेरे) मन को |
| यद् यद् | ७. | जो-जो कर्म | युञ्जीत | १५. | प्रेरित करें |
| करिष्यति | ८. | करेंगे | कर्म | १६. | कर्म से |
| गृहीत | ६. | लेकर | शमलम् | १८. | सृष्टि के बाधक |
| गुणअवतारः। | ५. | कलावतार | च | १७. | कि (मैं) |
| तस्मिन् | १२. | उन्हीं में से एक है | यथा | १६. | जिससे |
| स्व विक्रमम् | १०. | मेरा कर्म | विजह्याम् ।। | २०. | दूर रह सकूँ |

श्लोकार्थ—भक्तों के वरदायक ये भगवान् अपनी शक्ति लक्ष्मी जी के साथ कलावतार लेकर जो-जो कार्य करेंगे; यह मेरा कर्म भी उन्हीं में से एक है। ये भगवान् सृष्टि करते समय मेरे मन को प्रेरित करें: जिससे कि मैं सृष्टि के बाधक कर्म से दूर रह सकूँ।

## चतुर्विंश: श्लोक:

**नाभिह्रदादिह सतोऽम्भसि यस्य पुंसो, विज्ञानशक्तिरहमासमनन्तशक्तेः ।**
**रूपं विचित्रमिदमस्य विवृण्वतो मे, मारीरिषीष्ट निगमस्य गिरां विसर्गः ।।२४।।**

पदच्छेद—नाभि ह्रदात् इह सतः अम्भसि यस्य पुंसः, विज्ञान शक्तिः अहम् आसम् अनन्त शक्तेः ।
रूपम् विचित्रम् इदम् अस्य विवृण्वतः मे, (मा रीरिषीष्ट निगमस्य गिराम् विसर्गः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाभि, ह्रदात् | ६. | नाभि, सरोवर से | रूपम् | १२. | स्वरूप का |
| इह | १. | इस (प्रलय कालीन) | विचित्रम् | ११. | अद्भुत |
| सतः | ३. | विद्यमान (एवम्) | इदम् | १०. | इस |
| अम्भसि | २. | जल में | अस्य | ६. | (वे भगवान्) संसार के |
| यस्य, पुंसः, | ५. | जिस, परम पुरुष के | विवृण्वतः, मे | १३. | विस्तार करते समय, मेरी |
| विज्ञान शक्तिः | ७. | (उसकी) ज्ञान शक्ति के रूप में | मा रीरिषीष्ट | १६. | नष्ट न होने दें |
| अहम्, आसम् | ८. | मैं, उत्पन्न हुआ हूँ | निगमस्य | १४. | वेद की |
| अनन्त, शक्तेः। | ४. | असीम, शक्ति सम्पन्न | गिराम् विसर्गः ।। | १५. | वाणी के उच्चारण को |

श्लोकार्थ—इस प्रलय कालीन जल में विद्यमान एवं असीम शक्ति सम्पन्न जिस परम पुरुष के नाभि सरोवर से उसकी ज्ञान शक्ति के रूप में मैं उत्पन्न हुआ हूँ; वे भगवान् संसार के इस अद्भुत स्वरूप का विस्तार करते समय मेरी वेद की वाणी के उच्चारण को नष्ट न होने दें।

# पञ्चविंशः श्लोकः

सोऽसावदभ्रकरुणो भगवान् विवृद्ध—प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन् ।
उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषादं, माध्व्या गिरापनयतात्पुरुषः पुराणः ॥२५॥

पदच्छेद—सः असौ अदभ्र करुणः भगवान् विवृद्ध, प्रेम स्मितेन नयन अम्बुरुहम् विजृम्भन् ।
उत्थाय विश्व विजयाय च नः विषादम्, माध्व्या गिरा अपनयतात् पुरुषः पुराणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | १. अब | विश्व विजयाय | १२. जगत् की सृष्टि के लिए |
| असौ | ५. वे | च | ११. तथा |
| अदभ्र, करुणः | २. अपार, करुणामय | नः | १४. हमारे |
| भगवान्, विवृद्ध, | ६. भगवान्, परम | विषादम्, | १५. अज्ञान को |
| प्रेम, स्मितेन | ७. प्रेम भरी, मुस्कान के साथ | माध्व्या, गिरा | १३. (अपनी) मधुर, वाणी से |
| नयन, अम्बुरुहम् | ८. (अपने) नेत्र, कमल को | अपनयतात् | १६. दूर करें |
| विजृम्भन् । | ९. खोलते हुए | पुरुषः | ४. पुरुष |
| उत्थाय | १०. उठें | पुराणः ॥ | ३. आदि |

श्लोकार्थ—अब अपार करुणामय, आदि पुरुष वे भगवान् परम प्रेम भरी मुस्कान के साथ अपने नेत्र-कमल को खोलते हुये उठें तथा जगत् की सृष्टि के लिए अपनी मधुर वाणी से हमारे अज्ञान को दूर करें ।

# षड्विंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

स्वसम्भवं निशाम्यैवं तपोविद्यासमाधिभिः ।
यावन्मनोवचः स्तुत्वा विरराम स खिन्नवत् ॥२६॥

पदच्छेद— स्व सम्भवम् निशाम्य एवम्, तपः विद्या समाधिभिः ।
यावत् मनः वचः स्तुत्वा, विरराम सः खिन्नवत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| स्व | ३. अपनी | यावत् | ११. शक्ति भर |
| सम्भवम् | ४. उत्पत्ति के आश्रय भगवान् का | मनः | ९. मन और |
| निशाम्य | ५. दर्शन करके (तथा) | वचः | १०. वाणी से (उनकी) |
| एवम् | १. इस प्रकार | स्तुत्वा | १२. स्तुति करके |
| तपः | ६. तपस्या | विरराम | १४. विराम ले लिये |
| विद्या | ७. ज्ञान और | सः | २. ब्रह्मा जी |
| समाधिभिः । | ८. समाधि के द्वारा | खिन्नवत् ॥ | १३. उदासीन की भाँति |

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्रह्मा जी अपनी उत्पत्ति के आश्रय भगवान् का दर्शन करके तथा तपस्या, ज्ञान और समाधि के द्वारा मन और वाणी से उनकी शक्ति भर स्तुति करके उदासीन की भाँति विराम ले लिये ।

## सप्तविंशः श्लोकः

अथाभिप्रेतमन्वीक्ष्य ब्रह्मणो मधुसूदनः ।
विषण्णचेतसं तेन कल्पव्यतिकराम्भसा ॥२७॥

पदच्छेद—

अथ अभिप्रेतम् अन्वीक्ष्य, ब्रह्मणः मधुसूदनः ।
विषण्ण चेतसम् तेन, कल्प व्यतिकर अम्भसा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर | विषण्ण | १०. | दुःखी देखा |
| अभिप्रेतम् | ४. | तात्पर्य | चेतसम् | ६. | (उन्हें) मन में |
| अन्वीक्ष्य | ५. | समझ लिया (और) | तेन | ६. | उस |
| ब्रह्मणः | ३. | ब्रह्मा जी का | कल्प व्यतिकर | ७. | प्रलयकालीन |
| मधुसूदनः । | २. | भगवान् मधुसूदन ने | अम्भसा ॥ | ८. | जल से |

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् मधुसूदन ने ब्रह्मा जी का तात्पर्य समझ लिया और उस प्रलयकालीन जल से उन्हें मन में दुःखी देखा ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

लोकसंस्थानविज्ञान, आत्मनः परिखिद्यतः ।
तमाहागाधया वाचा, कश्मलं शमयन्निव ॥२८॥

पदच्छेद—

लोक संस्थान विज्ञाने, आत्मनः परिखिद्यतः ।
तम् आह अगाधया वाचा, कश्मलम् शमयन् इव ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लोक | २. | संसार की | आह | १२. | बोले |
| संस्थान | ३. | रचना के | अगाधया | ६. | गम्भीर |
| विज्ञाने, | ४. | ज्ञान के विषय में | वाचा | १०. | वाणी में |
| आत्मनः | १. | (ब्रह्मा जी) मन में | कश्मलम् | ६. | (उनके) कष्ट को |
| परिखिद्यतः । | ५. | दुःखी हो रहे थे | शमयन् | ७. | शान्त करते हुए |
| तम् | ११. | उनसे | इव ॥ | ८. | से (भगवान्) |

श्लोकार्थ—ब्रह्माजी मन में संसार की रचना के ज्ञान के विषय में दुःखी हो रहे थे । उनके कष्ट को शान्त करते हुये से भगवान् गम्भीर वाणी में उनसे बोले ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवान् उवाच—

मा वेदगर्भ गास्तन्द्रीं सर्ग उद्यममावह ।
तन्मयाऽऽपादितं ह्यग्रे यन्मां प्रार्थयते भवान् ।।२९।।

पदच्छेद— मा वेदगर्भ गाः तन्द्रीम्, सर्गे उद्यमम् आवह ।
तद् मया आपादितम् हि अग्रे, यद् माम् प्रार्थयते भवान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मा | ३. | न | मया | १३. | मैंने |
| वेदगर्भ | १. | हे ब्रह्मा जी ! | आपादितम् | १६. | पूर्ण कर दिया है |
| गाः | ४. | करें (और) | हि | १५. | ही |
| तन्द्रीम्, | २. | आलस्य | अग्रे | १४. | पहले |
| सर्गे | ५. | सृष्टि करने में | यद् | १०. | जो कुछ |
| उद्यमम् | ६. | प्रयास | माम् | ९. | मुझसे |
| आवह। | ७. | करें | प्रार्थयते | ११. | चाह रहे हैं |
| तद् | १२. | उसे | भवान् ।। | ८. | आप |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मा जी ! आप आलस्य न करें और सृष्टि करने में प्रयास करें। आप मुझसे जो कुछ चाह रहे हैं, उसे मैंने पहले ही पूर्ण कर दिया है।

# त्रिंशः श्लोकः

भूयस्त्वं तप आतिष्ठ, विद्यां चैव मदाश्रयाम् ।
ताभ्यामन्तर्हृदि ब्रह्मन्, लोकान् द्रक्ष्यस्यपावृतान् ।।३०।।

पदच्छेद— भूयः त्वम् तपः आतिष्ठ, विद्याम् च एव मद् आश्रयाम् ।
ताभ्याम् अन्तर् हृदि ब्रह्मन्, लोकान् द्रक्ष्यसि अपावृतान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूयः | ३. | फिर से | आश्रयाम् । | ७. | आश्रित (भागवत) |
| त्वम् | २. | आप | ताभ्याम् | ११. | उन दोनों से (आप) |
| तपः | ४. | तपस्या का | अन्तर् | १३. | अन्दर |
| आतिष्ठ | १०. | अनुष्ठान करें | हृदि | १२. | (अपने) हृदय के |
| विद्याम् | ८. | ज्ञान का | ब्रह्मन्, | १. | हे ब्रह्मा जी ! |
| च | ५. | और | लोकान् | १४. | सभी लोकों को |
| एव | ९. | ही | द्रक्ष्यसि | १६. | देखेंगे। |
| मद् | ६. | मेरे | अपावृतान् | १५. | स्पष्ट रूप से |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मा जी ! आप फिर से तपस्या का और मेरे आश्रित भागवत ज्ञान का ही अनुष्ठान करें। उन दोनों से आप अपने हृदय के अन्दर सभी लोकों को स्पष्ट रूप से देखेंगे।

## एकत्रिंश: श्लोक:

तत आत्मनि लोके च भक्तियुक्तः समाहितः ।
द्रष्टासि मां ततं ब्रह्मन् मयि लोकांस्त्वमात्मनः ॥३१॥

पदच्छेद—

ततः आत्मनि लोके च, भक्ति युक्तः समाहितः ।
द्रष्टासि माम् ततम् ब्रह्मन्, मयि लोकान् त्वम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | तदनन्तर | माम् | ६. | मुझे (तथा) |
| आत्मनि | ८ | अपने में | ततम् | १३. | व्याप्त |
| लोके | ६. | ब्रह्माण्ड में | ब्रह्मन्, | २. | हे ब्रह्मा जी ! |
| च | ७. | और | मयि | १०. | मेरे में |
| भक्ति, युक्तः | ४. | भक्ति से, युक्त होकर | लोकान् | ११. | ब्रह्माण्ड को (और) |
| समाहितः । | ५. | समाधि द्वारा | त्वम् | ३. | आप |
| द्रष्टासि | १४. | देखेंगे | आत्मनः ॥ | १२. | अपने को |

श्लोकार्थ—तदनन्तर हे ब्रह्मा जी ! आप भक्ति से युक्त होकर समाधि द्वारा ब्रह्माण्ड में और अपने में मुझे तथा मेरे में ब्रह्माण्ड को और अपने को व्याप्त देखेंगे ।

## द्वात्रिंश: श्लोक:

यदा तु सर्वभूतेषु दारुष्वग्निमिव स्थितम् ।
प्रतिचक्षीत मां लोको जह्यात्तर्ह्येव कश्मलम् ॥३२॥

पदच्छेद—

यदा तु सर्व भूतेषु, दारुषु अग्निम् इव स्थितम् ।
प्रतिचक्षीत माम् लोकः, जह्यात् तर्हि एव कश्मलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | २. | जिस समय | स्थितम् । | ९. | विद्यमान |
| तु | १. | तथा | प्रतिचक्षीत | ११. | देखता है |
| सर्व | ७. | सभी | माम् | १०. | मुझे |
| भूतेषु | ८. | प्राणियों में | लोकः | ३. | प्राणी |
| दारुषु | ४. | काष्ठ में विद्यमान | जह्यात् | १४. | मुक्त हो जाता है |
| अग्निम् | ५. | अग्नि के | तर्हि एव | १२. | उसी समय (वह) |
| इव | ६. | समान | कश्मलम् ॥ | १३. | पाप से |

श्लोकार्थ—तथा जिस समय प्राणी काष्ठ में विद्यमान अग्नि के समान सभी प्राणियों में विद्यमान मुझे देखता है; उसी समय वह पाप से मुक्त हो जाता है ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यदा रहितमात्मानं भूतेन्द्रियगुणाशयैः ।
स्वरूपेण मयोपेतं पश्यन् स्वाराज्यमृच्छति ।।३३।।

पदच्छेद—

यदा रहितम् आत्मानम्, भूत इन्द्रिय गुण आशयैः ।
स्वरूपेण मया उपेतम्, पश्यन् स्वाराज्यम् ऋच्छति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब (मनुष्य) | स्वरूपेण | ८. | रूप को |
| रहितम् | ६. | हीन | मया | ६. | मुझसे |
| आत्मानम् | ७. | अपनी आत्मा के | उपेतम् | १०. | अभिन्न |
| भूत | २. | पंच महाभूत | पश्यन् | ११. | समझता है (तब वह) |
| इन्द्रिय | ३. | इन्द्रिय | स्वाराज्यम् | १२. | मोक्ष पद को |
| गुण | ४. | सत्त्वादि गुण (और) | ऋच्छति ।। | १३. | प्राप्त करता है |
| आशयैः । | ५. | अन्तःकरण से | | | |

श्लोकार्थ—जब मनुष्य पंचमहाभूत, इन्द्रिय, सत्त्वादिगुण और अन्तःकरण से हीन अपनी आत्मा के रूप को मुझसे अभिन्न समझता है; तब वह मोक्ष पद प्राप्त करता है ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

नानाकर्मवितानेन प्रजा बह्वीः सिसृक्षतः ।
नात्मावसीदत्यस्मिस्ते वर्षीयान्मदनुग्रहः ।।३४।।

पदच्छेद—

नाना कर्म वितानेन, प्रजाः बह्वीः सिसृक्षतः ।
न आत्मा अवसीदति अस्मिन् ते, वर्षीयान् मद् अनुग्रहः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाना | १. | विविध | आत्मा | ८. | आत्मा |
| कर्म | २. | कर्मों के | अवसीदति | १०. | खिन्न होती है |
| वितानेन | ३. | परिणाम से | अस्मिन् | ११. | इसमें |
| प्रजाः | ५. | प्रजाओं की | ते | ७. | आपकी |
| बह्वीः | ४. | अनेक प्रकार की | वर्षीयान् | १३. | बहुत बड़ी |
| सिसृक्षतः । | ६. | सृष्टि करते समय | मद् | १२. | मेरी |
| न | ६. | नहीं | अनुग्रहः ।। | १४. | कृपा है |

श्लोकार्थ—विविध कर्मों के परिणाम से अनेक प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि करते समय आपकी आत्मा खिन्न नहीं होती है, इसमें मेरी बहुत बड़ी कृपा है ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ऋषिमाद्यं न बध्नाति, पापीयांस्त्वां रजोगुणः ।
यन्मनो मयि निर्बद्धं, प्रजाः संसृजतोऽपि ते ॥३५॥

पदच्छेद—

ऋषिम् आद्यम् न बध्नाति पापीयान्, त्वाम् रजोगुणः ।
यद् मनः मयि निर्बद्धम्, प्रजाः संसृजतः अपि ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऋषिम् | २. | मन्त्र द्रष्टा | यद् | ८. | क्योंकि |
| आद्यम् | १. | प्रथम | मनः | १३. | चित्त |
| न | ६. | नहीं | मयि | १४. | मेरे में |
| बध्नाति, | ७. | बांधते हैं | निर्बद्धम्, | १५. | लगा रहता है |
| पापीयान् | ४. | पाप के | प्रजाः | ९. | प्रजाओं की |
| त्वाम् | ३. | आपको | संसृजतः | १०. | सृष्टि करते समय |
| रजोगुणः । | ५. | रजोगुण | अपि | ११. | भी |
| | | | ते ॥ | १२. | आपका |

श्लोकार्थ—प्रथम मन्त्रद्रष्टा आपको पाप के रजोगुण नहीं बाँधते हैं, क्योंकि प्रजाओं की सृष्टि करते समय भी आपका चित्त मेरे में लगा रहता है ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

ज्ञातोऽहं भवता त्वद्य दुर्विज्ञेयोऽपि देहिनाम् ।
यन्मां त्वं मन्यसेऽयुक्तं भूतेन्द्रियगुणात्मभिः ॥३६॥

पदच्छेद—

ज्ञातः अहम् भवता तु अद्य, दुर्विज्ञेयः अपि देहिनाम् ।
यद् माम् त्वम् मन्यसे अयुक्तम्, भूत इन्द्रिय गुण आत्मभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञातः | ८. | जान लिया है | यद् | ९. | क्योंकि |
| अहम् | ७. | मुझे | माम् | ११. | मुझे |
| भवता | ३. | आपने | त्वम् | १०. | आप |
| तु | १. | तथा | मन्यसे | १६. | मानते हैं |
| अद्य | २. | आज | अयुक्तम् | १५. | रहित |
| दुर्विज्ञेयः | ५. | अज्ञात होने पर | भूत, इन्द्रिय | १२. | पंचमहाभूत, इन्द्रिय |
| अपि | ६. | भी | गुण | १३. | सत्त्वादि गुण (और) |
| देहिनाम् । | ४. | देहधारियों से | आत्मभिः ॥ | १४. | अन्तःकरण से |

श्लोकार्थ—तथा आज आपने देहधारियों से अज्ञात होने पर भी मुझे जान लिया है । क्योंकि आप मुझे पंच महाभूत, इन्द्रिय, सत्त्वादि गुण और अन्तःकरण से रहित मानते हैं ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

तुभ्यं मद्विचिकित्सायामात्मा मे दर्शितोऽबहिः ।
नालेन सलिले मूलं पुष्करस्य विचिन्वतः ।।३७।।

पदच्छेद—

तुभ्यम् मद् विचिकित्सायाम्, आत्मा मे दर्शितः अबहिः ।
नालेन सलिले मूलम्, पुष्करस्य विचिन्वतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तुभ्यम् | १०. | आपको | अबहिः । | ११. | अन्तःकरण में |
| मद् | १. | मेरे विषय में | नालेन | ३. | कमल नाल के सहारे |
| विचिकित्सायाम् | २. | संदेह होने पर (आप) | सलिले | ४. | जल में |
| आत्मा | ९. | स्वरूप | मूलम् | ६. | जड़ को |
| मे | ८. | मैंने अपना | पुष्करस्य | ५. | कमल की |
| दर्शितः | १२. | दिखाया था | विचिन्वतः ।। | ७. | ढूँढते रहे उस समय |

श्लोकार्थ—मेरे विषय में संदेह होने पर आप कमल नाल के सहारे जल में कमल की जड़ ढूँढते रहे । उस समय मैंने अपना स्वरूप आपको अन्तःकरण में दिखाया था ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

यच्चकर्थाङ्ग मत्स्तोत्रं मत्कथाभ्युदयाङ्कितम् ।
यद्वा तपसि ते निष्ठा स एष मदनुग्रहः ।।३८।।

पदच्छेद—

यद् चकर्थ अङ्ग मत् स्तोत्रम्, मत् कथा अभ्युदय अङ्कितम् ।
यद् वा तपसि ते निष्ठा, सः एषः मत् अनुग्रहः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ६. | जो | यद् | ११. | जो |
| चकर्थ | ९. | की है | वा | १०. | अथवा |
| अङ्ग | १. | हे तात ब्रह्मा जी ! तुमने | तपसि | १२. | तपस्या में |
| मत् | ७. | मेरी | ते | १३. | तुम्हारी |
| स्तोत्रम्, | ८. | स्तुति | निष्ठा, | १४. | श्रद्धा है |
| मत् | २. | मेरी | सः | १५. | सो |
| कथा | ३. | कथा के | एषः | १६. | यह (भी) |
| अभ्युदय | ४. | वैभव से | मत् | १७. | मेरी |
| अङ्कितम् । | ५. | युक्त | अनुग्रहः ।। | १८. | कृपा (का फल है) |

श्लोकार्थ—हे तात ब्रह्मा जी ! तुमने मेरी कथा के वैभव से युक्त जो मेरी स्तुति की है अथवा जो तपस्या में तुम्हारी श्रद्धा है, सो यह भी मेरी कृपा का ही फल है ।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्रीतोऽहमस्तु भद्रं ते, लोकानां विजयेच्छया ।
यदस्तौषीर्गुणमयं, निर्गुणं माऽनुवर्णयन् ॥३९॥

पदच्छेद—

प्रीतः अहम् अस्तु भद्रम् ते, लोकानां विजय इच्छया ।
यद् अस्तौषीः गुणमयम्, निर्गुणम् मा अनुवर्णयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रीतः | ११. | प्रसन्न हूँ (अतः) | इच्छया । | ३. | इच्छा से (तुमने) |
| अहम् | १०. | (उससे) मैं | यद् | ४. | जो (मेरी) |
| अस्तु | १४. | हो | अस्तौषीः | ५. | स्तुति की है |
| भद्रम् | १३. | कल्याण | गुणमयम्, | ८. | सगुण रूप में |
| ते, | १२. | तुम्हारा | निर्गुणम् | ७. | निर्गुण का |
| लोकानाम् | १. | लोकों की | मा | ६. | (तथा) मुझ |
| विजय | २. | रचना की | अनुवर्णयन् । | ९. | वर्णन किया है |

श्लोकार्थ—लोकों की रचना की इच्छा से तुमने जो मेरी स्तुति की है तथा मुझ निर्गुण का सगुण रूप में वर्णन किया है; उससे मैं प्रसन्न हूँ; अतः तुम्हारा कल्याण हो।

# चत्वारिंशः श्लोकः

य एतेन पुमान्नित्यं, स्तुत्वा स्तोत्रेण मां भजेत् ।
तस्याशु सम्प्रसीदेयं, सर्वकामवरेश्वरः ॥४०॥

पदच्छेद—

यः एतेन पुमान् नित्यम्, स्तुत्वा स्तोत्रेण माम् भजेत् ।
तस्य आशु सम्प्रसीदेयम्, सर्व काम वर ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जो | भजेत् । | ८. | भजन करता है |
| एतेन | ४. | इस | तस्य | १२. | उसके ऊपर |
| पुमान् | २. | पुरुष | आशु | १३. | शीघ्र ही |
| नित्यम् | ३. | प्रतिदिन | सम्प्रसीदेयम् | १४. | प्रसन्न होता हूँ |
| स्तुत्वा | ६. | स्तुति करके | सर्व, काम | ९. | सभी, कामनाओं |
| स्तोत्रेण | ५. | स्तोत्र से | वर | १०. | (और) वरदानों को |
| माम् | ७. | मेरा | ईश्वरः॥ | ११. | (देने में) समर्थ (मैं) |

श्लोकार्थ—जो पुरुष प्रतिदिन इस स्तोत्र से स्तुति करके मेरा भजन करता है, सभी कामनाओं और वरदानों को देने में समर्थ है मैं उसके ऊपर शीघ्र ही प्रसन्न होता हूँ।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

पूर्तेन तपसा यज्ञैर्दानैर्योगसमाधिना ।
राद्धं निःश्रेयसं पुंसां मत्प्रीतिस्तत्त्वविन्मतम् ॥४१॥

पदच्छेद—

पूर्तेन तपसा यज्ञैः, दानैः योग समाधिना ।
राद्धम् निःश्रेयसम् पुंसाम्, मत् प्रीतिः तत्त्ववित् मतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पूर्तेन | ३. | कुँआ आदि के निर्माण से | निःश्रेयसम् | १०. | परम कल्याण |
| तपसा | ४. | तपस्या से | पुंसाम्, | ८. | मनुष्यों को |
| यज्ञैः, दानैः | ५. | यज्ञ, दान से (और) | मत् | ११. | मेरी |
| योग | ६. | योग | प्रीतिः | १२. | प्रसन्नता (ही है) |
| समाधिना । | ७. | समाधि से | तत्त्ववित् | १. | तत्त्ववेत्ता विद्वानों का |
| राद्धम् | ९. | प्राप्त होने वाला | मतम् ॥ | २. | (यह) मत (है कि) |

श्लोकार्थ—तत्त्ववेत्ता विद्वानों का यह मत है कि कूँआ आदि के निर्माण से, तपस्या से, यज्ञ-दान से और योग-समाधि से मनुष्यों को प्राप्त होने वाला परम कल्याण मेरी प्रसन्नता ही है ।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

अहमात्माऽऽत्मनां धातः प्रेष्ठः सन् प्रेयसामपि ।
अतो मयि रतिं कुर्याद्देहादिर्यत्कृते प्रियः ॥४२॥

पदच्छेद—

अहम् आत्मा आत्मानाम् धातः, प्रेष्ठः सन् प्रेयसाम् अपि ।
अतः मयि रतिम् कुर्यात्, देह आदिः यत् कृते प्रियः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम् | ६. | (वह) मैं | अतः | १३. | इसलिए |
| आत्मा | १२. | आत्मा हूँ | मयि | १४. | मुझसे |
| आत्मनाम् | ११. | सभी प्राणियों का | रतिम् | १५. | प्रेम |
| धातः | १. | हे ब्रह्मा जी ! | कुर्यात्, | १६ | करना चाहिए |
| प्रेष्ठः | ९. | प्रिय | देह | २. | शरीर |
| सन् | १०. | होता हुआ | आदिः | ३. | इत्यादि |
| प्रेयसाम् | ७. | स्त्री-पुत्रादि प्रियों का | यत्कृते | ४. | जिसके लिए |
| अपि । | ८. | भी | प्रियः । | ५. | प्रिय (हैं) |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मा जी ! शरीर इत्यादि जिसके लिए प्रिय हैं, वह मैं स्त्री-पुत्रादि प्रियों का भी प्रिय होता हुआ सभी प्राणिंयों का आत्मा हूँ । इसलिए मुझसे प्रेम करना चाहिए ।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

सर्ववेदमयेनेदमात्मनाऽऽत्माऽऽत्मयोनिना ।
प्रजाः सृज यथापूर्वं याश्च मय्यनुशेरते ।।४३।।

पदच्छेद— सर्व वेद मयेन इदम्, आत्मना आत्मा आत्म योनिना ।
प्रजाः सृज यथा पूर्वम्, याः च मयि अनुशेरते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्व वेद | ४. | चारों वेदों से | प्रजाः | १२. | (उन) जीवों की (भी) |
| मयेन | ५. | युक्त | सृज | १४. | सृष्टि करें |
| इदम् | ७. | इस विश्व की | यथा पूर्वम् | १३. | पूर्वकल्प के समान |
| आत्मना | ६. | अपने स्वरूप से | याः | ९. | जो |
| आत्मा | १ | आप | च | ८. | और |
| आत्म | २. | स्वयम् | मयि | १०. | मुझमें |
| योनिना , | ३. | उत्पन्न (एवं) | अनुशेरते ।। | ११. | लीन हैं |

श्लोकार्थ—आप स्वयम् उत्पन्न एवं चारों वेदों से युक्त अपने स्वरूप से इस विश्व की और जो मुझमें लीन हैं. उन जीवों की भी पूर्वकल्प के समान सृष्टि करें ।

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

तस्मा एवं जगत्स्रष्ट्रे प्रधानपुरुषेश्वरः ।
व्यज्येदं स्वेन रूपेण कञ्जनाभस्तिरोदधे ।।४४।।

पदच्छेद— तस्मै एवम् जगत् स्रष्ट्रे, प्रधान पुरुष ईश्वरः ।
व्यज्य इदम् स्वेन रूपेण, कञ्जनाभः तिरोदधे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मै | ६. | उन ब्रह्मा जी को | व्यज्य | ९. | वताकर |
| एवम् | ७. | इस प्रकार | इदम् | ८. | यह रहस्य |
| जगत् | ४. | विश्व के | स्वेन | १०. | अपने |
| स्रष्ट्रे | ५. | रचयिता | रूपेण | ११. | नारायण रूप से |
| प्रधान | १. | प्रकृति (और) | कञ्जनाभः | ३. | भगवान् कमलनाभ |
| पुरुष ईश्वरः । | २. | पुरुष के स्वामी | तिरोदधे ।। | १२. | अन्तर्धान हो गये |

श्लोकार्थ—प्रकृति और पुरुष के स्वामी भगवान् कमलनाभ विश्व के रचयिता उन ब्रह्मा जी को इस प्रकार यह रहस्य वताकर अपने नारायण रूप से अन्तर्धान हो गये ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे नवमः अध्यायः ।। ९ ।।

## तृतीयः स्कन्धः

### अथ दशमः अध्यायः

# प्रथमः श्लोकः

विदुर उवाच—

अन्तर्हिते भगवति ब्रह्मा लोकपितामहः ।
प्रजाः ससर्ज कतिधा दैहिकीर्मानसीर्विभुः ।।१।।

पदच्छेद—

अन्तर्हिते भगवति, ब्रह्मा लोक पितामहः ।
प्रजाः ससर्ज कतिधा, दैहिकीः मानसीः विभुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तर्हिते | २. | अन्तर्धान हो जाने पर | प्रजाः | १०. | जीवों की |
| भगवति | १. | भगवान् नारायण के | ससर्ज | ११. | रचना की |
| ब्रह्मा | ६. | ब्रह्मा जी ने | कतिधा | ९. | कितने प्रकार के |
| लोक | ३. | संसार के | दैहिकीः | ७. | अपने शरीर से (और) |
| पितामहः । | ४. | पितामह | मानसीः | ८. | मन से |
| | | | विभुः ।। | ५. | भगवान् |

श्लोकार्थ—विदुर जी ने पूछा, हे मैत्रेय जी ! भगवान् नारायण के अन्तर्धान हो जाने पर संसार के पितामह भगवान् ब्रह्मा जी ने अपने शरीर से और मन से कितने प्रकार के जीवों की रचना की ।

# द्वितीयः श्लोकः

ये च मे भगवन् पृष्टास्त्वय्यर्था बहुवित्तम ।
तान् वदस्वानुपूर्व्येण छिन्धि नः सर्वसंशयान् ।।२।।

पदच्छेद—

ये च मे भगवन् पृष्टाः, त्वयि अर्थाः बहुवित्तम ।
तान् वदस्व आनुपूर्व्येण, छिन्धि नः सर्व संशयान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | ४. | जिन | तान् | ९. | उन्हें |
| च | ११. | और | वदस्व | १०. | बतावें |
| मे | ७. | मुझे | आनुपूर्व्येण | ८. | क्रम से |
| भगवन् | २. | हे मैत्रेय जी ! | छिन्धि | १५. | दूर करें |
| पृष्टाः, | ६. | पूछा है | नः | १२. | हमारे |
| त्वयि | ३. | आप से (मैंने) | सर्व | १३. | सभी |
| अर्थाः | ५. | प्रश्नों को | संशयान् ।। | १४. | सन्देहों को |
| बहुवित्तम । | १. | विद्वानों में श्रेष्ठ | | | |

श्लोकार्थ—विद्वानों में श्रेष्ठ हे मैत्रेय जी ! आपसे मैंने जिन प्रश्नों को पूछा है, मुझे क्रम से उन्हें बतावें और हमारे सभी सन्देहों को दूर करें ।

## तृतीयः श्लोकः

सूत उवाच—

एवं संचोदितस्तेन क्षत्त्रा कौषारवो मुनिः ।
प्रीतः प्रत्याह तान् प्रश्नान् हृदिस्थानथ भार्गव ॥३॥

पदच्छेद—

एवम् संचोदितः तेन, क्षत्त्रा कौषारवः मुनिः ।
प्रीतः प्रत्याह तान् प्रश्नान्, हृदि स्थान् अथ भार्गव ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ४. | इस प्रकार | प्रत्याह | १४. | उत्तर देने लगे |
| संचोदितः | ५. | कहने पर | तान् | १२. | उन |
| तेन | २. | उन | प्रश्नान् | १३. | प्रश्नों का |
| क्षत्त्रा | ३. | विदुर जी के द्वारा | हृदि | १०. | हृदय में |
| कौषारवः | ७. | मैत्रेय जी | स्थान् | ११. | स्थित |
| मुनिः | ६. | मुनिवर | अथ | ९. | तदनन्तर |
| प्रीतः | ८. | प्रसन्न हुये | भार्गव । | १. | हे शौनक जी ! |

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! उन विदुर जी के द्वारा इस प्रकार कहने पर मुनिवर मैत्रेय जी बहुत प्रसन्न हुये तदनन्तर हृदय में स्थित उन प्रश्नों का उत्तर देने लगे ।

## चतुर्थः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

विरिञ्चोऽपि तथा चक्रे दिव्यं वर्षशतं तपः ।
आत्मन्यात्मानमावेश्य यदाह भगवानजः ॥४॥

पदच्छेद—

विरिञ्चः अपि तथा चक्रे, दिव्यम् वर्ष शतम् तपः ।
आत्मनि आत्मानम् आवेश्य, यद् आह भगवान् अजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विरिञ्चः, अपि | ५. | ब्रह्मा जी ने, भी | आत्मनि | ७. | परमात्मा में |
| तथा | ६. | उसी प्रकार से | आत्मानम् | ८. | अपनी आत्मा को |
| चक्रे | १४. | की थी | आवेश्य | ९. | लगा कर |
| दिव्यम् | १०. | दिव्य | यद् | ३. | जो |
| वर्ष | १२. | वर्ष तक | आह | ४. | कहा था |
| शतम् | ११. | एक सौ | भगवान् | २. | भगवान् श्री हरि ने |
| तपः | १३. | तपस्या | अजः ॥ | १. | अजन्मा |

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् श्री हरि ने जो कहा था ब्रह्मा जी ने भी उसी प्रकार से परमात्मा में अपनी आत्मा को लगा कर दिव्य एक सौ वर्ष तक तपस्या की थी ।

## पञ्चमः श्लोकः

तद्विलोक्याब्जसम्भूतो वायुना यदधिष्ठितः ।
पद्ममम्भश्च तत्कालकृतवीर्येण कम्पितम् ।।५।।

पदच्छेद –

तद् विलोक्य अब्जः सम्भूतः, वायुना यद् अधिष्ठितः ।
पद्मम् अम्भः च तत् काल, कृत वीर्येण कम्पितम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ५. | उस | पद्मम् | १०. | कमल को |
| विलोक्य | १४. | देखा | अम्भः | १२. | जल को |
| अब्जः | १. | कमल से | च | ११. | और |
| सम्भूतः | २. | उत्पन्न (तथा) | तत् | ८. | उस |
| वायुना | ८. | वायु के कारण | काल कृत | ६. | प्रलय काल से उत्पन्न |
| यद् | ३. | उसी कमल पर | वीर्येण | ७. | प्रवल |
| अधिष्ठितः | ४. | बैठे हुये (ब्रह्मा जी ने) | कम्पितम् ।। | १३. | काँपते हुये |

श्लोकार्थ—कमल से उत्पन्न तथा उसी कमल पर बैठे हुये ब्रह्मा जी ने उस प्रलय काल से उत्पन्न प्रवल वायु के उस कमल को और जल को काँपते हुये देखा ।

## षष्ठः श्लोकः

तपसा ह्येधमानेन विद्यया चात्मसंस्थया ।
विवृद्धविज्ञानबलो न्यपाद् वायुं सहाम्भसा ।।६।।

पदच्छेद—

तपसा हि एधमानेन, विद्यया च आत्म संस्थया ।
विवृद्ध विज्ञान बलः न्यपात्, वायुम् सह अम्भसा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तपसा | ५. | तपस्या से | विवृद्ध | १. | महान् |
| हि | १०. | ही | विज्ञान | २. | आत्म ज्ञान से |
| एधमानेन | ४. | बढ़ती हुई | बलः | ३ | शक्तिमान् (ब्रह्मा जी ने) |
| विद्यया | ९. | ज्ञान से | न्यपात् | १४. | पी लिया |
| च | ६. | और | वायुम् | १३. | उस वायु को |
| आत्म | ७. | आत्मा में | सह | १२. | साथ |
| संस्थया । | ८. | स्थित | अम्भसा ।। | ११. | जल के |

श्लोकार्थ—महान् आत्मज्ञान से शक्तिमान् ब्रह्मा जी ने बढ़ती हुई तपस्या से और आत्मा में स्थित ज्ञान से ही जल के साथ उस वायु को पी लिया ।

## सप्तमः श्लोकः

तद्विलोक्य वियद्व्यापि पुष्करं यदधिष्ठितम् ।
अनेन लोकान् प्राग्लीनान् कल्पितास्मीत्यचिन्तयत् ॥७॥

पदच्छेद—

तद् विलोक्य वियद् व्यापि, पुष्करम् यद् अधिष्ठितम् ।
अनेन लोकान् प्राक् लीनान्, कल्पितास्मि इति अचिन्तयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ४. | उसे | अनेन | १०. | इस कमल से ही |
| विलोक्य | ७. | देखकर | लोकान् | १३. | लोकों को |
| वियद् | ५. | आकाश तक | प्राक् | ११. | पूर्व कल्प में |
| व्यापि | ६. | फैला हुआ | लीनान् | १२. | लीन हुये |
| पुष्करम् | २. | कमल पर | कल्पितास्मि | १४. | रचना करूँगा |
| यद् | १. | (ब्रह्मा जी) जिस | इति | ८. | (उन्होंने) यह |
| अधिष्ठितम् । | ३. | बैठे थे | अचिन्तयत् ॥ | ९. | विचार किया (कि) |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी जिस कमल पर बैठे थे, उसे आकाश तक फैला हुआ देख कर उन्होंने यह विचार किया कि इस कमल से ही पूर्वकल्प में लीन हुये लोकों की रचना करूँगा ।

## अष्टमः श्लोकः

पद्मकोशं तदाऽऽविश्य भगवत्कर्मचोदितः ।
एकं व्यभाङ्क्षीदुरुधा त्रिधा भाव्यं द्विसप्तधा ॥८॥

पदच्छेद—

पद्म कोशम् तदा आविश्य, भगवत् कर्म चोदितः ।
एकम् व्यभाङ्क्षीत् उरुधा, त्रिधा भाव्यम् द्विसप्तधा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पद्म | ५. | कमल के | एकम् | ८. | एक (कमल को) |
| कोशम् | ६. | मध्य में | व्यभाङ्क्षीत् | १०. | विभक्त किया (जिसे) |
| तदा | ४. | तब | उरुधा | १२. | अनेक भागों में (भी) |
| आविश्य | ७. | प्रवेश करके | त्रिधा | ९. | (भूः, भुवः, स्वः) तीन भागों में |
| भगवत् | १. | भगवान् श्री हरि के द्वारा | भाव्यम् | १३. | बाँटा जा सकता है |
| कर्म | २. | सृष्टि कर्म में | द्विसप्त धा ॥ | ११. | चौदह भागों में (अथवा) |
| चोदितः । | ३. | प्रेरित (ब्रह्मा जी ने) | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के द्वारा सृष्टि कर्म में प्रेरित ब्रह्मा जी ने तब कमल के मध्य में प्रवेश करके उस एक कमल को भूः, भुवः और स्वः तीन भागों में विभक्त किया, जिसे चौदह भागों में अथवा अनेक भागों में भी बाँटा जा सकता है ।

## नवमः श्लोकः

एतावाञ्जीवलोकस्य संस्थाभेदः समाहृतः ।
धर्मस्य ह्यनिमित्तस्य विपाकः परमेष्ठ्यसौ ॥९॥

पदच्छेद—

एतावान् जीव लोकस्य संस्था भेदः समाहृतः ।
धर्मस्य हि अनिमित्तस्य विपाकः परमेष्ठी असौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ४. | इन्हीं | धर्मस्य | ८. | धर्म करने वाला |
| जीव | २. | जीव | हि | ९. | तो |
| लोकस्य | १. | संसारी | अनिमित्तस्य | ७. | निष्काम |
| संस्था | ३. | मर्त्यलोक, अन्तरिक्ष और स्वर्गलोक | विपाकः | १२. | निवास करता है |
| | | | परमेष्ठी | ११. | सत्यरूप ब्रह्म लोक में |
| भेदः | ५. | तीन स्थानों में | असौ ॥ | १०. | उस महः, जनः, तपः (और) |
| समाहृतः । | ६. | निवास करते हैं | | | |

श्लोकार्थ—संसारी जीव मर्त्यलोक, अन्तरिक्ष और स्वर्ग लोक इन्हीं तीन स्थानों में निवास करते हैं। निष्काम धर्म करने वाला तो उस महः, जनः, तपः और सत्यरूप ब्रह्मलोक में निवास करता है।

## दशमः श्लोकः

विदुर उवाच—

यदात्थ बहुरूपस्य हरेरद्भुतकर्मणः ।
कालाख्यं लक्षणं ब्रह्मन् यथा वर्णय नः प्रभो ॥१०॥

पदच्छेद—

यद् आत्थ बहुरूपस्य, हरेः अद्भुत कर्मणः ।
काल आख्यम् लक्षणम् ब्रह्मन्, यथा वर्णय नः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ७. | जिस | आख्यम् | ९. | नाम को |
| आत्थ | ११. | बताया था | लक्षणम् | १०. | शक्ति को |
| बहुरूपस्य | ५. | विश्वरूप | ब्रह्मन् | १. | ब्रह्मज्ञानी |
| हरेः | ६. | श्रीहरि की | यथा | १२. | उसका |
| अद्भुत | ३. | अलौकिक | वर्णय | १४. | वर्णन करें |
| कर्मणः । | ४. | लीलाधारी (और) | नः | १३. | हम से |
| काल | ८. | काल | प्रभो ॥ | २. | हे प्रभो ! |

श्लोकार्थ—ब्रह्मज्ञानी हे प्रभो ! आपने अलौकिक लीलाधारी और विश्वरूप श्री हरि की जिस काल नाम की शक्ति को बताया था, उसका हमसे वर्णन करें।

## एकादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

गुणव्यतिकराकारो निर्विशेषोऽप्रतिष्ठितः ।
पुरुषस्तदुपादानमात्मानं लीलयासृजत् ॥११॥

पदच्छेद—

गुण व्यतिकर आकारः निर्विशेषः अप्रतिष्ठितः ।
पुरुषः तद् उपादानम् आत्मानम् लीलया असृजत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गुण | १. | सत्त्वादि गुणों के | पुरुषः | ६ | आदि पुरुष |
| व्यतिकर | २. | सम्बन्ध से | तद् | ७. | उस काल शक्ति की |
| आकारः | ३. | साकार होने वाले | उपादानम् | ८. | सहायता से |
| निर्विशेषः | ४. | निर्गुण | आत्मानम् | ९. | अपने शरीर को |
| अप्रतिष्ठितः । | ५. | अनादि और अनन्त | लीलया | १०. | खेल-खेल में ही |
| | | | असृजत् ॥ | ११ | सृष्टि रूप में प्रकट करते हैं । |

श्लोकार्थ—सत्त्वादि गुणों के सम्बन्ध से साकार होने वाले निर्गुण, अनादि और अनन्त आदिपुरुष उस काल शक्ति की सहायता से अपने शरीर को खेल-खेल में ही सृष्टि रूप में प्रकट करते हैं ।

## द्वादशः श्लोकः

विश्वं वै ब्रह्मतन्मात्रं संस्थितं विष्णुमायया ।
ईश्वरेण परिच्छिन्नं कालेनाव्यक्तमूर्तिना ॥१२॥

पदच्छेद—

विश्वम् वै ब्रह्म तन्मात्रम्, संस्थितम् विष्णु मायया ।
ईश्वरेण परिच्छिन्नम्, कालेन अव्यक्त मूर्तिना ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विश्वम् | १. | यह संसार | मायया । | ३. | माया से |
| वै | ५. | ही | ईश्वरेण | ८. | ईश्वर ने |
| ब्रह्म | ४. | ब्रह्म में | परिच्छिन्नम् | १२. | पृथक् रूप में प्रकट किया |
| तन्मात्रम् | ६. | सूक्ष्म रूप से | कालेन | ११. | काल की सहायता से |
| संस्थितम् | ७. | स्थित है | अव्यक्त | ९. | निराकार |
| विष्णु | २. | श्री हरि की | मूर्तिना ॥ | १०. | स्वरूप वाले |

श्लोकार्थ—यह संसार श्री हरि की माया से ब्रह्म में ही सूक्ष्म रूप से स्थित है । ईश्वर ने उसे निराकार स्वरूप वाले काल की सहायता से पृथक रूप में प्रकट किया है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

यथेदानीं तथाग्रे च पश्चादप्येतदीदृशम् ।
सर्गो नवविधस्तस्य प्राकृतो वैकृतस्तु यः ॥१३॥

पदच्छेद—

यथा इदानीम् तथा अग्रे च, पश्चात् अपि एतद् ईदृशम् ।
सर्गः नवविधः तस्य, प्राकृतः वैकृतः तु यः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | २. | जैसा | ईदृशम् । | ९. | ऐसा ही (रहेगा) |
| इदानीम् | ३. | अब (है) | सर्गः | ११. | सृष्टि |
| तथा | ४. | वैसा ही | नवविधः | १२. | नौ प्रकार की है |
| अग्रे | ५. | पहले (था) | तस्य | १०. | इस जगत् की |
| च | ६. | और | प्राकृतः | १४. | प्राकृत |
| पश्चात् | ७. | आगे भविष्य में | वैकृतः | १६. | वैकृत (कहलाती है) |
| अपि | ८. | भी | तु | १५. | तथा |
| एतद् | १. | यह संसार | यः ॥ | १३. | जो |

श्लोकार्थ—यह संसार जैसा अब है वैसा ही पहले था, और आगे भविष्य में भी ऐसा ही रहेगा। इस जगत् की सृष्टि नौ प्रकार की है, जो प्राकृत तथा वैकृत कहलाती है।

## चतुर्दशः श्लोकः

कालद्रव्यगुणैरस्य त्रिविधः प्रतिसंक्रमः ।
आद्यस्तु महतः सर्गो गुणवैषम्यमात्मनः ॥१४॥

पदच्छेद—

काल द्रव्य गुणैः अस्य, त्रिविधः प्रतिसंक्रमः ।
आद्यः तु महतः सर्गः, गुण वैषम्यम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| काल | २. | काल | आद्यः | ८. | पहली |
| द्रव्य | ३. | पञ्च महाभूत (और) | तु | ७. | तथा |
| गुणैः | ४. | सत्त्वादि गुणों के कारण | महतः | १०. | महत्तत्त्व की है |
| अस्य | १. | इस संसार का | सर्गः | ९. | सृष्टि |
| त्रिविधः | ५. | तीन प्रकार का | गुण | ११. | सत्त्वादि गुणों की |
| प्रतिसंक्रमः । | ६. | प्रलय होता है | वैषम्यम् | १२. | विषमता ही |
| | | | आत्मनः | १३. | उसका स्वरूप है |

श्लोकार्थ—इस संसार का काल, पञ्च महाभूत और सत्त्वादि गुणों के कारण तीन प्रकार का प्रलय होता है तथा पहली सृष्टि महत्तत्त्व की है। सत्त्वादि गुणों की विषमता ही उस सृष्टि का स्वरूप है।

## पञ्चदशः श्लोकः

द्वितीयस्त्वहमो यत्र द्रव्यज्ञानक्रियोदयः ।
भूतसर्गस्तृतीयस्तु तन्मात्रो द्रव्यशक्तिमान् ॥१५॥

पदच्छेद—

द्वितीयः तु अहमः यत्र, द्रव्य ज्ञान क्रिया उदयः ।
भूत सर्गः तृतीयः तु, तन्मात्रः द्रव्य शक्तिमान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वितीयः | २. | दूसरी सृष्टि | उदयः । | ८. | उत्पन्न होती हैं |
| तु | १. | तथा | भूतसर्गः | १०. | भूत सर्ग नाम से (है) |
| अहमः | ३. | अहंकार तत्त्व की है | तृतीयः | ९. | तीसरी सृष्टि |
| यत्र | ४. | जिससे | तु | ११. | जो |
| द्रव्य | ५. | पञ्च महाभूत | तन्मात्रः | १४. | पञ्च तन्मात्रा स्वरूप (है) |
| ज्ञान | ६. | ज्ञानेन्द्रिय (और) | द्रव्य | १२. | पञ्च महाभूतों की |
| क्रिया | ७. | कर्मेन्द्रिय | शक्तिमान् ॥ | १३. | उत्पादक शक्ति से युक्त |

श्लोकार्थ—तथा दूसरी सृष्टि अहंकार तत्त्व की है, जिससे पञ्च महाभूत, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय उत्पन्न होती हैं । तीसरी सृष्टि भूत सर्ग नाम से हैं, जो पञ्च महाभूतों की उत्पादक शक्ति से युक्त पञ्च तन्मात्रा स्वरूप है ।

## षोडशः श्लोकः

चतुर्थ ऐन्द्रियः सर्गो यस्तु ज्ञानक्रियात्मकः ।
वैकारिको देवसर्गः पञ्चमो यन्मयं मनः ॥१६॥

पदच्छेद—

चतुर्थः ऐन्द्रियः सर्गः, यः तु ज्ञान क्रिया आत्मकः ।
वैकारिकः देव सर्गः, पञ्चमः यन्मयम् मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चतुर्थः | १. | चौथी | आत्मकः । | ७. | स्वरूप है |
| ऐन्द्रियः | ३. | इन्द्रियों की (है) | वैकारिकः | ९. | सात्त्विक अहंकर से युक्त |
| सर्गः | २. | सृष्टि | देव | १०. | देवताओं को |
| यः | ४. | जो | सर्गः | ११. | सृष्टि है |
| तु | ०. | तथा | पञ्चमः | ८. | पाँचवी |
| ज्ञान | ५. | ज्ञानेन्द्रिय (और) | यन्मयम् | १२. | जिन देवताओं से युक्त |
| क्रिया | ६. | कर्मेन्द्रिय | मनः ॥ | १३. | मन रहता है |

श्लोकार्थ—तथा चौथी सृष्टि इन्द्रियों की है, जो ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय स्वरूप है । पाँचवीं सात्त्विक अहंकार से युक्त देवताओं की सृष्टि है, जिन देवताओं से युक्त मन रहता है ।

## सप्तदशः श्लोकः

षष्ठस्तु तमसः सर्गो यस्त्वबुद्धिकृतः प्रभो ।
षडिमे प्राकृताः सर्गा वैकृतानपि मे शृणु ।।१७।।

पदच्छेद—

षष्ठः तु तमसः सर्गः, यः तु अबुद्धि कृतः प्रभो ।
षट् इमे प्राकृताः सर्गाः वैकृतान् अपि मे शृणु ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| षष्ठः | १. | छठी | प्रभो । | ६. | हे विदुर जी ! |
| तु | ७. | इस प्रकार | षट् | ९. | छः |
| तमसः | ३. | अविद्या (तामिस्र, अन्ध तामिस्र, तम, मोह और महा मोह) की है | इमे | ८. | ये |
| | | | प्राकृताः, सर्गाः | १०. | प्राकृत सृष्टियाँ हैं (अब) |
| | | | वैकृतान् | ११. | वैकृत नाम की सृष्टियों को |
| सर्गः | २. | सृष्टि | अपि | १२. | भी |
| यः, तु | ४. | जो, कि, | मे, शृणु | १३. | मुझ से, सुनो |
| अबुद्धि, कृतः | ५. | अज्ञान से, उत्पन्न (है) | | | |

श्लोकार्थ—छठी सृष्टि अविद्या तामिस्र, अन्ध तामिस्र, तम, मोह और महामोह की है, जो कि अज्ञान से उत्पन्न है। हे विदुर जी ! इस प्रकार ये छः प्राकृत सृष्टियाँ हैं, अब वैकृत नाम की सृष्टियों को भी मुझ से सुनो।

## अष्टादशः श्लोकः

रजोभाजो भगवतो लीलेयं हरिमेधसः ।
सप्तमो मुख्यसर्गस्तु षड्विधस्तस्थुषां च यः ।।१८।।

पदच्छेद—

रजोभाजः भगवतः, लीला इयम् हरि मेधसः ।
सप्तमः मुख्य सर्गः तु, षड्विधः तस्थुषाम् च यः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रजोभाजः | ३. | रजोगुण से युक्त | मुख्य | १३. | प्रधान |
| भगवतः | ४. | भगवान् श्री हरि की | सर्गः | १४. | सृष्टि है |
| लीला | ६. | लीला (है) | तु | ११. | वह |
| इयम् | ५. | यह | षड्विधः | ८. | छः प्रकार की |
| हरि | २. | हरण करने वाले (तथा) | तस्थुषाम् | ९. | स्थावर वृक्षों की |
| मेधसः । | १. | पापों का | च | १०. | सृष्टि है |
| सप्तमः | १२. | सातवीं | यः ।। | ७. | इसमें जो |

श्लोकार्थ—पापों का हरण करने वाले तथा रजोगुण से युक्त भगवान् श्री हरि की यह लीला है। इसमें जो छः प्रकार की स्थावर वृक्षों की सृष्टि है वह सातवीं प्रधान सृष्टि है।

## एकोनविंश: श्लोक:

वनस्पत्योषधिलतात्वक्सारा वीरुधो द्रुमाः ।
उत्स्रोतसस्तमः प्राया अन्तःस्पर्शा विशेषिणः ।।१६।।

पदच्छेद—

वनस्पति ओषधि लता, त्वक्सारा: वीरुधः द्रुमाः ।
उत् स्रोतसः तमः प्रायाः, अन्तः स्पर्शाः विशेषिणः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वनस्पति | १. | गूलर, बड़ आदि वनस्पति | उत् | ७. | ऊपर को बढ़ने वाले (तथा) |
| ओषधि | २. | धान, गेहूँ, चना आदि | स्रोतसः | ८. | जड़ से आहार ग्रहण करनेवाले |
| लता | ३. | पेड़ पर चढ़ने वाली गिलोयादि | तमः | ९. | अज्ञान से |
| त्वक्साराः | ४. | कठोर छाल वाले बाँस बेंतादि | प्रायाः | १०. | युक्त |
| वीरुधः | ५. | जमीन पर फैलने वाले तरबूजादि | अन्तः | ११. | अपने अन्दर |
| | | | स्पर्शाः | १२. | केवल स्पर्श नामक |
| द्रुमाः । | ६. | फल वाले वृक्ष(आम इत्यादि) | विशेषिणः ।। | १३. | विशेष गुण से युक्त होते हैं |

श्लोकार्थ—गूलर, बड़ आदि वनस्पति; धान, गेहूँ, चना आदि अन्न; पेड़ पर चढ़ने वाली गिलोय आदि; कठोर छाल वाले बाँस बेंत आदि; जमीन पर फैलने वाले तरबूजादि, फल वाले वृक्ष आम इत्यादि, ऊपर को बढ़ने वाले तथा जड़ से आहार ग्रहण करने वाले अज्ञान से युक्त अपने अन्दर केवल स्पर्श नामक विशेष गुण से युक्त होते हैं।

## विंश: श्लोक:

तिरश्चामष्टमः सर्गः सोऽष्टाविंशद्विधो मतः ।
अविदो भूरितमसो घ्राणज्ञा हृद्यवेदिनः ।।२०।।

पदच्छेद—

तिरश्चाम् अष्टमः सर्गः, सः अष्टाविंशत् विधः मतः ।
अविदः भूरि तमसः, घ्राणज्ञाः हृदि अवेदिनः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तिरश्चाम् | ३. | पशु-पक्षियों की (है) | अविदः | ८. | काल के ज्ञान रहित |
| अष्टमः | १. | आठवीं | भूरि | ९. | अधिक |
| सर्गः | २. | सृष्टि | तमसः | १०. | तमोगुण से युक्त |
| सः | ४. | वह | घ्राणज्ञाः | ११. | सूंघने से ज्ञान करने वाले |
| अष्टाविंशत | ५. | अट्ठाइस | हृदि | १२. | विचार शक्ति से |
| विधः | ६. | प्रकार की | अवेदिनः ।। | १३. | शून्य होते हैं |
| मतः । | ७. | मानी गई है | | | |

श्लोकार्थ—आठवी सृष्टि पशु-पक्षियों की है, वह अट्ठाइस प्रकार की मानी गई है। ये काल के ज्ञान से रहित, अधिक तमोगुण से युक्त, सूंघकर ज्ञान करने वाले तथा विचार शक्ति से शून्य होते हैं।

## एकविंशः श्लोकः

गौरजो महिषः कृष्णः सूकरो गवयो रुरुः।
द्विशफाः पशवश्चेमे अविरुष्ट्रश्च सत्तम ॥२१॥

पदच्छेद—

गौः अजः महिषः कृष्णः, सूकरः गवयः रुरुः।
द्विशफाः पशवः च इमे, अविः उष्ट्रः च सत्तम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गौः, अजः | २. | गाय, बकरा | पशवः | १४. | पशु हैं |
| महिषः | ३. | भैंस | च | ८. | और |
| कृष्णः | ४. | कृष्णसार मृग | इमे | १२. | ये |
| सूकरः | ५. | सूअर | अविः | ९. | भेंड़ |
| गवयः | ६. | नील गाय | उष्ट्रः | ११. | ऊँट |
| रुरुः। | ७. | रुरु मृग | च | १०. | तथा। |
| द्विशफाः | १३. | दो खुरों वाले | सत्तम ॥ | १. | हे साधु श्रेष्ठ विदुर जी ! |

श्लोकार्थ—हे साधु श्रेष्ठ विदुर जी ! गाय, बकरा, भैंस, कृष्णसारमृग, सूअर, नील गाय, रुरु मृग और भेंड़ तथा ऊँट ये दो खुरों वाले पशु हैं।

## द्वाविंशः श्लोकः

खरोऽश्वोऽश्वतरो गौरः शरभश्चमरी तथा।
एते चैकशफाः छत्तः शृणु पञ्चनखान् पशून् ॥२२॥

पदच्छेद—

खरः अश्वः अश्वतरः गौरः, शरभः चमरी तथा।
एते च एक शफाः छत्तुः, शृणु पञ्चनखान् पशून् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| खरः | १. | गदहा | एते | ८ | ये |
| अश्वः | २. | घोड़ा | च | ११. | अब आप |
| अश्वतरः | ३. | खच्चर | एकशफाः | ९. | एक खुर वाले (पशु हैं) |
| गौरः | ४. | गौर मृग | छत्तः | १०. | हे विदुर जी ! |
| शरभः | ५. | शरभ | शृणु | १४. | सुनें |
| चमरी | ७. | चमरी गाय | पञ्चनखान् | १२. | पांच नखों वाले |
| तथा। | ६. | तथा | पशून् ॥ | १३. | पशुओं को |

श्लोकार्थ—गदहा, घोड़ा, खच्चर और मृग, शरभ तथा चमरी गाय ये एक खुर वाले पशु हैं। हे विदुर जी ! अब आप पाँच नखों वाले पशुओं को सुनें।

## त्रयोविंश: श्लोकः

श्वा सृगालो वृको व्याघ्रो मार्जारः शशशल्लकौ ।
सिंहः कपिर्गजः कूर्मो गोधा च मकरादयः ॥२३॥

पदच्छेद—

श्वा सृगालः वृकः व्याघ्रः, मार्जारः शश शल्लकौ ।
सिंहः कपिः गजः कूर्मः, गोधा च मकर आदयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| श्वा, सृगालः | १. कुत्ता, गीदड़ | कपिः | ८. | बन्दर |
| वृकः | २. भेड़िया | गजः | ९. | हाथी |
| व्याघ्रः | ३. बाघ | कूर्मः | १०. | कछुआ |
| मार्जारः | ४. विलाव | गोधा | ११. | गोह |
| शश | ५. खरगोश | च | १२. | और |
| शल्लकौ । | ६. साही | मकर | १३. | मगर |
| सिंहः | ७. सिंह | आदयः ॥ | १४. | इत्यादि (पाँच नख वाले पशु हैं) |

श्लोकार्थ—कुत्ता, गीदड़, भेड़िया, बाघ, विलाव, खरगोश, शाही, सिंह, बन्दर, हाथी, कछुआ, गोह और मगर इत्यादि पाँच नख वाले पशु हैं ।

## चतुर्विंश: श्लोकः

कङ्कगृध्रवटश्येनभासभल्लकबर्हिणः ।
हंससारसचक्राह्वकाकोलूकादयः खगा ॥२४॥

पदच्छेद—

कङ्क गृध्र वट श्येन; भास भल्लक बर्हिणः ।
हंस सारस चक्राह्वः, काक उलूक आदयः खगा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| कङ्क | १. बगुला | हंस | ८. | हंस |
| गृध्र | २. गीध | सारस | ९. | सारस |
| वट | ३. बटेर | चक्राह्व | १०. | चकवा |
| श्येन | ४. बाज | काक | ११. | कौआ (और) |
| भास | ५. भास | उलूक | १२. | उल्लू |
| भल्लक | ६. भल्लूक | आदयः | १३. | इत्यादि जीव |
| बर्हिणः । | ७. मोर | खगाः ॥ | १४. | उड़ने वाले पक्षी हैं |

श्लोकार्थ—बगुला, गीध, बटेर, बाज, भास, भल्लूक, मोर, हंस, सारस, चकवा, कौआ और उल्लू इत्यादि जीव उड़ने वाले पक्षी हैं ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

अर्वाक्स्रोतस्तु नवमः क्षत्तरेकविधो नृणाम् ।
रजोऽधिकाः कर्मपरा दुःखे च सुखमानिनः ॥२५॥

पदच्छेद—

अर्वाक् स्रोतः तु नवमः, क्षत्तः एकविधः नृणाम् ।
रजः अधिकाः कर्म पराः, दुःखेः च सुख मानिनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्वाक् | ७. | ऊपर से नीचे की ओर है | रजः | ९. | रजोगुण से युक्त |
| स्रोतः | ६. | (आहार का) प्रवाह | अधिकाः | ८. | (ये मनुष्य) अधिकतर |
| तु | ५. | तथा इनके | कर्म, पराः | १०. | कर्म के, पराधीन |
| नवमः | ३. | नवीं सृष्टि | दुःखे | १२. | दुःखदाई विषयों में |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी ! | च | ११. | और |
| एकविधः | ४. | एक ही प्रकार की है | सुख | १३. | सुख |
| नृणाम् । | २. | मनुष्यों की | मानिनः ॥ | १४. | मानने वाले हैं |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! मनुष्यों की नवीं सृष्टि एक ही प्रकार की है, तथा इनके आहार का प्रवाह ऊपर से नीचे की ओर है, ये मनुष्य अधिकतर रजोगुण से युक्त, कर्म के पराधीन और दुःखदाई विषयों में सुख मानने वाले हैं।

# षड्विंशः श्लोकः

वैकृतास्त्रय एवैते देवसर्गश्च सत्तम ।
वैकारिकस्तु यः प्रोक्तः कौमारस्तूभयात्मकः ॥२६॥

पदच्छेद —

वैकृताः त्रयः एव एते, देव सर्गः च सत्तम ।
वैकारिकः तु यः प्रोक्तः, कौमारः तु उभय आत्मकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैकृतः | १०. | वैकृत (सृष्टि कही जाती हैं) | वैकारिकः | ४. | इन्द्रियों के देवताओं की सृष्टि |
| त्रयः | ८. | (तथा मनुष्य) ये तीनों | तु, यः | ३. | तथा, जो |
| एव | ९. | ही (सृष्टियाँ) | प्रोक्तः | ५. | बताई गई है (वह) |
| एते | ७. | ये स्थावर पशु | कौमारः | १२. | सनकादि कुमारों की सृष्टि |
| देव, सर्गः | २. | देवताओं की, सृष्टि | तु | ११. | किन्तु |
| च | ६. | और | उभय | १३. | प्राकृत-वैकृत |
| सत्तम । | १. | साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! | आत्मकः ॥ | १४. | दोनों प्रकार की कहलाती है |

श्लोकार्थ—साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! देवताओं की सृष्टि तथा जो इन्द्रियों के देवताओं की सृष्टि बताई गई है, वह और ये स्थावर, पशु तथा मनुष्य ये तीनों ही सृष्टियाँ वैकृत सृष्टि कही गई हैं, किन्तु सनकादि कुमारों की सृष्टि प्राकृत-वैकृत दो प्रकार की कहलाती है।

## सप्तविंशः श्लोकः

देवसर्गश्चाष्टविधो विबुधाः पितरोऽसुराः ।
गन्धर्वाप्सरसः सिद्धा यक्षरक्षांसि चारणाः ।।२७।।

पदच्छेद—

देव सर्गः च अष्ट विधः, विबुधाः पितरः असुराः ।
गन्धर्व अप्सरसः सिद्धाः, यक्ष रक्षांसि चारणाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देव | १३. | देवताओं की | असुराः । | ३. | असुर |
| सर्गः | १४. | सृष्टि (है) | गन्धर्व | ४. | गन्धर्व |
| च | ६. | और | अप्सरसः | ५. | अप्सरायें |
| अष्ट | ११. | यह आठ | सिद्धाः | ६. | सिद्ध |
| विधः | १२. | प्रकार की | यक्ष | ७. | यक्ष |
| विबुधाः | १. | देवता | रक्षांसि | ८. | राक्षस |
| पितरः | २. | पितर | चारणाः ।। | १०. | चारण |

श्लोकार्थ—देवता, पितर, असुर, गन्धर्व, अप्सरायें, सिद्ध, यक्ष, राक्षस और चारण यह आठ प्रकार की देवताओं की सृष्टि है ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

भूतप्रेतपिशाचाश्च विद्याध्राः किन्नरादयः ।
दशैते विदुराख्याताः सर्गास्ते विश्वसृक्कृताः ।।२८।।

पदच्छेद—

भूत प्रेत पिशाचाः च, विद्याध्राः किन्नर आदयः ।
दश एते विदुर आख्याताः,सर्गाः ते विश्वसृक् कृताः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूत, प्रेत | १. | भूत, प्रेत | एते | १०. | ये |
| पिशाचाः | २. | पिशाच | विदुर | ७. | हे विदुर जी ! |
| च | ४. | और | आख्याताः | १४. | बताई गई हैं |
| विद्याध्राः | ३. | विद्याधर | सर्गाः | १२. | सृष्टियाँ |
| किन्नर | ५. | किन्नर | ते | १३. | आपको |
| आदयः । | ६. | इत्यादि (भी) देव सृष्टियाँ हैं | विश्वसृक् | ८. | ब्रह्मा जी के द्वारा |
| दश | ११. | दस | कृताः ।। | ९. | बनाई गई |

श्लोकार्थ—भूत, प्रेत, पिशाच, विद्याधर और किन्नर इत्यादि भी देव सृष्टियाँ हैं । हे विदुर जी ! ब्रह्मा जी के द्वारा बनाई गई ये दस सृष्टियाँ आपको बताई गई हैं ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

अतः परं प्रवक्ष्यामि वंशान्मन्वन्तराणि च ।
एवं रजःप्लुतः स्रष्टा कल्पादिष्वात्मभूर्हरिः ।
सृजत्यमोघसङ्कल्प आत्मैवात्मानमात्मना ।।२९।।

पदच्छेद—

अतः परम् प्रवक्ष्यामि, वंशान् मन्वन्तराणि च ।
एवम् रजः प्लुतः स्रष्टा, कल्प आदिषु आत्मभूः हरिः ।।
सृजति अमोघ सङ्कल्पः, आत्मा एव आत्मानम् आत्मना ।।

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| अतः | १. | हे विदुर जी ! अब |
| परम् | २. | इसके बाद (आपको) |
| प्रवक्ष्यामि | ६. | बताऊँगा |
| वंशान् | ३. | राजवंशों को |
| मन्वन्तराणि | ५. | मन्वन्तरों को |
| च । | ४. | और |
| एवम् | ७. | इस प्रकार |
| रजः | १०. | रजोगुण से |
| प्लुतः | ११. | व्याप्त |
| स्रष्टा | १२. | विश्व के रचयिता |
| कल्प | ८. | सृष्टि के |
| आदिषु | ९. | प्रारम्भ में |
| आत्मभूः | १३. | ब्रह्माजी के रूप में |
| हरिः । | १७. | श्रीहरि |
| सृजति | २१. | प्रकट करते हैं |
| अमोघ | १४. | सत्य |
| सङ्कल्पः | १५. | संकल्प |
| आत्मा | १६. | भगवान् |
| एव | २०. | ही |
| आत्मानम् | १९. | स्वयं अपने को |
| आत्मना ।। | १८. | अपने से |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! अब इसके बाद आपको राजवंशों को और मन्वन्तरों को बताऊँगा । इस प्रकार सृष्टि के प्रारम्भ में रजोगुण से व्याप्त विश्व के रचयिता ब्रह्मा जी के रूप में सत्यसंकल्प भगवान् श्रीहरि अपने से स्वयं अपने को ही प्रकट करते हैं ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
दशमः अध्यायः ।।१०।।

# तृतीयः स्कन्धः

## अथ एकादशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच--

चरमः सद्विशेषाणामनेकोऽसंयुतः सदा ।
परमाणुः स विज्ञेयो नृणामैक्यभ्रमो यतः ॥१॥

पदच्छेद—

चरमः सद् विशेषाणाम्, अनेकः असंयुतः सदा ।
परमाणुः सः विज्ञेयः, नृणाम् ऐक्य भ्रमः यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चरमः | ५. | अन्तिम | परमाणुः | ८. | परमाणु |
| सद् | ३. | पृथ्वी आदि तत्त्वों के (जो) | सः | ७. | वे |
| विशेषाणाम् | ६. | सूक्ष्म रूप हैं | विज्ञेयः | ९. | कहे जाते हैं |
| अनेकः | ४. | अनेकों | नृणाम् | ११. | मनुष्यों को |
| असंयुतः | २. | अलग-अलग रहने वाले | ऐक्य, भ्रमः | १२. | एक समूह का भ्रम होता है |
| सदा । | १. | हे विदुर जी ! हमेशा | यतः ॥ | १०. | जिनसे |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! हमेशा अलग-अलग रहने वाले पृथ्वी आदि तत्त्वों के जो अनेकों अन्तिम सूक्ष्म रूप हैं, वे परमाणु कहे जाते हैं, जिनसे मनुष्यों को एक समूह का भ्रम होता है ।

## द्वितीयः श्लोकः

सत एव पदार्थस्य स्वरूपावस्थितस्य यत् ।
कैवल्यं परममहानविशेषो निरन्तरः ॥२॥

पदच्छेद—

सतः एव पदार्थस्य, स्वरूप अवस्थितस्य यत् ।
कैवल्यम् परम महान्, अविशेषः निरन्तरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सतः | ३. | पृथ्वी आदि | कैवल्यम् | ६. | समुदाय है |
| एव | ७. | उसे ही | परम | ८. | परम |
| पदार्थस्य | ४. | तत्त्वों का | महान् | ९. | महान् कहते हैं (वह) |
| स्वरूप | १. | अपने रूप में | अविशेषः | १०. | सामान्य रूप है (और) |
| अवस्थितस्य | २. | स्थित | निरन्तरः ॥ | ११. | काल भेद से शून्य (होता है) |
| यत् । | ५. | जो | | | |

श्लोकार्थ—अपने रूप में स्थित पृथ्वी आदि तत्त्वों का जो समुदाय है, उसे ही परम महान् कहते हैं । वह सामान्य रूप है और काल भेद से शून्य होता है ।

# तृतीयः श्लोकः

एवं कालोऽप्यनुमितः सौक्ष्म्ये स्थौल्ये च सत्तम ।
संस्थानभुक्त्या भगवानव्यक्तो व्यक्तभुग्विभुः ॥३॥

पदच्छेद—

एवम् कालः अपि अनुमितः, सौक्ष्म्ये स्थौल्ये च सत्तम ।
संस्थान भुक्त्या भगवान्, अव्यक्तः व्यक्तभुक् विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १०. | इसी प्रकार | सत्तम । | १. | साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! |
| कालः | ८. | काल में | संस्थान | ४. | सृष्टि आदि में |
| अपि | ९. | भी | भुक्त्या | ५. | समर्थ |
| अनुमितः | १४. | अनुमान किया जाता है | भगवान् | ७. | भगवान् |
| सौक्ष्म्ये | ११. | सूक्ष्मता | अव्यक्तः | ६. | निराकार |
| स्थौल्ये | १३. | स्थूलता का | व्यक्तभुक् | २. | सांसारिक पदार्थों के भोक्ता |
| च | १२. | और | विभुः ॥ | ३. | सर्व व्यापक (और) |

श्लोकार्थ—साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! सांसारिक पदार्थों के भोक्ता, सर्व व्यापक और सृष्टि आदि में समर्थ निराकार भगवान् काल में भी इसी प्रकार सूक्ष्मता और स्थूलता का अनुमान किया जाता है।

# चतुर्थः श्लोकः

स कालः परमाणुर्वै यो भुङ्क्ते परमाणुताम् ।
सतोऽविशेषभुग्यस्तु स कालः परमो महान् ॥४॥

पदच्छेद—

सः कालः परमाणुः वै, यः भुङ्क्ते परमाणुताम् ।
सतः अविशेष भुक् यः तु, सः कालः परमः महान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. | वह | अविशेष | १०. | सामान्य रूप में |
| कालः | २. | काल | भुक् | ११. | व्याप्त रहने वाला |
| परमाणुः | ६. | परमाणु-काल | यः | १२. | जो |
| वै | ७. | कहलाता है | तु | ८. | तथा |
| यः | १. | जो | सः | १४. | वह |
| भुङ्क्ते | ४. | व्याप्त रहता है | कालः | १३. | काल है |
| परमाणुताम् । | ३. | परमाणु रूप में | परमः | १५. | परम |
| सतः | ९. | पृथ्वी आदि तत्त्वों के | महान् ॥ | १६. | महान् (है) |

श्लोकार्थ—जो काल परमाणु रूप में व्याप्त रहता है, वह परमाणु-काल कहलाता है तथा पृथ्वी आदि तत्त्वों के सामान्य रूप में व्याप्त रहने वाला जो काल है, वह परम महान् है।

## पञ्चमः श्लोकः

अणुर्द्वौ परमाणू स्यात्त्रसरेणुस्त्रयः स्मृतः ।
जालार्करश्म्यवगतः खमेवानुपतन्नगात् ।।५।।

पदच्छेद—

अणु द्वौ परमाणू स्यात्, त्रसरेणुः त्रयः स्मृतः ।
जाल अर्क रश्मि अवगतः, खम् एव अनुपतन् अगात् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अणुः | ३. | एक अणु | जाल, अर्क | १२. | झरोखे से आती हुई, सूर्य की |
| द्वौ | १. | दो | रश्मि | १३. | किरणों के प्रकाश में |
| परमाणू | २. | परमाणुओं का | अवगतः | १४. | दिखाई देता है |
| स्यात् | ४. | होता है | खम् | ८. | (वह) आकाश में |
| त्रसरेणुः | ६. | एक त्रसरेणु | एव | ९. | ही |
| त्रयः | ५. | तीन अणुओं का | अनुपतन् | १०. | उड़ता हुआ |
| स्मृतः । | ७. | कहलाता है | अगात् ।। | ११. | गतिशील रहता है (और) |

श्लोकार्थ—दो परमाणुओं का एक अणु होता है, तीन अणुओं का एक त्रसरेणु कहलाता है। वह आकाश में ही उड़ता हुआ गतिशील रहता है और झरोखे से आती हुई सूर्य की किरणों के प्रकाश में नाचता-सा दिखाई देता है।

## षष्ठः श्लोकः

त्रसरेणुत्रिकं भुङ्क्ते यः कालः स त्रुटिः स्मृतः ।
शतभागस्तु वेधः स्यात्तैस्त्रिभिस्तु लवः स्मृतः ।।६।।

पदच्छेद—

त्रसरेणु त्रिकम् भुङ्क्ते, यः कालः सः त्रुटिः स्मृतः ।
शतभागः तु वेधः स्यात्, तैः त्रिभिः तु लवः स्मृतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्रसरेणु | २. | त्रसरेणुओं को (पार करने में) | शतभागः | ९. | सौगुने त्रुटि का |
| त्रिकम् | १. | तीन | तु | ८. | तथा |
| भुङ्क्ते | ५. | लगता है | वेधः, स्यात् | १०. | एक वेध, होता है |
| यः | ३. | (सूर्य के प्रकाश को) जितना | तैः | १२. | उन |
| कालः | ४. | समय | त्रिभिः | १३. | तीन वेधों का |
| सः, त्रुटिः | ६. | वह, त्रुटि | तु | ११. | और |
| स्मृतः । | ७. | कहलाता है | लवः, स्मृतः ।। | १४. | एक लव, होता है |

श्लोकार्थ—तीन त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य के प्रकाश को जितना समय लगता है, वह समय त्रुटि कहलाता है तथा सौगुने त्रुटि का एक वेध होता है और उन तीन वेधों का एक लव होता है।

## सप्तमः श्लोकः

निमेषस्त्रिलवो ज्ञेय आम्नातस्ते त्रयः क्षणः ।
क्षणान् पञ्च विदुः काष्ठां लघु ता दश पञ्च च ॥७॥

पदच्छेद—

निमेषः त्रि लवः ज्ञेयः, आम्नातः ते त्रयः क्षणः ।
क्षणान् पञ्च विदुः काष्ठाम्, लघु ताः दश पञ्च च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निमेषः | २. | निमेष | क्षणान् | ९. | क्षणों को |
| त्रि लवः | १. | तीन लव को | पञ्च | ८. | पाँच |
| ज्ञेयः | ३. | कहते हैं | विदुः | ११. | कहते हैं |
| आम्नातः | ७. | कहलाता है | काष्ठाम् | १०. | एक काष्ठा |
| ते | ४. | उन | लघु | १४. | एक लघु होता है |
| त्रयः | ५. | तीन निमेषों का | ताः, दशपञ्च | १३. | उन, पन्द्रह काष्ठाओं का |
| क्षणः । | ६. | एक क्षण | च ॥ | १२. | और |

श्लोकार्थ—तीन लव को निमेष कहते हैं। उन तीन निमेषों का एक क्षण कहलाता है। पाँच क्षणों को एक काष्ठा कहते हैं और उन पन्द्रह काष्ठाओं का एक लघु होता है।

## अष्टमः श्लोकः

लघूनि वै समाम्नाता दश पञ्च च नाडिका ।
ते द्वे मुहूर्तः प्रहरः षड्यामः सप्त वा नृणाम् ॥८॥

पदच्छेद—

लघूनि वै समाम्नाता, दशपञ्च च नाडिका ।
ते द्वे मुहूर्तः प्रहरः, षड् यामः सप्त वा नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लघूनि | २. | लघु को | मुहूर्तः | ८. | एक मुहूर्त (तथा) |
| वै | ३. | ही | प्रहरः | १२. | एक प्रहर होता है (जो) |
| समाम्नाता | ५. | कहते हैं | षड् | ९. | छः |
| दश पञ्च | १. | पन्द्रह | यामः | १४. | चौथा भाग (है) |
| च | ६. | और | सप्त | ११. | सात (दण्डों) का |
| नाडिका । | ४. | एक दण्ड | वा | १०. | अथवा |
| ते, द्वे | ७. | उन, दो दण्डों का | नृणाम् ॥ | १३. | मनुष्यों के (दिन व रात का) |

श्लोकार्थ—पन्द्रह लघु को ही एक दण्ड कहते हैं और उन दो दण्डों का एक मुहूर्त तथा छः अथवा सात दण्डों का एक प्रहर होता है, जो मनुष्यों के दिन अथवा रात का चौथा भाग है।

## नवमः श्लोकः

द्वादशार्धपलोन्मानं चतुर्भिश्चतुरङ्गुलैः ।
स्वर्णमाषैः कृतच्छिद्रं यावत्प्रस्थजलप्लुतम् ॥९॥

पदच्छेद—

द्वादश अर्ध पल उन्मानम्, चतुर्भिः चतुर् अङ्गुलैः ।
स्वर्ण माषैः कृत छिद्रम्, यावत् प्रस्थ ,जल प्लुतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| द्वादश अर्ध | १. छः | माषैः | ५. | मासे |
| पल | २. तोले ताँबे से निर्मित | कृत | १०. | करने पर (उसमें) |
| उन्मानम् | ३. पात्र में | छिद्रम् | ९. | छेद |
| चतुर्भिः | ४. चार | यावत् | ११. | जितने समय में |
| चतुर् | ७. एक चार | प्रस्थ | १२. | एक पाव |
| अङ्गुलैः । | ८. अंगुल की (सलाई से) | जल | १३. | पानी |
| स्वर्ण | ६. सोने की | प्लुतम् ॥ | १४. | भर जावे (उतने समय को एक दण्ड कहते हैं) |

श्लोकार्थ—छः तोले ताँबे से निर्मित पात्र में चार मासे सोने की एक चार अंगुल की सलाई से छेद करने पर उसमें जितने समय में एक पाव पानी भर जावे, उतने समय को सामान्य रूप से एक दण्ड कहते हैं ।

## दशमः श्लोकः

यामाश्चत्वारश्चत्वारो मर्त्यानामहनी उभे ।
पक्षः पञ्चदशाहानि शुक्लः कृष्णश्च मानद ॥१०॥

पदच्छेद—

यामाः चत्वारः चत्वारः, मर्त्यानाम् अहनी उभे ।
पक्षः पञ्च दश अहानि, शुक्लः कृष्णः च मानद ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यामाः | ४. प्रहर के | पक्षः | १०. | एक पक्ष (होता है जो) |
| चत्वारः | २. चार | पञ्च दश | ८. | पन्द्रह |
| चत्वारः | ३. चार | अहानि | ९. | दिन और रात का |
| मर्त्यानाम् | ५. मनुष्यों के | शुक्लः | ११. | शुक्ल |
| अहनी | ६. दिन-रात | कृष्णः | १३. | कृष्ण (भेद से दो प्रकार का है) |
| उभे । | ७. दोनों होते हैं | च | १२. | और |
| | | मानद ॥ | १. | हे विदुर जी ! |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! चार-चार प्रहर के मनुष्यों के दिन-रात दोनों होते हैं । पन्द्रह दिन और रात का एक पक्ष होता है, जो शुक्ल और कृष्ण भेद से दो प्रकार का है ।

## एकादशः श्लोकः

तयोः समुच्चयो मासः पितॄणां तदहर्निशम् ।
द्वौ तावृतुः षडयनं दक्षिणं चोत्तरं दिवि ॥११॥

पदच्छेद—

तयोः समुच्चयः मासः, पितॄणाम् तद् अहर्निशम् ।
द्वौ तौ ऋतुः षट् अयनम्, दक्षिणम् च उत्तरम् दिवि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तयोः | १. | उन दोनों पक्षों का | तौ | ७. | उन |
| समुच्चयः | २. | समूह | ऋतुः | ६. | एक ऋतु (और) |
| मासः | ३. | एक मास कहलाता है | षट् | १२. | छः महीनों का |
| पितॄणाम् | ५. | पितरों का | अयनम् | ११. | एक अयन होता है (वह) |
| तद् | ४. | वह मास | दक्षिणम्, च | १२. | दक्षिणायन, और |
| अहर्निशम् | ६. | एक दिन-रात होता है | उत्तरम् | १४. | उत्तरायण (दो प्रकार का है) |
| द्वौ | ८. | दो महीनों की | दिवि ॥ | १३. | स्वर्ग के लिए |

श्लोकार्थ—उन दोनों पक्षों का समूह एक मास कहलाता है। वह मास पितरों का एक दिन-रात होता है। उन दो महीनों का एक ऋतु और छः महीनों का एक अयन होता है। वह अयन दक्षिणायन और स्वर्ग-के लिए उत्तरायण दो प्रकार का है।

## द्वादशः श्लोकः

अयने चाहनी प्राहुर्वत्सरो द्वादश स्मृतः ।
संवत्सरशतं नृणां परमायुर्निरूपितम् ॥१२॥

पदच्छेद—

अयने च अहनी प्राहुः, वत्सरः द्वादश स्मृतः ।
संवत्सर शतम् नृणाम्, परम आयुः निरूपितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अयने | २. | दो अयन को (देवताओं का) | संवत्सर | १०. | वर्ष |
| च | १. | हे विदुर जी ! | शतम् | ६. | (इसी मान से) सौ |
| अहनी | ३. | एक दिन-रात | नृणाम् | ८. | मनुष्यों की |
| प्राहुः | ४. | कहा गया है (जिसे) | परम | १२. | अधिकतम |
| वत्सरः | ५. | एक वर्ष (अथवा) | आयुः | ११. | आयु |
| द्वादश | ६. | बारह महीने | निरूपितम् ॥ | १२. | बतलाई गई है |
| स्मृतः । | ७. | कहते हैं | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! दो अयन को देवताओं का एक दिन-रात कहा गया है, जिसे एक वर्ष अथवा बारह महीने कहते हैं। इसी मान से मनुष्यों की सौ वर्ष आयु अधिकतम बतलाई गई है।

## त्रयोदशः श्लोकः

ग्रहर्क्षताराचक्रस्थः परमाण्वादिना जगत् ।
संवत्सरावसानेन पर्येत्यनिमिषो विभुः ।।१३।।

पदच्छेद—

ग्रह ऋक्ष तारा चक्रस्थः, परमाणु आदिना जगत् ।
संवत्सर अवसानेन, पर्येति अनिमिषः विभुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ग्रह | १. | चन्द्रमादि ग्रह | जगत् । | ११. | बारह राशि रूप भुवन का |
| ऋक्ष | २. | अश्विनी आदि नक्षत्र | संवत्सर | ७. | वर्ष |
| तारा | ३. | (और) तारा | अवसानेन | ८. | पर्यन्त काल में |
| चक्रस्थः | ४. | मण्डल के अधिष्ठाता | पर्येति | १२. | एक भ्रमण करते हैं |
| परमाणु | ९. | परमाणु | अनिमिषः | ६. | काल रूप भगवान् सूर्य |
| आदिना | १०. | इत्यादि से लेकर | विभुः ।। | ५. | सर्वव्यापी |

श्लोकार्थ—चन्द्रमादि ग्रह, अश्विनी आदि नक्षत्र और तारा मण्डल के अधिष्ठाता सर्वव्यापी काल रूप भगवान् सूर्य वर्ष पर्यन्त काल में परमाणु इत्यादि से लेकर बारह राशिरूप भुवन का एक भ्रमण करते हैं ।

## चतुर्दशः श्लोकः

संवत्सरः परिवत्सर इडावत्सर एव च ।
अनुवत्सरो वत्सरश्च विदुरैवं प्रभाष्यते ।।१४।।

पदच्छेद—

संवत्सरः परिवत्सरः, इडावत्सरः एव च ।
अनुवत्सरः वत्सरः च, विदुर एवम् प्रभाष्यते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| संवत्सरः | ३. | सूर्य के सम्बन्ध से संवत्सर | अनुवत्सरः | ८. | चन्द्र के सम्बन्ध से अनुवत्सर |
| परिवत्सरः | ५. | सम्बन्ध से परिवत्सर | वत्सरः | १०. | नक्षत्र के सम्बन्ध से वत्सर |
| इडावत्सरः | ७. | सम्बन्ध से इडावत्सर | च | ९. | तथा |
| एव | ६. | एवं (सवन के) | विदुर | १. | हे विदुर जी ! |
| च । | ४. | और (बृहस्पति के) | एवम् | २. | इस प्रकार (यह वर्ष ही) |
| | | | प्रभाष्यते ।। | ११. | कहा गया है |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार यह वर्ष ही सूर्य के सम्बन्ध से संवत्सर और बृहस्पति के सम्बन्ध से परिवत्सर एवं सवन के सम्बन्ध से इडावत्सर, चन्द्र के सम्बन्ध से अनुवत्सर तथा नक्षत्र के सम्बन्ध से वत्सर कहा गया है ।

# पञ्चदशः श्लोकः

यः सृज्यशक्तिमुरुधोच्छ्वसयन् स्वशक्त्या,
पुंसोऽभ्रमाय दिवि धावति भूतभेदः।
कालाख्यया गुणमयं क्रतुभिर्वितन्वंस्,
तस्मै बलिं हरत वत्सरपञ्चकाय ॥

पदच्छेद—

यः सृज्य शक्तिम् उरुधा उच्छ्वसयन् स्व शक्त्या,
पुंसः अभ्रमाय दिवि धावति भूत भेदः।
काल आख्यया गुणमयम् क्रतुभिः वितन्वन्,
तस्मै बलिम् हरत वत्सर पञ्चकाय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ६. | जो भगवान् सूर्य | भेदः। | १६. | भिन्न-भिन्न स्वरूप वाले |
| सृज्य | ११. | अंकुर आदि उत्पादन | काल | ७. | काल |
| शक्तिम् | १२. | शक्ति को | आख्यया | ८. | नाम की |
| उरुधा | १३. | अनेक प्रकार से | गुण | २२. | स्वर्गादि |
| उच्छ्वसयन् | १४. | जीवनदान देते हैं | मयम् | २३. | फल को |
| स्व | ९. | अपनी | क्रतुभिः | २१. | यज्ञों से उत्पन्न |
| शक्त्या, | १०. | शक्ति से | वितन्वन्, | २४. | प्रदान करते हैं |
| पुंसः | १७. | मनुष्यों के | तस्मै | ३. | उन भगवान् सूर्य की |
| अभ्रमाय | १८. | मोह को दूर करने के लिये | बलिम् | ४. | भेंट चढ़ा कर |
| दिवि | १९. | आकाश में | हरत | ५. | पूजा करें |
| धावति | २०. | भ्रमण करते हैं तथा | वत्सर | २. | वत्सरों के निर्माता |
| भूत | १५. | पञ्च महाभूतों में | पञ्चकाय ॥ | १. | हे विदुर जी ! आप पाँचों |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! आप पाँचों वत्सरों के निर्माता उन भगवान् सूर्य की भेंट चढ़ा कर पूजा करें, जो भगवान् सूर्य काल नाम की अपनी शक्ति से अंकुर आदि उत्पादन शक्ति को अनेक प्रकार से जीवन दान देते हैं। पञ्च महाभूतों में भिन्न-भिन्न स्वरूप वाले वे सूर्य भगवान् मनुष्यों के मोह को दूर करने के लिये आकाश में भ्रमण करते हैं तथा यज्ञों से उत्पन्न स्वर्गादि फल को प्रदान करते हैं।

विदुर उवाच—

## षोडशः श्लोकः

पितृदेव मनुष्याणामायुः परमिदं स्मृतम् ।
परेषां गतिमाचक्ष्व ये स्युः कल्पाद् बहिर्विदः ॥१६॥

पदच्छेद—

पितृ देव मनुष्याणाम्, आयुः परम् इदम् स्मृतम् ।
परेषाम् गतिम् आचक्ष्व, ये स्युः कल्पाद् बहिः विदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पितृ | २. | पितर (और) | परेषाम् | १३. | उनकी |
| देव | १. | हे मुनिवर ! आपने देवता | गतिम्,आचक्ष्व | १४. | आयु, बतावें |
| मनुष्याणाम् | ३. | मनुष्यों की | ये | ८. | जो |
| आयुः | ६. | आयु | स्युः | १२. | हैं |
| परम् | ५. | पूरी | कल्पाद् | ९. | त्रिलोकी से |
| इदम् | ४. | यह | बहिः | १०. | बाहर रहने वाले |
| स्मृतम् । | ७. | बताई (अब) | विदः ॥ | ११. | सनकादि ज्ञानी मुनि जन |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आपने देवता, पितर और मनुष्यों की यह पूरी आयु बताई । अब जो त्रिलोकी से बाहर रहने वाले सनकादि ज्ञानी मुनि जन हैं, उनकी आयु बतावें ।

## सप्तदशः श्लोकः

भगवान् वेद कालस्य, गतिं भगवतो ननु ।
विश्वं विचक्षते धीरा योगराद्धेन चक्षुषा ॥१७॥

पदच्छेद—

भगवान् वेद कालस्य, गतिम् भगवतः ननु ।
विश्वम् विचक्षते धीराः, योग राद्धेन चक्षुषा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | १. | हे मैत्रेय जी ! आप | विश्वम् | १०. | सम्पूर्ण जगत् को |
| वेद | ६. | जानते हैं (क्योंकि) | विचक्षते | ११. | देखते हैं |
| कालस्य | ३. | काल की | धीराः | ७. | ज्ञानी मुनिजन |
| गतिम् | ४. | गति को | योग, राद्धेन | ८. | योग के द्वारा, प्राप्त |
| भगवतः | २. | भगवान् | चक्षुषा ॥ | ९. | दिव्य दृष्टि से |
| ननु । | ५. | भली भाँति | | | |

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! आप भगवान् काल की गति को भली-भाँति जानते हैं, क्योंकि ज्ञानी मुनिजन योग के द्वारा प्राप्त दिव्य दृष्टि से सम्पूर्ण जगत् को देखते हैं ।

# अष्टादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।
दिव्यैर्द्वादशभिर्वर्षैः सावधानं निरूपितम् ॥१८॥

पदच्छेद—

कृतम् त्रेता द्वापरम् च, कलिः च इति चतुर्युगम् ।
दिव्यैः द्वादशभिः वर्षैः, सावधानम् निरूपितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृतम् | १. | हे विदुर जी ! सत्ययुग | चतुर्युगम् । | ७. | चारों युग |
| त्रेता | २. | त्रेता | दिव्यैः | ९. | देवताओं के |
| द्वापरम् | ३. | द्वापर | द्वादशभिः | १०. | बारह हजार |
| च | ४. | और | वर्षैः | ११. | वर्षों के बराबर |
| कलिः च | ५. | कलि | सावधानम् | ८. | संध्या और संध्यांशों सहित |
| इति | ६. | ये | निरूपितम् ॥ | १२. | बताये गये हैं |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! सत्ययुग; त्रेता, द्वापर और कलि ये चारों युग सन्ध्या और सन्ध्यांशों सहित देवताओं के बारह हजार वर्षों के बराबर बताये गये हैं ।

# एकोनविंशः श्लोकः

चत्वारि त्रीणि द्वे चैकं, कृतादिषु यथाक्रमम् ।
संख्यातानि सहस्राणि द्विगुणानि शतानि च ॥१९॥

पदच्छेद—

चत्वारि त्रीणि द्वे च एकम्, कृत आदिषु यथा क्रमम् ।
संख्यातानि सहस्राणि, द्विगुणानि शतानि च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चत्वारि | ४. | चार | क्रमम् । | ३. | क्रमशः |
| त्रीणि | ५. | तीन | संख्यातानि | १०. | होते हैं |
| द्वे | ६. | दो | सहस्राणि | ९. | हजार (दिव्य वर्ष) |
| च | ७. | और | द्विगुणानि | १२. | दुगुने |
| एकम् | ८. | एक | शतानि | १३. | सौ (दिव्य वर्ष होते हैं) |
| कृत आदिषु | २. | सत्त्वादि चारों युगों में | च ॥ | ११. | तथा (उनके संध्या और संध्यांशों में) |
| यथा | १. | इन | | | |

श्लोकार्थ—इन सत्त्वादि चारों युगों में क्रमशः चार, तीन, दो और एक हजार दिव्य वर्ष होते हैं तथा उनके संध्या और सन्ध्यांशों में उन संख्याओं से दुगुने सौ वर्ष होते हैं ।

# विंशः श्लोकः

संध्यांशयोरन्तरेण यः कालः शतसंख्ययोः ।
तमेवाहुर्युगं तज्ज्ञा यत्र धर्मो विधीयते ।।२०।।

पदच्छेद—

संध्या अंशयोः अन्तरेण, यः कालः शत संख्ययोः ।
तम् एव आहुः युगम् तज्ज्ञाः, यत्र धर्मः विधीयते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| संध्या | ३. | युग के आरम्भ में (संध्या और) | तम्, एव | ९. | उसे ही |
| | | | आहुः | ११. | कहते हैं |
| अंशयोः | ४. | युग के अन्त में (संध्यांशों) के | युगम् | १०. | युग |
| अन्तरेण | ५. | बीच में | तज्ज्ञाः | ८. | समय के जानकार |
| यः | ६. | जो | यत्र | १२. | जिसमें |
| कालः | ७. | समय है | धर्मः | १३. | एक विशेष धर्म का |
| शत | १. | (दिव्य वर्ष के) सैकड़ों की | विधीयते ।। | १४. | विधान होता है |
| संख्ययोः । | २. | संख्या से युक्त | | | |

श्लोकार्थ—दिव्य वर्ष के सैकड़ों की संख्या से युक्त युग के आरम्भ में संध्या और युग के अन्त में संध्यांश इन दोनों के बीच में जो समय है, समय के जानकार उसे ही युग कहते हैं, जिसमें एक विशेष धर्म का विधान होता है ।

# एकविंशः श्लोकः

धर्मश्चतुष्पान्मनुजान् कृते समनुवर्तते ।
स एवान्येष्वधर्मेण व्येति पादेन वर्धता ।।२१।।

पदच्छेद—

धर्मः चतुष्पाद् मनुजान्, कृते समनुवर्तते ।
सः एव अन्येषु अधर्मेण, व्येति पादेन वर्धता ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्मः | ३. | धर्म | सः एव | ६. | वही (धर्म) |
| चतुष्पाद् | ४. | चारों चरण से | अन्येषु | ७. | अन्य युगों में |
| मनुजान् | २. | मनुष्यों में | अधर्मेण | ८. | अधर्म की |
| कृते | १. | सत्ययुग के | व्येति | ११. | क्षीण होता जाता है |
| समनुवर्तते । | ५. | रहता है | पादेन | १०. | एक-एक चरण से |
| | | | वर्धता ।। | ९. | वृद्धि होने के कारण |

श्लोकार्थ—सत्ययुग के मनुष्यों में धर्म चारों चरण से रहता है। वही धर्म अन्य युगों में अधर्म की वृद्धि होने के कारण एक-एक चरण से क्षीण होता जाता है ।

## द्वाविंशः श्लोकः

त्रिलोक्या युगसाहस्रं बहिराब्रह्मणो दिनम् ।
तावत्येव निशा तात यन्निमीलति विश्वसृक् ॥२२॥

पदच्छेद—

त्रिलोक्याः युग साहस्रम्, बहिः आब्रह्मणः दिनम् ।
तावती एव निशा तात, यत् निमीलति विश्वसृक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्रिलोक्याः | २. | त्रिलोकी के | तावती | ८. | उतने |
| युग | ६. | चतुर्युगी के बराबर | एव | ९. | ही (समय की) |
| साहस्रम् | ५. | एक हजार | निशा | १०. | एक रात (होती है) |
| बहिः | ३. | बाहर | तात | १. | हे प्यारे विदुर जी ! |
| आब्रह्मणः | ४. | महर्लोक से ब्रह्मलोक तक | यत् | ११. | जिसमें |
| दिनम् । | ७. | एक दिन (होता है) | निमीलति | १३. | शयन करते हैं |
| | | | विश्वसृक् ॥ | १२. | जगत् के रचयिता ब्रह्माजी |

श्लोकार्थ—हे प्यारे विदुर जी ! त्रिलोकी के बाहर महर्लोक से ब्रह्मलोक तक एक हजार चतुर्युगी के बराबर एक दिन होता है तथा उतने ही समय की एक रात होती है, जिसमें जगत् के रचयिता ब्रह्मा जी शयन करते हैं ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

निशावसान आरब्धो लोककल्पोऽनुवर्तते ।
यावद्दिनं भगवतो मनून् भुञ्जंश्चतुर्दश ॥२३॥

पदच्छेद—

निशा अवसाने आरब्धः, लोक कल्पः अनुवर्तते ।
यावत् दिनम् भगवतः, मनून् भुञ्जन् चतुर्दश ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निशा | १. | रात के | यावत् | ३. | जब तक |
| अवसाने | २. | बीतने पर | दिनम् | ५. | दिन रहता है (तब तक) |
| आरब्धः | ८. | प्रारम्भ | भगवतः | ४. | ब्रह्मा जी का |
| लोक | ६. | जगत् की | मनून् | ११. | मनु |
| कल्पः | ७. | सृष्टि का क्रम | भुञ्जन् | १२. | भोग करते हैं |
| अनुवर्तते | ९. | रहता है (उसमें) | चतुर्दशः | १०. | चौदह |

श्लोकार्थ—रात के बीतने पर जब तक ब्रह्मा जी का दिन रहता है, तब तक जगत् की सृष्टि का क्रम प्रारम्भ रहता है, उसमें चौदह मनु भोग करते हैं ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

स्वं स्वं कालं मनुर्भुङ्क्ते साधिकां ह्येकसप्ततिम् ।
मन्वन्तरेषु मनवस्तद्वंश्या ऋषयः सुराः ।
भवन्ति चैव युगपत्सुरेशाश्चानु ये च तान् ॥२४॥

पदच्छेद— स्वम् स्वम् कालम् मनुः भुङ्क्ते, साधिकाम् हि एक सप्ततिम् ।
मन्वन्तरेषु मनवः, तद् वंश्याः ऋषयः सुराः ।
भवन्ति च एव युगपत्, सुरेशाः च अनु ये च तान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वम् स्वम् | ५. | अपने अपने अधिकार का | ऋषयः सुराः । | १०. | सप्तर्षि, देवता |
| कालम् | ४. | काल तक | भवन्ति | १८. | रहते हैं |
| मनुः | १. | प्रत्येक मनु | च | ११. | और |
| भुङ्क्ते | ६. | भोग करते हैं | एव | १७. | ही |
| साधिकाम् हि | ३. | कुछ अधिक ही | युगपत् | १६. | साथ-साथ |
| एक सप्ततिम् | २. | एकहत्तर चतुर्युगी से | सुरेशाः, च | १२. | इन्द्र तथा |
| मन्वन्तरेषु | ७. | प्रत्येक मन्वन्तरों में | अनु | १५. | अनुयायी (गन्धर्वा आदि हैं वे) |
| मनवः | ८. | भिन्न-भिन्न मनु | ये, च | १३. | जो और |
| तद् वंश्याः | ६. | उनके वंशज राजा लोग | तान् ॥ | १४. | उनके |

श्लोकार्थ—प्रत्येक मनु एकहत्तर चतुर्युगी से कुछ अधिक ही काल तक अपने-अपने अधिकार का भोग करते हैं। प्रत्येक मन्वन्तरों में भिन्न-भिन्न मनु, उनके वंशज राजा लोग, सप्तर्षि, देवता और इन्द्र तथा जो और उनके अनुयायी गन्धर्व आदि हैं, वे साथ-साथ ही रहते हैं।

## पञ्चविंशः श्लोक

एष दैनन्दिनः सर्गो ब्राह्मस्त्रैलोक्यवर्तनः ।
तिर्यङ्नृपितृदेवानां संभवो यत्र कर्मभिः ॥२५॥

पदच्छेद— एषः दैनन्दिनः सर्गः, ब्राह्मः त्रैलोक्यः वर्तनः ।
तिर्यङ् नृ पितृ देवानाम्, सम्भवः यत्र कर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः | १. | यह | तिर्यङ् | ६. | पशु-पक्षी |
| दैनन्दिनः | ३. | प्रतिदिन की | नृ, पितृ | १०. | मनुष्य, पितर और |
| सर्गः | ४. | सृष्टि है | देवानाम् | ११. | देवताओं को |
| ब्राह्मः | २. | ब्रह्मा जी की | सम्भवः | १२. | उत्पत्ति होती है |
| त्रैलोक्य | ६. | त्रिलोकी की | यत्र | ५. | जिसमें |
| वर्तनः । | ७. | रचना होती है (इसमें) | कर्मभिः ॥ | ८. | अपने पूर्व कर्मानुसार |

श्लोकार्थ—यह ब्रह्मा जी की प्रतिदिन की सृष्टि है, जिसमें त्रिलोकी की रचना होती है। इसमें अपने पूर्व कर्मानुसार पशु-पक्षी, मनुष्य, पितर और देवताओं की उत्पत्ति होती है।

# षड्विंशः श्लोकः

मन्वन्तरेषु भगवान्, बिभ्रत्सत्त्वं स्वमूर्तिभिः ।
मन्वादिभिरिदं विश्वमवत्युदितपौरुषः ॥२६॥

पदच्छेद—

मन्वन्तरेषु भगवान्, बिभ्रत् सत्त्वम् स्व मूर्तिभिः ।
मनु आदिभिः इदम् विश्वम्, अवति उदित पौरुषः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मन्वन्तरेषु | १. | (उन) मन्वन्तरों में | मनु आदिभिः | ८. | मनु इत्यादि |
| भगवान् | २. | (वे) भगवान् | इदम् | १०. | इस |
| बिभ्रत् | ६. | धारण करके | विश्वम् | ११. | जगत् की |
| सत्त्वम् | ५. | सत्त्वगुण को | अवति | १२. | रक्षा करते हैं |
| स्व | ७. | अपनी | उदित | ४. | प्रकट करके (और) |
| मूर्तिभिः । | ९. | मूर्तियों से | पौरुषः ॥ | ३. | सृष्टि रचना रूप पराक्रम को |

श्लोकार्थ—उन मन्वन्तरों में वे भगवान् सृष्टि रचना रूप पराक्रम को प्रकट करके और सत्त्वगुण को धारण करके अपनी मनु इत्यादि मूर्तियों से इस जगत् की रक्षा करते हैं ।

# सप्तविंशः श्लोकः

तमोमात्रामुपादाय प्रतिसंरुद्धविक्रमः ।
कालेनानुगताशेष आस्ते तूष्णीं दिनात्यये ॥२७॥

पदच्छेद—

तमोमात्राम् उपादाय, प्रति संरुद्ध विक्रमः ।
कालेन अनुगत अशेषे, आस्ते तूष्णीम् दिन अत्यये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तमोमात्राम् | ८. | तमोगुण को | अनुगत | ५. | हो जाने पर (वे भगवान्) |
| उपादाय | ९. | स्वीकार करके | अशेषे | २. | ब्रह्मा जी के पूरे |
| प्रतिसंरुद्धः | ७. | रोक करके (तथा) | आस्ते | ११. | स्थित रहते हैं |
| विक्रमः । | ६. | सृष्टि को | तूष्णीम् | १०. | निश्चेष्ट भाव से |
| कालेन | १. | काल क्रम से | दिन | ३. | दिन की |
| | | | अत्यये ॥ | ४. | समाप्ति |

श्लोकार्थ—कालक्रम से ब्रह्मा जी के पूरे दिन की समाप्ति हो जाने पर वे भगवान् सृष्टि को रोक करके तथा तमोगुण को स्वीकार करके निश्चेष्ट भाव से स्थित रहते हैं ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

तमेवान्वपिधीयन्ते लोका भूरादयस्त्रयः ।
निशायामनुवृत्तायां निर्मुक्तशशिभास्करम् ॥२८॥

पदच्छेद—

तम् एव अनु अपिधीयन्ते, लोकाः भूः आदयः त्रयः ।
निशायाम् अनुवृत्तायाम्, निर्मुक्त शशि भास्करम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तम् | ९. उन | निशायाम् | ४. ब्रह्मा जी की रात |
| एव | १०. ही (भगवान् में) | अनुवृत्तायाम् | ५. हो जाने पर |
| अनु अपिधीयन्ते | ११. लीन हो जाते हैं | निर्मुक्त | ३. रहित |
| लोकाः | ८. लोक | शशि | १. चन्द्रमा (और) |
| भूः आदयः | ६. भूः भुवः स्वः | भास्करम् ॥ | २. सूर्य से |
| त्रयः । | ७. तीनों | | |

श्लोकार्थ—चन्द्रमा और सूर्य से रहित ब्रह्मा जी रात हो जाने पर भूः भुवः स्वः तीनों लोक उन्हीं भगवान् में लीन हो जाते हैं ।

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

त्रिलोक्यां दह्यमानायां शक्त्या सङ्कर्षणाग्निना ।
यान्त्यूष्मणा महर्लोकाज्जनं भृग्वादयोऽर्दिताः ॥२९॥

पदच्छेद—

त्रिलोक्याम् दह्यमानायाम्, शक्त्या संङ्कर्षण अग्निना ।
यान्ति ऊष्मणा महर्लोकात्, जनम् भृगु आदयः अर्दिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| त्रिलोक्याम् | ४. त्रिलोकी के | यान्ति | ११. चले जाते हैं |
| दह्यमानायाम् | ५. जलते रहने पर (उसके) | ऊष्मणा | ६. ताप से |
| शक्त्या | ३. शक्ति से | महर्लोकात् | ९. महर्लोक से |
| संङ्कर्षण | १. शेषनाग के मुख की | जनम् | १०. जन लोक को |
| अग्निना । | २. अग्नि रूप | भृगु, आदयः | ८. भृगु, इत्यादि महर्षिगण |
| | | अर्दिताः ॥ | ७. पीड़ित होकर |

श्लोकार्थ—शेषनाग के मुख की अग्नि रूप शक्ति से त्रिलोकी के जलते रहने पर उसके ताप से पीड़ित होकर भृगु इत्यादि महर्षिगण महर्लोक से ऊपर जन लोक को चले जाते हैं ।

## त्रिंशः श्लोकः

तावत्त्रिभुवनं सद्यः कल्पान्तैधितसिन्धवः ।
प्लावयन्त्युत्कटाटोपचण्डवातेरितोर्मयः ॥३०॥

पदच्छेद—

तावत् त्रिभुवनम् सद्यः कल्पान्त एधित सिन्धवः ।
प्लावयन्ति उत्कट आटोप चण्ड वात ईरित ऊर्मयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तावत् | १. | उस समय | प्लावयन्ति | १२. | डुबो देते हैं |
| त्रिभुवनम् | १०. | त्रिलोकी को | उत्कट | ८. | भयंकर |
| सद्यः | ११. | तत् काल | आटोप | ७. | ऊँची-ऊँची |
| कल्पान्त | ४. | प्रलय काल की | चण्ड वात | ५. | प्रचण्ड वायु से |
| एधित | २. | बढ़े हुये | ईरित | ६. | उछलती हुई |
| सिन्धवः । | ३. | सातों समुद्र | ऊर्मयः ॥ | ९. | लहरों से |

श्लोकार्थ—उस समय बढ़े हुये सातों समुद्र प्रलयकाल की प्रचण्ड वायु से उछलती हुई ऊँची-ऊँची भयंकर लहरों से त्रिलोकी को तत्काल डुबो देते हैं ।

## एकत्रिंशः श्लोकः

अन्तः स तस्मिन् सलिल आस्तेऽनन्तासनो हरिः ।
योगनिद्रानिमीलाक्षः स्तूयमानो जनालयैः ॥३१॥

पदच्छेद

अन्तः सः तस्मिन् सलिले, आस्ते अनन्त आसनः हरिः ।
योग निद्रा निमील अक्षः, स्तूयमानः जन आलयैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तः | ३. | भीतर | हरिः । | ५. | भगवान् श्रीहरि |
| सः | ४. | वे | योग | ९. | योग |
| तस्मिन् | १. | उस | निद्रा | १०. | निद्रा से |
| सलिले | २. | जल के | निमिलाक्षः | ११. | आँखें बन्द करके |
| आस्ते | १४. | शयन करते हैं | स्तूयमानः | ८. | पूजित होते हुये |
| अनन्त | १२. | शेषनाग की | जन | ६. | जनलोक के |
| आसनः | १३. | शय्या पर | आलयैः ॥ | ७. | निवासी (महर्षियों) से |

श्लोकार्थ– उस जल के भीतर वे भगवान् श्रीहरि जनलोक के निवासी महर्षियों से पूजित होते हुये योगनिद्रा से आँखें बन्द करके शेषनाग की शय्या पर शयन करते हैं ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

एवंविधैरहोरात्रैः कालगत्योपलक्षितैः ।
अपक्षितमिवास्यापि परमायुर्वयःशतम् ।।३२।।

पदच्छेद—

एवं विधैः अहोरात्रैः, कालगत्या उपलक्षितैः ।
अपक्षितम् इव अस्य अपि, परम आयुः वयः शतम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवं विधैः | १. | इस प्रकार | अस्य | ५. | उन (ब्रह्मा जी) |
| अहोरात्रैः | ४. | दिन रात के हेर-फेर से | अपि | १०. | भी |
| कालगत्या | २. | काल की गति से | परम | ८. | पूरी |
| उपलक्षितैः । | ३. | प्रतीत होने वाले | आयुः | ६. | आयु |
| अपक्षितम् | ११. | बीती हुई | वयः | ७. | वर्ष की |
| इव | १२. | सी (दिखायी देती है) | शतम् ।। | ६. | एक-सौ |

श्लोकार्थ—इसी प्रकार काल की गति से प्रतीत होने वाले दिन-रात के हेर-फेर से उन ब्रह्मा जी की एक सौ वर्ष की पूरी आयु भी बीती हुई सी दिखायी देती है ।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यदर्धमायुषस्तस्य परार्धमभिधीयते ।
पूर्वः परार्धोऽपक्रान्तो ह्यपरोऽद्य प्रवर्तते ।।३३।।

पदच्छेद—

यद् अर्धम् आयुषः तस्य, परार्धम् अभिधीयते ।
पूर्वः परार्धः अपक्रान्तः, हि अपरः अद्य प्रवर्तते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ३. | जो | पूर्वः परार्धः | ७. | उसमें पहला परार्ध |
| अर्धम् | ४. | आधा भाग है उसे | अपक्रान्तः | ८. | बीत चुका है |
| आयुषः | २. | आयु का | हि | ६. | तथा |
| तस्य | १. | उन ब्रह्मा जी की | अपरः | १०. | दूसरा परार्ध |
| परार्धम् | ५. | परार्ध | अद्य | ११. | अब |
| अभिधीयते । | ६. | कहते हैं | प्रवर्तते ।। | १२. | चल रहा है |

श्लोकार्थ उन ब्रह्मा जी की आयु का जो आधा भाग है, उसे परार्ध कहते हैं. उसमें पहला परार्ध बीत चुका है, तथा दूसरा परार्ध अब चल रहा है ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

पूर्वस्यादौ परार्धस्य ब्राह्मो नाम महानभूत् ।
कल्पो यत्राभवद् ब्रह्मा शब्दब्रह्मेति यं विदुः ॥३४॥

पदच्छेद—

पूर्वस्य आदौ परार्धस्य ब्राह्मः नाम महान् अभूत् ।
कल्पः यत्र अभवद् ब्रह्मा शब्द ब्रह्मेति यं विदुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पूर्वस्य | १. | पहले | कल्पः | ७. | कल्प |
| आदौ | ३. | प्रारम्भ में | यत्र | ९. | जिसमें |
| परार्धम् | २. | परार्ध के | अभवद् | ११. | उत्पन्न हुये थे |
| ब्राह्म | ४. | ब्राह्म | ब्रह्मा | १०. | ब्रह्मा जी |
| नाम | ५. | नाम का (एक) | शब्द | १३. | शब्द ब्रह्म |
| महान् | ६. | बहुत बड़ा | ब्रह्मेति | १४. | इस नाम से |
| अभूत् | ८. | हुआ था | यम् | १२. | जिन्हें (पंडित जन) |
| | | | विदुः | १५. | जानते हैं |

श्लोकार्थ—पहले परार्ध के प्रारम्भ में ब्रह्मा नाम का एक बहुत बड़ा कल्प हुआ था। जिसमें ब्रह्माजी उत्पन्न हुये थे, जिन्हें पंडित जन शब्द ब्रह्म इस नाम से जानते हैं।

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तस्यैव चान्ते कल्पोऽभूद्, यं पाद्ममभिचक्षते ।
यद्धरेर्नाभिसरस आसील्लोकसरोरुहम् ॥३५॥

पदच्छेद—

तस्य एव च अन्ते कल्पः अभूत्, यम् पाद्मम् अभिचक्षते ।
यद् हरेः नाभि सरसः, आसीत् लोक सरोरुहम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य एव | २. | उसी (परार्ध के) | यद् | ९. | जिसमें |
| च | १. | तथा | हरेः | १०. | भगवान् विष्णु के |
| अन्ते | ३. | अन्त में | नाभिः | ११. | नाभि रूपी |
| कल्पः | ४. | दूसरा कल्प | सरसः | १२. | सरोवर से |
| अभूत् | ५. | हुआ था | आसीत् | १५. | उत्पन्न हुआ था |
| यम् | ६. | जिसे | लोक | १३. | जगत् की सृष्टि का कारण |
| पाद्मम् | ७. | पाद्म कल्प | सरोरुहम् ॥ | १४. | कमल |
| अभिचक्षते ॥ | ८. | कहते हैं | | | |

श्लोकार्थ—तथा उसी परार्ध के अन्त में दूसरा कल्प हुआ था, जिसे पाद्म कल्प कहते हैं, जिसमें भगवान् विष्णु के नाभिरूप सरोवर से जगत् की सृष्टि का कारण कमल उत्पन्न हुआ था।

# षट्त्रिंशः श्लोकः

अयं तु कथितः कल्पो द्वितीयस्यापि भारत ।
वाराह इति विख्यातो यत्रासीत्सूकरो हरिः ॥३६॥

पदच्छेद—

अयम् तु कथितः कल्पः, द्वितीयस्य अपि भारत ।
वाराह इति विख्यातः, यत्र आसीत् सूकरः हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अयम् | २. यह | | वाराह | ८. वाराह |
| तु | ७. जो | | इति | ९. नाम से |
| कथितः | ६. चल रहा है | | विख्यातः | १०. प्रसिद्ध है |
| कल्पः | ४. पूर्व कल्प | | यत्र | ११. जिसमें |
| द्वितीयस्य | ३. दूसरे परार्ध का | | आसीत् | १४. अवतार लिया था |
| अपि | ५. ही | | सूकरः | १३. सूकर रूप में |
| भारत । | १. हे विदुर जी ! | | हरिः ॥ | १२. भगवान् विष्णु ने |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! यह दूसरे परार्ध का पूर्व कल्प ही चल रहा है जो वाराह नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें भगवान् विष्णु ने सूकर रूप में अवतार लिया था ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

कालोऽयं द्विपरार्धाख्यो निमेष उपचर्यते ।
अव्याकृतस्यानन्तस्य अनादेर्जगदात्मनः ॥३७॥

पदच्छेद—

कालः अयम् द्विपरार्ध आख्यः, निमेषः उपचर्यते ।
अव्याकृतस्य अनन्तस्य, अनादेः जगत् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| कालः | ४. समय | | अव्याकृतस्य | ५. अव्यक्त |
| अयम् | ३. यह | | अनन्तस्य, | ६. अनन्त |
| द्विपरार्ध | १. दो परार्ध | | अनादेः | ७. अनादि (और) |
| आख्यः | २. नाम से प्रसिद्ध | | जगत् | ८. विश्व की |
| निमेषः | १०. एक निमेष | | आत्मनः ॥ | ९. आत्मा (भगवान् विष्णु का) |
| उपचर्यते । | ११. कहलाता है | | | |

श्लोकार्थ—दो परार्ध नाम से प्रसिद्ध यह समय अव्यक्त, अनन्त, अनादि और विश्व की आत्मा भगवान् विष्णु का एक निमेष कहलाता है ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

कालोऽयं परमाण्वादिर्द्विपरार्धान्त ईश्वरः ।
नैवेशितुं प्रभुर्भूम्न ईश्वरो धाममानिनाम् ॥३८॥

पदच्छेद—

कालः अयम् परमाणु आदिः द्वि परार्ध अन्तः ईश्वरः ।
न एव ईशितुम् प्रभुः भूम्नः, ईश्वरः धाम मानिनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| कालः | ७. काल | न एव | १०. नहीं |
| अयम् | ५. यह | ईशितुम् | ९. शासन करने में |
| परमाणु | १. परमाणु से | प्रभुः | ११. समर्थ है (किन्तु) |
| आदिः | २. लेकर | भूम्नः | ८. अनन्त परमात्मा पर |
| द्वि परार्ध | ३. दो परार्ध | ईश्वरः | १४. शासक है |
| अन्तः | ४. तक फैला हुआ | धाम | १२. शरीर |
| ईश्वरः । | ६. सर्वसमर्थ | मानिनाम् ॥ | १३. धारण करने वाले (जीवों का ही) |

श्लोकार्थ—परमाणु से लेकर दो परार्ध तक फैला हुआ यह सर्वसमर्थ काल अनन्त परमात्मा पर शासन करने में समर्थ नहीं है, किन्तु शरीर धारण करने वाले जीवों का ही शासक है।

## नवत्रिंशः श्लोकः

विकारैः सहितो युक्तैर्विशेषादिभिरावृतः ।
आण्डकोशो बहिरयं पञ्चाशत्कोटिविस्तृतः ॥३९॥

पदच्छेद—

विकारैः सहितः युक्तैः, विशेष आदिभिः आवृतः ।
आण्ड कोशः बहिः अयम्, पञ्चाशत् कोटि विस्तृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| विकारैः | ५. एकादश इन्द्रिय आदि | आण्डकोशः | ८. ब्रह्माण्ड |
| सहित | ६. विकारों से युक्त | बहिः | ९. अन्दर से |
| युक्तैः | १. प्रकृति | अयम् | ७. यह |
| विशेष | २. महत्तत्व अहतत्त्व | पञ्चाशत् | १०. पचास |
| आदिभिः | ३. और पंचतन्मात्राओं से | कोटि | ११. करोड़ योजन |
| आवृतः । | ४. घिरा हुआ तथा | विस्तृतः ॥ | १२. फैला हुआ है |

श्लोकार्थ—प्रकृति महत्तत्व, अहंतत्व और पञ्चतन्मात्राओं से घिरा हुआ तथा एकादश इन्द्रिय और पञ्च महाभूत रूप सोलह विकारों से युक्त यह ब्रह्माण्ड अन्दर से पचास करोड़ योजन फैला हुआ है।

# चत्वारिंशः श्लोकः

दशोत्तराधिकैर्यत्र प्रविष्टः परमाणुवत् ।
लक्ष्यतेऽन्तर्गताश्चान्ये कोटिशो ह्यण्डराशयः ॥४०॥

पदच्छेद—

दश उत्तर अधिकैः यत्र, प्रविष्टः परमाणुवत् ।
लक्ष्यते अन्तर्गताः च अन्ये, कोटिशः हि अण्ड राशयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दश | ३. | दशगुने | लक्ष्यते | ६. | दिखाई देते है |
| उत्तर | २. | एक के बाद एक | अन्तर्गताः | १३. | विद्यमान हैं |
| अधिकैः | ४. | बड़े (सात) | च | ७. | और |
| यत्र | १. | जिस ब्रह्माण्ड में | अन्ये | ८. | दूसरे |
| प्रविष्टः | ५. | आवरण | कोटिशः | १०. | करोड़ों |
| परमाणुवत् । | १२. | परमाणु के समान | हि | ११. | ही (ब्रह्माण्ड) |
| | | | अण्डराशयः ॥ | ९. | छोटे-छोटे |

श्लोकार्थ—जिस ब्रह्माण्ड में एक के बाद एक दशगुने बड़े सात आवरण दिखायी देते हैं और दूसरे छोटे-छोटे करोड़ों ही ब्रह्माण्ड परमाणु के समान विद्यमान हैं।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

तदाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम् ।
विष्णोर्धाम परं साक्षात्पुरुषस्य महात्मनः ॥४१॥

पदच्छेद—

तद् आहुः अक्षरम् ब्रह्म, सर्व कारण कारणम् ।
विष्णोः धाम परम् साक्षात्, पुरुषस्य महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | १. | उसे | विष्णोः | ९. | भगवान् विष्णु का |
| आहुः | ६. | कहते हैं (वही) | धाम | १२. | धाम है |
| अक्षरम् | ४. | अविनाशी | परम् | ११. | परम |
| ब्रह्म | ५. | ब्रह्म | साक्षात् | १०. | साक्षात् |
| सर्वकारण | २. | सभी कारणों का | पुरुषस्य | ७. | पुराण पुरुष |
| कारणम् । | ३. | आदि कारण | महात्मनः ॥ | ८. | परमात्मा |

श्लोकार्थ—उसे सभी कारणों का आदि कारण अविनाशी ब्रह्म कहते हैं। वही पुराण पुरुष परमात्मा भगवान् विष्णु का साक्षात् परम धाम है।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे एकादशः अध्यायः ॥११॥

## तृतीयः स्कन्धः

### अथ द्वादशः अध्यायः

### प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच —

इति ते वर्णितः क्षत्तः कालाख्यः परमात्मनः ।
महिमा वेदगर्भोऽथ यथास्राक्षीन्निबोध मे ॥१॥

पदच्छेद—

इति ते वर्णितः क्षत्तः, काल आख्यः परमात्मनः ।
महिमा वेदगर्भः अथ, यथा अस्राक्षीत् निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | २. | इस प्रकार (मैंने) | महिमा | ७. | महिमा |
| ते | ३. | आप को | वेदगर्भः | ११. | ब्रह्मा जी ने |
| वर्णितः | ८. | सुनायी | अथ | ९. | अब (आप) |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी | यथा | १२. | जिस प्रकार |
| काल | ४. | काल | अस्राक्षीत् | १३. | जगत् की सृष्टि की (उसे) |
| आख्यः | ५. | नाम के | निबोध | १४. | सुनें |
| परमात्मनः । | ६. | परमात्मा की | मे ॥ | १०. | मुझसे |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी, इस प्रकार मैंने आपको काल नाम के परमात्मा की महिमा सुनायी । अब आप मुझसे ब्रह्मा जी ने जिस प्रकार जगत् की सृष्टि की, उसे सुनें ।

### द्वितीयः श्लोकः

ससर्जाग्रेऽन्धतामिस्रमथ तामिस्रमादिकृत् ।
महामोहं च मोहं च तमश्चाज्ञानवृत्तयः ॥२॥

पदच्छेद—

ससर्ज अग्रे अन्धतामिस्रम्, अथ तामिस्रम् आदिकृत् ।
महामोहम् च मोहम् च, तमः च अज्ञान वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ससर्ज | १२. | सृष्टि की | महामोहम् | ८. | राग |
| अग्रे | २. | सबसे पहले | च | ९. | और |
| अन्धतामिस्रम् | ५. | अभिनिवेश | मोहम्, च | १०. | अस्मिता तथा |
| अथ | ६. | तथा | तमः, च | ११. | अविद्या की |
| तामिस्रम् | ७. | द्वेष | अज्ञान | ३. | अज्ञान की |
| आदिकृत् । | १. | ब्रह्मा जी ने | वृत्तयः ॥ | ४. | पांच वृत्तियों (और) |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने सबसे पहले अज्ञान की पाँच वृत्तियों और अभिनिवेश, द्वेष, राग, अस्मिता तथा अविद्या की सृष्टि की ।

# तृतीयः श्लोकः

दृष्ट्वा पापीयसीं सृष्टिं नात्मानं बह्वमन्यत ।
भगवद्ध्यानपूतेन मनसान्यां ततोऽसृजत् ॥३॥

पदच्छेद—

दृष्ट्वा पापीयसीम्, सृष्टिम् न आत्मानम् बहु अमन्यत ।
भगवत् ध्यान पूतेन, मनसा अन्याम् ततः असृजत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दृष्ट्वा | ३. | देखकर | भगवत् | ९. | भगवान् के |
| पापीयसीम् | १. | ब्रह्मा जी उस पापमयी | ध्यान | १०. | ध्यान में |
| सृष्टिम् | २. | रचना को | पूतेन | ११. | पवित्र |
| न | ६. | नहीं | मनसा | १२. | मन के द्वारा |
| आत्मानम् | ४. | अपने मन में | अन्याम् | १३. | दूसरी |
| बहु | ५. | बहुत | ततः | ८. | तदनन्तर (उन्होंने) |
| अमन्यत । | ७. | प्रसन्न हुये । | असृजत् ॥ | १४. | सृष्टि की |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी उस पापमयी रचना को देखकर अपने मन में बहुत प्रसन्न नहीं हुये।तद नन्तर उन्होंने भगवान् के ध्यान से पवित्र मन के द्वारा दूसरी सृष्टि की ।

# चतुर्थः श्लोकः

सनकं च सनन्दं च सनातनमथात्मभूः ।
सनत्कुमारं च मुनीन्निष्क्रियानूर्ध्वरेतसः ॥४॥

पदच्छेद—

सनकम् च सनन्दम् च, सनातनम् अथ आत्म भूः ।
समत्कुमारम् च मुनीन्, निष्क्रियान् ऊर्ध्व रेतसः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सनकम् | ३. | सनक | सनत्कुमारम् | ९. | सनत्कुमार (इन) |
| च | ४. | और | च | ८. | और |
| सनन्दम् | ५. | सनन्दन | मुनीन् | १२. | मुनियों की (रचना की) |
| च | ६. | तथा | निष्क्रियान् | ११. | निवृत्ति परायण |
| सनातनम् | ७. | सनातन | उर्ध्व रेतसः ॥ | १०. | ब्रह्मनिष्ट |
| अथ | १. | तदनन्तर | | | |
| आत्म भूः । | २. | ब्रह्मा जी ने | | | |

श्लोकार्थ—तदनन्तर ब्रह्मा जी ने सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार इन ब्रह्मनिष्ठ निवृत्ति परायण मुनियों की रचना की ।

## पञ्चमः श्लोकः

तान् बभाषे स्वभूः पुत्रान् प्रजाः सृजत पुत्रकाः ।
तन्नैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणाः ।।५।।

पदच्छेद—

तान् बभाषे स्वभूः पुत्रान्, प्रजाः सृजत पुत्रकाः ।
तद् न ऐच्छत् मोक्ष धर्माणः, वासुदेव परायणाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तान् | २. | उन | तद् | १२. | (उन्होंने) सृष्टि करने की |
| बभाषे | ४. | कहा | न | १३. | नहीं |
| स्वभूः | १. | ब्रह्मा जी ने | ऐच्छत् | १४. | इच्छा की |
| पुत्रान् | ३. | पुत्रों से | मोक्ष | ८. | निवृत्ति |
| प्रजाः | ६. | सन्तान की | धर्माणः | ९. | परायण (और) |
| सृजत | ७. | सृष्टि करो (किन्तु) | वासुदेव | १०. | भगवान विष्णु के |
| पुत्रकाः । | ५. | हे पुत्रों ! तुम लोग | परायणाः ।। | ११. | ध्यान में तत्पर होने से |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने उन पुत्रों से कहा, हे पुत्रों ! तुम लोग सन्तान की सृष्टि करो, किन्तु निवृत्ति परायण और भगवान् के ध्यान में तत्पर होने से उन लोगों ने सृष्टि करने की इच्छा नहीं की ।

## षष्ठः श्लोकः

सोऽवध्यातः सुतैरेवं प्रत्याख्यातानुशासनैः ।
क्रोधं दुर्विषहं जातं नियन्तुमुपचक्रमे ।।६।।

पदच्छेद—

सः अवध्यातः सुतैः एवम्, प्रत्याख्यात अनुशासनैः ।
क्रोधम् दुर्विषहम् जातम्, नियन्तुम् उपचक्रमे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ६. | वे ब्रह्मा जी (अपने) | क्रोधम् | ९. | क्रोध को |
| अवध्यातः | ५ | अपमानित | दुर्विषहम् | ८. | असह्य |
| सुतैः | २. | सनकादिक पुत्रों के द्वारा | जातम् | ७. | उत्पन्न |
| एवम् | १. | इस प्रकार | नियन्तुम् | १०. | वश में करने का |
| प्रत्याख्यात | ४. | न मानने पर | उपचक्रमे ।। | ११. | उद्योग करने लगे |
| अनुशासनैः । | ३. | आदेश | | | |

श्लोकार्थ—इस प्रकार सनकादिक पुत्रों के द्वारा आदेश न मानने पर अपमानित वे ब्रह्मा जी अपने उत्पन्न असह्य क्रोध को वश में करने का उद्योग करने लगे ।

## सप्तमः श्लोकः

धिया निगृह्यमाणोऽपि भ्रुवोर्मध्यात्प्रजापतेः ।
सद्योऽजायत तन्मन्युः कुमारो नीललोहितः ॥७॥

पदच्छेद—

धिया निगृह्यमाणः अपि भ्रुवोः मध्यात् प्रजापतेः ।
सद्यः अजायत तत् मन्युः कुमारः नीललोहितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धिया | १. | बुद्धि से | सद्यः | ११. | तत्काल |
| निगृह्यमाणः | २. | रोकने पर | अजायत | १२. | प्रकट हो गया |
| अपि | ३. | भी | तत् | ४. | वह |
| भ्रुवोः | ७. | भौहों के | मन्युः | ५. | क्रोध |
| मध्यात् | ८. | बीच से | कुमारः | १०. | बालक के रूप में |
| प्रजापतेः । | ६. | ब्रह्माजी की | नीललोहितः ॥ | ९. | कुछ नीले और लाल वर्ण के |

श्लोकार्थ—बुद्धि से रोकने पर भी वह क्रोध ब्रह्माजी की भौहों के बीच से कुछ नीले और लाल वर्ण के बालक के रूप में तत्काल प्रकट हो गया ।

## अष्टमः श्लोकः

स वै रुरोद देवानां पूर्वजो भगवान् भवः ।
नामानि कुरु मे धातः स्थानानि च जगद्गुरो ॥८॥

पदच्छेद—

सः वै रुरोद देवानाम् पूर्वजः भगवान् भवः ।
नामानि कुरु मे धातः स्थानानि च जगद्गुरो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | वे | नामानि | ११. | नामकरण |
| वै | १. | बालक के रूप में उत्पन्न | कुरु | १२. | करें |
| रुरोद | ७. | रोने लगे (और कहने लगे) | मे | १०. | मेरा |
| देवानाम् | २. | देवताओं के | धातः | ८. | जगत् के रचयिता |
| पूर्वजः | ३. | अग्रज | स्थानानि | १४. | निवास स्थान बतावें |
| भगवान् | ५. | भगवान् | च | १३. | और |
| भवः । | ६. | शंकर | जगद्गुरो ॥ | ९. | हे जगत् पिता मह |

श्लोकार्थ—बालक के रूप में उत्पन्न देवताओं के अग्रज वे भगवान् शंकर रोने लगे और कहने लगे, जगत् के रचयिता हे जगत् पितामह ! मेरा नामकरण करें और निवास स्थान बतावें ।

# नवमः श्लोकः

इति तस्य वचः पाद्मो भगवान् परिपालयन् ।
अभ्यधाद् भद्रया वाचा मा रोदीस्तत्करोमिते ॥९॥

पदच्छेद—

इति तस्य वचः पाद्मः भगवान् परिपालयन् ।
अभ्यधात् भद्रया वाचा मा रोदीः तत् करोमि ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | अभ्यधात् | ९. | बोले |
| तस्य | २. | उस बालक के | भद्रया | ७. | मंगलमयी सुन्दर |
| वचः | ३. | वचन को | वाचा | ८. | वाणी से |
| पाद्मः | ६. | ब्रह्मा जी | मा | ११. | मत |
| भगवान् | ५. | भगवान् | रोदीः | १०. | रोओ |
| परिपालयन् । | ४. | मानते हुए | तत् | १३. | नामकरण |
| | | | करोमि | १४. | करता हूँ |
| | | | ते | १२. | तुम्हारा |

श्लोकार्थ—इस प्रकार उस बालक के वचन को मानते हुये भगवान् ब्रह्मा जी मंगलमयी सुन्दर वाणी से बोले, रोओ मत, तुम्हारा नामकरण करता हूँ ।

# दशमः श्लोकः

यदरोदीः सुरश्रेष्ठ सोद्वेग इव बालकः ।
ततस्त्वामभिधास्यन्ति नाम्ना रुद्र इति प्रजाः ॥१०॥

पदच्छेद—

यद् अरोदीः सुरश्रेष्ठ स उद्वेग इव बालकः ।
ततः त्वाम् अभिधास्यन्ति नाम्ना रुद्रः इति प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | २. | क्योंकि (तुमने) | ततः | ७. | इसलिये |
| अरोदीः | ६. | रोदन किया है | त्वाम् | ८. | तुम्हें |
| सुरश्रेष्ठ | १. | हे देवताओं में प्रधान | अभिधास्यन्ति | १३. | कहेंगे |
| स उद्वेगः | ३. | घबड़ाये हुये | नाम्ना | १२. | नाम से |
| इव | ५. | समान | रुद्रः | १०. | रुद्र |
| बालकः । | ४. | बालक के | इति | ११. | इस |
| | | | प्रजाः ॥ | ९. | लोग |

श्लोकार्थ—हे देवताओं में प्रधान ! क्योंकि तुमने घबड़ाये हुए बालक के समान रोदन किया है । इसलिये तुम्हें लोग रुद्र इस नाम से कहेंगे ।

## एकादशः श्लोकः

हृदिन्द्रियाण्यसुर्व्योम वायुरग्निर्जलं मही ।
सूर्यश्चन्द्रस्तपश्चैव स्थानान्यग्रे कृतानि मे ॥११॥

पदच्छेद—

हृदि इन्द्रियाणि असुः व्योम वायुः अग्निः जलम् मही ।
सूर्यः चन्द्रः तपः च एव स्थानानि अग्रे कृतानि मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हृदि | १. | हृदय | सूर्यः | ९. | सूर्य |
| इन्द्रियाणि | २. | इन्द्रिय | चन्द्रः | १०. | चन्द्रमा |
| असुः | ३. | प्राण | तपः | १२. | तपस्या |
| व्योम | ४. | आकाश | च | ११. | और |
| वायुः | ५. | हवा | एव | १३. | इन |
| अग्निः | ६. | आग | स्थानानि | १४. | स्थानों को (तुम्हारे लिये) |
| जलम् | ७. | जल | अग्रे | १६. | पहले से ही |
| मही | ८. | पृथ्वी | कृतानि | १७. | बना रखा है |
| | | | मे ॥ | १५. | मैंने |

श्लोकार्थ—हृदय, इन्द्रिय, प्राण, आकाश, पवन, आग, जल, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा और तपस्या इन स्थानों को तुम्हारे लिये मैंने पहले से ही बना रखा है ।

## द्वादशः श्लोकः

मन्युर्मनुर्महिनसो महाञ्छिव ऋतध्वजः ।
उग्ररेता भवः कालो वामदेवो धृतव्रतः ॥१२॥

पदच्छेद—

मन्युः मनुः महिनसः महान् शिवः ऋतध्वजः ।
उग्ररेताः भवः कालः वामदेवः धृतव्रतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मन्युः | १. | मन्यु | उग्ररेताः | ७. | उग्ररेता |
| मनुः | २. | मनु | भवः | ८. | भव |
| महिनसः | ३. | महिनस | कालः | ९. | काल |
| महान् | ४. | महान् | वामदेवः | १०. | वामदेव (और) |
| शिवः | ५. | शिव | धृतव्रतः | ११. | धृतव्रत (तुम्हारे ये ११ नाम हैं) |
| ऋतध्वजः | ६. | ऋतध्वज | | | |

श्लोकार्थ—मन्यु, मनु, महिमस, महान्, शिव, ऋतध्वज, उग्ररेता, भव, काल, वामदेव और धृतव्रत तुम्हारे ये ग्यारह नाम हैं ।

## त्रयोदशः श्लोकः

धीर्वृत्तिरुशनोमा च नियुत्सर्पिरिलाम्बिका ।
इरावती सुधा दीक्षा रुद्राण्यो रुद्र ते स्त्रियः ॥१३॥

पदच्छेद—

धीः वृत्तिः उशना उमा च नियुत् सर्पिः इला अम्बिका ।
इरावती सुधा दीक्षा रुद्राण्यः रुद्र ते स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धीः | २. | धी | इरावती | १०. | इरावती |
| वृत्तिः | ३. | वृत्ति | सुधा | ११. | सुधा |
| उशना | ४. | उशना | दीक्षा | १३. | दीक्षा (ये ग्यारह) |
| उमा | ५. | उमा | रुद्राण्यः | १४. | रुद्राणियाँ |
| च | १२. | और | रुद्र | १. | हे रुद्र |
| नियुत् | ६. | नियुत् | ते | १५. | तुम्हारी |
| सर्पिः | ७. | सर्पि | स्त्रियः ॥ | १६. | पत्नियाँ हैं । |
| इला | ८. | इला | | | |
| अम्बिका । | ९. | अम्बिका | | | |

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! धी, वृत्ति, उशना, उमा, नियुत, सर्पि, इला, अम्बिका, इरावती, सुधा और दीक्षा ये ग्यारह रुद्राणियाँ तुम्हारी पत्नियाँ हैं ।

## चतुर्दशः श्लोकः

गृहाणैतानि नामानि स्थानानि च सयोषणः ।
एभिः सृज प्रजा बह्वीः प्रजानामसि यत्पतिः ॥१४॥

पदच्छेद—

गृहाण एतानि नामानि स्थानानि च सयोषणः ।
एभिः सृज प्रजा बह्वीः प्रजानाम् असि यत् पतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गृहाण | ६. | स्वीकार करो (और) | सृज | १० | सृष्टि करो |
| एतानि | २. | इन | प्रजा | ९. | जीवों की |
| नामानि | ३. | नामों को | बह्वीः | ८. | बहुत से |
| स्थानानि | ५. | स्थानों को | प्रजानाम् | १२. | प्रजाओं के |
| च | ४. | और | असि | १४. | हो |
| सयोषणः | १. | (हे रुद्र! तुम) पत्नियों के साथ | यत् | ११. | क्योंकि (तुम) |
| एभिः | ७. | इनसे | पतिः ॥ | १३. | स्वामी |

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! तुम पत्नियों के साथ इन नामों को और स्थानों को स्वीकार करो, इनसे बहुत से जीवों की सृष्टि करो; क्योंकि तुम प्रजाओं के स्वामी हो ।

## पञ्चदशः श्लोकः

इत्यादिष्टः स गुरुणा भगवान्नीललोहितः ।
सत्त्वाकृतिस्वभावेन ससर्जात्मसमाः प्रजाः ॥१५॥

पदच्छेद—

इति आदिष्टः सः गुरुणा भगवान् नीललोहितः ।
सत्व आकृति स्व भावेन ससर्ज आत्म समाः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | २. | ऐसी | सत्व आकृति | ७. | बल, रूप (और) |
| आदिष्टः | ३. | आज्ञा पाकर | स्व भावेन | ८. | स्वभाव से |
| सः | ४. | वे | ससर्ज | १२. | रचना करने लगे |
| गुरुणा | १. | लोक पितामह ब्रह्मा जी से | आत्म | ९. | अपने |
| भगवान् | ५. | भगवान् | समाः | १०. | समान |
| नीललोहितः । | ६. | नीललोहित रुद्र | प्रजाः ॥ | ११. | प्रजाओं की |

श्लोकार्थ—लोक पितामह ब्रह्माजी से ऐसी आज्ञा पाकर वे भगवान् नील लोहित रुद्र बल, रूप और स्वभाव से अपने समान प्रजाओं की रचना करने लगे ।

## षोडशः श्लोकः

रुद्राणां रुद्रसृष्टानां समन्ताद् ग्रसतां जगत् ।
निशाम्यासंख्यशो यूथान् प्रजापतिरशङ्कत ॥१६॥

पदच्छेद—

रुद्राणाम् रुद्र सृष्टानाम् समन्ताद् ग्रसताम् जगत् ।
निशाम्य असंख्यशः यूथान् प्रजापतिः अशङ्कतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रुद्राणाम् | ३. | रुद्रों को | निशाम्य | ९. | देखकर |
| रुद्र | १. | भगवान रुद्र से | असंख्यशः | ६. | अगणित |
| सृष्टानाम् | २. | निर्मित | यूथान् | ७. | झुण्डों में |
| समन्ताद् | ५. | चारों ओर से | प्रजापतिः | १०. | ब्रह्माजी को |
| ग्रसताम् | ८. | भक्षण करते हुए | अशङ्कतः ॥ | ११. | बड़ी चिन्ता हुई |
| जगत् | ४. | संसार का | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् रुद्र से निर्मित रुद्रों को संसार का चारों ओर से अगणित झुण्डों में भक्षण करते हुए देखकर ब्रह्माजी को बड़ी चिन्ता हुई ।

## सप्तदशः श्लोकः

अलं प्रजाभिः सृष्टाभिरीदृशीभिः सुरोत्तम ।
मया सह दहन्तीर्भिर्दिशश्चक्षुर्भिरुल्बणै ।।१७।।

पदच्छेद—

अलम् प्रजाभिः सृष्टाभिः ईदृशीभिः सुरोत्तम ।
मया सह दहन्तीभिः दिशः चक्षुर्भिः उल्वणैः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अलम् | १०. | अब मत करो | मया सह | ४. | मेरे साथ |
| प्रजाभिः | ८. | प्रजाओं की | दहन्तीभिः | ६. | जलाने वाली |
| सृष्टाभिः | ९. | सृष्टि | दिशः | ५. | सभी दिशाओं को |
| ईदृशीभिः | ७. | ऐसी | चक्षुर्भिः | ३. | नेत्रों से |
| सुरोत्तम । | १. | हे सुरश्रेष्ठ | उल्वणैः ।। | २. | अपने भयंकर |

श्लोकार्थ—हे सुरश्रेष्ठ ! अपने भयंकर नेत्रों से मेरे साथ सभी दिशाओं को जलाने वाली ऐसी प्रजाओं की सृष्टि अब मत करो ।

## अष्टादशः श्लोकः

तप आतिष्ठ भद्रं ते सर्वभूतसुखावहम् ।
तपसैव यथापूर्वं स्रष्टा विश्वमिदं भवान् ।।१८।।

पदच्छेद—

तपः आतिष्ठ भद्रम् ते सर्वभूत सुख आवहम् ।
तपसा एव यथा पूर्वम् स्रष्टा विश्वम् इदम् भवान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तपः | ६. | तपस्या का | तपसा | ८. | तपस्या के प्रभाव से |
| आतिष्ठ | ७. | अनुष्ठान करो | एव | ९. | ही |
| भद्रम् | २. | कल्याण हो | यथा | १४. | जैसी |
| ते | १. | हे रुद्र ! तुम्हारा | पूर्वम् | १३. | पहले |
| सर्वभूत | ३. | सभी प्राणियों को | स्रष्टा | १५. | रचना कर सकेगें |
| सुख | ४. | सुख | विश्वम् | १२. | संसार की |
| आवहम् । | ५. | देने वाली | इदम् | ११. | इस |
| | | | भवान् ।। | १० | आप |

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! तुम्हारा कल्याण हो सभी प्राणियों को सुख देने वाली तपस्या का अनुष्ठान करो । तपस्या के प्रभाव से ही आप इस संसार की पहले जैसी रचना कर सकेंगे ।

# एकोनविंशः श्लोकः

तपसैव परं ज्योतिर्भगवन्तमधोक्षजम् ।
सर्वभूतगुहावासमञ्जसा विन्दते पुमान् ॥१६॥

पदच्छेद—

तपसा एव परम् ज्योतिः भगवन्तम् अधोक्षजम् ।
सर्वभूत गुहा आवासम् अञ्जसा विन्दते पुमान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तपसा | २. | तपस्या से | सर्वभूत | ४. | सभी प्राणियों के |
| एव | ३. | ही | गुहा | ५. | हृदय में |
| परम् | ८. | परम | आवासम् | ६. | निवास करने वाले |
| ज्योतिः | ९. | ज्योतिस्वरूप | अञ्जसा | ११. | सरलता से |
| भगवन्तम् | १०. | भगवान् श्री हरि को | विन्दते | १२. | प्राप्त कर लेता है |
| अधोक्षजम् । | ७. | इन्द्रियों से परे (और) | पुमान् ॥ | १. | (हे रुद्र) मनुष्य |

श्लोकार्थ—हे रुद्र ! मनुष्य तपस्या से ही सभी प्राणियों के हृदय में निवास करने वाले इन्द्रियों से परे और परम ज्योति स्वरूप भगवान् श्री हरि को सरलता से प्राप्त कर लेता है ।

# विंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

एवमात्मभुवाऽऽदिष्टः परिक्रम्य गिरां पतिम् ।
बाढमित्यमुमामन्त्र्य विवेश तपसे वनम् ॥२०॥

पदच्छेद—

एवम् आत्म भुवा आदिष्टः परिक्रम्य गिराम् पतिम् ।
बाढम् इति अमुम् आमन्त्र्य विवेश तपसे वनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ४. | ऐसी | बाढम् | ६. | ठीक है |
| आत्मभुवा | ३. | ब्रह्मा जी से | इति | ७. | इस प्रकार (कह कर) |
| आदिष्टः | ५. | आज्ञा पाकर | अमुम् | ८. | उनसे |
| परिक्रम्य | १०. | परिक्रमा करके (वे रुद्र) | आमन्त्र्य | ९. | अनुमति लेकर (और उनकी) |
| गिराम् | १. | वाणी के | विवेश | १३. | चले गये |
| पतिम् । | २. | स्वामी | तपसे | ११. | तपस्या करने के लिये |
| | | | वनम् ॥ | १२. | वन में |

श्लोकार्थ—वाणी के स्वामी ब्रह्मा जी से ऐसी आज्ञा पाकर 'ठीक है' इस प्रकार कहकर उनसे अनुमति लेकर और उनकी परिक्रमा करके वे रुद्र तपस्या करने के लिए वन में चले गये ।

# एकविंशः श्लोकः

अथाभिध्यायतः सर्गं दश पुत्राः प्रजज्ञिरे ।
भगवच्छक्तियुक्तस्य लोकसन्तानहेतवः ॥२१॥

पदच्छेद—

अथ अभिध्यायतः सर्गम् दश पुत्राः प्रजज्ञिरे ।
भगवत् शक्ति युक्तस्य लोक सन्तान हेतवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर | भगवत् | २. | भगवान् की |
| अभिध्यायतः | ६. | संकल्प किया (और) | शक्ति | ३. | शक्ति |
| सर्गम् | ५. | सृष्टि करने का | युक्तस्य | ४. | प्राप्त करके (ब्रह्मा जी ने) |
| दश | १०. | दस | लोक | ७. | प्रजाओं की |
| पुत्राः | ११. | मानस पुत्र | सन्तान | ८. | वृद्धि में |
| प्रजज्ञिरे । | १२. | उत्पन्न किये | हेतवः ॥ | ९. | कारण भूत |

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् की शक्ति प्राप्त करके ब्रह्मा जी ने सृष्टि करने का संकल्प किया । और प्रजाओं की वृद्धि में कारण भूत दस मानस पुत्र उत्पन्न किये ।

# द्वाविंशः श्लोकः

मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
भृगुर्वशिष्ठो दक्षश्च दशमस्तत्र नारदः ॥२२॥

पदच्छेद —

मरीचिः अत्रि अङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
भृगुः वशिष्ठः दक्षः च दशमः तत्र नारदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मरीचिः | १. | मरीचि | भृगुः | ७. | भृगु |
| अत्रि | २. | अत्रि | वशिष्ठः | ८. | वशिष्ठ |
| अङ्गिरसौ | ३. | अङ्गिरा | दक्षः | ९. | दक्ष |
| पुलस्त्यः | ४. | पुलस्त्य | च | १०. | और |
| पुलह | ५. | पुलह | दशमः | १२. | दसवें |
| क्रतुः । | ६. | क्रतु | तत्र | ११. | उनमें |
| | | | नारदः ॥ | १३. | नारद (थे) |

श्लोकार्थ—मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा., पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वशिष्ठ, दक्ष और उनमें दसवें नारद थे ।

## त्रयोविंश: श्लोक:

उत्सङ्गान्नारदो जज्ञे दक्षोऽङ्गुष्ठात्स्वयम्भुवः ।
प्राणाद् वसिष्ठः सञ्जातो भृगुस्त्वचि करात्क्रतुः ॥२३॥

पदच्छेद—

उत्संगात् नारदः जज्ञे, दक्षः अङ्गुष्ठात् स्वयम्भुवः ।
प्राणात् वशिष्ठः संजातः, भृगुः त्वचि करात क्रतुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उत्संगात् | २. | गोद से | प्राणात् | ७. | उनके प्राण से |
| नारदः | ३. | नारद (और) | वशिष्ठः | ८. | वशिष्ठ |
| जज्ञे | ६. | उत्पन्न हुए | संजातः | १३. | उत्पत्ति हुई |
| दक्षः | ५. | दक्ष | भृगुः | १०. | भृगु (तथा) |
| अङ्गुष्ठात् | ४. | अंगूठे से | त्वचि | ९. | त्वचा से |
| स्वयम्भुवः । | १. | ब्रह्मा जी की | करात् | ११. | हाथ मे |
| | | | क्रतुः ॥ | १२. | क्रतु (ऋषि) की |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी की गोद से नारद और अंगूठे से दक्ष उत्पन्न हुये; उनके प्राण से वशिष्ठ, त्वचा से भृगु तथा हाथ से क्रतु ऋषि की उत्पत्ति हुई ।

## चतुर्विंश: श्लोक:

पुलहो नाभितो जज्ञे पुलस्त्यः कर्णयोर्ऋषिः ।
अङ्गिरा मुखतोऽक्ष्णोऽत्रिर्मरीचिर्मनसोऽभवत् ॥२४॥

पदच्छेद—

पुलहः नाभितः यज्ञे पुलस्त्यः कर्णयोः ऋषिः ।
अङ्गिरा मुखतः अक्ष्णोः अत्रिः मरीचिः मनसः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुलहः | २. | पुलह (और) | अङ्गिराः | ८. | अङ्गिरा |
| नाभितः | १. | (ब्रह्माजी की) नाभि से | मुखतः | ७. | मुख से |
| जज्ञे | ६. | उत्पन्न हुए (उनके) | अक्ष्णोः | ९. | आँखों से |
| पुलस्त्यः | ४. | पुलस्त्य | अत्रिः | १०. | अत्रि (और) |
| कर्णयोः | ३. | कानों से | मरीचिः | १२. | मरीचि (ऋषि) |
| ऋषिः । | ५. | ऋषि | मनसः | ११. | मन से |
| | | | अभवत् ॥ | १३. | उत्पन्न हुए |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी की नाभि से पुलह और कानों से पुलस्त्य ऋषि उत्पन्न हुए; उनके मुख से अङ्गिरा, आँखों से अत्रि और मन से मरीचि ऋषि उत्पन्न हुये ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

धर्मःस्तनाद्दक्षिणतो यत्र नारायणः स्वयम् ।
अधर्मः पृष्ठतो यस्मान्मृत्युर्लोकभयङ्करः ।।२५।।

पदच्छेद—

धर्मः स्तनात् दक्षिणतः यत्र नारायणः स्वयम् ।
अधर्मः पृष्ठतः यस्मात् मृत्युः लोक भयंकरः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्मः | ३. | धर्म (उत्पन्न हुआ) | अधर्मः | ८. | अधर्म (उत्पन्न हुआ) |
| स्तनात् | २. | स्तन से | पृष्ठतः | ७. | उनकी पीठ से |
| दक्षिणतः | १. | ब्रह्माजी के दाहिने | यस्मात् | ९. | जिससे |
| यत्र | ४. | जिसके यहाँ | मृत्युः | १२. | मृत्यु (उत्पन्न हुई) |
| नारायणः | ६. | नारायण:ने (अवतार लिया था) | लोक | १०. | संसार को |
| | | | भयंकरः ।। | ११. | भयभीत करने वाली |
| स्वयम् । | ५. | साक्षात् भगवान् | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के दाहिने स्तन से धर्म उत्पन्न हुआ, जिसके यहाँ साक्षात् भगवान् नारायण ने अवतार लिया था। उनकी पीठ से अधर्म उत्पन्न हुआ, जिससे संसार को भयभीत करने वाली मृत्यु उत्पन्न हुई।

# षड्विंशः श्लोकः

हृदि कामो भ्रुवः क्रोधो लोभश्चाधरदच्छदात् ।
आस्याद्वाक्सिन्धवो मेढ्रान्निर्ऋतिः पायोरघाश्रयः ।।२६।।

पदच्छेद—

हृदि कामः भ्रुवः क्रोधः, लोभः च अधर दच्छदात् ।
आस्यात् वाक् सिन्धवः मेढ्रात्,निर्ऋतिः पायोः अघ आश्रयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हृदि | १. | (ब्रह्माजी के) हृदय से | आस्यात् | ८. | मुख से |
| कामः | २. | काम | वाक् | ९. | सरस्वती |
| भ्रुवः | ३. | भौंहों से | सिन्धवः | ११. | समुद्र |
| क्रोधः | ४. | क्रोध | मेढ्रात् | १०. | जननेन्द्रिय से |
| लोभः | ७. | लोभ | निर्ऋतिः | १६. | निर्ऋति देवता (उत्पन्न हुए) |
| च | १२. | और | पायोः | १३. | गुदा इन्द्रिय से |
| अधर | ५. | नीचे के | अघ | १४. | पाप के |
| दच्छदात् । | ६. | होंठ से | आश्रयः ।। | १५. | आधार |

श्लोकार्थ—ब्रह्माजी के हृदय से काम, भौंहों से क्रोध, नीचे के होंठ से लोभ, मुख से वाणी की अधिष्ठात्री सरस्वती, जननेन्द्रिय से समुद्र और गुदा इन्द्रिय से पाप के आधार निर्ऋति देवता उत्पन्न हुए।

## सप्तविंशः श्लोकः

छायायाः कर्दमो जज्ञे देवहूत्याः पतिः प्रभुः ।
मनसो देहतश्चेदं जज्ञे विश्वकृतो जगत् ॥२७॥

पदच्छेद—

छायायाः कर्दमः जज्ञे देवहूत्याः पतिः प्रभुः ।
मनसः देहतः च इदम् जज्ञे विश्वकृतः जगत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| छायायाः | १. | उनकी छाया से | मनसः | ८. | मन से |
| कर्दमः | ५. | कर्दम ऋषि | देहतः | १०. | शरीर से |
| जज्ञे | ६. | उत्पन्न हुये (इस प्रकार) | च | ९. | और |
| देवहूत्याः | २. | देवहूति के | इदम् | ११. | यह |
| पतिः | ३. | स्वामी | जज्ञे | १३. | उत्पन्न हुआ है |
| प्रभुः। | ४. | भगवान् | विश्वकृतः | ७. | ब्रह्मा जी के |
| | | | जगत् ॥ | १२. | सारा संसार |

श्लोकार्थ—उनकी छाया से देवहूति के स्वामी भगवान् कर्दम ऋषि उत्पन्न हुये, इस प्रकार ब्रह्मा जी के मन से और शरीर से यह सारा संसार उत्पन्न हुआ है।

## अष्टाविंशः श्लोकः

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयम्भूर्हरतीं मनः ।
अकामां चकमे क्षत्तः सकाम इति नः श्रुतम् ॥२८॥

पदच्छेद—

वाचम् दुहितरम् तन्वीम् स्वयम्भूः हरतीम् मनः ।
अकामाम् चकमे क्षत्तः सकामः इति नः श्रुतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वाचम् | ११ | सरस्वती को | आकामाम् | ९. | वासना से रहित |
| दुहितरम् | १०. | अपनी पुत्री | चकमे | १३. | इच्छा की थी |
| तन्वीम् | ८. | सुन्दरी (तथा) | क्षत्तः | १. | हे विदुर जी |
| स्वयम्भूः | ५. | ब्रह्मा जी ने | सकामः | १२. | कामभाव से |
| हरतीम् | ७. | लुभाने वाली | इति | ३. | ऐसा |
| मनः। | ६. | मन को | नः | २. | हमने |
| | | | श्रुतम् ॥ | ४. | सुना है (कि) |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! हमने ऐसा सुना है कि ब्रह्मा जी ने मन को लुभाने वाली सुन्दरी तथा वासना से रहित अपनी पुत्री सरस्वती की काम-भाव से इच्छा की थी।

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

तमधर्मे कृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः ।
मरीचिमुख्या मुनयो विश्रम्भात्प्रत्यबोधयन् ।।२९।।

पदच्छेद—

तम् अधर्मे कृत मतिम् विलोक्य पितरम् सुताः ।
मरीचि मुख्याः मुनयः विश्रम्भात् प्रत्यबोधयन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | १. | उन्हें | मरीचिः | ६. | मरीचि |
| अधर्मे | २. | पाप का | मुख्याः | ७. | इत्यादि प्रधान |
| कृत मतिम् | ३. | संकल्प करते | मुनयः | ८. | मुनियों ने |
| विलोक्य | ४. | देखकर | विश्रम्भात् | १०. | विश्वास पूर्वक |
| पितरम् | ९. | अपने पिता ब्रह्मा जी को | प्रत्यबोधयन्।। | ११. | समझाया |
| सुताः । | ५. | (उनके) पुत्र | | | |

श्लोकार्थ—उन्हें पाप का संकल्प करते देखकर उनके पुत्र मरीचि इत्यादि प्रधान मुनियों ने अपने पिता ब्रह्मा जी को विश्वास पूर्वक समझाया ।

## त्रिंशः श्लोकः

नैतत्पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे ।
यत्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्याङ्गजं प्रभुः ।।३०।।

पदच्छेद—

न एतत् पूर्वैः कृतम् तु अद्य न करिष्यन्ति च अपरे ।
यत् त्वम् दुहितरम् गच्छेः अनिगृह्य अङ्गजम् प्रभुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ११. | नहीं | अपरे | १४. | आगे के दूसरे ब्रह्मा भी |
| एतत् | ९. | ऐसा | यत् | ५. | जो |
| पूर्वैः | १०. | पहले के (ब्रह्माओं ने) | त्वम् | १. | आप |
| कृतम् | १२. | किया है | दुहितरम् | ७. | पुत्री के साथ |
| तु | १५. | ऐसा | गच्छेः | ८. | गमन करना चाहते हैं |
| अद्य | ६. | आज | अनिगृह्य | ४. | वश में न कर |
| न | १६. | नहीं | अङ्गजम् | ३. | काम को |
| करिष्यन्ति | १७ | करेंगे | प्रभुः ।। | २. | समर्थ होने पर भी |
| च । | १३. | और | | | |

श्लोकार्थ—आप समर्थ होने पर भी काम को वश में न कर जो आज पुत्री के साथ गमन करना चाहते हैं, ऐसा पहले के ब्रह्माओं ने नहीं किया है और आगे के दूसरे ब्रह्मा भी ऐसा नहीं करेंगे ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

तेजीयसामपि ह्येतन्न सुश्लोक्यं जगद्गुरो ।
यद्वृत्तमनुतिष्ठन् वै लोकः क्षेमाय कल्पते ॥३१॥

पदच्छेद—

तेजीयसाम् अपि हि एतत् न सुश्लोक्यम् जगद्गुरो ।
यद् वृत्तम् अनुतिष्ठन् वै लोकः क्षेमाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेजीयसाम् | २. | तेजस्वी लोगों को | यद् | ८. | क्योंकि (उनके) |
| अपि | ३. | भी | वृत्तम् | ९. | आचरण का |
| हि | ५. | बिल्कुल | अनुतिष्ठन् | १०. | अनुसरण करके |
| एतत् | ४. | यह | वै | ११. | ही |
| न | ६. | नहीं | लोकः | १२. | संसार |
| सुश्लोक्यम् | ७. | शोभा देता है | क्षेमाय | १३. | अपना कल्याण |
| जगद्गुरो । | १. | हे लोक पितामह | कल्पते | १४. | करता है |

श्लोकार्थ—हे लोक पितामह ! तेजस्वी लोगों को भी यह बिल्कुल शोभा नहीं देता है, क्योंकि उनके आचरण का अनुसरण करके ही संसार अपना कल्याण करता है ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

तस्मै नमो भगवते य इदं स्वेन रोचिषा ।
आत्मस्थं व्यञ्जयामास स धर्मं पातुमर्हति ॥३२॥

पदच्छेद—

तस्मै नमः भगवते यः इदम् स्वेन रोचिषा ।
आत्मस्थम् व्यञ्जयामास सः धर्मम् पातुम् अर्हति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मै | १. | उस | आत्मस्थम् | ५. | अपने में स्थित |
| नमः | ३. | नमस्कार है | व्यञ्जयामास | ९. | प्रकट किया |
| भगवते | २. | भगवान् को | सः | १०. | वे (ही) |
| यः | ४. | जिन्होंने | धर्मम् | ११. | धर्म की |
| इदम् | ६. | इस जगत् को | पातुम् | १२. | रक्षा करने में |
| स्वेन | ७. | अपने | अर्हति ॥ | १३. | समर्थ हैं । |
| रोचिषा । | ८. | तेज से | | | |

श्लोकार्थ—उस भगवान् को नमस्कार है, जिन्होंने अपने में स्थित इस जगत् को अपने तेज से प्रकट किया है । वे ही धर्म की रक्षा करने में समर्थ हैं ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

स इत्थं गृणतः पुत्रान् पुरो दृष्ट्वा प्रजापतीन् ।
प्रजापतिपतिस्तन्वं तत्याज व्रीडितस्तदा ।
तां दिशो जगृहुर्घोरां नीहारं यद्विदुस्तमः ।।३३।।

पदच्छेद— सः इत्थम् गृणतः पुत्रान् पुरः दृष्ट्वा प्रजापतीन् ।
प्रजापति पतिः तन्वम् तत्याज व्रीडितः तदा ।
ताम् दिशः जगृहुः घोराम् नीहारम् यद् विदुः तमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सः | ३. वे ब्रह्मा जी | | तत्याज | १३. छोड़ दिया |
| इत्थम् | ७. ऐसा | | व्रीडितः | १०. लज्जित हुये (और) |
| गृणतः | ८. कहते | | तदा | ११. उसी समय |
| पुत्रान् | ४. (अपने) पुत्र | | ताम् | १४. उस |
| पुरः | ६. अपने सामने | | दिशः | १६. दिशाओं ने |
| दृष्ट्वा | ९. देख | | जगृहुः | १७. ले लिया |
| प्रजापतीन् | ५. (मरीचि आदि)प्रजापतियों को | | घोराम् | १५. पापी शरीर को |
| प्रजापति | १. प्रजापतियों के | | नीहारम् | २०. कुहरा |
| पतिः | २. स्वामी | | यद् | १८. जिसे |
| तन्वम् | १२. अपने शरीर को | | विदुः | २१. कहते हैं |
| | | | तमः ।। | १९. अन्धकारमय |

श्लोकार्थ—प्रजापतियों के स्वामी वे ब्रह्मा जी अपने पुत्र मरीचि आदि प्रजापतियों को अपने सामने ऐसा कहते देख लज्जित हुये और उसी समय अपने शरीर को छोड़ दिया। उस पापी शरीर को दिशाओं ने ले लिया जिसे अन्धकारमय कुहरा कहते हैं।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

कदाचिद् ध्यायतः स्रष्टुर्वेदा आसंश्चतुर्मुखात् ।
कथंस्रक्ष्याम्यहं लोकान् समवेतान् यथा पुरा ।।३४।।

पदच्छेद— कदाचित् ध्यायतः स्रष्टुः वेदा आसन् चतुर्मुखात् ।
कथम् स्रक्ष्यामि अहम् लोकान् समवेतान् यथा पुरा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| कदाचित् | १. एक बार | | कथम् | ९. कैसे |
| ध्यायतः | ३. सोच रहे थे (कि) | | स्रक्ष्यामि | १०. रचना करूँ (उसी समय) |
| स्रष्टुः | २. ब्रह्मा जी | | अहम् | ४. मैं |
| वेदाः | १२. चार वेद | | लोकान् | ८. सभी लोकों की |
| आसन् | १३. प्रकट हुये | | समवेतान् | ७. सुव्यवस्थित रूप से |
| चतुर्मुखात् । | ११. उनके चार मुखों से | | यथा | ६. जैसे |
| | | | पुरा ।। | ५. पहले |

श्लोकार्थ—एक वार ब्रह्मा जी सोच रहे थे कि मैं पहले जैसे सुव्यवस्थित रूप से सभी लोकों की कैसे रचना करूँ, उसी समय उनके चारो मुखों से चार वेद प्रकट हुये।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

चातुर्होत्रं कर्मतन्त्रमुपवेदनयैः सह ।
धर्मस्य पादाश्चत्वारस्तथैवाश्रमवृत्तयः ॥३५॥

पदच्छेद—

चातुर्होत्रम् कर्म तन्त्रम् उपवेद नयैः सह ।
धर्मस्य पादाः चत्वारः तथैव आश्रम वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चातुर्होत्रम् | १. | ब्रह्मा जी के मुखों से ही हवन कर्म | धर्मस्य | ७. | धर्म के |
| कर्म | २. | कर्मकाण्ड का | पादाः | ९. | चरण (और) |
| तन्त्रम् | ३. | विस्तार | चत्वारः | ८. | चारों |
| उपवेद | ६. | उपवेद | तथैव | १०. | उसी प्रकार |
| नयैः | ४. | न्याय शास्त्र के | आश्रम | ११. | चारों आश्रम (और उनकी) |
| सह । | ५. | साथ | वृत्तयः ॥ | १२. | आजीविका (उत्पन्न हुई) |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के मुखों से ही हवन कर्म (होता, उद्‌गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा का कर्म) कर्मकाण्ड का विस्तार, न्याय शास्त्र के साथ उपवेद, धर्म के चारों चरण और उसी प्रकार चारों आश्रम और उनकी आजीविका उत्पन्न हुई ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

विदुर उवाच—

स वै विश्वसृजामीशो वेदादीन् मुखतोऽसृजत् ।
यद् यद् येनासृजद् देवस्तन्मे ब्रूहि तपोधन ॥३६॥

पदच्छेद—

सः वै विश्वसृजाम् ईशः वेद आदीन् मुखतः असृजत् ।
यद्-यद् येन असृजत् देवः तद् मे ब्रूहि तपोधनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः वै | ४. | उन ब्रह्मा जी ने | यद्-यद् | ११. | जिस-जिस वेद को |
| विश्वसृजाम् | २. | जगत् के रचयिताओं के | येन | १०. | जिस-जिस मुख से |
| ईशः | ३. | स्वामी | असृजत् | १२. | रचा था |
| वेद | ६. | वेद | देवः | ९. | ब्रह्मा जी ने अपने |
| आदीन् | ७. | इत्यादि शास्त्र | तद्, मे | १३. | उसे, मुझे |
| मुखतः | ५. | अपने मुख से | ब्रूहि | १४. | बतावें |
| असृजत् । | ८. | उत्पन्न किये | तपोधनः ॥ | १. | हे मुनिवर |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर जगत् के रचयिताओं के स्वामी उन ब्रह्मा जी ने अपने मुख से वेद इत्यादि शास्त्र उत्पन्न किये, ब्रह्मा जी ने अपने जिस-जिस मुख से जिस-जिस वेद को रचा था, उसे मुझे बतावें ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

ऋग्यजुःसामाथर्वाख्यान् वेदान् पूर्वादिभिर्मुखैः ।
शस्त्रमिज्यां स्तुतिस्तोमं प्रायश्चित्तं व्यधात्क्रमात् ॥३७॥

पदच्छेद—

ऋग् यजुः साम अथर्व आख्यान् वेदान् पूर्व आदिभिः मुखैः ।
शस्त्रम् इज्याम् स्तुतिः स्तोमम् प्रायश्चित्तम् व्यधात् क्रमात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऋग् | ५. | ऋग्वेद | शस्त्रम् | ११. | होता का कर्म |
| यजुः | ६. | यजुर्वेद | इज्याम् | १२. | अध्वर्यु का कर्म |
| साम | ७. | सामवेद (और) | स्तुतिः | १३. | उद्गाता का |
| अथर्व | ८. | अथर्ववेद | स्तोमम् | १४. | कर्म (और) |
| आख्यान् | ९. | नाम के | प्रायश्चित्तम् | १५. | ब्रह्मा का कर्म (भी) |
| वेदान्, | १०. | चारों वेदों को (और) | व्यधात् | १६. | उत्पन्न किया |
| पूर्व | १. | (ब्रह्मा जी ने) अपने पूर्व | क्रमात् ॥ | ४. | क्रमशः |
| आदिभिः | २. | दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के | | | |
| मुखैः । | ३. | मुख से | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने अपने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के मुख से क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद नाम के चारों वेदों को और होता का कर्म, अध्वर्यु का कर्म, उद्गाता का कर्म तथा ब्रह्मा का कर्म भी उत्पन्न किया ।

# अष्टात्रिंशः श्लोकः

आयुर्वेदं धनुर्वेदं गान्धर्वं वेदमात्मनः ।
स्थापत्यं चासृजद् वेदं क्रमात्पूर्वादिभिर्मुखैः ॥३८॥

पदच्छेद—

आयुर्वेदम् धनुर्वेदम् गान्धर्वम् वेदम् आत्मनः ।
स्थापत्यम् च असृजत् वेदम् क्रमात् पूर्व आदिभिः मुखैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आयुर्वेदम् | ६. | चिकित्सा शास्त्र | च | १०. | और |
| धनुर्वेदम् | ७. | युद्ध शास्त्र विद्या | असृजत् | १३. | उत्पन्न किया |
| गान्धर्वम् | ८. | संगीत | वेदम् | १२. | शास्त्र को |
| वेदम् | ९. | विद्या | क्रमात् | ५. | क्रमशः |
| आत्मनः । | १. | ब्रह्मा जी ने अपने | पर्व | २. | पूर्व |
| स्थापत्यम् | ११. | शिल्प | आदिभिः | ३. | दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के |
| | | | मुखैः | ४. | मुख से |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने अपने पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के मुख से क्रमशः चिकित्सा-शास्त्र, युद्ध शास्त्र, संगीत विद्या और शिल्प शास्त्र को उत्पन्न किया ।

## नवत्रिंशः श्लोकः

इतिहासपुराणानि पञ्चमं वेदमीश्वरः ।
सर्वेभ्य एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनः ॥३९॥

पदच्छेद—

इतिहास पुराणानि पञ्चमम् वेदम् ईश्वरः ।
सर्वेभ्यः एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्व दर्शनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इतिहास | ८. | महाभारतादि इतिहास (और) | सर्वेभ्यः | ३. | अपने सब |
| पुराणानि | ९. | पुराणों को | एव | ४. | ही |
| पञ्चमम् | ६. | पाँचवा | वक्त्रेभ्यः | ५. | मुखों से |
| वेदम् | ७. | वेद | ससृजे | १०. | बनाया |
| ईश्वरः । | २. | ब्रह्मा जी ने | सर्वदर्शनः ॥ | १. | सर्वदर्शी |

श्लोकार्थ—सर्वदर्शी ब्रह्मा जी ने अपने सब ही मुखों से पाँचवां वेद महाभारतादि इतिहास और पुराणों को बनाया ।

## चत्वारिंशः श्लोकः

षोडश्युक्थौ पूर्ववक्त्रात्पुरीष्यग्निष्टुतावथ ।
आप्तोर्यामातिरात्रौ च वाजपेयं सगोसवम् ॥४०॥

पदच्छेद—

षोडशी उक्थौ पूर्ववक्त्रात् पुरीषी अग्निष्टुतौ अथ ।
आप्तोर्याम अतिरात्रो च वाजपेयम् स गोसवम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| षोडशी | २. | षोडशी (और) | आप्तोर्याम | ७. | आप्तोर्याम |
| उक्थौ | ३. | उक्थ | अतिरात्रौ | ९. | अतिरात्र तथा |
| पूर्ववक्त्रात् | १. | (ब्रह्मा जी के) पूर्वादि मुखों से क्रमशः | च | ८. | और |
| | | | वाजपेयम् | १२. | वाजपेय यज्ञ (उत्पन्न हुये) |
| पुरीषी | ४. | अग्निचयन | स | ११. | सहित |
| अग्निष्टुतौ | ६. | अग्निष्टोम | गोसवम् ॥ | १०. | गोसव |
| अथ । | ५. | और | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के पूर्वादि मुखों से क्रमशः षोडशी और उक्थ, अग्निचयन अग्निष्टोम आप्तोर्याम और अतिराव तथा गोसव सहित वाजपेय यज्ञ उत्पन्न हुये ।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

विद्या दानं तपः सत्यं धर्मस्येति पदानि च ।
आश्रमांश्च यथासंख्यमसृजत्सह वृत्तिभिः ।।४१।।

पदच्छेद— विद्या दानम् तपः सत्यम् धर्मस्य इति पदानि च ।
आश्रमान् च यथा संख्यम् असृजत् सह वृत्तिभिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विद्या | २. | विद्या | आश्रमान् | १०. | चारों आश्रमों की |
| दानम् | ३. | दान | च | ९. | तथा |
| तपः | ४. | तपस्या (और) | यथा | १३. | क्रम के |
| सत्यम् | ५. | सत्य | संख्यम् | १४. | अनुसार |
| धर्मस्य | १. | धर्म के | असृजत् | १५. | उत्पन्न किया। |
| इति | ६. | ये चार | सह | १२. | साथ |
| पदानि | ७. | चरण हैं (ब्रह्मा जी ने) | वृत्तिभिः ।। | ११. | वृत्तियों के |
| च | ८. | इन्हें | | | |

श्लोकार्थ—धर्म के विद्या, दान, तपस्या और सत्य ये चार चरण हैं। ब्रह्मा जी ने इन्हें तथा चारों आश्रमों की वृत्तियों के साथ क्रम के अनुसार उत्पन्न किया।

# द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

सावित्रं प्राजापत्यं च ब्राह्मं चाथ बृहत्तथा ।
वार्तासञ्चयशालीनशिलोञ्छ इति वै गृहे ।।४२।।

पदच्छेद— सावित्रम् प्राजापत्यम् च ब्राह्मम् च अथ बृहत् तथा ।
वार्ता सञ्चय शालीन शिलोञ्छ इति वै गृहे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सावित्रम् | २. | तीन दिन का ब्रह्मचर्य व्रत | वार्ता | ९. | कृषि कर्म |
| प्राजापत्यम् | ३. | एक वर्ष का ब्रह्मचर्य | सञ्चय | १०. | यज्ञ कर्म |
| च | ४. | और | शालीन | ११. | अयाचित वृत्ति |
| ब्राह्मम् | ५. | वेदाध्ययन की समाप्ति तक का ब्रह्मचर्य व्रत | शिलोञ्छ | १२. | खेत में गिरे दानों से जीवन निर्वाह करना |
| च | ६. | तथा | इति | १३. | ये |
| अथ | १. | ब्रह्मचर्य आश्रम में | वै | १४. | ही |
| बृहत् | ७ | आजीवन ब्रह्मचर्य | गृहे ।। | १५. | गृहस्थाश्रम की वृत्तियाँ हैं। |
| तथा। | ८. | ये चार प्रकार के ब्रह्मचर्य व्रत हैं। | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मचर्य आश्रम में (सावित्रम्) तीन दिन का ब्रह्मचर्य व्रत (प्राजापत्यम्) एक वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत और वेदाध्ययन की समाप्ति तक का ब्रह्मचर्य व्रत तथा आजीवन ब्रह्मचर्य ये चार प्रकार के ब्रह्मचर्य व्रत हैं। कृषि कर्म, यज्ञ कर्म, अयाचित वृत्ति खेत में गिरे दानों से जीवन निर्वाह करना ये ही गृहस्थाश्रम की वृत्तियाँ हैं।

## त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

वैखानसा वालखिल्यौदुम्बराः फेनपा वने ।
न्यासे कुटीचकः पूर्वं बह्वोदो हंसनिष्क्रियौ ॥४३॥

पदच्छेद—

वैखानसाः वालखिल्यः औदुम्बराः फेनपाः वने ।
न्यासे कुटीचकः पूर्वं बह्वोदो हंस निष्क्रियौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैखानसाः | २. | वैखानस | न्यासे | ७. | सन्यास आश्रम में |
| वालखिल्य | ३. | वालखिल्य | कुटीचकः | ८. | कुटीचक |
| औदुम्बराः | ४. | औदुम्बर (और) | पूर्वम् | ६. | उसी प्रकार |
| फेनपा | ५. | फेनप (ये चार वृत्तियाँ हैं) | बह्वोदोः | ९. | वहूदक |
| वने । | १. | वानप्रस्थ आश्रम की | हंस | १०. | हंस (और) |
| | | | निष्क्रियौ ॥ | ११. | निष्क्रिय (ये चार वृत्तियाँ हैं) |

श्लोकार्थ—वानप्रस्थ आश्रम की वैखानस, वालखिल्य, औदुम्बर और फेनप ये चार वृत्तियाँ हैं। उसी प्रकार सन्यास आश्रम में कुटीचक, वहूदक, हंस और निष्क्रिय ये चार वृत्तियाँ हैं।

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्तथैव च ।
एवं व्याहृतयश्चासन् प्रणवो ह्यस्य दह्रतः ॥४४॥

पदच्छेद—

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिः तथैव च ।
एवम् व्याहृतयः च आसन् प्रणवः हि अस्य दहृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आन्वीक्षिकी | १. | (ब्रह्मा जी के मुख से उत्पन्न) मोक्ष विद्या | व्याहृतयः | ८. | भूः भुवः स्वः महः |
| | | | च | ९. | ये चार व्याहृतियाँ |
| त्रयी | २. | कर्मकाण्ड | आसन् | १४. | उत्पन्न हुआ |
| वार्ता | ३. | कृषि, व्यापारादि | प्रणवः | १३. | ओंकार |
| दण्डनीतिः | ४. | राजनीति | हि | १०. | तथा |
| तथैव | ६. | उसी प्रकार | अस्य | ११. | उन ब्रह्मा जी के |
| च | ५. | और | दहृतः ॥ | १२. | हृदयाकाश से ही |
| एवम् । | ७. | एवम् | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के मुख से उत्पन्न मोक्ष विद्या, कर्मकाण्ड कृषि व्यापारादि, राजनीति और उसी प्रकार, एवम् भूः भुवः स्वः महः ये चार व्याहृतियाँ तथा उन ब्रह्मा जी के हृदयाकाश से हीं ओंकार उत्पन्न हुआ।

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तस्योष्णिगासील्लोमभ्यो गायत्री च त्वचो विभोः ।
त्रिष्टुम्मांसात्स्नुतोऽनुष्टुब्जगत्यस्थ्नः प्रजापतेः ॥४५॥

पदच्छेद—

तस्य उष्णिक् आसीत् लोमभ्यः गायत्री च त्वचः विभोः ।
त्रिष्टुप् मांसात् स्नुतः अनुष्टुप् जगती अस्थनः प्रजापतेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ३. | उन | त्रिष्टुप् | ११. | त्रिष्टुप् छन्द |
| उष्णिक् | ६. | उष्णिक् छन्द | मांसात् | १०. | मांस से |
| आसीत् | १६. | उत्पन्न हुआ | स्नुतः | १२. | स्नायु से |
| लोमभ्यः | ५. | रोमों से | अनुष्टुप् | १३. | अनुष्टुप छन्द (और) |
| गायत्री | ९. | गायत्री छन्द | जगती | १५. | जगती छन्द |
| च | ७. | और | अस्थनः | १४. | अस्थियों से |
| त्वचः | ८. | त्वचा से | प्रजा | १. | प्रजा के |
| विभोः । | ४. | ब्रह्मा जी के | पतेः ॥ | २. | स्वामी |

श्लोकार्थ—प्रजा के स्वामी उन ब्रह्मा जी के रोमों से उष्णिक् छन्द और त्वचा से गायत्री छन्द, मांस से त्रिष्टुप् छन्द, स्नायु से अनुष्टुप छन्द और अस्थियों से जगती छन्द उत्पन्न हुआ ।

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

मज्जायाः पङ्क्तिरुत्पन्ना बृहती प्राणतोऽभवत् ।
स्पर्शस्तस्याभवज्जीवः स्वरो देह उदाहृतः ॥४६॥

पदच्छेद—

मज्जायाः पङ्क्तिः उत्पन्नाः बृहती प्राणतः अभवत् ।
स्पर्शः तस्य अभवत् जीवः स्वरः देह उदाहृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मज्जायाः | १. | (ब्रह्मा जी की) मज्जा से | स्पर्शः | ७. | क से लेकर म तक के वर्ण |
| पङ्क्तिः | २. | पङ्क्ति छन्द | तस्य | ८. | उनकी |
| उत्पन्नाः | ३. | उत्पन्न हुआ (और) | अभवत् | १०. | हुये (तथा) |
| बृहती | ५. | बृहती छन्द | जीवः | ९. | जीवात्मा |
| प्राणतः | ४. | प्राण से | स्वरः | ११. | अ से लेकर औ तक के स्वर वर्ण |
| अभवत् । | ६. | उत्पन्न हुआ | देह | १२ | शरीर |
| | | | उदाहृतः ॥ | १३. | कहे जाते हैं । |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी की मज्जा से पंक्ति छन्द उत्पन्न हुआ और प्राण से बृहती छन्द उत्पन्न हुआ । क से लेकर म तक के वर्ण उनकी जीवात्मा हुये तथा अ से लेकर औ तक के स्वर वर्ण शरीर कहे जाते हैं ।

## सप्तचत्वारिंश: श्लोक:

ऊष्माणमिन्द्रियाण्याहुरन्तःस्था बलमात्मनः ।
स्वराः सप्त विहारेण भवन्ति स्म प्रजापतेः ॥४७॥

पदच्छेद—

ऊष्माणम् इन्द्रियाणि आहुः अन्तःस्था बलम् आत्मनः ।
स्वराः सप्त विहारेण भवन्ति स्म प्रजापतेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऊष्माणम् | १. | श. ष, स, ह वर्ण | स्वराः | १०. | स्वर |
| इन्द्रियाणि | २. | (ब्रह्मा जी की) इन्द्रियाँ | सप्त | ९. | सा,रे;गा,मा, पा, धा नी सातों |
| आहुः | ३. | हैं (तथा) | विहारेण | ८. | क्रीड़ा से |
| अन्तः स्थाः | ४. | य, र, ल, व वर्ण (उनकी) | भवन्ति स्म | ११. | उत्पन्न हुये हैं |
| बलम् | ६. | बल हैं | प्रजापतेः | ७. | ब्रह्मा जी की |
| आत्मनः | ५. | आत्मा के | | | |

श्लोकार्थ—श, ष, स, ह वर्ण ब्रह्मा जी की इन्द्रियाँ हैं तथा य, र, ल, व वर्ण उनकी आत्मा के बल हैं। ब्रह्मा जी की क्रीड़ा से सा, रे, गा, मा, पा, धा, नी सातों स्वर उत्पन्न हुये हैं।

## अष्टाचत्वारिंश: श्लोक:

शब्दब्रह्मात्मनस्तस्य व्यक्ताव्यक्तात्मनः परः ।
ब्रह्मावभाति विततो नानाशक्त्युपबृंहितः ॥४८॥

पदच्छेद—

शब्दब्रह्म आत्मनः तस्य व्यक्त अव्यक्त आत्मनः परः ।
ब्रह्म अवभाति विततः नाना शक्ति उपबृंहितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शब्द ब्रह्म | २. | शब्द ब्रह्म | ब्रह्म | ९. | शुद्ध निर्गुण ब्रह्म |
| आत्मनः | ३. | स्वरूप होकर | अवभाति | १३. | प्रकाशित हो रहा है |
| तस्य | १. | (हे तात) वे ब्रह्मा जी | विततः | ८. | सर्वत्र व्याप्त |
| व्यक्त | ४. | वैखरी रूप से व्यक्त | नाना | १०. | अनेकों |
| अव्यक्त | ५. | ओंकार रूप से अव्यक्त | शक्ति | ११. | शक्तियों से |
| आत्मनः | ६. | स्वरूप वाले हैं | उपबृंहितः | १२. | विकसित होकर |
| परः | ७. | (उनसे) परे | | | |

श्लोकार्थ—हे तात ! वे ब्रह्मा जी शब्द ब्रह्म स्वरूप होकर वैखरी रूप से व्यक्त, ओंकार रूप से अव्यक्त स्वरूप वाले हैं। उनसे परे सर्वत्र व्याप्त शुद्ध निर्गुण ब्रह्म अनेकों शक्तियों से विकसित होकर प्रकाशित हो रहा है।

## एकोनपञ्चाशः श्लोकः

ततोऽपरामुपादाय स सर्गाय मनो दधे ।
ऋषीणां भूरिवीर्याणामपि सर्गमविस्तृतम् ॥४९॥

पदच्छेद—

ततः अपराम् उपादाय सः सर्गाय मनः दधे ।
ऋषीणाम् भूरि वीर्याणाम् अपि सर्गम् अविस्तृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ततः | १. तदनन्तर | | ऋषीणाम् | ११. मरीचि आदि ऋषियों की |
| अपराम् | ३. दूसरा शरीर | | भूरि | ८. अनन्त |
| उपादाय | ४. धारण करके | | वीर्याणाम् | ९. शक्तिशाली होने पर |
| सः | २. ब्रह्मा जी | | अपि | १०. भी |
| सर्गाय | ५. सृष्टि के विषय में | | सर्गम् | १२. सृष्टि का |
| मनः | ६. विचार करने | | अविस्तृतम् ॥ | १३. विस्तार नहीं हुआ था |
| दधे । | ७. लगे (क्योंकि) | | | |

श्लोकार्थ—तदन्तर ब्रह्माजी दूसरा शरीर धारण करके सृष्टि के विषय में विचार करने लगे, क्योंकि अनन्तशक्ति शाली होने पर भी मरीचि आदि ऋषियों की सृष्टि का विस्तार नहीं हुआ था ।

## पञ्चाशः श्लोकः

ज्ञात्वा तद्धृदये भूयश्चिन्तयामास कौरव ।
अहो अद्भुतमेतन्मे व्यापृतस्यापि नित्यदा ॥५०॥

पदच्छेद—

ज्ञात्वा तद् हृदये भूयः चिन्तयामास कौरव ।
अहो अद्भुतम् एतद् मे व्यापृतस्यापि नित्यदा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ज्ञात्वा | २. सृष्टि के अविस्तार को जानकर | | अहो | ११. बड़ा |
| | | | अद्भुतम् | १२. आश्चर्य है |
| तद् | ३. ब्रह्मा जी के | | एतद् | १०. यह |
| हृदये | ४. मन में | | मे व्यापृतस्य | ८. मेरे सृष्टि रचना में लगे रहने पर |
| भूयः | ५. पुनः | | | |
| चिन्तयामास | ६. चिन्ता उत्पन्न हुई (कि) | | अपि | ९. भी |
| कौरव । | १. हे विदुर जी ! | | नित्यदा ॥ | ७. निरन्तर |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! सृष्टि के अविस्तार को जानकर ब्रह्मा जी के मन में पुनः चिन्ता उत्पन्न हुई । कि निरन्तर मेरे सृष्टि रचना में लगे रहने पर भी यह बड़ा आश्चर्य है ।

## एकपञ्चाशः श्लोकः

न ह्येधन्ते प्रजा नूनं दैवमत्र विघातकम् ।
एवं युक्तकृतस्तस्य दैवं चावेक्षतस्तदा ॥५१॥

पदच्छेद—

न हि एधन्ते प्रजाः नूनम् दैवम् अत्र विघातकम् ।
एवम् युक्तकृतः तस्य दैवम् च अवेक्षतः तदा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न हि | २. | नहीं | एवम् | ८. | इस प्रकार |
| एधन्ते | ३. | विस्तार हो रहा है | युक्तकृतः | ९. | तर्क करते हुये |
| प्रजाः | १. | प्रजाओं का | तस्य | १०. | ब्रह्मा जी |
| नूनम् | ६. | ही | दैवम् | १२. | भाग्य |
| दैवम् | ५. | दैव | च | १३. | पर |
| अत्र | ४. | इसमें | अवेक्षतः | १४. | विचार करने लगे |
| विघातकम् । | ७. | विघ्न डाल रहा है । | तदा | ११. | उस समय |

श्लोकार्थ—प्रजाओं का विस्तार नहीं हो रहा है, इसमें दैव ही विघ्न डाल रहा है । इस प्रकार तर्क करते हुये ब्रह्मा जी उस समय भाग्य पर विचार करने लगे ।

## द्वापञ्चाशः श्लोकः

कस्य रूपमभूद् द्वेधा यत्कायमभिचक्षते ।
ताभ्यां रूपविभागाभ्यां मिथुनं समपद्यत ॥५२॥

पदच्छेद—

कस्य रूपम् अभूत् द्वेधा यत् कायम् अभिचक्षते ।
ताभ्याम् रूप विभागाभ्याम् मिथुनम् समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कस्य | १. | ब्रह्मा जी का | ताभ्याम् | ८. | उस |
| रूपम् | २. | शरीर | रूप | ९. | शरीर के |
| अभूत् | ४. | विभक्त हो गया | विभागाभ्याम् | १०. | दोनों भागों से |
| द्वेधा | ३. | दो भागों में | मिथुनम् | ११. | स्त्री और पुरुष का जोड़ा |
| यत् | ५. | जिसे | समपद्यत ॥ | १२. | उत्पन्न हुआ । |
| कायम् | ६. | काय शब्द से | | | |
| अभिचक्षते | ७. | कहा जाता है ! | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी का शरीर दो भागों में विभक्त हो गया, जिसे काय शब्द से कहा जाता है उस शरीर के दोनों भागों से स्त्री और पुरुष का जोड़ा उत्पन्न हुआ ।

## त्रय:पञ्चाश: श्लोक:

यस्तु तत्र पुमान् सोऽभून्मनुः स्वायम्भुवः स्वराट् ।
स्त्री याऽऽसीच्छतरूपाख्या महिष्यस्य महात्मनः ॥५३॥

पदच्छेद—

यः तु तत्र पुमान् सः अभूत् मनुः स्वायम्भुवः स्वराट् ।
स्त्री या आसीत् शतरूपा आख्या महिषी अस्य महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यः | २. जो | स्त्री | १३. स्त्री |
| तु | ६. तथा | या | १०. जो |
| तत्र | १. उनमें | आसीत् | १४. थी (वह) |
| पुमान् | ३. पुरुष था | शतरूपा | ११. शतरूपा |
| सः | ४. वह | आख्या | १२. नामवाली |
| अभूत् | ८. हुआ | महिषी | १७. पटरानी हुई |
| मनुः | ७. मनु | अस्य | १५. उस |
| स्वायम्भुवः | ६. स्वायम्भुव | महात्मनः ॥ | १६. महापुरुष की |
| स्वराट् । | ५. सार्वभौम सम्राट् | | |

श्लोकार्थ—उनमें जो पुरुष था वह सार्वभौम सम्राट् स्वायम्भुव मनु हुआ, तथा जो शतरूपा नाम वाली स्त्री थी वह उस महापुरुष की पटरानी हुई ।

## चतु:पञ्चाश: श्लोक:

तदा मिथुनधर्मेण प्रजा ह्येधाम्बभूविरे ।
स चापि शतरूपायां पञ्चापत्यान्यजीजनत् ॥५४॥

पदच्छेद—

तदा मिथुन धर्मेण प्रजाः हि एधाम्बभूविरे ।
स च अपि शतरूपायाम् पञ्च अपत्यानि अजीजनत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तदा | १. उस समय | च | ६. तथा |
| मिथुन धर्मण | २. सम्भोग क्रिया से | अपि | ८. भी |
| प्रजाः | ३. प्रजाओं की | शतरूपायाम् | ९. शतरूपा से |
| हि | ४. बहुत | पञ्च | १०. पाँच |
| एधाम्बभूविरे | ५. वृद्धि होने लगी | अपत्यानि | ११. सन्तानें |
| सः । | ७. मनु महाराज ने | अजीजनत् ॥ | १२. उत्पन्न कीं । |

श्लोकार्थ—उस समय सम्भोग क्रिया से प्रजाओं की बहुत वृद्धि होने लगी तथा मनु महाराज ने भी शतरूपा से पाँच सन्तानें उत्पन्न कीं ।

## पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

प्रियव्रतोत्तानपादौ तिस्रः कन्याश्च भारत ।
आकूतिर्देवहूतिश्च प्रसूतिरिति सत्तम ॥५५॥

पदच्छेद—

प्रियव्रत उत्तानपादौ तिस्रः कन्याः च भारत ।
आकूतिः देवहूतिः च प्रसूतिः इति सत्तम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रियव्रत | ३. | प्रियव्रत (और) | आकूतिः | ६. | आकूति |
| उत्तानपादौ | ४. | उत्तानपाद दो पुत्र | देवहूतिः | ७. | देवहूति |
| तिस्रः | ११. | तीन | च | ८. | और |
| कन्याः | १२. | कन्यायें हुईं | प्रसूतिः | ९. | प्रसूति |
| च | ५. | तथा | इति | १०. | ये |
| भारत । | २. | हे विदुर जी (उनके) | सत्तम ॥ | १. | साधु श्रेष्ठ |

श्लोकार्थ—साधु श्रेष्ठ हे विदुर जी ! उनके प्रियव्रत और उत्तानपाद दो पुत्र तथा आकूति देवहूति और प्रसूति ये तीन कन्यायें हुईं ।

## षट्पञ्चाशः श्लोकः

आकूतिं रुचये प्रादात्कर्दमाय तु मध्यमाम् ।
दक्षायादात्प्रसूतिं च यत आपूरितं जगत् ॥५६॥

पदच्छेद—

आकूतिम् रुचये प्रादात् कर्दमाय तु मध्यमाम् ।
दक्षाय आदात् प्रसूतिम् च यतः आपूरितम् जगत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आकूतिम् | २. | आकूति का | आदात् | १०. | विवाह किया |
| रुचये | १. | महाराज मनु ने रुचि प्रजापति से | प्रसूतिम् | ९. | प्रसूति का |
| | | | च | ७. | और |
| प्रादात् | ६. | विवाह किया | यतः | ११. | जिनकी सन्तानों से (यह) |
| कर्दमाय | ४. | कर्दम जी से | आपूरितम् | १३. | व्याप्त हो गया |
| तु | ३. | तथा | जगत् ॥ | १२. | सारा संसार |
| मध्यमाम् | ५. | मंझली देवहूति का | | | |
| दक्षाय । | ८. | दक्ष प्रजापति से | | | |

श्लोकार्थ—महाराज मनु ने रुचि प्रजापति से आकूति का तथा कर्दम जी से मंझली देवहूति का विवाह किया, और दक्ष प्रजापति से प्रसूति का विवाह किया जिनकी सन्तानों से यह सारा संसार व्याप्त हो गया ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे द्वादशः अध्यायः समाप्त ॥

अथ त्रयोदशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

श्री शुक उवाच—

निशम्य वाचं वदतो मुनेः पुण्यतमां नृप ।
भूयः पप्रच्छ कौरव्यो वासुदेव कथादृतः ।।१।।

पदच्छेद—

निशम्य वाचम् वदतः मुनेः पुण्यतमाम् नृप ।
भूयः पप्रच्छ कौरव्यः वासुदेव कथा आदृतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निशम्य | ६. | सुनकर | भूयः | ११. | फिर से |
| वाचम् | ५. | वाणी को | पप्रच्छ | १२. | पूछा |
| वदतः | २. | कथा सुनाते हुये | कौरव्यः | १०. | विदुर जी ने |
| मुनेः | ३. | मैत्रेय मुनि की | वासुदेव | ७. | भगवान् श्री कृष्ण की |
| पुण्यतमां | ४. | पुण्यमयी | कथा | ८. | कथा के |
| नृप । | १. | हे राजन् | आदृतः ।। | ९. | अनुरागी |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कथा सुनाते हुये मैत्रेय मुनि की पुण्यमयी वाणी को सुनकर भगवान् श्री कृष्ण की कथा के अनुरागी विदुर जी ने फिर से पूछा ।

## द्वितीयः श्लोकः

स वै स्वायम्भुवः सम्राट् प्रियः पुत्रः स्वयम्भुवः ।
प्रतिलभ्य प्रियां पत्नीं किं चकार ततो मुने ।।२।।

पदच्छेद—

सः वै स्वायम्भुवः सम्राट् प्रियः पुत्रः स्वयम्भुवः ।
प्रतिलभ्य प्रियाम् पत्नीम् किम् चकार ततः मुने ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः वै | ५. | वे | प्रतिलभ्य | १०. | पाकर |
| स्वायम्भुवः | ७. | स्वायम्भुव मनु (अपनी) | प्रियाम् | ८. | प्रिय |
| सम्राट् | ६. | महाराज | पत्नीम् | ९. | पत्नी (शतरूपा) को |
| प्रियः | ३. | प्रिय | किम् | १२. | क्या |
| पुत्रः | ४. | पुत्र | चकार | १३. | किया |
| स्वयम्भुवः । | २. | ब्रह्माजी के | ततः | ११. | फिर |
| | | | मुने ।। | १. | हे मुनिवर |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! ब्रह्मा जी के प्रिय पुत्र वे महाराज स्वायम्भुव मनु अपनी प्रिय पत्नी शतरूपा को पाकर फिर क्या किया ।

## तृतीयः श्लोकः

चरितं तस्य राजर्षेरादिराजस्य सत्तम।
ब्रूहि मे श्रद्दधानाय विष्वक्सेनाश्रयो ह्यसौ ॥३॥

पदच्छेद—

चरितम् तस्य राजर्षेः आदि राजस्य सत्तम।
ब्रूहि मे श्रद्दधानाय विष्वक्सेनं आश्रयः हि असौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चरितम् | ७. | चरित | ब्रूहि | ८. | सुनावें |
| तस्य | ४. | उन | मे | २. | मुझ |
| राजर्षेः | ६. | रार्जषि (स्वायम्भुव मनु का) | श्रद्दधानाय | ३. | श्रद्धालु को |
| आदिराजस्य | ५. | आदि राज | विष्वक्सेन | ११. | भगवान् श्री हरि के |
| सत्तम। | १. | हे मुनिवर ! | आश्रयः | १२. | शरणागत भक्त थे |
| | | | हि | ९. | क्योंकि |
| | | | असौ ॥ | १०. | वे |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! मुझ श्रद्धालु को उन आदिराज रार्जषि स्वायम्भुव मनु का चरित सुनावें, क्योंकि वे भगवान् श्री हरि के शरणागत भक्त थे।

## चतुर्थः श्लोकः

श्रुतस्य पुंसां सुचिरश्रमस्य नन्वञ्जसा सूरिभिरीडितोऽर्थः।
यत्तद्गुणानुश्रवणं मुकुन्दपादारविन्दं हृदयेषु येषाम् ॥४॥

पदच्छेद—

श्रुतस्य पुंसाम् सुचिर श्रमस्य ननु अञ्जसा सूरिभिः ईडितः अर्थः।
यत् तद् गुण अनुश्रवणम् मुकुन्द पाद् अरविन्दम् हृदयेषु येषाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रुतस्य | १४. | शास्त्राध्ययन का | यत् | ८. | जो |
| पुंसाम् | १३. | मनुष्यों के | तद् | ६. | उन भक्तों के |
| सुचिर | ११. | दीर्घकालीन | गुण | ७. | गुणों का |
| श्रमस्य | १२. | परिश्रम पूर्वक | अनुश्रवणम् | ९. | कीर्त्तन है |
| ननु | १०. | वही | मुकुन्द | ३. | श्री हरि के |
| अञ्जसा | १८ | ऐसा मत है | पाद् | ४. | चरण |
| सूरिभिः | १७. | विद्वानों का | अरविन्दम् | ५. | कमल (विद्यमान है) |
| ईडितः | १५. | श्रेष्ठ | हृदयेषु | २. | हृदय में |
| अर्थः। | १६. | फल है। | येषाम् ॥ | १. | जिनके |

श्लोकार्थ—जिनके हृदय में श्री हरि के चरण कमल विद्यमान हैं, उन भक्तों के गुणों का जो कीर्त्तन है, वही दीर्घकालीन परिश्रमपूर्वक मनुष्यों के शास्त्राध्ययन का श्रेष्ठ फल है, विद्वानों का ऐसा मत है।

## पंचमः श्लोकः

श्री शुक उवाच—

इति ब्रुवाणं विदुरं विनीतं सहस्रशीर्ष्णश्चरणोपधानम् ।
प्रहृष्टरोमा भगवत्कथायां प्रणीयमानो मुनिरभ्यचष्ट ।।५।।

पदच्छेद—

इति ब्रुवाणम् विदुरम् विनीतम्, सहस्रशीर्ष्णः चरण उपधानम् ।
प्रहृष्ट रोमा भगवत् कथायाम् प्रणीयमानः मुनिः अभ्यचष्ट ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ७. | ऐसा | प्रहृष्ट | १२. | पुलकित |
| ब्रुवाणम् | ८. | कहने पर | रोमा | १३. | रोमों वाले |
| विदुरम् | ६. | विदुर जी के | भगवत् | ९. | भगवान् की |
| विनीतम् | ५. | विनयी | कथायाम् | १०. | कथा में |
| सहस्र | १. | हजारों | प्रणीयमानः | ११. | प्रेरित (तथा) |
| शीर्ष्णः | २. | शिर वाले (भगवान् श्रीहरि के) | मुनिः | १४. | मैत्रेय जी |
| चरण | ३. | चरणों के | अभ्यचष्ट ।। | १५. | बोले |
| उपधानम् । | ४. | आश्रित एवं | | | |

श्लोकार्थ—हजारों शिर वाले भगवान् श्री हरि के चरणों के आश्रित एवं विनयी विदुर जी के ऐसा कहने पर भगवान् की कथा में प्रेरित तथा पुलकित रोमों वाले मैत्रेय जी बोले ।

## षष्ठः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

यदा स्वभार्यया साकं जातः स्वायम्भुवो मनुः ।
प्राञ्जलिः प्रणतश्चेदं वेदगर्भमभाषत ।।६।।

पदच्छेद—

यदा स्व भार्यया साकम् जातः स्वायम्भुवः मनुः ।
प्राञ्जलिः प्रणतः च इदम् वेदगर्भम् अभाषत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब | प्राञ्जलिः | १०. | हाथ जोड़कर |
| स्व | ४. | अपनी पत्नी | प्रणतः | ९. | झुककर |
| भार्यया | ५. | शतरूपा के | च | ८. | उस समय |
| साकम् | ६. | साथ | इदम् | १२. | यह |
| जातः | ७. | उत्पन्न हुये | वेदगर्भम् | ११. | ब्रह्मा जी से |
| स्वायम्भुवः | २. | स्वायम्भुव | अभाषत ।। | १३. | बोले |
| मनुः । | ३. | मनु | | | |

श्लोकार्थ—जब स्वायम्भुव मनु अपनी पत्नी शतरूपा के साथ उत्पन्न हुये । उस समय झुककर, हाथ जोड़कर ब्रह्मा जी से यह बोले ।

## सप्तमः श्लोकः

त्वमेकः सर्वभूतानां जन्मकृद् वृत्तदः पिता ।
अथापि नः प्रजानां ते शुश्रूषा केन वा भवेत् ॥७॥

पदच्छेद—

त्वम् एकः सर्वभूतानाम् जन्मकृद् वृत्तदः पिता ।
अथ अपि नः प्रजानाम् ते शुश्रूषा केन वा भवेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम् | २. | आपही | अपि | ९. | भी |
| एकः | ३. | एकमात्र | नः | १०. | हम |
| सर्वभूतानाम् | ४. | सभी प्राणियों के | प्रजानाम् | १२. | सन्तान |
| जन्मकृद् | ५. | जन्मदाता (और) | ते | ११. | आपकी |
| वृत्तिदः | ६. | जीविका देने वाले | शुश्रूषा | १३. | आपकी सेवा |
| पिता | ७. | पिता हैं | केन | १४. | किस प्रकार |
| अथ । | ८. | फिर | वा | १. | यद्यपि |
| | | | भवेत् ॥ | १५. | करें |

श्लोकार्थ—यद्यपि आप ही एकमात्र सभी प्राणियों के जन्मदाता और जीविका देने वाले पिता हैं फिर भी हम आपकी सन्तान आपकी सेवा किस प्रकार करें ।

## अष्टमः श्लोकः

तद्विधेहि नमस्तुभ्यं कर्मस्वीड्यात्मशक्तिषु ।
यत्कृत्वेह यशो विष्वगमुत्र च भवेद् गतिः ॥८॥

पदच्छेद—

तद् विधेहि नमः तुभ्यम् कर्मसु ईड्य आत्म शक्तिषु ।
यत् कृत्वा इह यशः विष्वक् अमुत्र च भवेद् गतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ६. | उस कर्म में | यत् | ९. | जिसे |
| विधेहि | ८. | लगावें | कृत्वा | १०. | करके |
| नमः | २. | नमस्कार है (हमें) | इह | ११. | इस लोक में |
| तुभ्यम् | १. | हे भगवन् आपको | यशः | १३. | कीर्ति |
| कर्मसु | ७. | कर्म में | विष्वक् | १२. | सर्वत्र |
| ईड्य | ५. | करने योग्य | अमुत्र | १५. | परलोक में |
| आत्म | ३. | अपनी | च | १४. | और |
| शक्तिषु । | ४. | शक्ति से | भवेत् | १७. | प्राप्त हो |
| | | | गतिः ॥ | १६. | सद्गति |

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! आपको नमस्कार है, हमें अपनी शक्ति से करने योग्य उस कर्म में लगावें, जिसे करके इस लोक में सर्वत्र कीर्ति और परलोक में सद्गति प्राप्त हो ।

## नवमः श्लोकः

ब्रह्मा उवाच—

प्रीतस्तुभ्यमहं तात स्वस्ति स्ताद्वां क्षितीश्वरः ।
यन्निर्व्यलीकेन हृदा शाधि मेत्यात्मनार्पितम् ॥९॥

पदच्छेद—

प्रीतः तुभ्यम् अहम् तात स्वस्तिः तात् वाम् क्षितीश्वरः ।
यत्नि र्व्यलीकेन हृदा शाधि मा इति आत्मना अर्पितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रीतः | ८. | प्रसन्न हूँ | यत् | ९. | क्योंकि (तुमने) |
| तुभ्यम् | ७. | तुमसे | र्व्यलीकेन् | १२. | निष्कपट |
| अहम् | ६. | मैं | हृदा | १३. | भाव से |
| तात | १ | हे तात | शाधि | ११. | आज्ञा करें |
| स्वस्ति | ४. | कल्याण | मा | १०. | मुझे |
| स्तात् | ५. | हो | इति | १४. | इस प्रकार |
| वाम् | ३. | तुम दोनों का | आत्मना | १५. | अपने को |
| क्षितीश्वरः । | २. | राजन् | अर्पितम् ॥ | १६. | समर्पित किया है |

श्लोकार्थ—हे तात राजन् ! तुम दोनों का कल्याण हो मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, क्योंकि तुमने 'मुझे आज्ञा करें, इस प्रकार निष्कपट भाव से अपने को समर्पित किया है ॥

## दशमः श्लोकः

एतावत्यात्मजैर्वीर कार्या ह्यपचितिर्गुरौ ।
शक्त्याप्रमत्तैर्गृह्येत सादरं गतमत्सरैः ॥१०॥

पदच्छेद—

एतावती आत्मजैः वीर कार्या हि अपिचितिः गुरौ ।
शक्त्या प्रमत्तैः गृह्येत सादरम् गत मत्सरैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावती | ४. | ऐसी | शकत्या | १०. | यथा शक्ति |
| आत्मजैः | २. | पुत्रों को | प्रमत्तैः | ११. | सावधानी से |
| वीर | १. | हे वीर | गृह्येत | १३. | आदेश मानना चाहिये |
| कार्या | ७. | करनी चाहिये (तथा) | सादरम् | १२. | आदर पूर्वक (उनका) |
| हि | ५. | ही | गत | ९. | रहित होकर |
| अपिचितिः | ६. | सेवा | मत्सरैः | ८. | ईर्ष्या से |
| गुरौ । | ३. | पिता की | | | |

श्लोकार्थ—हे वीर ! पुत्रों को पिता की ऐसी ही सेवा करनी चाहिये तथा ईर्ष्या से रहित होकर यथा शक्ति सावधानी से आदर पूर्वक उनका आदेश मानना चाहिये ।

# एकादशः श्लोकः

स त्वमस्यामपत्यानि सदृशान्यात्मनो गुणैः ।
उत्पाद्य शास धर्मेण गां यज्ञैः पुरुषं यज ॥११॥

पदच्छेद—

सः त्वम् अस्याम् अपत्यानि सदृशानि आत्मनः गुणैः ।
उत्पाद्य शास धर्मेण गाम् यज्ञैः पुरुषम् यज ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | सो | उत्पाद्य | ८. | उत्पन्न करके |
| त्वम् | २. | तुम | शास | ११. | पालन करो (और) |
| अस्याम् | ३. | इस (अपनी पत्नी) से | धर्मेण | ९. | धर्मपूर्वक |
| अपत्यानि | ७. | सन्तान | गाम् | १०. | पृथ्वी का |
| सदृशानि | ५. | समान | यज्ञैः | १२. | यज्ञों के द्वारा |
| आत्मनः | ४. | अपने | पुरुषम् | १३. | भगवान् श्री हरि की |
| गुणैः । | ६. | गुणवान् | यज ॥ | १४. | आराधना करो |

श्लोकार्थ—सो तुम इस अपनी पत्नी से अपने समान गुणवान सन्तान उत्पन्न करके धर्म पूर्वक पृथ्वी का पालन करो और यज्ञों के द्वारा भगवान् श्रीहरि की आराधना करो।

# द्वादशः श्लोकः

परं शुश्रूषणं मह्यं स्यात्प्रजारक्षया नृप ।
भगवांस्ते प्रजाभर्तुर्हृषीकेशोऽनुतुष्यति ॥१२॥

पदच्छेद—

परम् शुश्रूषणम् मह्यम् स्यात् प्रजा रक्षया नृप ।
भगवान् ते प्रजा भर्तुः हृषीकेशः अनुतुष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परम् | ५. | सबसे बड़ी | भगवान् | ८. | भगवान् |
| शुश्रूषणम् | ६. | सेवा | ते | १२. | तुम्हारे ऊपर |
| मह्यम् | ४. | मेरी | प्रजा | १०. | प्रजाओं का |
| स्यात् | ७. | होगी | भर्तुः | ११. | पालन करने से ही |
| प्रजा | २. | प्रजाओं की | हृषीकेशः | ९. | श्री हरि |
| रक्षया | ३. | रक्षा से | अनुतुष्यति ॥ | १३. | प्रसन्न होगें। |
| नृप । | १. | हे राजन् | | | |

श्लोकार्थ—हे राजन्! प्रजाओं की रक्षा से मेरी सबसे बड़ी सेवा होगी, भगवान् श्री हरि प्रजाओं का पालन करने से ही तुम्हारे ऊपर प्रसन्न होगें।

## त्रयोदशः श्लोकः

येषां न तुष्टो भगवान् यज्ञलिङ्गो जनार्दनः ।
तेषां श्रमो ह्यपार्थाय यदात्मा नादृतः स्वयम् ।।१३।।

पदच्छेद—

येषाम् न तुष्टः भगवान् यज्ञलिङ्गः जनार्दनः ।
तेषाम् श्रम हि अपार्थाय यद् आत्मा न आदृतः स्वयम् ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| येषाम् | ४. | जिनके ऊपर | श्रमः | ८. | परिश्रम |
| न | ५. | नहीं | हि | १०. | ही (है) |
| तुष्टः | ६. | प्रसन्न होते हैं । | अपार्थाय | ९. | व्यर्थ |
| भगवान् | २. | भगवान् | यद् | ११. | क्योंकि (वे लोग) |
| यज्ञलिङ्ग | १. | यज्ञ पुरुष | आत्मा | १३. | अपना |
| जनार्दनः | ३. | श्री हरि | न आदृतः | १४. | अनादर करते हैं |
| तेषाम् । | ७. | उनका | स्वयम् ।। | १२. | अपने आप |

श्लोकार्थ—यज्ञ पुरुष भगवान् श्री हरि जिनके ऊपर प्रसन्न नहीं होते हैं, उनका परिश्रम व्यर्थ ही है, क्योंकि वे लोग अपने आप अपना अनादर करते हैं ।

## चतुर्दशः श्लोकः

मनुः उवाच—

आदेशेऽहं भगवतो वर्तेयामीवसूदन ।
स्थानं त्विहानुजानीहि प्रजानां मम च प्रभो ।।१४।।

पदच्छेद—

आदेशे अहम् भगवतः वर्ते यामीव सूदन ।
स्थानम् तु इह अनुजानीहि प्रजानाम् मम च प्रभो ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आदेशे | ६. | आदेश का | तु | ८. | किन्तु |
| अहम् | ४. | मैं | इह | १२. | यहाँ |
| भगवतः | ५. | आपके | अनुजानीहि | १४. | बतावें |
| वर्ते | ७. | पालन करूंगा | प्रजानाम् | ११. | (भावी) प्रजाओं के लिये |
| यामीव | १. | पाप का | मम | ९. | मेरे लिये |
| सूदन | २. | नाश करने वाले | च | १०. | और |
| स्थानम् । | १३. | स्थान | प्रभो ।। | ३. | हे प्रजापति |

श्लोकार्थ—पाप का नाश करने वाले हे प्रजापति ! मैं आपके आदेश का पालन करूंगा किन्तु मेरे लिये और भावी प्रजाओं के लिये यहाँ स्थान बतावें ।

## पञ्चदशः श्लोकः

यदोकः सर्वसत्त्वानां मही मग्ना महाम्भसि ।
अस्या उद्धरणे यत्नो देव देव्या विधीयताम् ।।१५।।

पदच्छेद—
यद् ओकः सर्व सत्त्वानाम् मही मग्ना महा अम्भसि ।
अस्या उद्धरणे यत्नः देव देव्याः विधीयताम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ५. | जो | अस्या | १०. | इस पृथ्वी |
| ओकः | ४. | निवास स्थान | उद्धरणे | १२. | उद्धार का |
| सर्व | २. | सभी | यत्नः | १३. | प्रयास |
| सत्त्वानाम् | ३. | जीवों का | देव | १. | हे देव |
| मही | ६. | पृथ्वी है (वह) | देव्याः | ११. | देवी के |
| मग्ना | ९. | डूबी हुई है (अतः) | विधीयताम् ।। | १४. | करें |
| महा | ७. | महा प्रलय के | | | |
| अम्भसि । | ८. | जल में | | | |

श्लोकार्थ—हे देव ! सभी जीवों का निवास स्थान जो पृथ्वी है, वह महाप्रलय के जल में डूबी हुई है, अतः इस पृथ्वी देवी के उद्धार का प्रयास करें ।

## षोडशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—
परमेष्ठी त्वपां मध्ये तथा सन्नामवेक्ष्य गाम् ।
कथमेनां समुन्नेष्य इति दध्यौ धिया चिरम् ।।१६।।

पदच्छेद—
परमेष्ठी तु अपाम् मध्ये तथा सन्नाम् अवेक्ष्य गाम् ।
कथम् एनाम् समुन्नेष्य इति दध्यौ धिया चिरम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परमेष्ठी | ८. | ब्रह्मा जी | कथम् | १३. | कैसे |
| तु | १. | तदनन्तर | एनाम् | १४. | इसे |
| अपाम् | २. | जल के | समुन्नेष्य | १५. | ऊपर लाऊँ |
| मध्ये | ३. | भीतर | इति | १२. | कि |
| तथा | ५. | इस प्रकार | दध्यौ | ११. | सोचने लगे |
| सन्नाम् | ६. | डूबी हुयी | धिया | १०. | बुद्धि से (विचार करते हुये) |
| अवेक्ष्य | ७. | देखकर | चिरम् ।। | ९. | बहुत देर तक |
| गाम् । | ४. | पृथ्वी को | | | |

श्लोकार्थ—तदनन्तर जल के भीतर पृथ्वी को इस प्रकार डूबी हुई देखकर ब्रह्मा जी बहुत देर तक बुद्धि से विचार करते हुये सोचने लगे, कि इसे कैसे ऊपर लाऊं ।

## सप्तदशः श्लोकः

सृजतो मे क्षितिर्वार्भिः प्लाव्यमाना रसां गता ।
अथात्र किमनुष्ठेयमस्माभिः सर्गयोजितैः ।
यस्याहं हृदयादासं स ईशो विदधातु मे ।।१७।।

पदच्छेद— सृजतः मे क्षितिः वार्भिः प्लाव्यमाना रसाम् गता ।
अथ अत्र किम् अनुष्ठेयम् अस्माभिः सर्ग योजितैः ।
यस्य अहम् हृदयात् आसम् सः ईशः विदधातु मे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सृजतः | २. | सृष्टि करते समय | अस्माभिः | ११. | हमें |
| मे | १. | मेरे | सर्ग | ९. | सृष्टि में |
| क्षितिः | ३. | पृथ्वी | योजितैः | १०. | लगे हुये |
| वार्भिः | ४. | जल में | यस्य | १६. | जिसके |
| प्लाव्यमाना | ५. | डूबकर (यह) | अहम् | १५. | मैं |
| रसाम् | ६. | रसातल को | हृदयात् | १७. | हृदय कमल से |
| गता | ७. | चली गयी है | आसम् | १८. | उत्पन्न हुआ हूँ |
| अथ | ८. | अब | सः | १९. | वे |
| अत्र | १२. | इस विषय में | ईशः | २०. | भगवान् श्री हरि ही |
| किम् | १३. | क्या | विदधातु | २२. | पूर्ण करेंगे |
| अनुष्ठेयम् । | १४. | करना चाहिये | मे ।। | २१. | मेरा (यह काम) |

श्लोकार्थ—मेरे सृष्टि करते समय पृथ्वी जल में डूब कर यह रसातल को चली गयी है अब सृष्टि में लगे हुये हमें इस विषय में क्या करना चाहिये । मैं जिसके हृदय कमल से उत्पन्न हुआ हूँ वे भगवान् श्री हरि ही मेरा यह काम पूर्ण करेंगे ।

## अष्टादशः श्लोकः

इत्यभिध्यायतो नासाविवरात्सहसानघ ।
वराहतोको निरगादङ्गुष्ठपरिमाणकः ।।१८।।

पदच्छेद— इति अभिध्यायतः नासा विवरात् सहसा अनघ ।
वराह तोकः निरगाद् अङ्गुष्ठ परिमाणकः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | २. | इस प्रकार | वराह | ८. | शूकर का |
| अभिध्यायतः | ३. | ध्यान करते समय (ब्रह्मा जी की) | तोकः | ९. | एक बच्चा |
| नासा | ४. | नासिका के | निरगाद् | ११. | निकला |
| विवरात् | ५. | छिद्र से | अङ्गुष्ठः | ६. | अँगूठे के |
| सहसा | १०. | अकस्मात् | परिमाणकः ।। | ७. | बराबर |
| अनघ । | १. | हे निष्पाप विदुर जी | | | |

श्लोकार्थ—हे निष्पाप विदुर जी ! इस प्रकार ध्यान करते समय ब्रह्मा जी की नासिका के छिद्र से अँगूठे के बराबर शूकर का एक बच्चा अकस्मात् निकला ।

## नवदशः श्लोकः

तस्याभिपश्यतः खस्थः क्षणेन किल भारत ।
गजमात्रः प्रववृधे तदद्भुतमभून्महत् ।।१९।।

पदच्छेद—

तस्य अभिपश्यतः खस्थः क्षणेन किल भारत ।
गजमात्र प्रववृधे तद् अद्भुतम् अभूत् महत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ७. | ब्रह्मा जी के | गजमात्रः | ११. | हाथी के बराबर |
| अभिपश्यतः | ८ | देखते ही देखते | प्रववृधे | १२. | बड़ा हो गया |
| खस्थः | ९. | आकाश में स्थित (वह वाराह शिशु) | तद् | २. | वह |
| | | | अद्भुतम् | ४. | आश्चर्य |
| क्षणेन | १०. | क्षण भर में | अभूत् | ५. | हुआ |
| किल | ६. | कि | महत् ।। | ३. | बड़ा |
| भारत । | १. | हे विदुर जी | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! वह बड़ा आश्चर्य हुआ कि ब्रह्मा जी के देखते-देखते आकाश में स्थित वह वाराह शिशु क्षण भर में हाथी के बराबर बड़ा हो गया ।

## विंशः श्लोकः

मरीचिप्रमुखैर्विप्रैः कुमारैर्मनुना सह ।
दृष्ट्वा तत्सौकरं रूपं तर्कयामास चित्रधा ।।२०।।

पदच्छेद—

मरीचि प्रमुखैः विप्रैः कुमारैः मनुना सह ।
दृष्ट्वा तत् सौकरम् रूपम् तर्कयामास चित्रधा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मरीचि | ४. | मरीचि | दृष्ट्वा | १०. | देखकर |
| प्रमुखैः | ५. | इत्यादि | तत् | ७. | उस |
| विप्रैः | ६. | ब्राह्मणगण | सौकरम् | ८. | वाराह |
| कुमारैः | ३. | सनकादि कुमार (और) | रूपम् | ९. | रूप को |
| मनुना | १. | मनु के | तर्कयामास | १२. | विचार करने लगे |
| सह । | २. | साथ | चित्रधा ।। | ११. | अनेकों प्रकार से |

श्लोकार्थ—मनु के साथ सनकादि कुमार और मरीचि इत्यादि ब्राह्मण गण उस वाराह रूप को देखकर अनेकों प्रकार से विचार करने लगे ।

## एकविंश: श्लोक:

किमेतत्सौकरव्याजं सत्त्वं दिव्यमवस्थितम् ।
अहो बताश्चर्यमिदं नासाया मे विनिःसृतम् ।।२१।।

पदच्छेद—

किम् एतत् सौकर व्याजम् सत्त्वम् दिव्यम् अवस्थितम् ।
अहोवत आश्चर्यम् इदम् नासायाः मे विनिःसृतम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किम् | ३. | क्या | अहोवत | ८. | अरे ! यह |
| एतत् | ४. | यह | आश्चर्यम | ९. | आश्चर्य (है कि) |
| सौकर | १. | वाराह रूप के | इदम् | १०. | यह |
| व्याजम् | २. | बहाने | नासायाः | १२. | नासिका मे |
| सत्त्वम् | ६. | जीव | मे | ११. | मेरी |
| दिव्यम् | ५. | अलोकिक | विनिःसृतम् ।। | १३. | निकला है |
| अवस्थितम् | ७. | प्रकट हुआ है । | | | |

श्लोकार्थ—वाराह रूप के बहाने क्या यह अलोकिक जीव प्रकट हुआ है ? अरे यह आश्चर्य है, कि यह मेरी नासिका से निकला है ।

## द्वाविंश: श्लोक:

दृष्टोऽङ्गुष्ठशिरोमात्रः क्षणाद्गण्डशिलासमः ।
अपि स्विद्भगवानेष यज्ञो मे खेदयन्मनः ।।२२।।

पदच्छेद—

दृष्टः अंगुष्ठ शिरोमात्रः क्षणात् गण्ड शिलासमः ।
अपि स्वित् भगवान् एष यज्ञः मे खेदयन् मनः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दृष्टः | ३. | दिखायी पड़ा | अपिस्वित् | ७. | क्या |
| अंगुष्ठ | १. | (यह पहले) अँगूठे के | भगवान् | १०. | भगवान् ही |
| शिरोमात्रः | २. | पोर के बराबर | एष | ८. | यह |
| क्षणात् | ४. | क्षण भर में | यज्ञः | ९. | यज्ञपति |
| गण्ड | ५. | बड़े | मे | ११. | मेरे |
| शिलासमः । | ६. | शिला खण्ड के समान हो गया । | खेदयन् | १३. | मोहित कर रहे हैं |
| | | | मनः | १२. | मन को |

श्लोकार्थ—यह पहले अँगूठे के पोर के बराबर दिखायी पड़ा, क्षण भर में बड़े शिला खण्ड के समान हो गया, क्या यह यज्ञपति भगवान् ही मेरे मन को मोहित कर रहे हैं ?

## त्रयोविंश: श्लोक:

इति मीमांसतस्तस्य ब्रह्मणः सह सूनुभिः ।
भगवान् यज्ञपुरुषो जगर्जागेन्द्रसन्निभः ॥२३॥

पदच्छेद—

इति मीमांसतः तस्य ब्रह्मणः सह सूनुभिः ।
भगवान् यज्ञपुरुषः जगर्ज अगेन्द्र सन्निभः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ५. | इस प्रकार | भगवान् | ९. | भगवान् वाराह ने |
| मीमांसतः | ६. | विचार करते समय | यज्ञ | ७. | यज्ञ |
| तस्य | ३. | उन | पुरुषः | ८. | पुरुष |
| ब्रह्मणः | ४. | ब्रह्मा जी के | जगर्ज | १२. | गर्जना की |
| सह | २. | साथ | अगेन्द्र | १०. | मेघ के |
| सूनुभिः । | १. | पुत्रों के | सन्निभः ॥ | ११. | समान |

श्लोकार्थ—पुत्रों के साथ उन ब्रह्मा जी के इस प्रकार विचार करते समय यज्ञ पुरुष भगवान् वाराह ने मेघ के समान गर्जना की ।

## चतुर्विंश: श्लोक:

ब्रह्माणं हर्षयामास हरिस्तांश्च द्विजोत्तमान् ।
स्वगर्जितेन ककुभः प्रतिस्वनयता विभुः ॥२४॥

पदच्छेद—

ब्रह्माणम् हर्षयामास हरिः तान् च द्विज उत्तमान् ।
स्वगर्जितेन ककुभः प्रतिस्वनयता विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्माणम् | ८. | ब्रह्मा जी को | स्व | १. | अपनी |
| हर्षयामास | १३. | प्रसन्न किया | गर्जितेन | २. | गर्जना से |
| हरिः | ७. | वाराहावतार श्री हरि ने | ककुभः | ३. | दिशाओं को |
| तान् | १०. | उन | प्रति | ४. | प्रति |
| च | ९. | और | स्वनयता | ५. | ध्वनित करते हुये |
| द्विज | १२. | विप्रों को | विभुः ॥ | ६. | भगवान् |
| उत्तमान् । | ११. | श्रेष्ठ | | | |

श्लोकार्थ—अपनी गर्जना से दिशाओं को प्रतिध्वनित करते हुये भगवान् वाराहावतार श्री हरि ने ब्रह्मा जी को और उन श्रेष्ठ विप्रों को प्रसन्न किया ।

## पञ्चविंशः श्लोक

निशम्य ते घर्घरितं स्वखेदक्षयिष्णु मायामयसूकरस्य ।
जनस्तपःसत्यनिवासिनस्ते त्रिभिः पवित्रैर्मुनयोऽगृणन् स्म ॥२५॥

पदच्छेद— निशम्य ते घर्घरितम् स्वखेद क्षयिष्णु मायामय सूकरस्य ।
जनः तपः सत्य निवासिनः ते त्रिभिः पवित्रैः मुनयः अगृणन् स्म ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निशम्य | १२. | सुनकर | जनः | १. | जन लोक |
| ते | १३. | वे लोग | तपः | २. | तपोलोक और |
| घर्घरितम् | ११. | घर्र्-घर्र् की ध्वनि को | सत्य | ३. | सत्य लोक के |
| स्वखेद | ९. | अपने संकट को | निवासिनः | ४. | निवासी |
| क्षयिष्णु | १०. | दूर करने वाली | ते | ५. | वे |
| मायामय | ७. | माया से निर्मित | त्रिभिः | १५. | तीनों वेदों से (उनकी) |
| सूकरस्य । | ८. | वाराह रूप वाले (भगवान्) की | पवित्रैः | १४. | परम पावन |
| | | | मुनयः | ६. | मुनि जन |
| | | | अगृणन् स्म ॥ | १६. | स्तुति करने लगे । |

श्लोकार्थ—जन लोक, तपो लोक और सत्य लोक के निवासी वे मुनिजन माया से निर्मित वाराह रूप वाले भगवान् की अपने संकट को दूर करने वाली घर्र-घर्र की ध्वनि को सुनकर वे लोग परम पावन तीनों वेदों से उनकी स्तुति करने लगे ।

## षड्विंशः श्लोकः

तेषां सतां वेदवितानमूर्तिर्ब्रह्मावधार्यात्मगुणानुवादम् ।
विनद्य भूयो विबुधोदयाय गजेन्द्रलीलो जलमाविवेश ॥२६॥

पदच्छेद— तेषाम् सताम् वेदवितान मूर्तिः ब्रह्म अवधार्य आत्मगुणानुवादम् ।
विनद्य भूयः विबुध उदयाय गजेन्द्र लीलः जलम् आविवेश ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषाम् | ३. | उन | विनद्य | १०. | गर्जना की (तथा) |
| सताम् | ४. | ऋषियों के द्वारा की गयी | भूयः | ९. | फिर से |
| वेद-वितान | १. | वेद में वर्णित | विबुध | ११. | देवताओं के |
| मूर्तिः | २. | स्वरूप वाले (भगवान् वाराह) | उद्याय | १२. | हित के लिये |
| ब्रह्म | ७. | वेद | गजेन्द्र | १३. | गजराज की सी |
| अवधार्य | ८. | समझ कर | लीलः | १४. | लीला करते हुये |
| आत्म | ५. | अपनी | जलम् | १५. | जल में |
| गुणानुवादम् । | ६. | स्तुति को | आविवेश ॥ | १६. | प्रवेश कर गये |

श्लोकार्थ—वेद में वर्णित स्वरूप वाले भगवान् वाराह ने उन ऋषियों के द्वारा की गयी अपनी स्तुति को वेद समझ कर फिर से गर्जना की, तथा देवताओं के हित के लिये गजराज की सी लीला करते हुये जल में प्रवेश कर गये ।

## सप्तविंश: श्लोक:

**उत्क्षिप्तवालः खचरः कठोरः सटा विधुन्वन् खररोमशत्वक् ।**
**खुराहताभ्रः सितदंष्ट्र ईक्षाज्योतिर्बभासे भगवान्महीध्रः ॥ २७॥**

पदच्छेद— उत्क्षिप्त वालः खचरः कठोरः सटा विधुन्वन् खर रोमशत्वक् ।
खुर आहत अभ्रः सित दंष्ट्रः ईक्षा ज्योतिः बभासे भगवान् महीध्रः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उत्क्षिप्त | ४. | उठाकर (और) | खुर | १६. | अपने खुरों से |
| वालः | ३. | अपनी पूंछ को | आहत | १८. | चीर रहे थे |
| खचरः | ५. | आकाश में (उछल कर) | अभ्रः | १७. | बादलों को |
| कठोरः | १५. | कठोर थे (तथा) | सितदंष्ट्रः | ८. | सफेद-दांतों (और) |
| सटा | ६. | कंधे के बालों को | ईक्षा | ९. | आंख की |
| विधुन्वन् | ७. | हिलाते हुये | ज्योतिः | १०. | चमक से |
| खर | १४. | तीखे (और) | बभासे | ११. | सुशोभित हो रहे थे |
| रोमश | १३. | रोयें | भगवान् | २. | भगवान् श्री हरि |
| त्वक् । | १२. | (उनकी) चमड़ी के | महीध्रः ॥ | १. | वाराह रूप धारी |

श्लोकार्थ—वाराह रूपधारी भगवान् श्री हरि अपनी पूंछ को उठाकर और आकाश में उछलकर, कंधे के बालों को हिलाते हुये सफेद दांतों और आंख की चमक से सुशोभित हो रहे थे। उनकी चमड़ी के रोयें तीखे और कठोर थे तथा अपने खुरों से बादलों को चीर रहे थे।

## अष्टाविंश: श्लोक:

**घ्राणेन पृथ्व्याः पदवीं विजिघ्रन् क्रोडापदेशः स्वयमध्वराङ्गः ।**
**करालदंष्ट्रोऽप्यकरालदृग्भ्यामुद्वीक्ष्य विप्रान् गृणतोऽविशत्कम् ॥२८॥**

पदच्छेद— घ्राणेन पृथ्व्याः पदवीम् विजिघ्रन्, क्रोडापदेशः स्वयम् अध्वर अङ्गः ।
करालदंष्ट्रः अपि अकराल दृग्भ्याम् उद्वीक्ष्य विप्रान् गृणतः अविशत् कम् ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| घ्राणेन | ५. | अपनी नाक से | कराल दंष्ट्रः | ९. | भयानक दाढ़ें होने पर |
| पृथ्व्याः | ७. | पृथ्वी का | अपि | १०. | भी (उन्होंने) |
| पदवीम् | ८. | पता लगा रहे थे | अकराल,दृग्भ्याम् | १३. | मृदुल नेत्रों से |
| विजिघ्रन् | ६. | सूंघ-सूंघ कर | उद्वीक्ष्य | १४. | देखकर |
| क्रोड, अपदेशः | १. | शूकर रूपधारी | विप्रान् | १२. | ब्राह्मणों को |
| स्वयम् | २. | साक्षात् | गृणतः | ११. | स्तुति करने लगे |
| अध्वर | ३. | यज्ञ | अविशत् | १६. | प्रवेश किया |
| अङ्गः । | ४. | पुरुष (भगवान्) | कम् ॥ | १५. | जल में |

श्लोकार्थ—शूकर रूपधारी साक्षात् यज्ञ पुरुष भगवान् अपनी नाक से सूंघ-सूंघकर पृथ्वी का पता लगा रहे थे। भयानक दाढ़ें होने पर भी उन्होंने स्तुति करने वाले ब्राह्मणों को मृदुल नेत्रों से देखकर जल में प्रवेश किया।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

स वज्रकूटाङ्गनिपातवेगविशीर्णकुक्षिः स्तनयन्नुदन्वान् ।
उत्सृष्टदीर्घोर्मिभुजैरिवार्तश्चुक्रोश यज्ञेश्वर पाहि मेति ॥२९॥

पदच्छेद— सः वज्रकूट अङ्ग निपातवेग विशीर्ण कुक्षिः स्तनयन् उदन्वान् ।
उत्सृष्ट दीर्घउर्मि भुजैः इव आर्तः चुक्रोश यज्ञेश्वर पाहि मेति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ८. | वह समुद्र | दीर्घ, उर्मि | १०. | उत्ताल तरंगरूपी |
| वज्रकूट | १. | वज्र के पर्वत के समान | भुजैः | ११. | भुजाओं को |
| अङ्ग निपात | २. | उनके शरीर के, गिरने के | इव | १३. | मानों |
| वेग | ३. | वेग से | आर्तः | ९. | दुःखी होकर (और) |
| विशीर्ण | ६. | फट गया। (और) | चुक्रोश | १४. | पुकार रहा हो |
| कुक्षिः | ५. | पेट | यज्ञेश्वर | १५. | हे यज्ञेश्वर ! आप |
| स्तनयन् | ७. | भीषण शब्द हुआ | पाहि | १७. | रक्षा करो |
| उदन्वान् | ४. | समुद्र का | मेति ॥ | १६. | मेरी |
| उत्सृष्ट । | १२. | उठाकर | | | |

श्लोकार्थ—वज्र के पर्वत के समान उनके शरीर के गिरने के वेग से समुद्र का पेट फट गया और भीषण शब्द हुआ, वह समुद्र दुःखी होकर और उत्ताल तरंग रूपी भुजाओं को उठाकर मानों पुकार रहा हो। हे यज्ञेश्वर आप मेरी रक्षा करो ॥

# त्रिंशः श्लोकः

खुरैः क्षुरप्रैर्दरयंस्तदाऽऽप, उत्पारपारम् त्रिपरू रसायाम् ।
ददर्श गां तत्र सुषुप्सुरग्रे, यां जीवधानीम् स्वयमभ्यधत्त ॥३०॥

पदच्छेद— खुरैः क्षुरप्रैः दरयन् तदा आपः, उत्पार पारम् त्रिपरू रसायाम् ।
ददर्श गाम् तत्र सुषुप्सुः अग्रे, याम् जीवधानीम् स्वयम् अभ्यधत्त ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| खुरैः | ३. | अपने खुरों से | ददर्श | १२. | देखा |
| क्षुरप्रैः | २. | छुरे के समान तीखे | गाम् | ११. | पृथ्वी को |
| दरयन् | ५. | चीरते हुये | तत्र | ९. | वहाँ उन्होंने |
| तदा | १. | उस समय (भगवान् वाराह) | सुषुप्सुः | १५. | शयन करते समय |
| आपः | ४. | अपार जलराशि को | अग्रे | १४. | प्रलय काल में |
| उत्पारपारम् | ६. | उसके उस पार | याम् | १३. | जिसे |
| त्रिपरू | ८. | पहुँचे | जीवधानीम् | १०. | जीवों का आश्रय |
| रसायाम् । | ७. | रसातल में | स्वयम् | १६. | अपने में |
| | | | अभ्यधत्त ॥ | १७. | धारण किया था |

श्लोकार्थ—उस समय भगवान् वाराह छुरे के समान तीखे अपने खुरों से अपार जलराशि को चीरते हुये उसके उस पार रसातल में पहुँचे, वहाँ उन्होंने जीवों का आश्रय पृथ्वी को देखा। जिसे प्रलय काल में शयन करते समय अपने में धारण किया था।

# एकत्रिंशः श्लोकः

स्वदंष्ट्रयोद्धृत्य महीं निमग्नां स उत्थितः संरुरुचे रसायाः ।
तत्रापि दैत्यं गदयाऽऽपतन्तं सुनाभसंदीपिततीव्रमन्युः ।।३१।।

पदच्छेद— स्वदंष्ट्रयः उद्धृत्य महीम् निमग्नाम्, सः उत्थितः संरुरुचे रसायाः ।
तत्र अपि दैत्यम् गदया आपतन्तम्, सुनाभ सन्दीपित तीव्र मन्युः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वदंष्ट्रयः | ४. अपनी दाढ़ों से | तत्र | ९. वहाँ (मार्ग में) |
| उद्धृत्य | ५. उठाकर | अपि | १०. भी |
| महीम् | ३. पृथ्वी को | दैत्यम् | १३. दैत्यराज (हिरण्याक्ष को देख कर) |
| निमग्नाम् | २. जल में डूबी हुई | | |
| सः | १. वे (वाराह भगवान्) | गदया | ११. गदा लेकर |
| उत्थितः | ७. ऊपर आये (उस समय उनकी) | आपतन्तम् | १२. लड़ाई के लिये आते हुये |
| संरुरुचे | ८. बड़ी शोभा हो रही थी | सुनाभ | १६ चक्र सुदर्शन के समान |
| रसायाः। | ६. रसातल से | सन्दीपित | १५ जलते हुये |
| | | तीव्र | १७. तीक्ष्ण (हो गया) |
| | | मन्युः ।। | १४. उनका क्रोध |

श्लोकार्थ—वे वाराह भगवान् जल में डूबी हुई पृथ्वी को अपनी दाढ़ों से उठाकर रसातल से ऊपर आयें। उस समय उनकी बड़ी शोभा हो रही थी। वहाँ मार्ग में भी गदा लेकर लड़ाई के लिये आते हुये, दैत्यराज हिरण्याक्ष को देखकर उनका क्रोध जलते हुये चक्र सुदर्शन के समान तीक्ष्ण हो गया।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

जघान रुन्धानमसह्यविक्रमं स लीलयेभं मृगराडिवाम्भसि ।
तद्रक्तपङ्काङ्कितगण्डतुण्डो यथा गजेन्द्रो जगतीं विभिन्दन् ।।३२।।

पदच्छेद— जघान रुन्धानम् असह्य विक्रमम्, सः लीलया इभम् मृगराट् इव अम्भसि ।
तद् रक्त पङ्क अङ्कित गण्ड तुण्डः, यथा गजेन्द्रः जगतीम् विभिन्दन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| जघान | ७. मार डाला | अम्भसि | २. जल में |
| रुन्धानम् | ३. (रास्ता) रोकने वाले | तद्रक्त पङ्क | ११. उसके खून के द्रव्य से |
| असह्य | ४. असहनीय | अङ्कित | १३. सन जाने से (वे भगवान्) |
| विक्रमम् | ५. पराक्रमी (हिरण्याक्ष को) | गण्ड, तुण्डः | १२. कनपटी और थूथनी के |
| सः | १. वाराह रूपधारी (भगवान् ने) | यथा | १७. समान (लग रहे थे) |
| लीलया | ६. खेल-खेल में | गजेन्द्रः | १६. गजराज के |
| इभम् | १०. हाथी को (मार डालता है) | जगतीम् | १४. लाल मिट्टी के टीले में |
| मृगराट् | ९. सिंह | विभिन्दन् ।। | १५. टक्कर मारे हुये |
| इव । | ८. जैसे | | |

श्लोकार्थ—वाराह रूपधारी भगवान् ने जल में रास्ता रोकने वाले असहनीय पराक्रमी हिरण्याक्ष को खेल-खेल में मार डाला। जैसे सिंह हाथी को मार डालता है। उसके खून के द्रव्य से कनपटी और थूथनी के सन जाने से वे भगवान् लाल मिट्टी के टीले में टक्कर मारे हुये गजराज के समान लग रहे थे।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**तमालनीलं सितदन्तकोटया क्ष्मामुत्क्षिपन्तं गजलीलयाङ्ग ।**
**प्रज्ञाय बद्धाञ्जलयोऽनुवाकैर्विरिञ्चिमुख्या उपतस्थुरीशम् ॥३३॥**

पदच्छेद— तमालनीलम् सितदन्त कोटया, क्ष्माम् उत्क्षिपन्तम् गज लीलयाअङ्ग ।
प्रज्ञाय बद्ध अञ्जलयः अनुवाकैः विरिञ्चि मुख्याः उपतस्थुः ईशम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तमाल, नीलम् | ८. | तमाल वृक्ष के समान सांवले (भगवान् को) | प्रज्ञाय | ९. | देखकर |
| | | | बद्ध | १३. | जोड़ कर |
| सितदन्त | ४. | सफेद (दातों के) | अञ्जलयः | १२. | हाथ |
| कोटया | ५. | अग्रभाग से | अनुवाकैः | १४. | वेद मन्त्रों से |
| क्ष्माम् | ६. | पृथ्वी को | विरिञ्चि | १०. | ब्रह्मा |
| उत्क्षिपन्तम् | ७. | उठाये हुये | मुख्याः | ११. | मरीचि इत्यादि (मुनिजन) |
| गज | २. | गजराज की | उपतस्थुः | १६. | स्तुति करने लगे |
| लीलया | ३. | कमल लीला के समान | ईशम् ॥ | १५. | (उन) प्रभु की |
| अङ्ग । | १. | हे तात ! | | | |

श्लोकार्थ—हे तात ! गजराज की कमल लीला के समान सफेद दातों के अग्रभाग से पृथ्वी को उठाये हुये, तमाल वृक्ष के समान सांवले भगवान् को देखकर ब्रह्मा, मरीचि इत्यादि मुनिजन हाथ जोड़कर वेदमन्त्रों से उन प्रभुकी स्तुति करने लगे ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ऋषय ऊचुः—

**जितं जितं तेऽजित यज्ञभावन त्रयीं तनुं स्वां परिधुन्वते नमः ।**
**यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरास्तस्मै नमः कारणसूकराय ते ॥३४॥**

पदच्छेद— जितम्-जितम् ते अजित यज्ञभावन, त्रयीम् तनुम् स्वाम् परिधुन्वते नमः ।
यद् रोमगर्तेषु निलिल्युः अध्वराः, तस्मै नमः कारण सूकराय ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जितम्-जितम् | ४. | जय हो जय हो | यद् | १०. | जिस शरीर के |
| ते | ३. | आपकी | रोमगर्तेषु | ११. | रोम कूपों में |
| अजित | २. | हे अजित भगवान् | निलिल्युः | १३. | छिपे रहते हैं |
| यज्ञ, भावन | १. | यज्ञ स्वरूप | अध्वराः | १२. | यज्ञ |
| त्रयीम् | ५. | वेदरूप | तस्मै | १६. | उन |
| तनुम् | ७. | देह को | नमः | १८. | नमस्कार है |
| स्वाम् | ६. | अपनी | कारण | १४. | पृथ्वी के उद्धार के लिये |
| परिधुन्वते | ८. | फटकारते हुये (आपको) | सूकराय | १५. | वाराह रूप धारण करने वाले |
| नमः । | ९. | नमस्कार है | ते ॥ | १७. | आपको |

श्लोकार्थ—यज्ञ स्वरूप हे अजित भगवान् ! आपकी जय हो जय हो । वेदरूप अपनी देह को फटकारते हुये आपको नमस्कार है । जिस शरीर के रोमकूपों में यज्ञ छिपे रहते हैं, पृथ्वी के उद्धार के लिये

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

रूपं तवैतन्ननु दुष्कृतात्मनां दुर्दर्शनं देव यदध्वरात्मकम् ।
छन्दांसि यस्य त्वचि बर्हिरोमस्वाज्यं दृशि त्वङ्घ्रिषु चातुर्होत्रम् ॥३५॥

पदच्छेद — रूपम् तव एतत् ननु दुष्कृतात्मनाम् दुःदर्शनम् देव यद् अध्वर आत्मकम् ।
छन्दांसि यस्य त्वचि बर्हि रोमसु आज्यम् दृशि तु अङ्घ्रिषु चातुः होत्रम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| रूपम् | ५. शरीर का | छन्दांसि | ११. | गायत्री आदि छन्द |
| तव | ३. आपके | यस्य त्वचि | १०. | इस शरीर की चमड़ी में |
| एतत् | ४. इस | बर्हि | १३. | कुशा |
| ननु | ६. अवश्य | रोमसु | १२. | रोमों में |
| दुष्कृतात्मनाम् | २. दुराचारियों को | आज्यम् | १५. | घी |
| दुःदर्शनम् | ७. दर्शन कठिन (है) | दृशि | १४. | नेत्रों में |
| देव | १. हे भगवन् ! | तु अङ्घ्रिषु | १६. | तथा चारों पैरों में |
| यद् अध्वर | ८. क्योंकि (यह) यज्ञ | चातुः | १७. | चारों होताओं के |
| आत्मकम् । | ९. स्वरूप है | होत्रम् ॥ | १८. | कर्म हैं । |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! दुराचारियों को आपके इस शरीर का दर्शन अवश्य कठिन है क्योंकि यह यज्ञ स्वरूप है । इस शरीर की चमड़ी में गायत्री आदि छन्द रोमों में कुशा नेत्रों में घी तथा चारों पैरों में चारों होताओं के कर्म हैं ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

स्रुक्तुण्ड आसीत्स्रुव ईश नासयोरिडोदरे चमसाः कर्णरन्ध्रे ।
प्राशित्रमास्ये ग्रसने ग्रहास्तु ते यच्चर्वणं ते भगवन्नग्निहोत्रम् ॥३६॥

पदच्छेद— स्रुक् तुण्ड आसीत् स्रुवः ईश नासयोः इडा उदरे चमसाः कर्णरन्ध्रे ।
प्राशित्रम् आस्ये ग्रसने ग्रहाः तु ते, यत् चर्वणम् ते भगवन् अग्निहोत्रम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| स्रुक् | ३. स्रुक् | प्राशित्रम् | ११. | प्राशित्र |
| तुण्ड | २. थूथने में | आस्ये | १०. | मुख में |
| आसीत् | १५. विद्यमान हैं | ग्रसने | १३. | कण्ठ में |
| स्रुवः | ५. स्त्रुवा | ग्रहाः | १४. | ग्रह |
| ईश | १. हे भगवान् आपके | तु | १२. | तथा |
| नासयोः | ४. दोनों नासिकाओं में | ते | २०. | आपके |
| इडा | ७. इडा | यत् चर्वणम् | १८. | जो चबाना है (वही) |
| उदरे | ६. उदर में | ते | १७. | आपका |
| चमसाः | ९. चमस | भगवन् | १६. | हे भगवन् |
| कर्णरन्ध्रेः । | ८. कानों के छिद्र में | अग्निहोत्रम् ॥ | १९. | हवन है । |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपके थूथने में स्रुक दोनों नासिकाओं में स्त्रुवा, उदर में इडा, कानों के छिद्र में चमस, मुख में प्राशित्र तथा कण्ठ में ग्रह, विद्यमान है । हे भगवन् ! आपका जो चबानाहै वही हवन है ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

दीक्षानुजन्मोपसदः शिरोधरं त्वं प्रायणीयोदयनीयदंष्ट्रः ।
जिह्वा प्रवर्ग्यस्तव शीर्षकं क्रतोः सभ्यावसथ्यं चितयोऽसवो हि ते ।।३७।।

पदच्छेद— दीक्षा अनुजन्म उपसदः शिरोधरम् त्वम् प्रायणीय उदयनीय दंष्ट्रः ।
जिह्वा प्रवर्ग्यः तव शीर्षकम् क्रतोः सभ्य आवसथ्यम् चितयः असवः हि ते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दीक्षा | ३. | दीक्षणीय इष्टि है | जिह्वा | ११. | जीभ |
| अनुजन्म | २. | बार-बार अवतार | प्रवर्ग्यः | १२. | महावीर कर्म (है) |
| उपसदः | ५. | उपसद (है) | तव | १०. | आपकी |
| शिरोधरम् | ४. | गर्दन | शीर्षकम् | १३. | मस्तक |
| त्वम् | ६. | आपकी | क्रतोः | १. | हे भगवन् ! यज्ञस्वरूप (आपका) |
| प्रायणीय | ८. | दीक्षा के बाद की इष्टि (और) | सभ्य | १४. | होम रहित अग्नि और |
| उदयनीय | ९. | उदयनीय यज्ञ समाप्ति की इष्टि (है) | आवसथ्यम् | १५. | गृहस्थाग्नि है |
| दंष्ट्रः । | ७. | दाढ़ें | चितयः | १८. | इष्टि का चयन हैं |
| | | | असवः | १७. | प्राण |
| | | | हि, ते ।। | १६. | तथा आपके |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! यज्ञ स्वरूप आपका बार-बार अवतार दीक्षणीय इष्टि है, गर्दन उपसद है, आपकी दाढ़ें दीक्षा के बाद की इष्टि और उदयनीय यज्ञ समाप्ति की इष्टि है, आपकी जीभ महावीर कर्म है, मस्तक होम रहित अग्नि और गृहस्थाग्नि है, तथा आपके प्राण इष्टि का चयन हैं ।

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

सोमस्तु रेतः सवनान्यवस्थितिः संस्थाविभेदास्तव देव धातवः ।
सत्राणि सर्वाणि शरीरसन्धिस्त्वं सर्वयज्ञक्रतुरिष्टिबन्धनः ।।३८।।

पदच्छेद— सोमः तु रेतः सवनानि अवस्थितिः, संस्था विभेदाः तव देव धातवः ।
सत्राणि सर्वाणि शरीर सन्धिः, त्वम् सर्व यज्ञ क्रतुः इष्टि बन्धनः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सोमः | ४. | सोम रस है | सत्राणि | १३. | यज्ञ है |
| तु | ५. | तथा | सर्वाणि | १२. | सम्पूर्ण |
| रेतः | ३. | वीर्य | शरीर | १०. | देह के |
| सवनानि | ७. | तीनों सवन हैं (प्रातः, मध्याह्न और सायं) | सन्धिः | ११. | जोड़ |
| | | | त्वम्, सर्व | १६. | आप, समस्त |
| अवस्थितिः | ६. | आसन | यज्ञ क्रतुः | १७. | सोम रहित याग (और) सोम सहित याग है। |
| संस्था, विभेदाः | ९. | संस्थाओं के सात प्रकार हैं | | | |
| तव, देव | १. २. | आपका हे भगवन् | इष्टि | १५. | यज्ञानुष्ठान हैं |
| धातवः । | ८. | सातों धातुयें | बन्धनः ।। | १४. | मांस पेशियाँ |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपका वीर्य सोमरस है तथा आसन प्रातः मध्याह्न और सायं तीनों सवन हैं, सातों धातुयें संस्थाओं के सात प्रकार हैं । देह के जोड़ सम्पूर्ण यज्ञ हैं, मांस पेशियाँ यज्ञानुष्ठान हैं, आप समस्त सोम रहित याग और सोम सहित याग हैं ।

## नवत्रिंश: श्लोक:

नमो नमस्तेऽखिलमन्त्रदेवताद्रव्याय सर्वक्रतवे क्रियात्मने ।
वैराग्यभक्त्यात्मजयानुभावितज्ञानाय विद्यागुरवे नमो नमः ।।३९।।

पदच्छेद—

नमः नमः ते अखिल मन्त्र देवता द्रव्याय सर्वक्रतवे क्रिया आत्मने ।
वैराग्य भक्ति आत्मजय अनुभावित ज्ञानाय विद्या गुरवे नमः नमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः नमः | २. | नमस्कार है नमस्कार है | वैराग्य | ९. | वैराग्य |
| ते | १. | हे भगवन् ! आपको | भक्ति | १०. | भक्ति (और) |
| अखिल, मन्त्र | ३. | (आप) सम्पूर्ण मन्त्र | आत्मजय | ११. | समाधि में |
| देवता, द्रव्याय | ४. | देवता, यज्ञ सामग्री | अनुभावित | १३. | अनुभव कराने वाले |
| सर्व | ५. | सभी प्रकार के | ज्ञानाय | १२. | ज्ञान का |
| क्रतवे | ६. | यज्ञ (और) | विद्या | १४. | विद्याओं के |
| क्रिया | ७. | कर्म | गुरवे | १५. | गुरु (आपको) |
| आत्मने । | ८. | स्वरूप हैं | नमः नमः ।। | १६. | बार-बार नमस्कार है |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपको नमस्कार है नमस्कार है। आप सम्पूर्ण मन्त्र देवता, यज्ञ सामग्री, सभी प्रकार के यज्ञ और कर्म स्वरूप हैं। वैराग्य भक्ति और समाधि में ज्ञान का अनुभव कराने वाले विद्याओं के गुरु आपको बार-बार नमस्कार है।

## चत्वारिंश: श्लोक:

दंष्ट्राग्रकोटया भगवंस्त्वया धृता, विराजते भूधर भूः सभूधरा ।
यथा वनान्निःसरतो दता धृता, मतङ्गजेन्द्रस्य सपत्रपद्मिनी ।।४०।।

पदच्छेद—

दंष्ट्र अग्र कोटया भगवन् त्वया धृता विराजते भूधर भूः सभूधरा ।
यथा वनात् निःसरतः दता धृता, मतङ्गज इन्द्रस्य सपत्र पद्मिनी ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दंष्ट्र | ४. | दाढ़ों की | यथा | १०. | जैसे |
| अग्रकोटया | ५. | नोंक पर | वनात् | ११. | जंगल में |
| भगवन् | २. | हे भगवन् | निःसरतः | १२. | निकलते हुये |
| त्वया | ३. | आपकी | दता | १५. | दांत पर |
| धृता | ६. | धारण की गयी | धृता | १८. | रखी गयी हो |
| विराजते | ९. | शोभित होती है | मतङ्गज | १३. | गज |
| भूधर | १. | पृथ्वी को धारण करने वाले | इन्द्रस्य | १४. | राज के |
| भूः | ८. | पृथ्वी (ऐसी) | सपत्र | १६. | पत्तों के सहित |
| सभूधरा । | ७. | पर्वतों के साथ | पद्मिनी ।। | १७. | कमलिनी |

श्लोकार्थ—पृथ्वी को धारण करने वाले हे भगवन् ! आपकी दाढ़ों की नोंक पर धारण की गयी पर्वतों के साथ पृथ्वी ऐसी शोभित होती है जैसे जंगल में निकलते हुये गजराज के दांत पर पत्तों सहित कमलिनी रखी गयी हो।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

**त्रयीमयं रूपमिदं च सौकरं भूमण्डलेनाथ दता धृतेन ते ।**
**चकास्ति शृङ्गोढघनेन भूयसा कुलाचलेन्द्रस्य यथैव विभ्रमः ।।४१।।**

पदच्छेद— त्रयीमयम् रूपम् इदम् च सौकरम् भूमण्डलेन अथ दता धृतेन ते ।
चकास्ति शृङ्ग ऊढ धनेन भूयसा, कुलाचल इन्द्रस्य यथैव विभ्रमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| त्रयीमयम् | ६. वेदमय | | चकास्ति | १०. शोभा देता है। |
| रूपम् | ८. शरीर | | शृङ्ग | १४. शिखर पर |
| इदम् च | ५. यह | | ऊढ | १५. छायी हुयी |
| सौकरम् | ७. वाराह रूप | | घनेन | १७. मेघ माला की |
| भूमण्डलेन | ३. पृथ्वी से | | भूयसा | १६. घनी |
| अथ | ६. ऐसी | | कुलाचल | १२. कुलाचल |
| दता | १. हे भगवन् ! दाँतों पर | | इन्द्रस्य | १३. पर्वतराज की |
| धृतेन | २. धारण की गयी | | यथैव | ११. जैसी |
| ते । | ४. आपका | | विभ्रमः ।। | १८. शोभा (होती है) |

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! दाँतों पर धारण को गयी पृथ्वी से आपका यह वेद मय वाराह रूप शरीर ऐसी शोभा देता है, जैसी कुलाचल पर्वतराज की शिखर पर छायी हुयी घनी मेघ माला की शोभा होती है।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

**संस्थापयैनां जगतां सतस्थुषां लोकाय पत्नीमसि मातरं पिता ।**
**विधेम चास्यै नमसा सह त्वया यस्यां स्वतेजोऽग्निमिवारणावधाः ।।४२।।**

पदच्छेद— संस्थापय एनाम् जगताम् सतस्थुषाम् लोकाय पत्नीम् असि मातरम् पिता ।।
विधेम चअस्यै नमसा सह त्वया यस्याम् स्वतेजः अग्निम् इव अरणौ अवधाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| संस्थापय | ७. जल के ऊपर स्थापित कीजिये | विधेम च | १३. करते हैं |
| एनाम् | ५. इस | अस्यै नमसा | १२. इसे प्रणाम |
| जगताम् | १. हे भगवन् ! चर | सह | ११. साथ |
| सतस्थुषाम् | २. अचर जीवों के | त्वया | १०. (हम) आपके |
| लोकाय | ३. कल्याण के लिये | यस्याम् | १७. जिस (पृथ्वी) में |
| पत्नीम् | ४. अपनी पत्नी | स्वतेजः | १८. आपने अपनी धारणा शक्ति क |
| असि | ९. हैं | अग्निम् | १५. अग्नि स्थापन के |
| मातरम् | ६. जगन्माता को | इव | १६. समान |
| पिता । | ८. आप जगत् के पिता | अरणौ | १४. अरणी में |
| | | अवधाः ।। | १९. स्थापित किया है। |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! चर अचर जीवों के कल्याण के लिये अपनी पत्नी इस जगत्माता को जल के ऊपर स्थापित कीजिये। आप जगत् के पिता है। हम आपके साथ इसे प्रणाम करते हैं। अरणी में अग्नि स्थापन के समान जिस पृथ्वी में आपने अपनी धारणा शक्ति को स्थापित किया है।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

कः श्रद्दधीतान्यतमस्तव प्रभो रसां गताया भुव उद्विबर्हणम् ।
न विस्मयोऽसौ त्वयि विश्वविस्मये यो माययेदं ससृजेऽतिविस्मयम् ॥४३॥

पदच्छेद— कः श्रद्दधीत अन्यतमः तव प्रभो, रसाम् गतायाः भुवः उद्वि बर्हणम् ।
न विस्मय असौ त्वयि विश्व विस्मये यः मायया इदम् ससृजे अति विस्मयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | ८. | कौन | न | १५. | नहीं है |
| श्रद्दधीत | ९. | कर सकता है | विस्मयः | १४. | आश्चर्य |
| अन्यतमः | ७. | सिवाय (और) | असौ | १३. | यह कोई |
| तव | ६. | आपके | त्वयि | १२. | आपके विषय में |
| प्रभो | १. | हे भगवन् ! | विश्व | १०. | सम्पूर्ण |
| रसाम् | २. | रसातल में | विस्मये | ११. | आश्चर्यों से युक्त |
| गतायाः | ३. | गयी हुयी | यः मायया | १६. | जिसे आपने (अपनी) माया से |
| भुवः | ४. | पृथ्वी का | इदम्, ससृजे | १७. | इस (संसार की) रचना की है |
| उद्विबर्हणम् । | ५. | उद्धार | अति,विस्मयम् ॥ | ८. | अति आश्चर्यमय |

श्लोकार्थ— हे भगवन् ! रसातल में गयी हुयी पृथ्वी का उद्धार आपके सिवाय और कौन कर सकता है ? सम्पूर्ण आश्चर्यों से युक्त आपके विषय में यह कोई आश्चर्य नहीं है। जिसे आपने अपनी माया से अति आश्चर्यमय इस संसार की रचना की है।

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

विधुन्वता वेदमयं निजं वपुर्जनस्तपःसत्यनिवासिनो वयम् ।
सटाशिखोद्धूतशिवाम्बुबिन्दुभिर्विमृज्यमाना भृशमीश पाविताः ॥४४॥

पदच्छेद— विधुन्वता वेदमयम् निजम् वपुः जनः तपः सत्य निवासिनः वयम् ।
सटा शिखा उद्धूत शिव अम्बु बिन्दुभिः विमृज्यमाना भृशम् ईश पाविताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विधुन्वता | ५. | हिलाते समय | सटा | ६. | गर्दन के |
| वेदमयम् | २. | वेद स्वरूप | शिखा | ७. | बालों से |
| निजम् | ३. | अपने | उद्धूत | ८. | झड़ी हुई |
| वपुः | ४. | शरीर को | शिव | ९. | शीतल |
| जनः | १३. | जन लोक | अम्बु | १०. | जल की |
| तपः | १४. | तपलोक (और) | बिन्दुभिः | ११. | बूँदों से |
| सत्य | १५. | सत्य लोक में | विमृज्यमाना | १२. | भीगे हुये |
| निवासिनः | १६. | रहने वाले | भृशम् | १८. | सर्वथा |
| वयम् । | १७. | हम मुनिजन | ईश | १. | हे ईश |
| | | | पाविताः ॥ | १९. | पवित्र हो गये । |

श्लोकार्थ— हे ईश ! वेद स्वरूप अपने शरीर को हिलाते समय गर्दन के बालों से झड़ी हुयी शीतल जल की बूँदों से भीगे हुये जन लोक, तप लोक और सत्य लोक में रहने वाले हम मुनि-जन सर्वथा पवित्र हो गये ।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

**स वै बत भ्रष्टमतिस्तवैष ते यः कर्मणां पारमपारकर्मणः।**
**यद्योगमायागुणयोगमोहितं विश्वं समस्तं भगवन् विधेहि शम् ।।४५।।**

पदच्छेद— सः वै बत भ्रष्ट मतिः तव एषः ते यः कर्मणाम् पारम् अपार कर्मणः।
यद् योगमायागुण योग मोहितम् विश्वम् समस्तम् भगवन् विधेहि शम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ६. | उसकी | यद् | १७. | जो (यह) |
| वै बत | ४. | दुःख की बात है कि | योगमाया | १३. | आपकी माया के |
| भ्रष्ट | ८. | नष्ट हो गयी है (क्योंकि) | गुण | १४. | सत्त्वादि गुणों के |
| मतिः | ७. | बुद्धि | योग | १५. | सम्पर्क से |
| तव | २. | आपके | मोहितम् | १६. | अज्ञान युक्त |
| एषः | ५. | उस समय | विश्वम् | १९. | संसार है (उसका) |
| ते | ९. | आपके | समस्तम् | १८. | सम्पूर्ण |
| यः | १. | हे भगवन्! जो व्यक्ति | भगवन् | १२. | हे प्रभो |
| कर्मणाम् पारम् | ३. | कर्मों का पार (पाना चाहता है) | विधेहि | २१. | करें |
| | | | शम् ।। | २०. | कल्याण |
| अपार | ११. | कोई पार नहीं है | | | |
| कर्मणः। | १०. | कर्मों का | | | |

श्लोकार्थ—हे भगवन्! जो व्यक्ति आपके कर्मों का पार पाना चाहता है दुःख की बात है कि उस समय उसकी बुद्धि नष्ट हो गयी है, क्योंकि आपके कर्मों का कोई पार नहीं है। हे प्रभो! आपकी माया के सत्त्वादि गुणों के सम्पर्क से अज्ञान युक्त जो यह सम्पूर्ण संसार है, उसका कल्याण करें।

# षट्चत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच

**इत्युपस्थीयमानस्तैर्मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः।**
**सलिले स्वखुराक्रान्त उपाधत्तावितावनिम् ।।४६।।**

पदच्छेद— इति उपस्थीयमानः तैः मुनिभिः ब्रह्मवादिभिः।
सलिले स्वखुर आक्रान्त उपाधत्त अविता अवनिम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | ४. | इस प्रकार | सलिले | ८. | जल को |
| उपस्थीयमानः | ५. | स्तुति करने पर | स्वखुर | ७. | अपने खुरों से |
| तैः | १. | हे विदुर जी! उन | आक्रान्त | ९. | स्तम्भित कर |
| मुनिभिः | ३. | मुनियों के द्वारा | उपाधत्त | ११. | स्थापित कर दिया |
| ब्रह्मवादिभिः। | २. | ब्रह्म ज्ञानी | अविता | ६. | सबके रक्षक वाराह भगवान् ने |
| | | | अवनिम् ।। | १०. | पृथ्वी को |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी! उन ब्रह्मज्ञानी मुनियों के द्वारा इस प्रकार स्तुति करने पर सबके रक्षक वाराह भगवान् ने अपने खुरों से जल को स्तम्भित कर पृथ्वी को स्थापित कर दिया।

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

स इत्थं भगवानुर्वीं विष्वक्सेनः प्रजापतिः ।
रसाया लीलयोन्नीतामप्सु न्यस्य ययौ हरिः ॥४७॥

पदच्छेद— स इत्थम् भगवान् उर्वीम् विष्वक्सेनः प्रजापतिः ।
रसायाः लीलया उन्नीताम्, अप्सु न्यस्य ययौ हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | वे | रसायाः | ७. | रसातल से |
| इत्थम् | १. | इस प्रकार | लीलया | ८. | लीलापूर्वक |
| भगवान् | ५. | भगवान् | उन्नीताम् | ९. | लायी गयी |
| उर्वीम् | १०. | पृथ्वी को | अप्सु | ११. | जल पर |
| विष्वक्सेनः | २. | विस्वक्सेन | न्यस्य | १२. | स्थापित करके |
| प्रजापतिः । | ३. | प्रजापति | ययौ | १३. | अन्तर्धान हो गये |
| | | | हरिः ॥ | ६. | श्रीहरि |

श्लोकार्थ—इस प्रकार विस्वक्सेन प्रजापति वे भगवान् श्रीहरि रसातल से लीलापूर्वक लायी गयी पृथ्वी को जल पर स्थापित करके अन्तर्धान हो गये ।

## अष्टाचत्वारिंशः श्लोकः

स एवमेतां हरिमेधसो हरेः कथां सुभद्रां कथनीयमायिनः ।
शृण्वीत भक्त्या श्रवयेत वोशतीं जनार्दनोऽस्याशु हृदि प्रसीदति ॥४८॥

पदच्छेद— स एवम् एताम् हरिम् एधसः हरेः कथाम् सुभद्राम् कथनीय मायिनः ।
शृण्वीत् भक्त्या श्रवयेत वा उशतीम् जनार्दनः अस्य आशु हृदि प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जो व्यक्ति | शृण्वीत | १२. | सुनता है |
| एवम् | १०. | इस प्रकार | भक्त्या | ११. | भक्तिपूर्वक |
| एताम् | ६. | हरने वाली | श्रवयेत | १४. | सुनाता है |
| हरिम् | ५ | पाप-ताप को | वा | १३. | अथवा |
| एधसः | ४. | श्रीहरि की | उशतीम् | ८. | मञ्जुल |
| हरेः | ९. | कथा को | जनार्दनः | १६. | भक्त वत्सल भगवान् |
| कथाम् | ७. | सुमङ्गल (एवं) | अस्य | १५. | उस व्यक्ति के ऊपर |
| सुभद्राम् | २. | कीर्तनीय, चरित्र वाले | आशु, हृदि | १७. | तत्काल |
| कथनीयमायिनः। | ३. | (भगवान्) | प्रसीदति ॥ | १८. | प्रसन्न होते हैं । |

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति कीर्तनीय चरित्र वाले भगवान् श्रीहरि की पाप-ताप को हरने वाली सुमङ्गल एवं मञ्जुल कथा को इस प्रकार भक्तिपूर्वक सुनता है, अथवा सुनाता है, उस व्यक्ति के ऊपर भक्त वत्सल भगवान् तत्काल प्रसन्न होते हैं ।

# नवचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मिन् प्रसन्ने सकलाशिषां प्रभौ किं दुर्लभं ताभिरलं लवात्मभिः ।
अनन्यदृष्ट्या भजतां गुहाशयः स्वयं विधत्ते स्वगतिं परः पराम् ॥४९॥

पदच्छेद— तस्मिन् प्रसन्ने सकल आशिषाम् प्रभो, किम् दुर्लभम् ताभिः अलम् लव आत्मभिः ।
अनन्य दृष्ट्या भजताम् गुहाशयः स्वयम् विधत्ते स्वगतिम् परः पराम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मिन् | ४. | उनके | अनन्य | १०. | अनन्य |
| प्रसन्ने | ५. | प्रसन्न हो जाने पर | दृष्ट्या | ११. | भाव से |
| सकल | १. | भगवान् सम्पूर्ण | भजताम् | १२. | भजन करने वाले भक्तों को |
| आशिषाम् | २. | मनोरथों को | गुहाशयः | १३. | अन्तर्यामी |
| प्रभो | ३. | पूर्ण करने में (समर्थ हैं) | स्वयम् | १५. | अपने आप |
| किम्, दुर्लभम् | ६. | क्या दुर्लभ है | विधत्ते | १८. | दे देते हैं |
| ताभिः | ७. | वे | स्वगतिम् | १६. | अपना पद |
| अलम् | ९. | व्यर्थ हैं | परः | १४. | परमात्मा |
| लव,आत्मभिः । | ८. | तुच्छ कामनायें | पराम् ॥ | १७. | परम |

श्लोकार्थ— भगवान् सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने में समर्थ हैं । उनके प्रसन्न हो जाने पर क्या दुर्लभ है ? वे तुच्छ कामनायें व्यर्थ हैं । अनन्य भाव से भजन करने वाले भक्तों को अन्तर्यामी परमात्मा अपने आप अपना परम पद दे देते हैं ।

# पञ्चाशः श्लोकः

को नाम लोके पुरुषार्थसारवित्पुराकथानां भगवत्कथासुधाम् ।
आपीय कर्णाञ्जलिभिर्भवापहामहो विरज्येत विना नरेतरम् ॥५०॥

पदच्छेद— कः नाम लोके पुरुषार्थ सारवित्, पुरा कथानाम् भगवत् कथा सुधाम् ।
आपीय कर्ण अञ्जलिभिः भवापहाम् अहो विरज्येत विना नर इतरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः नाम | ६. | कौन पुरुष | आपीय | १५. | पान करके (भी उससे) |
| लोके | १. | संसार में | कर्ण | १३. | कान के |
| पुरुषार्थ | ४. | पुरुषार्थ से | अञ्जलिभिः | १४. | पुटों से |
| सारवित् | ५. | सार को जानने वाला | भव | ७. | जन्म मरण को |
| पुराकथानाम् | ९. | प्राचीन, कथाओं में से | आपहाम् | ८. | दूर करने वाली |
| भगवत् | १०. | भगवान् की | अहो | ०. | अरे |
| कथा | १२. | कथा का | विरज्येत | १६. | विरत हो जायगा |
| सुधाम् । | ११. | सुधामयी | विना | ३. | छोड़कर |
| | | | नर इतरम् ॥ | २. | मनुष्य से भिन्न पशु को |

श्लोकार्थ—अरे संसार में मनुष्य से भिन्न पशु को छोड़कर पुरुषार्थ से सार को जानने वाला कौन पुरुष जन्म-मरण को दूर करने वाली प्राचीन कथाओं में से भगवान् की सुधामयी कथा का, कान के पुटों से पान करके भी उससे विरत हो जायगा ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
वराहप्रादुर्भावानुवर्णने त्रयोदशः अध्यायः ॥१३॥

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच

निशम्य कौषारविणोपवर्णितां हरेः कथां कारणसूकरात्मनः ।
पुनः स पप्रच्छ तमुद्यताञ्जलिर्न चातितृप्तो विदुरो धृतव्रतः ॥१॥

पदच्छेद—

निशम्य कौषारविण उपवर्णिताम् हरेः कथाम् कारण सूकर आत्मनः ।
पुनः सः पप्रच्छ तम् उद्यत् अञ्जलिः न च अति तृप्तः विदुरः धृतव्रतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| निशम्य | ७. सुनकर | पप्रच्छ | १८. पूछा |
| कौषारविण | ४. मैत्रेय जी से | तम् | १७. उनसे |
| उपवर्णिताम् | ५. कही गयी | उद्यत् | १६. जोड़कर |
| हरेः | ३. भगवान् श्रीहरि की | अञ्जलिः | १५. हाथ |
| कथाम् | ६. कथा को | न | ११. नहीं |
| कारण | १. प्रयोजन वश | च | १३. और |
| सूकर आत्मनः | २. वाराह का अवतार लेने वाले | अतितृप्तः | १२. पूर्णतृप्त हुये |
| पुनः | १४. फिर | विदुरः | १०. विदुर जी |
| सः । | ९. वे | धृतव्रतः ॥ | ८. भक्त व्रतधारी |

श्लोकार्थ—प्रयोजन वश वाराह का अवतार लेने वाले भगवान् श्रीहरि की मैत्रेय जी से कही गयी कथा को सुनकर भक्त व्रतधारी वे विदुर जी पूर्ण तृप्त नहीं हुये, और फिर हाथ जोड़कर उनसे पूछा ।

## द्वितीयः श्लोकः

विदुर उवाच

तेनैव तु मुनिश्रेष्ठ हरिणा यज्ञमूर्तिना ।
आदिदैत्यो हिरण्याक्षो हत इत्यनुशुश्रुमः ॥२॥

पदच्छेद—

तेन एव तु मुनिश्रेष्ठ हरिणा यज्ञ मूर्तिना ।
आदि दैत्यः हिरण्याक्षः हत इति अनुशुश्रुम ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तेन | ४. उन | आदि दैत्यः | ७. आदि दैत्य |
| एव तु | ५. ही | हिरण्याक्षः | ८. हिरण्याक्ष का |
| मुनि श्रेष्ठ | १. हे मुनिवर | हत | ९. वध किया था |
| हरिणा | ६. श्रीहरि ने | इति | १०. ऐसा |
| यज्ञ | २. यज्ञ | अनु | ११. हमने |
| मूर्तिना । | ३. स्वरूप | शुश्रुमः ॥ | १२. सुना है । |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! यज्ञ स्वरूप उन्हीं श्री हरि ने आदि दैत्य हिरण्याक्ष का वध किया था, ऐसा हमने सुना है ।

# तृतीयः श्लोकः

तस्य चोद्धरतः क्षोणीं स्वदंष्ट्राग्रेण लीलया ।
दैत्यराजस्य च ब्रह्मन् कस्माद्धेतोरभून्मृधः ।।३।।

पदच्छेद—

तस्य च उद्धरत क्षोणीम् स्वदंष्ट्र अग्रेण लीलया ।
दैत्यराजस्य च ब्रह्मन् कस्मात् हेतोः अभूत् मृधः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ८. | उन भगवान् श्री हरि का | दैत्य | १०. | राक्षस |
| च | ६. | और | राजस्य च | ११. | राज हिरण्याक्ष का |
| उद्धरतः | ७. | उद्धार करते समय | ब्रह्मन् | १. | ब्रह्मज्ञानी हे मैत्रेय जी |
| क्षोणीम् | ५. | पृथ्वी का | कस्मात् | १२. | किस |
| स्व | २. | अपनी | हेतोः | १३. | कारण |
| दंष्ट्र | ३. | दाढ़ की | अभूत् | १५. | हुआ था |
| अग्रेण | ४. | नोक से | मृधः ।। | १४. | युद्ध |
| लीलया । | ६. | लीला पूर्वक | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मज्ञानी हे मैत्रेय जी ! अपनी दाढ़ की नोक से पृथ्वी का लीला पूर्वक उद्धार करते समय उन भगवान् श्री हरि का और राक्षस राज हिरण्याक्ष का किस कारण युद्ध हुआ था ।

# चतुर्थः श्लोकः

मैत्रेय उवाच

साधु वीर त्वया पृष्टमवतारकथां हरेः ।
यत्त्वं पृच्छसि मर्त्यानां मृत्युपाशविशातनीम् ।।४।।

पदच्छेद—

साधु वीर त्वया पृष्टम् अवतार कथाम् हरेः ।
यत् त्वम् पृच्छसि मर्त्यानाम् मृत्युपाश विशातनीम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| साधु | ३. | ठीक ही | यत् | ५. | क्योंकि |
| वीर | १. | हे विदुर जी | त्वम् | ६. | तुम |
| त्वया | २. | तुमने | पृच्छसि | १०. | पूछ रहे हो (जो) |
| पृष्टम् | ४. | पूछा है | मर्त्यानाम् | ११. | मनुष्यों के |
| अवतार | ८. | अवतार की | मृत्यु | १२. | मौत के |
| कथाम् | ६. | कथा | पाश | १३. | फन्दे को |
| हरेः । | ७. | श्री हरि के | विशातनीम् ।। | १४. | काटने वाली है |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तुमने ठीक ही पूछा है क्योंकि तुम श्री हरि के अवतार की कथा पूछ रहे हो, जो मनुष्यों के मौत के फन्दे को काटने वाली है ।

## पञ्चमः श्लोकः

यथोत्तानपदः पुत्रो मुनिना गीतयार्भकः ।
मृत्योः कृत्वैव मूर्ध्न्यङ्घ्रिमारुरोह हरेः पदम् ।।५।।

पदच्छेद—

यया उत्तानपदः पुत्रो मुनिना गीतया अर्भकः ।
मृत्योः कृत्वा एव मूर्ध्नि अङ्घ्रिम् आरुरोह हरेः पदम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यया | ३. | जिस (कथा के प्रभाव से) | मृत्योः | ७. | मृत्यु के |
| उत्तानपदः | ४. | राजा उत्तानपाद का | कृत्वा | १०. | रखकर |
| पुत्रः | ५. | पुत्र | एव | ११. | ही |
| मुनिना | १. | नारद मुनि के द्वारा | मूर्ध्नि | ८. | मस्तक पर |
| गीतया | २. | कही गयी | अङ्घ्रिम् | ६. | पैर |
| अर्भकः । | ६. | बालक ध्रुव ने | आरुरोह | १४. | प्राप्त कर लिया था । |
| | | | हरेः | १२. | श्री हरि की कृपा से |
| | | | पदम् ।। | १३. | ध्रुव पद |

श्लोकार्थ—नारद मुनि के द्वारा कही गयी जिस कथा के प्रभाव से राजा उत्तान पाद का पुत्र बालक ध्रुव ने मृत्यु के मस्तक पर पैर रखकर ही श्री हरि की कृपा से ध्रुव पद प्राप्त कर लिया था ।

## षष्ठः श्लोकः

अथात्रापीतिहासोऽयं श्रुतो मे वर्णितः पुरा ।
ब्रह्मणा देवदेवेन देवानामनुपृच्छताम् ।।६।।

पदच्छेद—

अथ अत्र अपि इतिहासः अयम् श्रुतः मे वर्णितः पुरा ।
ब्रह्मणा देव देवेन देवानाम् अनुपृच्छताम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ अत्र | ३. | इस विषय में | वर्णितः | ७. | कही गयी |
| अपि | १०. | भी | पुरा | १. | प्राचीन काल में |
| इतिहासः | ६. | कथा | ब्रह्मणा | ६. | ब्रह्मा जी के द्वारा |
| अयम् | ८. | यह | देव देवेन | ५. | देवाधिदेव |
| श्रुतः | १२. | सुनी है | देवानाम् | २. | देवताओं के द्वारा |
| मे । | ११. | मैंने | अनुपृच्छताम् ।। | ४. | पूछने पर |

श्लोकार्थ—प्राचीन काल में देवताओं के द्वारा इस विषय में पूछने पर देवाधिदेव ब्रह्मा जी के द्वारा कही गयी यह कथा भी मैंने सुनी है ।

## सप्तमः श्लोकः

दितिर्दाक्षायणी क्षत्तर्मारीचं कश्यपं पतिम् ।
अपत्यकामा चकमे सन्ध्यायां हृच्छयार्दिता ।।७।।

पदच्छेद—

दितिः दाक्षायणी क्षत्तः मारीचम् कश्यपम् पतिम् ।
अपत्यकामा चकमे सन्ध्यायाम् हृच्छय अर्दिता ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दितिः | ३. | दिति ने | अपत्यकामा | ७. | सन्तान की इच्छा से |
| दाक्षायणी | २. | दक्ष प्रजापति की पुत्री | चकमे | ११. | प्रार्थना की थी |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी | सन्ध्यायाम् | ४. | सन्ध्या के समय |
| मारीचम् | ९. | मरीचि नन्दन | हृच्छय | ५. | काम से |
| कश्यपम् | १०. | कश्यप से | अर्दिता ।। | ६. | पीड़ित होकर |
| पतिम् । | ८. | अपने पति | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! दक्ष प्रजापति की पुत्री दिति ने सन्ध्या के समय काम से पीड़ित होकर सन्तान की इच्छा से अपने पति मरीचि नन्दन कश्यप से प्रार्थना की थी ।

## अष्टमः श्लोकः

इष्ट्वाग्नि जिह्वं पयसा पुरुषं यजुषां पतिम् ।
निम्लोचत्यर्क आसीनमग्न्यगारे समाहितम् ।।८।।

पदच्छेद—

इष्ट्वाग्नि जिह्वम् पयसा पुरुषम् यजुषाम् पतिम् ।
निम्लोचति अर्क आसीनम् अग्नि अगारे समाहितम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इष्ट्वा | ११. | हवन करके | निम्लोचति | ४. | अस्त होते समय |
| अग्नि | ८. | यज्ञ भगवान् | अर्क | ३. | सूर्य के |
| जिह्वम् | ७. | अग्नि जिह्व | आसीनम् | १३. | बैठे थे |
| पयसा | १०. | खीर से | अग्नि | १. | (उस समय) कश्यप ऋषि यज्ञ |
| पुरुषम् | ९. | श्रीहरि का | | | |
| यजुषाम् | ५. | वेदों के | अगारे | २. | शाला में |
| पतिम् । | ६. | स्वामी | समाहितम् ।। | १२. | समाधि में |

श्लोकार्थ—उस समय कश्यप ऋषि यज्ञशाला में सूर्य के अस्त होते समय वेदों के स्वामी अग्निजिह्व यज्ञ भगवान् श्रीहरि का खीर से हवन करके समाधि में बैठे थे ।

# नवमः श्लोकः

दितिः उवाच—

एष मां त्वत्कृते विद्वन् काम आत्तशरासनः ।
दुनोति दीनां विक्रम्य रम्भामिव मतङ्गजः ॥९॥

पदच्छेद—

एष माम् त्वत्कृते विद्वन् कामः आत्त शरासनः ।
दुनोति दीनाम् विक्रम्य रम्भाम् इव मतङ्गज ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एष | ५. | यह | दुनोति | १३. | बेचैन कर रहा है । |
| माम् | ९. | मुझ | दीनाम् | १०. | अबला पर |
| त्वत्कृते | १२. | आपके लिये | विक्रम्य | ११. | अपना पराक्रम दिखाते हुये |
| विद्वन् | ४. | हे मुनिवर | रम्भाम् | ३. | केले के (वृक्ष को मसल देता है उसी प्रकार) |
| कामः | ६. | कामदेव | | | |
| आत्त | ८. | लेकर | इव | १. | जैसे |
| शरासनः । | ७. | धनुष | मतङ्गज ॥ | २. | मतवाला हाथी |

श्लोकार्थ—जैसे मतवाला हाथी केले के वृक्ष को मसल डालता है, उसी प्रकार हे मुनिवर ! यह कामदेव धनुष लेकर मुझ अबला पर अपना पराक्रम दिखाते हुये आपके लिये बेचैन कर रहा है ।

# दशमः श्लोकः

तद्भवान्दह्यमानायां सपत्नीनां समृद्धिभिः ।
प्रजावतीनां भद्रं ते मय्यायुङ्क्तामनुग्रहम् ॥१०॥

पदच्छेद —

तद् भवान् दह्यमानायाम् सपत्नीनाम् समृद्धिभिः ।
प्रजावतीनाम् भद्रम् ते मयि आयुङ्क्ताम् अनुग्रहम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | १. | अतः | प्रजावतीनाम् | २. | पुत्रों वाली |
| भवान् | ७. | आप | भद्रम् | ११. | कल्याण हो |
| दह्यमानायाम् | ५. | डाह करने वाली | ते | १०. | आपका |
| सपत्नीनाम् | ३. | सौतों की | मयि | ६. | मुझ पर |
| समृद्धिभिः । | ४. | सुख समृद्धि से | आयुङ्क्ताम् | ९. | करें |
| | | | अनुग्रहम् ॥ | ८. | कृपा दृष्टि |

श्लोकार्थ— अतः पुत्रों वाली सौतों की सुख समृद्धि से डाह करने वाली मुझ पर आप कृपा दृष्टि करें आपका कल्याण हो ।

# एकादशः श्लोकः

भर्तर्याप्तोरुमानानां लोकानाविशते यशः ।
पतिर्भवद्विधो यासां प्रजया ननु जायते ॥११॥

पदच्छेद—

भर्तरि आप्त उरुमानानाम् लोकान् आविशते यशः ।
पतिः भवद् विधः यासाम् प्रजया ननु जायते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भर्तरि | ७. | अपने पति से | पतिः | ४. | पति |
| आप्त | ९. | प्राप्त करने वाली (उनकी) | भवद् | २. | आप |
| उरुमानानाम् | ८. | अत्यन्त, सम्मान | विधः | ३. | जैसा |
| लोकान् | ११. | संसार में | यासाम् | १, | जिन स्त्रियों के (गर्भ से) |
| आविशते | १३. | सर्वत्र फैल जाती है | प्रजया | ५. | पुत्र रूप में |
| यशः । | १०. | कीर्ति | ननु | १२. | अवश्य |
| | | | जायते ॥ | ६. | उत्पन्न होता है |

श्लोकार्थ—जिन स्त्रियों के गर्भ से आप जैसा पति पुत्र रूप में उत्पन्न होता है, अपने पति से अत्यन्त सम्मान प्राप्त करने वाली उन स्त्रियों की कीर्ति संसार में अवश्य सर्वत्र फैल जाती है ।

# द्वादशः श्लोकः

पुरा पिता नो भगवान्दक्षो दुहितृवत्सलः ।
कं वृणीत वरं वत्सा इत्यपृच्छत नः पृथक् ॥१२॥

पदच्छेद—

पुरा पिता नः भगवान् दक्षः दुहितृ वत्सलः ।
कम् वृणीत वरम् वत्साः इतिअपृच्छत नः पृथक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुरा | ७. | एक बार | कम् | १३. | किसे |
| पिता | ४. | पिता | वृणीत | १४. | चाहती हो |
| नः | ३. | हमारे | वरम् | १२. | वर रूप में |
| भगवान् | ५. | भगवान् प्रजापति | वत्साः | ११. | हे पुत्रियो (तुम सब) |
| दक्षः | ६. | दक्ष ने | इति | १०. | कि |
| दुहितृ | १. | अपनी पुत्रियों पर | अपृच्छत | ९. | पूछा |
| वत्सलः । | २. | वात्सल्य भाव रखने वाले | नः पृथक् ॥ | ८. | हम सबसे अलग-अलग |

श्लोकार्थ—अपनी पुत्रियों पर वात्सल्य भाव रखने वाले हमारे पिता भगवान् प्रजापति दक्ष ने एक बार हम सबसे अलग-अलग पूछा कि हे पुत्रियो तुम सब वर रूप में किसे चाहती हो ?

## त्रयोदशः श्लोकः

स विदित्वाऽऽत्मजानां नो भावं सन्तानभावनः ।
त्रयोदशाददात्तासां यास्ते शीलमनुव्रताः ॥१३॥

पदच्छेद—

स विदित्वा आत्मजानाम् नः भावम् सन्तान भावनः ।
त्रयोदशः अददात् तासाम् याः ते शीलम् अनुव्रताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सः | ७. उन्होंने | | त्रयोदशः | १२. तेरह कन्याओं का |
| विदित्वा | ६. जानकर | | अददात् | १३. आपसे विवाह किया था |
| आत्मजानाम् | ४. पुत्रियों के | | तासाम्, याः | ८. उनमें से जो |
| नः | ३. हम | | ते | ९. आपके |
| भावम् | ५. भावों को | | शीलम् | १०. गुण और स्वभाव के |
| सन्तान | १. अपनी सन्तान की | | अनुव्रताः ॥ | ११. अनुरूप थी (उन) |
| भावनः । | २. चिन्ता रखने वाले (दक्ष प्रजापति) | | | |

श्लोकार्थ—अपनी सन्तान की चिन्ता रखने वाले दक्ष प्रजापति हम पुत्रियों के भावों को जानकर उन्होंने उनमें से जो आपके गुण और स्वभाव के अनुरूप थीं उन तेरह कन्याओं का आपसे विवाह किया था ।

## चतुर्दशः श्लोकः

अथ मे कुरु कल्याण कामं कञ्जविलोचन ।
आर्तोपसर्पणं भूमन्नमोघं हि महीयसि ॥१४॥

पदच्छेद—

अथ मे कुरु कल्याण कामम् कञ्ज विलोचन ।
आर्तः उपसर्पणम् भूमन् अमोघम् हि महीयसि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अथ | १. अतः | | आर्तः | ११. दुःखियों का |
| मे | ५. मेरी | | उपसर्पणम् | १२. आना |
| कुरु | ७. पूर्ण करें | | भूमन् | ९. हे महत्तम ! |
| कल्याण | २. हे मंगलमूर्ते ! | | अमोघम् | १३. निष्फल नहीं होता है |
| कामम् | ६. कामना | | हि | ८. क्योंकि |
| कञ्ज | ३. हे कमल | | महीयसि ॥ | १०. महान पुरुषों के पास |
| विलोचन । | ४. नयन (आप) | | | |

श्लोकार्थ—अतः हे मंगल मूर्ते ! हे कमल नयन ! आप मेरी कामना पूर्ण करें, क्योंकि हे महत्तम ! महान् पुरुषों के पास दुःखियों का आना निष्फल नहीं होता है ।

## पञ्चदशः श्लोकः

इति तां वीर-मारीचः कृपणां बहुभाषिणीम् ।
प्रत्याहानुनयन् वाचा प्रवृद्धानङ्गकश्मलाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

इति ताम् वीर मारीचः कृपणाम् बहुभाषिणीम् ।
प्रत्याह अनुनयन् वाचा प्रवृद्ध अनङ्ग कश्मलाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | २. | इस प्रकार | प्रत्याह | १२. | बोले |
| ताम् | ९. | उस (अपनी पत्नी दिति को) | अनुनयन् | ११. | समझाते हुये |
| वीर | १. | हे विदुर जी | वाचा | १०. | मधुर वाणी से |
| मारीचः | ३. | कश्यप ऋषि | प्रवृद्ध | ५. | वेग से |
| कृपणाम् | ८. | बेवस | अनङ्ग | ४. | कामदेव के |
| बहुभाषिणीम् । | ७. | बहुत बोलने वाली (और) | कश्मलाम् ॥ | ६. | पीड़ित |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार कश्यप ऋषि कामदेव के वेग से पीड़ित, बहुत बोलने वाली और बेवस उस अपनी पत्नी दिति को मधुर वाणी से समझाते हुये बोले ।

## षोडशः श्लोकः

एष तेऽहं विधास्यामि प्रियं भीरु यदिच्छसि ।
तस्याः कामं न कः कुर्यात्सिद्धिस्त्रैवर्गिकी यतः ॥१६॥

पदच्छेद—

एषः ते अहम् विधास्यामि प्रियम् भीरु यद् इच्छसि ।
तस्याः कामम् न कः कुर्यात् सिद्धिः त्रैवर्गिकी यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः | ३. | अभी | तस्याः | १३. | उस (पत्नी) की |
| ते | ४. | तुम्हारा | कामम् | १४. | इच्छा को |
| अहम् | २. | मैं | न | १५. | नहीं |
| विधास्यामि | ६. | करूंगा | कः | १२. | कौन पुरुष |
| प्रियम् | ५. | प्रिय | कुर्यात् | १६. | पूर्ण करेगा |
| भीरु | १. | हे भीरु | सिद्धिः | ११. | प्राप्ति होती है |
| यद् | ७. | जो (तुम) | त्रैवर्गिकी | १०. | तीनों वर्ग (धर्म, अर्थ, काम) की |
| इच्छसि । | ८. | चाहती हो | यतः ॥ | ९. | जिससे |

श्लोकार्थ—हे भीरु ! मैं अभी तुम्हारा प्रिय करूंगा, जो तुम चाहती हो । जिससे तीनों वर्ग धर्म, अर्थ, काम की प्राप्ति होती है, कौन पुरुष उस पत्नी की इच्छा को पूर्ण नहीं करेगा ।

## सप्तदश: श्लोक:

सर्वाश्रमानुपादाय स्वाश्रमेण कलत्रवान् ।
व्यसनार्णवमत्येति जलयानैर्यथार्णवम् ।।१७।।

पदच्छेद—

सर्व आश्रमान् उपादाय स्व आश्रमेण कलत्रवान् ।
व्यसन अर्णवम् अत्येति जलयानैः यथा अर्णवम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्व | ८. | सभी | व्यसन् | ११. | दुःख |
| आश्रमान् | ९. | आश्रमों की | अर्णवम् | १२. | सागर को (पार कर लेता है) |
| उपादाय | १०. | सहायता करता हुआ | अत्येति | ४. | पार कर लेता है (उसी प्रकार) |
| स्व | ६. | अपने | जलायानैः | २. | जहाज मे |
| आश्रमेण | ७. | आश्रम के द्वारा | यथा | १. | जैसे (मनुष्य) |
| कलत्रवान् | ५. | गृहस्थाश्रमी | अर्णवम् ।। | ३. | समुद्र को |

श्लोकार्थ—जैसे मनुष्य जहाज से समुद्र को पार कर लेता है। उसी प्रकार गृहस्थाश्रमी अपने आश्रम के द्वारा सभी आश्रमों की सहायता करता हुआ दुःख सागर को पार कर लेता है।

## अष्टदश: श्लोक:

यामाहुरात्मनो ह्यर्धं श्रेयस्कामस्य मानिनि ।
यस्यां स्वधुरमध्यस्य पुमाँश्चरति विज्वरः ।।१८।।

पदच्छेद—

याम् आहुः आत्मनः हिः अर्धम् श्रेयस्कामस्य मानिनि ।
यस्याम् स्वधुरम् अध्यस्य पुमान् चरति विज्वरः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| याम् | २. | जिसे | यस्याम् | ८. | जिस पर |
| आहुः | ६. | कहा जाता है | स्वधुरम् | ९. | अपना भार |
| आत्मनः | ४. | पुरुष का | अध्यस्य | १०. | रखकर |
| हि | ७. | तथा | पुमान् | ११. | पुरुष |
| अर्धम् | ५. | आधा अङ्ग | चरति | १३. | विचरण करता है |
| श्रेयस कामस्य | ३. | पुरुषार्थ की कामना रखने वाले | विज्वर। | १२. | निश्चिन्त होकर |
| मानिनि। | १. | हे सुन्दरि ! | | | |

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! जिसे पुरुषार्थ की कामना रखने वाले पुरुष का आधा अङ्ग कहा जाता है। तथा जिस पर अपना भार रख कर पुरुष निश्चिन्त होकर विचरण करता है।

# एकोनविंशः श्लोकः

यामाश्रित्येन्द्रियारातीन्दुर्जयानितराश्रमैः ।
वयं जयेम हेलाभिर्दस्यून्दुर्गपतिर्यथा ॥१९॥

पदच्छेद—

याम् आश्रित्य इन्द्रिय आरातीन् दुर्जयान् इतर आश्रमैः ।
वयम् जयेम हेलाभिः दस्यून् दुर्गपतिः यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| याम् | १. | जिसका | वयम् | ३. | हम |
| आश्रित्य | २. | सहारा लेकर | जयेम | १०. | जीत लेते हैं |
| इन्द्रिय | ७. | इन्द्रिय रूपी | हेलाभिः | ९. | आसानी से |
| आरातीन् | ८. | शत्रुओं को | दस्यून् | १३. | लुटेरों को (जीत लेता है) |
| दुर्जयान् | ६. | अजेय | दुर्गपतिः | १२. | किले का स्वामी |
| इतर | ४. | दूसरे | यथा ॥ | ११. | जैसे |
| आश्रमैः । | ५. | आश्रम वालों से | | | |

श्लोकार्थ—जिसका सहारा लेकर हम दूसरे आश्रम वालों से अजेय इन्द्रिय रूपी शत्रुओं को आसानी से जीत लेते हैं, जैसे किले का स्वामी लुटेरों को जीत लेता है ।

# विंशः श्लोकः

न वयं प्रभवस्तां त्वामनुकर्तुं गृहेश्वरि ।
अप्यायुषा वा कार्त्स्न्येन ये चान्ये गुणगृध्नवः ॥२०॥

पदच्छेद—

न वयम् प्रभवः ताम् त्वाम् अनुकर्तुम् गृहेश्वरि ।
अपि आयुषा वा कार्त्स्न्येन ये च अन्ये गुण गृध्नवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १६. | नहीं हैं | अपि | ९. | भी |
| वयम् | २. | हम | आयुषा | ११. | उम्र में |
| प्रभवः | १५. | समर्थ | वा | ३. | अथवा |
| ताम् | १३. | जैसी स्त्रियों के | कार्त्स्न्येन | १०. | पूरी |
| त्वाम् | १२. | तुम्हारे | ये | ४. | जो |
| अनुकर्तुम् | १४. | उपकार का बदला चुकाने में | च | ८. | वे |
| गृहेश्वरि । | १. | हे गृहेश्वरि | अन्ये | ५. | दूसरे |
| | | | गुण | ६. | गुण |
| | | | गृध्नवः ॥ | ७. | ग्राही (मनुष्य हैं) |

श्लोकार्थ—हे गृहेश्वरि ! हम अथवा जो दूसरे गुणग्राही मनुष्य हैं वे भी पूरी उम्र में तुम्हारे जैसी स्त्रियों के उपकार का बदला चुकाने में समर्थ नहीं हैं ।

# एकविंशः श्लोकः

**अथापि काममेतं ते प्रजात्यै करवाण्यलम् ।**
**यथा मां नातिवोचन्ति मुहूर्तं प्रतिपालय ॥२१॥**

पदच्छेद—

अथापि कामम् एतम् ते प्रजात्यै करवाणि अलम् ।
यथा माम् न अति वोचन्ति मुहूर्तम् प्रतिपालय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथापि | १. | फिर भी | यथा | १०. | जिससे कि (लोग) |
| कामम् | ५. | कामना को | माम् | ११. | मेरी |
| एतम् | ४. | इस | न | १२. | न |
| ते | ३. | तुम्हारी | अतिवोचन्ति | १३. | निन्दा कर सकें |
| प्रजात्यै | २. | सन्तान हेतु | मुहूर्तम् | ८. | तुम दो घड़ी तक |
| करवाणि | ७. | पूर्ण करूँगा | प्रतिपालय ॥ | ९. | प्रतीक्षा करो |
| अलम् । | ६. | यथा शक्ति | | | |

श्लोकार्थ—फिर भी सन्तान हेतु तुम्हारी इस कामना को यथाशक्ति पूर्ण करूँगा । तुम दो घड़ी तक प्रतीक्षा करो, जिससे कि लोग मेरी निन्दा न कर सकें ।

# द्वाविंशः श्लोकः

**एषा घोरतमा वेला घोराणां घोरदर्शना ।**
**चरन्ति यस्यां भूतानि भूतेशानुचराणि ह ॥२२॥**

पदच्छेद—

एषा घोरतमा वेला घोराणाम् घोर दर्शना ।
चरन्ति यस्याम् भूतानि भूतेश अनुचराणि ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषा | १. | यह | चरन्ति | १२. | घूमते रहते हैं |
| घोरतमा | ५. | अत्यन्त घोर | यस्याम् | ७. | जिसमें |
| वेला | ६. | समय है | भूतानि | १०. | भूत-प्रेत |
| घोराणाम् | २. | राक्षसों का | भूतेश | ८. | भूतनाथ शंकर के |
| घोर | ३. | भयानक | अनुचराणि | ९. | अनुचर गण |
| दर्शना । | ४. | दिखायी देने वाला | ह ॥ | ११. | ही |

श्लोकार्थ—यह राक्षसों का भयानक दिखायी देने वाला अत्यन्त घोर समय है, जिसमें भूतनाथ शंकर के अनुचर गण भूत-प्रेत ही घूमते रहते हैं ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

एतस्यां साध्वि सन्ध्यायां भगवान् भूतभावनः ।
परीतो भूतपर्षद्भिर्वृषेणाटति भूतराट् ॥२३॥

पदच्छेद—

एतस्याम् साध्वि सन्ध्यायाम् भगवान् भूतभावनः ।
परीतः भूत पर्षद्भिः वृषेण अटति भूतराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतस्याम् | २. | इस | परीतः | १०. | घिरे हुये |
| साध्वि | १. | हे तपस्विनि | भूत | ८. | भूत |
| सन्ध्यायाम् | ३. | सन्ध्या के समय | पर्षद्भिः | ६. | गणों से |
| भगवान् | ६. | भगवान् शंकर | वृषेण | ७. | बैल पर चढ़कर |
| भूतभावनः । | ४. | प्राणियों के रक्षक तथा | अटति | ११. | विचरते हैं । |
| | | | भूतराट् ॥ | ५. | भूतों के स्वामी |

श्लोकार्थ—हे तपस्विनि ! इस सन्ध्या के समय प्राणियों के रक्षक तथा भूतों के स्वामी भगवान् शंकर बैल पर चढ़कर भूतगणों से घिरे हुये विचरते हैं ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

श्मशानचक्रानिलधूलिधूम्रविकीर्णविद्योतजटाकलापः ।
भस्मावगुण्ठामलरुक्मदेहो देवस्त्रिभिः पश्यति देवरस्ते ॥२४॥

पदच्छेद—

श्मशान चक्र अनिल धूलिधूम्र, विकीर्ण विद्योत जटा कलापः ।
भस्म अवगुण्ठ अमल रुक्मदेहः देवः त्रिभिः पश्यति देवरः ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्मशान | ३. | श्मशान भूमि से उठे | भस्म | ११. | राख |
| चक्र, अनिल | ४. | ववन्डर की वायु की | अवगुण्ठ | १२. | लगी है |
| धूलि, धूम्र | ५. | धूलि से धूमिल होकर (और) | अमल | ६. | (उनके) गौर |
| विकीर्ण | ६. | विखर कर | रुक्म | ८. | सुवर्ण के समान कीर्तिमान् |
| विद्योत | ७. | चमक रहा है | देहः | १०. | शरीर पर |
| जटा | १. | (उनका) जटा | देवः | १५. | वे महादेव |
| कलापः । | २. | जूट | त्रिभिः पश्यति | १६. | (अपने)तीनों नेत्रों से देखते है |
| | | | देवरः | १४. | श्वशुर |
| | | | ते ॥ | १३. | तुम्हारे |

श्लोकार्थ—उनका जटा-जूट श्मशान भूमि से उठे ववण्डर की वायु की धूलि से धूमिल होकर और बिखर कर चमक रहा है । सुवर्ण के समान कीर्तिमान् उनके गौर शरीर पर राख लगी है । तुम्हारे श्वसुर वे महादेव अपने तीनों नेत्रों से देखते हैं ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

न यस्य लोके स्वजनः परो वा नात्यादृतो नोत कश्चिद्विगर्ह्यः ।
वयं व्रतैर्यच्चरणापविद्धामाशास्महेऽजां बत भुक्तभोगाम् ।।२५।।

पदच्छेद— न यस्य लोके स्वजनः परः वा न अति आदृतः न उत कश्चित् विगर्ह्यः ।
वयम् व्रतैः यत् चरण अपविद्धाम् आशास्महे अजाम् बत भुक्त भोगाम् ।

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| न | ६. | नहीं है । |
| यस्य | २. | जिनका |
| लोके | १. | संसार में |
| स्वजनः | ३. | अपना |
| परः | ५. | पराया |
| वा | ४. | अथवा |
| न | ७. | न |
| अति आदृतः | ६. | अत्यन्त, आदरणीय हैं |
| न | ११. | न |
| उत | १०. | और |
| कश्चित् | ८. | कोई |
| विगर्ह्यः । | १२. | निन्दनीय है । |
| वयम्, व्रतः | २०.२१. | हम लोग (उसी की) अनेक व्रतानुष्ठानों से |
| यत् | १४. | जिन्होंने |
| चरण | १८. | लात से |
| अपविद्धाम् | १६. | ठुकरा दिया है |
| आशास्महे | २२. | कामना करते हैं |
| अजाम् | १७. | जिस माया को |
| बत | १३. | खेद है कि |
| भुक्त | १६. | भोगकर |
| भोगाम् । | १५. | भोगों को |

श्लोकार्थ—संसार में जिनका अपना अथवा पराया नहीं है, न कोई अत्यन्त आदरणीय है, और न निन्दनीय है । खेद है कि जिन्होंने भोगों को भोगकर जिस माया ,को लात से ठुकरा दिया है, हम लोग उसी की अनेक व्रतानुष्ठानों से कामना करते हैं ।

# षट्विंशः श्लोकः

यस्यानवद्याचरितं मनीषिणो गृणन्त्यविद्यापटलं बिभीत्सवः ।
निरस्तसाम्यातिशयोऽपि यत्स्वयं पिशाचचर्यामचरद्गतिः सताम् ।।२६।।

पदच्छेद— यस्य अनवद्य आचरितम् मनीषिणः गृणन्ति अविद्यापटलम् बिभीत्सवः ।
निरस्त साम्य अतिशयः अपि यत् स्वयम् पिशाच चर्याम् अचरत् गतिः सताम् ।

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| यस्य अनवद्य | ४. | जिनके निर्मल |
| आचरितम् | ५. | चरित्र की |
| मनीषिणः | १. | विवेकी पुरुष |
| गृणन्ति | ६. | स्तुति करते हैं |
| अविद्या, पटलम् | २. | माया के, आवरण को |
| बिभीत्सवः | ३. | हटाने की इच्छा से |
| निरस्त | ११. | नहीं है |
| साम्य | ६. | बराबर |
| अतिशयः | ८. | बढ़कर (और) |
| अपि | १०. | भी (कोई) |
| यत् | ७. | जिनसे |
| स्वयम्,पिशाच | १४. | अपने आप पिशाचों के समान |
| चर्याम्, अचरत् | १५. | आचरण करते हैं |
| गतिः | १३. | पहुँच है (वे) |
| सताम् ।। | १२. | (केवल) सज्जनों की ही |

श्लोकार्थ—विवेकी पुरुष माया के आवरण को हटाने की इच्छा से जिनके निर्मल चरित्र की स्तुति करते हैं, जिनसे बढ़कर और बराबर भी कोई नहीं है, केवल सज्जनों की ही पहुँच है वे अपने आप पिशाचों के समान आचरण करते हैं ।

# सप्तविंशः श्लोकः

हसन्ति यस्याचरितं हि दुर्भगाः स्वात्मन् रतस्याविदुषः समीहितम् ।
यैर्वस्त्रमाल्याभरणानुलेपनैः श्वभोजनं स्वात्मतयोपलालितम् ।।२७।।

पदच्छेद— हसन्ति यस्य आचरितम् हि दुर्भगाः स्वात्मन् रतस्य अविदुषः समीहितम् ।
यैः वस्त्र माल्य आभरण अनुलेपनैः श्वभोजनम् स्वात्मतया उपलालितम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | समीहितम् | २. | प्रिय यह शरीर |
| हसन्ति | १७. | हँसते हैं | यैः | ४. | इसे जो |
| यस्य | १५. | भगवान् शंकर के | वस्त्र | ६. | वस्त्र |
| आचरितम् | १६. | चरित्र पर | माल्य | ७. | माला (और) |
| हि | १२. | ही | आभरण | ८. | आभूषण |
| दुर्भगाः | ११. | वे अभागे लोग | अनुलेपनैः | ९. | चन्दनादि से |
| स्वात्मन् | १३. | अपनी आत्मा में | श्व, भोजनम् | ३. | कुत्ते का भोजन (है) |
| रतस्य | १४. | लीन रहने वाले | स्वात्मतया | ५. | अपनी आत्मा समझ कर |
| अविदुषः | १. | मूर्खों का | उपलालितम् ।। | १०. | सजाते संवारते हैं |

श्लोकार्थ—मूर्खों का प्रिय यह शरीर कुत्ते का भोजन है, इसे जो अपनी आत्मा समझ कर वस्त्र माला आभूषण चन्दन आदि से सजाते संवारते हैं, वे अभागे लोग ही अपनी आत्मा में लीन रहने वाले भगवान् शंकर के चरित्र पर हँसते हैं ।

# अष्टविंशः श्लोकः

ब्रह्मादयो यत्कृतसेतुपाला यत्कारणं विश्वमिदं च माया ।
आज्ञाकरी तस्य पिशाचचर्या अहो विभूम्नश्चरितं विडम्बनम् ।।२८।।

पदच्छेद— ब्रह्म आदयः यत् कृत सेतु पालाः यत् कारणम् विश्वम् इदम् च माया ।
आज्ञाकरी तस्य पिशाच चर्या अहो विभूम्नः चरितम् विडम्बनम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | माया | ९. | माया |
| ब्रह्म, आदयः | १. | ब्रह्मा इत्यादि लोक पाल | आज्ञाकरी | ११. | आदेश पालन करती है |
| यत्, कृत | २. | जिनकी बनायी | तस्य | १०. | उनका |
| सेतु, पालाः | ३. | धर्म मर्यादा का पालन करते हैं | पिशाच | १४. | पिशाचों के समान है (अतः) |
| | | | चर्या | १३. | आचरण |
| यत् | ४. | जो | अहो, | १२. | आश्चर्य है (उनका) |
| कारणम् | ७. | कारण हैं | विभूम्नः | १५. | उस जगत् व्यापक प्रभु की |
| विश्वम् | ६. | संसार के | चरितम् | १६. | लीला |
| इदम् | ५. | इस | विडम्बनम् ।। | १७. | रहस्यमय है |
| च | ८. | और | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा इत्यादि लोक पाल जिनकी बनायी धर्म मर्यादा का पालन करते हैं। जो इस संसार के कारण हैं, और माया उनका आदेश पालन करती है। आश्चर्य है उनका आचरण पिशाचों के समान है, अतः उस जगत् व्यापक प्रभु की लीला रहस्यमय है।

## एकत्रिंश: श्लोक:

अथोपस्पृश्य सलिलं प्राणानायम्य वाग्यतः ।
ध्यायञ्जजाप विरजं ब्रह्म ज्योतिः सनातनम् ॥३१॥

पदच्छेद—

अथ उपस्पृश्य सलिलम् प्राणान् आयम्य वाग्यतः ।
ध्यायन् जजाप विरजम् ब्रह्म ज्योतिः सनातनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर (कश्यप जी) | ध्यायन् | ११. | ध्यान करते हुये |
| उपस्पृश्य | ३. | स्नान करके (और) | जजाप | १२. | जप करने लगे |
| सलिलम् | २. | जल में | विरजम् | ७. | शुद्ध |
| प्राणान् | ५. | प्राणायाम | ब्रह्म | १०. | ब्रह्म का |
| आयम्य | ६. | किये (तथा) | ज्योतिः ॥ | ८. | प्रकाश स्वरूप |
| वाग्यतः । | ४. | वाणी को संयत करके | सनातनम् ॥ | ९. | अनादि |

श्लोकार्थ—तदनन्तर कश्यप जी जल में स्नान करके और वाणी को संयत करके प्राणायाम किये, तथा शुद्ध प्रकाश स्वरूप अनादि ब्रह्म का ध्यान करते हुये जप करने लगे।

## द्वात्रिंश: श्लोक:

दितिस्तु व्रीडिता तेन कर्मावद्येन भारत ।
उपसंगम्य विप्रर्षिमधोमुख्यभ्यभाषत ॥३२॥

पदच्छेद—

दितिः तु व्रीडिता तेन कर्म अवद्येन भारत ।
उपसङ्गम्य विप्रर्षिम अधोमुखी अभ्यभाषत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दितिः | ३. | दिति | भारत | १. | हे विदुर जी |
| तु | २. | तदनन्तर (वह) | उपसङ्गम्य | ११. | पास जाकर |
| व्रीडिता | ७. | लज्जित होती हुई | विप्रर्षिम् | १०. | ब्रह्मर्षि कश्यप जी के |
| तेन | ४. | उस | अधो | ८. | नीचे |
| कर्म | ६. | कर्म से | मुखी | ९. | मुख करके |
| अवद्येन । | ५. | निन्दित | अभ्यभाषत ॥ | १२. | बोली |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तदनन्तर वह दिति उस निन्दित कर्म से लज्जित होती हुई, नीचे मुख करके ब्रह्मर्षि कश्यप जी के पास जाकर बोली।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

दितिः उवाच—

मा मे गर्भमिमं ब्रह्मन् भूतानामृषभो वधीत् ।
रुद्रः पतिर्हि भूतानां यस्याकरवमंहसम् ।।३३।।

पदच्छेद—

मा मे गर्भम् इमम् ब्रह्मन् भूतानाम् ऋषभः अवधीत् ।।
रुद्रः पतिः हि भूतानाम् यस्य अकरवम् अंहसम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मा | १०. | न | अवधीत् | ११. | नष्ट करें |
| मे, | ७. | मेरे | रुद्रः | ६. | भगवान् शंकर |
| गर्भम् | ९. | गर्भ को | पतिः | ३. | स्वामी (और) |
| इमम् | ८. | इस | हि | १२. | क्योंकि (मैंने) |
| ब्रह्मन् | १. | हे ब्रह्मन् | भूतानाम् | २. | भूतों के |
| भूतानाम् | ४. | भूतों में | यस्य | १३. | उनका |
| ऋषभः | ५. | श्रेष्ठ | अकरवम् | १५. | किया है |
| | | | अंहसम् । | १४. | अपराध |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! भूतों के स्वामी और भूतों में श्रेष्ठ भगवान् शंकर मेरे इस गर्भ को नष्ट न करें, क्योंकि मैंने उनका अपराध किया है ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

नमो रुद्राय महते देवायोग्राय मीढुषे ।
शिवाय न्यस्तदण्डाय धृतदण्डाय मन्यवे ।।३४।।

पदच्छेद—

नमः रुद्राय महते देवाय उग्राय मीढुषे ।
शिवाय न्यस्त दण्डाय धृत दण्डाय मन्यवे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः | ५. | नमस्कार है | शिवाय | ६. | वे संतों के लिये (कल्याण कारी (और) |
| रुद्राय | ३. | रुद्र स्वरूप | | | |
| महते देवाय | ४. | महादेव जी को | नयस्त | ८. | रहित (तथा) |
| उग्राय | २. | उग्र रूप | दण्डाय | ७. | दण्ड देने की भावना से |
| मीढुषे | १. | ( भक्तों के ) मनोरथ पूर्ण करने वाले । | धृतदण्डाय | १०. | देते हैं, उन्हें दण्ड |
| | | | मन्यवे । | ९. | क्रोध रूप (और) |

श्लोकार्थ—भक्तों के मनोरथ पूर्ण करने वाले उग्र रूप रुद्र स्वरूप महादेव जी को नमस्कार है वे संतों के लिये कल्याणकारी और दण्ड देने की भावना से रहित तथा क्रोध रूप और उन्हें दण्ड देते हैं ।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

स नः प्रसीदतां भामो भगवानुर्वनुग्रहः ।
व्याधस्याप्यनुकम्प्यानां स्त्रीणां देवः सतीपतिः ॥३५॥

पदच्छेद—

सः नः प्रसीदताम् भामः भगवान् उरु अनुग्रहः ।
व्याधस्य अपि अनुकम्प्यानाम् स्त्रीणाम् देवः सती पतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | ७. वे | व्याधस्य | १२. बहेलिया |
| नः | ३. हमारे | अपि | १३. भी |
| प्रसीदताम् | १०. प्रसन्न होवें (क्योंकि) | अनुकम्प्यानाम् | १४. दया करता (है) |
| भामः | ४. बहनोई (और) | स्त्रीणाम् | ११. स्त्रियों पर तो |
| भगवान् | ८. भगवान् | देवः | ९. महादेव जी |
| उरु | १. परम | सती | ५. सती के |
| अनुग्रहः । | २. कृपालु | पतिः ॥ | ६. पति |

श्लोकार्थ—परम कृपालु हमारे बहनोई और सती के पति वे भगवान् महादेव जी प्रसन्न होवें, क्योंकि स्त्रियों पर तो बहेलिया भी दया करता है।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

स्वसर्गस्याशिषं लोक्यामाशासानां प्रवेपतीम् ।
निवृत्तसन्ध्यानियमो भार्यामाह प्रजापतिः ॥३६॥

पदच्छेद—

स्वसर्गस्य आशिषम् लोक्याम् आशासानाम् प्रवेपतीम् ।
निवृत्त सन्ध्या नियमः भार्याम् आह प्रजापतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| स्व | ५. अपने | निवृत्त | ३. निवृत्त होकर |
| सर्गस्य | ६. गर्भस्थ सन्तान के | सन्ध्या | १. सन्ध्या |
| आशिषम् | ८. कल्याण की | नियमः | २. वन्दनादि से |
| लोक्याम् | ७. लौकिक और पार लौकिक | भार्याम् | ११. अपनी पत्नी दिति से |
| आशासानाम् | ९. कामना करने वाली (तथा) | आह | १२. बोले |
| प्रवेपतीम् । | १०. कांपती हुयी | प्रजापतिः ॥ | ४. प्रजापति कश्यप जी |

श्लोकार्थ—सन्ध्या वन्दनादि से निवृत्त होकर प्रजापति कश्यप जी अपने गर्भस्थ सन्तान के लौकिक और पार लौकिक कल्याण की कामना करने वाली तथा कांपती हुई अपनी पत्नी दिति से बोले।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

कश्यप उवाच—

अप्रायत्यादात्मनस्ते दोषान्मौहूर्तिकादुत ।
मन्निदेशातिचारेण देवानां चातिहेलनात् ॥३७॥

पदच्छेद—

अप्रायत्यात् आत्मनः ते दोषात् मौहूर्तिकात् उत ।
मत् निदेश अति चारेण देवानाम् च अतिहेलनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अप्रायत्यात् | ३. | वासनामय होने से | मत्, निदेश | ७. | (तुमने) मेरे आदेश का |
| आत्मनः | २. | मन के | अति चारेण | ८. | उल्लंघन किया है |
| ते | १. | (हे देविः !) तुम्हारे | देवानाम् | १०. | देवताओं का |
| दोषात् | ५. | अनुचित | च | ९. | और |
| मौहूर्तिकात् | ६. | समय था | अतिहेलनात् ॥ | ११. | अनादर किया है |
| उत । | ४. | तथा | | | |

श्लोकार्थ—हे देवि ! तुम्हारे मन के वासना मय होने से तथा अनुचित समय था । तुमने मेरे आदेश का उल्लंघन किया है और देवताओं का अनादर किया है ।

# अष्टात्रिंशः श्लोकः

भविष्यतस्तवाभद्रावभद्रे जाठराधमौ ।
लोकान् सपालांस्त्रींश्चण्डि मुहुराक्रन्दयिष्यतः ॥३८॥

पदच्छेद—

भविष्यतः तव अभद्रौ अभद्रे जाठर अधमौ ।
लोकान् सपालान् त्रीन् चण्डि मुहुः आक्रन्दयिष्यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भविष्यतः | ७. | होंगे (वे) | लोकान् | ९. | लोकों को |
| तव | ३. | तुम्हारे | सपालान् | १०. | लोकपालों सहित |
| अभद्रौ | ५. | अमंगलमय (और) | त्रीन् | ८. | तीनों |
| अभद्रे | १. | अमंगलमयी | चण्डि | २. | चण्डि, |
| जाठर | ४. | दोनों पुत्र | मुहुः | ११. | बार-बार |
| अधमौ । | ६. | अधम | आक्रन्दयिष्यतः ॥ | १२. | रुलायेंगे |

श्लोकार्थ—अमंगलमयी चण्डि, तुम्हारे दोनों पुत्र अमंगलमय और अधम होंगे । वे तीनों लोकों को लोकपालों सहित बार-बार रुलायेंगे ।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्राणिनां हन्यमानानां दीनानामकृतागसाम् ।
स्त्रीणां निगृह्यमाणानां कोपितेषु महात्मसु ॥३९॥

पदच्छेद—

प्राणिनाम् हन्यमानानाम् दीनानाम् अकृत आगसाम् ।
स्त्रीणाम् निगृह्यमाणानाम् कोपितेषु महात्मसु ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| प्राणिनाम् | ४. प्राणियों को | स्त्रीणाम् | ६. स्त्रियों को |
| हन्यमानानाम् | ५. मारेंगे | निगृह्यमाणाम् | ७. पकड़ेंगे (और) |
| दीनानाम् | ३. दीन | कोपितेषु | ९. क्रुद्ध करेंगे |
| अकृत | २. नहीं करने वाले | महात्मसु ॥ | ८. महात्माओं को |
| आगसाम् । | १. वे अपराध | | |

श्लोकार्थ—वे अपराध नहीं करने वाले दीन प्राणियों को मारेंगे। स्त्रियों को पकड़ेंगे और महात्माओ को क्रुद्ध करेंगे।

# चत्वारिंशः श्लोकः

तदा विश्वेश्वरः क्रुद्धो भगवाँल्लोकभावनः ।
हनिष्यत्यवतीर्यासौ यथाद्रीन् शतपर्वधृक् ॥४०॥

पदच्छेद—

तदा विश्वेश्वरः क्रुद्धो भगवान् लोक भावनः ।
हनिष्यति अवतीर्य असौ यथा अद्रीन् शतपर्वधृक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तदा | १. उस समय | हनिष्यति | १२. वध करेंगे |
| विश्वेश्वरः | ५. जगदीश श्री हरि | अवतीर्य | ७. अवतार लेंगे (और) |
| क्रुद्धः | ६. क्रुद्ध होकर | असौ | ११. वे (उनका) |
| भगवान् | ४. भगवान् | यथा | ८. जैसे |
| लोक | २. प्राणियों की | अद्रीन् | १०. पर्वतों को (नष्ट कर देता है) उसी प्रकार |
| भावनः । | ३. रक्षा करने वाले | शतपर्वधृक् ॥ | ९. वज्र धारी इन्द्र |

श्लोकार्थ—उस समय प्राणियों की रक्षा करने वाले भगवान् जगदीश श्री हरि क्रुद्ध होकर अवतार लेंगे, और जैसे वज्रधारी इन्द्र पर्वतों को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार वे उनका वध करेंगे।

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

दितिः उवाच—

वधं भगवता साक्षात्सुनाभोदारबाहुना ।
आशासे पुत्रयोर्मह्यं मा क्रुद्धाद्ब्राह्मणाद्विभो ।।४१।।

पदच्छेद—

वधम् भगवता साक्षात् सुनाभ उदार बाहुना ।
आशासे पुत्रयोः मह्यम् मा क्रुद्धात् ब्राह्मणात् विभो ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वधम् | ६. | वध की | आशासे | १०. | कामना करती हूँ |
| भगवता | ६. | भगवान श्री हरि से | पुत्रयोः | ८. | दोनों पुत्रों के |
| साक्षात् | ५. | स्वयम् | मह्यम् | ७. | मैं अपने |
| सुनाभ | ४. | चक्रधारण करने वाले | मा | १३. | वध न हो |
| उदार | २. | विशाल | क्रुद्धात् | ११. | कुपित |
| बाहुना । | ३. | भुजाओं में | ब्राह्मणात् | १२. | ब्राह्मण के शाप से (उनका) |
| | | | विभो । | १. | हे प्रभो |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! विशाल भुजाओं में चक्र धारण करने वाले स्वयम् भगवान् श्री हरि से मैं अपने दोनों पुत्रों के वध की कामना करती हूँ, कुपित ब्राह्मणों के शाप से उनका वध न हो ।

# द्विचत्वारिंशः श्लोकः

न ब्रह्मदण्डदग्धस्य न भूतभयदस्य च ।
नारकाश्चानुगृह्णन्ति यां यां योनिमसौ गतः ।।४२।।

पदच्छेद—

न ब्रह्म दण्ड दग्धस्य न भूतभयदस्य च ।
नारकाः च अनुगृह्णन्ति याम् याम् योनिम् असौ गतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ८. | नतो | नारकाः | ६. | नारकी जीव |
| ब्रह्मदण्ड | ६. | ब्राह्मणों के शाप से | च | ७. | भी |
| दग्धस्य | १०. | मरे हुये का | अनुगृह्णन्ति | १५. | उपकार करते हैं |
| न | १२. | नहीं | याम् | २. | जिस |
| भूत | १३. | प्राणियों को | याम् | ३. | किसी |
| भयदस्य | १४. | भय देने वाले का | योनिम् | ४. | शरीर में (क्यों न) |
| च ।। | ११. | और | असौ | १. | चाहे वह |
| | | | गतः ।। | ५. | गया हो |

श्लोकार्थ—चाहे वह जिस किसी शरीर में क्यों न गया हो, नारकी जीव भी न तो ब्राह्मणों के शाप से मरे हुये का और न ही प्राणियों को भय देने वाले का उपकार करते हैं ।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

कश्यप उवाच—

कृतशोकानुतापेन सद्यः प्रत्यवमर्शनात् ।
भगवत्युरुमानाच्च भवे मय्यपि चादरात् ॥४३॥

पदच्छेद— कृत शोक अनुतापेन सद्यः प्रत्यवमर्शनात् ।
भगवति उरु मानात् च भवेमयि अपि च आदरात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृत | १. | (हे देवि तुमने) किये गये अपराध पर | मानात् | ८. | श्रद्धा (है) |
| | | | च | ९. | और |
| शोक | २. | दुःख (और) | भवे | १०. | भगवान् शंकर में |
| अनुतापेन | ३. | पश्चाताप (किया है) | मयि | १२. | मेरे प्रति |
| सद्यः | ४. | तत्काल | अपि | १३. | भी |
| प्रत्यवमर्शनात् | ५. | उचित और अनुचित को विचारा है | च | ११. | तथा |
| | | | आदरात् ॥ | १४. | आदर का भाव है ! |
| भगवति | ६. | भगवान् श्री हरि में | | | |
| उरु । | ७. | (तुम्हारी) बहुत | | | |

श्लोकार्थ—हे देवि ! तुमने किये गये अपराध पर दुःख और पश्चाताप किया है, तत्काल उचित और अनुचित को विचारा है। भगवान् श्री हरि में तुम्हारी बहुत श्रद्धा है, और भगवान् शंकर में तथा मेरे प्रति भी आदर का भाव है।

## चतुःचत्वारिंशःश्लोकः

पुत्रस्यैव तु पुत्राणां भवितैकः सतां मतः ।
गास्यन्ति यद्यशः शुद्धं भगवद्यशसा समम् ॥४४॥

पदच्छेद— पुत्रस्य एव तु पुत्राणाम् भविता एकः सताम् मतः ।
गास्यन्ति यद्यशः शुद्धम् भगवत् यशसा समम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुत्रस्य | २. | तुम्हारे पुत्र के | गास्यन्ति | १५. | गान करेंगे। |
| एव | ३. | ही | यद् | १२. | जिसके |
| तु | १. | अतः | यशः | १४. | यश का |
| पुत्राणाम् | ४. | अनेकों पुत्रों में से | शुद्धम् | १३. | निर्मल |
| भविता | ८. | होगा | भगवत् | ९. | (संत जन) भगवान् के |
| एकः | ५. | एक पुत्र | यशसा | १०. | यश के |
| सताम् | ६. | सन्तों से | समम् ॥ | ११. | साथ |
| मतः । | ७. | पूजित | | | |

श्लोकार्थ—अतः तुम्हारे पुत्र के ही अनेकों पुत्रों में से एक पुत्र सन्तों से पूजित होगा। संत जन भगवान् के यश के साथ जिसके निर्मल यश का गान करेंगे।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

योगैर्हेमेव दुर्वर्णं भावयिष्यन्ति साधवः ।
निर्वैरादिभिरात्मानं यच्छीलमनुवर्तितुम् ॥४५॥

पदच्छेद—

योगैः हेम इव दुर्वर्णम् भावयिष्यन्ति साधवः ।
निर्वैर आदिभिः आत्मानम् यत् शीलम् अनुवर्तितुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| योगैः | ४. | (आग में) तपाकर | निर्वैर | ११. | मैत्री |
| हेम | ३. | सुवर्ण को | आदिभिः | १२. | इत्यादि (उत्तम भावों से शुद्ध करेंगे) |
| इव | १. | जैसे | | | |
| दुर्वर्णम् | २. | खोटे | आत्मानम | १०. | अपने मन को |
| भावयिष्यन्ति | ५. | शुद्ध करते हैं | यत् | ७. | जिसके |
| साधवः । | ६. | साधु जन उसी प्रकार | शीलम् | ८. | स्वभाव का |
| | | | अनुवर्तितुम् ॥ | ९. | अनुकरण करने के लिये |

श्लोकार्थ—जैसे खोटे सुवर्ण को आग में तपाकर शुद्ध करते हैं, उसी प्रकार साधुजन जिसके स्वभाव का अनुकरण करने के लिये अपने मन को मैत्री इत्यादि उत्तम भावों से शुद्ध करेंगे ।

# षड्चत्वारिंशः श्लोकः

यत्प्रसादादिदं विश्वं प्रसीदति यदात्मकम् ।
स स्वदृग्भगवान् यस्य तोष्यतेऽनन्यया दृशा ॥४६॥

पदच्छेद—

यत् प्रसादात् इदम् विश्वम् प्रसीदति यद् आत्मकम् ।
सः स्वदृक् भगवान् यस्य तोष्यते अनन्यया दृशा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | १. | जिनकी | सः | ८. | वे |
| प्रसादात् | २. | कृपा से | स्वदृक् | ९. | स्वयम् प्रकाश |
| इदम् | ५. | यह | भगवान् | १०. | भगवान् श्री हरि |
| विश्वम् | ६. | संसार | यस्य | ११. | उसकी |
| प्रसीदति | ७. | आनन्दित होता है | तोष्यते | १४ | प्रसन्न होंगे |
| यद् | ३. | उन्हीं के | अनन्यया | १२. | अनन्य |
| आत्मकम् । | ४. | स्वरूप वाला | दृशा ॥ | १३. | भक्ति से |

श्लोकार्थ—जिनकी कृपा से उन्हीं के स्वरूप वाला यह संसार आनन्दित होता है, वे स्वयम् प्रकाश भगवान् श्री हरि उसकी अनन्य भक्ति से प्रसन्न होंगे ।

# सप्तचत्वारिंश: श्लोक:

स वै महाभागवतो महात्मा महानुभावो महतां महिष्ठः ।
प्रवृद्धभक्त्या ह्यनुभाविताशये निवेश्य वैकुण्ठमिमं विहास्यति ।।४७।।

पदच्छेद—

सः वै महाभागवतः महात्मा महा अनुभावः महताम् महिष्ठः ।
प्रवृद्धः भक्त्या हि अनुभावित आशये, निवेश्य वैकुण्ठम् इमम् विहास्यति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः वै | ६. | वे (प्रह्लाद जी) | प्रवृद्धः | ७. | प्रगाढ़ |
| महाभागवतः | १. | परम भक्त | भक्त्या हि | ८. | भक्ति से |
| महात्मा | २. | उदार हृदय | अनुभावित | ९. | शुद्ध |
| महा अनुभावः | ३. | परम दयालु (तथा) | आशये | १०. | अन्तःकरण में |
| महताम् | ४. | महात्माओं से | निवेश्य | १२. | विराजमान करके |
| महिष्ठः । | ५. | पूजित | वैकुण्ठम् | ११. | भगवान् श्री हरि को |
| | | | इमम् विहास्यति ।। | १३. | इस शरीर का त्याग करेंगे । |

श्लोकार्थ—परम भक्त उदार हृदय परम दयालु तथा महात्माओं से पूजित वे प्रह्लाद जी प्रगाढ़ भक्ति से शुद्ध अन्तःकरण में भगवान् श्री हरि को विराजमान करके इस शरीर का त्याग करेंगे ।

# अष्टाचत्वारिंश: श्लोक:

अलम्पटः शीलधरो गुणाकरो हृष्टः परर्द्धर्या व्यथितो दुःखितेषु ।
अभूतशत्रुर्जगतः शोकहर्ता नैदाधिकं तापमिवोडुराजः ।।४८।।

पदच्छेद—

अलम्पटः शीलधरः गुण आकरः हृष्टः परर्द्धर्या व्यथितः दुःखितेषु ।
अभूत शत्रुः जगतः शोकहर्ता नैदाघिकम् तापम् इव उडुराजः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अलम्पटः | १. | वे विषयों में अनासक्त | अभूत शत्रुः | ८. | उनके शत्रु नहीं होंगे |
| शीलधरः | २. | विनयी | जगतः | १३. | संसार के |
| गुणआकरः | ३. | गुणों के भण्डार | शोक हर्त्ता | १४. | दुःख का हरण करेंगे |
| हृष्टः | ५. | प्रसन्न (और) | नैदाघिकम् | ९. | ग्रीष्म ऋतु के |
| परर्द्धर्या | ४. | दूसरों की सम्पत्ति से | तापम् | १०. | ताप को (मिटाने वाले) |
| व्यथितः | ७. | दुःखी (होंगे) | इव | १२. | समान (वे) |
| दुखितेषु । | ६. | दूसरों के दुःख से | उडुराजः ।। | ११. | चन्द्रमा के |

श्लोकार्थ—वे विषयों में अनासक्त, विनयी, गुणों के भण्डार, दूसरों की सम्पत्ति से प्रसन्न और दूसरों के दुःख से दुःखी होंगे । उनके शत्रु नहीं होंगे, ग्रीष्म ऋतु के ताप को मिटाने वाले चन्द्रमा के समान वे संसार के दुःख का हरण करेंगे ।

# एकोनपञ्चाशः श्लोकः

अन्तर्बहिश्चामलमब्जनेत्रं स्वपूरुषेच्छानुगृहीतरूपम् ।
पौत्रस्तव श्रीललनाललामं द्रष्टा स्फुरत्कुण्डलमण्डिताननम् ।।४९।।

पदच्छेद— अन्तः बहिः च अमलम् अब्ज नेत्रम्, स्वपूरुष इच्छा अनुगृहीत रूपम् ।
पौत्रः तव श्रीललना ललामम् द्रष्टा स्फुरत् कुण्डल मंडित आननम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तः | १. | संसार के अन्दर | पौत्रः | १८. | पौत्र को |
| बहिः | ३. | बाहर विद्यमान | तव | १७. | तुम्हारे |
| च | २. | और | श्रीललना | ८. | लक्ष्मी रूपी रमणी की |
| अमलम् | १४. | परम पवित्र भगवान् | ललामम् | ९. | शोभा बढ़ाने वाले (तथा) |
| अब्ज | १५. | कमल | दृष्टा | १९. | दर्शन होगा |
| नेत्रम् | १६. | नयन का | स्फुरत् | १०. | झिलमिलाते हुये |
| स्वपूरुष | ४. | अपने भक्तों की | कुण्डल | ११. | कुण्डलों से |
| इच्छा | ५. | इच्छा के अनुरूप | मण्डित | १२. | सुशोभित |
| अनुगृहीत | ७. | धारण करने वाले | आननम् ।। | १३ | मुख वाले |
| रूपम् । | ६. | स्वरूप | | | |

श्लोकार्थ—संसार के अन्दर और बाहर विद्यमान अपने भक्तों की इच्छा के अनुरूप स्वरूप धारण करने वाले लक्ष्मी रूपी रमणी की शोभा बढ़ाने वाले तथा झिलमिलाते हुये कुण्डलों से सुशोभित मुख वाले परम पवित्र भगवान् कमल नयन का तुम्हारे पौत्र को दर्शन होगा ।

# पञ्चाशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

श्रुत्वा भागवतं पौत्रममोदत दितिर्भृशम् ।
पुत्रयोश्च वधं कृष्णाद्विदित्वाऽऽसीन्महामनाः ।।५०।।

पदच्छेद— श्रुत्वा भागवतम् पौत्रम् :अमोदत दितिः भृशम् ।
पुत्रयोः च वधम् कृष्णात् विदित्वा आसीत् महामनाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रुत्वा | ४. | सुनकर | पुत्रयोः | ९. | अपने दोनों पुत्रों की |
| भागवतम् | ३. | भगवान् का भक्त | च | ७. | और |
| पौत्रम् | २. | अपने पौत्र को | वधम् | १०. | मृत्यु को |
| अमोदत | ६. | प्रसन्न हुई | कृष्णात् | ८. | भगवान् श्री हरि के हाथ से |
| दितिः | १. | माता दिति | विदित्वा | ११. | जानकर |
| भृशम् । | ५. | अत्यन्त | आसीत् | १३. | हो गया |
| | | | महामनाः । | १२. | उसका मन उत्साह से पूर्ण |

श्लोकार्थ—माता दिति अपने पौत्र को भगवान् का भक्त सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई और भगवान् श्री हरि के हाथ से अपने दोनों पुत्रों की मृत्य को जानकर उसका मन उत्साह से पूर्ण हो गया ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे दिति कश्यप संवादे चतुर्दशः अध्यायः ।। १४ ।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### अथ पञ्चदशः अध्यायः

मैत्रेय उवाच—

## प्रथमः श्लोकः

प्राजापत्यं तु तत्तेजः परतेजोहनं दितिः ।
दधार वर्षाणि शतम् शङ्कमाना सुरार्दनात् ॥१॥

पदच्छेद—

प्राजापत्यम् तु तत् तेजः परतेजोहनम् दितिः ।
दधार वर्षाणि शतम् शङ्कमाना सुर आर्दनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्राजापत्यम् | ७. | प्रजापति कश्यप के | दधार | १२. | धारण किया |
| तु | १. | तदनन्तर | वर्षाणि | ११. | वर्षों तक |
| तत् | ८. | उस | शतम् | १०. | एक सौ |
| तेजः | ९. | तेज को | शङ्कमाना | ४. | डरती हुई |
| परतेजोहनम् | ६. | दूसरों के तेज को नष्ट करने वाले | सुर | २. | देवताओं के |
| | | | आर्दनात् | ३. | कष्ट से |
| दितिः | ५. | माता दिति ने | | | |

श्लोकार्थ—तदनतर देवताओं के कष्ट से डरती हुई माता दिति ने दूसरों के तेज को नष्ट करने वाले प्रजापति कश्यप के उस तेज को एक सौ वर्षों तक धारण किया।

## द्वितीयः श्लोकः

लोके तेन हतालोके लोकपाला हतौजसः ।
न्यवेदयन् विश्वसृजे ध्वान्तव्यतिकरं दिशाम् ॥२॥

पदच्छेद—

लोके तेन हत आलोके लोक पालाः हत ओजसः ।
न्यवेदयन् विश्वसृजे, ध्वान्त व्यतिकरम् दिशाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लोके | २. | संसार में | ओजसः | ६. | तेज से |
| तेन | १. | (उस गर्भ के) तेज से | न्यवेदयन् | १२. | निवेदन किया |
| हत | ४. | मन्द पड़ गया | विश्वसृजे | ८. | ब्रह्मा जी से |
| आलोके | ३. | (सूर्य आदि का) प्रकाश | ध्वान्त | १०. | अन्धकार के कारण |
| लोक पालाः | ५. | इन्द्रादि लोक पाल | व्यतिकरम् | ११. | उत्पन्न अव्यवस्था के लिये |
| हत | ७. | रहित हो गये (उन्होंने) | दिशाम् | ९. | दिशाओं में |

श्लोकार्थ—उस गर्भ के तेज से संसार में सूर्य आदि का प्रकाश मन्द पड़ गया। इन्द्रादि लोकपाल तेज से रहित हो गये, उन्होंने ब्रह्मा जी से दिशाओं में अन्धकार के कारण उत्पन्न अव्यवस्था के लिये निवेदन किया।

# तृतीयः श्लोकः

देवा ऊचुः—

तम एतद्विभो वेत्थ संविग्ना यद्वयं भृशम् ।
न ह्यव्यक्तं भगवतः कालेनास्पृष्टवर्त्मनः ॥३॥

पदच्छेद—

तम एतद् विभो वेत्थ संविग्ना यद्वयम् भृशम् ।
न हि अव्यक्तम् भगवतः कालेन अस्पृष्ट वर्त्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम | १०. | अन्धकार के विषय में आप | न | ६. | नहीं |
| एतद् | ६. | इस | हि | ८. | अतः |
| विभो | १. | हे भगवान् ! | अव्यक्तम् | ७. | छिपा है |
| वेत्थ | ११. | जानते ही होंगे | भगवतः | ५. | आपसे कुछ भी |
| संविग्ना | १५. | भयभीत हो गये हैं | कालेन | २. | काल आपकी |
| यद् | १२. | जिससे | अस्पृष्ट | ४. | कुण्ठित नहीं कर सकता है |
| वयम् | १३. | हम सब | वर्त्मनः । | ३. | ज्ञान शक्ति को |
| भृशम् | १४. | अत्यन्त | | | |

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! काल आपकी ज्ञान शक्ति को कुण्ठित नहीं कर सकता है, आपसे कुछ भी नहीं छिपा है। अतः इस अन्धकार के विषय में आप जानते ही होंगे, जिससे हम सब अत्यन्त भयभीत हो गये हैं।

# चतुर्थः श्लोकः

देवदेव जगद्धातर्लोकनाथशिखामणे ।
परेषामपरेषां त्वं भूतानामसि भाववित् ॥४॥

पदच्छेद—

देव-देव जगत्धातः लोक नाथ शिखामणे ।
परेषाम् अपरेषाम् त्वम् भूतानाम् असि भाववित् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देव देव | १. | हे देवाधि देव ! (आप) | परेषाम् | ६. | बड़े |
| जगत् | २. | संसार के | अपरेषाम् | ८. | छोटे |
| धातः | ३. | रचयिता (और) | त्वम् | ७. | आप |
| लोक | ४. | लोक | भूतानाम् | १०. | सभी प्राणियों के |
| नाथ | ५. | पालों के | असि | ११. | हैं |
| शिखामणे | ६. | मुकुट मणि हैं | भाववित् ॥ | १०. | मन के भावों को जानने वाले |

श्लोकार्थ—हे देवाधि देव ! आप संसार के रचयिता और लोक पालों के मुकुट मणि हैं। आप छोटे बड़े सभी प्राणियों के मन के भावों को जानने वाले हैं।

## पञ्चमः श्लोकः

नमो विज्ञानवीर्याय माययेदमुपेयुषे ।
गृहीतगुणभेदाय नमस्तेऽव्यक्तयोनये ।।५।।

पदच्छेद—

नमः विज्ञान वीर्याय मायया इदम् उपेयुषे ।
गृहीत गुण भेदाय नमः ते अव्यक्त योनये ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः | ३. | नमस्कार है। (आप) | गृहीत | ८. | स्वीकार किये हैं |
| विज्ञान | १. | अनन्त विज्ञान की | गुण भेदाय | ७. | रजोगुण को |
| वीर्याय | २. | शक्ति से सम्पन्न (आपको) | नमः | १२. | नमस्कार है |
| मायया | ४. | माया के द्वारा | ते | ११. | आपको |
| इदम् | ५. | इस (चतुर्भुज) रूप को | अव्यक्त | १०. | अज्ञात है |
| उपेयुषे | ६. | धारण किये हैं (और) | योनये | ९. | आपकी उत्पत्ति का कारण |

श्लोकार्थ—अनन्त विज्ञान की शक्ति से सम्पन्न आपको नमस्कार है. आप माया के द्वारा इस चतुर्भुज रूप को धारण किये हैं और रजोगुण को स्वीकार किये हैं आपकी उत्पत्ति का कारण अज्ञात है, आपको नमस्कार है।

## षष्ठः श्लोकः

ये त्वानन्येन भावेन भावयन्त्यात्मभावनम् ।
आत्मनि प्रोतभुवनं परं सदसदात्मकम् ।।६।।

पदच्छेद—

ये त्वा अनन्येन भावेन भावयन्ति आत्मभावनम् ।
आत्मनि प्रोत भुवनम् परम् सत् असत् आत्मकम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | ११. | जो | आत्मनि | ५. | (आपकी) आत्मा में |
| त्वा | १० | आपका | प्रोत | ६. | समाया है (किन्तु) |
| अनन्येन | १२. | अनन्य | भुवनम् | ४. | सारा लोक |
| भावेन | १३. | भाव से | परम् | ७. | (आप उससे) परे हैं |
| भावयन्ति | १४. | ध्यान करते हैं (वे निर्भय हैं) | सत् | २. | कारण |
| आत्म | ८. | सभी जीवों को | अ सत् | १. | कार्य |
| भावनम् | ९. | उत्पन्न करने वाले | आत्मकम् | ३. | स्वरूप |

श्लोकार्थ—कार्य-कारण स्वरूप सारा लोक आपकी आत्मा में समाया है, किन्तु आप उससे परे हैं। सभी जीवों को उत्पन्न करने वाले आपका जो अनन्य भाव से ध्यान करते हैं, वे निर्भय हैं।

## सप्तमः श्लोकः

तेषां सुपक्वयोगानां जितश्वासेन्द्रियात्मनाम् ।
लब्धयुष्मत्प्रसादानां न कुतश्चित्पराभवः ।।७।।

पदच्छेद—

तेषाम् सुपक्व योगानाम् जितश्वास इन्द्रिय आत्मनाम् ।
लब्ध युष्मत् प्रसादानाम् न कुतश्चित् पराभवः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषाम् | ६. | उन (सिद्ध योगियों) का | लब्ध | ८. | प्राप्त हो गई है |
| सुपक्व | ५. | पक्का हो गया है (और) | युष्मत् | ६. | आपकी |
| योगानाम् | ४. | जिनका योग | प्रसादानाम् | ७. | कृपा |
| जितश्वास | ३. | जीत लेने के कारण | न | १२. | नहीं (होता है) |
| इन्द्रिय | १. | प्राण वायु इन्द्रिय (और) | कुतश्चित् | १०. | किसी से भी |
| आत्मनाम् | २. | मन को | पराभवः | ११. | विनाश |

श्लोकार्थ—प्राण वायु, इन्द्रिय और मन को जीत लेने के कारण जिनका योग पक्का हो गया है और आपकी कृपा प्राप्त हो गई है, उन सिद्ध योगियों का किसी से भी विनाश नहीं होता है।

## अष्टमः श्लोकः

यस्य वाचा प्रजाः सर्वा गावस्तन्त्येव यन्त्रिताः ।
हरन्ति बलिमायत्तास्तस्मै मुख्याय ते नमः ।।८।।

पदच्छेद—

यस्य वाचा प्रजाः सर्वा गावः तन्त्या इव यन्त्रिताः ।
हरन्ति बलिम् आयत्ताः तस्मै मुख्याय ते नमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्य | ५. | जिनकी | हरन्ति | ११. | समर्पित करती हैं |
| वाचा | ६. | वेद वाणी के | बलिम् | १०. | उपहार |
| प्रजाः | ६. | प्रजायें | आयत्ताः | ७. | अधीन होकर |
| सर्वा | ८. | सारी | तस्मै | १२. | उन सब के |
| गावः | २. | बैल | मुख्याय | १३. | प्राण स्वरूप |
| तन्त्या | ३. | रस्सी से | ते | १४. | आपको |
| इव | १. | जिस प्रकार | नमः | १५. | नमस्कार है |
| यन्त्रिताः | ४. | नियन्त्रित रहते हैं (उसी प्रकार) | | | |

श्लोकार्थ—जिस प्रकार बैल रस्सी से नियन्त्रित रहते हैं उसी प्रकार जिनकी वेद वाणी के अधीन होकर सारी प्रजायें उपहार समर्पित करती हैं, उन सबके प्राण स्वरूप आपको नमस्कार है।

## नवमः श्लोकः

स त्वं विधत्स्व शं भूमंस्तमसा लुप्तकर्मणाम् ।
अदभ्रदयया दृष्ट्या आपन्नानर्हसीक्षितुम् ॥९॥

पदच्छेद—

सः त्वम् विधत्स्व शम् भूमन् तमसा लुप्त कर्मणाम् ।
अदभ्र दयया दृष्ट्या आपन्नान् अर्हसि ईक्षितुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. | अब | कर्मणाम् | ३. | कर्मों का |
| त्वम् | ६. | आप | अदभ्र | १०. | अपार |
| विधत्स्व | ८. | कीजिये | दयया | ११. | दया |
| शम् | ७. | कल्याण | दृष्ट्या | १२. | दृष्टि से |
| भूमन् | १. | हे प्रभो ! इस | आपन्नान् | ९. | आप हम दुखियों को |
| तमसा | २. | अन्धकार से | अर्हसि | १४ | समर्थ हैं |
| लुप्त | ४. | लोप हो गया है (अतः) | ईक्षितुम् | १३. | देखने में |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! इस अन्धकार से कर्मों का लोप हो गया है। अतः अब आप कल्याण कीजिये। आप हम दुःखियों को अपार दया दृष्टि से देखने में समर्थ हैं।

## दशमः श्लोकः

एष देव दितेर्गर्भ ओजः काश्यपमर्पितम् ।
दिशस्तिमिरयन् सर्वा वर्धतेऽग्निरिवैधसि ॥१०॥

पदच्छेद—

एष देवः दितेः गर्भः ओजः काश्यपम् अर्पितम् ।
दिशः तिमिरयन् सर्वाः वर्धते अग्नि इव एधसि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एष | ८. | यह | दिशः | १२. | दिशाओं में |
| देव | ४. | हे भगवान् ! | तिमिरयन् | १३. | अन्धकार फैलाता हुआ |
| दितेः | ७. | दिति का | सर्वाः | ११. | सभी |
| गर्भः | १०. | गर्भ | वर्धते | १४ | बढ़ रहा है |
| ओजः | ९. | तेजस्वी | अग्नि | ३. | आग बढ़ती है (उसी प्रकार) |
| काश्यपम् | ५. | प्रजापति कश्यप के द्वारा | इव | १. | जैसे |
| अर्पितम् | ६. | स्थापित | एधसि | २. | ईंधन मिलने पर |

श्लोकार्थ—जैसे ईंधन मिलने पर आग बढ़ती है, उसी प्रकार हे भगवन् ! प्रजापति कश्यप के द्वारा स्थापित दिति का यह तेजस्वी गर्भ सभी दिशाओं में अन्धकार फैलाता हुआ बढ़ रहा है।

# एकादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

स प्रहस्य महाबाहो भगवान् शब्दगोचरः ।
प्रत्याचष्टात्मभूर्देवान् प्रीणन् रुचिरया गिरा ।।११।।

पदच्छेद—

सः प्रहस्य महाबाहो भगवान् शब्द गोचरः ।
प्रत्याचष्ट आत्म भूः देवान् प्रीणन् रुचिरया गिरा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. वे | प्रत्याचष्ट | १२. | बोले |
| प्रहस्य | ८. हँसे (और) | आत्मभूः | ७. | ब्रह्मा जी |
| महाबाहो | १. हे महाबाहो ! विदुर जी | देवान् | २. | देवताओं की |
| भगवान् | ६. भगवान् | प्रीणन् | ११. | प्रसन्न करते हुये |
| शब्द | ३. प्रार्थना | रुचिरया | ९. | मधुर |
| गोचरः | ४. सुनकर | गिरा | १०. | वाणी से (उन्हें) |

श्लोकार्थ—हे महाबाहो ! विदुर जी देवताओं की प्रार्थना सुनकर वे भगवान् ब्रह्मा जी हँसे और मधुर वाणी से उन्हें प्रसन्न करते हुये बोले ।।

# द्वादशः श्लोकः

ब्रह्मा उवाच—

मानसा मे सुता युष्मत्पूर्वजाः सनकादयः ।
चेरुर्विहायसा लोकाँल्लोकेषु विगतस्पृहाः ।।१२।।

पदच्छेद—

मानसाः मे सुता युष्मत्पूर्वजाः सनकादयः ।
चेरुः विहायसा लोकान् लोकेषु विगत स्पृहा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| मानसाः | ४. मानस | चेरुः | १२. | घूमते थे |
| मे | ३. मेरे | विहायसा | ११. | आकाश मार्ग से |
| सुता | ५. पुत्र | लोकान् | १०. | सभी लोकों में |
| युष्मत् | १. आप लोगों के | लोकेषु | ७. | लोकों की |
| पूर्वजाः | २. पूर्वज (तथा) | विगत | ९. | छोड़कर |
| सनकादयः | ६. सनकादि कुमार | स्पृहा | ८. | आसक्ति को |

श्लोकार्थ—आप लोगों के पूर्वज तथा मेरे मानस पुत्र सनकादि कुमार लोकों की आसक्ति को छोड़कर सभी लोकों में आकाश मार्ग से घूमते थे ।।

# त्रयोदशः श्लोकः

त एकदा भगवतो वैकुण्ठस्यामलात्मनः ।
ययुर्वैकुण्ठनिलयं सर्वलोकनमस्कृतम् ।।१३।।

पदच्छेद—

त एकदा भगवतः वैकुण्ठस्य अमल आत्मनः ।
ययुः वैकुण्ठ निलयम् सर्वलोक नमस्कृतम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| त | २. वे | ययुः | १२. गये |
| एकदा | १. एक बार | वैकुण्ठ | १०. वैकुण्ठ |
| भगवतः | ५. भगवान् | निलयम् | ११. धाम में |
| वैकुण्ठस्य | ६. वैकुण्ठ नाथ | सर्व | ७. सभी |
| अमल | ३. शुद्ध सत्त्व | लोक | ८. लोकों से |
| आत्मनः | ४. स्वरूप वाले | नमस्कृतम् | ९. श्रेष्ठ |

श्लोकार्थ—एक बार वे शुद्ध सत्त्व स्वरूप वाले भगवान् वैकुण्ठनाथ सभी लोकों से श्रेष्ठ वैकुण्ठ धाम में गये ।।

# चतुर्दशः श्लोकः

वसन्ति यत्र पुरुषाः सर्वे वैकुण्ठमूर्तयः ।
येऽनिमित्तनिमित्तेन धर्मेणाराधयन् हरिम् ।।१४।।

पदच्छेद—

वसन्ति यत्र पुरुषाः सर्वे वैकुण्ठ मूर्तयः ।
ये अनिमित्त निमित्तेन धर्मेण आराधयन् हरिम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| वसन्ति | ६. रहते हैं | ये | ७. जिन पुरुषों ने |
| यत्र | १. जिस लोक में | अनिमित्त | ८. निष्काम भावसे |
| पुरुषाः | ३. पुरुष | निमित्तेन | ९. भगवत् प्राप्ति के लिये |
| सर्वे | २. सभी | धर्मेण | १०. अपने धर्म के द्वारा |
| वैकुण्ठ | ४. विष्णु के | आराधयन् | १२. आराधना की है |
| मूर्तयः | ५. रूप में | हरिम् | ११. भगवान श्री हरि की |

श्लोकार्थ—जिस लोक में सभी पुरुष विष्णु के रूप में रहते हैं, जिन पुरुषों ने निष्काम भाव से भगवत् प्राप्ति के लिये अपने धर्म के द्वारा भगवान् श्री हरि की आराधना की है ।।

## पञ्चदशः श्लोकः

यत्र चाद्यः पुमानास्ते भगवान् शब्दगोचरः ।
सत्त्वं विष्टभ्य विरजं स्वानां नो मृडयन् वृषः ।।१५।।

पदच्छेद—

यत्र च आद्यः पुमान् आस्ते भगवान् शब्द गोचरः ।
सत्त्वम् विष्टभ्य विरजम् स्वानाम् नः मृडयन् वृषः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्र | २. | जिस (वैकुण्ठ लोक) में | सत्त्वम् | १०. | सत्त्व |
| च | १. | तथा | विष्टभ्य | ११. | शरीर धारण करके |
| आद्यः | ७. | आदि | विरजम् | ६. | शुद्ध |
| पुमान् | ८. | पुरुष नारायण | स्वानाम् | १३. | अपने भक्तों को |
| आस्ते | १५. | निवास करते हैं | नः | १२. | हम |
| भगवान् | ६. | भगवान् | मृडयन् | १४. | सुख पहुँचाते हुये |
| शब्द | ३. | वेद में | वृषः | ५. | धर्म स्वरूप |
| गोचरः | ४. | वर्णित (और) | | | |

श्लोकार्थ—तथा जिस वैकुण्ठ लोक में वेद में वर्णित और धर्म स्वरूप भगवान् आदि पुरुष नारायण शुद्ध सत्त्व शरीर धारण करके हम भक्तों को, सुख पहुँचाते हुये निवास करते हैं ।

## षोडशः श्लोकः

यत्र नैःश्रेयसं नाम वनं कामदुघैर्द्रुमैः ।
सर्वर्तुश्रीभिर्विभ्राजत्कैवल्यमिव मूर्तिमत् ।।१६।।

पदच्छेद—

यत्र नैः श्रेयसम् नाम वनम् काम दुघैः द्रुमैः ।
सर्व ऋतु श्रीभिः विभ्राजत् कैवल्यम् इव मूर्तिमत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्र | १. | जहाँ पर | सर्व | ५. | सभी |
| नैः श्रेयसम् | ६. | निःश्रेयस | ऋतु | ६. | ऋतुओं में |
| नाम | १०. | नाम का | श्रीभिः | ७. | शोभा से |
| वनम् | ११. | वन है (जो) | विभ्राजत् | ८. | सम्पन्न |
| काम | २. | कामनाओं को | कैवल्यम् | १४. | परम पुरुषार्थ (हो) |
| दुघैः | ३. | पूर्ण करने वाले | इव | १२. | मानो |
| द्रुमैः | ४. | वृक्षों से | मूर्तिमत् | १३. | शरीर धारी |

श्लोकार्थ—जहाँ पर कामनाओं को पूर्ण करने वाले वृक्षों से सभी ऋतुओं में शोभा से सम्पन्न निःश्रेयस नाम का वन है जो मानो शरीर धारी परम पुरुषार्थ हो ।

## सप्तदशः श्लोकः

वैमानिकाः सललनाश्चरितानि यत्र गायन्ति लोकशमलक्षपणानि भर्तुः ।
अन्तर्जलेऽनुविकसन्मधुमाधवीनां गन्धेन खण्डितधियोऽप्यनिलं क्षिपन्तः ।।१७।।

पदच्छेद— वैमानिकाः सललनाः चरितानि यत्र, गायन्ति लोक शमल क्षपणानि भर्तुः ।
अन्तर्जले अनुविकसन् मधुमाधवीनाम् गन्धेन खण्डितधियः अपि अनिलं क्षिपन्तः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैमानिकाः | २. | विमान चारी गन्धर्व | अनुविकसन् | १०. | खिली हुई |
| सललनाः | ३. | अपनी स्त्रियों के साथ | मधु | ११. | मकरन्द सहित |
| चरितानि | ५. | लीलाओं का | माधवीनाम् | १२. | माधवी लताओं की |
| यत्र | १. | जहाँ | गन्धेन | १३. | सुगन्ध से |
| गायन्ति | ६. | गान करते हैं (जो लीलायें) | खण्डित | १५. | खिच जाता है |
| लोक, शमल | ७. | लोगों के पापों का | धियः | १४. | उनका मन |
| क्षपणानि | ८. | नाश करने वाली (हैं) | अपि | १६. | (उस समय) वे |
| भर्तुः | ४. | अपने स्वामी की (उन) | अनिलम् | १७. | (गन्ध लाने वाले) वायु को |
| अन्तर्जले | ६. | जल के अन्दर | क्षिपन्तः | १८. | बुरा-भला कहते हैं |

श्लोकार्थ—जहाँ विमानचारी गन्धर्व अपनी स्त्रियों के साथ अपने स्वामी की उन लीलाओं का गान करते हैं, जो लीलायें लोगों के पापों का नाशकरने वाली हैं। जल के अन्दर खिली हुई मकरन्द सहित माधवी लताओं की सुगन्ध से उनका मन खिच जाता है, उस समय वे गन्ध लाने वाले वायु को बुरा-भला कहते हैं।

## अष्टादशः श्लोकः

पारावतान्यभृतसारसचक्रवाकदात्यूहहंसशुकतित्तिरिबर्हिणां यः ।
कोलाहलो विरमतेऽचिरमात्रमुच्चैर्भृङ्गाधिपे हरिकथामिव गायमाने ।।१८।।

पदच्छेद—पारावत अन्यभृत सारस चक्रवाक, दात्यूह हंस शुकतित्तिरि बर्हिणाम् यः ।
कोलाहलः विरमते अचिर मात्रम् उच्चैः, भृङ्गाधिपे हरिकथाम् इव गायमाने ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पारावत | ८. | कबूतर | कोलाहलः | १६. | कोलाहल है (वह) |
| अन्यभृत | ६. | कोयल | विरमते | १७. | बन्द हो जाता है |
| सारस | १०. | सारस | अचिर | ७. | थोड़ी देर के लिये |
| चक्रवाक | ११. | चकवे | मात्रम् | ६. | केवल |
| दात्यूहहंसशुक | १२. | पपीहे, हंस, तोते | उच्चैः | २. | ऊँची गुञ्जार से |
| तित्तिरि | १३. | तीतर (और) | भृङ्गाधिपे | १. | जब भौंरे |
| बर्हिणाम् | १४. | भौंरों का | हरि कथाम् | ४. | श्री हरि कथा का |
| यः | १५. | जो | इव | ३. | मानो |
| | | | गायमाने | ५. | गान करते हैं (उस समय) |

श्लोकार्थ—जब भौंरे ऊँची गुञ्जार से मानों श्री हरि कथा का गान करते हैं, उस समय केवल थोड़ी देर के लिये कबूतर, कोयल, सारस, चकवे, पपीहे, हंस, तोते तीतर और भौंरों का जो कोलाहल है, वह बन्द हो जाता है।

# एकोनविंशः श्लोकः

मन्दारकुन्दकुरबोत्पलचम्पकार्णपुन्नागनागबकुलाम्बुजपारिजाताः ।
गन्धेऽर्चिते तुलसिकाभरणेन तस्या यस्मिंस्तपः सुमनसो बहु मानयन्ति ॥१९॥

पदच्छेद—मन्दार कुन्द कुरब उत्पल चम्पक अर्ण, पुन्नाग नाग बकुल अम्बुज पारिजाताः ।
गन्धे अर्चिते तुलसिका आभरणेन तस्याः यस्मिन् तपः सुमनसः बहु मानयन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मन्दार, कुन्द | ६. | मन्दार., कुन्द | अर्चिते | ५. | आदर करते हैं (अतः) |
| कुरब, उत्पल | ७. | कुरबक, कमलिनी | तुलसिका | २. | तुलसी के |
| चम्पक, अर्ण | ८. | चम्पा, अर्ण | आभरणेन | ३. | आभूषण से (सजते हैं, और) |
| पुन्नाग | ९. | पुन्नाग | तस्याः | १५. | उस तुलसी की |
| नाग | १०. | नाग केसर | यस्मिन् | १. | भगवान श्री हरि |
| बकुल | ११. | मौलसिरी | तपः | १६. | तपस्या को |
| अम्बुज | १२. | कमल (और) | सुमनसः | १४. | पुष्प |
| पारिजाताः | १३. | पारिजातादि | बहु | १७. | बहुत |
| गन्धे | ४. | उसकी सुगन्ध का | मानयन्ति | १८. | मानते हैं |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि तुलसी के आभूषण से सजते हैं, और उसकी सुगन्ध का आदर करते हैं अतः मन्दार, कुन्द, कुरबक, कमलिनी, चम्पा, अर्ण, पुन्नाग, नाग केसर, मौलसिरी, कमल और पारिजातादि पुष्प उस तुलसी की तपस्या को बहुत मानते हैं।

# विंशः श्लोकः

यत्संकुलं हरिपदानतिमात्रदृष्टैर्वैदूर्यमारकतहेममयैर्विमानैः ।
येषां बृहत्कटितटाः स्मितशोभिमुख्यः कृष्णात्मनां न रज आदधुरुत्स्मयाद्यैः ॥२०॥

पदच्छेद—यत् संकुलम् हरिपद अनतिमात्र दृष्टैः वैदूर्यमारकत हेममयैः विमानैः ।
येषाम् बृहत् कटितटाः स्मित शोभिमुख्यः, कृष्ण आत्मनाम् न रजः आदधुः उत्स्मय आद्यैः ।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यत् | १. | जो वैकुण्ठ लोक | कटितटाः | १२. नितम्बों वाली (तथा) |
| संकुलम् | ४. | भरा है (वे विमान) | स्मित, शोभि | १३. मुसकान से, शोभित |
| हरिपद | ५. | श्री हरि के चरणार विन्दों की | मुख्यः | १४. वहाँ की सुन्दरियाँ |
| अनति मात्र | ६. | तनिक | कृष्ण | ९. भगवान श्री कृष्ण को अपना |
| दृष्टैः | ७. | कृपा दृष्टि से (मिलते हैं) | आत्मनाम् | १०. प्राण समझनेवाले भक्तोंके चित्त में |
| वैदूर्य, मारकत | २. | वैदूर्य मणि, मारकतमणि | न, रजः | १७. नहीं, काम विकार |
| हेममयैः, विमानैः | ३. | स्वर्ण निर्मित, विमानों से | आदधुः | १८. उत्पन्न कर सकती हैं |
| येषाम् | ८. | उन पर चढ़ने वाले (तथा) | उत्स्मय | १५. अपनी मधुर मुस्कान (और) |
| बृहत् | ११. | बड़े-बड़े | आद्यैः | १६. हास-परिहास में भी |

श्लोकार्थ—जो वैकुण्ठ लोक वैदूर्य मणि मारकतमणि और स्वर्ण निर्मित विमानों से भरा है, वे विमान श्री हरि के चरणार विन्दों की तनिक कृपा दृष्टि से मिलते हैं। उन पर चढ़ने वाले तथा भगवान् श्री कृष्ण को अपना प्राण समझने वाले भक्तों के चित्त में बड़े-बड़े नितम्बों वाली तथा मुसकान से शोभित वहाँ की सुन्दरियाँ अपनी मधुर मुसकान और हास-परिहास में भी काम-विकार नहीं उत्पन्न कर सकती हैं।

## एकविंशः श्लोकः

**श्री रूपिणी क्वणयती चरणारविन्दं लीलाम्बुजेन हरिसद्मनि मुक्तदोषा ।**
**संलक्ष्यते स्फटिककुड्य उपेतहेम्नि सम्मार्जतीव यदनुग्रहणेऽन्ययत्नः ॥२१॥**

पदच्छेद—श्री रूपिणी क्वणयती चरणारविन्दम् लीला अम्बुजेन हरि सद्मनि मुक्त दोषा ।
संलक्ष्यते स्फटिक कुड्य उपेत हेम्नि, सम्मार्जति इव यद् अनुग्रहणे अन्ययत्नः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्री | ५. | (वे) लक्ष्मी जी | संलक्ष्यते | १६. | ऐसा जान पड़ता है |
| रूपिणी | ४. | सौन्दर्य शाली | स्फटिक | १४. | स्फटिक मणि की |
| क्वणयती | १०. | (नूपुरों की) झनकार करती हुई | कुड्य | १५. | दीवार में |
| | | | उपेत | १३. | युक्त |
| चरण,अरविन्दम् | ९. | चरण, कमलों के | हेम्नि | १२. | (उस समय) सुवर्ण से |
| लीला,अम्बुजेन | ११. | लीला, कमल से (खेलती हैं) | सम्मार्जति | १८. | झाड़ दे रही हैं |
| हरि, सद्मनि | ६. | श्री हरि के, भवन में | इव | १७. | मानों (वे) |
| मुक्त | ८. | छोड़कर | यद् | १. | जिनकी |
| दोषा | ७. | चंचलता को | अनुग्रहणे | २. | कृपा प्राप्ति के लिये |
| | | | अन्य यत्नः | ३. | दूसरे देवता लोग प्रयास करते हैं |

श्लोकार्थ—जिनकी कृपा प्राप्ति के लिये दूसरे देवता लोग प्रयास करते हैं, सौन्दर्यशाली वे लक्ष्मी जी श्रीहरि के भवन में चंचलता को छोड़ कर चरण कमलों के नूपुरों की झनकार करती हुई लीला कमल से खेलती हैं। उस समय सुवर्ण से युक्त स्फटिक मणि की दीवार में ऐसा जान पड़ता है। मानों वे झाड़ू दे रही हैं।

## द्वाविंशः श्लोकः

**वापीषु विद्रुमतटास्वमलामृताप्सु प्रेष्यान्विता निजवने तुलसीभिरीशम् ।**
**अभ्यर्चती स्वलकमुन्नसमीक्ष्य वक्त्रमुच्छेषितं भगवतेत्यमताङ्ग यच्छ्रीः ॥२२॥**

पदच्छेद—वापीषु विद्रुम तटासु अमल अमृत अप्सु, प्रेष्य अन्विता निजवने तुलसीभिः ईशम् ।
अभ्यर्चती सुअलकम् उन्नसम् ईक्ष्य वक्त्रम् उच्छेषितम् भगवता इति अमत अङ्गयत् श्रीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वापीषु | १०. | बावड़ियों में | सुअलकम् | ११. | सुन्दर अलकावलि (और) |
| विद्रुम, तटासु | ७. | मूंगे के, घाट वाली(तथा) | उन्नसम् | १२. | ऊँची नासिका से युक्त |
| अमल, अमृत | ८. | स्वच्छ और मीठे | ईक्ष्य | १४. | देखकर |
| अप्सु | ९. | जल वाली | वक्त्रम् | १३. | (अपने) मुख की परछांई को |
| प्रेष्य, अन्विता | ३. | दासियों को, साथ लिये हुये | उच्छेषितम् | १६. | चुम्बन किया है |
| निजवने,तुलसीभिः | ४. | अपने क्रीड़ा वन में, तुलसी दल से जब | भगवता | १५. | भगवान (श्री हरि ने(इसका) |
| | | | इति, अमत | १७. | इसलिये उसे बहुत आदर देती है |
| ईशम् | ५. | अपने स्वामी श्री हरि की | अङ्ग, यत् | १. | हे प्यारे, देवताओं ! जो |
| अभ्यर्चती | ६. | पूजा करती हैं (तब) | श्रीः | २. | लक्ष्मी जी |

श्लोकार्थ—हे प्यारे देवताओं ! जो लक्ष्मी जी दासियों को साथ लिये हुये अपने क्रीड़ावन में तुलसीदल से जब अपने स्वामी श्रीहरि की पूजा करती हैं, तब मूंगे के घाट वाली तथा स्वच्छ और मीठे जल वाली बावड़ियों में सुन्दर अलकावलि और ऊँची नासिका से युक्त अपने मुख की परछांई को देखकर भगवान श्री हरि ने इसका चुम्बन किया है। इसलिये उसे बहुत आदर देती हैं।

# त्रयविंशः श्लोकः

**यन्न व्रजन्त्यघभिदो रचनानुवादाच्छृण्वन्ति येऽन्यविषयाः कुकथा मतिघ्नीः ।**
**यास्तु श्रुता हतभगैर्नृभिरात्तसारास्तांस्तान् क्षिपन्त्यशरणेषु तमःसु हन्त ॥२३॥**

पदच्छेद—यत् न व्रजन्ति अघ भिदः रचना अनुवादात् शृण्वन्ति ये अन्य विषयाः कुकथा मतिघ्नीः ।
याः तु श्रुता हतभगैः नृभिः आत्तसाराः तान्-तान् क्षिपन्ति अशरणेषु तमः सु हन्त ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यत् | ८. उस वैकुण्ठ लोक में | याः | १५. | जो कथायें हैं (वे) |
| न, व्रजन्ति | ९. नहीं, जा सकते हैं | तुः | १०. | (तथा) इसके विपरीत |
| अघ, भिदः | २. पापों को, दूर करने वाली | श्रुता | १३. | सुनी गई |
| रचना,अनुवादात् | ३. भगवत् लीला के,गान को छोड़कर | हतभगैः,नृभिः | १२. | अभागे, लोगों से |
| शृण्वन्ति | ७. सुनते हैं (वे) | आत्त सारा: | १४. | सारहीन |
| ये | १. जो लोग | तान्-तान् | १६. | उन-उन (लोगों को) |
| अन्य विषयाः | ५. अर्थ और काम, विषय की | क्षिपन्ति | १८. | फेंक देती हैं |
| कु कथाः | ६. निन्दित कथाओं को | अशरणेषु,तमःसु | १७. | आश्रयहीन, नरक लोक में |
| मतिघ्नीः | ४. बुद्धि को दूषित करने वाली | हन्तः | ११. | हाय |

श्लोकार्थ—जो लोग पापों को दूर करने वाली भगवत् लीला के गान को छोड़ कर बुद्धि को दूषित करने वाली अर्थ और काम विषय की निन्दित कथाओं को सुनते हैं; वे उस वैकुण्ठ लोक में नहीं जा सकते हैं; तथा इसके विपरीत हाय अभागे लोगों से सुनी गई सारहीन जो कथायें हैं वे उन-उन लोगों को आश्रयहीन नरक लोक में फेंक देती हैं ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

**येऽभ्यर्थितामपि च नो नृगतिं प्रपन्ना ज्ञानं च तत्त्वविषयं सहधर्म यत्र ।**
**नाराधनं भगवतो वितरन्त्यमुष्य सम्मोहिता विततया बत मायया ते ॥२४॥**

पदच्छेद—ये अभ्यर्थिताम् अपि च नः नृगतिम्, प्रपन्ना ज्ञानम् च तत्त्व विषयम् सहधर्म यत्र ।
न आराधनम् भगवतः वितरन्ति अमुष्य, सम्मोहिताः विततया बत मायया ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ये | १२. जो लोग | यत्र | १. | जिस योनि में |
| अभ्यर्थिताम् | ९. जिसे चाहते हैं | न | १५. | नहीं |
| अपि | ११. भी | आराधनम् | १४. | आराधना |
| च | ६. प्राप्ति होती है | भगवतः | १३. | भगवान श्री हरि की |
| नः | ८. हम देवतागण भी | वितरन्ति | १६. | करते हैं |
| नृगतिम्,प्रपन्नाः | १०. उस मनुष्य योनि को प्राप्त करके | अमुष्य | १९. | उस प्रभु की |
| ज्ञानम् | ५. ज्ञान की | सम्मोहिताः | २२. | मोहित होते हैं |
| च | ७. तथा | विततया | २०. | सर्वत्र फैली हुई |
| तत्त्व, विषयम् | ४. तत्त्व, विषयक | बत | १७. | खेद है कि |
| सह | ३. साथ | मायया | २१. | माया से |
| धर्म | २. धर्म के | ते | १८. | वे लोग |

श्लोकार्थ—जिस योनि में धर्म के साथ तत्त्व विषयक ज्ञान की प्राप्ति होती है, तथा हम देवता गण भी जिसे चाहते हैं, उस मनुष्य योनि को प्राप्त करके भी जो लोग भगवान् श्रीहरि की आराधना नहीं करते हैं, खेद है कि वे लोग उस प्रभु की सर्वत्र फैली हुई माया से मोहित होते हैं।

# पञ्चविंशः श्लोकः

यच्च व्रजन्त्यनिमिषामृषभानुवृत्त्या दूरेयमा ह्युपरि नः स्पृहणीयशीलाः ।
भर्तुर्मिथः सुयशसः कथनानुरागवैक्लव्यबाष्पकलया पुलकीकृताङ्गाः ।।२५।।

पदच्छेद— यत् च व्रजन्ति अनिमिषाम् ऋषभ अनुवृत्त्या दूरे यमाः हि उपरि नः स्पृहणीय शीलाः ।
भर्तुः मिथः सुयशसः कथन अनुराग, वैक्लव्यबाष्पकलया पुलकीकृतअङ्गाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यत् | ११. उस वैकुण्ठ लोक में | स्पृहणीय | ७. इच्छा करते हैं |
| च | ४. तथा | शीलाः | ६. जिनके शील स्वभाव की |
| व्रजन्ति | १२. जाते हैं | भर्तुः | १४. अपने स्वामी श्री हरि की |
| अनिमिषाम् | ५. देवगण | मिथः | १३. आपस में |
| ऋषभ, अनुवृत्त्या | १. भगवान् श्री हरि की, भक्ति के कारण | सुयशसः कथन | १५. सुन्दर लीलाओं के, गान और |
| दूरे | ३. जिनसे दूर रहते हैं | अनुराग, वैक्लव्य | १६. प्रेम की, विह्वलता के कारण (उनके) |
| यमाः | २. यमराज के दूत | बाष्प | १७. (आँखों से) अश्रु की |
| हि | ८. वे भक्त गण | कलया | १८. धारा बहती है (और) |
| उपरि | १०. ऊपर स्थित | पुलकी, कृत | २०. रोमांच हो जाता है |
| नः । | ९. हमारे | अङ्गाः ।। | १९. शरीर में |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की भक्ति के कारण यमराज के दूत जिनसे दूर रहते है, तथा देवगण जिनके शील स्वभाव की इच्छा करते हैं, वे भक्त गण हमारे ऊपर स्थित उस वैकुण्ठ लोक में जाते हैं । आपस में अपने स्वामी श्री हरि की सुन्दर लीलाओं के गान और प्रेम की विह्वलता के कारण उनके आंखों से अश्रु की धारा बहती है और शरीर में रोमांच हो जाता है ।

# षड्विंशः श्लोकः

तद्विश्वगुर्वधिकृतं भुवनैकवन्द्यं दिव्यं विचित्रविबुधाग्र्यविमान शोचिः ।
आपुः परां मुदमपूर्वमुपेत्य योगमायाबलेन मुनयस्तदथो विकुण्ठम् ।।२६।।

पदच्छेद— तद् विश्व गुरु अधिकृतम् भुवनैक वन्द्यम्, दिव्यम् विचित्र विबुध अग्र्य विमान शोचिः ।
आपुः पराम् मुदम् अपूर्वम् उपेत्य योगमाया बलेन मुनयः तद् अथ विकुण्ठम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तद् | २. वह | आपुः | १८. प्राप्त किया |
| विश्वगुरु | १. जगद्गुरु श्री हरि का | पराम्, मुदम् | १७. परम, आनन्द को |
| अधिकृतम्, भुवन | ३. निवास स्थान, सभी लोकों में | अपूर्वम् | १६. अलौकिक |
| एकवन्द्यम् | ४. प्रधान वन्दनीय (और) | उपेत्य | १५. पहुँच कर |
| दिव्यम् | ५. अद्भुत (तथा) | योगमाया, बलेन | १२. योग के, प्रभाव से |
| विचित्र | ८. अनेक प्रकार के | मुनयः | ११. सनकादि कुमारों ने |
| विबुध | ७. देवताओं के | तद् | १३. उस |
| अग्र्य | ६. श्रेष्ठ | अथ | १०. तदनन्तर |
| विमान; शोचिः | ९. विमानों से, सुशोभित था | विकुण्ठम् ।। | १४. वैकुण्ठ लोक में |

श्लोकार्थ—जगद्गुरु श्री हरि का वह निवास स्थान सभी लोकों में प्रधान वन्दनीय और अद्भुत तथा श्रेष्ठ देवताओं के अनेक प्रकार के विमानों से सुशोभित था । तदनन्तर सनकादि कुमारों ने योग के प्रभाव से उस वैकुण्ठ लोक में पहुँचकर अलौकिक परम आनन्द को प्राप्त किया ।

## सप्तविंशः श्लोकः

तस्मिन्नतीत्य मुनयः षडसज्जमानाः कक्षाः समानवयसावथ सप्तमायाम् ।
देवावचक्षत गृहीतगदौ परार्ध्यकेयूरकुण्डलकिरीटविटङ्कवेषौ ।।२७।।

पदच्छेद—तस्मिन् अतीत्य मुनयः षट् असज्जमानाः कक्षाः समान वयसौ अथ सप्तमायाम् ।
देवा अचक्षत गृहीत गदौ परार्ध्य, केयूर कुण्डल किरीट विटङ्क वेषौ ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मिन् | १. | वहाँ वैकुण्ठ लोक में | देवा | १७. | दो देवताओं को |
| अतीत्य | ६. | पार करने के | अचक्षत | १८. | देखा |
| मुनयः | ३. | सनकादि कुमार | गृहीत | ११. | लिये हुये |
| षट् | ४. | छः | गदौ | १०. | हाथ में गदा |
| असज्जमानाः | २. | लुभाने वाली (वस्तुओं में) आसक्त न होते हुये | परार्ध्य | १२. | बहुमूल्य |
| | | | केयूर | १३. | कंगन, बाजूबंद |
| कक्षाः | ५. | ड्योढ़ियों को | कुण्डल, किरीट | १४. | कुण्डल और मुकुट से |
| समान वयसौ | ९. | समान अवस्था वाले | विटङ्क | १५. | अलंकृत |
| अथ | ७. | पश्चात् | वेषौ | १६. | वेष वाले |
| सप्तमायाम् | ८. | सातवीं ड्योढ़ी पर पहुँचे (वहाँ पर उन्होंने) | | | |

श्लोकार्थ—वहाँ वैकुण्ठ लोक में लुभाने वाली वस्तुओं में आसक्त न होते हुये सनकादि कुमार छः ड्योढ़ियों को पार करने के पश्चात् सातवीं ड्योढ़ी पर पहुँचे वहाँ पर उन्होंने समान अवस्था वाले हाथ में गदा लिये हुये बहुमूल्य कंगन, बाजूबंद, कुंडल और मुकुट से अलंकृत वेष वाले दो देवताओं को देखा ।

## अष्टविंशः श्लोकः

मत्तद्विरेफवनमालिकया निवीतौ विन्यस्तयासितचतुष्टय बाहुमध्ये ।
वक्त्रं भ्रुवा कुटिलया स्फुटनिर्गमाभ्यां रक्तेक्षणेन च मनाग्रभसं दधानौ ।।२८।।

पदच्छेद—मत्तद्विरेफ वन मालिकया निवीतौ, विन्यस्तया असित चतुष्टय बाहुमध्ये ।
वक्त्रम् भ्रुवा कुटिलया स्फुट निर्गमाभ्याम्, रक्त ईक्षणेन च मनाक् रसभम् दधानौ ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मत्तद्विरेफ | ४. | मतवाले,मधुकरों की गुंजार से | भ्रुवा | ९. | भौंहें |
| वन मालिकया | ६. | वनमाला | कुटिलया | ८. | टेढ़ी |
| निवीतौ | ७. | धारण किये हुये थे | स्फुट,निर्गमाभ्याम् | १०. | फड़कते, नासिका पुट |
| विन्यस्तया | ५. | सुशोभित | रक्त, ईक्षणेन | १२. | लाल, आँखों के कारण |
| असित | २. | श्यामली | च | ११. | और |
| चतुष्टय | १. | वे दोनों चारों | मनाक् | १४. | कुछ |
| बाहु, मध्ये | ३. | भुजाओं के, बीच में | रसभम् | १५. | क्रोध के चिन्ह |
| वक्त्रम् | १३. | (उनके) चेहरे पर | दधानौ | १६. | दिखाई दे रहे थे |

श्लोकार्थ—वे दोनों चारों श्यामली भुजाओं के बीच में मतवाले मधुकरों की गुंजार से सुशोभित वनमाला धारण किये हुये थे; टेढ़ी भौंहें, फड़कते नासिकापुट और लाल आँखों के कारण उनके चेहरे पर कुछ क्रोध के चिन्ह दिखाई दे रहे थे ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

द्वार्येतयोर्निविविशुर्मिषतोरपृष्ट्वा, पूर्वा यथा पुरटवज्रकपाटिका याः ।
सर्वत्र तेऽविषमया मुनयः स्वदृष्ट्या ये सञ्चरन्त्यविहता विगताभिशङ्काः ॥२९॥

पदच्छेद— द्वारि एतयोः निविविशुः मिषतोः अपृष्ट्वा, पूर्वा यथा पुरट वज्र कपाटिका याः ।
सर्वत्र ते अविषमयां मुनयः स्वदृष्ट्या, ये सञ्चरन्ति अविहताः विगत अभिशङ्काः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वारि, एतयोः | ६. | उस दरवाजे में, उन दोनों के | सर्वत्र | १३. | सब जगह |
| निविविशुः | ९. | प्रवेश किया | ते | १०. | उन |
| मिषतोः | ७. | देखते रहने पर भी | अविषमया | १४. | समान थी |
| अपृष्ट्वा | ८. | बिना पूछे | मुनयः | ११. | सनकादि कुमारों की |
| पूर्वा | ४. | पहले की ड्योढ़ियां थीं) | स्वदृष्ट्या | १२. | दृष्टि |
| यथा | ५. | जैसे (उसमें प्रवेश किया था | ये | १५. | वे |
| पुरट, वज्र | १. | सुवर्ण और वज्र से बने | सञ्चरन्ति | १९. | विचरण करते थे |
| कपाटिका | २. | किवाड़ों से युक्त | अविहताः | १८. | वे रोक-टोक |
| याः । | ३. | जो | विगत | १७. | रहित होकर |
| | | | अभिशङ्काः ॥ | १६. | भय |

श्लोकार्थ—सुवर्ण और वज्र से बने किवाड़ों से युक्त जो पहले की ड्योढ़ियाँ थीं जैसे उसमें प्रवेश किया था उसी प्रकार उस दरवाजे में उन दोनों के देखते रहने पर भी बिना पूछे प्रवेश किया, उन सनकादि कुमारों की दृष्टि सब जगह समान थी वे भय रहित होकर वे रोक-टोक विचरण करते थे ।

# त्रिंशः श्लोकः

तान् वीक्ष्य वातरसनांश्चतुरः कुमारान् वृद्धान्दशार्धवयसो विदितात्मतत्त्वान् ।
वेत्रेण चास्खलयतामतदर्हणांस्तौ तेजो विहस्य भगवत्प्रतिकूलशीलौ ॥३०॥

पदच्छेद— तान् वीक्ष्य वातरसनान् चतुरः कुमारान् वृद्धान् दशार्धवयसः विदितः आत्म तत्त्वान् ।
वेत्रेण चास्खलयताम् अतद्अर्हणाम् तौ, तेजः विहस्य भगवत् प्रतिफूल शीलौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तान्, वीक्ष्य | ७. | उन्हें देखकर | च | १४. | यद्यपि वे |
| वात, रसनान् | १. | दिगम्बर, वृत्ति से रहने वाले | अस्खलयताम् | १३. | उन्हें रोक दिया |
| चतुरः कुमारान् | २. | चारों, सनकादि कुमार | अ | १६. | नहीं थे |
| वृद्धान् | ३. | ब्रह्मा की सृष्टि में सबसे बड़े | तद्, अर्हणाम् | १५. | उस व्यवहार के, योग्य |
| दशार्ध, वयसः | ४. | पांच वर्ष की अवस्था वाले | तौ | १०. | दोनों द्वार पालों ने |
| विदितः | ६. | पूर्ण ज्ञाता थे | तेजः, विहस्य | ११. | उनके तेज का, उपहास करते हुये |
| आत्म, तत्त्वान् | ५. | ब्रह्म, स्वरूप के | भगवत्, प्रतिकूल | ८. | भगवान् के, विपरीत |
| वेत्रेण । | १२. | वेंत अड़ाकर | शीलौ ॥ | ९. | शील और स्वभाव वाले |

श्लोकार्थ—दिगम्बर वृत्ति से रहने वाले चारों सनकादि कुमार ब्रह्मा की सृष्टि में सबसे बड़े किन्तु पाँच वर्ष की अवस्था वाले ब्रह्म स्वरूप के पूर्ण ज्ञाता थे; उन्हें देखकर भगवान् के विपरीत शील और स्वभाव वाले दोनों द्वारपालों ने उनके तेज का उपहास करते हुये बेंत अड़ाकर उन्हें रोक दिया; यद्यपि वे उस व्यवहार के योग्य नहीं थे ।

# एकत्रिंशः श्लोकः

**ताभ्यां मिषत्स्वनिमिषेषु निषिध्यमानाः स्वर्हत्तमा ह्यपि हरेः प्रतिहारपाभ्याम् ।
ऊचुः सुहृत्तमदिदृक्षितभङ्ग ईषत्कामानुजेन सहसा त उपप्लुताक्षाः ।।३१।।**

पदच्छेद—ताभ्याम् मिषत्सु निमिषेषु अनिषिध्यमानाः सु अर्हत्तमाः हि अपि हरेः प्रतिहार पाभ्याम् ।
ऊचुः सुहृत्तमदिदृक्षित भङ्ग ईषत् कामानुजेन, सहसा त उपप्लुत अक्षाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताभ्याम् | २. | उन दोनों | ऊचुः | १८. | बोले |
| मिषत्सु | ५. | सामने | सुहृत्तम | १०. | प्रियतम प्रभु के |
| अनिमिषेषु | ४. | देवताओं के | दिदृक्षित | ११. | दर्शन की लालसा में |
| निषिध्यमानाः | ८. | जाने से रोक दिया | भङ्ग | १२. | विघ्न होने के कारण |
| सु अर्हत्तमाः | ६. | परम पूज्य होने पर | ईषत् कामानुजेन | १४. | कुछ क्रोध से |
| हि | ९. | तदनन्तर | सहसा | १५. | अकस्मात् |
| अपि | ७. | भी (सनकादि कुमारों को) | | १७. | वेत |
| हरेः | १. | भगवान श्री हरि के | उपप्लुत | १६. | लाल हो गईं (और) |
| प्रतिहारपाभ्याम् | ३. | द्वारपालों ने | अक्षाः | १३. | सनकादि कुमारों की आँखें |

श्लोकार्थ—भगवान श्री हरि के उन दोनों द्वारपालों ने देवताओं के सामने परम पूज्य होने पर भी सनकादि कुमारों को जाने से रोक दिया, तदनन्तर प्रियतम प्रभु के दर्शन की लालसा में विघ्न होने के कारण सनकादि कुमारों की आँखें कुछ क्रोध से अकस्मात् लाल हो गईं और वे बोले ।

# द्वात्रिंशः श्लोकः

मुनयः ऊचुः—

**को वामिहैत्य भगवत्परिचर्ययोच्चैस्तद्धर्मिणां निवसतां विषमः स्वभावः ।
तस्मिन् प्रशान्तपुरुषे गतविग्रहे वां को वाऽऽत्मवत्कुहकयोः परिशङ्कनीयः ।।३२।।**

पदच्छेद—कः वाम् इह एत्य भगवत् परिचर्यया उच्चैः, तद्धर्मिणाम् निवसताम् विषमः स्वभावः ।
तस्मिन् प्रशान्त पुरुषे गत विग्रहे वाम्, कः वा आत्मवत् कुहकयोः परि शङ्कनीयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कः | १०. | क्यों है | तस्मिन् | ११. | वे |
| वाम् | ८. | फिर तुम दोनों का | प्रशान्त | १३. | अत्यन्त शान्त (और) |
| इह, एत्य | ४. | इस लोक में, आकर | पुरुषे | १२. | भगवान् श्री हरि |
| भगवत् | १. | भगवान श्री हरि को | गत, विग्रहे | १४. | कलह से, दूर हैं |
| परिचर्यया | ३. | भक्ति से जो | वाम् | १६. | तुम दोनों |
| उच्चैः | २. | अनन्य | कः | १९ | क्यों |
| तद् | ६. | भगवान के समान | वा | १५. | किन्तु |
| धर्मिणाम् | ७. | शील स्वभाव (होता है) | आत्मवत् | १८. | अपने समान (दूसरों पर) |
| निवसताम् | ५. | निवास करते हैं (उनका) | कुहकयोः | १७. | कपटी हो (अतः) |
| विषमः स्वभावः | ९. | उल्टा स्वभाव | परिशङ्कनीयः | २०. | शंका कर रहे हो |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की अनन्य भक्ति से जो इस लोक में आकर निवास करते हैं उनका भगवान के समान शील स्वभाव होता है, फिर तुम दोनों का उलटा स्वभाव क्यों है । वे भगवान् श्री हरि अत्यन्त शांत और कलह से दूर हैं । किन्तु तुम दोनों कपटी हो अतः अपने समान दूसरों पर क्यों शंका कर रहे हो ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न ह्यन्तरं भगवतीह समस्तकुक्षावात्मानमात्मनि नभो नभसीव धीराः ।
पश्यन्ति यत्र युवयोः सुरलिङ्गिनोः किं व्युत्पादितं ह्युदरभेदिभयं यतोऽस्य ॥३३॥

पदच्छेद— न हि अन्तरम् भगवति इह समस्त कुक्षौ आत्मानम् आत्मनि नभः नभसि इव धीराः ।
पश्यन्ति यत्र युवयोः सुर लिङ्गिनोः किम् व्युत्पादितम् हि उदर भेदिभयम् यतः अस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ६. | नहीं है | पश्यन्ति | १३. | दर्शन करते हैं |
| हि | ४. | कोई | यत्र | १४. | किन्तु |
| अन्तरम् | ५. | भेद | युवयोः | १५. | तुम दोनों तो |
| भगवति, इह | ३. | भगवान की दृष्टि में, यहाँ | सुर | १६. | देवता का |
| समस्त | १. | सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को | लिङ्गिनोः | १७. | चिह्न धारण किये हुये हो |
| कुक्षौ | २. | अपने उदर में रखने वाले | किम् | १९. | किस |
| आत्मानम् | १२. | अपना | व्युत्पादितम् | २५. | कल्पना कर रहे हो |
| आत्मनि | ११. | परमात्मा में | हि | १८. | फिर |
| नभः | ९. | घटाकाश के | उदर | २२. | हृदय |
| नभसि | ८. | महाकाश में | भेदि | २३. | विदारक |
| इव | १०. | समान | भयम् | २४. | भय की |
| धीराः | ७. | ज्ञानीजन | यतः | २०. | कारण से |
| | | | अस्य | २१. | इस |

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने उदर में रखने वाले भगवान् की दृष्टि में यहाँ कोई भेद नहीं है, ज्ञानीजन महाकाश में घटाकाश के समान परमात्मा में अपना दर्शन करते हैं । किन्तु तुम दोनों तो देवता का चिह्न धारण किये हुये हो, फिर किस कारण से इस हृदय विदारक भय की कल्पना कर रहे हो ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तद्वाममुष्य परमस्य विकुण्ठभर्तुः कर्तुं प्रकृष्टमिह धीमहि मन्दधीभ्याम् ।
लोकानितो व्रजतमन्तरभावदृष्ट्या पापीयसस्त्रय इमे रिपवोऽस्य यत्र ॥३४॥

पदच्छेद— तद्वाम् अमुष्य परमस्य विकुण्ठ भर्तुः कर्तुम् प्रकृष्टम् इह धीमहि मन्द धीभ्याम् ।
लोकान् इतः व्रजतम् अन्तर भाव दृष्ट्या, पापीयसः त्रयः इमे रिपवः अस्य यत्र ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | १. | इसलिये | लोकान् | १४. | लोकों में |
| वाम् | ६. | तुम दोनों का | इतः | १२. | यहाँ से निकलकर |
| अमुष्य, परमस्य | ३. | इन भगवान् | व्रजतम् | १५. | चले जाओ |
| विकुण्ठ, भर्तुः | ४. | बैकुण्ठ नाथ के (पार्षद एवं) | अन्तर, भाव | १०. | भेद, भाव की |
| कर्तुम् | ८. | करने की | दृष्ट्या | ११. | बुद्धि (होने से तुम दोनों) |
| प्रकृष्टम् | ७. | कल्याण | पापीयसः | १३. | पापी |
| इह | २. | अब (हम लोग) | त्रयः, इमे | १८. | काम, क्रोध और लोभ ये तीन |
| धीमहि | ९. | सोच रहे हैं | रिपवः | १९. | शत्रु (निवास करते हैं) |
| मन्दधीभ्याम् | ५. | कम बुद्धि वाले | अस्य | १७, | प्राणियों के |
| | | | यत्र | १६. | जहाँ पर |

श्लोकार्थ—इसलिये अब हम लोग इन भगवान बैकुंठ नाथ के पार्षद एवं कम बुद्धि वाले तुम दोनों का कल्याण करने की सोच रहे हैं, भेद भाव की बुद्धि होने से तुम दोनों यहाँ से निकल कर पापी लोकों में चले जाओ, जहाँ पर प्राणियों के काम, क्रोध और लोभ ये तीन शत्रु निवास करते हैं।

## पञ्चत्रिंश श्लोकः

तेषामितीरितमुभाववधार्य घोरं तं ब्रह्मदण्डमनिवारणमस्त्रपूगैः ।
सद्यो हरेरनुचरावुरु बिभ्यतस्तत्पादग्रहावपततामतिकातरेण ॥३५॥

पदच्छेद— तेषाम् इति ईरितम् उभौ अवधार्य घोरम्, तम् ब्रह्मदण्डम् अनिवारणम् अस्त्र पूगैः । सद्यः हरेः अनुचरौ उरु बिभ्यतः तत्, पाद ग्रहौ अपतताम् अति कातरेण ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषाम् | १. | उन सनकादि कुमारों के | सद्यः | १५. | तत्काल |
| इति | २. | इस प्रकार के | हरेः | १३. | भगवान श्री हरि के |
| ईरितम् | ४. | वचनों को | अनुचरौ | १४. | वे द्वारपाल |
| उभौ | ६. | दोनों (द्वारपालों ने) | उरु | ११. | ब्राह्मणों से बहुत |
| अवधार्य | ५. | सुनकर | बिभ्यतः | १२. | डरने वाले |
| घोरम् | ३. | कठोर | तत् | १६. | उनके |
| तम्, ब्रह्मदण्डम् | ७. | उस, ब्राह्मण शाप को | पादग्रहौ | १७. | पैर पकड़ कर |
| अनिवारणम् | १०. | निवारण होने योग्य नहीं माना (तथा) | अपतताम् | २०. | (पृथ्वी पर) लोट गये |
| | | | अति | १८. | अत्यन्त |
| अस्त्र | ८. | किसी प्रकार के अस्त्रों के | कातरेण | १९. | दीन भाव से |
| पूगैः | ९. | समूह से | | | |

श्लोकार्थ—उन सनकादि कुमारों के इस प्रकार के कठोर वचनों को सुनकर दोनों द्वारपालों ने उस ब्राह्मण शाप को किसी प्रकार के अस्त्रों के समूह से निवारण होने योग्य नहीं माना, तथा ब्राह्मणों से बहुत डरने वाले भगवान् श्री हरि के वे द्वारपाल तत्काल उनके पैर पकड़ कर अत्यंत दीन भाव से पृथ्वी पर लोट गये ॥

## षट्त्रिंश श्लोकः

भूयादघोनि भगवद्भिरकारि दण्डो यो नौ हरेत सुरहेलनमप्यशेषम् ।
मा वोऽनुतापकलया भगवत्स्मृतिघ्नो मोहो भवेदिह तु नौ व्रजतोरधोऽधः ॥३६॥

पदच्छेद— भूयात् अघोनि भगवद्भिः अकारि दण्डः यः नौ हरेत सुरहेलनम् अपि अशेषम् । मा वः अनुताप कलया भगवत् स्मृतिघ्नः मोहः भवेत् इहतु नौ व्रजतः अधोअधः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूयात् | १. | यह उचित है (कि) | मा | २४. | नहीं |
| अघोनि | ३. | अपराधी को | वः | १३. | आप लोगों को |
| भगवद्भिः | २. | आप लोगों ने | अनुताप | १५. | दया हो तो |
| अकारि | ५. | दिया है | कलया | १४. | हमारे पर थोड़ी भी |
| दण्डः | ४. | दण्ड | भगवत् | २१. | भगवान् श्री हरि के |
| यः | ६. | यह (दण्ड) | स्मृतिघ्नः | २२. | स्मरण को नष्ट करने वाला |
| नौ | ९. | हम दोनों के | मोहः | २३. | अज्ञान |
| हरेत् | १२. | दूर कर सकता है | भवेत् | २५. | होवे |
| सुर | ७. | भगवान् की आज्ञा के | इह | १८. | अब |
| हेलनम् | ८. | उल्लंघन से उत्पन्न | तु | १६. | ऐसा करें कि |
| अपि | ११. | भी | नौ | १७. | हम दोनों को |
| अशेषम् । | १०. | सम्पूर्ण पापों को | व्रजतः | २०. | जाने पर भी |
| | | | अधोअधः ॥ | १९. | अधमाधम योनियों में, |

श्लोकार्थ—यह उचित है कि आप लोगों ने अपराधी को दण्ड दिया है, यह दण्ड भगवान् की आज्ञा के उल्लंघन से उत्पन्न हम दोनों के सम्पूर्ण पापों को भी दूर कर सकता है। आप लोगों को हमारे पर थोड़ी भी दया हो तो ऐसा करें कि हम दोनों को अब अधमाधम योनियों में जाने पर भी भगवान् श्री हरि के स्मरण को नष्ट करने वाला अज्ञान न होवे ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

एवं तदैव भगवानरविन्दनाभः स्वानां विबुध्य सदतिक्रममार्यहृद्यः ।
तस्मिन् ययौ परमहंसमहामुनीनामन्वेषणीयचरणौ चलयन् सहश्रीः ॥३७॥

पदच्छेद— एवम् तद् एव भगवान् अरविन्द नाभः स्वानाम् विबुध्य सत् अतिक्रमम् आर्य हृद्यः ।
तस्मिन् ययौ परमहंस महामुनीनां, अन्वेषणीय चरणौ चलयन् सह श्रीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ३. | यह | तस्मिन् | १४. | वहाँ पर |
| तद्, एव | ६. | उस ही समय | ययौ | १५. | पधारे |
| भगवान्, | ७ | भगवान्, | परमहंस | १६. | जिन्हें परमहंस और |
| अरविन्दनाभः | ८. | कमल नाभ | महामुनीनाम् | १७. | महर्षिगण |
| स्वानाम् | १. | हमारे द्वारपालों ने | अन्वेषणीय | १८ | ढूंढ़ते हैं |
| विबुध्य | ४. | जानकर | चरणौ | १२. | अपने उन चरणों से |
| सत्, अतिक्रमम् | २. | सतों का, अनादर किया है | चलयन् | १३. | चलकर |
| आर्य | ५. | महात्माओं के | सह | ११. | साथ |
| हृद्यः | ६. | प्रियतम | श्रीः | १०. | लक्ष्मी जी के |

श्लोकार्थ—हमारे द्वारपालों ने संतों का अनादर किया है. यह जानकर महात्माओं के प्रियतम भगवान् कमलनाभ उस ही समय लक्ष्मी जी के साथ अपने उन चरणों से चलकर वहाँ पर पधारे जिन्हें परमहंस और महर्षिगण ढूंढ़ते रहते हैं।

# अष्टत्रिंशः श्लोकः

तं त्वागतं प्रतिहृतौपयिकं स्वपुम्भिस्तेऽचक्षताक्षविषयं स्वसमाधिभाग्यम् ।
हंसश्रियोर्व्यजनयोः शिववायुलोलच्छुभ्रातपत्रशशिकेशरशीकराम्बुम् ॥३८॥

पदच्छेद— तम् तुआगतम् प्रतिहृत औपयिकम् स्वपुम्भिः, ते अचक्षत अक्षविषयम् स्व समाधि भाग्यम् ।
हंसश्रिया व्यजनयोः शिव वायुः लोलत् शुभ्र आतपत्र शशि केसर शीकर अम्बुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ४. | भगवान वैकुण्ठ नाथ | हंस, श्रिया | ११. | राजहंस की, शोभा वाले |
| तु | ७. | तथा | व्यजनयोः | १२. | दो चँवरों की |
| आगतम् | ६. | पधारे हैं | शिव वायु | १३. | शीतल हवा से |
| प्रतिहृत | १०. | लिये हैं | लोलत् | १४. | हिलती हुई |
| औपयिकम् | ६. | छत्र चमरादि राजोपचार | शुभ्र | १५. | सफेद |
| स्वपुम्भिः | ८. | उनके पार्षदगण | आतपत्र | १६. | छत्र की झालरें (ऐसी लगती थीं मानों) |
| | ०. | उन (सनकादि कुमारों ने) | | | |
| ते, अचक्षत | १. | देखाकि | शशि | १७. | चन्द्रमा की |
| अक्षविषयम् | ५. | नेत्रों के सामने | केसर | १८. | किरणों से |
| स्वसमाधि | २. | अपनी समाधि के | शीकर | २०. | बूंदें झर रही हों |
| भाग्यम् | ३. | आराध्य | अम्बुम् | १६. | अमृत की |

श्लोकार्थ—उन सनकादि कुमारों ने देखा कि अपनी समाधि के आराध्य भगवान् वैकुण्ठ नाथ नेत्रों के सामने पधारे हैं, तथा उनके पार्षदगण छत्र चामरादि राजो पचार लिये हैं .राजहस की शोभा वाले दो चँवरों की शीतल हवा से हिलती हुई सफेद छत्र की झालरें ऐसी लगती थीं मानों चन्द्रमा की किरणों से अमृत की बूंदें झर रही हों।

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

कृत्स्नप्रसादसुमुखं स्पृहणीयधाम स्नेहावलोककलया हृदि संस्पृशन्तम् ।
श्यामे पृथावुरसि शोभितयाश्रिया स्वश्चूडामणिं सुभगयन्तमिवात्मधिष्ण्यम् ॥३९॥

पदच्छेद— कृत्स्न प्रसाद सुमुखम् स्पृहणीयधाम, स्नेह अवलोक कलया हृदि संस्पृशन्तम् ।
श्यामे पृथौ उरसि शोभितया श्रिया स्वः चूडामणिम् सुभगयन्तम् इव आत्मधिष्ण्यम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृत्स्न | ३. | सम्पूर्ण लोगों पर | श्यामे, पृथौ | १०. | साँवले विशाल |
| प्रसाद | ४. | कृपा सुधा की (वर्षा कर रहे थे) और | उरसि | ११. | वक्ष स्थल पर |
| | | | शोभितया | १२. | विराजमान |
| सुमुखम् | २. | वे अपने भोले मुख से | श्रिया | १३. | सुवर्ण रेखा की शोभा से |
| स्पृहणीयधाम | १. | भगवान् सद्गुणों के आश्रय हैं | स्वः | १५. | दिव्य लोकों के |
| स्नेह | ५. | प्रेममयी | चूडामणिम् | १६. | मुकुट मणि |
| अवलोक | ७. | चितवन से | सुभगयन्तम् | १८. | शोभा बढ़ा रहे थे |
| कलया | ६. | तिरछी | इव | १४. | मानों वे |
| हृदि | ८. | (भक्तों का)हृदय | आत्मधिष्ण्यम् ॥ | १७. | अपने वैकुण्ठ लोक की |
| संस्पृशन्तम् । | ९. | स्पर्श कर रहे थे (तथा) | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् सद्गुणों के आश्रय हैं। वे अपने भोले मुख से सम्पूर्ण लोगों पर कृपा सुधा की वर्षा कर रहे थे और प्रेममयी तिरछी चितवन से भक्तों का हृदय स्पर्श कर रहे थे। तथा सांवले विशाल वक्ष स्थल पर विराजमान सुवर्ण रेखा की शोभा से मानों वे दिव्य लोकों के मुकुट-मणि अपने वैकुण्ठ लोक की शोभा बढ़ा रहे थे।

# चत्वारिंशः श्लोकः

पीतांशुके पृथुनितम्बिनि विस्फुरन्त्या काञ्च्यालिभिर्विरुतया वनमालया च ।
वल्गुप्रकोष्ठवलयं विनतासुतांसे विन्यस्तहस्तमितरेण धुनानमब्जम् ॥४०॥

पदच्छेद— पीत अंशुके पृथु नितम्बिनि विस्फुरन्त्या, काञ्च्या अलिभिः विरुतया वनमालया च ।
वल्गु प्रकोष्ठ वलयम् विनता सुतअंसे, विन्यस्तहस्तम् इतरेण धुनानम् अब्जम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पीत अंशुके | १. | उनके पीताम्बर मंडित | वल्गु | १०. | सुन्दर |
| पृथुनितम्बिनि | २. | विशाल नितम्बों पर | प्रकोष्ठ | ९. | कलाई में |
| विस्फुरन्त्या | ३. | झिलमिलाती हुई | वलयम् | ११. | कंगन धारण किये थे |
| काञ्च्या | ४ | करधनी | विनतासुत | १३. | गरुड़ के |
| अलिभिः | ६. | गले में भौरों की | अंसे, विन्यस्त | १४. | कन्धे पर, रखकर |
| विरुतया | ७. | गुञ्जार वाली | हस्तम् | १२. | वे अपने एक हाथ को |
| वनमालया | ८. | वनमाला थी (तथा) | इतरेण | १५. | दूसरे हाथ से |
| च | ५. | और | धुनानम् | १७. | घुमा रहे थे |
| | | | अब्जम् ॥ | १६. | कमल को |

श्लोकार्थ—उनके पीताम्बर मंडित विशाल नितम्बों पर झिलमिलाती हुई करधनी और गले में भौरों की गुंजार वाली वनमाला थी, तथा कलाई में सुन्दर कंगन धारण किये थे, वे अपने एक हाथ को गरुड़ के कन्ध पर रखकर दूसरे हाथ से कमल को घुमा रहे थे।

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

**विद्युत्क्षिपन्मकरकुण्डलमण्डनार्हगण्डस्थलोन्नसमुखं मणिमत्किरीटम् ।**
**दोर्दण्डषण्डविवरे हरता परार्ध्यहारेण कन्धरगतेन च कौस्तुभेन ॥४१॥**

पदच्छेद—विद्युत् क्षिपत् मकर कुण्डल मण्डन अर्हगण्ड स्थल उन्नस मुखम् मणिमत् किरीटम् ।
दो दण्ड षण्ड विवरे हरता परार्ध्य, हारेण कन्धर गतेन च कौस्तुभेन ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| विद्युत् | २. बिजली की प्रभा को | दो, दण्ड | ११. | बाहुदण्डों के |
| क्षिपत् | ३. लजाने वाले | षण्ड | १०. | उनके विशाल |
| मकर कुण्डल | ४. मकराकृत, कुण्डलों की | विवरे | १२. | बीच में |
| मण्डन | ५. शोभा को बढ़ा रहे थे (और) | हरता | १८. | अपूर्व शोभा थी |
| अर्ह, गण्ड, स्थल | १. भगवान के अमोल, कपोल | परार्ध्य | १३. | बहुमूल्य |
| उन्नस | ६. उनकी उभरी हुई सुन्दर नासिका | हारेण | १४. | हार की |
| मुखम् | ७. सुन्दर मुख (तथा सिर पर) | कन्धर, गतेन | १६. | गले में |
| मणिमत् | ८. मणिमय | च | १५ | और |
| किरीटम् | ९. मुकुट था | कौस्तुभेन | १७. | कौस्तुभमणि की |

श्लोकार्थ—भगवान् के अमोल कपोल बिजली की प्रभा को लजाने वाले मकराकृत कुण्डलों की शोभा को बढ़ा रहे थे, और उनकी उभरी हुई सुन्दर नासिका, सुन्दर मुख तथा सिर पर मणिमय मुकुट था। उनके विशाल बाहुदण्डों के बीच में बहुमूल्य हार की और गले में कौस्तुभमणि की अपूर्व शोभा थी।

## द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

**अत्रोपसृष्टमिति चोत्स्मितमिन्दिरायाः स्वानां धिया विरचितं बहुसौष्ठवाढ्यम् ।**
**मह्यं भवस्य भवतां च भजन्तमङ्गं नेमुर्निरीक्ष्य न वितृप्तदृशो मुदा कैः ॥४२॥**

पदच्छेद—अत्र उपसृष्टम् इति च उत्स्मितम् इन्दिरायाः स्वानाम् धिया विरचितम् बहुसौष्ठव आढ्यम् ।
मह्यम् भवस्य भवताम् च भजन्तम् अङ्गम्, नेमुः निरीक्ष्य न वितृप्त दृशः मुदा कैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अत्र | १०. | इसके सामने | मह्यम् | १२. ब्रह्मा जी ने कहा (हे देवताओं! (मेरे |
| उपसृष्टम् | ११. | फीका हो गया है | भवस्य, | १३. शंकर जी के |
| इति | ५. | ऐसा | भवताम् | १५. आप लोगों के लिये |
| च | ७. | कि | च | १४. और |
| उत्मितम् | ९. | सौन्दर्याभिमान् | भजन्तम् | १७. धारण करने वाले (श्रीहरि को) |
| इन्दिरायाः | ८. | लक्ष्मी जी का | अङ्गम् | १६. सुन्दर शरीर |
| स्वानाम् | ३. | उसे देखकर | नेमुः | २०. प्रणाम किया |
| धिया | ४. | भक्तों के मन में | निरीक्ष्य | १८. देखकर (सनकादि कुमारों ने उन्हें) |
| विरचितम् | ६. | विचार उठता था | न वितृप्त | २३. नहीं तृप्त (हो रही थीं) |
| बहु | १ | भगवान् का श्रीविग्रह महान् | दृशः | २१. उनकी आँखें (निहारते-निहारते) |
| सौष्ठव आढ्यम्। | २. | सौन्दर्य से, परिपूर्ण था | मुदा | २२. आनन्द से |
| | | | कैः ॥ | १९. शिर से |

श्लोकार्थ—भगवान् का श्री विग्रह महान सौन्दर्य से परिपूर्ण था। उसे देखकर भक्तों के मन में ऐसा विचार उठता था। कि लक्ष्मी जी का सौन्दर्याभिमान इसके सामने फीका हो गया है। ब्रह्मा जी ने कहा हे देवताओं! मेरे शंकर जी के और आप लोगों के लिये सुन्दर शरीर धारण करने वाले श्री हरि को देखकर सनकादि कुमारों ने उन्हें शिर से प्रणाम किया। उनकी आँखें निहारते-निहारते आनन्द से तृप्त नहीं हो रही थीं।

## त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

तस्यारविन्दनयनस्य पदारविन्द, किञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः ।
अन्तर्गतः स्वविवरेण चकारतेषां, सङ्क्षोभमक्षरजुषामपि 'चित्ततन्वोः ।।४३।।

पदच्छेद— तस्य अरविन्द नयनस्यपद अरविन्द, किञ्जल्कमिश्र तुलसी मकरन्द वायुः ।
अन्तर्गतः स्वविवरेण चकार तेषाम्, सङ्क्षोभम् अक्षर जुषाम् अपि चित्ततन्वः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ३. | उन भगवान् के | स्वविवरेण | ६. | सनकादि कुमारों के नासाछिद्र के |
| अरविन्द | १. | कमल | चकार | १८. | उत्पन्न कर दी |
| नयनस्य | २. | नयन | तेषाम् | १४. | उन शनकादिकों के |
| पद | ४. | चरण | सङ्क्षोभम् | १७. | खलबली |
| अरविन्द, | ५. | कमल के | अक्षर | ११. | ब्रह्मानन्द में |
| किञ्जल्क. मिश्र | ६. | मकरन्द से मिली हुई | जुषाम् | १२. | निमग्न रहने पर |
| तुलसी, मकरन्द | ७. | तुलसी मञ्जरी के | अपि | १३. | भी |
| वायुः । | ८. | सुगन्ध से वासित हवा ने | चित्त | १५. | मन में (और) |
| अन्तर्गतः | १०. | अन्दर प्रवेश किया (और) | तन्वः ।। | १६. | शरीर में |

श्लोकार्थ—कमलनयन उन भगवान् के चरण कमल के मकरन्द से मिली हुई तुलसी मञ्जरी के सुगन्ध से वासित हवा ने सनकादि कुमारों के नासाछिद्र के अन्दर प्रवेश किया । और ब्रह्मानन्द में निमग्न रहने पर भी उन सनकादिकों के मन में और शरीर में खलबली उत्पन्न कर दी ।।

## चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

ये वा अमुष्य वदनासितपद्मकोशमुद्वीक्ष्य सुन्दरतराधरकुन्दहासम् ।
लब्धाशिषः पुनरवेक्ष्य तदीयमङ्घ्रिद्वन्द्वं नखारुणमणिश्रयणंनिदध्युः ।।४४।।

पदच्छेद— ते वा अमुष्य वदन असित पद्मकोशम् उद्वीक्ष्य सुन्दरतर अधर कुन्द हासम् ।
लब्ध आशिषः पुनः अवेक्ष्य तदीयम् अङ्घ्रि द्वन्द्वम् नख अरुण मणि श्रवणम् निदध्युः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ते | ९. | उन सनकादि कुमारों ने | लब्ध | ११. | प्राप्त कर लिया |
| वा | १. | तदनन्तर | आशिषः | १०. | अपने मनोरथ को |
| अमुष्य | २. | उन भगवान् के | पुनः | १२. | (तथा) फिर से |
| वदन | ७. | मुख को | अवेक्ष्य | १८. | देखकर (उसका) |
| असित | ५. | नील | तदीयम्, अङ्घ्रि | १६. | उनके, चरण |
| पद्मकोशम् | ६. | कमलदल के समान सुन्दर | द्वन्द्वम् | १७. | युगलों को |
| उद्वीक्ष्य | ८. | देखकर | नख | १५. | नखों वाले |
| सुन्दरतर, अधर | ३. | अत्यन्त सुन्दर ओष्ठ | अरुण मणि | १३. | पद्मरागमणि के |
| कुन्द, हासम् । | ४. | कुन्द कली के समान, मधुर मुसकान और | श्रवणम् | १४. | समान (लाल-लाल) |
| | | | निदध्युः ।। | १९. | ध्यान करने लगे |

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन भगवान् के अत्यन्त सुन्दर ओष्ठ कुन्दकली के समान मधुर मुसकान और नील कमल दल के समान सुन्दर मुख को देखकर उन सनकादि कुमारों ने अपने मनोरथ को प्राप्त कर लिया । तथा फिर से पद्मराग मणि के समान लाल-लाल नखों वाले उनके चरण युगलों को देखकर उसका ध्यान करने लगे ।।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

पुंसां गतिं मृगयतामिह योगमार्गैर्ध्यानास्पदं बहु मतं नयनाभिरामम् ।
पौंस्नं वपुर्दर्शयानमनन्यसिद्धैरौत्पत्तिकैः समगृणन् युतमष्टभोगैः ॥४५॥

पदच्छेद— पुंसाम् गतिम् मृगयताम् इह योग मार्गैः, ध्यान आस्पदम् बहुमतम् नयन अभिरामम् ।
पौंस्नम् वपुः दर्शयानम् अनन्य सिद्धैः औत्पत्तिकैः समगृणन् युतम् अष्टभोगैः ॥

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुंसाम् | १३. | मनुष्यों की | पौंस्नम् | १९. | पुरुष के |
| गतिम् | ११. | मोक्ष | वपुः | २०. | शरीर को (प्रकट करते हैं) |
| मृगयताम् | १२. | खोजने वाले | दर्शयानम् | १. | सनकादि कुमार |
| इह | ९. | (जो भगवान् श्रीहरि) इस संसार में | अनन्य | २. | सहज |
| | | | सिद्धैः, | ३. | प्राप्त होने वाली |
| योगमार्गैः | १० | योग मार्ग से | औत्पत्तिकैः | ४ | स्वयं सिद्ध |
| ध्यान | १४. | समाधि के | समगृणन् | ८. | स्तुति करने लगे |
| आस्पदम् | १५. | आधार | युतम् | ७, | सम्पन्न श्रीहरि की |
| बहुमतम् | १८ | अत्यन्त आदरणीय (तथा) | अष्ट | ५. | आठों |
| नयन | १६. | नेत्रों को | भोगैः ॥ | ६. | सिद्धियों से |
| अभिरामम् । | १७. | सुन्दर लगने वाले | | | |

श्लोकार्थ—सनकादि कुमार सहज प्राप्त होने वाली स्वयं सिद्ध आठों सिद्धियों से सम्पन्न श्रीहरि की स्तुति करने लगे । जो भगवान् श्रीहरि इस संसार में योग मार्ग से मोक्ष खोजने वाले मनुष्यों की समाधि के आधार नेत्रों को सुन्दर लगने वाले अत्यन्त आदरणीय तथा पुरुष के शरीर को प्रकट करते हैं ।

# षट्चत्वारिंशः श्लोकः

कुमारा ऊचुः

योऽन्तर्हितो हृदि गतोऽपि दुरात्मनां त्वं, सोऽद्यैव नो नयनमूलमनन्त राद्धः ।
यर्ह्येव कर्णविवरेण गुहां गतो नः, पित्रानुवर्णितरहा भवदुद्भवेन ॥४६॥

पदच्छेद— यः अन्तर्हितः हृदिगतः अपि दुरात्मनाम् त्वम्, सः अद्यैवनः नयन मूलम् अनन्त राद्धः ।
यर्हि एव कर्ण विवरेण गुहाम् गतः नः पित्रा अनुवर्णित रहाः भवद् उद्भवेन ॥

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | २. | जो | यर्हि एव | १३. | जब से |
| अन्तर्हितः | ६. | उनकी दृष्टि से ओझल रहते हैं | कर्ण विवरेण | १६. | (तभी से आप) कानों के छिद्रों से |
| हृदिगतः, अपि | ५. | हृदय में स्थिति होकर भी | गुहाम्, गतः | १७. | हृदय में प्रवेश किये हुये हैं |
| दुरात्मनाम् | ४. | दुष्टचित्त पुरुषों के | नः पित्रा | १२. | हमारे पिता ब्रह्मा जी ने |
| त्वम् | ३. | आप | अनुवर्णित | १५. | वर्णन किया है |
| सः अद्यैव | ७ | वही (आप) आज | रहाः | १४. | आपके रहस्य का |
| नः नयनमूलम् | ८. | हमारे नेत्रों के सामने | भवत् | १०. | आपसे |
| अनन्त | १. | हे भगवान् ! | उद् भवेन । | ११. | उत्पन्न |
| राद्धः । | ९. | विराजमान हैं | | | |

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! जो आप दुष्ट चित्त पुरुषों के हृदय में स्थित होकर भी उनकी दृष्टि से ओझल रहते हैं । वही आप आज हमारे नेत्रों के सामने विराजमान हैं । आपसे उत्पन्न हमारे पिता ब्रह्मा जी ने जब से आपके रहस्य का वर्णन किया है । तभी से आप कानों के छिद्रों से हृदय में प्रवेश किये हुये हैं ।

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तं त्वां विदाम् भगवन् परमात्मतत्त्वं, सत्त्वेन सम्प्रति रतिं रचयन्तमेषाम् ।
यत्तेऽनुतापविदितैर्दृढभक्तियोगैरुद्ग्रन्थयो हृदि विदुर्मुनयो विरागाः ।।४७।।

पदच्छेद— तम् त्वाम् विदाम् भगवन् परमात्म तत्त्वम्, सत्त्वेन सम्प्रति रतिम् रचयन्तम् एषाम् ।
यत् ते अनुतापविदितैः दृढ भक्ति योगैः, उद्ग्रन्थयः हृदि विदुः मुनयः विरागाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तम्, त्वाम् | २. उस, आपको (हम) | यत् | १७. आपके उस रूप का |
| विदाम् | ४. मानते हैं | ते | १३. आपकी |
| भगवन् | १. हे भगवन् ! | अनुताप | १४. कृपा दृष्टि से |
| परमात्म, तत्त्वम् | ३. परमात्मा का स्वरूप | विदितैः | १५. प्राप्त |
| सत्त्वेन | ६. विशुद्ध सत्त्वमूर्ति से | दृढ भक्तियोगैः | १६. अनन्य, भक्तियोग के द्वारा |
| सम्प्रति | ५. इस समय (आप) | उद्ग्रन्थयः | ११. अहंकार से रहित |
| रतिम् | ८. भक्ति-भाव का | हृदि विदुः | १८. हृदय में ध्यान करते हैं |
| रचयन्तम् | ९. संचय कर रहे हैं | मुनयः | १२. मुनिगण |
| एषाम् । | ७. इन भक्तों में | विरागाः ।। | १०. रागादि से रहित (और) |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! उस आपको हम परमात्मा का स्वरूप मानते हैं । इस समय आप विशुद्ध सत्त्वमूर्ति से इन भक्तों में भक्ति-भाव का संचय कर रहे हैं । रागादि से रहित और अहंकार से रहित मुनि गण आपकी कृपा दृष्टि से प्राप्त अनन्यभक्ति योग के द्वारा आपके उस रूप का हृदय में ध्यान करते हैं ।

## अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

नात्यन्तिकं विगणयन्त्यपि ते प्रसादं, किन्त्वन्यदर्पितभयं भ्रुवउन्नयैस्ते ।
येऽङ्गत्वदङ्घ्रिशरणा भवतः कथायाः, कीर्तन्यतीर्थयशसः कुशला रसज्ञाः ।।४८।।

पदच्छेद— न आत्यन्तिकम् विगणयन्ति अपिते प्रसादम्, किन्तु अन्य दर्पित भयम् भ्रुवः उन्नयैः ते ।
ये अङ्गत्वद् अङ्घ्रि शरणा भवतः कथायाः, कीर्तन्य तीर्थ यशसः कुशला रसज्ञाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| न | १४. नहीं | ये | ३. जो |
| आत्यन्तिकम् | १२. मोक्ष पद को | अङ्ग, त्वद् | १. हे भगवन् ! आपके |
| विगणयन्ति | १५. गिनते हैं | अङ्घ्रि, शरणा | २. चरणों की, शरण लेने वाले |
| अपि | १३. कुछ भी | भवतः | ८. आपकी |
| ते प्रसादम् | ११. वे लोग आपकी, कृपा स्वरूप | कथायाः | ९. कथा के |
| किन्तु | १६. किन्तु | कीर्तन्य | ५. कीर्तनीय |
| अन्य | २१. आदि की तो बात ही क्या है | तीर्थ | ६. पवित्र |
| दर्पित | २०. होने वाले | यशसः | ७. यश वाले |
| भयम् | १९. भयभीत | कुशला | ४. चतुर लोग |
| भ्रुवः उन्नयैः | १८. भौंहों के टेढ़ी होने से | रसज्ञाः ।। | १०. रसिक हैं |
| ते । | १७. आपकी | | |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपके चरणों की शरण लेने वाले जो चतुर लोग कीर्तनीय पवित्रयश वाले आपकी कथा के रसिक हैं । वे लोग आपकी कृपा स्वरूप मोक्ष पद को कुछ भी नहीं गिनते हैं । किन्तु आपकी भौंहों के टेढ़ी होने से भयभीत होने वाले आदि की तो बात ही क्या है ।

# एकोनपञ्चाशः श्लोकः

कामं भवः स्ववृजिनैर्निरयेषु नः स्ता—
च्चेतोऽलिवद्यदि नु ते पदयो रमेत ।
वाचश्चनस्तुलसिवद्यदि तेऽङ्घ्रिशोभाः
पूर्येत ते गुणगणैर्यदि कर्णरन्ध्रः ॥४९॥

पदच्छेद—

कामम् भवः स्ववृजिनैः निरयेषु नः स्तात्,
चेतः अलिवत् यदि नु ते पदयो रमेत ।
वाचः च नः तुलसिवत् यदि ते अङ्घ्रि शोभाः,
पूर्येत ते गुण गणैः यदि कर्णरन्ध्रः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| कामम् | २४. भले ही | | वाचः | १०. वाणी |
| भवः | २६. जन्म | | च | १५. और |
| स्व | २२. अपने | | नः | ९. हमारी |
| वृजिनैः | २३. पापों के कारण | | तुलसिवत् | ११. तुलसी की मञ्जरी के समान |
| निरयेषु | २७. नारकीय योनियों में | | यदि | ८. यदि |
| नः | २५. हमारा | | ते | १२. आपके |
| स्तात् | २८. हो | | अङ्घ्रि | १३. चरणों की |
| चेतः | २. मेरा चित्त | | शोभाः, | १४. शोभा बढ़ावे |
| अलिवत् | ३. भौंरे के समान | | पूर्येत | २१. भरे रहें (तो) |
| यदि | १. यदि | | ते | १८. आपके |
| नु | ७. इसमें कोई चिन्ता नहीं है | | गुण | १९. गुण |
| ते | ४. आपके | | गणैः | २०. गान से |
| पदयोः | ५. चरणों में | | यदि | १६. यदि |
| रमेत । | ६. लगा रहे | | कर्णरन्ध्रः ॥ | १७. मेरे कानों के छिद्र |

श्लोकार्थ—यदि मेरा चित्त भौंरे के समान आपके चरणों में लगा रहे इसमें कोई चिन्ता नहीं है, यदि हमारी वाणी तुलसी की मञ्जरी के समान आपके चरणों को शोभा बढ़ावे । और यदि मेरे कानों के छिद्र आपके गुण-गान से भरे रहें, तो अपने पापों के कारण भले ही हमारा जन्म नारकीय योनियों में हो ।

## पञ्चाशः श्लोकः

प्रादुश्चकर्थ यदिदं पुरुहूत रूपं,
तेनेश निर्वृतिमवापुरलं दृशो नः ।
तस्मा इदं भगवते नम इद्विधम,
योऽनात्मनां दुरुदयो भगवान् प्रतीतः ॥५०॥

पदच्छेद—

प्रादुः चकर्थ यद् इदम् पुरुहूत रूपम्,
तेन ईश निर्वृतिम् अवापुः अलम् दृशः नः ।
तस्मै इदम् भगवते नमः इद्विधेम,
यःऽनात्मनाम् दुरुदयः भगवान् प्रतीतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रादुः चकर्थ | ६. | प्रकट किया है | तस्मै | १८. | उन |
| यद् | ३. | जो | इदम् | २०. | यह हमारा |
| इदम् | ४. | यह (मनोहर) | भगवते | १९. | भगवान् श्री हरि को |
| पुरुहूत | १. | विपुल कीर्ति वाले | नमः | २१. | प्रणाम |
| रूपम् | ५. | स्वरूप | इद्विधेम | २२. | समर्पित हो |
| तेन | ७. | उससे | यः | १५. | जो (आप) |
| ईश | २. | हे प्रभो ! आपने | अनात्मनाम् | १३. | विषयासक्त मनुष्यों को |
| निर्वृतिम् | ११. | आनन्द | दुरुदयः | १४. | नहीं दिखाई देने वाले |
| अवापुः | १२. | प्राप्त कर रही हैं | भगवान् | १६. | भगवान् श्री हरि |
| अलम् | १०. | बहुत | प्रतीतः ॥ | १७. | हमें साक्षात् दिखाई दे रहे हैं |
| दृशः | ९. | आँखें | | | |
| नः । | ८. | हमारी | | | |

श्लोकार्थ—विपुल कीर्ति वाले हे प्रभो ! आपने जो यह मनोहर स्वरूप प्रकट किया है। उससे हमारी आँखें बहुत आनन्द प्राप्त कर रही हैं। विषयासक्त मनुष्यों को नहीं दिखाई देने वाले जो आप भगवान् श्री हरि हमें साक्षात् दिखाई दे रहे हैं। उन भगवान् श्री हरि को यह हमारा प्रणाम समर्पित हो।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे
जय विजययो सनकादि शापोनाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### षोडशो अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—

इति तद् गृणतां तेषां मुनीनां योगधर्मिणाम् ।
प्रतिनन्द्य जगादेदं विकुण्ठनिलयो विभुः ॥१॥

पदच्छेद—

इति तद् गृणताम् तेषाम् मुनीनाम् योग धर्मिणाम् ।
प्रतिनन्द्य जगाद् इदम् विकुण्ठ निलयः विभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | प्रति | ८. | प्रसन्न |
| तद् | ७. | उस स्तुति से | नन्द्य | ९. | होते हुये |
| गृणताम् | २. | स्तुति करने वाले | जगाद् | १४. | कहा |
| तेषाम् | ५. | उन | इदम् | १३. | यह |
| मुनीनाम् | ६. | सनकादि मुनियों की | विकुण्ठ | १०. | वैकुण्ठ |
| योग | ३. | योग | निलयः | ११. | निवासी |
| धर्मिणाम् । | ४. | निष्ठ | विभुः ॥ | १२. | भगवान् श्री हरि ने |

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्तुति करने वाले योगनिष्ठ उन सनकादि मुनियों की उस स्तुति से प्रसन्न होते हुये वैकुण्ठ निवासी भगवान् श्री हरि ने यह कहा ।

## द्वितीयः श्लोकः

श्री भगवानुवाच—

एतौ तौ पार्षदौ मह्यं जयो विजय एव च ।
कदर्थीकृत्य मां यद्वो बह्वकातामतिक्रमम् ॥२॥

पदच्छेद—

एतौ तौ पार्षदौ मह्यं जयः विजयः एव च ।
कदर्थीकृत्य माम् यद् वः बहु अक्रातम् अतिक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतौ, तौ | ५. | ये, वही | कदर्थी कृत्य | १०. | परवाह न करके |
| पार्षदौ | ७. | दोनों पार्षद हैं | माम् | ९. | मेरी |
| मह्यम् | ६. | मेरे | यद् | ८. | जिन्होंने |
| जयः | १. | जय | वः | ११. | आप लोगों का |
| विजयः | ३. | विजय | बहु | १२. | बहुत बड़ा |
| एव | ४. | नाम के | अक्रातम् | १३. | किया है |
| च । | २. | और | अतिक्रमम् ॥ | १४. | अपराध |

श्लोकार्थ—जय और विजय नाम के ये वही मेरे दोनों पार्षद हैं, जिन्होंने मेरी परवाह न करके आप लोगों का बहुत बड़ा अपराध किया है ।

# तृतीयः श्लोकः

यस्त्वेतयोर्धृतो दण्डो भवद्भिर्मामनुव्रतैः ।
स एवानुमतोऽस्माभिर्मुनयो देवहेलनात् ॥३॥

पदच्छेद—

यः तु एतयोः धृतः दण्डः भवद्भिः माम् अनुव्रतैः ।
सः एव अनुमतः अस्माभिः मुनयः देव हेलनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ८. | जो | अनुव्रतैः । | ३. | अनन्य भक्त |
| तु | ९. | भी | सः एव | १२. | उससे |
| एतयोः | ७. | इन दोनों को | अनुमतः | १४. | सहमत हूँ |
| धृतः | ११. | दिया है | अस्माभिः | १३. | मैं |
| दण्डः | १०. | दण्ड | मुनयः | १. | हे सनकादिकों |
| भवद्भिः | ४. | आप लोगों ने | देव | ५. | मेरी |
| माम् | २. | मेरे | हेलनात् ॥ | ६. | आज्ञा न मानने के कारण |

श्लोकार्थ—हे सनकादिकों ! मेरे अनन्य भक्त आप लोगों ने मेरी आज्ञा न मानने के कारण इन दोनों को जो भी दण्ड दिया है उससे मैं सहमत हूँ ।

# चतुर्थः श्लोकः

तद्वः प्रसादयाम्यद्य ब्रह्म दैवं परं हि मे ।
तद्धीत्यात्मकृतं मन्ये यत्स्वपुम्भिरसत्कृताः ॥४॥

पदच्छेद—

तद् वः प्रसादयामि अद्य ब्रह्मदैवम् परम् हि मे ।
तद् हि इति आत्मकृतम् मन्ये यत् स्वपुम्भिः असत्कृताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | १५. | इसलिये | तद् | ५. | उसे (मैं) |
| वः | १७. | आप लोगों से | हि, इति | ७. | ही |
| प्रसादयामि | १८. | क्षमा मांगता हूँ | आत्म | ६. | अपने द्वारा |
| अद्य | १६. | इस समय मैं | कृतम् | ८. | किया हुआ |
| ब्रह्म | ११. | ब्राह्मण | मन्ये | ९. | मानता हूँ |
| दैवम् | १४. | आराध्य हैं | यत् | २. | जो |
| परम् | १३. | परम् | स्वपुम्भिः | १. | हमारे सेवकों ने |
| हि | १०. | क्योंकि | असत् | ३. | असम्मान |
| मे । | १२. | मेरे | कृताः ॥ | ४. | किया है |

श्लोकार्थ—हमारे सेवकों ने जो असम्मान किया है, उसे मैं अपने द्वारा ही किया हुआ मानता हूँ क्योंकि ब्राह्मण मेरे परम् आराध्य हैं । इसलिये इस समय मैं आप लोगों से क्षमा मांगता हूँ ।

## पञ्चमः श्लोकः

यन्नामानि चगृह्णाति लोको भृत्ये कृतागसि ।
सोऽसाधुवादस्तत्कीर्तिं हन्ति त्वचमिवामयः ॥५॥

पदच्छेद—

यद् नामानि च गृह्णाति लोकः भृत्ये कृत आगसि ।
सः असाधुवादः तत्कीर्तिम् हन्ति त्वचम् इव आमयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यद् | ५. जिस स्वामी का | सः | ८. वह |
| नामानि | ६. नाम | असाधुवादः | ९. अपयश |
| च | १२. उसी प्रकार | तत् | १०. उसकी |
| गृह्णाति | ७. लेते हैं | कीर्तिम् | ११. कीर्ति को |
| लोकः | ४. लोग | हन्ति | १३. दूषित कर देता है |
| भृत्ये | १. सेवक के | त्वचम् | १५. त्वचा को |
| कृत | ३. करने पर | इव | १४. जैसे |
| आगसि । | २. अपराध | आमयः ॥ | १६. चर्म रोग |

श्लोकार्थ—सेवक के अपराध करने पर लोग जिस स्वामी का नाम लेते हैं; वह अपयश उसकी कीर्ति को उसी प्रकार दूषित कर देता है। जैसे त्वचा को चर्म रोग।

## षष्ठः श्लोकः

यस्यामृतामलयशः श्रवणावगाहः सद्यः पुनाति जगदाश्वपचाद्विकुण्ठः ।
सोऽहं भवद्भ्य उपलब्धसुतीर्थकीर्तिश्छिन्द्यां स्वबाहुमपि वः प्रतिकूलवृत्तिम् ॥६॥

पदच्छेद—

यस्य अमृत अमल यशः श्रवण अवगाहः सद्यः पुनाति जगत् आश्वपचात् विकुण्ठः ।
सः अहम् भवद् भय उपलब्धसुतीर्थकीर्तिः, छिन्द्याम् स्वबाहुम् अपि वः प्रतिकूल वृत्तिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यस्य | १. जिसकी | सः अहम् | १०. अत एव वही मैं |
| अमृत | ३. सुधा में | भवद् भय | १२. आप लोगों से ही |
| अमल, यशः | २. निर्मल कीर्ति | उपलब्ध | १५. प्राप्त किया है (अतः) |
| श्रवण | ४. श्रवण रूप | सुतीर्थ | १३. पवित्र |
| अवगाहः | ५. निमज्जन | कीर्तिः | १४. यश |
| सद्यः | ८. तत्काल | छिन्द्याम् | २०. काट सकता हूँ |
| पुनाति | ९. पवित्र कर देता है | स्वबाहुम्, अपि | १९. अपनी भुजाओं को, भी |
| जगत् | ७. संसार को | वः | १६. आप लोगों के |
| आश्वपचात् | ६. चाण्डाल पर्यन्त सारे | प्रतिकूल | १७. विरुद्ध |
| विकुण्ठः । | ११. विकुण्ठ हूँ (और) | वृत्तिम् ॥ | १८. आचरण करने वाली |

श्लोकार्थ—जिसकी निर्मल कीर्ति सुधा में श्रवणरूप निमज्जन चाण्डाल पर्यन्त सारे संसार को तत्काल पवित्र कर देता है। अतएव वही मैं विकुण्ठ हूँ। और आप लोगों से ही पवित्र यश प्राप्त किया है। अतः आप लोगों के विरुद्ध आचरण करने वाली अपनी भुजाओं को भी काट सकता हूँ।

## सप्तमः श्लोकः

यत्सेवया चरणपद्मपवित्ररेणुं, सद्यःक्षताखिलमलं प्रतिलब्धशीलम् ।
न श्रीर्विरक्तमपि मां विजहाति यस्याः, प्रेक्षालवार्थ इतरे नियमान् वहन्ति ॥७॥

पदच्छेद—यत् सेवया चरण पद्मपवित्र रेणुम्, सद्यः क्षत अखिल मलम् प्रतिलब्ध शीलम् ।
न श्रीः विरक्तम् अपि माम् विजहाति यस्याः, प्रेक्षालवअर्थ इतरे नियमान् वहन्ति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्, सेवया | १. | जिन ब्राह्मणों की सेवा से | न | १२. | नहीं |
| चरण, पद्म | २. | मेरे चरण कमल की | श्रीः | ११. | लक्ष्मी जी |
| पवित्र | ४. | पवित्र है | विरक्तम्, अपि, | | |
| रेणुम्, | ३. | धूल | माम् | १०. | उदासीन होने पर भी मुझे |
| सद्यः | ५. | (मैं) तत्काल | विजहाति | १३. | छोड़ती हैं |
| क्षत | ७ | रहित (और) | यस्याः | १४. | जिन लक्ष्मी जी के |
| अखिल, मलम् | ६. | सम्पूर्ण, पापों से | प्रेक्षा | १६. | कृपा कटाक्ष के |
| प्रतिलब्ध | ९. | सहित हूँ (जिससे) | लव | १५. | लेश मात्र |
| शीलम् । | ८. | सुन्दर स्वभाव के | अर्थः इतरे नियमान् | १७. | लिये, अन्य ब्रह्मादि देवता |
| | | | वहन्ति | १८. | व्रतों का, अनुष्ठान करते हैं |

श्लोकार्थ—जिन ब्राह्मणों की सेवा से मेरे चरण कमल की धूल पवित्र है। मैं तत्काल सम्पूर्ण पापों से रहित और सुन्दर स्वभाव के सहित हूँ। जिससे उदासीन होने पर भी मुझे लक्ष्मी जी नहीं छोड़ती हैं। जिन लक्ष्मी जी के लेशमात्र कृपा कटाक्ष के लिये अन्य ब्रह्मादि देवता व्रतों का अनुष्ठान करते हैं।

## अष्टमः श्लोकः

नाहं तथाद्मि यजमानहविर्विताने श्च्योतद्घृत प्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन ।
यद्ब्राह्मणस्य मुखतश्चरतोऽनुघासं, तुष्टस्य मय्यवहितैर्निजकर्मपाकैः ॥८॥

पदच्छेद—न अहम् तथा अदमि यजमान हविः वितानेः, श्च्योतत् घृतप्लुतम् अदन् हुतभुक् मुखेन ।
यद् ब्राह्मणस्य मुखतः चरतः अनुघासम्, तुष्टस्य मयि अवहितः निजकर्म पाकैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १८. | तृप्त नहीं होता हूँ | हुतभुक् मुखेन | १५. | अग्नि के मुख में |
| अहम् | १०. | मैं | यद् | ११. | जैसा |
| तथा | १३. | वैसा | ब्राह्मणस्य | ४. | ब्राह्मणों के |
| अदमि | १२. | तृप्त होता हूँ | मुखतः | ७. | मुख से |
| यजमान | १६. | यजमान के द्वारा दी गई | चरतः | ६. | तृप्त होते हुये |
| हविः | १७. | आहुतियों से भी | अनुघासम् | ५. | ग्रास-ग्रास पर |
| विताने, | १४. | यज्ञ में | तुष्टस्य | ३. | सदा सन्तुष्ट रहने वाले |
| श्च्यो तत् घृत | ८. | चूते हुये घी से | मयि अवहितैः | २. | मुझे समर्पित करके |
| प्लुतम्, अदन् । | ९. | तर पकवानों को खाता हुआ | निज,कर्म,पाकैः॥ | १. | अपने कर्मों के फल को |

श्लोकार्थ—अपने कर्मों के फल को मुझे समर्पित करके सदा सन्तुष्ट रहने वाले ब्राह्मणों के ग्रास-ग्रास पर तृप्त होते हुये मुख से चूते हुये घी से तर पकवानों को खाता हुआ मैं जैसा तृप्त होता हूँ। वैसा यज्ञ में अग्नि के मुख में यजमान के द्वारा दी गई आहुतियों से भी तृप्त नहीं होता हूँ।

## नवमः श्लोकः

येषां बिभर्म्यहमखण्डविकुण्ठयोग, मायाविभूतिरमलाङ्घ्रिरजः किरीटैः ।
विप्रांस्तु को न विषहेत यदर्हणाम्भः, सद्यः पुनाति सहचन्द्रललामलोकान् ॥९॥

पदच्छेद –येषाम् बिर्भमि अहम् अखण्ड विकुण्ठ योगमाया, विभूतिः अमल अङ्घ्रिरजः किरीटैः ।
विप्रान् तु कः न विषहेत यद् अर्हण अम्भः, सद्यः पुनाति सह चन्द्र ललाम लोकान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| येषाम् | ६. | जिनके | विप्रान् | १७. | उन ब्राह्मणों के कर्म को |
| बिर्भमि | ९. | धारण करता हूँ | तु | १०. | तथा |
| अहम् | ५. | मैं | कः न विषहेत | १८. | कौन, नहीं सहन करेगा |
| अखण्ड | २. | अखण्ड (और) | यद्, अर्हण, अम्भः | ११. | जिनकी, पूजा का, जल (गंगाजी) |
| विकुण्ठ | ३. | असीम | | | |
| योगमाया | १. | योग माया के | सद्यः पुनाति | १६. | तत्काल पवित्र करती हैं |
| विभूति | ४. | ऐश्वर्य से सम्पन्न | सह | १४. | साथ |
| अमल, | | | चन्द्र | १२. | चन्द्रमा को मस्तक पर |
| अङ्घ्रिरज | ७. | निर्मल, चरणों की धूल को | ललाम | १३. | धारण करने वाले (शंकर जी के) |
| किरीटैः । | ८. | अपने मुकुटों पर | लोकान् ॥ | १५. | सम्पूर्ण लोगों को |

श्लोकार्थ—योग माया के अखण्ड और असीम ऐश्वर्य से सम्पन्न मैं जिनके निर्मल चरणों की धूल को अपने मुकुटों पर धारण करता हूँ । तथा जिनकी पूजा का जल गंगाजी चन्द्रमा को मस्तक पर धारण करने वाले शंकर जी के साथ सम्पूर्ण लोगों को तत्काल पवित्र करती हैं । उन ब्राह्मणों के कर्म को कौन नहीं सहन करेगा ।

## दशमः श्लोकः

ये मे तनूर्द्विजवरान्दुहतीर्मदीया, भूतान्यलब्धशरणानि च भेदबुद्धया ।
द्रक्ष्यन्त्यघक्षतदृशो ह्यहिमन्यवस्तान्, गृध्रा रुषा मम कुषन्त्यधिदण्डनेतुः ॥१०॥

पदच्छेद—ये मे तनूः द्विजवरान् दुहतीः मदीया, भूतानि अलब्ध शरणानि च भेद बुद्धया ।
द्रक्ष्यन्ति अघक्षत दृशः हि अहिमन्यवः तान्, गृध्रा रुषा मम कुषन्ति अधिदण्डनेतुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये मे | १. | जो लोग मेरे | द्रक्ष्यन्ति | ११. | देखते हैं |
| तनूः | ३. | दूध देने वाली गायों को | अघ, क्षत | १३. | पाप से, नष्ट हो गई है |
| द्विजवरान् | १०. | शरीर से (अलग) | दृशः | १२. | (उनकी) विवेक दृष्टि |
| दुहतीः | २. | पूज्य ब्राह्मणों को | हि | १४. | इसीलिये |
| मदीया | ९. | मेरे | अहि, मन्यवः | १७. | सर्पों के समान, क्रोध करने वाले |
| भूतानि | ७. | प्राणियों को | तान् | १९. | उन्हें |
| अलब्ध | ६. | रहित | गृध्रा, रुषा | १८. | गीध जैसे दूत क्रोधित होकर |
| शरणानि | ५. | आश्रय से | मम | १५. | मेरे |
| च | ४. | और | कुषन्ति | २०. | पीड़ित करते हैं |
| भेद बुद्धया । | ८. | भेद, दृष्टि के कारण | अधिदण्ड नेतुः ॥ | १६. | दण्डाधिकारी, यमराज |

श्लोकार्थ—जो लोग मेरे पूज्य ब्राह्मणों को दूध देने वाली गायों को और आश्रय से रहित प्राणियों को भेद दृष्टि के कारण मेरे शरीर से अलग देखते हैं, उनकी विवेक दृष्टि पाप से नष्ट हो गई है । इसीलिये मेरे दण्डाधिकारी यमराज सर्पों के समान क्रोध करने वाले गीध जैसे दूत क्रोधित होकर उन्हें पीड़ित करते हैं ।

# एकादशः श्लोकः

ये ब्राह्मणान्मयि धिया क्षिपतोऽर्चयन्तस्तुष्यद्धृदः स्मितसुधोक्षितपद्मवक्त्राः ।
वाण्यानुरागकलयाऽऽत्मजवद् गृणन्तः सम्बोधयन्त्यहमिवाहमुपाहृतस्तैः ॥११॥

पदच्छेद—ये ब्राह्मणान् मयि धिया क्षिपतः अर्चयन्तः, तुष्यत् हृदः स्मित सुधा अक्षित पद्मवक्त्राः ।
वाण्या अनुराग कलया आत्मजवत् गृणन्तः, सम्बोधयन्ति अहम् इव अहम् उपाहृतः तैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये ब्राह्मणान् | १. | जो लोग ब्राह्मणों का | वाण्या | १३. | वचन से |
| मयि, धिया | ३. | (उनमें) मेरी भावना करके | अनुराग कलया | १२. | प्रेम पूर्ण |
| क्षिपतः | २. | कटुभाषण करने पर भी | आत्मजवत् | १०. | पुत्रों के समान |
| अर्चयन्तः | ९. | आदर करते हैं, (तथा) | गृणन्तः, | १४. | स्तुति करते हुये (उन्हें) |
| तुष्यत्, हृदः | ४. | प्रसन्न मन होकर | सम्बोधयन्ति | १५. | शान्त करते हैं |
| स्मित, सुधा | ५. | मुसकान रूपी अमृत से | अहम्, इव | ११. | (अथवा) मेरे समान |
| अक्षित | ६. | परिपूर्ण | अहम् | १७. | मुझे |
| पद्म | ८. | कमल से | उपाहृतः | १८. | वश में कर लेते हैं |
| वक्त्राः । | ७. | मुख | तैः ॥ | १६. | वे लोग |

श्लोकार्थ—जो लोग ब्राह्मणों का कटुभाषण करने पर भी उनमें मेरी भावना करके प्रसन्न मन होकर मुसकान रूपी अमृत से परिपूर्ण मुख कमल से आदर करते हैं। तथा पुत्रों के समान अथवा मेरे समान प्रेमपूर्ण वचन से स्तुति करते हुये,उन्हें,शान्त करते हैं। वे लोग मुझे वश में कर लेते हैं।

# द्वादशः श्लोकः

तन्मे स्वभर्तुरवसायमलक्षमाणौ, युष्मद्व्यतिक्रमगतिं प्रतिपद्य सद्यः ।
भूयो ममान्तिकमितां तदनुग्रहो मे, यत्कल्पतामचिरतो भृतयोर्विवासः ॥१२॥

पदच्छेद— तद् मे स्वभर्तुः अवसायम् अलक्षमाणौ, युष्मद् व्यतिक्रम गतिम् प्रतिपद्य सद्यः ।
भूयः मम अन्तिकम् इताम् तद् अनुग्रहः मे, यत् कल्पताम् अचिरतः भृतयोः विवासः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | १. | इसलिये | भूयः मम | १०. | फिर से, मेरे |
| मे | ५. | (मेरे) दोनों पार्षद | अन्तिकम् | ११. | पास |
| स्वभर्तुः | २. | अपने स्वामी के | इताम् | १२. | आ जावें |
| अवसायम् | ३ | अभिप्राय को | तद् | १३. | इसलिये |
| अलक्षमाणौ | ४. | न जानने वाले | अनुग्रहः | १५. | अनुरोध है (कि आप लोग) |
| युष्मद् व्यतिक्रम | ६. | आप लोगों का अनादर करने से | मे | १४. | मेरा |
| | | | यत् कल्पताम् | १६. | ऐसी कृपा करें (जिससे) |
| गतिम् | ७. | अधम गति को | अचिरतः | १८. | शीघ्र समाप्त हो सके |
| प्रतिपद्य | ९. | प्राप्त करके | भृतयोः विवासः ॥ | १७. | मेरे सेवकों का निर्वासन काल |
| सद्यः । | ८. | तत्काल | | | |

श्लोकार्थ—इसलिये अपने स्वामी के अभिप्राय को न जानने वाले मेरे दोनों पार्षद आप लोगों का अनादर करने से अधम गति को तत्काल प्राप्त करके फिर मेरे पास आ जावें, इसलिये मेरा अनुरोध है कि आप लोग ऐसी कृपा करें जिससे मेरे सेवकों का निर्वासन काल शीघ्रसमाप्त हो सके।

## त्रयोदश: श्लोक:

ब्रह्मोवाच—

अथ तस्योशतीं देवीमृषिकुल्यां सरस्वतीम् ।
नास्वाद्य मन्युदष्टानां तेषामात्माप्यतृप्यत ।।१३।।

पदच्छेद—

अथ तस्य उशतीम् देवीम् ऋषिकुल्याम् सरस्वतीम् ।
न आस्वाद्य मन्यु दष्टानाम् तेषाम् आत्मा अपि अतृप्यत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर | न | १३. | नहीं |
| तस्य | २. | भगवान् की | आस्वाद्य, मन्यु | ८. | सुनकर, क्रोध रूप सर्प से |
| उशतीम् | ४. | मधुर | दष्टानाम् | ९. | डसे रहने पर |
| देवीम् | ३. | प्रकाशमान् | तेषाम् | ११. | उन सनकादि कुमारों का |
| ऋषि | ५. | मंत्र | आत्मा | १२. | चित्त (उससे) |
| कुल्याम् | ६. | मयी | अपि | १०. | भी |
| सरस्वतीम् । | ७. | वाणी को | अतृप्यत ।। | १४. | तृप्त नहीं हो रहा था |

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् की प्रकाशमान् मधुर मंत्रमयी वाणी को सुनकर क्रोध रूप सर्प से डसे रहने पर भी उन सनकादि कुमारों का चित्त उससे तृप्त नहीं हो रहा था ।

## चतुर्दश: श्लोक:

सतीं व्यादाय शृण्वन्तो लघ्वीं गुर्वर्थगह्वराम् ।
विगाह्यागाधगम्भीरां न विदुस्तच्चिकीर्षितम् ।।१४।।

पदच्छेद—

सतीम् व्यादाय शृण्वन्तः लघ्वीम् गुरु अर्थ गह्वराम् ।
विगाह्य अगाध गम्भीराम् न विदुः तद् चिकीर्षितम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सतीम् | ७. | वाणी को | विगाह्य | १०. | विचार करने पर भी |
| व्यादाय | ९. | सोच समझ कर (और) | अगाध | ५. | अथाह |
| शृण्वन्तः | ८. | सुनकर (वे सनकादि कुमार) | गम्भीराम् | ६. | गम्भीर |
| लघ्वीम् | १. | थोड़े शब्द (और) | न | १३. | नहीं |
| गुरु | २. | बहुत से | विदुः | १४. | जान सके |
| अर्थ | ३. | अर्थों के कारण | तद् | ११. | भगवान् श्री हरि की |
| गह्वराम् । | ४. | गूढ़ | चिकीर्षितम् ।। | १२. | इच्छा को |

श्लोकार्थ—थोड़े शब्द और बहुत से अर्थों के कारण गूढ़ अथाह गम्भीर वाणी को सुनकर वे सनकादि कुमार सोच समझकर और विचार करने पर भी भगवान् श्री हरि की इच्छा को नहीं जान सके ।

## पञ्चदशः श्लोकः

ते योगमाययाऽऽरब्धपारमेष्ठ्यमहोदयम् ।
प्रोचुः प्राञ्जलयो विप्राः प्रहृष्टाः क्षुभितत्वचः ।।१५।।

पदच्छेद—

ते योग मायया आरब्ध पारमेष्ठ्य महोदयम् ।
प्रोचुः प्राञ्जलयः विप्राः प्रहृष्टाः क्षुभित त्वचः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ते | ४. | वे | प्रोचुः | १२. | बोले |
| योग | ६. | योग | प्राञ्जलयः | ११. | हाथ जोड़ कर |
| मायया | ७. | माया के द्वारा | विप्राः | ५. | सनकादि कुमार |
| आरब्ध | १०. | युक्त (भगवान् श्री हरि से) | प्रहृष्टाः | १. | आनन्द से |
| पारमेष्ठ्य | ८. | परम ऐश्वर्य के | क्षुभित | २. | पुलकित |
| महोदयम् । | ९. | प्रभाव से | त्वचः ।। | ३. | रोमावलियों वाले |

श्लोकार्थ—आनन्द से पुलकित रोमावलियों वाले वे सनकादि कुमार योग माया के द्वारा परम ऐश्वर्य के प्रभाव से युक्त भगवान् श्री हरि से हाथ जोड़ कर बोले ।

## षोडशः श्लोकः

ऋषय ऊचुः

न वयं भगवन् विद्मस्तव देव चिकीर्षितम् ।
कृतो मेऽनुग्रहश्चेति यदध्यक्षः प्रभाषसे ।।१६।।

पदच्छेद—

न वयम् भगवन् विद्मः तव देव चिकीर्षितम् ।
कृतः मे अनुग्रहः च इति यद् अध्यक्षः प्रभाषसे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १३. | नहीं | कृतः | २. | किया है |
| वयम् | १२. | हम लोग | मे, अनुग्रहः | १. | मेरे पर (आप लोगों ने) कृपा |
| भगवन् | ९. | हे प्रभो ! | च | ७. | इस विषय में |
| विद्मः | १४. | समझ पा रहे हैं | इति | ३. | ऐसा |
| तव | १०. | आपकी | यद् | ४. | जो (आप) |
| देव | ८. | स्वयम् प्रकाश | अध्यक्षः | ५. | साक्षात् रूप से |
| चिकीर्षितम् । | ११. | इच्छा को | प्रभाषसे ।। | ६. | कह रहे हैं |

श्लोकार्थ—मेरे ऊपर आप लोगों ने कृपा किया है । ऐसा जो आप साक्षात् रूप से कह रहे हैं । इस विषय में स्वयम् प्रकाश हे प्रभो ! आपकी इच्छा को हम लोग नहीं समझ पा रहे हैं ।

## सप्तदशः श्लोकः

ब्रह्मण्यस्य परं दैवं ब्राह्मणाः किल ते प्रभो।
विप्राणां देवदेवानां भगवानात्मदैवतम् ॥१७॥

पदच्छेद—

ब्रह्मण्यस्य परम् दैवम् ब्राह्मणाः किल ते प्रभो।
विप्राणां देव देवानाम् भगवान् आत्म दैवतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मण्यस्य | २. ब्राह्मणों के | विप्राणां | ९. ब्राह्मणों के और |
| परम् | ३. अत्यन्त हितैषी हैं | देव | १०. देवाधिदेव |
| दैवम् | ६. आराध्य हैं (यह) | देवानाम् | ११. ब्रह्माजी के |
| ब्राह्मणाः | ४. ब्राह्मण | भगवान् | ८. (वस्तुतः) आप ही |
| किल | ७. लोक शिक्षा के लिये है | आत्म | १२. आत्मा (और) |
| ते | ५. आपके | दैवतम् | १३. आराध्य देव हैं |
| प्रभो। | १. हे भगवान्! आप | | |

श्लोकार्थ—हे भगवान्! आप ब्राह्मणों के अत्यन्त हितैषी हैं। ब्राह्मण आपके आराध्य हैं। यह लोक शिक्षा के लिये है। वस्तुतः आप ही ब्राह्मणों के और देवाधिदेव ब्रह्माजी के आत्मा और आराध्य देव हैं।

## अष्टदशः श्लोकः

त्वत्तः सनातनो धर्मो रक्ष्यते तनुभिस्तव।
धर्मस्य परमो गुह्यो निर्विकारो भवान्मतः ॥१८॥

पदच्छेद—

त्वत्तः सनातनः धर्मः रक्ष्यते तनुभिः तव।
धर्मस्य परमः गुह्यः निर्विकारः भवान् मतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| त्वत्तः | १. आपसे ही | धर्मस्य | ९. धर्म के |
| सनातनः | २. सनातन | परमः | १०. परम |
| धर्मः | ३. धर्म (उत्पन्न होता है) | गुह्यः | ११. रहस्य हैं |
| रक्ष्यते | ६. इसकी रक्षा होती है | निर्विकारः | ७. (तथा) विकार रहित |
| तनुभिः | ५. अनेक अवतारों से | भवान् | ८. आप ही |
| तव। | ४. आपके ही | मतः ॥ | १२. (यह शास्त्र का) मत है |

श्लोकार्थ—आपसे ही सनातन धर्म उत्पन्न होता है। आपके ही अनेक अवतारों से इसकी रक्षा होती है। तथा विकार रहित आप ही धर्म के परम रहस्य हैं। यह शास्त्र का मत है।

## एकोनविंशः श्लोकः

तरन्ति ह्यञ्जसा मृत्युं निवृत्ता यदनुग्रहात् ।
योगिनः स भवान् किं स्विदनुगृह्येत यत्परैः ॥१६॥

पदच्छेद— तरन्ति हि अञ्जसा मृत्युम् निवृत्ताः यद् अनुग्रहात् ।
योगिनः सः भवान् किम् स्वित् अनुगृह्येत यत् परैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तरन्ति | ८. | पार करते हैं | योगिनः | ४. | योगीजन |
| हि | ७. | ही | सः | ६. | उस |
| अञ्जसा | ६. | सहज में | भवान् | १०. | आप पर |
| मृत्युम् | ५. | मृत्युरूप भव सागर को | किम्स्वित् | १३. | क्या |
| निवृत्ताः | ३. | निवृत्ति परायण | अनुगृह्येत | १४. | कृपा करेंगे |
| यद् | १. | जिस (आपकी) | यत् | ११. | जो |
| अनुग्रहात् । | २. | कृपा से | परैः ॥ | १२. | दूसरे (लोग हैं वे) |

श्लोकार्थ—जिस आपकी कृपा से निवृत्त परायण योगी जन मृत्युरूप भवसागर को सहज में ही पार करते हैं। उस आप पर जो दूसरे लोग हैं वे क्या कृपा करेंगे।

## विंशः श्लोकः

यं वै विभूतिरुपयात्यनुवेलमन्यैरर्थार्थिभिः स्वशिरसा धृतपादरेणुः ।
धन्यार्पिताङ्घ्रितुलसीनवदामधाम्नो, लोकं मधुव्रतपतेरिव कामयाना ॥२०॥

पदच्छेद— यम् वै विभूति उपयाति अनुवेलम् अन्यैः अर्थ अर्थिभिः स्वशिरसाधृत पाद रेणुः ।
धन्य अर्पित अङ्घ्रि तुलसी नव दाम धाम्नः लोकम् मधु व्रत पतेः इव कायमाना ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यम् वै | ६. | जिस आपकी | धन्य | ११. | भाग्यवान् भक्तों के द्वारा |
| विभूतिः | ७. | वे लक्ष्मी जी | अर्पित | १३. | चढ़ाई गई |
| उपयाति | १०. | सेवा में रहती हैं (तथा) | अङ्घ्रि | १२. | आपके चरणों पर |
| अनुवेलम् | ८. | निरन्तर | तुलसी | १४. | तुलसी की |
| अन्यैः | २. | दूसरे लोग | नव दाम | १५. | नूतन मालाओं पर |
| अर्थ, अर्थिभिः | १. | धन के लोलुप | धाम्नः | १८. | उन चरणों को |
| स्व शिरसा | ५. | अपने मस्तक पर | लोकम् | १६. | निवास स्थान |
| धृत | ६. | धारण करते हैं | मधुव्रत पते | १६. | गुञ्जार करते हुये भौरों के |
| पाद | ३. | जिनके चरण | इव | १७. | समान |
| रेणुः । | ४. | रज को | कामयाना ॥ | २०. | बनाना चाहती हैं |

श्लोकार्थ—धन के लोलुप दूसरे लोग जिनके चरण रज को अपने मस्तक पर धारण करते हैं। वे लक्ष्मी जी निरन्तर जिस आपकी सेवा में रहती हैं। तथा भाग्यवान् भक्तों के द्वारा आपके चरणों पर चढ़ाई गई तुलसी की नूतन मालाओं पर गुञ्जार करते हुये भौरों के समान उन चरणों को निवास स्थान बनाना चाहती हैं।

# एकविंशः श्लोकः

यस्तां विविक्तचरितैरनुवर्तमानां, नात्याद्रियत्परमभागवतप्रसङ्गः ।
स त्वं द्विजानुपथपुण्यरजःपुनीतः, श्रीवत्सलक्ष्म किमगा भगभाजनस्त्वम् ॥२१॥

पदच्छेद—यः ताम् विविक्त चरितैः अनुवर्तमानाम्, न अत्याद्रियत् परम् भागवत प्रसङ्गः ।
सः त्वम् द्विजअनुपथ पुण्य रजः पुनीतः श्रीवत्स लक्ष्मकिम् अगाः भगभाजनः त्वम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ४. | जो आप | सः त्वम् | १०. | वही आप |
| ताम् | ८. | उन लक्ष्मी जी का | द्विज, अनुपथ | १२. | ब्राह्मणों के विचरण के मार्ग को |
| विविक्त | ५. | अपने पवित्र | | | |
| चरितैः | ६. | चरित्रों से | पुण्य, रजः | १३. | पवित्र धूली से (और) |
| अनुवर्तमानाम् | ७. | सेवा करती हुई | पुनीतः | १५ | पवित्र हो सकते हैं |
| न अत्याद्रियत् | ६. | नहीं, विशेष आदर करते हैं | श्री वत्स लक्ष्म | १४. | श्रीवत्स की सुवर्ण रेखा से |
| परम् | २. | अत्यन्त | किम् | ११. | क्या |
| भागवत | १. | भगवत् भक्तों पर | अगाः | १८. | प्रसिद्ध हैं |
| प्रसङ्गः । | ३. | स्नेह रखने वाले | भग भाजनः | १७. | अलौकिक ऐश्वर्य के आश्रय रूप में |
| | | | त्वम् ॥ | १६ | आप |

श्लोकार्थ—भगवत् भक्तों पर अत्यन्त स्नेह रखने वाले जो आप अपने पवित्र चरित्रों से सेवा करती हुई उन लक्ष्मी जी का विशेष आदर नहीं करते हैं । वही आप क्या ब्राह्मणों के विचरण के मार्ग को पवित्र धूली से और श्री वत्स की सुवर्ण रेखा से पवित्र हो सकते हैं। आप अलौकिक ऐश्वर्य के आश्रय रूप में प्रसिद्ध हैं ।

# द्वाविंशः श्लोकः

धर्मस्य ते भगवतस्त्रियुग त्रिभिः स्वैः, यद्भिश्चराचरमिदं द्विजदेवतार्थम् ।
नूनं भृतं तदभिघाति रजस्तमश्च, सत्त्वेन नो वरदया तनुवा निरस्य ॥२२॥

पदच्छेद—धर्मस्य ते भगवतः त्रियुगत्रिभिः स्वैः, यद्भिः चराचरम् इदम् द्विज देवतार्थम् ।
नूनम् भृतम्तद् अभिघाति रजः तमः च, सत्त्वेन नः वरदया तनुवा निरस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धर्मस्य | १. | धर्म स्वरूप (तथा) | नूनम् | १२. | अतः (हे भगवन् आपकी) |
| ते | ३. | आप | भृतम् | ११. | धारण करते हैं |
| भगवतः | २. | ऐश्वर्य सम्पन्न | तद् | १५. | धर्म के |
| त्रियुग | ५. | तीनों युगों में | अभि घाति | १६. | विरोधी |
| त्रिभिः | ७. | तप, शौच और दया रूप तीन | रजः | १८. | रजोगुण |
| | | | तमः | २०. | तमोगुण को |
| स्वैः | ६. | अपने | च | १६. | और |
| यद्भिः | ८. | चरणों से | सत्त्वेन | १३ | सत्त्वमयी |
| चराचरम् | १०. | जड़-चेतन संसार को | नः | १७. | हमारे |
| इदम् | ६. | इस | वरदया, तनुवा | १४. | वरदायिनी, मूर्ति से |
| द्विज, देवतार्थम् । | ४. | ब्राह्मणों और देवताओं के कल्याण के लिये | निरस्य ॥ | २१. | दूर करें |

श्लोकार्थ—धर्म स्वरूप तथा ऐश्वर्य सम्पन्न आप ब्राह्मणों और देवताओं के कल्याण के लिये तीनों युगों में अपने तप, शौच और दया रूप तीन चरणों से इस जड़-चेतन संसार को धारण करते हैं । अतः हे भगवन् ! आपकी सत्त्वमयी वरदायिनी मूर्ति से धर्म के विरोधी हमारे रजोगुण तमोगुण को दूर करें ।

## त्रयोंत्रिंशः श्लोकः

न त्वं द्विजोत्तमकुलं यदिहात्मगोपं, गोप्ता वृषः स्वर्हणेन ससूनृतेन ।
तर्ह्येव नङ्क्ष्यति शिवस्तव देवपन्था, लोकोऽग्रहीष्यदृषभस्य हि तत्प्रमाणम् ।।२३।।

पदच्छेद— न त्वम् द्विजः उत्तम कुलम् यद् इह आत्मगोपम्, गोप्ता वृषः स्वर्हणेन ससूनृतेन ।
तर्हि एव नङ्क्ष्यति शिवः तव देव पन्था, लोकः अग्रहीष्यत् ऋषभस्य हि तत् प्रमाणम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १२. | नहीं | तर्हि | १४. | तब तो |
| त्वम् | ४. | आप | एवनङ्क्ष्यति | १८. | ही, नष्ट हो जावेगा |
| द्विजः | ८. | ब्राह्मण | शिवः | १६. | कल्याणकारी |
| उत्तम | ७. | श्रेष्ठ | तव | १५. | आपका |
| कुलम् | ९. | कुल की | देव | १. | हे भगवन् ! |
| यद् | २. | यदि | पन्था | १७. | वैदिक धर्म |
| इह | ६. | इस | लोकः | २०. | संसार में रहने वाले लोग |
| आत्मगोपम् | ५ | अपने से रक्षणीय | अग्रहीष्यत् | २४. | ग्रहण करते हैं |
| गोप्ता | १३. | रक्षा करेंगे | ऋषभस्य | २१. | श्रेष्ठ मनुष्य के |
| वृषः | ३. | धर्म स्वरूप | हि | १९. | क्योंकि |
| स्वर्हणेन | ११. | उत्तम पूजा से | तत् | २२. | आचरण को ही |
| ससूनृतेन ।। | १०. | मधुर वचन से (और) | प्रमाणम् । | २३. | प्रमाण रूप में |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! यदि धर्मस्वरूप आप अपने से रक्षणीय इस श्रेष्ठ ब्राह्मण कुल की मधुर वचन से और उत्तम पूजा से रक्षा नहीं करेंगे । तब तो आपका कल्याणकारी वैदिक धर्म ही नष्ट हो जावेगा । क्योंकि संसार में रहने वाले लोग श्रेष्ठ मनुष्य के आचरण को ही प्रमाण रूप में ग्रहण करते हैं ।

## चतुर्विशः श्लोकः

तत्तेऽनभीष्टमिव सत्त्वनिधेर्विधित्सोः, क्षेमं जनाय निजशक्तिभिरुद्धृतारेः ।
नैतावता त्र्यधिपतेर्बत विश्वभर्तुस्तेजः क्षतं त्ववनतस्य स ते विनोदः ।।२४।।

पदच्छेद— तत् ते अनभीष्टम इव सत्त्वनिधेः विधित्सोः, क्षेमम् जनायनिजशक्तिभिः उद्धृत अरेः ।
न एतावता त्र्यधिपतेःबत विश्वभर्तुः तेजः क्षतम् तु अवनतस्य सः ते विनोद ः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | १०. | उस धर्म का विनाश | न | २०. | नहीं होती है |
| ते | ९. | आप | एतावता | १८. | इससे |
| अनभीष्टम् | १२. | नहीं चाहते हैं | त्र्यधिपतेः | १४. | तीनों लोकों के स्वामी (तथा) |
| इव | ११. | कदापि | बत | १३ | आश्चर्य है कि |
| सत्त्वनिधेः | १. | सत्त्वगुण की खान | विश्वभर्तुः | १५. | जगत् के प्रति पालक होकर भी |
| विधित्सोः | ४, | उत्साह रखने वाले (तथा) | तेजः | १७. | आपके तेज की |
| क्षेमम् | ३. | कल्याण का | क्षतम् | १९. | कोई हानि |
| जनाय | २. | जीवों के | तु | २१. | किन्तु |
| निज | ५. | अपनी | अवनतस्य | १६. | ब्राह्मणों के प्रति नम्र रहने वाले |
| शक्तिभिः | ६. | शक्तियों से | | | |
| उद्धृत | ८. | संहार करने वाले | सः | २२. | वह |
| अरेः । | ७. | धर्म के शत्रुओं का | ते | २३. | आपकी |
| | | | विनोदः ।। | २४. | लीला है |

श्लोकार्थ—सत्त्वगुण की खान जीवों के कल्याण का उत्साह रखने वाले तथा अपनी शक्तियों से धर्म के शत्रुओं का संहार करने वाले आप उस धर्म का विनाश कदापि नहीं चाहते हैं । आश्चर्य है कि तीनों लोकों के स्वामी तथा जगत् के प्रतिपालक होकर भी ब्राह्मणों के प्रति नम्र रहने वाले आपके तेज की इससे कोई हानि नहीं होती है । किन्तु वह आपकी लीला है ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

यं वानयोर्दममधीश भवान् विधत्ते, वृत्तिं नु वा तदनुमन्महि निर्व्यलीकम् ।
अस्मासु वा य उचितो ध्रियतां सदण्डो, येऽनागसौ वयमयुङ्क्ष्महि किल्बिषेण ॥२५॥

पदच्छेद— यम् वा अनयोः दमम् अधीश भवान् विधत्ते, वृत्तिम् नुवा तद् अनुमन्महि निर्व्यलीकम् ।
अस्मासु वा यः उचितः ध्रियताम् सः दण्डः, ये अनागसौ वयम् अयुङ्क्ष्महि किल्बिषेण ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यम् | ५. | जो | अस्मासु | १७. | हमें |
| वा | ४. | चाहे | वा | १४. | अथवा |
| अनयोः | ३. | इन दोनों (पार्षदों) को | यः | १५. | जो |
| दमम् | ६. | दण्ड | उचितः | १६. | ठीक हो |
| अधीश | १. | हे सर्वेश्वर ! | ध्रियताम् | २०. | दें |
| भवान् | २. | आप | सः | १८. | वह |
| विधत्ते | ७. | देवें | दण्डः | १९. | दण्ड |
| वृत्तिम् | १०. | पुरस्कार देवें | ये | २१. | क्योंकि |
| नु | ९. | चाहें तो | अनागसौ | २३. | निरपराध सेवकों को |
| वा | ८. | अथवा | वयम् | २२. | हम लोगों ने |
| तद् | ११. | उसका हम | अयुङ्क्ष्महि | २५. | मुक्त किया है |
| अनुमन्महि | १३. | समर्थन करते हैं | किल्बिषेण | २४. | शाप से |
| निर्व्यलीकम् | १२. | निष्कपट भाव से | | | |

श्लोकार्थ—हे सर्वेश्वर ! आप इन दोनों पार्षदों को चाहे जो दण्ड देवें, अथवा चाहें तो पुरस्कार देवें । उसका हम निष्कपट भाव से समर्थन करते हैं । अथवा जो ठीक हो हमें वह दण्ड दें । क्योंकि हम लोगों ने निरपराध सेवकों को शाप से मुक्त किया है ।

# षड्विंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—

एतौ सुरेतरगतिं प्रतिपद्य सद्यः, संरम्भसम्भृतसमाध्यनुबद्धयोगौ ।
भूयः सकाशमुपयास्यत आशु यो वः, शापो मयैव निमितस्तदवेत विप्राः ॥२६॥

पदच्छेद—एतौ सुरेतर गतिम् प्रतिपद्य सद्यः, संरम्भ सम्भृत समाधि अनुबद्ध योगौः ।
भूयः सकाशम् उपयास्यतः आशु यः वः, शापः मया एव निमितः तद् अवेत विप्राः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतौ | १०. | ये दोनों (पार्षद) | उपयास्यतः | २२. | आ जावेंगे |
| सुरेतर | १२. | दैत्य | आशु | २१ | शीघ्र |
| गतिम् | १३. | योनि को | यः | ४. | जो |
| प्रतिपद्य | १४. | प्राप्त करेंगे (और वहाँ) | वः | ३. | आप लोगों ने |
| सद्यः, | ११. | तत्काल | शापः | ५. | शाप (दिया है) |
| संरम्भ | १६ | क्रोधावेश की | मया | ७. | मेरी |
| सम्भृत | १५. | बढ़े हुये | एव | ८. | ही |
| समाधि | १७. | एकाग्रता से | निमितः | ९. | प्रेरणा से हुआ है |
| अनुबद्ध | १९. | लगाकर | तद् | ६. | यह |
| योगौ । | १८. | सुदृढ़ योग | अवेत | २. | सच जानिये |
| भूयः, सकाशम् | २०. | फिर से (मेरे) पास | विप्राः ॥ | १. | हे मुनिगण ! |

श्लोकार्थ—हे मुनिगण ! सच जानिये आप लोगों ने जो शाप दिया है, यह मेरी ही प्रेरणा से हुआ है । ये दोनों पार्षद तत्काल दैत्य योनि को प्राप्त करेंगे; और वहाँ बढ़े हुये क्रोधावेश की एकाग्रता से सुदृढ़ योग लगाकर फिर से मेरे पास शीघ्र आ जावेंगे ।

## सप्तविंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—

अथ ते मुनयो दृष्ट्वा नयनानन्दभाजनम् ।
वैकुण्ठं तदधिष्ठानं विकुण्ठं च स्वयंप्रभम् ॥२७॥

पदच्छेद—

अथ ते मुनयः दृष्ट्वा नयन आनन्द भाजनम् ।
वैकुण्ठम् तद् अधिष्ठानम् विकुण्ठम् च स्वयम् प्रभम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर | वैकुण्ठम् | १३. | वैकुण्ठ लोक का |
| ते | २. | उन | तद् | ११. | उनके |
| मुनयः | ३. | सनकादि कुमारों ने | अधिष्ठानम् | १२. | धाम |
| दृष्ट्वा | १४. | दर्शन किया | विकुण्ठम् | ७. | भगवान् विष्णु का |
| नयन | ४. | नेत्रों को | च | ८. | और |
| आनन्द | ५. | सुन्दर | स्वयम् | ९. | स्वयम् |
| भाजनम् । | ६. | लगने वाले | प्रभम् ॥ | १०. | प्रकाश |

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन सनकादि कुमारों ने नेत्रों को सुन्दर लगने वाले भगवान् विष्णु का और स्वयम् प्रकाश उनके धाम वैकुण्ठ लोक का दर्शन किया ।

## अष्टविंशः श्लोकः

भगवन्तं परिक्रम्य प्रणिपत्यानुमान्य च ।
प्रतिजग्मुः प्रमुदिताः शंसन्तो वैष्णवीं श्रियम् ॥२८॥

पदच्छेद—

भगवन्तम् परिक्रम्य प्रणिपत्य अनुमान्य च ।
प्रतिजग्मुः प्रमुदिताः शंसन्तः वैष्णवीम् श्रियम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवन्तम् | १. | (वे सनकादि कुमार) भगवान् श्री हरि की | प्रतिजग्मुः | १०. | वहाँ से लौट आये |
| | | | प्रमुदिताः | ९. | प्रसन्न होकर |
| परिक्रम्य | २. | परिक्रमा करके | शंसन्तः | ८. | वर्णन करते हुये |
| प्रणिपत्य | ४. | प्रणाम करके (तथा) | वैष्णवीम् | ६. | भगवान् विष्णु के |
| अनुमान्य | ५. | (उनसे) अनुमति पाकर | श्रियम् ॥ | ७. | ऐश्वर्य का |
| च । | ३. | और | | | |

श्लोकार्थ—वे सनकादि कुमार भगवान् श्री हरि की परिक्रमा करके और प्रणाम करके तथा उनसे अनुमति पाकर भगवान् विष्णु के ऐश्वर्य का वर्णन करते हुये प्रसन्न होकर वहाँ से लौट आये ।

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

भगवाननुगावाह यातं मा भैष्टमस्तु शम् ।
ब्रह्मतेजः समर्थोऽपि हन्तुं नेच्छे मतं तु मे ॥२९॥

पदच्छेद—

भगवान् अनुगौ आह यातम् मा भैष्टम् अस्तु शम् ।
ब्रह्मतेजः समर्थः अपि हन्तुम् न इच्छे मतम् तु मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | १. | भगवान् श्री हरि ने | ब्रह्मतेजः | ११. | ब्राह्मणों के शाप को |
| अनुगौ | २. | अपने दोनों पार्षदों से | समर्थः | ९. | मैं समर्थ होने पर, |
| आह | ३. | कहा (कि) | अपि | १०. | भी |
| यातम् | ४. | तुम दोनों चले जाओ, | हन्तुम् | १३. | हराना |
| मा | ५. | मत | न | १२. | नहीं |
| भैष्टम् | ६. | भय करो | इच्छे | १४. | चाहता हूँ |
| अस्तु | ८. | होगा | मतम् | १६. | अभिमत है |
| शम् । | ७. | तुम्हारा कल्याण | तु, मे ॥ | १५. | तथा (यह) मुझे (भी) |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि ने अपने दोनों पार्षदों से कहा कि तुम दोनों चले जाओ। मत भय करो तुम्हारा कल्याण होगा। मैं समर्थ होने पर भी ब्राह्मणों के शाप को नहीं हराना चाहता हूँ। तथा यह मुझे भी अभिमत है।

# त्रिंशः श्लोकः

एतत्पुरैव निर्दिष्टं रमया क्रुद्धया यदा ।
पुरापवारिता द्वारि विशन्ती मय्युपारते ॥३०॥

पदच्छेद—

एतत् पुरा एव निर्दिष्टम् रमया क्रुद्धया यदा ।
पुरा अपवारिता द्वारि विशन्ती मयि उपारते ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतत् | ११. | यह (शाप) | पुरा | १. | एक बार |
| पुरा, एव | १०. | पहले ही (तुम्हें) | अपवारिता | ७. | रोका था (उससे) |
| निर्दिष्टम् | १२. | दिया था | द्वारि | ५. | (तुम लोगों ने) द्वार में |
| रमया | ९. | लक्ष्मी जी ने | विशन्ती | ६. | प्रवेश करती हुई। (लक्ष्मी जी को) |
| क्रुद्धया | ८. | क्रोधित हुई | | | |
| यदा । | २. | जब | मयि | ३. | मैं |
| | | | उपारते ॥ | ४. | योगनिद्रा में था (उस समय) |

श्लोकार्थ—एक बार जब मैं योग निद्रा में था उस समय तुम लोगों ने द्वार में प्रवेश करती हुई लक्ष्मी जी को रोका था उससे क्रोधित हुई लक्ष्मी जी ने पहले ही तुम्हें यह शाप दिया था।

## एकत्रिंशः श्लोकः

मयि संरम्भयोगेन निस्तीर्य -ब्रह्महेलनम् ।
प्रत्येष्यतं निकाशं मे कालेनाल्पीयसा पुनः ॥३१॥

पदच्छेद—

मयि संरम्भ योगेन निस्तीर्य ब्रह्म हेलनम् ।
प्रत्येष्यतम् निकाशम् मे कालेन अल्पीयसा पुनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मयि | १. | मेरे प्रति | प्रत्येष्यतम् | १२. | लौट आओगे |
| संरम्भ | २. | क्रोध की] | निकाशम् | ११. | समीप |
| योगेन | ३. | चित्त वृत्ति होने के कारण | मे | १०. | मेरे |
| निस्तीर्य | ६. | भोग करके | कालेन | ९. | समय में |
| ब्रह्म | ४. | (तुम दोनों) ब्राह्मणों के | अल्पीयसा | ८. | थोड़े ही |
| हेलनम् । | ५. | शाप को | पुनः ॥ | ७. | फिर से |

श्लोकार्थ—मेरे प्रति क्रोध की चित्त वृत्ति होने के कारण तुम दोनों ब्राह्मणों के शाप को भोग करके फिर से थोड़े ही समय में मेरे समीप लौट आओगे ।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

द्वाःस्थावादिश्य भगवान् विमानश्रेणिभूषणम् ।
सर्वातिशयया लक्ष्म्या जुष्टं स्वं धिष्ण्यमाविशत् ॥३२॥

पदच्छेद—

द्वाःस्थौ आदिश्य भगवान् विमान श्रेणि भूषणम् ।
सर्व अतिशयया लक्ष्म्या जुष्टम् स्वम् धिष्ण्यम् आविशत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वाः स्थौ | १. | अपने दोनों द्वार पालों को | सर्व | ७. | सब को |
| आदिश्य | २. | आदेश देकर | अतिशयया | ८. | तिरष्कृत करने वाली |
| भगवान् | ३. | भगवान श्री हरि ने | लक्ष्म्या | ९. | शोभा से |
| विमान | ४. | विमानों की | जुष्टम् | १०. | सम्पन्न |
| श्रेणि | ५. | पंक्तियों से | स्वम् | ११. | अपने |
| भूषणम् । | ६. | सुसज्जित (और) | धिष्ण्यम् | १२. | धाम में |
| | | | आविशत् | १३. | प्रवेश किया |

श्लोकार्थ—अपने दोनों द्वारपालों को आदेश देकर भगवान् श्री हरि ने विमानों की पंक्तियों से सुसज्जित और सब को तिरष्कृत करने वाली शोभा से सम्पन्न अपने धाम में प्रवेश किया ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तौ तु गीर्वाणऋषभौ दुस्तराद्धरिलोकतः ।
हतश्रियौ ब्रह्मशापादभूतां विगतस्मयौ ।।३३।।

पदच्छेद—

तौ तु गीर्वाण ऋषभौ दुस्तरात् हरि लोकतः ।
हत श्रियौ ब्रह्म शापात् अभूताम् विगत स्मयौ ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तौ | ३. | वे दोनों (पार्षद) | हत | १०. | हीन |
| तु | ११. | तथा | श्रियौ | ९. | श्री |
| गीर्वाण | १. | देव | ब्रह्म | ४. | ब्राह्मणों के |
| ऋषभौ | २. | श्रेष्ठ | शापात् | ५. | शाप से |
| दुस्तरात् | ६. | अलङ्घनीय | अभूताम् | १४. | हो गये |
| हरि | ७. | श्री हरि के | विगत | १३. | रहित |
| लोकतः | ८. | धाम में ही | स्मयौ ।। | १२. | अभिमान से |

श्लोकार्थ—देव श्रेष्ठ वे दोनों पार्षद ब्राह्मणों के शाप से अलङ्घनीय श्री हरि के धाम में ही श्री हीन तथा अभिमान से रहित हो गये ।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तदा विकुण्ठधिषणात्तयोर्निपतमानयोः ।
हाहाकारो महानासीद्विमानाग्र्येषु पुत्रकाः ।।३४।।

पदच्छेद—

तदा विकुण्ठ धिषणात् तयोः निपत मानयोः ।
हाहाकारः महान् आसीत् विमान अग्र्येषु पुत्रकाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तदा | २. | उस समय | हाहाकारः | ११. | हाहाकार |
| विकुण्ठ | ३. | भगवान् विष्णु के | महान् | १०. | महान |
| धिषणात् | ४. | धाम से | आसीत् | १२. | मच गया |
| तयोः | ५. | उन दोनों पार्षदों के | विमान | ९. | विमानों पर (स्थित देवताओं में) |
| निपत | ६. | नीचे | | | |
| मानयोः । | ७. | गिरते समय | अग्र्येषु | ८. | श्रेष्ठ |
| | | | पुत्रकाः ।। | १. | हे पुत्रों ! |

श्लोकार्थ—हे पुत्रों ! उस समय भगवान् विष्णु के धाम से उन दोनों पार्षदों के नीचे गिरते समय श्रेष्ठ विमानों पर स्थित देवताओं में महान हाहाकार मच गया ।

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

तावेव ह्यधुना प्राप्तौ पार्षदप्रवरौ हरेः ।
दितेर्जठरनिर्विष्टं काश्यपं तेजउल्बणम् ।।३५।।

पदच्छेद—

तौ एव हि अधुना प्राप्तौ पार्षद प्रवरौ हरेः ।
दितेः जठर निर्विष्टम् काश्यपम् तेजः उल्बणम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तौ | ११. | वे दोनों (जय और विजय) ने | दितेः | १. | दिति के |
| एवहि | १२. | ही | जठर | २. | गर्भ में |
| अधुना | ७. | इस समय | निर्विष्टम् | ३. | स्थित |
| प्राप्तौ | १३. | प्रवेश किया है | काश्यपम् | ४. | महर्षि कश्यप के |
| पार्षद | १०. | पार्षद | तेजः | ६. | तेज में |
| प्रवरौ | ९. | श्रेष्ठ | उल्बणम् ।। | ५. | उग्र |
| हरेः । | ८. | भगवान् श्री हरि के | | | |

श्लोकार्थ—दिति के गर्भ में स्थित महर्षि कश्यप के उग्र तेज में इस समय भगवान् श्रीहरि के श्रेष्ठ पार्षद वे दोनों जय-विजय ने ही प्रवेश किया है ।

# षट्त्रिंशः श्लोकः

तयोरसुरयोरद्य तेजसा यमयोर्हि वः ।
आक्षिप्तं तेज एतर्हि भगवांस्तद्विधित्सति ।।३६।।

पदच्छेद—

तयोः असुरयोः अद्य तेजसा यमयोः हि वः ।
आक्षिप्तम् तेज एतर्हि भगवान् तद् विधित्सति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तयोः | १. | उन | आक्षिप्तम् | ९. | फीका पड़ गया है |
| असुरयोः | ३. | असुरों के | तेज | ८. | तेज |
| अद्य | ६. | अब | एतर्हि | १०. | इस समय |
| तेजसा | ४. | तेज से | भगवान् | ११. | भगवान् श्री हरि |
| यमयोः | २. | दोनों | तद् | १२. | ऐसा (ही) |
| हि | ५. | ही | विधित्सति ।। | १३. | करना चाहते हैं |
| वः । | ७. | तुम लोगों का | | | |

श्लोकार्थ—उन दोनों असुरों के तेज से ही अब तुम लोगों का तेज फीका पड़ गया है । इस समय भगवान् श्री हरि ऐसा ही करना चाहते हैं ।

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

विश्वस्य यः स्थितिलयोद्भवहेतुराद्यो,
योगेश्वरैरपि दुरत्यययोगमायः ।
क्षेमं विधास्यति स नो भगवांस्त्र्यधीश,
स्तत्रास्मदीयविमृशेन कियानिहार्थः ।।३७।।

पदच्छेद—

विश्वस्य यः स्थिति लय उद्भव हेतुः आद्यः
योगेश्वरैः अपि दुरत्यय योग मायः ।
क्षेमम् विधास्यति स नो भगवान् त्र्यधीशः
तत्रास्मदीयविमृशेन कियानिहार्थः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विश्वस्य | ३. | संसार की | क्षेमम् | १६. | कल्याण |
| यः | १. | जो | विधास्यति | १७. | करेंगे, |
| स्थिति | ५. | पालन और | सः | १३. | वे |
| लय | ६. | संहार के | नः | १५. | हम लोगों का |
| उद्भव | ४. | उत्पत्ति | भगवान् | १४. | भगवान् श्री हरि |
| हेतुः | ७. | कारण हैं | त्र्यधीशः | १२. | सत्वादि तीनों गुणों के स्वामी |
| आद्यः | २. | आदि पुरुष | तत्र, अस्मदीय | १९. | इस विषय में, हमारे |
| योगेश्वरैः | ९. | योगि राज | विमृशेन | २०. | विचार करने से |
| अपि | १०. | भी | कियान् | २१. | क्या |
| दुरत्यय | ११. | कठिनाई से पार पाते हैं | इह | १८. | अब |
| योगमायः । | ८. | जिसकी योग माया का | अर्थः ।। | २२. | लाभ होगा |

श्लोकार्थ—जो आदि पुरुष संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के कारण हैं । जिसको योग माया का योगिराज भी कठिनाई से पार पाते हैं । सत्वादि तीनों गुणों के स्वामी वे भगवान् श्री हरि हम लोगों का कल्याण करेंगे । अब इस विषय में हमारे विचार करने से क्या लाभ होगा ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयः स्कन्धेः षोडशः अध्यायः ।। १६ ।।

अथ सप्तदशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

निशम्यात्मभुवा गीतं कारणं शङ्कयोज्झिताः ।
ततः सर्वे न्यवर्तन्त त्रिदिवाय दिवौकसः ।।१।।

पदच्छेद—

निशम्य आत्मभुवा गीतम् कारणम् शङ्कया उज्झिताः ।
ततः सर्वे न्यवर्तन्त त्रिदिवाय दिवौकसः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निशम्य | ६. | सुनकर | ततः | ९. | उसके बाद |
| आत्मभुवा | ३. | ब्रह्माजी से | सर्वे | १. | सभी |
| गीतम् | ४. | कहे गये | न्यवर्तन्त | ११. | लौट आये |
| कारणम् | ५. | अन्धकार के कारण को | त्रिदिवाय | १०. | स्वर्ग लोक को |
| शङ्कया | ७. | भय से | दिवौकसः ।। | २. | देवगण |
| उज्झिताः । | ८. | मुक्त हो गये (और) | | | |

श्लोकार्थ—सभी देवगण ब्रह्मा जी से कहे गये अन्धकार के कारण को सुनकर भय से मुक्त हो गये । और उसके बाद स्वर्ग लोक को लौट आये ।

## द्वितीयः श्लोकः

दितिस्तु भर्तुरादेशादपत्यपरिशङ्किनी ।
पूर्णे वर्षशते साध्वी पुत्रौ प्रसुषुवे यमौ ।।२।।

पदच्छेद—

दितिः तु भर्तुः आदेशात् अपत्य परिशङ्किनी ।
पूर्णे वर्षशते साध्वी पुत्रौ प्रसुषुवे यमौ ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दितिः | ७. | दिति ने | पूर्णे | ९. | पूर्ण हो जाने पर |
| तु | ६. | माता | वर्षशते | ८. | सौ वर्ष |
| भर्तुः | १. | अपने पति कश्यप जी के | साध्वी | ५. | पतिव्रता |
| आदेशात् | २. | आदेश से | पुत्रौ | ११. | पुत्रों को |
| अपत्य | ३. | पुत्रों के बारे में | प्रसुषुवे | १२. | उत्पन्न किया |
| परिशङ्किनी । | ४. | शङ्का करती हुई | यमौ ।। | १०. | दोजुड़वें |

श्लोकार्थ—अपने पति कश्यप जी के आदेश से पुत्रों के बारे में शङ्का करती हुई पतिव्रता माता दिति ने सौ वर्ष पूर्ण हो जाने पर दो जुड़वें पुत्रों को उत्पन्न किया ।

# तृतीयः श्लोकः

उत्पाता बहवस्तत्र निपेतुर्जायमानयोः ।
दिवि भुव्यन्तरिक्षे च लोकस्योरुभयावहाः ।।३।।

पदच्छेद—

उत्पाताः बहवः तत्र निपेतुः जायमानयोः ।
दिवि भुवि अन्तरिक्षे च लोकस्य उरु भय आवहा ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| उत्पाताः | ८. उपद्रव | भुवि | ४. पृथ्वी |
| बहवः | ७. बहुत से | अन्तरिक्षे | ६. आकाश लोक में |
| तत्रः | १. उन दोनों के | च | ५. और |
| निपेतुः | ९. हुये (तथा) | लोकस्य | १०. लोगों में |
| जायमानयोः | २. उत्पन्न होते समय | उरु | ११. अत्यन्त |
| दिवि । | ३. स्वर्ग | भय आवहाः ।। | १२. भय व्याप्त हो गया |

श्लोकार्थ—उन दोनों के उत्पन्न होते समय स्वर्ग, पृथ्वी और आकाश लोक में बहुत से उपद्रव हुये तथा लोगों में अत्यन्त भय व्याप्त हो गया ।

# चतुर्थः श्लोकः

सहाचला भुवश्चेलुर्दिशः सर्वाः प्रजज्वलुः ।
सोल्काश्चाशनयः पेतुः केतवश्चार्तिहेतवः ।।४।।

पदच्छेद—

सह अचला भुवः चेलुः दिशः सर्वाः प्रजज्वलुः ।
स उलकाः च अशनयः पेतुः केतवः च आर्ति हेतवः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सह | २. साथ-साथ | स उल्का | ८. उल्कापात होने लगा |
| अचला | १. पर्वतों के | च | ९. और |
| भुवः | ३. पृथ्वी | अशनयः | १०. विजलियाँ |
| चेलुः | ४. कांपने लगी | पेतुः | ११. गिरने लगीं |
| दिशः | ६. दिशायें | केतवः | १४. पुच्छल तारे (दिखाई देने लगे) |
| सर्वाः | ५. सभी | | |
| प्रजज्वलुः । | ७. जलने लगीं | च | १२. तथा |
| | | आर्तिहेतवः ।। | १३. अरिष्ट के सूचक |

श्लोकार्थ—पर्वतों के साथ पृथ्वी कांपने लगी । सभी दिशायें जलने लगीं । उल्का पात होने लगा । और बिजलियाँ गिरने लगीं तथा अरिष्ट के सूचक पुच्छल तारे दिखाई देने लगे ।

## पञ्चमः श्लोकः

ववौ वायुः सुदुःस्पर्शः फूत्कारानीरयन्मुहुः ।
उन्मूलयन्नगपतीन्वात्यानीको रजोध्वजः ।।५।।

पदच्छेद—

ववौ वायुः सुदुःस्पर्शः फूत्कारान् ईरयन् मुहुः ।
उन्मूलयन् नगपतीन् वात्या अनीकः रजः ध्वजः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ववौ | ८. | चलने लगी | उन्मूलयन् | ५. | जड़ से उखाड़ती हुई |
| वायुः | ७. | हवा | नगपतीन् | ४. | वृक्षों को |
| सुदुःस्पर्शः | ६. | अत्यन्त तेज | वात्या | ९. | आँधी |
| फूत्कारान् | २. | साँय-साँय | अनीकः | १०. | उसकी सेना (और) |
| ईरयन् | ३. | करती हुई (तथा) | रजः | ११. | धूली |
| मुहुः । | १. | बार-बार | ध्वजः ।। | १२. | पताका थी |

श्लोकार्थ—बार-बार साँय-साँय करती हुई तथा वृक्षों को जड़ से उखाड़ती हुई अत्यन्त तेज हवा चलने लगी । आँधी उसकी सेना और धूली पताका थी ।

## षष्टः श्लोकः

उद्धसत्तडिदम्भोदघटया नष्टभागणे ।
व्योम्नि प्रविष्टतमसा न स्म व्यादृश्यते पदम् ।।६।।

पदच्छेद—

उद्धसत् तडित् अम्भोद घटया नष्ट भागणे ।
व्योम्नि प्रविष्ट तमसा न स्म व्यादृश्यते पदम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उद्धसत् | २. | चमक रही थी | व्योम्नि | ५. | आकाश में |
| तडित् | १. | बिजली | प्रविष्ट | ९. | फैल जाने से |
| अम्भोद | ३. | बादलों की | तमसा | ८. | अन्धकार |
| घटया | ४. | घटा से | न स्म | ११. | नहीं पड़ता था |
| नष्ट | ७. | छिप गया था | व्यादृश्यते | १२. | दिखलाई |
| भागणे । | ६. | तारा मण्डल | पदम् ।। | १०. | कुछ भी |

श्लोकार्थ—बिजली चमक रही थी, बादलों की घटा से आकाश में तारा मण्डल छिप गया था । अन्धकार फैल जाने से कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ता था ।

# सप्तमः श्लोकः

चुक्रोश विमना वार्धिरुदूर्मिः क्षुभितोदरः ।
सोदपानाश्च सरितश्चुक्षुभुः शुष्कपङ्कजाः ।।७।।

पदच्छेद—

चुक्रोश विमना वार्धिः उदूर्मिः क्षुभितः उदरः ।
स उदपानाः च सरितः चुक्षुभुः शुष्क पङ्कजाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चुक्रोश | ३. | कोलाहल करने लगा | स उदपानाः | ७. | तालाब |
| विमना | २. | दुःखी मन से | च | ८. | और |
| वार्धिः | १. | समुद्र | सरितः | ९. | नदियों में |
| उदूर्मिः | ४. | (उसमें) ऊँची-ऊँची लहरें उठने लगीं | चुक्षुभुः | १०. | खलबली हो गई (उनके) |
| | | | शुष्क | १२. | सूख गये |
| क्षुभितः | ६. | हल-चल मच गई | पङ्कजाः ।। | ११. | कमल |
| उदरः । | ५. | उसके भीतर रहने वाले जीवों में | | | |

श्लोकार्थ— समुद्र दुःखी मन से कोलाहल करने लगा; उसमें ऊँची-ऊँची लहरें उठने लगीं। उसके भीतर रहने वाले जीवों में हल-चल मच गई। तालाब और नदियों में खलबली हो गई उनके कमल सूख गये।

# अष्टमः श्लोकः

मुहुः परिधयोऽभूवन् सराह्वोः शशिसूर्ययोः ।
निर्घाताः रथनिर्ह्रादा विवरेभ्यः प्रजज्ञिरे ।।८।।

पदच्छेद—

मुहुः परिधयः अभूवन् सराह्वोः शशि सूर्ययोः ।
निर्घाताः रथ निर्ह्रादाः विवरेभ्यः प्रजज्ञिरे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुहुः | ४. | अनेकों | निर्घाताः | ७. | बिना बादल के मेघ की गर्जना (तथा) |
| परिधयः | ५. | मण्डल | | | |
| अभूवन् | ६. | उत्पन्न हो गये | रथ | ९. | रथों की |
| सराह्वोः | १. | राहु से ग्रस्त | निर्ह्रादाः | १०. | घरघराहट |
| शशि | २. | चन्द्रमा (और) | विवरेभ्यः | ८. | गुफाओं से |
| सूर्ययोः । | ३. | सूर्य के चारों ओर | प्रजज्ञिरे ।। | ११. | होने लगी |

श्लोकार्थ—राहु से ग्रस्त चन्द्रमा और सूर्य के चारों ओर अनेकों मण्डल उत्पन्न हो गये। बिना बादल के मेघ की गर्जना तथा गुफाओं से रथों की घरघराह होने लगी।

## नवमः श्लोकः

अन्तर्ग्रामेषु मुखतो वमन्त्यो वह्निमुल्बणम् ।
शृगालोलूकटङ्कारैः प्रणेदुरशिवं शिवाः ॥९॥

पदच्छेद—

अन्तर ग्रामेषु मुखतः वमन्त्यः वह्निम् उल्बणम् ।
शृगाल उलूक टङ्कारैः प्रणेदुः अशिवम् शिवाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तर् | २. | अन्दर | शृगाल | ३. | गीदड़ों (और) |
| ग्रामेषु | १. | गाँव के | उलूक | ४. | उल्लुओं की |
| मुखतः | ७. | मुख से | टङ्कारैः | ५. | आवाज के साथ |
| वमन्त्यः | १०. | उगलती हुई | प्रणेदुः | १२. | ध्वनि करने लगीं |
| वह्निम् | ९. | आग | अशिवम् | ११. | अमंगल |
| उल्बणम् । | ८. | दहकती | शिवाः ॥ | ६. | सियारियाँ |

श्लोकार्थ—गाँव के अन्दर गीदड़ों और उल्लुओं की आवाज के साथ सियारियाँ मुख से दहकती आग उगलती हुई अमंगल ध्वनि करने लगीं ।

## दशमः श्लोकः

सङ्गीतवद्रोदनवदुन्नमय्य शिरोधराम् ।
व्यमुञ्चन् विविधा वाचो ग्रामसिंहास्ततस्ततः ॥१०॥

पदच्छेद—

सङ्गीतवत् रोदनवत् उन्नमय्य शिरोधराम् ।
व्यमुञ्चन् विविधाः वाचः ग्रामसिंहाः ततः ततः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सङ्गीतवत् | ६. | गाने (और) | व्यमुञ्चन् | १०. | करने लगे |
| रोदनवत् | ७. | रोने के समय | विविधाः | ८. | भाँति-भाँति के |
| उन्नमय्य | ५. | उठाकर | वाचः | ९. | शब्द |
| शिरोधराम् । | ४. | अपनी गर्दन | ग्रामसिंहाः | ३. | कुत्ते |
| | | | ततः | १. | जहाँ |
| | | | ततः ॥ | २. | तहाँ |

श्लोकार्थ—जहाँ-तहाँ कुत्ते अपनी गर्दन उठाकर गाने और रोने के समय भाँति-भाँति के शब्द करने लगे ।

## एकादशः श्लोकः

खराश्च कर्कशैः क्षत्तः खुरैर्घ्नन्तो धरातलम् ।
खार्काररभसा मत्ताः पर्यधावन् वरूथसः ।।११।।

पदच्छेद—

खराश्च कर्कशैः क्षत्तः खुरैः घ्नन्तः धरातलम् ।
खार्कार रभसा मत्ताः पर्यधावन् वरूथशः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| खराः च | ३. गदहे अपने | खार्कार | ९. रेंकने की |
| कर्कशैः | ४. तीखे | रभसा | १०. आवाज करते हुये |
| क्षत्तः | १. हे विदुर जी ! | मत्ताः | ८. मतवाले होकर |
| खुरैः | ५. खुरों से | पर्यधावन् | ११. चारों ओर दौड़ने लगे |
| घ्नन्तः | ७. खरचते हुये | वरुथशः ।। | २. झुन्ड के झुन्ड |
| धरातलम्। | ६. पृथ्वी को | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! झुन्ड के झुन्ड गदहे अपने तीखे खुरों से पृथ्वी को खुरचते हुये मतवाले होकर रेंकने की आवाज करते हुये चारों ओर दौड़ने लगे ।

## द्वादशः श्लोकः

रुदन्तो रासभत्रस्ता नीडादुदपतन् खगाः ।
घोषेऽरण्ये च पशवः शकृन्मूत्रमकुर्वत ।।१२।।

पदच्छेद—

रुदन्तो रासभ त्रस्ता नीडात् उदपतन् खगाः ।
घोषे अरण्ये च पशवः शकृत् मूत्रम् अकुर्वत ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| रुदन्तो | ३. रोते हुये | घोषे | ७. गऊशालाओं में |
| रासभ | २. गदहों की आवाजों से | अरण्ये | ९. जंगल में |
| त्रस्ता | ४. भयभीत होकर | च | ८. और |
| नीडात् | ५. घोंसलों से | पशवः | १०. पशु |
| उदपतन् | ६. उड़ने लगे | शकृत् मूत्रम् | ११. मल, मूत्र |
| खगाः। | १. पक्षी गण | अकुर्वत ।। | १२. करने लगे |

श्लोकार्थ—पक्षीगण गदहों की आवाजों से रोते हुये भयभीत होकर घोंसलों से उड़ने लगे । गऊ शालाओं में और जंगल में पशु मल-मूत्र करने लगे ।

## त्रयोदशः श्लोकः

गावोऽत्रसन्नसृग्दोहास्तोयदाः पूयवर्षिणः ।
व्यरुदन्देवलिङ्गानि द्रुमाः पेतुर्विनानिलम् ।।१३।।

पदच्छेद—

गावः अत्रसन् असृक् दोहाः तोयदाः पूयवर्षिणः ।
व्यरुदन् देव लिङ्गानि द्रुमाः पेतुः विना अनिलम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गावः | १. | गायें | व्यरुदन् | १०. | रोनें लगीं (तथा) |
| अत्रसन् | २. | भयभीत हो गयीं (और) | देव | ८. | देवताओं की |
| असृक् | ४. | खून आने लगा | लिङ्गानि | ९. | मूर्तियाँ |
| दोहाः | ३. | (उन्हें) दुहने पर | द्रुमाः | १३. | वृक्ष |
| तोयदाः | ५. | बादल | पेतुः | १४. | गिरने लगे |
| पूय | ६. | पीव की | विना | ११. | बिना |
| वर्षिणः । | ७. | वर्षा करने लगे | अनिलम् ।। | १२. | आँधी के |

श्लोकार्थ - गायें भयभीत हो गयीं और उन्हें दुहने पर खून आने लगा । बादल पीव की वर्षा करने लगे । देवताओं की मूर्तियाँ रोने लगीं, तथा बिना आँधी के वृक्ष गिरने लगे ।

## चतुर्दशः श्लोकः

ग्रहान् पुण्यतमानन्ये भगणांश्चापि दीपिताः ।
अतिचेरुर्वक्रगत्या युयुधुश्च परस्परम् ।।१४।।

पदच्छेद—

ग्रहान् पुण्यतमान् अन्ये भगणान् च अपि दीपिताः ।
अतिचेरुः वक्रगत्या युयुधुः च परस्परम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ग्रहान् | ४. | ग्रहों को | दीपिताः । | २. | प्रबल होकर |
| पुण्यतमान् | ३. | वृहस्पति, चन्द्रमादि शुभ | अतिचेरुः | ९. | उलांघ गये |
| अन्ये | १. | शनि, राहु आदि पाप ग्रह | वक्रगत्या | ८. | वक्रगति से (उलटा चलकर) |
| भगणान् | ६. | नक्षत्रों को | युयुधुः | १२. | लड़ने लगे |
| च | ५. | और | च | १०. | और |
| अपि | ७. | भी | परस्परम् ।। | ११. | आपस में |

श्लोकार्थ—शनि, राहु आदि पाप ग्रह प्रबल होकर वृहस्पति चन्द्रमादि शुभ ग्रहों को और नक्षत्रों को भी वक्रगति से उल्टा चलकर उलांघ गये और आपस में लड़ने लगे।

## पञ्चदशः श्लोकः

दृष्ट्वान्यांश्च महोत्पातानतत्तत्त्वविदः प्रजाः ।
ब्रह्मपुत्रानृते भीता मेनिरे विश्वसम्प्लवम् ।।१५।।

पदच्छेद—

दृष्ट्वा अन्यान् च महा उत्पातान् अतत् तत्त्वविदः प्रजाः ।
ब्रह्म पुत्रान् ऋते भीता मेनिरे विश्व सम्प्लवम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दृष्ट्वा | ५. | देखने के पश्चात् | ब्रह्म | ६. | ब्रह्मा के |
| अन्यान् | २. | दूसरे | पुत्रान् | ७. | मानस पुत्र (सनकादि कुमारों को) |
| च | १. | और | | | |
| महा | ३. | महान् | ऋते | ८. | छोड़कर |
| उत्पातन् | ४. | उपद्रवों को | भीता | ११. | भयभीत हुई |
| अतत् | ९. | उसके | मेनिरे | १५. | (ऐसा) मानने लगी |
| तत्त्वविदः | १०. | मर्म को नहीं समझने वाली | विश्व | १३. | ससार का |
| प्रजाः । | १२. | प्रजायें | सम्प्लवम् ।। | १४. | प्रलय होने वाला है |

श्लोकार्थ—और दूसरे महान् उपद्रवों को देखने के पश्चात् ब्रह्मा के मानस पुत्र सनकादि कुमारों को छोड़कर उसके मर्म को नहीं समझने वाली भयभीत हुई प्रजायें संसार का प्रलय होने वाला है । ऐसा मानने लगीं ।

## षोडशः श्लोकः

तावादिदैत्यौ सहसा व्यज्यमानात्मपौरुषौ ।
ववृधातेऽश्मसारेण कायेनाद्रिपती इव ।।१६।।

पदच्छेद—

तौ आदि दैत्यौ सहसा व्यज्यमाना आत्म पौरुषौ ।
ववृधाते अश्म सारेण कायेन अद्रिपती इव ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तौ | १. | वे दोनों | ववृधाते | ९. | बढ़ गये (और) |
| आदि दैत्यौ | २. | आदि दैत्य | अश्म | ४. | अपने फौलाद |
| सहसा | ३. | (जन्म के बाद) शीघ्र ही | सारेण | ५. | के समान |
| व्यज्यमाना | १२. | प्रकट हो गया | कायेन | ६. | शरीर से |
| आत्म | १०. | उनका (पूर्व) | अद्रिपती | ७. | दो पर्वतों के |
| पौरुषौ । | ११. | पराक्रम | इव ।। | ८. | समान |

श्लोकार्थ—वे दोनों आदि दैत्य जन्म के बाद शीघ्र ही अपने फौलाद के समान शरीर से दो पर्वतों के समान बढ़ गये और उनका पूर्व पराक्रम प्रकट हो गया ।

# सप्तदशः श्लोकः

**दिविस्पृशौ हेमकिरीटकोटिभिः निरुद्धकाष्ठौ स्फुरदङ्गदाभुजौ ।**
**गां कम्पयन्तौ चरणैः पदे-पदे कट्या सुकाञ्च्यार्कमतीत्य तस्थतुः ।।१७।।**

पदच्छेद — दिवि स्पृशौ हेम किरीट कोटिभिः, निरुद्ध काष्ठौ स्फुरद् अङ्गद आभुजौ ।
गाम् कम्पयन्तौ चरणैः पदे-पदे, कट्या सुकाञ्च्या अर्कम् अतीत्य तस्थतुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दिवि, स्पृशौ | ३. | स्वर्ग लोक को छूते हुये थे (अपनी) | गाम् | ११. | पृथ्वी को |
| हेम किरीट | १. | (वे दोनों ऊँचाई के कारण) अपने सोने के मुकुटों के | कम्पयन्तौ | १२. | कँपा देते थे (तथा) |
| कोटिभिः | २. | अग्रभाग से | चरणैः | १०. | अपने पैरों से |
| निरुद्ध | ५. | ढक दिया था | पदे-पदे | ९. | पग-पग पर |
| काष्ठौ | ४. | विशालता से (दिशाओं को) | कट्या, सुकाञ्च्या | १३. | कमर की सुन्दर करधनी की चमक से |
| स्फुरत् | ८. | चमचमा रहे थे | अर्कम् | १४. | सूर्य के प्रकाश को भी |
| अङ्गद | ७. | बाजूबन्द | अतीत्य | १५. | मात करके |
| आभुजौ । | ६. | उनकी भुजाओं में | तस्थतुः ।। | १६. | स्थित थे |

श्लोकार्थ—वे दोनों ऊँचाई के कारण अपने सोने के मुकुटों के अग्रभाग से स्वर्गलोक को छूते हुये थे अपनी विशालता से दिशाओं को ढक दिया था । उनकी भुजाओं में बाजूबन्द चमचमा रहे थे । पग-पग पर अपने पैरों से पृथ्वी को कँपा देते थे । तथा कमर की सुन्दर करधनी की चमक से सूर्य के प्रकाश को भी मात करके स्थित थे ।

# अष्टदशः श्लोकः

**प्रजापतिर्नाम तयोरकार्षीद् यः प्राक् स्वदेहाद्यमयोरजायत ।**
**तं वै हिरण्यकशिपुं विदुः प्रजा, यं तं हिरण्याक्षमसूत साग्रतः ।।१७।।**

पदच्छेद— प्रजापतिः नाम तयोः अकार्षीत् यः प्राक् स्वदेहात् यमयोः अजायत ।
तम् वै हिरण्यकशिपु विदुः प्रजा, यम् तम् हिरण्याक्षम् असूत सा अग्रतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतिः | १. | प्रजापति कश्यप ने | तम्, वै | १०. | उसे ही |
| नाम | ४. | नाम करण संस्कार | हिरण्य कशिपुं विदुः | ११. | हिरण्य कशिपु नाम से जानते हैं (तथा) |
| तयोः | २. | उन दोनों | प्रजा | ९. | लोग |
| आकर्षीत् | ५. | किया (उनमें) | यम् | १२. | जिसे |
| यः | ६. | जो | तम् | १५. | उसे |
| प्राक्, स्वदेहात् | ७. | पहले अपने शरीर से | हिरण्याक्षम् | १६. | हिरण्याक्ष कहते हैं |
| यमयोः | ३. | जुड़वें पुत्रों का | असूत | १४. | उत्पन्न किया था |
| अजायत । | ८. | उत्पन्न हुआ था | सा, आग्रतः ।। | १३. | माता दिति ने, पहले |

श्लोकार्थ—प्रजापति कश्यप ने उन दोनों जुड़वें पुत्रों का नाम करण संस्कार किया । उनमें जो पहले अपने शरीर से उत्पन्न हुआ था । लोग उसे ही हिरण्यकशिपु नाम से जानते हैं । तथा जिसे माता दिति ने पहले उत्पन्न किया था । उसे हिरण्याक्ष कहते हैं ।

# एकोनविंशः श्लोकः

चक्रे हिरण्यकशिपुर्दोर्भ्यां ब्रह्मवरेण च ।
वशे सपालाँल्लोकांस्त्रीनकुतोमृत्युरुद्धतः ॥१९॥

पदच्छेद—

चक्रे हिरण्य कशिपुः दोर्भ्याम् ब्रह्मवरेण च ।
वशे सपालान् लोकान् त्रीन् अकुतः मृत्युः उद्धतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चक्रे | १२. | कर लिया था | सपालान् | ८. | लोकपालों सहित |
| हिरण्यकशिपुः | ६. | हिरण्यकशिपु ने | लोकान् | १०. | लोकों को |
| दोर्भ्याम् | ७. | अपनी भुजाओं से | त्रीन् | ९. | तीनों |
| ब्रह्मवरेण | १. | ब्रह्माजी के वरदान के कारण | अकुतः | ३. | भय से रहित |
| च | ४. | और | मृत्युः | २. | मृत्यु के |
| वशे | ११. | अपने वश में | उद्धतः ॥ | ५. | उद्दण्ड |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के वरदान के कारण मृत्यु के भय से रहित और उद्दण्ड हिरण्यकशिपु ने अपनी भुजाओं से लोकपालों सहित तीनों लोकों को अपने वश में कर लिया था ।

# विंशः श्लोकः

हिरण्याक्षोऽनुजस्तस्य प्रियः प्रीतिकृदन्वहम् ।
गदापाणिर्दिवं यातो युयुत्सुर्मृगयन् रणम् ॥२०॥

पदच्छेद—

हिरण्याक्षः अनुजः तस्य प्रियः प्रीतिकृत् अन्वहम् ।
गदापाणिः दिवम् यातः युयुत्सुः मृगयन् रणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हिरण्याक्षः | ४. | हिरण्याक्ष | गदापाणिः | १०. | हाथ में गदा लेकर |
| अनुजः | ३. | छोटा भाई | दिवम् | ११. | स्वर्ग लोक में |
| तस्य | १. | उसका | यातः | १२. | पहुँचा |
| प्रियः | २. | प्यारा | युयुत्सुः | ९. | युद्ध करने की इच्छा से |
| प्रीतिकृत् | ६. | प्रिय कार्य करता था | मृगयन् | ८. | खोजता हुआ |
| अन्वहम् । | ५. | प्रतिदिन (उसका) | रणम् ॥ | ७. | (वह) लड़ने वालों को |

श्लोकार्थ—उसका प्यारा छोटा भाई हिरण्याक्ष प्रतिदिन उसका प्रिय कार्य करता था । वह लड़ने वालों को खोजता हुआ युद्ध करने की इच्छा से हाथ में गदा लेकर स्वर्ग लोक में पहुँचा ।

## एकविंशः श्लोकः

तं वीक्ष्य दुःसहजवं रणत्काञ्चननूपुरम् ।
वैजयन्त्या स्रजा जुष्टमंसन्यस्तमहागदम् ।।२१।।

पदच्छेद—

तम् वीक्ष्य दुःसहजवम् रणत् काञ्चन नूपुरम् ।
वैजयन्त्या स्रजा जुष्टम् अंस न्यस्त महागदम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ११. | देवताओं ने उसे इस प्रकार | वैजयन्त्या | ५. | गले में विजय सूचक |
| वीक्ष्य | १२. | देखा | स्रजा | ६. | माला |
| दुःसहजवम् | १. | रोकना कठिन था उसका वेग | जुष्टम् | ७. | सुशोभित हो रही थी (तथा) |
| रणत् | ४. | आवाज हो रही थी | अंश | ८. | कन्धे पर |
| काञ्चन | २. | उसके पैरों में सुवर्ण के | न्यस्त | १०. | रक्खी हुई थी |
| नूपुरम् । | ३. | पायजेब की | महागदम् ।। | ९. | बड़ी सी गदा |

श्लोकार्थ—उसका वेग रोकना कठिन था। उसके पैरों में सुवर्ण के पायजेब की आवाज हो रही थी। गले में विजय सूचक माला सुशोभित हो रही थी। तथा कन्धे पर बड़ी सी गदा रक्खी हुई थी। देवताओं ने उसे इस प्रकार देखा।

## द्वाविंशः श्लोकः

मनोवीर्यवरोत्सिक्तमसृण्यमकुतोभयम् ।
भीता निलिल्यिरे देवास्तार्क्ष्यत्रस्ता इवाहयः ।।२२।।

पदच्छेद—

मनः वीर्य वर उत्सिक्तम् असृण्यम् अकुतो भयम् ।
भीता निलिल्यिरे देवाः तार्क्ष्य त्रस्ताः इव अहयः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनः | १. | शारीरिक | भीता | ८. | डरे हुये |
| वीर्य | २. | बल (और) | निलिल्यिरे | १०. | छिप गये |
| वर | ३. | ब्रह्मा जी के वरदान से | देवाः | ९. | देवता लोग (ऐसे) |
| उत्सिक्तम् | ४. | घमण्ड में चूर | तार्क्ष्य | १२. | गरुड़ से |
| असृण्यम् | ५. | उद्दण्ड (और) | त्रस्ताः | १३. | डर कर |
| अकुतो | ७. | रहित (हिरण्याक्ष से) | इव | ११. | जैसे |
| भयम् । | ६. | सभी तरह के भय से | अहयः ।। | १४. | सर्प (छिप जाते हैं) |

श्लोकार्थ—शारीरिक बल और ब्रह्मा जी के वरदान से घमण्ड में चूर उद्दण्ड और सभी तरह के भय से रहित हिरण्याक्ष से डरे हुये देवता लोग ऐसे छिप गये जैसे गरुड़ से डर कर सर्प छिप जाते हैं।

## त्रयोविंशः श्लोकः

स वै तिरोहितान् दृष्ट्वा महसा स्वेन दैत्यराट् ।
सेन्द्रान्देवगणान् क्षीबानपश्यन् व्यनदद् भृशम् ।।२३।।

पदच्छेद—

सः वै तिरोहितान् दृष्ट्वा महसा स्वेन दैत्यराट् ।
स इन्द्रान् देवगणान् क्षीबान अपश्यन् व्यनदत् भृशम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वह | स इन्द्रान् | ५. | इन्द्र के सहित |
| वै, तिरोहितान् | ८. | और, छिपा हुआ | देवगणान् | ६. | देवताओं को |
| दृष्ट्वा | ९. | देखकर (उन्हें) | क्षीबान | ७. | डरा हुआ |
| महसा | ४. | तेज से | अपश्यन् | १०. | न देखता हुआ |
| स्वेन | ३. | अपने | व्यनदत् | १२. | गरजना करने लगा |
| दैत्यराट् । | २. | दैत्यराज (हिरण्याक्ष) | भृशम् ।। | ११. | भयंकर |

श्लोकार्थ—वह दैत्यराज हिरण्याक्ष अपने तेज से इन्द्र के सहित देवताओं को डरा हुआ और छिपा हुआ देखकर उन्हें न देखता हुआ भयंकर गरजना करने लगा ।

## चतुर्विंशः श्लोकः

ततो निवृत्तः क्रीडिष्यन् गम्भीरं भीमनिस्वनम् ।
विजगाहे महासत्त्वो वार्धिं मत्त इव द्विपः ।।२४।।

पदच्छेद—

ततः निवृत्तः क्रीडिष्यन् गम्भीरम् भीमनिस्वनम् ।
विजगाहे महासत्त्वः वार्धिं मत्त इव द्विपः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | वहाँ से | विजगाहे | १२. | प्रवेश कर गया |
| निवृत्तः | २. | लौटकर (वह) | महासत्त्वः | ३. | महाबली |
| क्रीडिष्यन् | ७. | खेलने की इच्छा से | वार्धिं | ११. | समुद्र में |
| गम्भीरम् | ८. | अथाह (और) | मत्त | ४. | मतवाले |
| भीम | ९. | भयंकर | इव | ६. | समान |
| निस्वनम् | १०. | आवाज करने वाले | द्विपः ।। | ५. | हाथी के |

श्लोकार्थ—वहाँ से लौट कर वह महाबली मतवाले हाथी के समान खेलने की इच्छा से अथाह और भयंकर आवाज करने वाले समुद्र में प्रवेश कर गया ।

## पञ्चविंशः श्लोकः

तस्मिन् प्रविष्टे वरुणस्य सैनिका, यादोगणाः सन्नधियःससाध्वसाः ।
अहन्यमाना अपि तस्य वर्चसा, प्रर्धाषिता दूरतरं प्रदुद्रुवुः ।।२५।।

पदच्छेद—

तस्मिन् प्रविष्टे वरुणस्य सैनिकाः यादोगणाः सन्नधियः ससाध्वसाः ।
अहन्यमाना अपि तस्य वर्चसा, प्रर्धाषिता दूरतरम् प्रदुद्रुवुः ।।

शब्दार्थ —

| | | | |
|---|---|---|---|
| तस्मिन् | १. उसके समुद्र में | अहन्यमाना | ८. नहीं मारे जाने पर |
| प्रविष्टे | २. प्रवेश करने पर | अपि | ९. भी |
| वरुणस्य | ३. वरुण के | तस्य | १०. उसके |
| सैनिकाः | ४. सैनिक | वर्चसा | ११. तेज से |
| यादोगणाः | ५. जलचर जीव | प्रर्धाषिता | १२. घबरा कर |
| सन्नधियः | ७. हक्के-बक्के हो गये (और) | दूरतरम् | १३. बहुत दूर |
| ससाध्वसाः । | ६. भय के कारण | प्रदुद्रुवुः ।। | १४. भाग गये |

श्लोकार्थ—उसके समुद्र में प्रवेश करने पर वरुण के सैनिक जलचर जीव भय के कारण हक्के-बक्के हो गये । और नहीं मारे जाने पर भी उसके तेज से घबराकर बहुत दूर भाग गये ।

## षड्विंशः श्लोकः

स वर्षपूगानुदधौ महाबलश्चरन्महोर्मीञ्छ्वसनेरितान्मुहुः ।
मौर्व्याभिजघ्ने गदया विभावरीमासेदिवांस्तात पुरीं प्रचेतसः ।।२६।।

पदच्छेद—

सः वर्ष पूगान् उदधौ महाबलः चरन् महाऊर्मीन् श्वसन् ईरितान् मुहुः ।
मौर्व्या अभिजघ्ने गदया विभावरीम् आसेदिवान् तात पुरीम् प्रचेतसः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | २. वह हिरण्याक्ष | मुहुः | १२. बार-बार |
| वर्षपूगान् | ४. अनेकों वर्षों तक | मौर्व्या | १०. अपनी लोह मयी |
| उदधौ | ३. समुद्र में | अभिजघ्ने | १३. मारता था (इस प्रकार) |
| महाबलः | १. महान् पराक्रमी | गदया | ११. गदा से |
| चरन् | ५. घूमता हुआ | विभावरीम् | १६. राजधानी विभावरी |
| महा | ८ प्रचण्ड | आसेदिवान् | १८. पहुँच गया |
| ऊर्मीन् | ९. लहरों को | तात | १४. हे तात ! वह |
| श्वसन् | ६. वायु के वेग से | पुरीम् | १७. पुरी में |
| ईरितान् | ७. उठी हुई | प्रचेतसः ।। | १५. वरुण की |

श्लोकार्थ—महान् पराक्रमी वह हिरण्याक्ष समुद्र में अनेकों वर्षों तक घूमता हुआ वायु के वेग से उठी हुई प्रचण्ड लहरों को अपनी लोहमयी गदा से बार-बार मारता था । इस प्रकार हे तात ! वह वरुण की राजधानी विभावरी पुरी में पहुँच गया ।

## सप्तविंश: श्लोकः

तत्रोपलभ्यासुरलोकपालकं, यादोगणानामृषभं प्रचेतसम् ।
स्मयन् प्रलब्धुं प्रणिपत्य नीचवज्जगाद मे देह्यधिराज संयुगम् ॥२७॥

पदच्छेद—

तत्र उपलभ्य असुरलोक पालकम्, यादोगणानाम् ऋषभम् प्रचेतसम् ।
स्मयन् प्रलब्धुम् प्रणिपत्य नीचवत् जगाद मे देहि अधिराज संयुगम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तत्र | १. वहाँ | | प्रलब्धुम् | ८. हँसी उड़ाते हुये |
| उपलभ्य | ७. देखकर (उसने) | | प्रणिपत्य | १०. प्रणाम किया (और) |
| असुरलोक | २. पाताल लोक के | | नीचवत् | ९. नीच मनुष्यों की भाँति |
| पालकम्, | ३. स्वामी (और) | | जगाद | १२. बोला |
| यादोगणानाम् | ४. जलचर जीवों के | | मे | १४. मुझे |
| ऋषभम् | ५. अधिपति | | देहि | १६. दो |
| प्रचेतसम् | ६. वरुण को | | अधिराज | १३. हे महाराज ! |
| स्मयन् | ११. मुसकराते हुये | | संयुगम् ॥ | १५. युद्ध की भिक्षा |

श्लोकार्थ—वहाँ पाताल लोक के स्वामी और जलचर जीवों के अधिपति वरुण को देखकर उसने हँसी उड़ाते हुये नीच मनुष्यों की भाँति प्रणाम किया। और मुसकराते हुये बोला। हे महाराज ! मुझे युद्ध की भिक्षा दो।

## अष्टविंश: श्लोकः

त्वं लोकपालोऽधिपतिर्बृहच्छ्रवा, वीर्यापहो दुर्मदवीरमानिनाम् ।
विजित्य लोकेऽखिलदैत्यदानवान्, यद्राजसूयेन पुरा यजत्प्रभो ॥२८॥

पदच्छेद—

त्वम् लोकपालः अधिपतिः बृहत्श्रवाः, वीर्य अपहा दुर्मद वीर मानिनाम् ।
विजित्य लोके अखिल दैत्य दानवान्, यद् राजसूयेन पुरा अयजत् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| त्वम् | २. आप | | विजित्य | १६. जीतकर |
| लोकपालः | ३. पाताल लोक के स्वामी (और) | | लोके | १३. संसार के |
| अधिपतिः | ५. राजा हैं | | अखिल, दैत्य | १४. सम्पूर्ण, राक्षसों (और) |
| बृहत् श्रवाः, | ४. बहुत बड़ी कीर्ति वाले | | दानवान् | १५. दानवों को |
| वीर्य | ९. पराक्रम को | | यद् | ११. क्योंकि (आपने) |
| अपहा | १०. (आपने) नष्ट किया है | | राजसूयेन | १७. राजसूय यज्ञ |
| दुर्मद | ८. मतवाले (योद्धाओं के) | | पुरा | १२. पहले (एक बार) |
| वीर | ६. अपने को बहादुर | | अजयत् | १८. किया था |
| मानिनाम् । | ७. मानने वाले | | प्रभो ! | १. हे प्रभो ! |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप पाताल लोक के स्वामी और बहुत बड़ी कीर्ति वाले राजा हैं। अपने को बहादुर मानने वाले मतवाले योद्धाओं के पराक्रम को आपने नष्ट किया है। क्योंकि आपने पहले एक बार संसार के सम्पूर्ण राक्षसों और दानवों को जीतकर राजसूय यज्ञ किया था।

# नवत्रिंशः श्लोकः

स एवमुत्सिक्तमदेन विद्विषा, दृढं प्रलब्धो भगवानपां पतिः ।
रोषं समुत्थं शमयन् स्वया धिया, व्यवोचदङ्गोपशमं गता वयम् ।।२९।।

पदच्छेद— सः एवम् उत्सिक्त मदेन विद्विषा, दृढम् प्रलब्धः भगवान् अपाम् पतिः ।
रोषम् समुत्थम् शमयन् स्वया धिया, व्यवोचद् अङ्गम् उपशमम् गताः वयम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सः | ७. वे | | रोषम् | १३. क्रोध को |
| एवम् | ४. इस प्रकार | | समुत्थम् | १२. उठते हुये (अपने) |
| उत्सिक्त | १. बढ़े हुये | | शमयन् | १४. शान्त किया (और) |
| मदेन | २. घमण्ड वाले | | स्वया | १०. अपनी |
| विद्विषा | ३. दैत्यराज (हिरण्याक्ष के द्वारा) | | धिया | ११. बुद्धि से |
| दृढम् | ५. अत्यन्त | | व्यवोचद् | १५. बोले (हे दैत्यराज) |
| प्रलब्धः | ६. उपहास किये जाने पर | | अङ्गम् | १७. शरीर (अब) |
| भगवान् | ८. भगवान् | | उपशमम् गताः | १८. शिथिल, हो गया है |
| अपाम् पतिः । | ९. वरुण | | वयम् ।। | १६. हमारा |

श्लोकार्थ—बढ़े हुये घमण्ड वाले दैत्यराज हिरण्याक्ष के द्वारा इस प्रकार अत्यन्त उपहास किये जाने पर वे भगवान् वरुण अपनी बुद्धि से उठते हुये क्रोध को शान्त किया। और बोले हे दैत्यराज ! हमारा शरीर अब शिथिल हो गया है।

# त्रिंशः श्लोकः

पश्यामि नान्यं पुरुषात्पुरातनाद्, यः संयुगे त्वां रणमार्गकोविदम् ।
आराधयिष्यत्यसुरर्षभेहि तं, मनस्विनो यं गृणते भवादृशाः ।।३०।।

पदच्छेद— पश्यामि न अन्यम् पुरुषात् पुरातनात्, यः संयुगे त्वाम् रणमार्ग कोविदम् ।
आराधयिष्यति असुरर्षभ एहि तम्, मनस्विनः यम् गृणते भवादृशः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पश्यामि | ४. देख रहा हूँ | | आराधयिष्यति | ९. प्रसन्न कर सके |
| न अन्यम् | ३. भिन्न किसी दूसरे पुरुष को नहीं | | असुरर्षभ | १०. हे दैत्यराज (तुम) |
| | | | एहि | १२. जाओ |
| पुरुषात् | २. पुरुष (भगवान् श्री हरि से) | | तम् | ११. उनके पास |
| यः पुरातनात् | १. पुराण | | मनस्विनः | १५. स्वाभिमानी जन |
| संयुगे | ८. युद्ध में | | यम् | १३. जिनकी |
| त्वाम् | ७. तुम्हें | | गृणते | १६. स्तुति करते हैं |
| रणमार्ग | ५. जो युद्ध विद्या में | | भवादृशः ।। | १४. आप सरीखे |
| कोविदम् | ६. कुशल | | | |

श्लोकार्थ—पुराण पुरुष भगवान् श्री हरि से भिन्न किसी दूसरे पुरुष को नहीं देख रहा हूँ। जो युद्ध विद्या में कुशल तुम्हें युद्ध में प्रसन्न कर सके। हे दैत्यराज ! तुम उनके पास जाओ। जिनकी आप सरीखे स्वाभिमानी जन स्तुति करते हैं।

# एकत्रिंशः श्लोकः

तं वीरमारादभिपद्य विस्मयः,
शयिष्यसे वीरशये श्वभिर्वृतः ।
यस्त्वद्विधानामसतां प्रशान्तये,
रूपाणि धत्ते सदनुग्रहेच्छया ॥३१॥

पदच्छेद—

तम् वीरम् आरात् अभिपद्य विस्मयः,
शयिष्यसे वीरशये श्वभिः वृतः ।
यः त्वद् विधानाम् असताम् प्रशान्तये,
रूपाणि धत्ते सद् अनुग्रह इच्छया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | १. | उस | यः | १०. | जो (भगवान् श्री हरि) |
| वीरम् | २. | वीर के | त्वद् | ११. | तुम्हारे |
| आरात् | ३. | पास | विधानाम् | १२. | जैसे |
| अभिपद्य | ४. | पहुँच कर (तुम्हारा) | असताम् | १३. | दुष्टों के |
| विस्मयः | ५. | घमण्ड (चूर हो जायेगा) | प्रशान्तये | १४. | दमन के लिये (और) |
| शयिष्यसे | ६. | सो जाओगे (तथा) | रूपाणि | १८. | अवतारों को |
| वीरशये | ८. | मौत की शय्या पर | धत्ते | १९. | धारण करते हैं |
| श्वभिः | ६. | कुत्तों से | सत् | १५. | संतों पर |
| वृतः । | ७. | घिरकर (तुम) | अनुग्रह | १६. | कृपा करने की |
| | | | इच्छया ॥ | १७. | इच्छा से |

श्लोकार्थ--उस वीर के पास पहुँचकर तुम्हारा घमण्ड चूर हो जायेगा तथा कुत्तों से घिर कर तुम मौत की शय्या पर सो जाओगे । भगवान् श्री हरि तुम्हारे जैसे दुष्टों के दमन के लिये और संतो पर कृपा करने की इच्छा से अवतारों को धारण करते हैं ।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयःस्कन्धे हिरण्याक्ष दिग्विजये सप्तदशः अध्यायः समाप्त ॥१७॥

अथ अष्टादशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

तदेवमाकर्ण्य जलेशभाषितं, महामनास्तद्विगणय्य दुर्मदः ।
हरेर्विदित्वा गतिमङ्ग नारदाद्, रसातलं निर्विविशे त्वरान्वितः ।।१।।

पदच्छेद— तद् एवम् आकर्ण्य जलेश भाषितम्, महामनाः तद्विगणय्यदुर्मदः ।
हरेः विदित्वा गतिम् अङ्ग नारदात्, रसातलम् निर्विविशे त्वरा अन्वितः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ५. | उस वचन को | हरेः | १२. | भगवान् श्री हरि के |
| एवम् | २. | इस प्रकार | विदित्वा | १४. | पता लगा कर |
| आकर्ण्य | ६. | सुनकर | गतिम् | १३. | स्थान का |
| जलेश | ३. | वरुण जी से | अङ्ग | १. | हे तात ! |
| भाषितम् | ४. | कहे गये | नारदात् | ११. | नारद जी से |
| महामनाः | ८. | अभिमानी (हिरण्याक्ष ने) | रसातलम् | १७. | रसातल लोक में |
| तद् | ९. | उस पर | निर्विविशे | १८. | प्रवेश किया |
| विगणय्य | १०. | विचार किया (और) | त्वरा | १५. | शीघ्रता, |
| दुर्मदः । | ७. | मदोन्मत्त | अन्वितः ।। | १६. | करता हुआ |

श्लोकार्थ—हे तात ! इस प्रकार वरुण जी से कहे गये उस वचन को सुनकर मदोन्मत्त अभिमानी हिरण्याक्ष ने उस पर विचार किया; और नारदजी से भगवान् श्री हरि के स्थान का पता लगाकर शीघ्रता करता हुआ रसातल लोक में प्रवेश किया ।

## द्वितीयः श्लोकः

ददर्श तत्राभिजितं धराधरं, प्रोन्नीयमानावनिमग्रदंष्ट्रया ।
मुष्णन्तमक्ष्णा स्वरुचोऽरुणश्रिया, जहास चाहो वनगोचरो मृगः ।।२।।

पदच्छेद— ददर्श तत्र अभिजितम् धराधरम्, प्रोन्नीयमाना अवनिम् अग्र दंष्ट्रया ।
मुष्णन्तम् अक्ष्णा स्वरुचः अरुण श्रिया, जहास चअहो वनगोचरः मृगः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ददर्श | १२. | देखा | मुष्णन्तम् | ११. | हरण करते हुये |
| तत्र | १. | वहाँ पर (उसने) | अक्ष्णा | ९. | आँखों से |
| अभिजितम् | ३. | भगवान् को | स्वरुचः | १०. | अपने तेज का |
| धराधरम् | २. | विश्व विजयी वाराह | अरुण, श्रिया | ८. | लाल, कान्ति वाली |
| प्रोन्नीयमानाः | ७. | उठाये हुये (और) | जहास | १४. | हँसी उड़ाते हुये |
| अवनिम् | ६. | पृथ्वी को | च | १३. | तदनन्तर |
| अग्र | ५. | नोंक पर | अहो | १५. | कहा (अरे) |
| दंष्ट्रया । | ४. | डाढ़ों की | वनगोचरः, मृगः ।। | १६. | यह जंगली पशु ( कहाँ से आ गया) |

श्लोकार्थ—वहाँ पर उसने विश्वविजयी वाराह भगवान् को डाढ़ों की नोंक पर पृथ्वी को उठाये हुये, और लाल कान्ति वाली आँखों से अपने तेज का हरण करते हुये देखा । तदनन्तर हँसी उड़ाते हुये कहा । अरे यह जंगली पशु कहाँ से आ गया ।

# तृतीयः श्लोकः

आहैनमेह्यज्ञ महीं विमुञ्च नो, रसौकसां विश्वसृजेयमर्पिता ।
न स्वस्ति यास्यस्यनया ममेक्षतः, सुराधमासादितसूकराकृते ।।३।।

पदच्छेद— आह एनम् एहि अज्ञ महीम् विमुञ्च नः, रस औकसाम् विश्वसृजा इयम् अर्पिता ।
न स्वस्ति यास्यसि अनया मम ईक्षतः, सुराधम आसादित सूकर आकृते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| आह | २. कहा | | न | १७. नहीं |
| एनम् | १. (हिरण्याक्ष ने) भगवान् श्री हरि से | | स्वस्ति | १६. कुशलपूर्वक |
| | | | यास्यसि | १८. जा सकते हो |
| एहि | ४. इधर आ | | अनया | १५. इसके साथ |
| अज्ञ | ३. अरे मूर्ख | | मम, ईक्षतः, | १४. मेरे, देखते-देखते (तुम) |
| महीम्, विमुञ्च | ५. पृथ्वी को, छोड़ दे | | सुराधम | १३. सुराधम |
| नः,रस.औकसाम् | ८. हम रसातल वासियों को | | आसादित | १२. धारण करने वाले |
| विश्वसृजा | ७. ब्रह्मा जी ने | | सूकर | १०. सूकर का |
| इयम् | ६. इसे | | आकृते ।। | ११. रूप |
| अर्पिता । | ९. दिया है | | | |

श्लोकार्थ—हिरण्याक्ष ने भगवान् श्री हरि से कहा अरे मूर्ख ! इधर आ, पृथ्वी को छोड़ दे, इसे ब्रह्मा जी ने हम रसातल वासियों को दिया है । सूकर का रूप धारण करने वाले सुराधम मेरे देखते-देखते तुम इसके साथ कुशलपूर्वक नहीं जा सकते हो ।

# चतुर्थः श्लोकः

त्वं नः सपत्नैरभवाय किं भृतो, यो मायया हन्त्यसुरान् परोक्षजित् ।
त्वां योगमायाबलमल्पपौरुषं, संस्थाप्य मूढ प्रमृजे सुहृच्छुचः ।।४।।

पदच्छेद— त्वम् नः सपत्नैः अभवाय किम् भृतः, यः मायया हन्ति असुरान् परोक्षजित् ।
त्वाम् योग माया बलम् अल्प पौरुषम्, संस्थाप्य मूढ प्रमृजे सुहृत् शुचः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| त्वम् | ८. तुझे | | जित् । | ४. जीतता (और) |
| नः, सपत्नैः | ७. हमारे, शत्रुओं ने | | त्वाम् | १५. तुझे |
| अभवाय | ९. हमारे विनाश के लिये | | योगमाया,बलम् | १४. योगमाया के कारण, पराक्रमी |
| किम् | ६. क्या (इसीलिये) | | अल्प | १३. रहित (और) |
| भृतः | १०. पाला है ? | | पौरुषम् | १२. अपने पुरुषार्थ से |
| यः मायया | १. जो तू, माया के द्वारा | | संस्थाप्य | १६. मार कर मैं |
| हन्ति | ५. मारता है | | मूढ | ११. अरे मूर्ख |
| असुरान्, | ३. दैत्यों को | | प्रमृजे | १८. दूर करूँगा |
| परोक्ष | २. लुक छिप कर | | सुहृत्, शुचः ।। | १७. अपने बन्धुओं का शोक |

श्लोकार्थ—जो तू माया के द्वारा लुक-छिपकर दैत्यों को जीतता और मारता है; क्या इसीलिये हमारे शत्रुओं ने तुझे हमारे विनाश के लिये पाला है ? अरे मूर्ख ! अपने पुरुषार्थ से रहित और योगमाया के कारण पराक्रमी तुझे मार कर मैं अपने बन्धुओं का शोक दूर करूँगा ।

# पञ्चमः श्लोकः

त्वयि संस्थिते गदया शीर्णशीर्षण्यस्मद्भुजच्युतया ये च तुभ्यम् ।
बलिं हरन्त्यृषयो ये च देवाः, स्वयं सर्वे न भविष्यन्त्यमूलाः ।।५।।

पदच्छेद— त्वयि संस्थिते गदया शीर्ण शीर्षणि, अस्मद् भुजच्युतया ये च तुभ्यम् ।
बलिं हरन्ति ऋषयः ये च देवाः, स्वयम् सर्वे न भविष्यन्त्यमूलाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वयि | ६. | तेरे | बलिम् | १३. | आराधना |
| संस्थिते | ७. | मर जाने पर | हरन्ति | १४. | करते हैं |
| गदया | ३. | गदा के द्वारा | ऋषयः | ९. | ऋषिगण |
| शीर्ण | ५. | टूट जाने के कारण | ये च | १०. | और जो |
| शीर्षणि, | ४. | मस्तक | देवाः, | ११. | देवता लोग |
| अस्मद् | १. | मेरी | स्वयम् | १६. | अपने आप |
| भुजच्युतया | २. | भुजाओं से चलाई गई | सर्वे | १५. | वे सभी |
| ये च | ८. | जो | न भविष्यन्ति | १८. | नहीं रहेंगे |
| तुभ्यम् । | १२. | तेरी | अमूलाः ।। | १७. | जड़ कटे वृक्ष के समान |

श्लोकार्थ—मेरी भुजाओं से चलाई गई गदा के द्वारा मस्तक टूट जाने के कारण तेरे मर जाने पर जो ऋषिगण और जो देवता लोग तेरी आराधना करते हैं । ये सभी अपने आप जड़ कटे वृक्ष के समान नहीं रहेंगे ।

# षष्ठः श्लोकः

स तुद्यमानोऽरिदुरुक्ततोमरैर्दंष्ट्राग्रगां गामुपलक्ष्य भीताम् ।
तोदं मृषन्निरगादम्बुमध्याद् ग्राहाहतः सकरेणुर्यथेभः ।।६।।

पदच्छेद— सः तुद्यमानः अरि दुरुक्त तोमरैः दंष्ट्रा, अग्रगाम् गाम् उपलक्ष्य भीताम् ।
तोदम् मृषन् निरगाद् अम्बु मध्यात्, ग्राह आहतः सकरेणुः यथा इभः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | वे (वाराह भगवान्) | तोदम्, मृषन् | ९. | उस कष्ट को, सहते हुए |
| तुद्यमानः | ३. | व्यथित होते हुए | निरगाद् | ११. | वाहर निकल आये |
| अरि, दुरुक्त | १. | शत्रु हिरण्याक्ष के, दुर्वचन रूपी | अम्बु, मध्यात् | १०. | जल के, बीच से |
| | | | ग्राहः | १३. | ग्राह से |
| तोमरैः | २. | वाणों से | आहतः | १४. | घायल |
| दंष्ट्रा, अग्रगाम् | ५. | दांत की, नोक पर स्थित | सकरेणु | १६. | हथिनी के साथ ( निकल आता है ) |
| गाम् | ६. | पृथ्वी को | | | |
| उपलक्ष्य | ८. | देखकर | यथा | १२. | जैसे |
| भीताम् । | ७. | डरी हुई | इभः ।। | १५. | गजराज |

श्लोकार्थ—शत्रु हिरण्याक्ष के दुर्वचन रूपी वाणों से व्यथित होते हुए वे वाराह भगवान् दाँत की नोंक पर स्थित पृथ्वी को डरी हुई देखकर उस कष्ट को सहते हुए जल के बीच से बाहर निकल आये । जैसे ग्राह से घायल गजराज हथिनी के साथ निकल आता है ।

## सप्तमः श्लोकः

तं निःसरन्तं सलिलादनुद्रुतो, हिरण्यकेशो द्विरदं यथा झषः ।
करालदंष्ट्रोऽशनिनिस्वनोऽब्रवीद्, गतह्रियां किं त्वसताम् विगर्हितम् ॥७॥

पदच्छेद— तम् निःसरन्तम् सलिलात् अनुद्रुतः, हिरण्यकेशः द्विरदम् यथा झषः ।
करालदंष्ट्रः अशनि निस्वनः अब्रवीत्, गतह्रियाम् किम् तु असताम् विगर्हितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ६. | वाराह भगवान् का | कराल | ९. | भयंकर |
| निःसरन्तम् | ४. | बाहर निकलते हुए | दंष्ट्रः | १०. | डाढ़ों वाला (वह हिरण्याक्ष) |
| सलिलात् | ३. | जल से | अशनि | ११. | वज्र के समान |
| अनुद्रुतः, | ७. | पीछा करता हुआ | निस्वनः | १२. | कड़क कर |
| हिरण्यकेशः | ८. | पीले केशों वाला (और) | अब्रवीत्, | १३. | बोला (अरे) |
| द्विरदम् | ५. | हाथी का ( पीछा करता ) है । उसी प्रकार | गत ह्रियाम् | १४. | निर्लज्ज |
| | | | किम् तु | १६. | कौन-सा कार्य |
| यथा | १. | जैसे | असताम् | १५ | असत् पुरुषों के लिये |
| झषः । | २. | ग्राह | विगर्हितम् ॥ | १७. | न करने योग्य है |

श्लोकार्थ—जैसे ग्राह जल से बाहर निकलते हुए हाथी का पीछा करता है उसी प्रकार वाराह भगवान् का पीछा करता हुआ पीले केशों वाला और भयंकर डाढ़ों वाला वह हिरण्याक्ष वज्र के समान कड़क कर बोला। अरे ! निर्लज्ज असत् पुरुषों के लिए कौन-सा कार्य न करने योग्य है ।

## अष्टमः श्लोकः

स गामुदस्तात्सलिलस्य गोचरे, विन्यस्य तस्यामदधात्स्वसत्त्वम् ।
अभिष्टुतो विश्वसृजा प्रसूनैरापूर्यमाणो विबुधैः पश्यतोऽरेः ॥८॥

पदच्छेद— सः गाम् उदस्तात् सलिलस्य गोचरे, विन्यस्य तस्याम् अदधात् स्वसत्त्वम् ।
अभिष्टुतः विश्वसृजा प्रसूनैः आपूर्यमाणः विबुधैः पश्यतः अरेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वाराह भगवान् ने | अभिष्टुतः | १३. | (भगवान् वाराह की) स्तुति की (और) |
| गाम् | ५. | पृथ्वी को | | | |
| उदस्तात् | ३. | ऊपर | विश्वसृजा | १४. | ब्रह्मा जी ने |
| सलिलस्य | २. | जल के | प्रसूनैः | १२. | पुष्पों की |
| गोचरे | ४. | उचित स्थान में | आपूर्यमाणः | १७. | वर्षा की |
| विन्यस्य | ६. | स्थापित करके | विबुधैः | १५. | देवताओं ने |
| तस्याम् | ७. | उसमें | पश्यतः | ११. | सामने ही |
| अदधात् | ९. | आधान किया (उस समय) | अरेः ॥ | १०. | शत्रु हिरण्याक्ष के |
| स्वसत्त्वम् । | ८. | अपनी शक्ति का | | | |

श्लोकार्थ— वाराह भगवान् ने जल के ऊपर उचित स्थान में पृथ्वी को स्थापित करके उसमें अपनी शक्ति का आधान किया । उस समय शत्रु हिरण्याक्ष के सामने ही ब्रह्मा जी ने भगवान् वाराह की स्तुति की और देवताओं ने पुष्पों की वर्षा की ।

## नवमः श्लोकः

परानुषक्तं तपनीयोपकल्पं, महागदं काञ्चनचित्रदंशम् ।
मर्माण्यभीक्ष्णं प्रतुदन्तं दुरुक्तैः, प्रचण्डमन्युः प्रहसंस्तं बभाषे ॥९॥

पदच्छेद— पर अनुषक्तम् तपनीय उपकल्पम्, महागदम् काञ्चन चित्रदंशम् ।
मर्माणि अभीक्ष्णम् प्रतुदन्तम् दुरुक्तैः, प्रचण्ड मन्युः प्रहसन् तम् बभाषे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पर | १. पीछे-पीछे | | मर्माणि | ९. | हृदय को |
| अनुषक्तम् | २. आते हुए | | अभीक्षणम् | १०. | बराबर |
| तपनीय | ३. सुवर्ण का | | प्रतुदन्तम् | १२. | बेधते हुए |
| उपकल्पम् | ४. आभूषण पहने | | दुरुक्तैः, | ११. | दुर्वचन बाणों से |
| महागदम्, | ५. बड़ी-सी गदा लिये हुए | | प्रचण्ड मन्युः | १३. | भयंकर क्रोध में |
| काञ्चन | ६. सुवर्ण का | | प्रहसन् | १४. | हँसते हुए(भगवान् वाराह) ने |
| चित्र | ७. अद्भुत | | तम् | १५. | उस हिरण्याक्ष से |
| दंशम् । | ८. कवच पहिने (तथा) | | बभाषे ॥ | १६. | कहा |

श्लोकार्थ—पीछे-पीछे आते हुए सुवर्ण का आभूषण पहने बड़ी-सी गदा लिये हुए सुवर्ण का अद्भुत कवच पहिने तथा हृदय को बराबर दुर्वचन बाणों से बेधते हुए भयंकर क्रोध में हँसते हुए भगवान् वाराह ने उस हिरण्याक्ष से कहा ।

## दशमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—

सत्यं वयं भो वनगोचरा मृगा, युष्मद्विधान्मृगये ग्रामसिंहान् ।
न मृत्युपाशैः प्रतिमुक्तस्य वीरा, विकत्थनं तव गृह्णन्त्यभद्र ॥१०॥

पदच्छेद— सत्यम् वयम् भो वनगोचरा मृगाः, युष्मद् विधान् मृगये ग्राम सिंहान् ।
न मृत्यु पाशैः प्रति मुक्तस्य वीराः, विकत्थनम् तव गृह्णन्ति अभद्र ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत्यम् | ३. सच-मुच ही | | न | १७. | नहीं |
| वयम् | २. हम | | मृत्यु | १२. | मौत के |
| भो | १. अरे | | पाशैः | १३. | फन्दे में |
| वनगोचरा | ४. जंगली | | प्रति मुक्तस्य | १४. | फँसे हुए |
| मृगाः, | ५. जीव हैं (जो) | | वीराः | ११. | वीर लोग |
| युष्मद् | ६. तुम्हारे | | विकत्थनम् | १६. | डींग पर |
| विधान् | ७. जैसे | | तव | १५. | तुम्हारे (जैसों की) |
| मृगये | ९. ढूँढ़ते रहते हैं | | गृह्णन्ति | १८. | ध्यान देते हैं |
| ग्राम सिंहान् । | ८. कुत्तों को | | अभद्र ॥ | १०. | अरे दुष्ट |

श्लोकार्थ—अरे हम सचमुच ही जंगली जीव हैं जो तुम्हारे जैसे कुत्तों को ढूँढ़ते रहते हैं । अरे दुष्ट ! वीर लोग मौत के फन्दे में फँसे हुए तुम्हारे जैसों की डींग पर ध्यान नहीं देते हैं ।

# एकादशः श्लोकः

एते वयं न्यासहरा रसौकसां गतह्रियो गदया द्रावितास्ते ।
तिष्ठामहेऽथापि कथञ्चिदाजौ, स्थेयं क्व यामो बलिनोत्पाद्य वैरम् ।।११।।

पदच्छेद— एते वयम् न्यासहराः रस औकसाम्, गतह्रियो गदया द्राविताः ते ।
तिष्ठामहे अथापि कथञ्चित् आजौ, स्थेयम् क्व यामः बलिना उत्पाद्य वैरम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एते | १. | वे | तिष्ठामहे | १०. | ठहर सकें |
| वयम् | २. | हम | अथापि | ११. | फिर भी |
| न्यासहराः | ४. | धरोहर को चुराने वाले | कथञ्चित् | १२. | जैसे-तैसे (तुम्हारे) |
| रस औकसाम्, | ३. | रसातल वासियों की | आजौ, | ९. | (यद्यपि) सामर्थ्य नहीं है कि युद्ध में |
| गतह्रियाः | ५. | निर्लज्ज (और) | स्थेयम् | १३. | सामने खड़े हैं |
| गदया | ७. | गदा के डर से | क्व, यामः | १७. | कहाँ, जा सकते हैं |
| द्राविताः | ८. | भाग आये हैं | बलिना | १४. | बलवान् शत्रु से |
| ते । | ६. | तुम्हारी | उत्पाद्य | १६. | करके (हम) |
| | | | वैरम् ।। | १५. | वैर |

श्लोकार्थ—वे हम रसातल वासियों की धरोहर को चुराने वाले निर्लज्ज और तुम्हारी गदा के डर से भाग आये हैं । यद्यपि सामर्थ्य नहीं है कि युद्ध में ठहर सकें, फिर भी जैसे-तैसे तुम्हारे सामने खड़े हैं । बलवान् शत्रु से वैर करके हम कहाँ जा सकते हैं ।

# द्वादशः श्लोकः

त्वं पद्रथानां किल यूथपाधिपो, घटस्व नोऽस्वस्तय आश्वनूहः ।
संस्थाप्य चास्मान् प्रमृजाश्रु स्वकानां, यः स्वां प्रतिज्ञां नातिपिपर्त्यसभ्यः ।।१२।।

पदच्छेद— त्वम् पद् रथानाम् किल यूथप अधिपः, घटस्व नः अस्वस्तय आश्वनूहः ।
संस्थाप्य च अस्मान् प्रमृज अश्रुस्वकानाम्, यः स्वाम् प्रतिज्ञाम् नअतिपिपर्ति असभ्यः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम् | १. | तुम | संस्थाप्य | ११. | मार कर |
| पद् | २. | पैदल | च, अस्मान् | १०. | और हमें |
| रथानाम् | ३. | वीरों की | प्रमृजे | १४. | पोंछो |
| किल | ५. | इसीलिये | अश्रु | १३. | आंसुओं को |
| यूथप, अधिपः | ४. | सेना के, सेनापति हो | स्वकानाम् | १२. | अपने बान्धवों के |
| घटस्व | ९. | करो | यः स्वाम् | १५. | जो अपनी |
| नः | ७. | हमारा | प्रतिज्ञाम् | १६. | प्रतिज्ञा को |
| अस्वस्तये | ८. | अकल्याण | नअतिपिपर्ति | १७. | नहीं पूरा करता है |
| आश्वनूहः । | ६. | निःसन्देह | असभ्यः ।। | १८. | (वह) कायर (होता है) |

श्लोकार्थ—तुम पैदल वीरों की सेना के सेनापति हो । इसीलिये निःसन्देह हमारा अकल्याण करो । और हमें मार कर अपने बान्धवों के आंसुओं को पोंछो; जो अपनी प्रतिज्ञा को पूरा नहीं करता है; वह कायर होता है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

सोऽधिक्षिप्तो भगवता प्रलब्धश्च रुषा भृशम् ।
आजहारोल्बणं क्रोधं क्रीड्यमानोऽहिराडिव ॥१३॥

पदच्छेद—

सः अधिक्षिप्तः भगवता प्रलब्धः च रुषा भृशम् ।
आ जहार उल्बणम् क्रोधम्, क्रीड्यमानः अहिराड् इव ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | उस दैत्यराज हिरण्याक्ष का | आजहार | १३. | भर गया |
| अधिक्षिप्तः | ६. | तिरस्कार किया | उल्बणम् | ११. | भयंकर |
| भगवता | १. | वाराह भगवान् ने | क्रोधम् | १२. | क्रोध से |
| प्रलब्धः | ३. | हँसी उड़ाते हुए | क्रीड्यमानः | ८. | खेलाये जाते हुए |
| च | ७. | जिससे पकड़ कर | अहिराड् | ९. | सर्पराज के |
| रुषा | २. | क्रोध से | इव ॥ | १०. | समान (वह) |
| भृशम् । | ५. | बहुत | | | |

श्लोकार्थ—वाराह भगवान् ने क्रोध से हँसी उड़ाते हुए उस दैत्यराज हिरण्याक्ष का बहुत तिरस्कार किया। जिससे पकड़ कर खेलाये जाते हुए सर्पराज के समान वह भयंकर क्रोध से भर गया।

## चतुर्दशः श्लोकः

सृजन्नमर्षितः श्वासान्मन्युप्रचलितेन्द्रियः ।
आसाद्य तरसा दैत्यो गदयाभ्यहनद्धरिम् ॥१४॥

पदच्छेद—

सृजन् अमर्षितः श्वासान् मन्यु प्रचलितः इन्द्रियः ।
आसाद्य तरसा दैत्यः गदया अभ्यहनत् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सृजन् | ६. | छोड़ते हुए | आसाद्य | ९. | लपक कर |
| अमर्षितः | ४. | क्रुद्ध होकर | तरसा | ८. | जोर से |
| श्वासान् | ५ | श्वासों को | दैत्यः | ७. | दैत्य हिरण्याक्ष ने |
| मन्युः | २. | क्रोध से | गदया | ११. | गदा से |
| प्रचलितः | ३. | क्षुब्ध हो गईं (और) | अभ्यहनत् | १२. | प्रहार किया |
| इन्द्रियः । | १. | (उसकी) इन्द्रियाँ | हरिम् ॥ | १०. | भगवान् श्री हरि के ऊपर |

श्लोकार्थ—उसकी इन्द्रियाँ क्रोध से क्षुब्ध हो गईं और क्रुद्ध होकर श्वासों को छोड़ते हुए दैत्य हिरण्याक्ष ने जोर से लपककर भगवान् श्री हरि के ऊपर गदा से प्रहार किया।

# पञ्चदशः श्लोकः

भगवांस्तु गदावेगं विसृष्टं रिपुणोरसि ।
अवञ्चयत्तिरश्चीनो योगारूढ इवान्तकम् ।।१५।।

पदच्छेद—

भगवान् तु गदा आवेगम् विसृष्टम् रिपुणा उरसि ।
अवञ्चयत् तिरश्चीनः योग आरूढ इव अन्तकम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवान् | २. | वाराह भगवान् ने | अवञ्चयत् | ९. | बचा लिया । |
| तु | १. | किन्तु | तिरश्चीनः | ८. | तिरछे होकर |
| गदा | ६. | गदा के | योग | ११. | सिद्ध |
| आवेगम् | ७. | प्रहार को | आरूढ | १२. | पुरुष |
| विसृष्टम् | ५. | चलाई गई | इव | १०. | जैसे |
| रिपुणा | ३. | शत्रु हिरण्याक्ष के द्वारा | अन्तकम् । | १३. | मृत्यु को बचा लेता है । |
| उरसि । | ४. | छाती पर | | | |

श्लोकार्थ—किन्तु वाराह भगवान् ने शत्रु हिरण्याक्ष के द्वारा छाती पर चलाई गई गदा के प्रहार को तिरछे होकर बचा लिया । जैसे सिद्ध पुरुष मृत्यु को बचा लेता है ।

# षोडशः श्लोकः

पुनर्गदां स्वामादाय भ्रामयन्तमभीक्ष्णशः ।
अभ्यधावद्धरिः क्रुद्धः संरम्भाद्दष्टदच्छदम् ।।१६।।

पदच्छेद—

पुनः गदाम् स्वाम् आदाय भ्रामयन्तम् अभीक्ष्णशः ।
अभ्यधावत् हरिः क्रुद्धः संरम्भात् दष्ट दच्छदम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुनः | १. | फिर जब | अभ्यधावत् | १२. | उस पर झपटे |
| गदाम् | ६. | गदा को | हरिः | १०. | भगवान् वाराह |
| स्वाम् | ५. | अपनी | क्रुद्धः | ११. | क्रुद्ध होकर |
| आदाय | ७. | उठाकर | संरम्भात् | २. | क्रोध से |
| भ्रामयन्तम् | ९ | घुमा रहा था (तब) | दष्ट | ४. | चबाता हुआ (वह) |
| अभीक्ष्णशः । | ८. | बार-बार | दच्छदम् ।। | ३. | होठों को |

श्लोकार्थ—फिर जब क्रोध से होठों को चबाता हुआ वह अपनी गदा को उठा कर बार-बार घुमा रहा था, तब भगवान् वाराह क्रुद्ध होकर उस पर झपटे ।

## सप्तदशः श्लोकः

ततश्च गदयारातिं दक्षिणस्यां भ्रुवि प्रभुः ।।
आजघ्ने स तु तां सौम्य गदया कोविदोऽहनत् ।।१७।।

पदच्छेद—

ततः च गदया आरातिम् दक्षिणस्याम् भ्रुवि प्रभुः ।
आजघ्ने सः तु ताम् सौम्य गदया कोविदः अहनत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | २. | उसके बाद | आजघ्ने | ८. | प्रहार किया |
| च | १. | और | सः | १२. | शत्रु (हिरण्याक्ष) ने |
| गदया | ३. | गदा से | तु | ९. | किन्तु |
| आरातिम् | ४. | शत्रु हिरण्याक्ष की | ताम् | १३. | उस प्रहार को |
| दक्षिणस्याम् | ५. | दाहिनी | सौम्य | १०. | हे विदुर जी ! |
| भ्रुविः | ६. | भौंह पर | गदया | १४. | अपनी गदा से |
| प्रभुः । | ७. | भगवान् वाराह ने | कोविदः | ११. | गदा युद्ध में कुशल |
| | | | अहनत् ।। | १५. | बचा लिया |

श्लोकार्थ—और उसके बाद गदा से शत्रु हिरण्याक्ष की दाहिनी भौंह पर भगवान् वाराह ने प्रहार किया । किन्तु हे विदुर जी ! गदा युद्ध में कुशल शत्रु हिरण्याक्ष ने उस प्रहार को अपनी गदा से बचा लिया ।

## अष्टदशः श्लोकः

एवं गदाभ्यां गुर्वीभ्यां हर्यक्षो हरिरेव च ।
जिगीषया सुसंरब्धावन्योन्यमभिजघ्नतुः ।।१७।।

पदच्छेद—

एवम् गदाभ्याम् गुर्वीभ्याम् हर्यक्षः हरिः एव च ।।
जिगीषया सुसंरब्धो अन्योन्यम् अभिजघ्नतुः ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | एव, च । | ३. | और |
| गदाभ्याम् | ८. | गदाओं के द्वारा | जिगीषया | ६. | जीतने की इच्छा से |
| गुर्वीभ्याम् | ७. | अपनी भारी | सुसंरब्धो | ५. | अत्यन्त क्रुद्ध होकर |
| हर्यक्षः | २. | हिरण्याक्ष | अन्योन्यम् | ९. | आपस में |
| हरिः | ४. | भगवान् श्री हरि | अभिजघ्नतु ।। | १०. | प्रहार करने लगे |

श्लोकार्थ—इस प्रकार हिरण्याक्ष और भगवान् हरि अत्यन्त क्रुद्ध होकर जीतने की इच्छा से अपनी भारी गदाओं के द्वारा आपस में प्रहार करने लगे ।

# एकोनविंशः श्लोकः

तयोस्पृधोस्तिग्मगदाहताङ्गयोः, क्षतास्रवघ्राणविवृद्धमन्य्वोः ।
विचित्रमार्गांश्चरतोर्जिगीषया, व्यभादिलायामिव शुष्मिणोर्मृधः ॥१९॥

पदच्छेद— तयोः स्पृधोः तिग्म गदा आहात् अङ्गयो, क्षत आस्रव घ्राण विवृद्ध मन्य्वोः ।
विचित्र मार्गान् चरतः जिगीषया, व्यभात् इलायाम् इव शुष्मिणोः मृधः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तयोः स्पृधोः | १. | उन दोनों में (जीतने की) होड़ लगी थी | विचित्र | ११. | वे तरह-तरह के |
| | | | मार्गान् | १२. | पैंतरे |
| तिग्म | ४. | तीखे प्रहारों से | चरतः | १३. | बदल रहे थे |
| गदा | ३. | गदा के | जिगीषया | १०. | जीतने की इच्छा से |
| आहत | ५. | घायल हो गये थे | व्यभात् | १८. | प्रतीत हो रहा था |
| अङ्गयो, | २. | उनके अङ्ग | इलायाम् | १४. | गाय के लिये (आपस में) |
| क्षत | ६. | घावों से | इव | १६. | समान |
| आस्रव, घ्राण | ७. | बहते हुये खून की, गन्ध से | शुष्मिणोः | १५. | (लड़ने वाले) दो साड़ों के |
| विवृद्ध | ९. | बढ़ रहा था | मृधः ॥ | १७. | उनका युद्ध |
| मन्य्वोः । | ८. | (उनका) क्रोध | | | |

श्लोकार्थ—उन दोनों में जीतने की होड़ लगी थी। उनके अङ्ग गदा के तीखे प्रहारों से घायल हो गये थे। घावों से बहते हुये खून की गन्ध से उनका क्रोध बढ़ रहा था। जीतने की इच्छा से वे तरह-तरह के पैंतरे बदल रहे थे। गाय के लिये आपस में लड़ने वाले दो साड़ों के समान उनका युद्ध प्रतीत हो रहा था।

# विंशः श्लोकः

दैत्यस्य यज्ञावयवस्य माया, गृहीतवाराहतनोर्महात्मनः ।
कौरव्य मह्यां द्विषतोर्विमर्दनं, दिदृक्षुरागादृषिभिर्वृतः स्वराट् ॥२०॥

पदच्छेद— दैत्यस्य यज्ञ अवयवस्य माया, गृहीत वाराह तनोः महात्मनः ।
कौरव्य मह्याम् द्विषतः विमर्दनम्, दिदृक्षुः आगात् ऋषिभिः वृत स्वराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दैत्यस्य | ४. | दैत्यराज हिरण्याक्ष (और) | कौरव्य | १. | हे विदुर जी ! |
| यज्ञ | ९. | यज्ञ | मह्याम् | २. | पृथ्वी के लिये |
| अवयवस्य | १०. | मूर्ति | द्विषतः | ३. | युद्ध करते हुये |
| माया, | ५ | माया के द्वारा | विमर्दनम्, | १२. | युद्ध को |
| गृहीत | ८. | धारण किये हुये | दिदृक्षुः | १३. | देखने के लिये |
| वाराह | ६. | सूकर | आगात् | १६. | पधारे |
| तनोः | ७. | रूप | ऋषिभिः | १४. | वहाँ पर ऋषियों से |
| महात्मनः । | ११. | भगवान् श्री हरि के | वृतः स्वराट् ॥ | १५. | घिरे हुये ब्रह्मा जी |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! पृथ्वी के लिये युद्ध करते हुये दैत्यराज हिरण्याक्ष और सूकर रूप धारण किये हुये यज्ञमूर्ति भगवान् श्री हरि के युद्ध को देखने के लिये वहाँ पर ऋषियों से घिरे हुये ब्रह्मा जी पधारे।

# एकविंशः श्लोकः

आसन्नशौण्डीरमपेतसाध्वसं, कृतप्रतीकारमहार्यविक्रमम् ।
विलक्ष्य दैत्यं भगवान् सहस्रणीर्जगाद नारायणमादिसूकरम् ॥२१॥

पदच्छेद—

आसन्न शौण्डीरम् अपेत साध्वसम्, कृत प्रतीकारम् अहार्यं विक्रमम् ।
विलक्ष्य दैत्यम् भगवान् सहस्रणीः, जगाद् नारायणम् आदिसूकरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आसन्न | २. | कुशल (और) | विलक्ष्य | १२. | देखकर |
| शौण्डीरम् | १. | वह हिरण्याक्ष लड़ने में | दैत्यम् | ११. | उस दैत्यराज को |
| अपेत | ४. | रहित था | भगवान् | १०. | ब्रह्मा जी |
| साध्वसम् | ३. | भय से | सहस्रणीः | ९. | हजारों ऋषियों से घिरे हुये |
| कृत | ६. | कठिन था | जगाद | १६. | बोले |
| प्रतीकारम् | ५. | उससे मुकाबला करना | नारायणम् | १५ | नारायण भगवान् श्री हरि से |
| अहार्यं | ८. | नहीं हराया जा सकता था | आदि | १३ | आदि |
| विक्रमम् । | ७. | उसको पराक्रम से | सूकरम् ॥ | १४. | वाराह |

श्लोकार्थ—वह हिरण्याक्ष लड़ने में कुशल और भय से रहित था। उससे मुकावला करना कठिन था। उसको पराक्रम से नहीं हराया जा सकता था। हजारों ऋषियों से घिरे हुये ब्रह्मा जी उस दैत्यराज को देखकर आदि वाराह भगवान् श्री हरि से बोले।

# द्वाविंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच

एष ते देव देवानामङ्घ्रिमूलमुपेयुषाम् ।
विप्राणां सौरभेयीणां भूतानामप्यनागसाम् ॥२२॥

पदच्छेद—

एषः ते देव देवानाम् अङ्घ्रि मूलम् उपेयुषाम् ।
विप्राणाम् सौरभेयीणाम् भूतानाम् अपि अनागसाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः, ते | २. | दैत्य, आपके | विप्राणाम् | ६. | ब्राह्मणों को |
| देव | १. | हे भगवन् ! | सौरभेयीणाम् | ७. | गऊओं को |
| देवानाम् | ५. | देवताओं को | भूतानाम् | १०. | प्राणियों को (दुःख देता है) |
| अङ्घ्रिमूलम् | ३. | चरणों की शरण | अपि | ८. | और |
| उपेयुषाम् । | ४. | लेने वाले | अनागसाम् ॥ | ९. | निरपराध |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! यह दैत्य आपके चरणों की शरण लेने वाले देवताओं को, ब्राह्मणों को, गऊओं को और निरपराध प्राणियों को दुःख देता है।

## त्रयोविंशः श्लोकः

आगस्कृद्भयकृद्दुष्कृदस्मद्राद्धवरोऽसुरः ।
अन्वेषन्नप्रतिरथो लोकानटति कण्टकः ॥२३॥

पदच्छेद—

आगस्कृद् भयकृत् दुष्कृत् अस्मद् राद्ध वरः असुरः ।
अन्वेषन् अप्रतिरथः लोकान् अटति कण्टकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आगस्कृद् | ४. | सब को हानि पहुँचाने वाला | असुरः । | ७. | (यह) दैत्य |
| भयकृत् | ५. | भय (और) | अन्वेषन् | ९. | खोजता हुआ (तथा) |
| दुष्कृत् | ६. | दुःख देने वाला | अप्रतिरथः | ८. | अपने जोड़ का वीर |
| अस्मद् | १. | हमसे | लोकान् | १०. | लोकों में |
| राद्ध | ३. | प्राप्त करके | अटति | १२. | घूमता रहता है |
| वरः | २. | वरदान | कण्टकः ॥ | ११. | कांटा बना हुआ |

श्लोकार्थ—हमसे वरदान प्राप्त करके सब को हानि पहुँचाने वाला भय और दुःख देने वाला यह दैत्य अपने जोड़ का वीर खोजता हुआ तथा लोकों में कांटा बना हुआ घूमता रहता है !

## चतुर्विंशः श्लोकः

मैनं मायाविनं दृप्तं निरङ्कुशमसत्तमम् ।
आक्रीड बालवद्देव यथाऽऽशीविषमुत्थितम् ॥२४॥

पदच्छेद—

मा एनम् मायाविनम् दृप्तम् निरङ्कुशम् असत्तमम् ।
आक्रीड बालवत् देव यथा आशी विषम् उत्थितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मा | ११. | न | आक्रीड | १२. | खेलें |
| एनम् | १० | इस दैत्य के साथ | बालवत् | ५. | बालक खेलता है ( उसी प्रकार ) |
| मायविनम् | ६. | (आप) मायावी | | | |
| दृप्तम् | ७. | घमण्डी | देव | १. | हे भगवन् ! |
| निरङ्कुशम् | ८. | उद्दण्ड (और) | यथा | २. | जैसे |
| असत्तमम् । | ९. | बहुत दुष्ट | आशीविषम् | ४. | नाग से |
| | | | उत्थिम् ॥ | ३. | फन उठाये हुये |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जैसे फन उठाये हुये नाग से बालक खेलता है। उसी प्रकार आप मायावी, घमण्डी, उद्दण्ड और बहुत दुष्ट इस दैत्य के साथ न खेलें ।

# पञ्चविंशः श्लोकः

न यावदेष वर्धेत स्वां वेलां प्राप्य दारुणः ।
स्वां देव मायामास्थाय तावज्जह्यघमच्युत ।।२५।।

पदच्छेद—

न यावत् एष वर्धेत स्वाम् वेलाम् प्राप्य दारुणः ।
स्वाम् देव मायाम् आस्थाय तावत् जहि अघम् अच्युत ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ९. | नहीं | स्वाम् | १२. | अपनी |
| यावत् | ३. | जब तक | देव | १. | हे देव ! |
| एष | ४. | यह | मायाम् | १३. | माया का |
| वर्धेत | १०. | बढ़ जाये | आस्थाय | १४. | आश्रय लेकर |
| स्वाम् | ६. | अपनी | तावत् | ११. | उसके पहले ही |
| वेलाम् | ७. | राक्षसी वेला | जहि | १६. | मार डालें |
| प्राप्य | ८. | पाकर | अघम् | १५. | इस पापी दैत्य को |
| दारुणः | ५. | भयंकर दैत्य | अच्युत | २. | हे भगवन् ! |

श्लोकार्थ—हे देव ! हे भगवन् ! जब तक यह भयंकर दैत्य अपनी राक्षसी बेला को पाकर नहीं बढ़ जावे; उसके पहले ही अपनी माया का आश्रय लेकर इस पापी दैत्य को मार डालें ।

# षड्विंशः श्लोकः

एषा घोरतमा सन्ध्या लोकच्छम्वट्करी प्रभो ।
उपसर्पति सर्वात्मन् सुराणां जयमावह ।।२६।।

पदच्छेद—

एषा घोरतमा सन्ध्या लोक शम्वट्करी प्रभो ।
उप सर्पति सर्वात्मन् सुराणाम् जयम् आवह ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषा | ५. | यह | उपसर्पति | ७. | आ रहा है (इसीलिये) |
| घोरतमा | ४. | बड़ा भयानक | सर्वात्मन् | ८. | हे सर्वात्मन् ! इसे मारकर |
| सन्ध्या | ६. | सायंकाल | सुराणाम् | ९. | देवताओं की |
| लोक | २. | लोकों का | जयम् | १०. | विजय |
| शम्वट्करी | ३. | नाश करने वाला | आवह | ११. | करें |
| प्रभो | १. | हे भगवन् ! | | | |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! लोकों का नाश करने वाला बड़ा भयानक यह सायंकाल आ रहा है । इसीलिये हे सर्वात्मन् ! इसे मारकर देवताओं की विजय करें ।

# सप्तविंशः श्लोकः

अधुनैषोऽभिजिन्नाम योगो मौहूर्तिको ह्यगात् ।
शिवाय नस्त्वं सुहृदामाशु निस्तर दुस्तरम् ।।२७।।

पदच्छेद—

अधुना एषः अभिजित् नाम योगः मौहूर्तिकः हि अगात् ।
शिवाय नः त्वम् सुहृदाम् आशु निस्तर दुस्तरम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अधुना | १. | इस समय | शिवाय | ११. | कल्याण के लिये |
| एषः | ४. | यह | नः | ९. | हम-सब |
| अभिजित् नाम | २. | अभिजित् नाम के | त्वम् | ८. | आप |
| योगः | ५. | योग | सुहृदाम् | १०. | बान्धवों के |
| मौहूर्तिकः | ३. | मुहूर्त का | आशु | १३. | शीघ्र |
| हि | ७. | अतः | निस्तर | १४. | मार डालें |
| अगात् । | ६. | चल रहा है | दुस्तरम् | १२. | (इस) दुर्जय दैत्य को |

श्लोकार्थ—इस समय अभिजित् नाम के मुहूर्त का यह योग चल रहा है । अतः आप हम सब बान्धवों के कल्याण के लिये इस दुर्जय दैत्य को शीघ्र मार डालें ।

# अष्टविंशः श्लोकः

दिष्ट्या त्वां विहितं मृत्युमयमासादितः स्वयम् ।
विक्रम्यैनं मृधे हत्वा लोकानाधेहि शर्मणि ।।२८।।

पदच्छेद—

दिष्ट्या त्वाम् विहितम् मृत्युम् अयम् आसादितः स्वयम् ।
विक्रम्य एनम् मृधे हत्वा लोकान् आधेहि शर्मणि ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दिष्ट्या | १. | हे भगवन् ! सौभाग्य से | विक्रम्य | १०. | पराजित कर (और) |
| त्वाम् | ६. | आप के पास | एनम् | ८. | (आप) इसे |
| विहितम् | ५. | निश्चित | मृधे | ९. | युद्ध में |
| मृत्युम् | ४. | काल रूप में | हत्वा | ११. | मार कर |
| अहम् | २. | यह दैत्य | लोकान् | १२. | लोकों को |
| आसादितः | ७. | आ गया है | आधेहि | १४. | स्थापित करें |
| स्वयम् । | ३. | अपने आप | शर्मणि ।। | १३. | शान्ति में |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सौभाग्य से यह दैत्य अपने आप काल रूप में निश्चित आपके पास आ गया है। आप इसे युद्ध में पराजित और मार कर लोकों को शान्ति में स्थापित करें ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
तृतीयस्कन्धे हिरण्याक्ष वधे अष्टादशोध्यायः समाप्त ।।१८।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### एकोनविंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

अवधार्य विरिञ्चस्य निर्व्यलीकामृतं वचः ।
प्रहस्य प्रेमगर्भेण तदपाङ्गेन सोऽग्रहीत् ॥१॥

पदच्छेद—

अवधार्य विरिञ्चस्य निर्व्यलीक अमृतम् वचः ।
प्रहस्य प्रेम गर्भेण तद् अपाङ्गेन सः अग्रहीत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अवधार्य | ५. सुन कर | प्रहस्य | ७. हँसकर |
| विरिञ्चस्य | १. ब्रह्मा जी का | प्रेमगर्भेण | ८. प्रेम से परिपूर्ण |
| निर्व्यलीक | २. निष्कपट (और) | तद् | १०. उसे |
| अमृतम् | ३. अमृतमय | अपाङ्गेन | ९. कटाक्ष के द्वारा |
| वचः । | ४. वचन | सः | ६. वाराह भगवान् ने |
| | | अग्रहीत् | ११. स्वीकार कर लिया |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी का निष्कपट और अमृतमय वचन सुनकर वाराह भगवान् ने हँसकर कटाक्ष के द्वारा उसे स्वीकार कर लिया ।

## द्वितीयः श्लोकः

श्री भगवानुवाच—

ततः सपत्नं मुखतश्चरन्तमकुतोभयम् ।
जघानोत्पत्य गदया हनावसुरमक्षजः ॥२॥

पदच्छेद—

ततः सपत्नम् मुखतः चरन्तम् अकुतोभयम् ।
जघान उत्पत्य गदया हनौ असुरम् अक्षजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ततः | १. तदनन्तर | जघान | १०. प्रहार किया |
| सपत्नम् | ६. शत्रु | उत्पत्य, गदया | ९. झपट कर गदा से |
| मुखतः | ३. सामने | हनौ | ८. ठुड्डी पर |
| चरन्तम् | ४. घूमते हुये | असुरम् | ७. हिरण्याक्ष की |
| अकुतोभयम् । | १. निर्भय होकर | अक्षजः | २. वाराह भगवान् ने |

श्लोकार्थ—तदनन्तर वाराह भगवान् ने सामने घूमते हुये निर्भय होकर शत्रु हिरण्याक्ष की ठुड्डी पर झपट कर गदा से प्रहार किया ।

## तृतीयः श्लोकः

सा हता तेन गदया विहता भगवत्करात् ।
विघूर्णितापतद्रेजे तदद्भुतमिवाभवत् ।।३।।

पदच्छेद—

सा हता तेन गदया विहता भगवत् करात् ।
विघूर्णिता अपतत् रेजे तद् अद्भुतम् इव अभवत् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा | २. | वह (गदा) | विघूर्णिता | ६. | चक्कर खाकर |
| हता | १. | (वाराह भगवान् के द्वारा चलाई गई) | अपतत् | ९. | नीचे गिरकर |
| | | | रेजे | १०. | सुशोभित हुई |
| तेन | ३. | हिरण्याक्ष की | तद् | ११. | वह एक |
| गदया | ४. | गदा से | अद्भुतम् | १२. | विचित्र |
| विहता | ५. | टकराकर (और) | इव | १३. | सी (घटना) |
| भगवत् | ७. | भगवान् के | अभवत् | १४. | घटी थी |
| करात् | ८. | हाथ से | | | |

श्लोकार्थ—वाराह भगवान् के द्वारा चलाई गई हिरण्याक्ष की गदा से टकराकर और चक्कर खाकर भगवान् के हाथ से नीचे गिर कर सुशोभित हुई । यह एक विचित्र-सी घटना घटी थी ।

## चतुर्थः श्लोकः

स तदा लब्धतीर्थोऽपि न बबाधे निरायुधम् ।
मानयन् स मृधे धर्मं विष्वक्सेनं प्रकोपयन् ।।४।।

पदच्छेद—

सः तदा लब्धतीर्थः अपि नः बबाधे निरायुधम् ।
मानयन् सः मृधे धर्मम् विष्वक्सेनं प्रकोपयन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | उस दैत्य ने | मानयन् | ११. | किया था |
| तदा | २. | उस समय | सः | १०. | उसने |
| लब्धतीर्थः | ३. | अवसर पाकर | मृधे | ११. | युद्ध |
| अपि | ४. | भी | धर्मम् | १२. | धर्म का पालन |
| नः | ६. | नहीं | विष्वक्सेनं | ८. | भगवान् को |
| बबाधे | ७. | आक्रमण किया | प्रकोपयन् | ९. | क्रुद्ध करने के लिये ही |
| निरायुधम् | ५. | निःशस्त्र भगवान् पर | | | |

श्लोकार्थ—उस दैत्य ने उस समय अवसर पाकर भी निःशस्त्र भगवान् पर आक्रमण नहीं किया। भगवान् को क्रुद्ध करने के लिये ही उसने युद्ध में धर्म का पालन किया था ।

## पञ्चमः श्लोकः

गदायामपविद्धायां हाहाकारे विनिर्गते ।
मानयामास तद्धर्मं सुनाभं चास्मरद्विभुः ।।५।।

पदच्छेद—

गदायाम् अपविद्धायाम् हाहाकारे विनिर्गते ।
मानयामास तद्धर्मम् सुनाभं च अस्मरत् विभुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गदायाम् | १. | उस गदा के | तद्धर्मम् | ६. | उसकी धर्म बुद्धि का |
| अपविद्धायाम् | २. | गिर जाने पर (और) | सुनाभं | ६. | सुदर्शन चक्र का |
| हाहाकारे | ३. | हाहाकार | च | ८. | और |
| विनिर्गते | ४. | शान्त हो जाने पर | अस्मरत् | १० | स्मरण किया |
| मानयामास | ७. | सम्मान किया | विभुः | ५. | वाराह भगवान् ने |

श्लोकार्थ—उस गदा के गिर जाने पर और हाहाकार शान्त हो जाने पर वाराह भगवान् ने उसकी धर्म बुद्धि का सम्मान किया और सुदर्शन चक्र का स्मरण किया ।

## षष्ठः श्लोकः

तं व्यग्रचक्रं दितिपुत्राधमेन, स्वपार्षदमुख्येन विषज्जमानम् ।
चित्रा वाचोऽतद्विदां खेचराणां, तत्रासन् स्वस्ति तेऽमुं जहीति ।।६।।

पदच्छेद—

तं व्यग्र चक्रम् दितिपुत्राधमेन, स्वपार्षदमुख्येन विषज्जमानम् ।
चित्रा वाचः अतद् विदाम् खेचराणाम्, तत्र आसन् स्वस्ति ते अमुम् जहीति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ७. | उन भगवान् से | अतद् | ८. | उनके प्रभाव को नहीं |
| व्यग्रचक्रम् | ६. | सुदर्शन चक्र घुमाते हुये | विदाम् | ६. | जानने वाले |
| दितिपुत्रा | ४. | हिरण्याक्ष के साथ | खेचराणाम् | १०. | देवताओं की |
| अधमेन, | ३. | दुष्ट | तत्र | ११. | वहाँ |
| स्वपार्षद | २. | अपने पार्षद | आसन् | १४. | सुनाई पड़ी (कि) |
| मुख्येन | १. | प्रमुख | स्वस्ति | १६. | जय हो (आप) |
| विषज्जमानम् | ५. | खेलते हुये (और) | ते | १५. | आपकी |
| चित्राः | १२. | आश्चर्यजनक | अमुम् | १७. | इस दैत्य को |
| वाचः | १३. | वाणी | जहीति ।। | १८. | मार डालें |

श्लोकार्थ—प्रमुख अपने पार्षद दुष्ट हिरण्याक्ष के साथ खेलते हुये; और सुदर्शन चक्र घुमाते हुये उन भगवान् से उनके प्रभाव को नहीं जानने वाले देवताओं की वहाँ आश्चर्यजनक वाणी सुनाई पड़ी कि आपकी जय हो आप इस दैत्य को मार डालें ।

## सप्तमः श्लोकः

स तं निशाम्यात्तरथाङ्गमग्रतो, व्यवस्थितं पद्मपलाशलोचनम् ।
विलोक्य चामर्षपरिप्लुतेन्द्रियो, रुषा स्वदन्तच्छदमादशच्छ्वसन् ।।७।।

पदच्छेद —

सः तम् निशाम्य आत्त रथाङ्गम् अग्रतः, व्यवस्थितम् पद्म पलाश लोचनम् ।
विलोक्य च अमर्ष परिप्लुत इन्द्रियः, रुषा स्वदन्तः छदम् आदशत् श्वसन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | २. उस दैत्य ने | च | १०. और |
| तम् निशाम्य | १. उस वाणी को सुनकर | अमर्ष | ११. क्रोध से |
| आत्त | ४. लेकर | परिप्लुत | १३. भर गई (तथा) |
| रथाङ्गम् | ३. सुदर्शन चक्र | इन्द्रियः | १२. उसकी इन्द्रियाँ |
| अग्रतः, | ५. सामने | रुषा | १५. वह क्रोध से |
| व्यवस्थितम् | ६. खड़े हुये | स्वदन्तः | १६. अपने दाँतों से |
| पद्मपलाश | ७. कमल दल | छदम् | १७. होठों को |
| लोचनम् । | ८. लोचन (भगवान् को) | आदशत् | १८. चबाने लगा |
| विलोक्य | ९. देखा | श्वसन् ।। | १४. लम्बी साँसें लेता हुआ |

श्लोकार्थ—उस वाणी को सुनकर उस दैत्य ने सुदर्शन चक्र लेकर सामने खड़े हुये कमल दल लोचन भगवान् को देखा; और क्रोध से उसकी इन्द्रियाँ भर गई तथा लम्बी साँसें लेता हुआ वह क्रोध से अपने दाँतों से होठों को चबाने लगा ।

## अष्टमः श्लोकः

करालदंष्ट्रश्चक्षुर्भ्यां सञ्चक्षाणो दहन्निव ।
अभिप्लुत्य स्वगदया हतोऽसीत्याहनद्धरिम् ।।८।।

पदच्छेद—

कराल दंष्ट्रः चक्षुर्भ्याम् सः चक्षाणः दहन् इव ।
अभिप्लुत्य स्व गदया हतः असि इति आहनत् हरिम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| कराल | १. तीखी | अभिप्लुत्य | ७. झपट कर |
| दंष्ट्रः | २. डाढ़ों वाले (उस दैत्य ने) | स्व गदया | ८. अपनी गदा से |
| चक्षुर्भ्याम् | ३. दोनों आँखों से | हतः असि | ९. तुम मारे गये हो |
| सः चक्षाणः | ६. घूम कर देखा (और) | इति | १०. ऐसा कहता हुआ |
| दहन् | ५. जलाता हुआ सा | आहनत् | १२. प्रहार किया |
| इव । | ४. मानों | हरिम् ।। | ११. वाराह भगवान् श्री हरि पर |

श्लोकार्थ—तीखी डाढों वाले उस दैत्य ने दोनों आँखों से मानों जलाता हुआ सा घूमकर देखा और झपट कर अपनी गदा से तुम मारे गये हो ऐसा कहता हुआ वाराह भगवान् श्री हरि पर प्रहार किया ।

# नवमः श्लोकः

पदा सत्येन तां साधो भगवान् यज्ञसूकरः ।
लीलया मिषतः शत्रोः प्राहरद्वातरंहसम् ॥६॥

पदच्छेद—

पदा सत्येन ताम् साधो भगवान् यज्ञसूकरः ।
लीलया मिषतः शत्रोः प्राहरत् वात रंहसम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पदा | १०. | पैर से | लीलया | ११. | अनायास ही |
| सत्येन | ८. | अपने (बांये) | मिषतः | ५. | देखते-देखते |
| ताम् | ६. | उस गदा को | शत्रोः | ४. | शत्रु हिरण्याक्ष के |
| साधो | १. | हे विदुर जी ! | प्राहरत् | १२. | रोक लिया |
| भगवान् | ३. | वाराह भगवान् ने | वात | ६. | वायु के समान |
| यज्ञसूकरः । | २. | यज्ञ मूर्ति | रंहसम् ॥ | ७. | वेगवाली |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! यज्ञमूर्ति वाराह भगवान् ने शत्रु हिरण्याक्ष के देखते-देखते वायु के समान वेग वाली उस गदा को अपने बायें पैर से अनायास ही रोक लिया ।

# दशमः श्लोकः

आह च आयुधमाधत्स्व घटस्व त्वं जिगीषसि ।
इत्युक्तः स तदा भूयस्ताडयन् व्यनदद् भृशम् ॥१०॥

पदच्छेद—

आह च आयुधम् आधत्स्व घटस्व त्वम् जिगीषसि ।
इति उक्तः सः तदा भूयः ताडयन् व्यनदत् भृशम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आह | १. | (भगवान् ने) कहा | इति, उक्तः | ८. | ऐसा कहने पर |
| च | ६. | और | सः | १०. | वह दैत्य |
| आयुधम् | ४. | शस्त्र | तदा | ६. | उस समय |
| आधत्स्व | ५. | उठाओ | भूयः | ११. | फिर से |
| घटस्व | ७. | चलाओ | ताडयन् | १२. | प्रहार करता हुआ |
| त्वम् | २. | तुम | व्यनदद् | १४. | गरजा |
| जिगीषसि । | ३. | जीतना चाहते हो (तो) | भृशम् ॥ | १३. | जोर |

श्लोकार्थ—भगवान् ने कहा तुम जीतना चाहते हो तो शस्त्र उठाओ और चलाओ । ऐसा कहने पर उस समय वह दैत्य फिर से प्रहार करता हुआ जोर से गरजा ।

# एकादशः श्लोकः

तां स आपततीं वीक्ष्य भगवान् समव्यस्थितः ।
जग्राह लीलया प्राप्तां गरुत्मानिव पन्नगीम् ।।११।।

पदच्छेद—

ताम् सः आपततीम् वीक्ष्य भगवान् समव्यस्थितः ।
जग्राह लीलया प्राप्ताम् गरुत्मान् इव पन्नगीम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताम् | ३. | उस (गदा) को | जग्राह | ९. | ऐसे पकड़ लिया |
| सः | १. | वे | लीलया | ८. | खेल-खेल में |
| आपततीम् | ४. | चलाई गई | प्राप्ताम् | ७. | पास में आने पर उसे |
| वीक्ष्य | ५. | देखकर | गरुत्मान् | ११. | गरुड़ |
| भगवान् | २. | वाराह भगवान् | इव | १०. | जैसे |
| समव्यस्थितः । | ६. | खड़े हो गये (और) | पन्नगीम् | १२. | साँप को (पकड़ लेता है) |

श्लोकार्थ—वे वाराह भगवान् उस गदा को चलाई गई देखकर खड़े हो गये और पास में आने पर उसे खेल-खेल में ऐसे पकड़ लिया; जैसे गरुड़ साँप को पकड़ लेता है ।

# द्वादशः श्लोकः

स्वपौरुषे प्रतिहते हतमानो महासुरः ।
नैच्छद्गदां दीयमानां हरिणा विगतप्रभः ।।१२।।

पदच्छेद—

स्व पौरुषे प्रतिहते हतमानः महत् असुरः ।
न ऐच्छत् गदाम् दीयमानाम् हरिणा विगत प्रभः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्व | १. | अपने | न ऐच्छत् | १२. | नहीं चलाना चाहा |
| पौरुषे | २. | पुरुषार्थ को | गदाम् | ११. | (उस) गदा को |
| प्रतिहते | ३. | निष्फल (देखकर वह) | दीयमानाम् | १०. | देने पर भी |
| हतमानः | ६. | हताश हो गया | हरिणा | ९. | भगवान् के |
| महत् | ४. | महान् | विगत | ८. | हीन होकर (वह) |
| असुरः । | ५. | दैत्य | प्रभः ।। | ७. | (तथा) कान्ति से |

श्लोकार्थ—अपने पुरुषार्थ को निष्फल देखकर वह महान् दैत्य हताश हो गया तथा कान्ति से हीन होकर वह भगवान् के देने पर भी उस गदा को नहीं चलाना चाहा ।

## चतुर्दशः श्लोकः

जग्राह त्रिशिखं शूलं ज्वलज्ज्वलनलोलुपम् ।
यज्ञाय धृतरूपाय विप्रायाभिचरन् यथा ॥१३॥

पदच्छेद—

जग्राह त्रिशिखम् शूलम् ज्वलत् ज्वलन् लोलुपम् ।
यज्ञाय धृत रूपाय विप्राय अभिचरन् यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जग्राह | १२. | उठा लिया | यज्ञाय | ४. | सूकर रूप |
| त्रिशिखम् | १०. | तीन नोकों वाला | धृत | ५. | धारण किये हुये |
| शूलम् | ११. | त्रिशूल | रूपाय | ६. | यज्ञ पुरुष को मारने के लिये |
| ज्वलत् | ७. | जलती हुई | विप्राय | २. | ब्राह्मण पर (निष्फल) |
| ज्वलन् | ८. | अग्नि के समान | अभिचरन् | ३. | मारणादि (अभिचार क्रिया को उसी प्रकार उसने) |
| लोलुपम् । | ९. | लपलपाते हुये | यथा ॥ | १. | जैसे (कोई) |

श्लोकार्थ—जैसे कोई ब्राह्मण पर निष्फल मारणादि अभिचार क्रिया करे उसी प्रकार उसने सूकर रूप धारण किये हुये यज्ञ पुरुष को मारने के लिये जलती हुई अग्नि के समान लपलपाते हुये तीन नोकों वाला त्रिशूल उठा लिया ।

## त्रयोदशः श्लोकः

तदोजसा दैत्यमहाभटार्पितं चकासदन्तःख उदीर्णदीधिति ।
चक्रेण चिच्छेद निशातनेमिना, हरिर्यथा तार्क्ष्यपतत्रमुज्झितम् ॥१४॥

पदच्छेद—

तद् ओजसा दैत्य महाभट अर्पितम्, चकासत् अन्तः खे उदीर्ण दीधिति ।
चक्रेण चिच्छेद निशात नेमिना, हरिः यथा तार्क्ष्य पतत्रम् उज्झितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | १०. | उस त्रिशूल को | दीधिति | ८. | तेज को |
| ओजसा | ३. | बड़े वेग से | चक्रेण,चिच्छेद | १३. | चक्र से, काट दिया |
| दैत्य | २. | दैत्य हिरण्याक्ष के द्वारा | निशात,नेमिना | १२. | तीखी, धारवाले |
| महाभट | १. | महाबली | हरिः | ११. | भगवान् वाराह ने |
| अर्पितम् | ४. | चलाये गये | यथा | १४. | जैसे (इन्द्र ने) |
| चकासत् | ७. | प्रकाश मान (और) | तार्क्ष्य | १५. | गरुड़ के |
| अन्तः | ६. | में | पतत्रम् | १७. | पंख को (काट दिया था) |
| खे | ५. | आकाश | उज्झितम् ॥ | १६. | छोड़े गये |
| उदीर्ण | ९. | बिखेरने वाले | | | |

श्लोकार्थ—महाबली दैत्य हिरण्याक्ष के द्वारा बड़े वेग से चलाये गये आकाश में प्रकाशमान और तेज को बिखेरने वाले उस त्रिशूल को भगवान् वाराह ने तीखी धार वाले चक्र से काट दिया । जैसे इन्द्र ने गरुड़ के छोड़े गये पंख को काट दिया था ।

## पञ्चदशः श्लोकः

वृक्णे स्वशूले बहुधारिणा हरेः प्रत्येत्य विस्तीर्णमुरो विभूतिमत् ।
प्रवृद्धरोषः स कठोरमुष्टिना, नदन् प्रहृत्यान्तरधीयतासुरः ॥१५॥

पदच्छेद—

वृक्णे स्वशूले बहुधारिणा हरेः, प्रत्येत्य विस्तीर्णम् उर विभूति मत् ।
प्रवृद्ध रोषः सः कठोर मुष्टिना, नदन् प्रहृत्य अन्तरधीयत असुरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वृक्णे | ५. | कट जाने पर | प्रवृद्ध | ६. | अत्यन्त |
| स्व | ३. | अपने | रोषः | ७. | क्रुद्ध हुआ |
| शूले | ४. | त्रिशूल के | सः | ८. | वह |
| बहुधारिणा | २. | बहुतधार वाले (चक्र से) | कठोर | १४. | कसकर |
| हरेः | १. | वाराह भगवान् के | मुष्टिना, | १५. | मुट्ठी से |
| प्रत्येत्य | १०. | सामने आकर | नदन् | १७. | गरजता हुआ |
| विस्तीर्णम् | १२. | भगवान् के विशाल | प्रहृत्य | १६. | मार कर |
| उर | १३. | वक्षः स्थल पर | अन्तरधीयत | १८. | अन्तर्ध्यान हो गया |
| विभूतिमत् | १२. | श्रीवत्स से युक्त | असुरः ॥ | ९. | दैत्य हिरण्याक्ष के |

श्लोकार्थ—वाराह भगवान् के बहुतधार वाले चक्र से अपने त्रिशूल के कट जाने पर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ वह दैत्य हिरण्याक्ष सामने आकर श्रीवत्स से युक्त भगवान् के विशाल वक्षः स्थल पर कस कर मुट्ठी से मार कर गरजता हुआ अन्तर्ध्यान हो गया ।

## षोडशः श्लोकः

तेनेत्थमाहतः क्षत्तर्भगवानादिसूकरः ।
नाकम्पत मनाक् क्वापि स्रजा हत इव द्विपः ॥१६॥

पदच्छेद—

तेन इत्थम् आहुतः क्षत्तः भगवान् आदि सूकरः ।
न अकम्पत मनाक् क्वापि स्रजा हतः इव द्विपः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेन | २. | उस (मुट्ठी) से | नअकम्पत | १२. | नहीं हिले-डुले |
| इत्थम् | ३. | इस प्रकार | मनाक् | ११. | तनिक भी |
| आहुतः | ४. | मारे जाने पर | क्वापि | १०. | कहीं से |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी ! | स्रजा, हतः | ७. | पुष्प माला से मारे गये |
| भगवान् | ५. | भगवान् | इव | ९. | समान |
| आदिसूकरः । | ६. | आदि वाराह | द्विपः ॥ | ८. | हाथी के |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उस मुट्ठी से इस प्रकार मारे जाने पर भगवान् आदि वाराह पुष्प माला से मारे गये हाथी के समान कहीं से तनिक भी नहीं हिले-डुले ।

# एकोनविंशः श्लोकः

द्यौर्नष्टभगणाभ्रौघैः अविद्युत्स्तनयित्नुभिः ।
वर्षद्भिः पूयकेशासृग्विण्मूत्रास्थीनि चासकृत् ॥१९॥

पदच्छेद—

द्यौः नष्ट भगणा अभ्र ओघैः सविद्युत् स्तनयित्नुभिः ।
वर्षद्भिः पूयः केशः असृक् विट्, मूत्र अस्थीनि च असकृत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्यौः | १. | आकाश में | वर्षद्भिः | १५. | वर्षा होने लगी |
| नष्ट | ७. | छिप गये (तथा) | पूयः | ८. | पीव |
| भगणा | ६. | सूर्य, चन्द्रादि नक्षत्र मण्डल | केश | ९. | केश |
| अभ्र | ४. | बादलों के | असृक् | १०. | रक्त |
| ओघैः | ५. | झुण्ड से | विट् मूत्र | ११. | विष्टा, मूत्र |
| सविद्युत् | २. | बिजली की चमक (और) | अस्थीनि | १३. | हड्डियों की |
| स्तनयित्नुभिः । | ३. | कड़क के साथ | च | १२. | और |
| | | | असकृत् ॥ | १४. | लगातार |

श्लोकार्थ—आकाश से बिजली की चमक और कड़क के साथ बादलों के झुण्ड से सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्र मण्डल छिप गये तथा पीव, केश रक्त, विष्ठा, मूत्र और हड्डियों की लगातार वर्षा होने लगी।

# विंशः श्लोकः

गिरयः प्रत्यदृश्यन्त नानायुधमुचोऽनघ ।
दिग्वाससो यातुधान्यः शूलिन्यो मुक्तमूर्धजाः ॥२०॥

पदच्छेद—

गिरयः प्रत्यदृश्यन्त नाना आयुध मुचः अनघ ।
दिग्वाससः यातुधान्यः शूलिन्यः मुक्त मूर्धजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गिरयः | ५. | पर्वत (और) | दिग्वाससः | ९. | घूमती हुई नंगी |
| प्रत्यदृश्यन्त | ११. | दिखाई देने लगे | यातुधान्यः | १०. | राक्षसियाँ |
| नाना | २. | अनेक प्रकार के | शूलिन्यः | ८. | त्रिशूल लेकर |
| आयुध | ३. | अस्त्र शस्त्रों को | मुक्त | ७. | बिखेरे हुये |
| मुचः | ४. | छोड़ते हुये | मूर्धजाः ॥ | ६. | बालों को |
| अनघ । | १. | हे विदुर जी ! | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्रों को छोड़ते हुये पर्वत और बालों को बिखेरे हुये त्रिशूल लेकर घूमती हुई नंगी राक्षसियाँ दिखाई देने लगीं।

# एकविंशः श्लोकः

बहुभिर्यक्षरक्षोभिः पत्त्यश्वरथकुञ्जरैः ।
आततायिभिरुत्सृष्टा हिंस्रा वाचोऽतिवैशसाः ।।२१।।

पदच्छेद—

बहुभिः यक्ष रक्षोभिः पत्तिः अश्व रथ कुञ्जरैः ।
आततायिभिः उत्सृष्टा हिंस्रा वाचः अति वैशसाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बहुभिः | ५. | बहुत से | आततायिभिः | ६. | आततायी |
| यक्ष | ७. | यक्षों (और) | उत्सृष्टा | १३. | होने लगी |
| रक्षोभिः | ८. | राक्षसों की | हिंस्रा | ११. | मारो-काटो की |
| पत्तिः | १. | वहाँ पर पैदल सेना | वाचः | १२. | आवाजें |
| अश्व | २. | घुड़सवार | अति | ९. | अत्यन्त |
| रथ | ३. | रथी (और) | वैशसाः ।। | १०. | क्रूर |
| कुञ्जरैः । | ४. | हाथियों के साथ | | | |

श्लोकार्थ—वहाँ पर पैदल सेना घुड़सवार रथी और हाथियों के साथ बहुत से आततायी यक्षों और राक्षसों की अत्यन्त क्रूर मारो-काटो की आवाजें होने लगी ।

# द्वाविंशः श्लोकः

प्रादुष्कृतानां मायानामसुराणां विनाशयत् ।
सुदर्शनास्त्रं भगवान् प्रायुङ्क्त दयितं त्रिपात् ।।२२।।

पदच्छेद—

प्रादुष्कृतानाम् मायानाम् असुराणाम् विनाशयत् ।
सुदर्शन अस्त्रम् भगवान् प्रायुङ्क्त दयितम् त्रिपात् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रादुष्कृतानाम् | ३. | प्रकट हुई | अस्त्रम् | ८. | चक्र |
| मायानाम् | ५. | माया का | भगवान् | २. | भगवान् वाराह ने |
| असुराणाम् | ४. | राक्षसी | प्रायुङ्क्त | १०. | छोड़ा |
| विनाशयत् । | ६. | विनाश करने के लिये | दयितम् | ७. | अपने प्रिय |
| सुदर्शन । | ९. | सुदर्शन को | त्रिपात् ।। | १. | यज्ञ मूर्ति |

श्लोकार्थ—यज्ञमूर्ति भगवान् वाराह ने प्रकट हुई राक्षसी माया का विनाश करने के लिये अपने प्रिय चक्र सुदर्शन को छोड़ा ।

# त्रयोविंशः श्लोकः

तदादितेः समभवत्सहसा हृदि वेपथुः ।
स्मरन्त्या भर्तुरादेशं स्तनाच्चासृक् प्रसुस्रुवे ।।२३।।

पदच्छेद—

तदा दितेः समभवत् सहसा हृदि वेपथुः ।
स्मरन्त्या भर्तुः आदेशम् स्तनात् च असृक् प्रसुस्रुवे ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तदा | १. | उस समय | स्मरन्त्या | ४. | स्मरण करके |
| दितेः | ५. | दिति के | भर्तुः | २. | अपने पति के |
| समभवत् | ९. | उत्पन्न हो गया | आदेशम् | ३. | कथन का |
| सहसा | ७. | अचानक | स्तनात् | ११. | (उसके) स्तनों से |
| हृदि | ६. | हृदय में | च | १०. | और |
| वेपथुः । | ८. | कम्पन | असृक्, प्रसुस्रुवे | १२. | रक्त, बहने लगा |

श्लोकार्थ—उस समय अपने पति के कथन का स्मरण करके दिति के हृदय में अचानक कम्पन उत्पन्न हो गया और उसके स्तनों से रक्त बहने लगा ।

# चतुर्विंशः श्लोकः

विनष्टासु स्वमायासु भूयश्चाव्रज्य केशवम् ।
रूषोपगूहमानोऽमुं ददृशेऽवस्थितं बहिः ।।२४।।

पदच्छेद—

विनष्टासु स्व मायासु भूयः च आव्रज्य केशवम् ।
रूषा उपगूहमानः अमुम् ददृशे अवस्थितम् बहिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विनष्टासु | २. | नष्ट हो जाने पर (वह दैत्य) | रूषा | ६. | क्रोध के कारण (अपनी) |
| स्वमायासु | १. | अपनी माया जाल के | उपगूहमानः | ७. | (भुजाओं में भरकर) दबाया |
| भूयः | ३. | फिर से | अमुम् | ८. | (किन्तु वे) भगवान् |
| च | ११. | ही | ददृशे | १२. | दिखाई दिये |
| आव्रज्य | ५. | आकर (उन्हें) | अवस्थितम् | १०. | खड़े हुये |
| केशवम् । | ४. | वाराह भगवान् के समीप | बहिः ।। | ।९ | (उसकी बाँहों से) बाहर ही |

श्लोकार्थ—अपनी माया जाल के नष्ट हो जाने पर फिर से वाराह भगवान् के समीप आकर उन्हें क्रोध के कारण अपनी भुजाओं में भरकर दबाया । किन्तु वे भगवान् उसकी बाँहों से बाहर ही खड़े हुये दिखाई दिये ।

# पञ्चविंश: श्लोक:

तं मुष्टिभिर्विनिघ्नन्तं वज्रसारैरधोक्षजः ।
करेण कर्णमूलेऽहन् यथा त्वाष्ट्रं मरुत्पतिः ॥२५॥

पदच्छेद—

तम् मुष्टिभिः विनिघ्नन्तम् वज्रसारैः अधोक्षजः ।
करेण कर्णमूले अहन् यथा त्वाष्ट्रम् मरुत्पतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ६. | उस दैत्य की | करेण | ८. | हाथ से तमाचा |
| मुष्टिभिः | ४. | मुक्कों | कर्णमूले | ७. | कनपटी पर |
| विनिघ्नतम् | ५. | प्रहार करते हुये | अहन् | ९. | मारा |
| वज्र | २. | वज्र के समान | यथा | १० | जैसे |
| सारैः | ३. | कठोर | त्वाष्ट्रम् | १२. | वृत्रासुर को मारा |
| अधोक्षजः । | १. | वाराह भगवान् ने | मरुत्पतिः ॥ | ११. | इन्द्र ने |

श्लोकार्थ—वाराह भगवान् ने वज्र के समान कठोर मुक्कों से प्रहार करते हुये उस दैत्य की कनपटी पर हाथ से तमाचा मारा। जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर को मारा था।

# षड्विंश: श्लोक:

स आहतो विश्वजिता ह्यवज्ञया, परिभ्रमद्गात्र उदस्तलोचनः ।
विशीर्ण बाह्वङ्घ्रिशिरोरुहोऽपतद्, यथानगेन्द्रो लुलितो नभस्वता ॥२५॥

पदच्छेद—

सः आहतः विश्वजिता हि अवज्ञया, परिभ्रमत् गात्रः उदस्तलोचनः ।
विशीर्ण बाहुः अङ्घ्रि शिरोरुहः अपतत्, यथा नगेन्द्र लुलितः नभस्वता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | उस दैत्य (हिरण्याक्ष को) | विशीर्ण | १३. | विखर गये (तथा वह) |
| आहतः | ५. | मारा था (जिससे) | बाहुः | १०. | भुजा |
| विश्वजिता | १. | वाराह भगवान् ने | अङ्घ्रि | ११. | पैर (और) |
| हि | ३. | ही | शिरोरुह | १२. | केश |
| अवज्ञया | २. | उपेक्षा से | अपतत् | १४. | गिर पड़ा |
| परिभ्रमत् | ७. | चक्कर खाने लगा | यथा | १५. | जैसे |
| गात्रः | ६. | (उसका) शरीर | नगेन्द्र | १७. | विशाल वृक्ष |
| उदस्त | ९. | बाहर निकल आई | लुलितः | १८. | गिर गया हो |
| लोचनः | ८. | आँखें | नभस्वत ॥ | १६. | आँधी से कोई |

श्लोकार्थ—वाराह भगवान् ने उपेक्षा से ही उस दैत्य हिरण्याक्ष को मारा था। जिससे उसका शरीर चक्कर खाने लगा, आँखें बाहर निकल आईं, भुजा, पैर और केश विखर गये, तथा वह गिर पड़ा। जैसे आँधी से कोई विशाल वृक्ष गिर गया हो।

# सप्तविंशः श्लोकः

क्षितौ शयानं तमकुण्ठवर्चसं, करालदंष्ट्रं परिदष्टदच्छदम् ।
अजादयः वीक्ष्य शशंसुरागता, अहो इमां को नु लभेत संस्थितिम् ॥२७॥

पदच्छेद—

क्षितौ शयानम् तम् अकुण्ठ वर्चसम्, कराल दंष्ट्रम् परिदष्ट दच्छदम् ।
अज आदयः वीक्ष्य शशंसुः आगता, अहो इमाम् क नु लभेत संस्थितिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षितौ, शयानम् | १. | पृथ्वी पर, पड़े हुये | शशंसुः | १०. | उसकी प्रशंसा करने लगे |
| तम् | ६. | उस दैत्य (हिरण्याक्ष को) | आगता, | ८. | वहाँ आये हुये |
| अकुण्ठ, वर्चसम् | २. | चमकते, तेज वाले | अहो | ११. | अरे |
| कराल, दंष्ट्रम् | ३. | भयंकर, डाढ़ों वाले (और) | इमाम् | १४. | इस प्रकार की |
| परिदष्ट | ५. | चबाते हुये | कः | १३. | कौन मनुष्य |
| दच्छदम् । | ४. | होठों को | नुः | १४. | भला |
| अज, आदयः | ९. | ब्रह्मा इत्यादि देव गण | लभेत | १६. | प्राप्त कर सकता है |
| वीक्ष्य । | ७. | देखकर | संस्थितिम् ॥ | १५. | मृत्यु को |

श्लोकार्थ—पृथ्वी पर पड़े हुये, चमकते तेज वाले; भयंकर डाढ़ों वाले और होठों को चबाते हुये; उस दैत्य हिरण्याक्ष को देखकर वहाँ आये हुये ब्रह्मा, इत्यादि देवगण उसकी प्रशंसा करने लगे। अरे भला कौन मनुष्य इस प्रकार की मृत्यु को प्राप्त कर सकता है।

# अष्टाविंशः श्लोकः

यं योगिनो योगसमाधिना रहः, ध्यायन्ति लिङ्गादसतो मुमुक्षया ।
तस्यैष दैत्य ऋषभः पदाहतो, मुखं प्रपश्यस्तनुमुत्ससर्ज ह ॥२८॥

पदच्छेद—

यम् योगिनः योग समाधिना रहः, ध्यायन्ति लिङ्गात् असतः मुमुक्षया ।
तस्य एष दैत्य ऋषभः पदा आहतः, मुखम् प्रपश्यन् तनुम् उत्ससर्ज ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यम् | ५. | जिसका | तस्य | ९. | उन्हीं (भगवान् वाराह के) |
| योगिनः | ४. | योगिजन | एषः | ११. | यह |
| योग समाधिना | ७. | समाधि योग के द्वारा | दैत्यः ऋषभः | १२. | दैत्य राज (हिरण्याक्ष के) |
| रहः | ६. | एकान्त में | पदा, आहतः | १०. | पैरों से, घायल होकर |
| ध्यायन्ति | ८. | ध्यान करते हैं | मुखम् | १३. | उनका मुख |
| लिङ्गात् | २. | शरीर से | प्रपश्यन् | १४. | देखता हुआ |
| असतः | १. | मिथ्या से | तनुम् | १५. | (अपना) शरीर |
| मुमुक्षया । | ३. | मुक्ति पाने के लिये | उत्ससर्ज ह ॥ | १६. | छोड़ा है । |

श्लोकार्थ—मिथ्या से मुक्ति पाने के लिये योगिजन जिसका एकान्त में समाधि योग के द्वारा ध्यान करते हैं। उन्हीं भगवान् वाराह के पैरों से घायल होकर दैत्यराज हिरण्याक्ष उनका मुख देखता हुआ अपना शरीर छोड़ा है।

# एकोनविंश: श्लोक:

एतौ तौ पार्षदावस्य शापाद्यातावसद्गतिम् ।
पुनः कतिपयैः स्थानं प्रपत्स्येते ह जन्मभिः ।।२६।।

पदच्छेद— एतौ तौ पार्षदौ अस्य शापात् यातौ असद् गतिम् ।
पुनः कतिपयैः स्थानम् प्रपत्स्येते ह जन्मभिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतौ | २. | ये दोनों | गतिम् । | ७. | योनि को |
| तौ | १. | हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष | पुनः | १२. | फिर से |
| पार्षदौ | ४. | पार्षद हैं | कतिपयैः | ६. | कुछ |
| अस्य | ३. | भगवान् श्री हरि के | स्थानम् | १३ | अपने धाम को |
| शापात् | ५. | (सनकादि कुमारों के) शाप से | प्रपत्स्येते | १४. | प्राप्त करेंगे |
| यातौ | ८. | प्राप्त हुये हैं | ह | ११. | निश्चय ही |
| असद् | ६. | अधम | जन्मभिः ।। | १०. | जन्मों के बाद |

श्लोकार्थ—हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष दोनों भगवान् श्री हरि के पार्षद हैं। सनकादि कुमारों के शाप से अधम योनि को प्राप्त हुये हैं। कुछ जन्मों के बाद निश्चय ही फिर से अपने धाम को प्राप्त करेंगे।

# त्रिंश: श्लोक:

देवा ऊचुः

नमो नमस्तेऽखिल यज्ञतन्तवे, स्थितौ गृहीतामलसत्त्वमूर्तये ।
दिष्टया हतोऽयं जगताम् अरून्तुदस्त्वत्पादभक्त्या वयमीश निर्वृताः ।।३०।।

पदच्छेद— नमः नमः ते अखिल यज्ञ तन्तवे, स्थितौ गृहीत अमल सत्त्वमूर्तये ।
दिष्टया हतः अयम् जगताम् अरुन्तुदः भवत् पाद भक्त्या वयम् ईश निर्वृताः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नमः नमः | ३. | बारम्बार, नमस्कार है | दिष्टया, हतः | १४. | सौभाग्य से, मारा गया है |
| ते | २. | आपको | अयम् | १३. | यह (दुष्ट दैत्य) |
| अखिल | ४. | (आप) सम्पूर्ण | जगताम् | ११. | प्राणियों को |
| यज्ञ | ५. | यज्ञों का | अरून्तुदः | १२. | अत्यन्त दुःख देने वाला |
| तन्तवे, | ६. | विस्तार करते हैं (और) | त्वत्, पाद | १६. | आपके, चरणों की |
| स्थितौ | ७. | जगत के पालन के लिये | भक्त्या | १७. | भक्ति के प्रभाव से |
| गृहीत | १०. | धारण करते हैं | वयम् | १५. | अब हम सब लोग |
| अमल | ८. | शुद्ध | ईश | १. | हे प्रभो ! |
| सत्त्वमूर्तये । | ६. | सत्त्वमय मंगल शरीर | निर्वृताः ।। | १८. | सुखी हो गये हैं |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपको बारम्बार नमस्कार है। आप सम्पूर्ण यज्ञों का विस्तार करते हैं और जगत् के पालन के लिये शुद्ध सत्त्वमय मंगल शरीर धारण करते हैं। प्राणियों को अत्यन्त दुःख देने वाला यह दैत्य सौभाग्य से मारा गया है। अब हम सब लोग आपके चरणों की भक्ति के प्रभाव से सुखी हो गये हैं।

# एकत्रिंश: श्लोक:

मैत्रेय उवाच—

एवं हिरण्याक्षमसह्यविक्रमं, स सादयित्वा हरिरादिसूकरः ।
जगाम लोकं स्वयमखण्डितोत्सवं, समीडितः पुष्करविष्टरादिभिः ।।३१।।

पदच्छेद—

एवम् हिरण्याक्षम् असह्य विक्रमम्, सः सादयित्वा हरिःआदिसूकरः ।
जगाम लोकम् स्वयम् अखण्डित उत्सवम्, समीडितः पुष्कर विष्टर आदिभिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | जगाम | १३. | चले गये (उस समय) |
| हिरण्याक्षम् | ७. | हिरण्याक्ष का | लोकम् | १२. | धाम को |
| असह्य | ५. | महा | स्वयम् | ९. | अपने |
| विक्रमम्, | ६. | पराक्रमी | अखण्डित | १०. | अखण्ड |
| सः | ३. | वे (भगवान्) | उत्सवम् | ११. | आनन्दमय |
| सादयित्वा | ८. | वध करके | समीडितः | १६. | स्तुति करने लगे |
| हरिः | ४. | श्री हरि | पुष्कर,विष्टरम् | १४. | कमलासन ब्रह्मा |
| आदि सूकरः । | २. | आदि वाराह | आदिभिः ।। | १५. | इत्यादि देवगण (उनकी) |

श्लोकार्थ—इस प्रकार आदि वाराह वे भगवान् श्री हरि महा पराक्रमी हिरण्याक्ष का वध करके अपने अखण्ड आनन्द-मय धाम को चले गये । उस समय कमलासन ब्रह्मा इत्यादि देवगण उनकी स्तुति करने लगे ।

# द्वात्रिंश: श्लोक:

मया यथानूक्तमवादि ते हरेः, कृतावतारस्य सुमित्रचेष्टितम् ।
यथा हिरण्याक्ष उदारविक्रमो, महामृधे क्रीडनवन्निराकृतः ।।३२।।

पदच्छेद—

मया यथा अनूक्तम् अवादि ते हरेः, कृत अवतारस्य सुमित्र चेष्टितम् ।
यथा हिरण्याक्ष उदार विक्रमः, महामृधे क्रीडनवत् निराकृतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मया, यथा | ६. | मैंने, जिस प्रकार | चेष्टितम् | ५. | लीलाओं को |
| अनूक्तम् | ७. | गुरु मुख से सुना है | यथा | ८. | जिस प्रकार (भगवान् ने) |
| अवादि | १६. | सुना दिया | हिरण्याक्ष | १२. | हिरण्याक्ष का |
| ते | १५. | उसे (तुम्हें) | उदार | १०. | महान् |
| हरेः, | ४. | श्रीं हरि की | विक्रमः, | ११. | पराक्रमी |
| कृत | ३ | लेने वाले | महामृधे | ९. | भीषण संग्राम में |
| अवतारस्य | २. | अवतार | क्रीडनवत् | १३. | खिलौने के समान |
| सुमित्र | १. | हे मित्र विदुर जी ! | निराकृतः ।। | १४. | वध किया |

श्लोकार्थ—हे मित्र विदुर जी ! अवतार लेने वाले श्री हरि की लीलाओं को मैंने जिस प्रकार गुरु मुख से सुना है । जिस प्रकार भगवान् ने भीषण संग्राम में महान् पराक्रमी हिरण्याक्ष को खिलौने के समान वध किया, उसे तुम्हें सुना दिया ।

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

इति कौषारवख्यातामाश्रुत्य भगवत्कथाम् ।
क्षत्ताऽऽनन्दं परं लेभे महाभागवतो द्विज ॥३३॥

पदच्छेद—

इति कौषारव आख्याताम् आश्रुत्य भगवत् कथाम् ।
क्षत्ताः आनन्दम् परम् लेभे महा भागवतः द्विज ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | क्षत्ताः | ६. | विदुर जी ने |
| कौषारव | २. | मैत्रेय जी से | आनन्दम् | ११. | आनन्द को |
| आख्याताम् | ४. | कही गई | परम् | १०. | महान् |
| आश्रुत्य | ७. | सुनकर | लेभे | १२. | प्राप्त किया |
| भगवत् | ५. | भगवान् की | महाभागवतः | ८. | परम भगवत् भक्त |
| कथाम् । | ६. | लीलाओं को | द्विज ॥ | १. | हे शौनक जी ! |

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! इस प्रकार मैत्रेय जी से कही गई भगवान् की लीलाओं को सुनकर परम भागवत भक्त विदुर जी ने महान् आनन्द को प्राप्त किया ।

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अन्येषां पुण्यश्लोकानामुद्दामयशसां सताम् ।
उपश्रुत्य भवेन्मोदः श्रीवत्साङ्कस्य किं पुनः ॥३४॥

पदच्छेद—

अन्येषाम् पुण्य श्लोकानाम् उद्दाम यशसाम् ।
सताम् उपश्रुत्य भवेत् मोदः श्रीवत्स अङ्कस्य किम् पुनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्येषाम् | २. | जब दूसरे | उपश्रुत्य | ७. | (चरित्रों को) सुनकर |
| पुण्य | ३. | पवित्र | भवेत् | ६. | होता हैं (तब) |
| श्लोकानाम् | ३. | कीर्ति वाले (तथा) | मोदः | ८. | आनन्द |
| उद्दाम | ४. | महान् | श्रीवत्सअङ्कस्य | ११. | श्रीवत्सधारी ( भगवान् श्री हरि की लीलाओं की गीतों की |
| यशसाम् | ५. | यश वाले | | | |
| सताम् । | ६. | महापुरुषों के | किम् | १२. | बात ही क्या है |
| | | | पुनः ॥ | १०. | फिर से |

श्लोकार्थ—जब दूसरे पवित्र कीर्ति वाले तथा महान् यश वाले महापुरुषों के चरित्रों को सुनकर आनन्द होता है तब फिर श्रीत्सधारी भगवान् श्री हरि की लीलाओं की तो बात ही क्या है ।

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यो गजेन्द्रं झषग्रस्तं ध्यायन्तं चरणाम्बुजम् ।
क्रोशन्तीनां करेणूनां कृच्छ्रतोऽमोचयद् द्रुतम् ॥३५॥

पदच्छेद—

यः गजेन्द्र झष ग्रस्तम् ध्यायन्तम् चरणाम्बुजम् ।
क्रोशन्तीनाम् करेणूनाम् कृच्छतः अमोचयत् द्रुतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जिन्होंने | क्रोशन्तीनाम् | २. | चिघाड़ने पर |
| गजेन्द्र | ५. | गजराज को | करेणूनाम् | ६. | हथिनियों के |
| झष ग्रस्तम् | २. | ग्राह से पकड़े गये (और) | कृच्छतः | ९. | कष्ट से |
| ध्यायन्तम् | ४. | ध्यान करते हुये | अमोचयत् | १०. | छुड़ाया था |
| चरण अम्बुजम् । | ३. | चरण कमल का | द्रुतम् ॥ | ८. | तत्काल |

श्लोकार्थ—जिन्होंने ने ग्राह से पकड़े गये और चरण कमल का ध्यान करते हुये गजराज को हथिनियों के चिघाड़ने पर तत्काल कष्ट से छुड़ाया था ।

# षट्त्रिंशः श्लोकः

तं सुखाराध्यमृजुभिरनन्यशरुणैर्नृभिः ।
कृतज्ञः को न सेवेत दुराराध्यमसाधुभिः ॥३६॥

पदच्छेद—

तम् सुख आराध्यम् ऋजुभिः अनन्य शरणैः नृभिः ।
कृतज्ञः कः न सेवेत दुराराध्यम् असाधुभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ८. | उन (भगवान् श्री हरि के) | कृतज्ञः | ९. | उपकार को मानने वाला |
| सुख, आराध्यम् | ५. | सहज में प्रसन्न होने वाले (और) | कः | १०. | कौन मनुष्य |
| | | | न | ११. | नहीं |
| ऋजुभिः | ३, | साधु | सेवेत | १२. | (उनकी) सेवा करेगा |
| अनन्य | १. | असहाय | दुराराध्यम् | ७. | प्रसन्न नहीं होने वाले |
| शरणैः | २. | शरण वाले | असाधुभिः ॥ | ६. | दुष्ट पुरुषों से |
| नृभिः । | ४. | मनुष्यों से | | | |

श्लोकार्थ—असहाय शरण वाले साधु मनुष्यों से सहज में प्रसन्न होने वाले और दुष्ट पुरुषों से प्रसन्न नहीं होने वाले उन भगवान् श्री हरि के उपकार को मानने वाला कौन मनुष्य उनकी सेवा नहीं करेगा ।

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

यो वै हिरण्याक्ष वधं महाद्भुतं, विक्रीडितं कारणसूकरात्मनः ।
शृणोति गायन्त्यनुमोदतेऽञ्जसा, विमुच्यते ब्रह्मवधादपि द्विजाः ॥३७॥

पदच्छेद— यः वै हिरण्याक्ष वधम् महत् अद्भुतम्, विक्रीडितम् कारण सूकर आत्मनः ।
शृणोति गायन्ति अनुमोदते अञ्जसा, विमुच्यते ब्रह्म वधात् अपि द्विजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | २. | जो | शृणोति | ८. | सुनता है |
| वै | १२. | वह मनुष्य | गायन्ति | १०. | गाता है |
| हिरण्याक्ष | ३. | हिरण्याक्ष के | अनुमोदते | ११. | अनुमोदन करता है |
| वधम्, महत् | ४. | वध की, अत्यन्त | अञ्जसा, | १३. | सहज में |
| अद्भुतम्, | ५. | अलौकिक | विमुच्यते | १६. | मुक्त हो जाता है |
| विक्रीडितम् | ६. | लीला को | ब्रह्मवधात् | १४. | ब्रह्म हत्या के पाप से |
| कारण | २. | पृथ्वी का उद्धार करने के लिये | अपि | १५. | भी |
| | | | द्विजाः ॥ | १. | हे शौनकादि ! ऋषियों |
| सूकर, आत्मनः । | ३. | वाराह का रूप धारण करने वाले श्री हरि की | | | |

श्लोकार्थ—हे शौनकादि ऋषियों ! पृथ्वी का उद्धार करने के लिये वाराह का रूप धारण करने वाले श्री हरि की वध की अत्यन्त अलौकिक लीला को जो सुनता है, गाता है, अनुमोदन करता है वह मनुष्य सहज में ब्रह्म हत्या के पाप से भी मुक्त हो जाता है ।

## अष्टत्रिंशः श्लोकः

एतन्महापुण्यमलं पवित्रं, धन्यं यशस्यं परमायुराशिषाम् ।
प्राणेन्द्रियाणां युधि शौर्यवर्धनं, नारायणोऽन्ते गतिरङ्ग शृण्वताम् ॥३८॥

पदच्छेद— एतत् महापुण्यम् अलम् पवित्रम् धन्यम्, यशस्यम् परम् आयु आशीषाम् ।
प्राणेन्द्रियाणाम् युधि शौर्यवर्धनम्, नारायणः अन्ते गतिः अङ्ग शृण्वताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतत् | १. | यह (हिरण्याक्ष वध की कथा) | प्राणेन्द्रियाणाम् | ९ | मन और इन्द्रियों की |
| महापुण्यम् | २. | महान् पुण्यप्रद हैं (और) | युधि | ८. | युद्ध में |
| अलम्, पवित्रम् | ३. | परम पवित्र है | शौर्यवर्धनम, | १०. | शक्ति बढ़ाने वाली है |
| धन्यम् | ४. | यह धन देने वाली (तथा) | नारायणः | १४. | भगवान् श्री हरि की |
| यशस्यम् | ५. | यश प्रदान करने वाली है | अन्ते | १२. | मृत्यु के समय |
| परम | ७. | पूर्ति करने वाली है (तथा) | गतिः | १५. | प्राप्त होती है |
| आयुआशिषाम् । | ६. | आयुष्य, कामना की | अङ्ग | ११. | हे तात ! |
| | | | शृण्वताम् ॥ | १३. | इसे सुनने पर |

श्लोकार्थ—यह हिरण्याक्ष वध की कथा महान् पुण्यप्रद है, और परम पवित्र है; यह धन देने वाली तथा यश प्रदान करने वाली है; आयुष्य और कामना की पूर्ति करने वाली है । तथा युद्ध में मन और इन्द्रियों की शक्ति बढ़ाने वाली है । हे तात ! मृत्यु के समय इसे सुनने पर भगवान् श्री हरि की प्राप्ति होती है ।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयेः स्कन्धेः
एकोनविंश अध्यायः समाप्तः ॥१९॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
## तृतीयः स्कन्धः
### अथ विंशः अध्यायः
## प्रथमः श्लोकः

शौनक उवाच—

महीं प्रतिष्ठामध्यस्य सौते स्वायम्भुवो मनुः ।
कान्यन्वतिष्ठद् द्वाराणि मार्गायावरजन्मनाम् ।।१।।

पदच्छेद— महीम् प्रतिष्ठाम् अध्यस्य, सौते स्वायम्भुवः मनुः ।
कानि अन्वतिष्ठत् द्वाराणि, मार्गाय अवर जन्मनाम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महीम् | ३. | पृथ्वी का | कानि | १०. | किन |
| प्रतिष्ठाम् | २. | (भगवान् के द्वारा) स्थापित | अन्वतिष्ठत् | १२. | सहारा लिया |
| अध्यस्य | ४. | निवास करते हुए | द्वाराणि | ११. | उपायों का |
| सौते | १. | हे सूत जी ! | मार्गाय | ९. | उत्पत्ति के लिए |
| स्वायम्भुवः | ५. | स्वायम्भुव | अवर | ८. | अन्य |
| मनुः । | ६. | महाराज मनु ने | जन्मनाम् ।। | ७. | प्राणियों की |

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! भगवान् के द्वारा स्थापित पृथ्वी पर निवास करते हुए स्वायम्भुव महाराज मनु ने अन्य प्राणियों की उत्पत्ति के लिए किन उपायों का सहारा लिया ।

## द्वितीयः श्लोकः

क्षत्ता महाभागवतः कृष्णस्यैकान्तिकः सुहृत् ।
यस्तत्याजाग्रजं कृष्णे सापत्यमघवानिति ।।२।।

पदच्छेद— क्षत्ता महाभागवतः, कृष्णस्य ऐकान्तिकः सुहृत् ।
यः तत्याज अग्रजम् कृष्णे, स अपत्यम् अघवान् इति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षत्ता | १. | विदुर जी | तत्याज | १२. | त्याग दिया |
| महाभागवतः | २. | महान् भगवद्भक्त (और) | अग्रजम् | ९. | अपने बड़े भाई धृतराष्ट्र को |
| कृष्णस्य | ३. | भगवान् श्री कृष्ण की | कृष्णे | ७. | श्री कृष्ण के प्रति |
| ऐकान्तिकः | ४. | अनन्य | स | ११. | सहित |
| सुहृत् । | ५. | मित्र (थे) | अपत्यम् | १०. | पुत्र दुर्योधन के |
| यः | ६. | जिन्होंने | अघवान् इति । | ८. | पाप बुद्धि होने के कारण |

श्लोकार्थ—विदुर जी महान् भगवद्भक्त और भगवान् श्रीकृष्ण के अनन्य मित्र थे; जिन्होंने श्रीकृष्ण के प्रति पाप बुद्धि रखने के कारण अपने बड़े भाई धृतराष्ट्र को पुत्र दुर्योधन के सहित त्याग दिया था ।

# तृतीयः श्लोकः

द्वैपायनादनवरो महित्वे तस्य देहजः ।
सर्वात्मना श्रितः कृष्णं तत्परांश्चाप्यनुव्रतः ।।३।।

पदच्छेद—

द्वैपायनात् अनवरः, महित्वे तस्य देहजः ।
सर्वात्मना श्रितः कृष्णम्, तत् परान् च अपि अनुव्रतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वैपायनात् | १. | वेदव्यास जी के | श्रितः | ८. | आश्रित (थे) |
| अनवरः | ५. | कम नहीं (थे) | कृष्णम् | ७. | भगवान् श्रीकृष्ण के |
| महित्वे | ३. | महिमा में | तत्परान् | १०. | उनके भक्तों के |
| तस्य | ४. | उनसे | च | ९. | और |
| देहजः । | २. | पुत्र (थे और) | अपि | ११. | भी |
| सर्वात्मना | ६. | (वे) सब प्रकार से | अनुव्रतः । | १२. | अनुयायी (थे) |

श्लोकार्थ—विदुर जी वेदव्यास जी के पुत्र थे और महिमा में उनसे कम नहीं थे। वे सब प्रकार से भगवान् श्रीकृष्ण के आश्रित थे और उनके भक्तों के भी अनुयायी थे।

# चतुर्थः श्लोकः

किमन्वपृच्छत्मैत्रेयं विरजास्तीर्थसेवया ।
उपगम्य कुशावर्त आसीनं तत्त्ववित्तमम् ।।४।।

पदच्छेद—

किम् अन्वपृच्छत् मैत्रेयम्, विरजाः तीर्थ सेवया।
उपगम्य कुशावर्ते, आसीनम् तत्त्व वित्तमम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किम् | १०. | क्या | उपगम्य | ९. | समीप जाकर |
| अन्वपृच्छत् | ११. | पूछा था | कुशावर्ते | ४. | हरिद्वार में |
| मैत्रेयम् | ८. | मैत्रेय जी के | आसीनम् | ५. | विराजमान (तथा) |
| विरजाः | ३. | शुद्धचित्त (विदुर जी ने) | तत्त्व | ६. | तत्त्व |
| तीर्थ | १. | तीर्थों में | वित्तमम् ।। | ७. | ज्ञानियों में श्रेष्ठ |
| सेवया । | २. | भ्रमण करने से | | | |

श्लोकार्थ—तीर्थों में भ्रमण करने से शुद्धचित्त विदुरजी ने हरिद्वार में विराजमान तथा तत्त्वज्ञानियों में श्रेष्ठ मैत्रेय जी के समीप जाकर क्या पूछा था ?

## पञ्चमः श्लोकः

**तयोः संवदतोः सूत प्रवृत्ता ह्यमलाः कथाः ।**
**आपो गाङ्गा इवाघघ्नीर्हरेः पादाम्बुजाश्रयाः ।।५।।**

पदच्छेद—

तयोः संवदतोः सूत, प्रवृत्ताः हि अमलाः कथाः ।
आपः गाङ्गाः इव अघघ्नीः, हरेः पाद अम्बुज आश्रयाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तयोः | २. | उन दोनों की | आपः | ८. | जल के |
| संवदतोः | ३. | बातचीत में | गाङ्गाः | ७. | गंगा जी के |
| सूत | १. | हे सूत जी ! | इव | ९. | समान |
| प्रवृत्ताः | १४. | हुई होंगी | अघघ्नीः | १०. | पापों को हरने वाली |
| हि | १३. | अवश्य | हरेः | ४. | भगवान् श्री हरि के |
| अमलाः | ११. | पवित्र | पाद अम्बुज | ५. | चरण-कमल से |
| कथाः । | १२. | कथायें | आश्रयाः ।। | ६. | सम्बन्धित |

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! उन दोनों की बातचीत में भगवान् श्रीहरि के चरण-कमल से सम्बन्धित गंगाजी के जल के समान पापों को हरने वाली पवित्र कथायें अवश्य हुई होंगी ।

## षष्ठः श्लोकः

**ता नः कीर्तय भद्रं ते कीर्तन्योदारकर्मणः ।**
**रसज्ञः को नु तृप्येत हरिलीलामृतं पिबन् ।।६।।**

पदच्छेद—

ताः नः कीर्तय भद्रम् ते, कीर्तन्य उदार कर्मणः ।
रसज्ञः कः नु तृप्येत, हरि लीला अमृतम् पिबन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताः | ७. | उन कथाओं को | रसज्ञः | ११. | रसिक मनुष्य |
| नः | ३. | हमें (आप) | कः | १०. | कौन |
| कीर्तय | ८. | सुनाइये | नु | ९. | भला |
| भद्रम् | २. | मंगल हो | तृप्येत | १६. | तृप्त होगा |
| ते | १. | (हे सूत जी !) आपका | हरि | १२. | भगवान् श्री हरि की |
| कीर्तन्य | ४. | कीर्तन करने योग्य (और) | लीला | १३. | लीला रूपी |
| उदार | ५. | पवित्र | अमृतम् | १४. | अमृत-कथा का |
| कर्मणः । | ६. | चरित्र वाले श्री हरि को | पिबन् ।। | १५. | पान करते हुए |

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! आपका मंगल हो । हमें आप कीर्तन करने योग्य और पवित्र चरित्र वाले श्रीहरि की उन कथाओं को सुनाइये । भला कौन रसिक मनुष्य भगवान् श्री हरि की लीला रूपी अमृत-कथा का पान करते हुए तृप्त होगा ?

## सप्तमः श्लोकः

एवमुग्रश्रवाः पृष्ट ऋषिभिर्नैमिषायनैः ।
भगवत्यर्पिताध्यात्मस्तानाह श्रूयतामिति ॥७॥

पदच्छेद—

एवम् उग्रश्रवाः पृष्टः, ऋषिभिः नैमिषायनैः ।
भगवति अर्पित अध्यात्मः, तान् आह श्रूयताम् इति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| एवम् | ३. इस प्रकार | | अर्पित | ८. लगाकर |
| उग्रश्रवाः | ५. महनीय कीर्ति सूत जी ने | | अध्यात्मः | ७. मन को |
| पृष्टः | ४. पूछने पर | | तान् | ९. उनसे |
| ऋषिभिः | २. ऋषियों के द्वारा | | आह | १०. कहा |
| नैमिषायनैः । | १. नैमिषारण्यवासी | | श्रूयताम् | १२. सुनें |
| भगवति | ६. भगवान् में | | इति ॥ | ११. कि (आप लोग) |

श्लोकार्थ—नैमिषारण्यवासी ऋषियों के द्वारा इस प्रकार पूछने पर महनीय कीर्ति सूत जी ने भगवान् में मन लगाकर उनसे कहा कि आप लोग सुनें ।

## अष्टमः श्लोकः

हरेर्धृतक्रोडतनोः स्वमायया, निशम्य गोरुद्धरणं रसातलात् ।
लीलां हिरण्याक्षमवज्ञया हतम्, सञ्जातहर्षो मुनिमाह भारतः ॥८॥

पदच्छेद—

हरेः धृत क्रोड तनोः स्व मायया, निशम्य गोः उद्धरणम् रसातलात् ।
लीलाम् हिरण्याक्षम् अवज्ञया हतम्, सञ्जात हर्षः मुनिम् आह भारतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| हरेः | ५. भगवान् श्री हरि की | | लीलाम् | १२. लीला को |
| धृत | ४. धारण किये हुये | | हिरण्याक्षम् | १०. हिरण्याक्ष |
| क्रोड | २. वाराह का | | अवज्ञा | ९. खेल-खेल में |
| तनोः | ३. शरीर | | हतम् | ११. वध की |
| स्व मायया | १. अपनी माया से | | सञ्जात | १५. होते हुए |
| निशम्य | १३. सुनकर | | हर्षः | १४. प्रसन्न |
| गोः | ७. पृथ्वी के | | मुनिम् | १७. मैत्रेय जी से |
| उद्धरणम् | ८. उद्धार की (और) | | आह | १८. कहा |
| रसातलात् । | ६. रसातल लोक से | | भारतः ॥ | १६. विदुर जी ने |

श्लोकार्थ—अपनी माया से वाराह का शरीर धारण किये हुए भगवान् श्री हरि की रसातल लोक से पृथ्वी के उद्धार की और खेल-खेल में हिरण्याक्ष-वध की लीला को सुनकर प्रसन्न होते हुए विदुर जी ने मैत्रेय जी से कहा ।

# नवमः श्लोकः

विदुर उवाचः

प्रजापतिपतिः सृष्ट्वा प्रजासर्गे प्रजापतीन् ।
किमारभत मे ब्रह्मन् प्रब्रूह्यव्यक्तमार्गवित् ।।९।।

पदच्छेद—

प्रजापति पतिः सृष्ट्वा, प्रजा सर्गे प्रजापतीन् ।
किम् आरभत मे ब्रह्मन्, प्रब्रूहि अव्यक्त मार्गवित् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापति | ४. | प्रजापतियों के | आरभत | १०. | किया (यह) |
| पतिः | ५. | स्वामी ब्रह्माजी ने | मे | ११. | मुझे |
| सृष्ट्वा | ७. | उत्पन्न करके | ब्रह्मन् | १. | हे मैत्रेय जी ! |
| प्रजासर्गे | ८. | प्रजाओं की वृद्धि के लिए | प्रब्रूहि | १२. | बतावें |
| प्रजापतीन् । | ६. | मरीचि आदि प्रजापतियों को | अव्यक्त | २. | अज्ञात |
| किम् | ९. | क्या | मार्गवित् । | ३. | विषयों के ज्ञाता |

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! अज्ञात विषयों के ज्ञाता और प्रजापतियों के स्वामी ब्रह्माजी ने मरीचि आदि प्रजापतियों को उत्पन्न करके प्रजाओं की वृद्धि के लिए क्या किया ? यह मुझे बतावें ।

# दशमः श्लोकः

ये मरीच्यादयो विप्रा यस्तु स्वायम्भुवो मनुः ।
ते वै ब्रह्मण आदेशात्कथमेतदभावयन् ।।१०।।

पदच्छेद—

ये मरीचि आदयः विप्राः, यः तु स्वायम्भुवः मनुः ।
ते वै ब्रह्मणः आदेशात्, कथम् एतद् अभावयन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | १. | जो | मनुः । | ८. | मनु (हैं) |
| मरीचि | २. | मरीचि | ते वै | ९. | उन लोगों ने |
| आदयः | ३. | इत्यादि | ब्रह्मणः | १०. | ब्रह्मा जी के |
| विप्राः | ४. | ऋषिगण (हैं) | आदेशात् | ११. | आदेश से |
| यः | ६. | जो | कथम् | १३. | कैसे |
| तु | ५. | तथा | एतद् | १२. | (प्रजा वृद्धि का) यह कार्य |
| स्वायम्भुवः | ७. | स्वायम्भुव नाम के | अभावन् ।। | १४. | सम्पन्न किया |

श्लोकार्थ—जो मरीचि इत्यादि ऋषिगण हैं तथा जो स्वायम्भुव नाम के मनु हैं, उन लोगों ने ब्रह्माजी के आदेश से प्रजा वृद्धि का यह महान् कार्य कैसे सम्पन्न किया ?

## एकादशः श्लोकः

सद्द्वितीयाः किमसृजन् स्वतन्त्रा उत कर्मसु ।
आहोस्वित् संहताः सर्व इदं स्म समकल्पयन् ॥११॥

पदच्छेद—

स द्वितीयाः किम् असृजन्, स्वतन्त्राः उत कर्मसु ।
आहोस्वित् संहताः सर्वे, इदम् स्म समकल्पयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स | ३. | सहयोग मे | कर्मसु । | ५. | (अपने) कार्यों में |
| द्वितीयाः | २. | (अपनी) पत्नियों के | आहोस्वित् | ८. | या |
| किम् | १. | क्या (उन लोगों ने) | संहताः | १०. | एक साथ मिलकर |
| असृजन् | ७. | सृष्टि की | सर्वे | ९. | सबों ने |
| स्वतन्त्राः | ६. | स्वतन्त्र रहकर | इदम् | ११. | इस जगत् की |
| उत | ४. | अथवा | स्म समकल्पयन् | १२. | सृष्टि की थी |

श्लोकार्थ—क्या उन लोगों ने अपनी पत्नियों के सहयोग से अथवा अपने कार्यों में स्वतन्त्र रहकर सृष्टि की ? या सबों ने एक साथ मिलकर इस जगत् की सृष्टि की थी ?

## द्वादशः श्लोकः

दैवेन दुर्वितर्क्येण परेणानिमिषेण च ।
जातक्षोभाद्भगवतो महानासीद् गुणत्रयात् ॥१२॥

पदच्छेद—

दैवेन दुर्वितर्क्येण, परेण अनिमिषेण च ।
जात क्षोभात् भगवतः, महान् आसीत् गुण त्रयात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दैवेन | २. | दैव | क्षोभात् | ९. | क्रियात्मक क्षोभ |
| दुर्वितर्क्येण | १. | तर्क से परे | भगवतः | ६. | भगवान् की |
| परेण | ३. | परमात्मा पुरुष | महान् | ११. | महत्तत्त्व |
| अनिमिषेण | ५. | काल की प्रेरणा से | आसीत् | १२. | उत्पन्न हुआ |
| च । | ४. | और | गुण | ८. | गुणों वाली प्रकृति में |
| जात | १०. | होने पर (उससे) | त्रयात् ॥ | ७. | सत्त्व, रजस्, तमस् तीन |

श्लोकार्थ—तर्क से परे दैव, परमात्मा पुरुष और काल की प्रेरणा से भगवान् की सत्त्व, रजस् तथा तमस् तीन गुणों वाली प्रकृति में क्रियात्मक क्षोभ होने पर उससे सर्वप्रथम महत्तत्त्व उत्पन्न हुआ।

# त्रयोदशः श्लोकः

रजः प्रधानान्महतस्त्रिलिङ्गो दैवचोदितात् ।
जातः ससर्ज भूतादिर्वियदादीनि पञ्चशः ।।१३।।

पदच्छेद—

रजः प्रधानात् महतः, त्रिलिङ्गः दैव चोदितात् ।
जातः ससर्ज भूत आदिः, वियत् आदीनि पञ्चशः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रजः | ३. | रजोगुण | जातः | ९. | उत्पन्न हुआ (उससे) |
| प्रधानात् | ४. | प्रधान | ससर्ज | १३. | सृष्टि हुई |
| महतः | ५. | महत्तत्त्व से | भूत | ७. | पंच महाभूतों का |
| त्रिलिङ्गः | ६. | तीन प्रकार का | आदिः | ८. | कारण अहंकार |
| दैव | १. | प्रारब्ध की | वियत् | १०. | आकाश |
| चोदितात् । | २. | प्रेरणा होने पर | आदीनि | ११. | इत्यादि |
| | | | पञ्चशः ।। | १२. | पाँच-पाँच तत्त्वों के वर्गों की |

श्लोकार्थ—प्रारब्ध की प्रेरणा होने पर रजोगुण प्रधान महत्तत्त्व से तीन प्रकार का पंचमहाभूतों का कारण अहंकार उत्पन्न हुआ। उससे आकाश इत्यादि पाँच-पाँच तत्त्वों के वर्गों की सृष्टि हुई।

# चतुर्दशः श्लोकः

तानि चैकैकशः स्रष्टुमसमर्थानि भौतिकम् ।
संहत्य दैवयोगेन हैममण्डमवासृजन् ।।१४।।

पदच्छेद—

तानि च एक एकशः स्रष्टुम्, असमर्थानि भौतिकम् ।
संहत्य दैव योगेन, हैमम् अण्डम् अवासृजन् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तानि | २. | वे छओं वर्ग | संहत्य | ९. | मिलकर (उस सबों ने) |
| च | १. | तदनन्तर | दैव | ७. | प्रारब्ध के |
| एक एकशः | ३. | अलग-अलग रहकर | योगेन | ८. | संयोग से |
| स्रष्टुम् | ५. | सृष्टि करने में | हैमम् | १०. | सुवर्णमय |
| असमर्थानि | ६. | असमर्थ (थे अतः) | अण्डम् | ११. | अण्ड की |
| भौतिकम् । | ४. | ब्रह्माण्ड की | अवासृजन् ।। | १२. | रचना की |

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे छहों वर्ग अलग-अलग ब्रह्माण्ड की सृष्टि करने में असमर्थ थे। अतः प्रारब्ध के संयोग से मिलकर उन सबों ने सुवर्णमय अण्ड की रचना की।

## पञ्चदशः श्लोकः

सोऽशयिष्टाब्धिसलिले आण्डकोशो निरात्मकः ।
साग्रं वै वर्षसाहस्रमन्ववात्सीत्तमीश्वरः ।।१५।।

पदच्छेद—

सः अशयिष्ट अब्धि सलिले, आण्ड कोशः निरात्मकः ।
साग्रम् वै वर्ष साहस्रम्, अन्ववात्सीत् ईश्वरः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वह | साग्रम् | १०. | अधिक समय तक |
| अशयिष्ट | ११. | पड़ा रहा | वै | ९. | भी |
| अब्धि | ५. | समुद्र के | वर्ष | ८. | वर्षों से |
| सलिले | ६. | जल में | साहस्रम् | ७. | एक हजार |
| आण्ड | २. | सुवर्णमय अण्डाकार | अन्ववात्सीत् | १४. | प्रवेश किया |
| कोशः | ३. | ब्रह्माण्ड पिण्ड | तम् | १२. | (तदनन्तर) उसमें |
| निरात्मकः । | ४. | चेतना रहित होकर | ईश्वरः ।। | १३. | भगवान् श्री हरि ने |

श्लोकार्थ—वह सुवर्णमय अण्डाकर ब्रह्माण्ड पिण्ड चेतना रहित होकर समुद्र के जल में एक हजार वर्षों से भी अधिक समय तक पड़ा रहा । तदनन्तर उसमें भगवान् श्री हरि ने प्रवेश किया ।

## षोडशः श्लोकः

तस्य नाभेरभूत् पद्मं सहस्रार्कोरुदीधिति ।
सर्वजीवनिकायौको यत्र स्वयमभूत् स्वराट् ।।१६।।

पदच्छेद—

तस्य नाभेः अभूत् पद्मम्, सहस्र अर्क उरु दीधिति ।
सर्व जीव निकाय ओकः, यत्र स्वयम् अभूत् स्वराट् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | १. | उन भगवान् की श्री हरि | सर्व | ७. | सभी |
| नाभेः | २. | नाभि से | जीव | ८. | प्राणियों के |
| अभूत् | १२. | उत्पन्न हुआ | निकाय | ९. | समूह का |
| पद्मम् | ११. | एक कमल | ओकः | १०. | आश्रय |
| सहस्र | ३. | हजारों | यत्र | १३. | जिसमें |
| अर्क | ४. | सूर्य से (भी) | स्वयम् | १४. | साक्षात् |
| उरु | ५. | अधिक | अभूत् | १६. | प्रकट हुये |
| दीधिति । | ६. | प्रकाशमान (और) | स्वराट् ।। | १६. | ब्रह्मा जी |

श्लोकार्थ—उन भगवान् श्री हरि की नाभि से हजारों सूर्य से भी अधिक प्रकाशमान और सभी प्राणियों के समूह का आश्रय एक कमल उत्पन्न हुआ, जिसमें साक्षात् ब्रह्मा जी प्रकट हुये ।

## सप्तदशः श्लोकः

सोऽनुविष्टो भगवता यः शेते सलिलाशये ।
लोकसंस्थां यथापूर्वं निर्ममे संस्थया स्वया ।।१७।।

पदच्छेद—

सः अनुविष्टः भगवता, यः शेते सलिल आशये ।
लोक संस्थाम् यथा पूर्वम्, निर्ममे संस्थया स्वया ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | ६. उस (स्वराट् के शरीर) में | लोक | १२. प्राणी |
| अनुविष्टः | ७. प्रवेश किया (तदनन्तर) | संस्थाम् | १३. समूह की |
| भगवता | ५. उन्होंने | यथा | ११. समान |
| यः | १. जो नारायण | पूर्वम्, | १०. पूर्वकल्प के |
| शेते | ४. शयन करते हैं | निर्ममे | १४. सृष्टि को |
| सलिल | २. जल के | संस्थया | ९. बुद्धि से |
| आशये । | ३. अन्दर | स्वया ।। | ८. (ब्रह्मा जी ने) अपनी |

श्लोकार्थ—जो नारायण जल के अन्दर शयन करते हैं, उन्होंने उस स्वराट् के शरीर में प्रवेश किया। तदनन्तर ब्रह्मा जी ने अपनी बुद्धि से पूर्व कल्प के समान प्राणी-समूह की सृष्टि की।

## अष्टादशः श्लोकः

ससर्जच्छाययाविद्यां पञ्चपर्वाणमग्रतः ।
तामिस्रमन्धतामिस्रं तमो मोहो महातमः ।।१८।।

पदच्छेद—

ससर्ज छायया अविद्याम्, पञ्च पर्वाणम् अग्रतः ।
तामिस्रम् अन्ध तामिस्रम्, तमः मोहः महातमः ।।

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ससर्ज | ११. रचना की | तामिस्रम् | ३. तामिस्र |
| छायया | २. (अपनी) छाया से | अन्धतामिस्रम् | ४. अन्धतामिस्र |
| अविद्याम् | १०. अविद्याओं की | तमः | ५. तम |
| पञ्च | ८. (इन) पांच | मोहः | ६. मोह (और) |
| पर्वाणम् | ९. प्रकार की | महातमः ।। | ७. महातम |
| अग्रतः । | १ (उन्होंने) सबसे पहले | | |

श्लोकार्थ—उन्होंने सबसे पहले अपनी छाया से तामिस्र अन्धतामिस्र, तम, मोह और महातम इन पांच प्रकार की अविद्याओं की रचना की।

# एकोनविंशः श्लोकः

विससर्जात्मनः कायं नाभिनन्दंस्तमोमयम् ।
जगृहुर्यक्षरक्षांसि रात्रिं क्षुत्तृट्समुद्भवाम् ॥१९॥

पदच्छेद—

विससर्ज आत्मनः कायम्, न अभिनन्दन् तमोमयम् ।
जगृहुः यक्ष रक्षांसि, रात्रिम् क्षुत् तृट् समुद्भवाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विससर्ज | ६. | त्याग दिया | जगृहुः | १३. | ग्रहण किया |
| आत्मनः | २. | अपने | यक्ष | ७. | (तब) यक्षों और |
| कायम् | ३. | शरीर को | रक्षांसि | ८. | राक्षसों ने |
| न | ४. | नहीं | रात्रिम् | १२. | रात्रिरूप (उस शरीर) को |
| अभिनन्दन् | ५. | पसन्द करते हुए | क्षुत् | ९. | भूख एवं |
| तमोमयम् । | १. | तमोगुण से निर्मित | तृट् | १०. | प्यास |
| | | | समुद्भवाम् ॥ | ११. | उत्पन्न करने वाली |

श्लोकार्थ—तमोगुण से निर्मित अपने शरीर को पसन्द नहीं करते हुये ब्रह्मा जी ने उसे त्याग दिया । तब यक्षों और राक्षसों ने भूख एवं प्यास उत्पन्न करने वाली रात्रि रूप उस शरीर को ग्रहण किया ।

# विंशः श्लोकः

क्षुत्तृड्भ्यामुपसृष्टास्ते तं जग्धुमभिदुद्रुवुः ।
मा रक्षतैनं जक्षध्वमित्यूचुः क्षुत्तृडर्दिताः ॥२०॥

पदच्छेद—

क्षुत् तृड्भ्याम् उपसृष्टाः ते, तम् जग्धुम्अभिदुद्रुवुः ।
मा रक्षत एनम् जक्षध्वम्, इति ऊचुः क्षुत् तृड् अर्दिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षुत् | १. | भूख और | रक्षत | १३. | बचाओ |
| तृड्भ्याम् | २. | प्यास से | एनम् | ११. | इन्हें |
| उपसृष्टाः | ३. | व्याकुल होकर | जक्षध्वम् | १४. | खा जाओ |
| ते | ४. | वे यक्ष और राक्षस | इति | १५. | इस प्रकार |
| तम् | ५. | उन ब्रह्मा जी को | ऊचुः | १६. | कह रहे थे |
| जग्धुम् | ६. | खाने के लिए | क्षुत् | ८. | भूख और |
| अभिदुद्रुवुः । | ७. | सामने दौड़े | तृड् | ९. | प्यास से |
| मा | १२. | मत | अर्दिताः ॥ | १०. | पीड़ित होने के कारण |

श्लोकार्थ—भूख और प्यास से व्याकुल होकर वे यक्ष और राक्षस उन ब्रह्मा जी को खाने के लिए सामने दौड़े । वे सब भूख और प्यास से पीड़ित होने के कारण 'इन्हें मत बचाओ, खा जाओ' इस प्रकार कह रहे थे ।

## एकविंशः श्लोकः

देवस्तानाह संविग्नो मा मां जक्षत रक्षत ।
अहो मे यक्षरक्षांसि प्रजा यूयं बभूविथ ।।२१।।

पदच्छेद--

देवः तान् आह संविग्नः, मा माम् जक्षत रक्षत ।
अहो मे यक्ष रक्षांसि, प्रजाः यूयम् बभूविथ ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवः | २. | ब्रह्मा जी ने | अहो | ५. | अरे |
| तान् | ३. | उनसे | मे | ६. | मेरी |
| आह | ४. | कहा | यक्ष | ६. | यक्षों और |
| संविग्नः | १. | घबरा कर | रक्षांसि | ७. | राक्षसों |
| मा | १३. | मत | प्रजाः | १०. | सन्तान |
| माम् | १२. | मुझे | यूयम् | ८. | तुम सब |
| जक्षत | १४. | खाओ (अपितु) | बभूविथ ।। | ११. | हो (अतः) |
| रक्षत । | १५. | बचाओ | | | |

श्लोकार्थ—उस समय घबराकर ब्रह्मा जी ने उनसे कहा, अरे यक्षों और राक्षसों ! तुम सब मेरी संतान हो, अतः मुझे मत खाओ, अपितु बचाओ ।

## द्वाविंशः श्लोकः

देवताः प्रभया या या दीव्यन् प्रमुखतोऽसृजत् ।
ते अहार्षुर्देवयन्तो विसृष्टां तां प्रभामहः ।।२२।।

पदच्छेद—

देवताः प्रभया याः याः, दीव्यन् प्रमुखतः असृजत् ।
ते अहार्षुः देवयन्तः, विसृष्टाम् ताम् प्रभाम् अहः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवताः | ६. | देवताओं की | ते | ६. | उन देवताओं ने |
| प्रभया | १. | प्रकाश से | अहार्षुः | १४. | धारण कर लिया |
| याः | ४. | जिन | देवयन्तः | ८. | प्रकाशमान |
| याः | ५. | जिन | विसृष्टाम् | ११. | छोड़े गये |
| दीव्यन् | २. | देदीप्यमान ब्रह्मा जी ने | ताम् | १०. | उस |
| प्रमुखतः | ३. | मुख्यरूप से | प्रभाम् | १३. | प्रकाशमय शरीर को |
| असृजत् । | ७. | सृष्टि की | अहः ।। | १२. | दिन रूप |

श्लोकार्थ—तदनन्तर प्रकाश से देदीप्यमान ब्रह्मा जी ने मुख्य रूप से जिन-जिन देवताओं की सृष्टि की, प्रकाशमान उन देवताओं ने उस छोड़े गये दिनरूप प्रकाशमय शरीर को धारण कर लिया ।

## त्रयोविंशः श्लोकः

देवोऽदेवाञ्जघनतः सृजति स्मातिलोलुपान् ।
त एनं लोलुपतया मैथुनायाभिपेदिरे ॥२३॥

पदच्छेद—

देवः अदेवान् जघनतः, सृजति स्म अतिलोलुपान् ।
ते एनम् लोलुपतया, मैथुनाय अभिपेदिरे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवः | १. | प्रजापति ब्रह्मा जी ने | ते | ६. | वे असुर |
| अदेवान् | ४. | असुरों की | एवम् | ६. | ब्रह्मा जी की ओर |
| जघनतः | २. | (अपनी) जंघाओं की | लोलुपतया | ७. | कामुक होने से |
| सृजति स्म | ५. | सृष्टि की | मैथुनाय | ८ | मैथुन के लिए |
| अतिलोलुपान् । | ३. | अत्यन्त कामासक्त | अभिपेदिरे ॥ | १०. | लपके |

श्लोकार्थ—प्रजापति ब्रह्माजी ने अपनी जंघाओं से अत्यन्त कामासक्त असुरों की सृष्टि की। वे असुर कामुक होने से मैथुन के लिए ब्रह्मा जी की ओर लपके।

## चतुर्विंशः श्लोकः

ततो हसन् स भगवानसुरैर्निरपत्रपैः ।
अन्वीयमानस्तरसा क्रुद्धो भीतः परापतत् ॥२४॥

पदच्छेद—

ततः हसन् सः भगवान्, असुरैः निरपत्रपैः ।
अन्वीयमानः तरसा क्रुद्धः भीतः परापतत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | ४. | (तथा) उसके बाद | अन्वीयमानः | ७. | पीछा करने पर |
| हसन् | ३. | हँसे | तरसा | ८. | बड़े जोर से |
| सः | १. | वे | क्रुद्धः | ६. | क्रोध करके (और) |
| भगवान् | २. | ब्रह्मा जी (पहले तो) | भीतः | १०. | भयभीत होकर |
| असुरैः | ६. | असुरों के द्वारा | परापतत् ॥ | ११. | दौड़े |
| निरपत्रपैः । | ५. | निर्लज्ज | | | |

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा जी पहले तो हँसे तथा इसके बाद निर्लज्ज असुरों के द्वारा पीछा करने पर बड़े जोर से क्रोध करके और भयभीत होकर दौड़े।

## पञ्चविंशः श्लोकः

स उपव्रज्य वरदं प्रपन्नार्तिहरं हरिम् ।
अनुग्रहाय भक्तानामनुरूपात्मदर्शनम् ॥२५॥

पदच्छेद—

सः उपव्रज्य वरदम्, प्रपन्न आर्ति हरम् हरिम् ।
अनुग्रहाय भक्तानाम्, अनुरूप आत्म दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे ब्रह्मा जी | हरिम् | ११. | भगवान् श्री हरि की |
| उपव्रज्य | १२. | (शरण में) पहुँचे | अनुग्रहाय | ६. | कृपा करने के लिए |
| वरदम् | ५. | वरदायक (तथा) | भक्तानाम् | ७. | भक्तों की |
| प्रपन्न | २. | शरणागतों की | अनुरूप | ८. | भावना के अनुसार |
| आर्ति | ३. | पीड़ा को | आत्म | ९. | अपना |
| हरम् | ४. | हरने वाले | दर्शनम् ॥ | १०. | दर्शन देने वाले |

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा जी शरणागतों की पीड़ा को हरने वाले, वरदायक तथा कृपा करने के लिए भक्तों की भावना के अनुसार अपना दर्शन देने वाले भगवान् श्री हरि की शरण में पहुँचे ।

## षड्विंशः श्लोकः

पाहि मां परमात्मंस्ते प्रेषणेनासृजं प्रजाः ।
ता इमा यभितुं पापा उपक्रामन्ति मां प्रभो ॥२६॥

पदच्छेद—

पाहि माम् परमात्मन् ते, प्रेषणेन असृजम् प्रजाः ।
ताः इमाः यभितुम् पापाः, उपक्रामन्ति माम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पाहि | ३. | रक्षा करें | ताः | ९. | मुझसे उत्पन्न |
| माम् | २. | मेरी | इमाः | १०. | ये |
| परमात्मन् | १. | हे भगवन् ! (आप) | यभितुम् | १२. | मैथुन के लिए |
| ते | ५. | (मैंने) आपकी | पापाः | ११. | पापी संतानें |
| प्रेषणेन | ६. | आज्ञा से (ही) | उपक्रामन्ति | १४. | दौड़ रही हैं |
| असृजम् | ८. | सृष्टि की है | माम् | १३. | मेरी ही ओर |
| प्रजाः । | ७. | प्रजाओं की | प्रभो ॥ | ४. | हे प्रभो ! |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप मेरी रक्षा करें । हे प्रभो ! मैंने आपकी आज्ञा से ही प्रजाओं की सृष्टि की है; किन्तु मुझसे उत्पन्न ये पापी संतानें मैथुन के लिए मेरी ही ओर दौड़ रही हैं ।

## सप्तविंशः श्लोकः

त्वमेकः किल लोकानां क्लिष्टानां क्लेशनाशनः ।
त्वमेकः क्लेशदस्तेषामनासन्न पदां तव ॥२७॥

पदच्छेद—
त्वम् एकः किल लोकानाम्, क्लिष्टानाम् क्लेश नाशनः ।
त्वम् एकः क्लेशदः तेषाम्, अनासन्न पदाम् तव ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम् | २. | आप | त्वम् | १४. | आप (ही हैं) |
| एकः | १. | एकमात्र | एकः | १३. | एक मात्र |
| किल | ३. | ही | क्लेशदः | १२. | दुःख देने वाले (भी) |
| लोकानाम् | ५. | जीवों के | तेषाम् | ११. | उन प्राणियों को |
| क्लिष्टानाम् | ४. | दुःखी | अनासन्न | १०. | शरण में नहीं आने वाले |
| क्लेश | ६. | दुःख को | पदाम् | ९. | चरणों की |
| नाशनः । | ७. | दूर करने वाले (हैं) | तव ॥ | ८. | आपके |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! एकमात्र आप ही दुःखी जीवों के दुःख को दूर करने वाले हैं तथा आपके चरणों की शरण में नहीं आने वाले उन प्राणियों को दुःख देने वाले भी एकमात्र आप ही हैं ।

## अष्टाविंशः श्लोकः

सोऽवधार्यास्य कार्पण्यं विविक्ताध्यात्मदर्शनः ।
विमुञ्चात्मतनुं घोरामित्युक्तो विमुमोच ह ॥२८॥

पदच्छेद—
सः अवधार्य अस्य कार्पण्यम्, विविक्त अध्यात्म दर्शनः ।
विमुञ्च आत्म तनुम् घोराम्, इति उक्तः विमुमोच ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ४. | वे भगवान् श्री हरि | विमुञ्च | ११. | छोड़ दें |
| अवधार्य | ७. | सुनकर (बोले आप) | आत्म | ८. | अपने |
| अस्य | ५. | ब्रह्मा जी के | तनुम् | १०. | शरीर को |
| कार्पण्यम् | ६. | दुःख को | घोराम् | ९. | कलुषित |
| विविक्त | ३. | जानने वाले | इति | १२. | ऐसा |
| अध्यात्म | १. | (सबके) मन की | उक्तः | १३. | कहने पर (उन्होंने) |
| दर्शनः । | २. | बात को | विमुमोच | १५. | छोड़ दिया |
| | | | ह | १४. | उस शरीर को |

श्लोकार्थ—सबके मन की बात को जानने वाले वे भगवान् श्री हरि ब्रह्मा जी के दुःख को सुनकर बोले, आप अपने कलुषित शरीर को छोड़ दें; ऐसा कहने पर उन्होंने उस शरीर को छोड़ दिया ।

## एकोनविंशः श्लोकः

तां क्वणच्चरणाम्भोजां मदविह्वललोचनाम् ।
काञ्चीकलापविलसद्दुकूलच्छन्नरोधसम् ॥२९॥

पदच्छेद—

ताम् क्वणत् चरण अम्भोजाम्, मद विह्वल लोचनाम् ।
काञ्ची कलाप विलसत् दुकूल छन्न रोधसम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताम् | १. | उसके | काञ्ची | ८. | (कुमार) करधनी की |
| क्वणत् | ४. | झनकार कर रहे थे | कलाप | ९. | लड़ियों से |
| चरण | २. | चरण | विलसत् | १०. | सुशोभित थी (और) |
| अम्भोजाम् | ३. | कमलों में (नूपुर) | दुकूल | १२. | रेशमी वस्त्र से |
| मद | ६. | मद से | छन्न | १३. | ढका था |
| विह्वल | ७. | चंचल थीं | रोधसम् ॥ | ११. | (उसका) कटिभाग |
| लोचनाम् । | ५. | आँखें | | | |

श्लोकार्थ—वह शरीर रूपवती स्त्री सन्ध्या के रूप में परिवर्तित हो गया। उसके चरण-कमलों में नूपुर झनकार कर रहे थे, आँखें मद से चंचल थीं, कमर करधनी की लड़ियों से सुशोभित थी और उसका कटिभाग रेशमी वस्त्र से ढका था।

## त्रिंशः श्लोकः

अन्योन्यश्लेषयोत्तुङ्गनिरन्तरपयोधराम् ।
सुनासां सुद्विजां स्निग्धहासलीलावलोकनाम् ॥३०॥

पदच्छेद—

अन्योन्य श्लेषया उत्तुङ्ग, निरन्तर पयोधराम् ।
सुनासाम् सुद्विजाम् स्निग्ध, हास लीला अवलोकनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्योन्य | १. | आपस में | सुनासाम् | ६. | (वह) सुन्दर नासिका |
| श्लेषया | २. | सटे रहने से | सुद्विजाम् | ७. | सुन्दर दन्तावलि |
| उत्तुङ्ग | ३. | (उसके) उभरे हुए | स्निग्ध | ८. | मधुर |
| निरन्तर | ५. | जगह नहीं थी | हास | ९. | मुसकान और |
| पयोधराम् । | ४. | स्तनों के बीच | लीला | १० | हाव-भाव भरी |
| | | | अवलोकनाम् ॥ | ११. | चितवन से परिपूर्ण थी |

श्लोकार्थ—आपस में सटे रहने से उसके उभरे हुए स्तनों के बीच जगह नहीं थी। वह सुन्दर नासिका सुन्दर दन्तावलि, मधुर मुसकान और हाव-भाव भरी चितवन से परिपूर्ण थी।

# एकत्रिंश: श्लोक:

गूहन्तीं व्रीडयात्मानं नीलालकवरूथिनीम् ।
उपलभ्यासुरा धर्म सर्वे सम्मुमुहुः स्त्रियम् ॥३१॥

पदच्छेद—

गूहन्तीम् व्रीडया आत्मानम्, नील अलक वरूथिनीम् ।
उपलभ्य असुराः धर्म सर्वे सम्मुमुहुः स्त्रियम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| गूहन्तीम् | ६. छिपा रही थी | उपलभ्य | ११. देखकर |
| व्रीडया | ४. (वह सुन्दरी) लज्जा से | असुराः | ९. असुर (उस) |
| आत्मानम् | ५. अपने को | धर्म | ७. हे विदुर जी ! |
| नील | १. नीले | सर्वे | ८. सभी |
| अलक | २. केशों से | सम्मुमुहुः | १२. मोहित हो गये |
| वरूथिनीम् । | ३. सुन्दर लगने वाली | स्त्रियम् ॥ | १०. स्त्री को |

श्लोकार्थ—नीले केशों से सुन्दर लगने वाली वह सुन्दरी लज्जा से अपने को छिपा रही थी। हे विदुर जी ! सभी असुर उस स्त्री को देखकर मोहित हो गये।

# द्वात्रिंश: श्लोक:

अहो रूपमहो धैर्यमहो अस्या नवं वयः ।
मध्ये कामयमानानामकामेव विसर्पति ॥३२॥

पदच्छेद—

अहो रूपम् अहो धैर्यम्, अहो अस्याः नवम् वयम् ।
मध्ये कामयमानानाम्, अकामा इव विसर्पति ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अहो | २. विचित्र है | वयम् । | ७. अवस्था |
| रूपम् | १. इसका रूप | मध्ये | १०. बीच में |
| अहो | ४. अद्भुत है (और) | कामयमानानाम् | ९. (यह) हम काम पीड़ितों के |
| धैर्यम् | ३. इसका धैर्य | अकामा | ११. निर्भय |
| अहो | ८. अलौकिक है | इव | १२. सी |
| अस्याः | ५. इसकी | विसर्पति ॥ | १३. घूम रही है |
| नवम् | ६. नयी | | |

श्लोकार्थ—वे सब आपस में कहने लगे, इसका रूप विचित्र है, इसका धैर्य अद्भुत है और इसकी नयी अवस्था अलौकिक है। यह हम काम पीड़ितों के बीच में निर्भय-सी घूम रही है।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

वितर्कयन्तो बहुधा तां सन्ध्यां प्रमदाकृतिम् ।
अभिसम्भाव्य विश्रम्भात्पर्यपृच्छन् कुमेधसः ॥३३॥

पदच्छेद—

वितर्कयन्तः बहुधा, ताम् सन्ध्याम् प्रमदा आकृतिम् ।
अभिसम्भाव्य विश्रम्भात्, पर्यपृच्छन् कुमेधसः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वितर्कयन्तः | ३. | तर्क-वितर्क करते हुए | आकृतिम् । | ५. | रूपिणी |
| बहुधा | २. | बहुत प्रकार से | अभिसम्भाव्य | ८. | आदर करके |
| ताम् | ६. | उस | विश्रम्भात् | ९. | प्रेमपूर्वक |
| सन्ध्याम् | ७. | सन्ध्या का | पर्यपृच्छन् | १०. | (उससे) पूछा |
| प्रमदा | ४. | स्त्री | कुमेधसः ॥ | १. | कुबुद्धि असुरों ने |

श्लोकार्थ—कुबुद्धि असुरों ने बहुत प्रकार से तर्क-वितर्क करते हुए स्त्री रूपिणी उस सन्ध्या का आदर करके प्रेमपूर्वक उससे पूछा।

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

कासि कस्यासि रम्भोरु को वार्थस्तेऽत्र भामिनि ।
रूपद्रविणपण्येन दुर्भगान्नो विबाधसे ॥३४॥

पदच्छेद—

का असि कस्य असि रम्भोरु, कः वा अर्थः ते अत्र भामिनि ।
रूप द्रविण पण्येन, दुर्भगान् नः विबाधसे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| का | २. | (तुम) कौन | ते | ८. | तुम्हारा |
| असि | ३. | हो (और) | अत्र | ७. | यहाँ (आने का) |
| कस्य | ४, | किसकी | भामिनि । | ११. | हे भामिनि ! तुम |
| असि | ५. | (पुत्री) हो | रूप | १३. | सौन्दर्य की |
| रम्भोरु | १. | हे सुन्दरि ! | द्रविण | १४. | सम्पत्ति से |
| कः | ९. | क्या | पण्येन | १२. | अमोल |
| वा | ६. | तथा | दुर्भगान् | १५. | अभागे |
| अर्थः | १०. | प्रयोजन (है) | नः | १६. | हम लोगों को |
| | | | विबाधसे ॥ | १७. | पीड़ित कर रही हो |

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! तुम कौन हो और किसकी पुत्री हो तथा यहाँ आने का तुम्हारा क्या प्रयोजन है ? हे भामिनि ! तुम अमोल सौन्दर्य की सम्पत्ति से अभागे हम लोगों को पीड़ित कर रही हो।

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

या वा काचित्त्वमबले दिष्ट्या सन्दर्शनं तव ।
उत्सुनोषीक्षमाणानां कन्दुकक्रीडया मनः ॥३५॥

पदच्छेद—

या वा काचित् त्वम् अबले, दिष्ट्या सन्दर्शनम् तव ।
उत्सुनोषि ईक्षमाणानाम्, कन्दुक क्रीडया मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| या | ३. | जो | तव | ७. | तुम्हारा |
| वा | ५. | भी (हो) | उत्सुनोषि | १३. | बेचैन कर रही हो |
| काचित् | ४. | कोई | ईक्षमाणानाम् | ११. | (हम) दर्शकों के |
| त्वम् | २. | तुम | कन्दुक | ९. | (तुम) कन्दुक की |
| अबले | १. | हे अबले ! | क्रीडया | १०. | क्रीडा से |
| दिष्ट्या | ६. | सौभाग्य से | मनः ॥ | १२. | मन को |
| सन्दर्शनम् | ८. | दर्शन हुआ है | | | |

श्लोकार्थ—हे अबले ! तुम जो कोई भी हो, सौभाग्य से तुम्हारा दर्शन हुआ है। तुम कन्दुक की क्रीडा से हम दर्शकों के मन को बेचैन कर रही हो।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

नैकत्र ते जयति शालिनि पादपद्मम् घ्नन्त्या मुहुः करतलेन पतत्पतङ्गम् ।
मध्यं विषीदति बृहत्स्तनभारभीतम्, शान्तेव दृष्टिरमला सुशिखासमूहः ॥३६॥

पदच्छेद—

न एकत्र ते जयति शालिनि पाद पद्मम्, घ्नन्त्या मुहुः करतलेन पतत् पतङ्गम् ।
मध्यम् विषीदति बृहत् स्तन भार भीतम्, शान्ता इव दृष्टिः अमला सुशिखा समूहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ९ | नहीं | मध्यम् | १३. | (तुम्हारा) कटिभाग |
| एकत्र | ८. | एक जगह | विषीदति | १४. | थक जाता है |
| ते | ६. | तुम्हारे | बृहत्, स्तन | ११. | बड़े-बड़े, स्तनों के |
| जयति | १०. | ठहरते हैं | भार, भीतम् | १२. | भार से, मानों डरा हुआ |
| शालिनि | १. | हे सुन्दरि ! | शान्ता | १७ | निरंकुश |
| पाद, पद्मम् | ७. | चरण, कमल | इव | १८. | सी (प्रतीत होती है) |
| घ्नन्त्या | ५. | मारते समय | दृष्टिः | १६. | दृष्टि |
| मुहुः | ४. | बार-बार | अमला | १५. | (तुम्हारी) निर्मल |
| करतलेन | २. | हथेली से | सु | २०. | बड़ा सुन्दर है |
| पतत्, पतङ्गम् । | ३. | उछलती, गेंद | शिखा समूहः ॥ | १९. | (तुम्हारा) केश-पाश |

श्लोकार्थ—हे सुन्दरि ! हथेली से उछलती गेंद बार-बार मारते समय तुम्हारे चरण-कमल एक-जगह नहीं ठहरते हैं; बड़े बड़े स्तनों के भार से मानों डरा हुआ तुम्हारा कटिभाग थक जाता है, तुम्हारी निर्मल दृष्टि निरंकुश-सी प्रतीत होती है तथा तुम्हारा केश-पाश बड़ा सुन्दर है।

## सप्तत्रिंश: श्लोक:

इति सायंतनीं सन्ध्यामसुराः प्रमदायतीम् ।
प्रलोभयन्तीं जगृहुर्मत्वा मूढधियः स्त्रियम् ।।३७।।

पदच्छेद--

इति सायंतनीम् सन्ध्याम्, असुराः प्रमदायतीम् ।
प्रलोभयन्तीम् जगृहुः, मत्वा मूढ धियः स्त्रियम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | प्रलोभयन्तीम् | ३. | मन को लुभाती हुई |
| सायंतनीम् | ४. | सायंकालीन | जगृहुः | ११. | (उसे) पकड़ लिया |
| सन्ध्याम् | ५. | सन्ध्या को | मत्वा | ७. | समझ कर |
| असुराः | १०. | असुरों ने | मूढ | ८. | मन्द |
| प्रमदायतीम् । | २. | कामुक स्त्री के समान आचरण करती हुई (तथा) | धियः | ९. | बुद्धि |
| | | | स्त्रियम् ।। | ६. | स्त्री |

श्लोकार्थ—इस प्रकार कामुक स्त्री के समान आचरण करती हुई तथा मन को लुभाती हुई सायंकालीन सन्ध्या को स्त्री समझकर मन्द-बुद्धि असुरों ने उसे पकड़ लिया ।

## अष्टात्रिंश: श्लोक:

प्रहस्य भावगम्भीरं जिघ्रन्त्यात्मानमात्मना ।
कान्त्या ससर्ज भगवान् गन्धर्वाप्सरसां गणान् ।।३८।।

पदच्छेद—

प्रहस्य भाव गम्भीरम्, जिघ्रन्त्या आत्मानम् आत्मना ।
कान्त्या ससर्ज भगवान्, गन्धर्व अप्सरसाम् गणान् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रहस्य | ३. | हँसकर | कान्त्या | ८. | कान्ति से |
| भाव | २. | भाव से | ससर्ज | १२. | उत्पन्न किया |
| गम्भीरम् | १. | (तदनन्तर) गम्भीर | भगवान् | ४. | ब्रह्मा जी ने |
| जिघ्रन्त्या | ७. | उपयोग करने वाली | गन्धर्व | ९. | गन्धर्वों और |
| आत्मानम् | ६. | अपना | अप्सरसाम् | १०. | अप्सराओं के |
| आत्मना । | ५. | स्वयम् | गणान् ।। | ११. | समूह को |

श्लोकार्थ—तदनन्तर गम्भीर भाव से हँसकर ब्रह्मा जी ने स्वयं अपना उपयोग करने वाली कान्ति से गन्धर्वों और अप्सराओं के समूह को उत्पन्न किया ।

# एकोनचत्वारिंश श्लोकः

विससर्ज तनुं तां वै ज्योत्स्नां कान्तिमतीं प्रियाम् ।
त एव चाददुः प्रीत्या विश्वावसुपुरोगमाः ।।३९।।

पदच्छेद—

विससर्ज तनुम् ताम् वैं, ज्योत्स्नाम् कान्तिमतीम् प्रियाम् ।
ते एव च आददुः प्रीत्या, विस्वावसु पुरोगमाः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विससर्ज | ६. | त्याग दिया | ते | ९. | उन |
| तनुम् | ५. | शरीर | एव | ११. | ही |
| ताम् | ३. | वह | च | १२. | उस शरीर को |
| वैं | ७. | उसके बाद | आददुः | १४. | ग्रहण कर लिया |
| ज्योत्स्नाम् | ४. | चन्द्रिका रूप | प्रीत्या | १३. | प्रसन्नता पूर्वक |
| कान्तिमतीम् | १. | कान्तिमयी (और) | विश्वावसु | ८. | विश्वासु इत्यादि |
| प्रियम् । | २. | बड़ी प्यारी | पुरोगमाः ।। | १०. | प्रधान गन्धर्वों ने |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने कान्तिमयी और बड़ी प्यारी वह चन्द्रिका रूप शरीर त्याग दिया। उसके बाद विश्वावसु इत्यादि उन प्रधान गन्धर्वों ने ही इस शरीर को प्रसन्नता-पूर्वक ग्रहण कर लिया।

# चत्वारिंशः श्लोकः

सृष्ट्वा भूतपिशाचांश्च भगवानात्मतन्द्रिणा ।
दिग्वाससो मुक्तकेशान् वीक्ष्य चामीलयद् दृशौ ।।४०।।

पदच्छेद—

सृष्ट्वा भूत पिशाचान् च, भगवान् आत्म तन्द्रिणा ।
दिग्वाससः मुक्त केशान्, वीक्ष्य च अमीलयत् दृशौ ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सृष्ट्वा | ७. | सृष्टि की | दिग्वाससः | ९. | दिगम्बर और |
| भूत | ४. | भूतों | मुक्त | ११. | बिखेरे |
| पिशाचान् | ६. | पिशाचों की | केशान् | १०. | बाल |
| च | ५. | और | वीक्ष्य | १२. | देखकर |
| भगवान् | १. | भगवान् ब्रह्मा जी ने | च | ८. | तथा (उन्हें) |
| आत्म | २. | अपनी | अमीलयत् | १४. | बन्द कर ली |
| तन्द्रिणा । | ३. | निद्रा से | दृशौ ।। | १३. | (अपनी) आँखें |

श्लोकार्थ—भगवान् ब्रह्मा जी ने अपनी निद्रा से भूतों और पिशाचों की सृष्टि की तथा इन्हें दिगम्बर और बाल बिखेरे देखकर अपनी आँखें बन्द कर ली।

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

जगृहुस्तद्विसृष्टां तां जृम्भणाख्यां तनुं प्रभोः ।
निद्रामिन्द्रियविक्लेदो यया भूतेषु दृश्यते ।
येनोच्छिष्टान्धर्षयन्ति तमुन्मादं प्रचक्षते ।।४१।।

पदच्छेद—

जगृहुः तद् विसृष्टाम् ताम्, जृम्भण आख्यम् तनुम् प्रभोः ।
निद्राम् इन्द्रिय विक्लेदा, यया भूतेषु दृश्यते ।
येन उच्छिष्टान् धर्षयन्ति, तम् उन्मादम् प्रचक्षते ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जगृहुः | ९. | ग्रहण कर लिया | विक्लेदः | १३. | शिथिलता |
| तद् | १. | उनसे | यया | १०. | जिससे |
| विसृष्टाम् | २. | छोड़े गये | भूतेषु | ११. | प्राणियों में |
| ताम् | ३. | उस | दृश्यते । | १४. | देखी जाती है (तथा) |
| जृम्भण | ५. | जम्भाई | येन | १५. | जिससे (भूत प्रेत) |
| आख्याम् | ६. | नामक | उच्छिष्टान् | १६. | जूठे मुँह सोये मनुष्य को |
| तनुम् | ८. | शरीर को (भूत-प्रेतों ने) | धर्षयन्ति | १७. | पीड़ित करते हैं |
| प्रभोः । | ७. | ब्रह्मा जी के | तम् | १८. | उसे |
| निद्राम् | ४. | निद्रारूप | उन्मादम् | १९. | उन्माद |
| इन्द्रिय | १२. | इन्द्रियों की | प्रचक्षते ।। | २०. | कहते हैं |

श्लोकार्थ—उनसे छोड़े गये इस निद्रारूप जम्भाई नामक ब्रह्मा जी के शरीर को भूत-प्रेतों ने ग्रहण कर लिया, जिससे प्राणियों में इन्द्रियों की शिथिलता देखी जाती है तथा जिससे भूत-प्रेत जूठे मुंह सोये मनुष्य को पीड़ित करते हैं; उसे उन्माद कहते हैं।

## द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

ऊर्जस्वन्तं मन्यमान आत्मानं भगवानजः ।
साध्यान् गणान् पितृगणान् परोक्षेणासृजत्प्रभुः ।।४२।।

पदच्छेद—

ऊर्जस्वन्तम् मन्यमानः, आत्मानम् भगवान् अजः ।
साध्यान् गणान् पितृगणान्, परोक्षेण असृजत् प्रभुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऊर्जस्वन्तम् | २. | तजोमय | साध्यान् गणान् | ८. | साध्यगणों (और) |
| मन्यमानः | ३. | समझते हुए | पितृगणान् | ९. | पितरों को |
| आत्मानम् | १. | अपने को | परोक्षेण | ७. | अदृश्य रूप से |
| भगवान् | ५. | भगवान् | असृजत् | १०. | उत्पन्न किया |
| अजः । | ६. | ब्रह्मा जी ने | प्रभुः ।। | ४. | सर्व-समर्थ |

श्लोकार्थ—तदनन्तर अपने को तेजोमय समझते हुये सर्व-समर्थ भगवान् ब्रह्मा जी ने अदृश्यरूप से साध्यगणों और पितरों को उत्पन्न किया ।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

त आत्मसर्गं तं कायं पितरः प्रतिपेदिरे ।
साध्येभ्यश्च पितृभ्यश्च कवयो यद्वितन्वते ॥४३॥

पदच्छेद—

ते आत्म सर्गम् तम् कायम्, पितरः प्रतिपेदिरे ।
साध्येभ्यः च पितृभ्यः च, कवयः यद् वितन्वते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ते | १. | उन साध्यों और | साध्येभ्यः | १०. | साध्यों |
| आत्म | ३. | अपने को | च | ११. | और |
| सर्गम् | ४. | उत्पन्न करने वाले | पितृभ्यश्च | १२. | पितरों को |
| तम् | ५. | उस अदृश्य | कवयः | ९. | विद्वान् लोग |
| कायम् | ६. | शरीर को | यद् | ८. | इसीलिए |
| पितरः | २. | पितरों ने | वितन्वते ॥ | १३. | ( हृव्य और कव्य ) प्रदान करते हैं |
| प्रतिपेदिरे । | ७. | ग्रहण कर लिया | | | |

श्लोकार्थ—उन साध्यों और पितरों ने अपने को उत्पन्न करने वाले उस अदृश्य शरीर को ग्रहण कर लिया, इसीलिए विद्वान् लोग साध्यों और पितरों को हृव्य और कव्य प्रदान करते हैं ।

## चतुश्चत्वारिंश श्लोकः

सिद्धान् विद्याधरांश्चैव तिरोधानेन सोऽसृजत् ।
तेभ्योऽददात्तमात्मानमन्तर्धानाख्यमद्भुतम् ॥४४॥

पदच्छेद—

सिद्धान् विद्याधरान् च एव, तिरोधानेन सः असृजत् ।
तेभ्यः अददात् तम् आत्मानम्, अन्तर्धान आख्याम् अद्भुतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सिद्धान् | ३. | सिद्धों | तेभ्यः | ८. | उन्हें |
| विद्याधरान् | ५. | विद्याधरों की | अददात् | १४. | प्रदान किया |
| च | ४. | और | तम् | १०. | वह |
| एव | ७. | तथा | आत्मानम् | ९. | अपना |
| तिरोधानेन | २. | तिरोधान शक्ति से | अन्तर्धान | ११. | अन्तर्धान |
| सः | १. | (तदनन्तर) ब्रह्मा जी ने | आख्यम् | १२. | नामक |
| असृजत् । | ६. | सृष्टि की | अद्भुतम् ॥ | १३. | अलौकिक |

श्लोकार्थ—तदनन्तर ब्रह्मा जी ने तिरोधान शक्ति से सिद्धों और विद्याधरों की सृष्टि की तथा उन्हें अपना वह अन्तर्धान नामक अलौकिक शरीर प्रदान किया ।

# पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

स किन्नरान् किम्पुरुषान् प्रत्यात्म्येनासृजत्प्रभुः ।
मानयन्नात्मनाऽऽत्मानमात्माभासं विलोकयन् ॥४५॥

पदच्छेद—

स किन्नरान् किम्पुरुषान्, प्रत्यात्म्येन असृजत् प्रभुः ।
मानयन् आत्मना आत्मानम्, आत्म आभासम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स | १०. | साथ-साथ | मानयन् | ७. | सुन्दर मानते हुये |
| किन्नरान् | १. | किन्नरों के | आत्मना | ५. | (उन्होंने) स्वयं |
| किम्पुरुषान् | ११ | किम्पुरुषों को | आत्मानम् | ६. | अपने को |
| प्रत्यात्म्येन | ८. | अपनी छाया से | आत्म. | २. | अपना |
| असृजत् | १२. | उत्पन्न किया | आभासम् | ३. | प्रतिबिम्ब |
| प्रभुः । | १. | ब्रह्मा जी ने (एकबार) | विलोकयन् ॥ | ४. | देखा (तदनन्तर) |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने एकबार अपना प्रतिबिम्ब देखा । तदनन्तर उन्होंने स्वयं अपने को सुन्दर मानते हुए अपनी छाया से किनरों के साथ-साथ किम्पुरुषों को उत्पन्न किया ।

# षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ते तु तज्जगृहू रूपं त्यक्तं यत्परमेष्ठिना ।
मिथुनीभूय गायन्तस्तमेवोषसि कर्मभिः ॥४६॥

पदच्छेद—

ते तु तद् जगृहुः रूपम्, त्यक्तम् यत् परमेष्ठिना ।
मिथुनीभूय गायन्तः, तम् एव उषसि कर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ते | २. | उन किम्पुरुषों ने | परमेष्ठिना । | ७. | ब्रह्मा जी ने |
| तु | १. | तदनन्तर | मिथुनीभूय | ६. | (अतः ये) युगल रूप में |
| तद् | ३. | वह | गायन्तः | १४. | गान करते हैं |
| जगृहुः | ५. | धारण कर लिया | तम् | १२. | उन ब्रह्मा जी का |
| रूपम् | ४. | रूप | एव | १३. | हरि |
| त्यक्तम् | ८. | छोड़ा था | उषसि | १०. | प्रातःकाल |
| यत् | ६. | जिसे | कर्मभिः ॥ | ११. | गान विद्या से |

श्लोकार्थ—तदनन्तर उन किम्पुरुषों ने वह रूप धारण कर लिया, जिसे ब्रह्माजी ने छोड़ा था । अतः ये युगलरूप में प्रातःकाल गान-विद्या से उन ब्रह्मा जी का ही गान करते हैं ।

# सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

देहेन वै भोगवता शयानो बहुचिन्तया ।
सर्गेऽनुपचित्ते क्रोधादुत्ससर्ज ह तद्वपुः ।।४७।।

पदच्छेद --

देहेन वै भोगवता शयानः बहु चिन्तया ।
सर्गे अनुपचित्ते क्रोधात् उत्ससर्ज ह तद् वपुः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देहेन | ३. | शरीर से | सर्गे | ६. | सृष्टि में |
| वै | ४. | ही | अनुपचित्ते | ७. | वृद्धि न देखकर |
| भोगवता | २. | भोगवान् | क्रोधात् | १०. | क्रुद्ध हुये (और) |
| शयानः | ५. | सोये हुये थे (वे) | उत्ससर्ज | १२. | छोड़ दिया |
| बहु | ८. | बहुत | ह | १. | एक बार ब्रह्मा जी |
| चिन्तया । | ९. | चिन्ता से | तद्, वपुः ।। | ११. | उस शरीर को |

श्लोकार्थ—एक बार ब्रह्मा जी भोगवान् शरीर से ही सोये हुये थे, वे सृष्टि में वृद्धि न देखकर बहुत चिन्ता से क्रुद्ध हुये और उस शरीर को छोड़ दिया ।

# अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

येऽहीयन्तामुतः केशा अह्यस्तेऽङ्ग जज्ञिरे ।
सर्पाः प्रसर्पतः क्रूरा नागा भोगोरु कन्धराः ।।४८।।

पदच्छेद—

ये अहीयन्त अमुतः केशा अह्यः ते अङ्ग जज्ञिरे ।
सर्पाः प्रसर्पतः क्रूरा नागा भोगः उरु कन्धरा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | ३. | जो | सर्पाः | ११. | सर्प (और) |
| अहीयन्त | ५. | नीचे गिरे | प्रसर्पतः | ९. | उन्हें सरकने के कारण |
| अमुतः | २. | उन ब्रह्मा जी के | क्रूरा | १०. | निर्दयी |
| केशाः | ४. | सिर के बाल | नागा | १२. | नाग कहते हैं |
| अह्यः | ७. | अहि | भोगः | १५. | फण होता है |
| ते | ६. | वे | उरु | १४. | विशाल |
| अङ्ग | १. | हे विदुर जी ! | कन्धरा | १३. | उनके कन्धे के पास |
| जज्ञिरे । | ८. | हुये | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उन ब्रह्मा जी के जो सिर केवल नीचे गिरे वे अहि हुये। उन्हें सरकने के कारण निर्दयी सर्प और नाग कहते हैं उनके कन्धे के पास विशाल फण होता है ।

## एकोनपञ्चाशः श्लोकः

स आत्मानं मन्यमानः कृतकृत्यमिवात्मभूः ।
तदा मनून् ससर्जान्ते मनसा लोकभावनान् ॥४६॥

पदच्छेद—

सः आत्मानम् मन्यमानः कृतकृत्यम् इव आत्मभूः ।
तदा मनून् ससर्ज अन्ते मनसा लोक भावनान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | १. वे | तदा | ७. उस समय |
| आत्मानम् | ३. अपने को | मनून् | ११. मनुओं को |
| मन्यमानः | ६. मानते हुये | ससर्ज | १२. उत्पन्न किया |
| कृतकृत्य | ४. कृतकृत्य | अन्ते | ८. अन्त में |
| इव | ५. सा | मनसा | ६. मन से |
| आत्मभूः । | २. ब्रह्मा जी | लोकभावनान् ॥ | १०. प्रजाओं की वृद्धि करने वाले |

श्लोकार्थ—वे ब्रह्मा जी अपने को कृत-कृत्य सा मानते हुये उस समय अन्त में मन से प्रजाओं की वृद्धि करने वाले मनुओं को उत्पन्न किया ।

## पञ्चाशः श्लोकः

तेभ्यःसोऽत्यसृजत्स्वीयं पुरं पुरुषमात्मवान् ।
तान् दृष्ट्वा ये पुरा सृष्टाः प्रशशंसुः प्रजापतिम् ॥५०॥

पदच्छेद—

तेभ्यः सः अत्यसृजत् स्वीयम् पुरम् पुरुषम् आत्मवान् ।
तान् दृष्ट्वा ये पुरा सृष्टाः प्रशशंसुः प्रजापतिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तेभ्यः | ३. उनके लिये | तान् | ८. उन्हें |
| सः | २. ब्रह्मा जी ने | दृष्ट्वा | ६. देख कर |
| अत्यसृजत् | ७. त्याग दिया | ये | १०. जो |
| स्वीयम् | ४. अपना | पुरा | ११. पहले |
| पुरम् | ६. शरीर | सृष्टाः | १२. उत्पन्न हुये थे (वे देवतादि) |
| पुरुषम् | ५. पुरुषाकार | प्रशंशसुः | १४. प्रशंसा करने लगे |
| आत्मवान् । | १. आत्मज्ञानी | प्रजापतिम् ॥ | १३. ब्रह्मा जी की |

श्लोकार्थ—आत्मज्ञानी ब्रह्मा जी ने उनके लिये अपना पुरुषाकार शरीर त्याग दिया । उन्हें देखकर जो पहले उत्पन्न हुये थे । वे देवतादि ब्रह्मा जी की प्रशंसा करने लगे ।

## एकपञ्चाशः श्लोकः

**अहो एतज्जगत्स्रष्टः सुकृतं बत ते कृतम् ।**
**प्रतिष्ठिताः क्रिया यस्मिन् साकमन्नमदामहे ॥५१॥**

पदच्छेद—

अहो एतत् जगत् स्रष्टः सुकृतम् बत ते कृतम् ।
प्रतिष्ठिताः क्रिया यस्मिन् साकम् अन्नम् अदामहे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहो | १. | हे | कृतम् । | ७. | कार्य |
| एतत् | ६. | यह | प्रतिष्ठिताः | १०. | प्रतिष्ठित है |
| जगत् | २. | विश्व विधाता | क्रिया | ९. | सारे कर्म |
| स्रष्टः | ३. | ब्रह्मा जी | यस्मिन् | ८. | जिन मनुष्यों में |
| सुकृतम् | ८. | बड़ा सुन्दर है | साकम् | ११. | उनके साथ हम अपना |
| बत | ४. | सौभाग्य से | अन्नम् | ११. | हविर्भोग |
| ते | ५. | आपका | अदामहे ॥ | १२. | प्राप्त करेंगे |

श्लोकार्थ—हे विश्व विधाता ब्रह्मा जी ! सौभाग्य से आपका यह कार्य बड़ा सुन्दर है । जिन मनुष्यों में सारे कर्म प्रतिष्ठित हैं । उनके साथ हम आपका हविर्भोग प्राप्त करेंगे ॥

## द्विपञ्चाशः श्लोकः

**तपसा विद्यया युक्तो योगेन सुसमाधिना ।**
**ऋषीन्ऋषिर्हृषीकेशः ससर्जाभिमताः प्रजाः ॥५२॥**

पदच्छेद—

तपसा विद्यया युक्तः योगेन सुसमाधिना ।
ऋषीन् ऋषिः हृषीकेशः ससर्ज अभिमताः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तपसा | ३. | तपस्या | ऋषीन् | १०. | ऋषियों को |
| विद्यया | ४. | विद्या | ऋषिः | २. | आद्य ऋषि ब्रह्मा जी ने |
| युक्तः | ७. | सम्पन्न होकर | हृषीकेशः | १. | (तदनन्तर) जितेन्द्रिय (और) |
| योगेन | ५. | योग (और) | ससर्ज | ११. | उत्पन्न किया |
| सुसमाधिना । | ६. | समाधि से | अभिमताः | ८. | अपनी प्रिय |
| | | | प्रजाः ॥ | ९. | सन्तान |

श्लोकार्थ—तदनन्तर जितेन्द्रिय और आद्य ऋषि ब्रह्मा जी ने तपस्या, विद्या, योग और समाधि से सम्पन्न होकर अपनी प्रिय सन्तान ऋषियों को उत्पन्न किया ।

## त्रिपञ्चाशः श्लोकः

तेभ्यश्चैकैकशः स्वस्य देहस्यांशमदादजः ।
यत्तत्समाधियोगर्द्धितपोविद्याविरक्तिमत् ॥५३॥

पदच्छेद—

तेभ्यः च एकैकशः स्वस्य देहस्य अंशम् अदात् अजः ।
यत् तत् समाधिः योग ऋद्धिः तपः विद्याविरक्तिमत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेभ्यः | २. | उनमें से | यत् | ८. | जो |
| च | १५. | और | तत् | ९. | वह |
| एकैकशः | ३. | प्रत्येक को | समाधिः | १०. | समाधि |
| स्वस्य | ४. | अपने | योग | ११. | योग |
| देहस्य | ५. | शरीर का | ऋद्धिः | १२. | ऐश्वर्य |
| अंशम् | ६. | अंश | तपः | १३. | तपस्या |
| अदात् | ७. | दिया | विद्या | १४. | विद्या |
| अजः । | १. | ब्रह्मा जी ने | विरक्तिमत् ॥ | १६. | वैराग्य से युक्त था |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने उनमें से प्रत्येक को अपने शरीर का अंश दिया । जो वह समाधि, योग, ऐश्वर्य, तपस्या, विद्या और वैराग्य से युक्त था ॥

इतिश्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे विंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२०॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भगवत महापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

एकविंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

विदुर उवाच—

**स्वायम्भुवस्य च मनोर्वंशः परमसम्मतः ।**
**कथ्यतां भगवन् यत्र मैथुनेनैधिरे प्रजाः ॥१॥**

पदच्छेद— स्वायम्भुवस्य च मनोः वंशः परम सम्मतः ।
कथ्यताम् भगवन् यत्र मैथुनेन एधिरे प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| स्वायम्भुवस्य | ५. स्वायम्भुव | कथ्यताम् | ८. कथा कहें |
| च | १. तथा | भगवन् | २. हे भगवन् ! |
| मनोः | ६. मनु के | यत्र | ९. जिसमें |
| वंशः | ७. वंश की | मैथुनेन | १०. मैथुन क्रिया से |
| परम | ३. अत्यन्त | एधिरे | १२. वृद्धि हुई थी |
| सम्मतः । | ४. आदरणीय | प्रजाः ॥ | ११. प्रजा की |

श्लोकार्थ—तथा हे भगवन् ! अत्यन्त आदरणीय स्वायम्भुव मनु के वंश की कथा कहें । जिसमें मैथुन क्रिया से प्रजा की वृद्धि हुई थी ॥

## द्वितीयः श्लोकः

**प्रियव्रतोत्तानपादौ सुतौ स्वायम्भुवस्य वै ।**
**यथा धर्मं जुगुपतुः सप्तद्वीपवतीम् महीम् ॥२॥**

पदच्छेद— प्रियव्रत उत्तानपादौ सुतौ स्वायम्भुवस्य वै ।
यथा धर्मम् जुगुपतुः सप्तद्वीपवतीम् महीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| प्रियव्रत | २. प्रियव्रत (और) | यथा | ७. अनुसार |
| उत्तानपादौ | ३. उत्तानपाद | धर्मम् | ६. (उन्होंने) धर्म के |
| सुतौ | ४. दो पुत्र | जुगुपतुः | १०. रक्षा की थी |
| स्वायम्भुवस्य | १. स्वायम्भुव मनु के | सप्तद्वीपवतीम् | ८. सात द्वीपों वाली |
| वै । | ५. उत्पन्न हुये थे | महीम् ॥ | ९. पृथ्वी की |

श्लोकार्थ—स्वायम्भुव मनु के प्रियव्रत और उत्तानपाद दो पुत्र उत्पन्न हुये थे । उन्होंने धर्म के अनुसार सात द्वीपों वाली पृथ्वी की रक्षा की थी ॥

## तृतीयः श्लोकः

तस्य वै दुहिता ब्रह्मन्देवहूतीति विश्रुता ।
पत्नी 'प्रजापतेरुक्ता कर्दमस्य त्वयानघ ॥३॥

पदच्छेद—

तस्य वै दुहिता ब्रह्मन् देवहूतीति विश्रुता ।
पत्नी प्रजापतेः उक्ता कर्दमस्य त्वया अनघ ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तस्य | ३. उनकी | पत्नी | १२. धर्मपत्नी |
| वै | ४. ही | प्रजापतेः | ११. प्रजापति की |
| दुहिता | ५. पुत्री | उक्ता | १३. बनाई है |
| ब्रह्मन् | १. हे ब्रह्मन् ! | कर्दमस्य | १०. कर्दम |
| देवहूति | ६. देवहूति | त्वया | ९. अपने |
| इति | ७. नाम से | अनघ ॥ | २. हे निष्पाप मैत्रेय जी ! |
| विश्रुता । | ८. विख्यात थी (जिसे) | | |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! हे निष्पाप मैत्रेय जी ! उनकी ही पुत्री देवहूति नाम से विख्यात थी। जिसे आपने कर्दम प्रजापति की धर्मपत्नी बनाई है ॥

## चतुर्थः श्लोकः

तस्यां स वै महायोगी युक्तायां योगलक्षणैः ।
ससर्ज कतिधा वीर्यं तन्मे शुश्रूषवे वद ॥४॥

पदच्छेद—

तस्यां स वै महायोगी युक्तायाम् योग लक्षणैः ।
ससर्ज कतिधा वीर्यम् तद् मे शुश्रूषवे वद ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तस्याम् | ६. उस देवहूति से | ससर्ज | ९. उत्पन्न की |
| सः वै | २. उन कर्दम जी ने | कतिधा | ७. कितनी |
| महायोगी | १. महायोगी | वीर्यम् | ८. सन्तानें |
| युक्तायाम् | ५. सम्पन्न | तद् | १०. उस कथा को |
| योग | ३. योग के | मे | १२. मुझे |
| लक्षणैः । | ४. लक्षणों से | शुश्रूषवे | ११. सुनने के इच्छुक |
| | | वद ॥ | १३. सुनाइये |

श्लोकार्थ—महायोगी उन कर्दम जी ने योग के लक्षणों से सम्पन्न उस देवहूति से कितनी सन्तानें उत्पन्न की। उस कथा को सुनने के इच्छुक मुझे सुनाइये ॥

## पञ्चमः श्लोकः

**रुचिर्यो भगवान् ब्रह्मन्दक्षो वा ब्रह्मणः सुतः।**
**यथा ससर्ज भूतानि लब्ध्वा भार्यां च मानवीम् ॥५॥**

पदच्छेद—

रुचिः यः भगवान् ब्रह्मन् दक्षः वा ब्रह्मणः सुतः।
यथा ससर्ज भूतानि लब्ध्वा भार्याम् च मानवीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| रुचिः | ४. रुचि थे | यथा | ११. जिस प्रकार |
| यः | २. जो | ससर्ज | १३. सृष्टि की |
| भगवान् | ३. भगवान् | भूतानि | १२. प्रजाओं की |
| ब्रह्मन् | १. हे मैत्रेय जी। | लब्ध्वा | १०. प्राप्त करके |
| दक्षः | ७. दक्ष प्रजापति थे (उन्हीं) | भार्याम् | ९. पत्नीरूप में |
| वा, ब्रह्मणः | ५. और (जो) ब्रह्मा जी के | च | १४. उसे बतावें |
| सुतः। | ६. पुत्र | मानवीम् ॥ | ८. मनु महाराज की कन्याओं को |

श्लोकार्थ—हे मैत्रेय जी ! जो भगवान् रुचि थे और जो ब्रह्मा जी के पुत्र दक्ष प्रजापति थे उन्होंने मनु महाराज की कन्याओं को पत्नीरूप में प्राप्त करके जिस प्रकार प्रजाओं की सृष्टि की, उसे बतावें ॥

## षष्ठः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

**प्रजाः सृजेति भगवान् कर्दमो ब्रह्मणोदितः।**
**सरस्वत्यां तपस्तेपे सहस्राणां समा दश ॥६॥**

पदच्छेद—

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| प्रजाः | १. प्रजाओं की | सरस्वत्याम् | १०. सरस्वती नदी के तीर पर |
| सृज | २. सृष्टि करो | तपः | ११. तपस्या का |
| इति | ३. ऐसा | तेपे | १२. अनुष्ठान किया |
| भगवान् | ५. भगवान् | सहस्राणाम् | ८. हज़ार |
| कर्दमः | ६. कर्दम जी ने | समाः | ९. वर्षों तक |
| ब्रह्मणः, उदितः | ४. ब्रह्मा जी से, आदेश पाकर | दश ॥ | ७. दस |

श्लोकार्थ—प्रजाओं की सृष्टि करो, ऐसा ब्रह्मा जी से आदेश पाकर भगवान् कर्दम जी ने दस हज़ार वर्षों तक सरस्वती नदी के तीर पर तपस्या का अनुष्ठान किया ॥

# सप्तमः श्लोकः

ततः समाधियुक्तेन क्रियायोगेन कर्दमः।
सम्प्रपेदे हरिं भक्त्या प्रपन्नवरदाशुषम् ॥७॥

पदच्छेद—

ततः समाधि युक्तेन क्रिया योगेन कर्दमः।
सम्प्रपेदे हरिम् भक्त्या प्रपन्न वरद आशुषम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | उसके वाद | सम्प्रपेदे | १२. | आराधना करने लगे |
| समाधिः | ३. | एकाग्र | हरिम् | ११. | भगवान् श्री हरि की |
| युक्तेन | ४. | मन से | भक्त्या | ७. | भक्ति के साथ |
| क्रिया | ५. | पूजन | प्रपन्न | ८. | शरणागतों को |
| योगेन | ६. | उपचार के द्वारा | वरद | ९. | वर |
| कर्दमः। | २. | कर्दम ऋषिः | आशुषम् ॥ | १०. | देने वाले |

श्लोकार्थ—उसके वाद कर्दम ऋषि एकाग्र मन से पूजन तथा उपचार के द्वारा भक्ति के साथ (शरणागतों को वर देने वाले) भगवान् श्री हरि की आराधना करने लगे ॥

# अष्टमः श्लोकः

तावत्प्रसन्नो भगवान् पुष्कराक्षः कृते युगे।
दर्शयामास तं क्षत्तः शाब्दं ब्रह्म दधद्वपुः ॥८॥

पदच्छेद—

तावत् प्रसन्नः भगवान् पुष्कराक्षः कृते युगे।
दर्शयामास तम् क्षत्तः शाब्दम् ब्रह्म दधत् वपुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तावत् | २. | उस तपस्या से | दर्शयामास | १२. | दर्शन दिया |
| प्रसन्नः | ३. | प्रसन्न होकर | तम् | ११. | उन्हें |
| भगवान् | ७. | भगवान् श्री हरि ने | क्षत्तः | १. | हे विदुर जी ! |
| पुष्कराक्षः | ६. | कमलनयन | शाब्दम् ब्रह्म | ८. | शब्द ब्रह्म का |
| कृते | ४. | सत्य | दधत् | १०. | धारण करके |
| युगे। | ५. | युग के प्रारम्भ में | वपुः ॥ | ९. | शरीर |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उस तपस्या से प्रसन्न होकर सत्य युग के प्रारम्भ में कमलनयन भगवान् श्री हरि ने शब्द ब्रह्म का शरीर धारण करके उन्हें दर्शन दिया ॥

## नवमः श्लोकः

स तं विरजमर्काभं सित पद्मोत्पलस्रजम् ।
स्निग्धनीलालकव्रातवक्त्राब्जं विरजोऽम्बरम् ॥६॥

पदच्छेद— सः तम् विरजम् अर्क आभम् सित पद्म उत्पल स्रजम् ।
स्निग्ध नील अलक व्रात वक्त्र अब्जम् विरजः अम्बरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १६. | उन्होंने (देखा) | स्निग्ध | ६. | चिकनी (और) |
| तम् | १५. | भगवान् के उस स्वरूप को | नील | १०. | नीली |
| विरजम् | १. | रजोगुण से रहित | अलक | ११. | अलकों की |
| अर्क | २. | सूर्य के समान | व्रात | १२. | अवलि वाले (तथा) |
| आभम् | ३. | प्रकाशमान | वक्त्र | ७. | मुख |
| शितपद्म | ४. | श्वेत, कमल (और) | अब्जम् | ८. | कमल पर |
| उत्पल | ५. | कुमुदों की | विरजः | १३. | निर्मल |
| स्रजम् । | ६. | माला पहने हुये | अम्बरम् ॥ | १४. | वस्त्र धारण किये हुये |

श्लोकार्थ—रजोगुण से रहित सूर्य के समान प्रकाशमान श्वेत, कमल और कुमुदों की माला पहने हुये, मुख कमल पर चिकनी और नीलों अलकों की अवलि वाले तथा निर्मल वस्त्र धारण किये हुये भगवान् के उस स्वरूप को उन्होंने देखा ॥

## दशमः श्लोकः

किरीटिनं कुण्डलिनं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
श्वेतोत्पलक्रीडनकं मनः स्पर्शस्मितेक्षणम् ॥१०॥

पदच्छेद— किरीटिनम् कुण्डलिनम् शङ्ख चक्र गदाधरम् ।
श्वेतउत्पलक्रीडनकम् मनः स्पर्श स्मितेक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किरीटिनम् | १. | (वे भगवान् मस्तक पर) मुकुट | श्वेत | ८. | सफेद |
| कुण्डलिनम् | २. | कानों में कुण्डल | उत्पल | ६. | कमल लिये थे (तथा उनकी) |
| शङ्ख | ३. | (हाथों में) शंख | क्रीडनकम् | ७. | क्रीडा के लिये |
| चक्र | ४. | चक्र (और) | मनः स्पर्श | १२. | मन को, छू रही थी |
| गदा | ५. | गदा | स्मित | १०. | मुसकान भरी |
| धरम् । | ६. | धारण किये हुये थे | इक्षणम् ॥ | ११. | चितवन |

श्लोकार्थ—वे भगवान् मस्तक पर मुकुट, कानों में कुण्डल, हाथों में शंख, चक्र और गदा धारण किये हुये थे । क्रीडा के लिये सफेद कमल लिये थे; तथा उनकी मुसकान भरी चितवन मन को छू रही थी ॥

## एकादशः श्लोकः

विन्यस्तचरणाम्भोजमंसदेशे गरुत्मतः ।
दृष्ट्वा खेऽवस्थितं वक्षःश्रियं कौस्तुभकन्धरम् ॥११॥

पदच्छेद—

विन्यस्त चरण अम्भोजम् अंस देशे गरुत्मतः ॥
दृष्ट्वा खे अवस्थितम् वक्षः श्रियम् कौस्तुभकन्धरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विन्यस्त | ६. | रखे हुये थे | दृष्ट्वा | १३. | उन भगवान् को देखा |
| चरण | १. | (वे भगवान् अपने) चरण | खे | ११. | (तथा) आकाश में |
| अम्भोजम् | २. | कमल को | अवस्थितम् | १२. | स्थित |
| अंस | ४. | कन्धे | वक्षः | ७. | वक्षः स्थल पर |
| देशे | ५. | पर | श्रियम् | ८ | लक्ष्मी जी को (और) |
| गरुत्मतः । | ३. | गरूड़ के | कौस्तुभ | १०. | कौस्तुभमणि को धारण किये हुये |
| | | | कन्धरम् ॥ | ९. | गले में |

श्लोकार्थ—वे भगवान् अपने चरण कमल को गरूड़ के कन्धे पर रखे हुये थे, वक्षः स्थल पर लक्ष्मी जी को और गले में कौस्तुभमणि को धारण किये हुये तथा आकाश में स्थित उन भगवान् को देखा ॥

## द्वादशः श्लोकः

जातहर्षोऽपतन् मूर्ध्ना क्षितौ लब्धमनोरथः ।
गीर्भिस्त्वभ्यगृणात्प्रीतिस्वभावात्मा कृताञ्जलिः ॥१२॥

पदच्छेद—

जात हर्षः अपतत् मूर्ध्ना क्षितौ लब्ध मनोरथः ।
गीर्भिः तु अभ्यगृणात् प्रीतिस्वभाव आत्मा कृत अञ्जलिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जात | २. | होकर (और) | गीर्भि | १३. | मधुर वचनों से |
| हर्षः | १. | कर्दम जी प्रसन्न | तु | ८. | तथा |
| अपतत् | ७. | साष्टांग प्रणाम किया | अभ्यगृणात् | १४. | स्तुति करने लगे |
| मूर्ध्ना | ६. | मस्तक रखकर | प्रीति | ९. | प्रेम |
| क्षितौ | ५. | पृथ्वी पर | स्वभाव | १०. | भरे |
| लब्ध | ३. | सफल | आत्मा | ११. | हृदय से |
| मनोरथः । | ४. | मनोरथ होकर के | कृत, अञ्जलिः ॥ | १२. | हाथ, जोड़कर |

श्लोकार्थ—कर्दम जी प्रसन्न होकर और सफल मनोरथ हो करके पृथ्वी पर मस्तक रखकर साष्टांग प्रणाम किया । तथा प्रेम भरे हृदय से हाथ जोड़ कर मधुर वचनों से स्तुति करने लगे ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

**जुष्टं बताद्याखिलसत्त्वराशेः, सांसिध्यमक्ष्णोस्तव दर्शनान्नः।**
**यद्दर्शनं जन्मभिरीड्य सद्भिराशासते योगिनो रूढयोगाः ॥१३॥**

पदच्छेद—जुष्टम् बत आद्य अखिल सत्त्वराशेः, सांसिध्यम् अक्ष्णोः तव दर्शनात् नः।
यद् दर्शनम् जन्मभिः ईड्य सद्भिः आशासते योगिनः रूढ योगाः॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जुष्टम् | ४. | आधार हैं | यद्, दर्शनम् | १६. | जिस आपके दर्शन की |
| बत | २. | सौभाग्य है (कि आप) | जन्मभिः | १३. | जन्म लेकर (तथा) |
| आद्य | ५. | आज | ईड्य | १. | प्रशंसनीय (हे परमेश्वर) |
| अखिल, सत्त्वराशेः | ३. | सम्पूर्ण, सत्त्वगुण के | सद्भिः | १२. | शुभ योनियों में |
| सांसिध्यम् | १०. | फल मिल गया | आशासते | १७. | इच्छा करते हैं |
| अक्ष्णोः | ९. | नेत्रों का | योगिनः | ११. | योगी लोग |
| तव, दर्शनात् | ७. | आपके दर्शन से | रूढ | १५. | स्थित होकर |
| नः। | ८. | हमें | योगः॥ | १४. | समाधि में |

श्लोकार्थ—प्रशंसनीय हे परमेश्वर! सौभाग्य है कि आप सम्पूर्ण सत्त्वगुण के आधार हैं। आज आपके दर्शन से हमें नेत्रों का फल मिल गया। योगी लोग शुभ योनियों में जन्म लेकर तथा समाधि में स्थित होकर जिस आपके दर्शन की इच्छा करते हैं॥

## चतुर्दशः श्लोकः

**ये मायया ते हतमेधसस्त्वत् पादारविंदं भवसिन्धुपोतम्।**
**उपासते कामालवाय तेषाम् रासीश कामान्निरयेऽपि ये स्युः ॥१४॥**

पदच्छेद— ये मायया ते हत मेधसः त्वत्, पादारविन्दम् भवसिन्धुपोतम्।
उपासते कामलवाय तेषाम् रासीश कामान् निरये अपि ये स्युः॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | १. | जो लोग (आपकी) | उपासते | ११. | आश्रय लेते हैं |
| मायया | २. | माया के कारण | काम | १०. | कामनाओं के लिये |
| ते | ४. | वे लोग | लवाय | ९. | तुच्छ |
| हत, मेधसः | ३. | मन्द बुद्धि हैं | तेषाम् | १६. | उन लोगों की |
| त्वत्, पाद | ७. | आपके, चरण | रासीश | १५. | हे परमेश्वर! आप |
| अरविन्दम् | ८. | कमल का | कामान् | १७. | कामनाओं को पूर्ण करते हैं |
| भवसिन्धु | ५. | संसार सागर को | निरये, अपि | १३. | नरक में, भी |
| पोतम्। | ६. | पार करने में जहाज रूप | ये | १२. | जो विषय सुख |
| | | | स्युः॥ | १४. | मिल जाते हैं |

श्लोकार्थ—जो लोग आपकी माया के कारण मन्द-बुद्धि हैं; वे लोग संसार सागर को पार करने में जहाज़ रूप आपके चरण कमल का तुच्छ कामनाओं के लिये आश्रय लेते हैं। जो विषय सुख नरक में भी मिल जाते हैं। परमेश्वर! आप उन लोगों की कामनाओं को पूर्ण करते हैं॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**तथा स चाहं परिवोढुकामः समानशीलां गृहमेधधेनुम् ।**
**उपेयिवान्मूलमशेषमूलं दुराशयः कामदुघाङ्घ्रिपस्य ॥१५॥**

पदच्छेद— तथा सः च अहम् परिवोढुः कामः समान शीलाम् गृहमेध धेनुम् ।
उपेयिवान् मूलम् अशेष मूलम्, दुराशयः कामदुघा अङ्घ्रिपस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तथा | ६. तथा (हे भगवन्) | | उपेयिवान् | १५. | शरण में आया हूँ |
| सः | ८. वही | | मूलम् | १४. | आपके चरणों की |
| च | २. और | | अशेष | १०. | सम्पूर्ण |
| अहम् | ६. मैं | | मूलम् | ११. | कामनाओं को देने वाले |
| परिवोढुः | ४. विवाह करना | | दुराशयः | ७. | कलुषित मन वाला |
| कामः | ५. चाहता हूँ | | कामदुघा | १२. | कल्पवृक्ष |
| समान, शीलाम् | १. अपने अनुकूल स्वभाव वाली | | अङ्घ्रिपस्य ॥ | १३. | वृक्ष के समान |
| गृहमेध, धेनुम् । | ३. गृहस्थ धर्म में सहायक (कन्या के साथ) | | | | |

श्लोकार्थ—अपने अनुकूल स्वभाव वाली और गृहस्थ धर्म में सहायक कन्या के साथ विवाह करना चाहता हूँ । तथा हे भगवन् । कुलषित मन वाला मैं सम्पूर्ण कामनाओं को देने वाले कल्पवृक्ष के समान आपके चरणों की शरण में आया हूँ ॥

## षोडशः श्लोकः

**प्रजापतेस्ते वचसाधीश तन्त्या, लोकः किलायं कामहतोऽनुबद्धः ।**
**अहं च लोकानुगतो वहामि, बलिं च शुक्लानिमिषाय तुभ्यम् ॥१६॥**

पदच्छेद— प्रजापतेः ते वचसा अधीश तन्त्या, लोकः किल अयम् कामहतः अनुबद्धः ।
अहम् च लोक अनुगतः वहामि बलिम् च शुक्ल अनिमिषाय तुभ्यम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| प्रजापतेः | ५. प्रजाओं के स्वामी | अहम् | १२. | मैं भी |
| ते, वचसा | ६. आपकी, वेद वाणी रूप | च लोक | १०. | उन्हीं लोगों का |
| अधीश | १. हे सर्वेश्वर ! | अनुगतः | ११. | अनुसरण करने वाला |
| तन्त्या | ७. डोरी से | वहामि | १६. | समर्पित करता हूँ |
| लोकः, किल | ४. संसार, निश्चय ही | बलिम्, च | १५. | पूजा, उपहार |
| अयम् | ३ यह | शुक्ल | ६. | हे धर्ममूर्ते ! |
| कामहतः | २. कामनाओं में फंसा हुआ | अनिमिषाय | १३. | काल रूप |
| अनुबद्धः । | ८. बंधा है | तुभ्यम् ॥ | १४. | आपको |

श्लोकार्थ—हे सर्वेश्वर ! कामनाओं में फंसा हुआ यह संसार निश्चय ही प्रजाओं के स्वामी आपकी वेद वाणी रूप डोरी से बंधा हैं हे धर्ममूर्ते ! उन्हीं लोगों का अनुसरण करने वाला मैं भी काल रूप आपको पूजा उपहार समर्पित करता हूँ ॥

## सप्तदशः श्लोकः

**लोकांश्च लोकानुगतान् पशूंश्च, हित्वा श्रितास्ते चरणातपत्रम् ।**
**परस्परं त्वद्गुणवादसीधुपीयूषनिर्यापितदेहधर्माः ॥१७॥**

पदच्छेद— लोकान् च लोक अनुगतान् पशून् च हित्वा श्रिताः ते चरण आतपत्रम् ।
परस्परम् त्वद् गुणवाद सीधु पीयूष निर्यापित देह धर्माः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लोकान् | १. | (आपके भक्त) विषयासक्त लोगों को | आतपत्रम् | ८. | छत्र छाया का |
| च | २. | और | परस्परम् | ११. | आपस में |
| लोक | ३. | उन लोगों का | त्वद् | १२. | आपके |
| अनुगतान् | ४. | अनुसरण करने वाले | गुणवाद | १३. | गुणगान रूपी |
| पशून् | ५. | पशु के समान (मुझ जैसों को) | सीधु | १४. | मादक |
| च | १०. | तथा | पीयूष | १५. | सुधा का पान करके |
| हित्वा | ६. | छोड़कर | निर्यापित | १८. | शान्त करते हैं |
| श्रिताः | ९. | आश्रय लेते हैं | देह | १६. | शरीर के |
| ते, चरणा | ७. | आपके चरणों की | धर्माः ॥ | १७. | भूख, प्यासादि धर्मों को |

श्लोकार्थ—आपके भक्त विषयासक्त लोगों को और उन लोगों के अनुसरण करने वाले पशु के समान मुझ जैसों को छोड़कर आपके चरणों की छत्र छाया का आश्रय लेते हैं। तथा आपस में आपके गुणगान रूपी मादक सुधा का पान करके शरीर के भूख प्यासादि धर्मों को शान्त करते हैं ॥

## अष्टदशः श्लोकः

**न तेऽजराक्षभ्रमिरायुरेषां, त्रयोदशारं त्रिशतं षष्ठिपर्व ।**
**षण्नेम्यनन्तच्छदि यत्त्रिणाभि, करालस्रोतो जगदाच्छिद्य धावत् ॥१८॥**

पदच्छेद— न ते अजर अक्षभ्रमिः आयुः एषाम् त्रयोदश अरम् त्रिशतम् षष्ठिपर्व ।
षट् नेमि अनन्त छदि यत् त्रिणाभिः, कराल स्रोतः जगत् आच्छिद्य धावत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १८. | नाश नहीं कर सकता है | षष्टि, पर्व | ६. | साठ, दिन रूप जोड़ों वाला |
| ते | १५. | आपके | षट्, नेमि | ७. | छः ऋतुयें रूप, घेरे वाला |
| अजर | १. | हे प्रभो ! साक्षात् ब्रह्मरूप | अनन्त, छदि | ८. | अनन्त क्षण रूप, धार वाला |
| अक्ष | ३. | धुरी वाला | यत् | ११. | जो काल चक्र है (वह) |
| भ्रमिः | २. | घूमने की | त्रिणाभिः, | ९. | तीनों चातुर्मास्य रूप नाभिवाला और |
| आयु | १७. | आयु का | कराल, स्त्रोतः | १०. | भयंकर वेग वाला |
| एषाम् | १६. | इन भक्तों की | जगत् | १२. | संसार के आयु का |
| त्रयोदश, अरम् | ४. | तेरह मास रूप, अरों वाला | आच्छिद्य | १३. | छेदन करता हुआ |
| त्रिशतम् | ५. | तीन सौ | धावत् ॥ | १४. | घूमता रहता है (किन्तु) |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! साक्षात् ब्रह्म रूप घूमने की धुरी वाला, तेरह मास रूप अरों वाला, तीन सौ साठ दिन रूप जोड़ों वाला छः ऋतुओं रूप घेरों वाला, अनन्त क्षण रूपधार वाला, तीनों चातुर्मास्य रूप नाभिवाला और भयंकर वेग वाला जो काल चक्र है, वह संसार की आयु का छेदन करता हुआ घूमता रहता है। किन्तु आपके भक्तों का आयु का नाश नहीं कर सकता है ॥

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

**एकः स्वयं सञ्जगतः सिसृक्षया, द्वितीययाऽऽत्मन्न धियोगमायया ।**
**सृजस्यदः पासि पुनर्ग्रसिष्यते, यथोर्णनाभिर्भगवन् स्वशक्तिभिः ॥१९॥**

पदच्छेद—एकः स्वयम् सन् जगतः सिसृक्षया, अद्वितीय या आत्मन् अधियोगमायया ।
सृजसि अदः पासि पुनः ग्रसिष्यते यथा उर्णनाभिः भगवन् स्वशक्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एकः | २. | अकेले ही | सृजसि | १५. | सृष्टि करते हैं |
| स्वयम् | ४. | अपने आप | अदः | १४. | इस जगत् |
| सन् | ३. | रहते हुये | पासि | १६. | रक्षा करते हैं |
| जगतः | ५. | संसार की | पुनः | १७. | और फिर |
| सिसृक्षया | ६. | सृष्टि करने की इच्छा से | ग्रसिष्यते | १८. | संहार करते हैं |
| अद्वितीयया | ७. | अपने से अभिन्न (और) | यथा | १३. | समान |
| आत्मन् | ८. | अपने में | उर्णनाभिः | १२. | मकड़ी के जाले के |
| अधि | ९. | विद्यमान | भगवन् | १. | हे प्रभो ! आप |
| योगमायया । | १०. | योग माया के द्वारा | स्वशक्तिभिः ॥ | ११. | अपनी शक्तियों से |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप अकेले ही रहते हुये अपने आप संसार की सृष्टि करने की इच्छा से अपने में विद्यमान योग माया के द्वारा अपनी शक्तियों से मकड़ी के जाले के समान इस जगत् की सृष्टि करते हैं रक्षा करते हैं, और फिर संहार करते हैं ।

# विंशः श्लोकः

**नैतद्व्रताधीश पदं तवेप्सितं, यन्मायया नस्तनुषे भूतसूक्ष्मम् ।**
**अनुग्रहायास्त्वपि यर्हि मायया, लसत् तुलस्या तनुवा विलक्षितः ॥२०॥**

पदच्छेद—न एतद् वत अधीश पदम् तव ईप्सितम्, यत् मायया नः तनुषे भूतसूक्ष्मम् ।
अनुग्रहाय अस्तु अपि यर्हि मायया, लसत् तुलस्या तनुवा विलक्षितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १६. | नहीं (हैं) | भूत | १०. | विषय |
| एतद्, वत् | १३. | वे; यद्यपि आप | सूक्ष्मम् | ११. | शब्दादि |
| अधीश | १. | हे प्रभो | अनुग्रहाय, अस्तु | १९. | मंगल के लिये, प्राप्त हों |
| पदम्, तव | १४. | विषय आपको | अपि | १७. | फिर भी (वे) |
| ईप्सितम् | १५. | पसन्द | यर्हि, मायया | २. | इस समय आप माया के द्वारा |
| यत् | ९. | जो | लसत् | ४. | मण्डित |
| मायया | ८. | माया के द्वारा | तुलस्या | ३. | तुलसी की माला से |
| नः | १८. | हमारे | तनुवा | ५. | शरीर से |
| तनुषे | १२. | प्रदान करते हैं | विलक्षितः ॥ | ६. | दर्शन दे रहे हैं ॥ |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! इस समय आप माया के द्वारा तुलसी की माला से मण्डित शरीर से दर्शन दे रहे हैं । यद्यपि आप माया के द्वारा जो विषय शब्दादि प्रदान करते हैं । वे विषय आपको पसन्द नहीं हैं । फिर भी वे हमारे मङ्गल के लिये प्राप्त हों ॥

## एकविंशः श्लोकः

तं त्वानुभूत्योपरतक्रियार्थं, स्वमायया वर्तितलोकतन्त्रम् ।
नमाम्यभीक्ष्णं नमनीयपाद सरोजमल्पीयसि कामवर्षम् ॥२१॥

पदच्छेद—

तम् त्वा अनुभूत्या उपरत क्रियार्थम् स्वमायया वर्तित लोक तन्त्रम् ।
नमामि अभीक्ष्णं नमनीय पाद सरोजम् अल्पीयसि काम वर्षम् ॥

शब्दार्थं—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | १३. | उन | नमामि | १६. | प्रणाम है |
| त्वा | १४. | आपको | अभीक्ष्णम् | १५. | बार-बार |
| अनुभूत्य | १. | हे प्रभो ! अनुभव के कारण | नमनीय | ७. | नमस्कार के योग्य |
| उपरत | ३. | शून्य | पाद | ८. | चरण |
| क्रियार्थम् | २. | क्रिया से | सरोजम् | ९. | कमल वाले (तथा) |
| स्व, मायया | ४. | अपनी, माया के द्वारा | अल्पीयसि | १०. | थोड़ी सेवा से ही |
| वर्तित | ६. | चलाने वाले | काम | ११. | मनोरथों की |
| लोकतन्त्रम् । | ५. | जगत् का व्यवहार | वर्षम् ॥ | १२. | पूर्ति करने वाले |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! अनुभव के कारण क्रिया से शून्य अपनी माया के द्वारा जगत् का व्यवहार चलाने वाले नमस्कार के योग्य चरण कमल वाले तथा थोड़ी सेवा से ही मनोरथों की पूर्ति करने वाले उन आपको बार-बार प्रणाम है ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

इत्यव्यलीकं प्रणुतोऽब्जनाभस्तमावभाषे वचसामृतेन ।
सुपर्णपक्षोपरि रोचमानः प्रेमस्मितोद्वीक्षणविभ्रमद्भ्रूः ॥२२॥

पदच्छेद— इति व्यलीकम् प्रणुतः अब्जनाभः तम् आबभाषे वचसा अमृतेन ।
सुपर्ण पक्ष उपरि रोचमानः प्रेमस्मित उद्वीक्षण विभ्रमत् भ्रूः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १०. | इस प्रकार | सुपर्ण | १. | गरुड के |
| व्यलीकम् | ११. | निष्कपट भाव से | पक्ष उपरि | २. | कन्धे के ऊपर |
| प्रणुतः | १२. | स्तुति करने पर | रोचमानः | ३. | विराजमान |
| अब्जनाभः | ९. | कमलनाभ (भगवान् श्रीहरि) | प्रेमस्मित | ४. | प्रणय पूर्ण |
| तम् | १३. | उन कर्दम जी से | उद्वीक्षण | ५. | मुसकान भरी |
| आबभाषे | १६. | बोले | विभ्रमत् | ६. | चितवन से |
| वचसा | १५. | वाणी में | भ्रूः ॥ | ७. | चञ्चल |
| अमृतेन । | १४. | अमृतमयी | | | भौंहों वाले |

श्लोकार्थ—गरुड़ के कन्धे के ऊपर विराजमान प्रणय पूर्ण मुसकान भरी चितवन से चञ्चल भौंहों वाले कमलनाभ भगवान् श्री हरि इस प्रकार निष्कपट भाव से स्तुति करने पर उन कर्दम जी से अमृतमयी वाणी बोले ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

विदित्वा तव चैत्यं मे पुरैव समयोजि तत् ।
यदर्थमात्मनियमैस्त्वयैवाह समर्चितः ॥२३॥

पदच्छेद—

विदित्वा तव चैत्यम् मे पुरा एव समयोजि तत् ।
यदर्थम् आत्म नियमैः त्वया एव अहम् समर्चितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विदित्वा | १०. | जानकर | यदर्थम् | १. | जिस कामना के लिये |
| तव | ८. | तुम्हारे | आत्म | ३. | आत्मा का |
| चैत्यम् | ९. | मन की बात को | नियमैः | ४. | संयम करके |
| मे | ११. | मैंने | त्वया | २. | तुमने |
| पुरा | १२. | पहले से | एव | ६. | ही |
| एव | १३. | ही | अहम् | ५. | मेरी |
| समयोजि | १५. | व्यवस्था कर रखी है | समर्चितः ॥ | ७. | आराधना की है |
| तत् । | १४. | उसकी | | | |

श्लोकार्थ—जिस कामना के लिये तुमने आत्मा का संयम करके मेरी ही आराधना की है । तुम्हारे मन की बात को जानकर मैंने पहले से ही उसकी व्यवस्था कर रखी है ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

न वै जातु मृषैव स्यात्प्रजाध्यक्ष मदर्हणम् ।
भवद्विधेष्वतितरां मयि संगृभितात्मनाम् ॥२४॥

पदच्छेद—

न वै जातु मृषा एव स्यात् प्रजा अध्यक्ष मद् अर्हणम् ।
भवद् विधेषु अतितराम् मयि संगृभित आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न वै | १३, ११. | न भी | मद् अर्हणम् । | ९. | मेरी पूजा |
| जातु | १०. | कभी | भवद् | ७. | आपके |
| मृषा | १२. | निष्फल | विधेषु | ८. | जैसे (भक्तों से की गई) |
| एव | १४. | ही | अतितराम् | ४. | अत्यन्त |
| स्यात् | १५. | हो सकती है | मयि | ३. | मेरे प्रति |
| प्रजा | १. | हे प्रजाओं के । | संगृभित | ५. | समर्पण का |
| अध्यक्ष | २. | प्रजापति | आत्मनाम् ॥ | ६. | भाव रखने वाले |

श्लोकार्थ—हे प्रजाओं के प्रजापति ! मेरे प्रति अत्यन्त समर्पण का भाव रखने वाले आपके जैसे भक्तों से की गई मेरी पूजा कभी भी निष्फल नहीं हो सकती है ॥

प्रजापतिसुतः सम्राण्मनुर्विख्यातमङ्गलः ।
ब्रह्मावर्तं योऽधिवसन् शास्ति सप्तार्णवां महीम् ॥२५॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

पदच्छेद—

प्रजापतिः सुतः सम्राट् मनुः विख्यात मङ्गलः ।
ब्रह्मावर्तम् यः अधिवसन् शास्ति सप्त अर्णवाम् महीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतिः | १. | ब्रह्मा जी के | ब्रह्मावर्तम् | ८. | ब्रह्मावर्त में |
| सुतः | २. | पुत्र | यः | ७. | जो |
| सम्राट् | ३. | महाराज | अधिवसन् | ९. | रहते हुये |
| मनुः | ४. | वैवस्वत मनु | शास्ति | १२. | शासन करते हैं |
| विख्यात | ५. | प्रसिद्ध | सप्त अर्णवाम् | १०. | सात समुद्रों वाली |
| मङ्गल । | ६. | यशवाले हैं | महीम् ॥ | ११. | पृथ्वी पर |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी के पुत्र महाराज वैवस्वत मनु प्रसिद्ध यश वाले हैं । जो ब्रह्मावर्त में रहते हुये सात समुद्रों वाली पृथ्वी पर शासन करते हैं ॥

## षड्विंशः श्लोकः

स चेह विप्र राजर्षिर्महिष्या शतरूपया ।
आयास्यति दिदृक्षुस्त्वां परश्वो धर्मकोविदः ॥२६॥

पदच्छेद—

सः च इह विप्र राजर्षिः महिष्या शतरूपया ।
आयास्यति दिदृक्षुः त्वाम् परश्वः धर्म कोविदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ५. | वे | आयास्यति | १३. | आयेंगे |
| च | १. | तथा | दिदृक्षुः | १२. | देखने के लिये |
| इह | ९. | यहाँ | त्वाम् | ११. | आपको |
| विप्र | २. | हे महर्षि कर्दम जी ! | परश्वः | १०. | परसों |
| राजर्षिः | ६. | राजर्षि | धर्म | ३. | धर्मों के |
| महिष्या | ७. | महारानी | कोविदः ॥ | ४. | जानकार |
| शतरूपया । | ८. | शतरूपा के साथ | | | |

श्लोकार्थ—तथा हे महर्षि कर्दम जी ! धर्मों के जानकार वे राजर्षि महारानी शतरूपा के साथ यहाँ परसों आपको देखने के लिये आयेंगे ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

आत्मजामसितापाङ्गीं वयःशीलगुणान्विताम् ।
मृगयन्तीं पतिं दास्यत्यनुरूपाय ते प्रभो ॥२७॥

पदच्छेद—

आत्मजाम् असित अपाङ्गीम् वयः शील, गुण अन्विताम् ।
मृगयन्तीम् पतिम् दास्यति अनुरूपाय ते प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मजाम् | ९. | अपनी कन्या का | मृगयन्तीम् | ८. | योग्य |
| असित | २. | श्याम | पतिम् | ७. | विवाह के |
| अपाङ्गीम् | ३. | लोचनों वाली | दास्यति | १२. | करेंगे |
| वयः | ४. | रूप | अनुरूपाय | १०. | सर्वथा (अनुरूप) |
| शील, गुण | ५. | चरित्र (और) सदगुणों से | ते | ११. | आपके साथ विवाह |
| अन्विताम् । | ६. | सम्पन्न (तथा) | प्रभो ॥ | १. | हे कर्दम जी ! (वे महाराज मनु) |

श्लोकार्थ—हे कर्दम जी ! वे महाराज मनु श्यामलोचनों वाली रूप चरित और सदगुणों से सम्पन्न तथा विवाह के योग्य अपनी कन्या का सर्वथा अनुरूप आपके साथ विवाह करेंगे ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

समाहितं ते हृदयं यत्रेमान् परिवत्सरान् ।
सा त्वां ब्रह्मन्नृप वधूः काममाशु भजिष्यति ॥२८॥

पदच्छेद—

समाहितम् ते हृदयम् यत्र इमान् परिवत्सरान् ।
सा त्वाम् ब्रह्मन् नृपवधूः कामम् आशु भजिष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| समाहितम् | ७. | चाह रहा है (वह) | सा | ८. | वह |
| ते | ४. | आपका | त्वाम् | १२. | आपको |
| हृदयम् | ५. | हृदय | ब्रह्मन् | १. | हे ब्रह्मन् ! |
| यत्र | ६. | जैसी (कन्या को) | नृपवधूः | ९. | राजकुमारी |
| इमान् | २. | अनेकों | कामम् | १३. | इच्छानुसार |
| परिवत्सरान् । | ३. | वर्षों से | आशु | ११. | शीघ्र ही |
| | | | भजिष्यति ॥ | १४. | सेवा करेगी |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! अनेकों वर्षों से आपका हृदय जैसी कन्या को चाह रहा है । वह राजकुमारी शीघ्र ही आपको इच्छानुसार सेवा करेगी ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**या त आत्मभृतं वीर्यं नवधा प्रसविष्यति ।**
**वीर्ये त्वदीये ऋषय आधास्यन्त्यञ्जसाऽऽत्मनः ॥२९॥**

पदच्छेद—

या ते आत्म भृतम् वीर्यम् नवधा प्रसविष्यति ।
वीर्ये त्वदीये ऋषयः आधास्यन्ति अञ्जसा आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| या | १. | जो (राज कुमारी) | वीर्ये | १०. | कन्याओं के द्वारा |
| ते | ४. | आपके | त्वदीये | ९. | आपकी (उन) |
| आत्म | २. | अपने | ऋषयः | ८. | मरीचि आदि ऋषिगण |
| भृतम् | ३. | गर्भ में धारण किये गये | आधास्यन्ति | १३. | उत्पन्न करेंगे |
| वीर्यम् | ५. | वीर्य से | अञ्जसा | ११. | सरलता से |
| नवधा | ६. | नौ कन्यायें | आत्मनः ॥ | १२. | पुत्र |
| प्रसविष्यति | ७. | उत्पन्न करेगी (तदनन्तर) | | | |

श्लोकार्थ—जो राजकुमारी अपने गर्भ में धारण किये गये आपके वीर्य से नौ कन्यायें उत्पन्न करेगी । तदन्तर मरीचि आदि ऋषिगण आपकी उन कन्याओं के द्वारा सरलता से पुत्र उत्पन्न करेंगें ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**त्वं च सम्यगनुष्ठाय निदेशं म उशत्तमः ।**
**मयि तीर्थीकृताशेष क्रियार्थो मां प्रपत्स्यसे ॥३०॥**

पदच्छेद—

त्वम् च सम्यक् अनुष्ठाय निदेशम् मे उशत्तमः ।
मयि तीर्थीकृत अशेष क्रियार्थाः माम् प्रपत्स्यसे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम् | २. | आप | मयि | १०. | मुझे |
| च | १. | तथा | तीर्थीकृत | ११. | समर्पित करके |
| समयक् | ५. | भली भाँति | अशेष | ८. | सम्पूर्ण |
| अनुष्ठाय | ६. | पालन करने से | क्रियार्थाः | ९. | क्रियाओं का फल |
| निदेशम् | ४. | आज्ञा का | माम् | १२. | मुझे |
| मे | ३. | मेरी | प्रपत्स्यसे ॥ | १३. | प्राप्त हो जाओगे |
| उशत्तमः । | ७. | शुद्ध चित्त होकर | | | |

श्लोकार्थ—तथा आप मेरी आज्ञा का भली भाँति पालन करने से शुद्ध चित्त होकर सम्पूर्ण क्रियाओं का फल मुझको समर्पित करके मुझे प्राप्त हो जाओगे ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

कृत्वा दयां च जीवेषु दत्त्वा चाभयमात्मवान् ।
मय्यात्मानं सह जगद् द्रक्ष्यस्यात्मनि चापि माम् ॥३१॥

पदच्छेद—

कृत्वा दयाम् च जीवेषु दत्त्वा च अभयम् आत्मवान् ।
मयि आत्मानम् सह जगत् द्रक्ष्यसि आत्मनि च अपि माम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृत्वा | ४. | करके | मयि | ९. | मेरे में |
| दयाम् | ३. | दया | आत्मानम् | १०. | अपने |
| च | १. | तथा (आप) | सह | ११. | साथ |
| जीवेषु | २. | जीवों पर | जगत् | १२. | सारे संसार को |
| दत्त्वा | ८. | देकर | द्रक्ष्यसि | १६. | देखोगे |
| च | ६. | और | आत्मनि | १३. | अपने |
| अभयम् | ७. | अभय | च | १३. | और |
| आत्मवान् । | ५. | आत्मा का ज्ञान (प्राप्त करके) | अपि | १५. | भी |
| | | | माम् ॥ | १४. | मुझे |

श्लोकार्थ—तथा आप जीवों पर दया करके आत्मा का ज्ञान प्राप्त करके और अभय देकर मेरे में अपने साथ सारे संसार को और अपने में मुझे भी देखोगे ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

सहाहं स्वांशकलया त्वद्वीर्येण महामुने ।
तव क्षेत्रे देवहूत्यां प्रणेष्ये तत्त्वसंहिताम् ॥३२॥

पदच्छेद—

सह अहम् स्व अंशकलया त्वद् वीर्येण महामुने ।
तव क्षेत्रे देवहूत्याम् प्रणेष्ये तत्त्व संहिताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सह | १०. | अवतार लेकर | तव | ४. | आपकी |
| अहम् | ७. | मैं | क्षेत्रे | ५. | धर्म पत्नी |
| स्व | ८. | अपने | देवहूत्याम् | ६. | देवहूति के गर्भ से |
| अंशकलया | ९. | अंशकला रूप में | प्रणेष्ये | १३. | रचना करूँगा |
| त्वद् वीर्येण | २. | आपके, वीर्य से | तत्त्व | ११. | पच्चीस तत्त्वों को बताने वाले |
| महामुने । | १. | हे कर्दम जी ! | संहिताम् ॥ | १२. | सांख्यशास्त्र की |

श्लोकार्थ—हे कर्दम जी ! आपके वीर्य से आपकी धर्म पत्नी देवहूति के गर्भ से मैं अपने अंशकला रूप में अवतार लेकर पच्चीस तत्त्वों को बताने वाले सांख्य शास्त्र की रचना करूँगा ।

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एवं तमनुभाष्याथ भगवान् प्रत्यगक्षजः ।
जगाम बिन्दुसरसः सरस्वत्या परिश्रितात् ॥३३॥

पदच्छेद—

एवम् तम् अनुभाष्य अथ भगवान् प्रत्यक् अक्षजः ।
जगाम बिन्दुः सरसः सरस्वत्या परिश्रितात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ५. | इस प्रकार | अक्षजः । | २. | कमल नयन |
| तम् | ४. | उन कर्दम जी से | जगाम | १२. | चले गये |
| अनुभाष्य | ६. | कहकर | बिन्दुः | १०. | बिन्दु |
| अथ | ७. | उसके बाद | सरसः | ११. | सरोवर से (अपने लोक को) |
| भगवान् | ३. | भगवान् श्रीहरि | सरस्वत्या | ८. | सरस्वती नदी से |
| प्रत्यग् | १. | अन्तः आत्मा | परिश्रितात् ॥ | ९. | घिरे हुये |

श्लोकार्थ—अन्तः आत्मा भगवान् श्रीहरि उन कर्दम जी से इस प्रकार कह कर उसके बाद सरस्वती नदी से घिरे हुये बिन्दु सरोवर से अपने लोक को चले गये ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

निरीक्षतस्तस्य ययावशेषसिद्धेश्वराभिष्टुतसिद्धमार्गः ।
आकर्णयन् पत्ररथेन्द्रपक्षैरुच्चारितं स्तोममुदीर्णसाम ॥३४॥

पदच्छेद—

निरीक्षतः तस्य ययौ अशेष सिद्धेश्वर अभिष्टुत सिद्ध मार्गः ।
आकर्णयन् पत्ररथेन्द्र पक्षैः उच्चारितम् स्तोमम् उदीर्ण साम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निरीक्षतः | १३. | देखते-देखते | आकर्णयन् | ११. | सुनते हुये |
| तस्य | १२. | उन कर्दम जी के | पत्ररथेन्द्र | ५. | गरुड़ के |
| ययौ | १४. | अपने लोक चले गये | पक्षैः | ६. | पंखों से |
| अशेष | १. | सभी | उच्चारितम् | ७. | निकलती हुई |
| सिद्धेश्वर | २. | योगिराजों से | स्तोमम् | १०. | ऋचाओं की |
| अभिष्टुत | ३. | प्रसंशित | उदीर्ण | ९. | गाये जाने वाली |
| सिद्धमार्गः । | ४. | बैकुण्ठ लोक के स्वामी (वे भगवान्) | साम ॥ | ८. | साम गान की |

श्लोकार्थ—सभी योगिराजों से प्रशंसित वैकुण्ठ लोक के स्वामी भगवान् गरुड़ के पंखों से निकलती हुई साम गान की गाये जाने वाली ऋचाओं को सुनते हुये उन कर्दम जी के देखते-देखते अपने लोक को चले गये ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

**अथ सम्प्रस्थिते शुक्ले कर्दमो भगवानृषिः ।**
**आस्ते स्म बिन्दुसरसि तं कालं प्रतिपालयन् ॥३५॥**

पदच्छेद—

अथ सम्प्रस्थिते शुक्ले कर्दमः भगवान् ऋषिः ।
आस्ते स्म बिन्दुसरसि तम् कालम् प्रतिपालयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर | आस्ते स्म | ११. | निवास करने लगे |
| सम्प्रस्थिते | ३. | चले जाने पर | बिन्दुसरसि | १०. | बिन्दुसर तीर्थ में |
| शुक्ले | २. | भगवान् श्री हरि के | तम् | ७. | उस |
| कर्दमः | ५. | कर्दम | कालम् | ८. | समय की |
| भगवान् | ४. | भगवान् | प्रतिपालयन् ॥ | ९. | प्रतीक्षा करते हुये |
| ऋषिः । | ६. | ऋषि | | | |

श्लोकार्थ—तदन्तर भगवान् श्री हरि के चले जाने पर भगवान् कर्दम ऋषि उस समय की प्रतीक्षा करते हुये बिन्दुसर तीर्थ में निवास करने लगे ॥

## षट्त्रिंशः श्लोकः

**मनुः स्यन्दनमास्थाय शातकौम्भपरिच्छदम् ।**
**आरोप्य स्वां दुहितरं सभार्यः पर्यटन्महीम् ॥३६॥**

पदच्छेद—

मनुः स्यन्दनम् आस्थाय शातकौम्भ परिच्छदम् ।
आरोप्य स्वाम् दुहितरम् सभार्यः पर्यटन् महीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनुः | १. | महाराज मनुः | आरोप्य | ९. | बैठाकर |
| स्यन्दनम् | ५. | रथ पर | स्वाम् | ७. | अपनी |
| आस्थाय | ६. | बैठकर (तथा) | दुहितरम् | ८. | पुत्री को (साथ) |
| शातकौम्भ | ३. | सुवर्ण से | सभार्यः | २. | अपनी पत्नी के साथ |
| परिच्छदम् ॥ | ४. | मढ़े हुये | पर्यटन् | ११. | घूमने लगे |
| | | | महीम् ॥ | १०. | पृथ्वी पर |

श्लोकार्थ—महाराज मनुः अपनी पत्नी के साथ सुवर्ण से मढ़े हुये रथ पर बैठकर तथा अपनी पुत्री को साथ बैठाकर पृथ्वी पर घूमने लगे ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

**तस्मिन् सुधन्वन्नहनि भगवान् यत्समादिशत् ।**
**उपायादाश्रमपदं मुनेः शान्तव्रतस्य तत् ॥३७॥**

पदच्छेद—

तस्मिन् सुधन्वन् अहनि भगवान् यत् समादिशत् ।
उपायात् आश्रम पदम् मुनेः शान्त व्रतस्य तत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मिन् | ५. | उस | उपायात् | १२. | पहुँचे |
| सुधन्वन् | १. | हे वीरवर ! | आश्रम पदम् | ११. | आश्रम में |
| अहनि | ६. | दिन (महाराज मनु) | मुनेः | ९. | मुनि कर्दम जी के |
| भगवान् | २. | भगवान् श्री हरि ने | शान्त | ७. | शान्ति |
| यत् | ३. | जैसा | व्रतस्य | ८. | परायण |
| समादिशत् । | ४. | वताया था । | तत् ॥ | १०. | उस |

श्लोकार्थ—हे वीरवर ! भगवान् श्री हरि ने जैसा वताया था उस दिन महाराज मनु शान्ति परायण मुनि कर्दम जी के उस आश्रम में पहुँचे ॥

## अष्टत्रिंशः श्लोकः

**यस्मिन् भगवतो नेत्रान्न्यपतन्नश्रुबिन्दवः ।**
**कृपया सम्परीतस्य प्रपन्नेऽर्पितया भृशम् ॥३८॥**

पदच्छेद—

यस्मिन् भगवतः नेत्रात् न्यपतन् अश्रुबिन्दवः ।
कृपया सम्परीतस्य प्रपन्ने अर्पितया भृशम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यस्मिन् | १. | जिस (तीर्थ) में | कृपया | ४. | कृपा भाव से |
| भगवतः | ७. | भगवान् की | सम्परीतस्य | ६. | विभोर हुये |
| नेत्रात् | ८. | आँखों से | प्रपन्ने | २. | शरणावातर (कर्दम) के प्रति |
| न्यपतत् | १०. | गिरी थीं | अर्पितया | ३. | उत्पन्न |
| अश्रुबिन्दवः । | ९. | आँसुओं की बूंदे | भृशम् ॥ | ५. | अत्यन्त |

श्लोकार्थ—जिस तीर्थ में शरणागत कर्दम के प्रति उत्पन्न कृपा भाव से अत्यन्त विभोर हुये भगवान् की आँखों से आँसू की बूंदे गिरीं थी ॥

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

**तद्वै बिन्दुसरो नाम सरस्वत्या परिप्लुतम् ।**
**पुण्यं शिवामृतजलं महर्षिगणसेवितम् ॥३९॥**

पदच्छेद—

तद् वै बिन्दुसरः नाम सरस्वत्या परिप्लुतम् ।
पुण्यम् शिव अमृत जलम् महर्षिगण सेवितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तद् वै | ३. वही | | पुण्यम् | ७. पवित्र |
| बिन्दुसरः | ४. बिन्दुसर | | शिव अमृत | ८. शीतल और मधुर है (तथा) |
| नाम | ५. नाम का (तीर्थ है) | | जलम् | ६. जिसका जल |
| सरस्वत्या | १. सरस्वती नदी से | | महर्षिगण | ९. ऋषियों का समुदाय उसका |
| परिप्लुतम् | २. घिरा हुआ | | सेवितम् ॥ | १०. सदा सेवन करता है |

श्लोकार्थ—सरस्वती नदी से घिरा हुआ वही बिन्दुसर नाम का तीर्थ है । जिसका जल पवित्र शीतल और मधुर है । तथा ऋषियों का समुदाय उसका सदा सेवन करता है ।

# चत्वारिंशः श्लोकः

**पुण्यद्रुमलताजालैः कूजत्पुण्यमृगद्विजैः ।**
**सर्वर्तुफलपुष्पाढ्यं वनराजिश्रियान्वितम् ॥४०॥**

पदच्छेद—

पुण्यद्रुम लता जालैः कूजत् :पुण्य मृग द्विजैः ।
सर्व ऋतु फल पुष्प आढ्यम् वनराजि श्रिया अन्वितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पुण्य | १. वह तीर्थ पवित्र | | सर्व | ९. सभी |
| द्रुम | २. वृक्षों (और) | | ऋतु | १०. ऋतुओं के |
| लता | ३. लताओं के | | फल | ११. फलों और |
| जालैः | ४. समूह से | | पुष्प | १२. पुष्पों से |
| कूजत् | ७. चहचहाते हुये | | आढ्यम् | १३. सम्पन्न |
| पुण्य | ५. मंगलमय | | वनराजि | १४. वन पंक्तियों की |
| मृग | ६. पशुओं (और) | | श्रिया | १५. शोभा से |
| द्विजैः । | ८. पक्षियों से (एवम्) | | अन्वितम् ॥ | १६. सुशोभित था |

श्लोकार्थ—वह तीर्थ पवित्र वृक्षों और लताओं के समूह से मंगलमय पशुओं और पक्षियों से एवम् सभी ऋतुओं के फलों और पुष्पों से सम्पन्न वन पंक्तियों की शोभा से सुशोभित था ॥

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

**मत्तद्विजगणैर्घुष्टं मत्तभ्रमरविभ्रमम् ।**
**मत्तबर्हिनटाटोपमाह्वयन्मत्तकोकिलम् ॥४१॥**

पदच्छेद—

**मत्त द्विज गणैः घुष्टम् मत्त भ्रमर विभ्रमम् ।**
**मत्त बर्हि नटा आटोपम् आह्वयन् मत्त कोकिलम् ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| मत्त | १. उस तीर्थ में मतवाले | | मत्त | ८. मतवाले |
| द्विज | २. पक्षियों के | | बर्हि | ९. मोर |
| गणैः | ३. झुण्डों का | | नटा | १०. नट के समान |
| घुष्टम् | ४. कलरव व्याप्त था | | आटोपम् | ११. नाच रहे थे (तथा) |
| मत्त | ५. मतवाले | | आह्वयन् | १४. कुहु-कुहु कर रही थी |
| भ्रमर | ६. भौंरे | | मत्त | १२. मतवाली |
| विभ्रमम् । | ७. गुन्जार कर रहे थे | | कोकिलम् ॥ | १३. कोयल |

श्लोकार्थ—उस तीर्थ में मतवाले पक्षियों के झुन्डों का कलरव व्याप्त था मतवाले भौंरे गुन्जार कर रहे थे तथा मतवाली कोयल कुहु-कुहु कर रही थी ।

# द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

**कदम्बचम्पकाशोककरञ्जबकुलासनैः ।**
**कुन्दमन्दारकुटजैश्चूतपोतैरलङ्कृतम् ॥४२॥**

पदच्छेद—

**कदम्ब चम्पक अशोक करञ्ज बकुल आसनैः ।**
**कुन्द मन्दार कुटजैः चूत पोतैः अलंङ्कृतम् ॥**

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| कदम्ब | १. वह तीर्थ कदम्ब | कुन्द | ७. कुन्द |
| चम्पक | २. चम्पा | मन्दार | ८. मन्दार |
| अशोक | ३. अशोक | कुटजैः | ९. कुटज और |
| करञ्ज | ४. करञ्ज | चूत | ११. आम के वृक्षों से |
| बकुल | ५. मौलसिरी | पोतैः | १०. नये-नये |
| आसनैः । | ६. असन | अलंकृतम् ॥ | १२. शोभायमान था ॥ |

श्लोकार्थ—वह तीर्थ कदम्ब, चम्पा, अशोक, करञ्ज, मौलसिरी, असन, कुन्द, मन्दार, कुटज और नये-नये आम के वृक्षों से शोभायमान था ॥

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

कारण्डवैः प्लवैर्हंसैः कुररैर्जलकुक्कुटैः ।
सारसैश्चक्रवाकैश्च चकोरैर्वल्गुकूजितम् ॥४३॥

पदच्छेद—

कारण्डवैः प्लवैः हंसैः कुररैः जलकुक्कुटैः ।
सारसैः चक्रवाकैः च चकोरैः वल्गु कूजितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कारण्डवैः | १. | वहाँ पर जलकाक | सारसैः | ६. | सारस |
| प्लवैः | २. | वत्तख | चक्रवाकैः | ७. | चकवा-चकवी |
| हंसैः | ३. | हंस | च | ८. | और |
| कुररैः | ४. | कुरर | चकोरैः | ९. | चकोर |
| जलकुक्कुटैः । | ५. | जलमुर्ग | वल्गु | १०. | मधुर स्वर में |
| | | | कूजितम् ॥ | ११. | कलरव कर रहे थे |

श्लोकार्थ—वहाँ पर जल काक, वत्तख, हंस, कुरर, जलमुर्ग, सारस, चकवा-चकवी और चकोर मधुर स्वर में कलरव कर रहे थे ॥

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

तथैव हरिणैः क्रोडैः श्वाविद्गवयकुञ्जरैः ।
गोपुच्छैर्हरिभिर्मर्कैर्नकुलैर्नाभिभिर्वृतम् ॥४४॥

पदच्छेद—

तथैव हरिणैः क्रोडैः श्वाविद् गवय कुञ्जरैः ।
गोपुच्छैः हरिभिः मर्कैः नकुलैः नाभिभिः वृत्तम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तथैव | १. | उसी तरह से (वह तीर्थ) | गोपुच्छैः | ७. | लंगूर |
| हरिणैः | २. | हरिण | हरिभिः | ८. | सिंह |
| क्रोडैः | ३. | सुअर | मर्कैः | ९. | वानर |
| श्वाविद् | ४. | स्याही | नकुलैः | १०. | नेवले (और) |
| गवय | ५. | नील गाय | नाभिभिः | ११. | कस्तूरी मृग आदि पशुओं से |
| कुञ्जरैः । | ६. | हाथी | वृत्तम् ॥ | १२. | घिरा हुआ था |

श्लोकार्थ—उसी तरह से वह तीर्थ हरिण सूअर, स्याही, नील गाय, हाथी, लंगूर, सिंह वानर, नेवले, और कस्तूरी मृग आदि पशुओं से घिरा हुआ था ॥

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

प्रविश्य तत्तीर्थवरमादिराजः सहात्मजः ।
ददर्श मुनिमासीनं तस्मिन् हुतहुताशनम् ॥४५॥

पदच्छेद—

प्रविश्य तत् तीर्थवरम् आदिराजः सह आत्मजः ।
ददर्श मुनिम् आसीनम् तस्मिन् हुतहुताशनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रविश्य | ६. | प्रवेश किया (और) | ददर्श | १२. | देखा |
| तत् | ४. | उस | मुनिम् | ११. | कर्दम मुनि को |
| तीर्थवरम् | ५. | श्रेष्ठ तीर्थ में | आसीनम् | १०. | बैठे हुये |
| आदिराजः | १. | आदिराज मनु महाराज ने | तस्मिन् | ७. | वहाँ आश्रम में |
| सह | ३. | साथ | हुत | ९. | हवन करके |
| आत्मजः । | २. | अपनी पुत्री के | हुताशनम् ॥ | ८. | अग्नि में |

श्लोकार्थ—आदिराज मनु महाराज ने अपनी पुत्री के साथ उस श्रेष्ठ तीर्थ में प्रवेश किया और वहाँ आश्रम में अग्नि में हवन करके बैठे हुये कर्दम मुनि को देखा ।

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

विद्योतमानं वपुषा तपस्युग्रयुजा चिरम् । नातिक्षामं भगवतः
स्निग्धापाङ्गावलोकनात् । तद्व्याहृतामृतकलापीयूषश्रवणेन च ॥४६॥

पदच्छेद— विद्योतमानम् वपुषा तपसि उग्र युजा चिरम् । न अतिक्षामम् भगवतः
स्निग्ध अपाङ्ग अवलोकनात् । तद् व्याहृत अमृत कला पीयूष श्रवणेन च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विद्योतमानम् | ५. | तेजस्वी (दिखाई देने वाले) | अपाङ्ग | ८. | चितवन का |
| वपुषा | ४. | शरीर से | अवलोकनात् । | ९. | दर्शन करते रहने से |
| तपसि | २. | तपस्या में | तद् | ११. | उनके |
| उग्र, युजा | ३. | कठोर योगाभ्यासी | व्याहृत | १५. | वचनों को |
| चिरम् । | १. | बहुत काल से | अमृत | १३. | मधुर (एवम्) |
| न | १८. | नहीं जान पड़ते | कला | १२. | सुन्दर |
| अतिक्षामम् | १७. | विशेष दुर्बल | पीयूष | १४. | कर्णामृत |
| भगवतः | ६. | (कर्दम जी) भगवान् की | श्रवणेन | १६. | सुनने से |
| स्निग्ध | ७. | स्नेहमयी | च ॥ | १०. | और |

श्लोकार्थ—बहुत काल तपस्या में कठोर योगाभ्यासी शरीर से तेजस्वी दिखाई देने वाले कर्दम जी भगवान् की स्नेहमयी चितवन का दर्शन करते रहने से और उनके मधुर एवम् कर्णामृत वचनों को सुनने से विशेष दुर्बल नहीं जान पड़ते थे ।।

# सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

**प्रांशुं पद्मपलाशाक्षं जटिलं चीरवाससम् ।**
**उपसंसृत्य मलिनं यथार्हणमसंस्कृतम् ॥४७॥**

**पदच्छेद—**

प्रांशुम् पद्मपलाशाक्षम् जटिलम् चीरवाससम् ।
उपसंसृत्य मलिनम् यथा अर्हणम् असंस्कृतम् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रांशुम् | १. | शरीर से लम्बे | उपसंसृत्य | ७. | पास में देखने से |
| पद्मपलाश | २. | कमल पत्र के समान | मलिनम् | ११. | मलिन लग रहे थे |
| अक्षम् | ३. | विशाल नेत्र वाले | यथा | १०. | समान |
| जटिलम् | ४. | जटाधारण किये हुये (और) | अर्हणम् | ९. | बहुमूल्य मणि के |
| चीर | ५. | वल्कल | असंस्कृतम् ॥ | ८. | शान पर चढ़ाई गई |
| वस्त्रम् । | ६. | वस्त्र पहने (वे मुनि) | | | |

**श्लोकार्थ—**शरीर से लम्बे कमलपत्र के समान विशाल नेत्र वाले, जटा धारण किये हुये और वल्कल वस्त्र पहने हुये वे मुनि पास में देखने से शान पर चढ़ाई गई बहुमूल्य मणि के समान लग रहे थे ॥

# अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

**यथोटजमुपायातं नृदेवं प्रणतं पुरः ।**
**सपर्यया पर्यगृह्णात्प्रतिनन्द्यानुरूपया ॥४८॥**

**पदच्छेद—**

अथ उटजम् उपायातम् नृदेवम् प्रणतम् पुरः ।
सपर्यया पर्यगृह्णात् प्रतिनन्द्य अनुरूपया ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | तदनन्तर (कर्दम जी ने) | पुरः । | ५. | अपने सामने |
| उटजम् | २. | आश्रम में | सपर्यया | ९. | आतिथ्य रीति से (उनका) |
| उपायातम् | ३. | आकर | पर्यगृह्णात् | १०. | स्वागत सत्कार किया |
| नृदेवम् | ६. | मनु महाराज का | प्रतिनन्द्य | ७. | आर्शीवाद से प्रसन्न करके |
| प्रणतम् | ५. | प्रणाम करते हुये | अनुरूपया ॥ | ८. | यथोचित |

**श्लोकार्थ—**तदनन्तर कर्दम जी ने आश्रम में आकर अपने सामने प्रणाम करते हुये मनु महाराज का आर्शीवाद से प्रसन्न करके यथोचित आतिथ्य रीति से सत्कार किया ।

# एकोनपञ्चाशत् श्लोकः

**गृहीतार्हणमासीनं संयतं प्रीणयन्मुनिः ।**
**स्मरन् भगवदादेशमित्याह श्लक्ष्णया गिरा ॥४९॥**

पदच्छेद—

गृहीत अर्हणम् आसीनम् संयतम् प्रीणयन् मुनिः ।
स्मरन् भगवद् आदेशम् इति आह श्लक्ष्णया गिरा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गृहीत | २. | ग्रहण करके | स्मरन् | ६. | स्मरण करके |
| अर्हणम् | १. | आतिथ्य सत्कार | भगवद् | ७. | भगवान् के |
| आसीनम् | ३. | आसन पर बैठे हुये | आदेशम् | ८. | आदेश का |
| संयतम् | ४. | शान्तचित्त (मनु महाराज को | इतिआह | १२. | इस प्रकार, कहा |
| प्रीणयन् | ५. | प्रसन्न करते हुये | श्लक्ष्णया | १०. | मधुर |
| मुनिः । | ६. | कर्दम मुनि ने | गिरा ॥ | ११. | वाणी में |

श्लोकार्थ—आतिथ्य सत्कार ग्रहण करके आसन पर बैठे हुये शान्तचित्त मनु महाराज को प्रसन्न करते हुये कर्दम मुनि ने भगवान् के आदेश का स्मरण करके मधुर वाणी में इस प्रकार कहा ॥

# पञ्चाशत् श्लोकः

**नूनं चङ्क्रमणं देव सतां संरक्षणाय ते ।**
**वधाय चासतां यस्त्वं हरेः शक्तिर्हि पालिनी ॥५०॥**

पदच्छेद—

नूनम् चङ्क्रमणम् देव सताम् संरक्षणाय ते ।
वधाय च असताम् यः त्वम् हरेः शक्तिर्हि पालिनी ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नूनम् | ४. | निश्चय ही | वधाय | ८. | संहार के लिये (होता है) |
| चङ्क्रमणम् | ३. | घूमना, फिरना | च असताम् | ७. | और दुष्टों के |
| देव | १. | हे महाराज ! | यः, त्वम्, हरेः | १०. | जो आप भगवान् श्रीहरि की |
| सताम् | ५. | सज्जनों की | शक्तिः | १२. | शक्त रूप हैं |
| संरक्षणाय | ६. | रक्षा के लिये | हि | ९. | क्योंकि |
| ते | २. | आपका | पालिनी ॥ | ११. | पालन |

श्लोकार्थ—हे महाराज ! आपका घूमना-फिरना निश्चय ही सज्जनों की रक्षा के लिये और दुष्टों के संहार के लिये होता है क्योंकि जो आप भगवान् श्रीहरि की पालन शक्तिरूप हैं ॥

# एकपञ्चाशत् श्लोकः

योऽर्केन्द्वग्नीन्द्रवायूनां यमधर्मप्रचेतसाम् ।
रूपाणि स्थान आधत्से तस्मै शुक्लाय ते नमः ॥५१॥

पदच्छेद—

य: अर्क इन्दु अग्नि इन्द्र वायूनाम् यम धर्म प्रचेतसाम् ।
रूपाणि स्थान आधत्से तस्मै शुक्लाय ते नमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जो (आप) | रूपाणि | ९. | रूपों को |
| अर्क | ३. | सूर्य | स्थान | २. | भिन्न-भिन्न कार्यों के लिये |
| इन्दु, अग्नि | ४. | चन्द्र, अग्नि | आधत्से | १०. | धारण करते हैं |
| इन्द्र | ५. | इन्द्र, | तस्मै | ११. | उस |
| वायूनाम् | ६. | वायु | शुक्लाय | १२. | शुद्ध विष्णु स्वरूप |
| यम, धर्म | ७. | यम, धर्म (और) | ते | १३. | आपको |
| प्रचेतसाम् । | ८. | वरूण के | नमः ॥ | १४. | नमस्कार है |

श्लोकार्थ—जो आप भिन्न-भिन्न कार्यों के लिये सूर्य, चन्द्र, अग्नि, इन्द्र, वायु, यम, धर्म और वरुण के रूपों को धारण करते हैं। उस शुद्ध विष्णु स्वरूप आपको नमस्कार है ॥

# द्विपञ्चाशत् श्लोकः

न यदा रथमास्थाय जैत्रं मणिगणार्पितम् ।
विस्फूर्जच्चण्डकोदण्डो रथेन त्रासयन्नघान् ॥५२॥

पदच्छेद—

न यदा रथम् आस्थाय जैत्रम् मणिगण अर्पितम् ।
विस्फूर्जत् चण्ड कोदण्डः रथेन त्रासयन् अघान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ६. | उस समय | विस्फूर्जत् | ९. | टङ्कार से (और) |
| यदा | १. | जिस समय आप | चण्ड | ७. | प्रचण्ड |
| रथम् आस्थाय | ५. | रथ पर, बैठते हैं | कोदण्डः | ८. | धनुष की |
| जैत्रम् | ४. | जयदायक | रथेन | १०. | रथ की घर-घराहट से |
| मणिगण | २. | अनेकों मणियों से | त्रासयन् | १२. | भयभीत कर देते हैं |
| अर्पितम् । | ३. | जड़े हुये | अघान् ॥ | ११. | पापियों को |

श्लोकार्थ— जिस समय आप अनेकों मणियों से जड़े हुये जयदायक रथ पर बैठते हैं। उस समय प्रचण्ड धनुष की टङ्कार से और रथ की घर-घराहट से पापियों को भयभीत कर देते हैं ॥

## त्रिपञ्चाशत् श्लोकः

**स्वसैन्यचरणक्षुण्णं वेपयन्मण्डलं भुवः।**
**विकर्षन् बृहतीं सेनां पर्यटस्यंशुमानिव ।।५३।।**

पदच्छेद—

स्वसैन्य चरण क्षुण्णम् वेपयन् मण्डलम् भुवः।
विकर्षन् बृहतीम् सेनाम् पर्यटसि अंशुमान् इव ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्व सैन्य | १. | (हे महाराज आप अपनी सेना के | विकर्षन् | ९. | साथ |
| चरण | २. | चरणों से | बृहतीम् | ७. | विशाल |
| क्षुण्णम् | ३. | रौंदे गये | सेनाम् | ८. | सेना के |
| वेपयन् | ६. | कंपाते हुये | पर्यटसि | १२. | भ्रमण कर रहे हैं |
| मण्डलम् | ५. | मण्डल को | अंशुमान् | १०. | सूर्य के |
| भुवः। | ४. | भू | इव ।। | ११. | समान |

श्लोकार्थ—हे महाराज ! आप अपनी सेना के चरणों से रौंदे गये भू मण्डल को कंपाते हुये विशाल सेना के साथ सूर्य के समान भ्रमण कर रहे हैं।

## चतुःपञ्चाशत् श्लोकः

**तदैव सेतवः सर्वे वर्णाश्रमनिबन्धनाः।**
**भगवद्रचिता राजन् भिद्येरन् बत दस्युभिः ।।५४**

पदच्छेद—

तदा एव सेतवः सर्वे वर्ण आश्रम निबन्धनाः।
भगवद् रचिता राजन् भिद्येरन् बत दस्युभिः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तदा, एव | १. | नहीं तो | भगवद् | ६. | भगवान् के द्वारा |
| सेतवः | ९. | मर्यादायें | रचिता | ७. | बनाई गई (धर्म की) |
| सर्वे | ८. | सभी | राजन् | २. | हे राजन्। |
| वर्ण | ३. | वर्ण (और) | भिद्येरम् | १२. | नष्ट हो जायेंगी |
| आश्रम | ४. | आश्रम के | बत | १०. | खेद है कि |
| निबन्धनाः। | ५. | अनुसार | दस्युभिः ।। | ११. | डाकुओं के कारण |

श्लोकार्थ—नहीं तो हे राजन् ! वर्ण और आश्रम के अनुसार भगवान् के द्वारा बनाई गई सभी मर्यादायें खेद है कि डाकूओं के कारण नष्ट हो जायेंगी ।।

## पञ्चपञ्चाशत् श्लोकः

**अधर्मश्च समेधेत लोलुपैर्व्यङ्कुशैर्नृभिः ।**
**शयाने त्वयि लोकोऽयं दस्युग्रस्तो विनङ्क्ष्यति ॥५५॥**

पदच्छेद—

अधर्मः च समेधेत लोलुपैः व्यङ्कुशैः नृभिः ।
शयाने त्वयि लोकः अयम् दस्यु ग्रस्तः विनङ्क्ष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अधर्मः | ५. | अधर्म | शयाने | १०. | ध्यान न देने पर |
| च | १. | तथा | त्वयि | ९. | आपके |
| समेधेत | ६. | फैल जायेगा | लोकः | ८. | संसार |
| लोलुपैः | २. | विषयों के लोभी | अयम | ७. | यह |
| व्यङ्कुशैः | ३. | निरंकुश | दस्यु | ११. | लुटेरों से |
| नृभिः । | ४. | लोगों के द्वारा | ग्रस्तः | १२. | व्याप्त होकर |
| | | | विनङ्क्ष्यति ॥ | १३. | नष्ट हो जायेगा |

श्लोकार्थ—तथा विषयों के लोभी निरंकुश लोगों के द्वारा अधर्म फैल जायेगा । यह संसार आपके ध्यान न देने पर लुटेरों से व्याप्त होकर नष्ट हो जायेगा ॥

## षट्पञ्चाशत् श्लोकः

**अथापि पृच्छे त्वां वीर यदर्थं त्वमिहागतः ।**
**तद्वयं निर्व्यलीकेन प्रतिपद्यामहे हृदा ॥५६॥**

पदच्छेद—

अथ अपि पृच्छे त्वाम् वीर यदर्थम् त्वम् इह ।
तद्वयम् निर्व्यलीकेन प्रति पद्यामहे हृदा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ, अपि | २. | फिर भी | आगतः । | ७. | आये हैं । |
| पृच्छे | ४. | (कारण) पूछता हूँ | तद् | ८. | उसे |
| त्वाम् | ३. | आपके आने का | वयम् | ९. | हम |
| वीर | १. | हे महाराज ! मैं | निर्व्यलीकेन | १०. | निष्कपट |
| यदर्थम् | ६. | जिस प्रयोजन से | प्रतिपद्यामहे | १२. | स्वीकार करेंगे |
| त्वम्, इह | ५. | आप, यहाँ | हृदा ॥ | ११. | हृदय से |

श्लोकार्थ—हे महाराज ! मैं फिर भी आप के आने का कारण पूछता हूँ । आप यहाँ जिस प्रयोजन से आये हैं, उसे हम निष्कपट हृदय से स्वीकार करेंगे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीय स्कन्धे एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

द्वाविंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एवमाविष्कृताशेषगुणकर्मोदयो मुनिम् ।
सव्रीड इव तं सम्राडुपारतमुवाच ह ॥१॥

पदच्छेद—

एवम् आविष्कृत अशेष गुण कर्म उदयः मुनिम् ।
सव्रीड इव तम् सम्राट् उपारतम् उवाच ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | सव्रीड | ८. | सकुचाते हुये |
| आविष्कृत | ६. | वर्णन किया गया (तब) | इव | ९. | से |
| अशेष | २. | (जिनके) सम्पूर्ण | तम् | १०. | उन |
| गुण | ३. | गुणों (और) | सम्राट् | ७. | महाराज मनु |
| कर्म | ४. | कर्मों के | उपारतम् | ११. | निवृत्ति-परायण |
| उदयः | ५. | प्रभाव का | उवाच | १४. | कहा |
| मुनिम् । | १२. | कर्दम मुनि से | ह ॥ | १३. | यह |

श्लोकार्थ—इस प्रकार जिनके सम्पूर्ण गुणों और कर्मों के प्रभाव का वर्णन किया गया; तब महाराज मनु सकुचाते हुये से उन निवृत्ति-परायण कर्दम मुनि से यह कहा ॥

## द्वितीयः श्लोकः

मनुरुवाच— ब्रह्मासृजत्स्वमुखतो युष्मानात्मपरीप्सया ।
छन्दोमयस्तपोविद्यायोगयुक्तानलम्पटान् ॥२॥

पदच्छेद—

ब्रह्मा असृजत् स्व मुखतः युष्मान् आतम परीप्सया ।
छन्दोमयः तपः विद्या योग युक्तान् अलम्पटान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मा | २. | ब्रह्मा जी ने | छन्दोमयः | १. | वेदमूर्ति |
| असृजत् | १२. | रचा है | तपः | ५. | तपस्या |
| स्व, मुखतः | ११. | अपने मुख से | विद्या | ६. | ज्ञान और |
| युष्मान् | १०. | आप लोगों को | योग | ७. | योग में |
| आत्म | ३. | अपने वेद शरीर की | युक्तान् | ८. | तल्लीन तथा |
| परीप्सया । | ४. | रक्षा करने की इच्छा से | अलम्पटान् ॥ | ९. | विषयों में अनासक्त |

श्लोकार्थ—वेदमूर्ति ब्रह्मा जी ने अपने वेद शरीर की रक्षा करने की इच्छा से तपस्या, ज्ञान और योग से तल्लीन तथा विषयों में अनाशक्त आप लोगों को अपने मुख से रचा है ॥

## तृतीयः श्लोकः

तत्त्राणायासृजच्चास्मान्दोःसहस्रात्सहस्रपात् ।
हृदयं तस्य हि ब्रह्म क्षत्रमङ्गं प्रचक्षते ॥३॥

पदच्छेद— तत् त्राणाय असृजत् च अस्मान् दोः सहस्रात् सहस्रपात् ।
हृदयम् तस्य हि ब्रह्म क्षत्रम् अङ्गम् प्रचक्षते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | २. | आप लोगों को | हृदयम् | १२. | हृदय (और) |
| त्राणाय | ३. | रक्षा के लिये | तस्य | ११. | उनका |
| असृजत् | ८. | उत्पन्न किया है | हि | ९. | इसी लिये |
| च | १. | तथा | ब्रह्म | १०. | ब्राह्मण |
| अस्मान् | ७. | हम क्षत्रियों को | क्षत्रम् | १३. | क्षत्रिय |
| दोः | ६. | भुजाओं से | अङ्गम् | १४. | शरीर |
| सहस्रात् | ५. | (अपनी) हजारों | प्रचक्षते ॥ | १५. | कहलाता है |
| सहस्रपात् | ४. | हजारों पैर वाले (ब्रह्माजी ने) | | | |

श्लोकार्थ—तथा आप लोगों की रक्षा के लिये हजारों पैर वाले ब्रह्मा जी ने अपनी हजारों भुजाओं से हम क्षत्रियों को उत्पन्न किया है। इसी लिये ब्राह्मण उनका हृदय और क्षत्रिय शरीर कहलाता है ॥

## चतुर्थः श्लोकः

अतो ह्यन्योन्यमात्मानं ब्रह्म क्षत्रं च रक्षतः ।
रक्षति स्माव्ययो देवः स यः सदसदात्मकः ॥४॥

पदच्छेद—

अतः हि अन्योन्यम् आत्मानम् ब्रह्म क्षत्रम् च रक्षतः ।
रक्षतिस्म अव्ययः देवः सः यः सद् असदात्मकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः हि | १. | इसलिये (हमलोग) | रक्षतिस्म | १४. | रक्षा करता है |
| अन्योन्यम् | २. | एक दूसरे के | अव्ययः | १०. | अविनाशी |
| आत्मानम् | ३. | शरीर की | देवः, सः | ११. | परमात्मा (है) वह |
| ब्रह्म | १२. | ब्राह्मण (और) | यः | ६. | जो |
| क्षत्रम् | १३. | क्षत्रिय (दोनों की) | सद् | ७. | भाव |
| च | ५. | तथा | असद् | ८. | अभाव |
| रक्षतः | ४. | रक्षा करते हैं | आत्मकः ॥ | ९. | स्वरूप |

श्लोकार्थ—इसीलिये हम लोग एक दूसरे के शरीर की रक्षा करते हैं। तथा जो भाव तथा अभाव स्वरूप अविनाशी परमात्मा है वह ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों की रक्षा करता है।

## पञ्चमः श्लोकः

**तव सन्दर्शनादेवच्छिन्ना मे सर्वसंशयाः ।**
**यत्स्वयं भगवान् प्रीत्या धर्ममाह रिरक्षिषोः ॥५॥**

पदच्छेद—

तव सन्दर्शनात् एव छिन्ना मे सर्व संशयाः ।
यत् स्वयम् भगवान् प्रीत्या धर्मम् आह रिरक्षिषोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तव | १. | आपके | यत् | ८. | क्योंकि |
| सन्दर्शनात् | २. | दर्शन से | स्वयम् | १०. | स्वयम् |
| एव | ३. | ही | भगवान् | ६. | आपने |
| छिन्ना | ७. | नष्ट हो गये हैं | प्रीत्या | ११. | प्रसन्नतापूर्वक |
| मे | ४. | मेरे | धर्मम् | १३. | कर्तव्य |
| सर्व | ५. | सारे | आह | १४. | बताया है |
| संशयाः । | ६. | सन्देह | रिरक्षिषोः ॥ | १२. | प्रजा पालक राजा का |

श्लोकार्थ——आपके दर्शन से ही मेरे सारे सन्देह नष्ट हो गये हैं । क्योंकि अपने स्वयम् प्रसन्नता पूर्वक प्रजा पालक राजा का कर्तव्य बताया है ॥

## षष्ठः श्लोकः

**दिष्ट्या मे भगवान् दृष्टो दुर्दर्शो योऽकृतात्मनाम् ।**
**दिष्ट्या पादरजः स्पृष्टं शीर्ष्णा मे भवतः शिवम् ॥६॥**

पदच्छेद—

दिष्टया मे भगवान् दृष्टो दुर्दर्शः यः अकृत-आत्मनाम् ।
दिष्टया पादरजः स्पृष्टम् शीर्ष्णा मे भवतः शिवम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दिष्टया | १. | बड़े भाग्य से | दिष्टया | ८. | सौभाग्य से |
| मे | २. | मुझे | पादरजः | १२. | चरणों की धूली को |
| भगवान् | ३. | आपका | स्पृष्टम् | १४. | धारण की है |
| दृष्टो | ४. | दर्शन हुआ है | शीर्ष्णा | १३. | शिर पर |
| दुर्दर्शः | ७. | दर्शन दुर्लभ है | मे | ६. | मैंने |
| यः | ६. | जिस आपका | भवतः | १०. | आपके |
| अकृत-आत्मानाम् । | ५. | अजितेन्द्रिय, पुरुषों को | शिवम् ॥ | ११. | कल्याणकारी |

श्लोकार्थ—बड़े भाग्य से मुझे आपका दर्शन हुआ है । अजितेन्द्रिय पुरुषों को जिस आपका दर्शन दुर्लभ है । सौभाग्य से मैंने आपके कल्याणकारी चरणों की धूली को शिर पर धारण किया है ॥

## सप्तमः श्लोकः

दिष्ट्या त्वयानुशिष्टोऽहं कृतश्चानुग्रहो महान् ।
अपावृतैः कर्णरन्ध्रैर्जुष्टां दिष्ट्योशतीर्गिरः ॥७॥

पदच्छेद—

दिष्टया त्वया अनुशिष्टः अहम् कृतः च अनुग्रहः महान् ।
अपावृतैः कर्णरन्ध्रैः जुष्टाम् दिष्टया उशतीः गिरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दिष्टया | १. | सौभाग्य से | महान् । | ६. | बहुत बड़ी |
| त्वया | २. | आपने | अपावृतैः | १२. | ध्यान देकर |
| अनुशिष्टः | ४. | उपदेश दिया है | कर्णरन्ध्रैः | १३. | अपने कानों से |
| अहम् | ३. | मुझे | जुष्टाम् | १४. | सुना है |
| कृतः | ८. | की है | दिष्टया | ९. | बड़े भाग्य की बात है (कि) |
| च | ५. | और | उशतीः | १०. | मैंने आपकी पवित्र |
| अनुग्रहः | ७. | कृपा | गिरः ॥ | ११. | वाणी को |

श्लोकार्थ—सौभाग्य से आपने मुझे उपदेश दिया है, और बहुत बड़ी कृपा की है । बड़े भाग्य की बात है; कि मैंने आपकी पवित्र वाणी को ध्यान देकर अपने कानों से सुना है ॥

## अष्टमः श्लोकः

स भवान्दुहितृस्नेहपरिक्लिष्टात्मनो मम ।
श्रोतुमर्हसि दीनस्य श्रावितं कृपया मुने ॥८॥

पदच्छेद—

सः भवान् दुहितृ स्नेह परिक्लिष्ट आत्मनः मम ।
श्रोतुम् अर्हसि दीनस्य श्रावितम् कृपया मुने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वह | श्रोतुम् | १२. | सुनने में |
| भवान् | ३. | आप | अर्हसि | १३. | समर्थ हैं |
| दुहितृ | ५. | पुत्री के | दीनस्य | १०. | दीन की |
| स्नेह | ६. | प्रेम से | श्रावितम् | ११. | प्रार्थना |
| परिक्लिष्ट | ७. | चिन्तित | कृपया | ४. | कृपापूर्वक |
| आत्मनः | ८. | मन वाले | मुने ॥ | १. | हे मुनिवर ! |
| मम । | ९. | मुझ | | | |

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! वह आप कृपा पूर्वक पुत्री के प्रेम से चिन्तित मन वाले मुझ दीन की प्रार्थना सुनने में समर्थ हैं ॥

## नवमः श्लोकः

**प्रियव्रतोत्तानपदोः स्वसेयं दुहिता मम ।**
**अन्विच्छति पतिं युक्तं वयःशीलगुणादिभिः ॥९॥**

पदच्छेद—

प्रियव्रत उत्तानपदोः स्वसाः इयम् दुहिता मम ।
अन्विच्छति पतिम् युक्तम् वयः शीलगुण आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **प्रियव्रत** | ४. | प्रियव्रत (और) | अन्विच्छति | १२. | चाहती है |
| **उत्तानपदोः** | ५. | उत्तान पाद की | पतिम् | ११. | पति से (विवाह करना) |
| **स्वसा** | ६. | बहिन है | युक्तम् | १०. | (अपने) समान |
| **इयम्** | १. | यह | वयः | ७. | अवस्था |
| **दुहिता** | ३. | पुत्री | शीलगुण | ८. | स्वभाव (और) गुण |
| **मम ।** | २. | मेरी | आदिभिः ॥ | ९. | इत्यादि में |

**श्लोकार्थ**—यह मेरी पुत्री प्रियव्रत और उत्तान पाद की बहिन है । अवस्था और गुण इत्यादि में अपने समान पति से विवाह करना चाहती है ॥

## दशमः श्लोकः

**यदा तु भवतः शीलश्रुतरूपवयोगुणान् ।**
**अश्रृणोन्नारदादेषा त्वय्यासीत्कृतनिश्चया ॥१०॥**

पदच्छेद—

यदा तु भवतः शील श्रुत रूप वयः गुणान् ।
अश्रृणोत् नारदात् एषा त्वयि आसीत् कृत निश्चया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **यदा** | १. | जब से | अश्रृणोत् | ८. | सुना है |
| **तु** | ९. | तब से (यह) | नारदात् | ३. | नारद जी के मुख से |
| **भवतः** | ४. | आपके | एषा | २. | इसने |
| **शील, श्रुत** | ५. | स्वभाव, विद्या | त्वयि | १०. | आप को |
| **रूप, वयः** | ६. | सौन्दर्य, अवस्था (और) | आसीत् | १२. | कर चुकी है |
| **गुणान् ।** | ७. | गुणों को | कृत, निश्चया ॥ | ११. | पति बनाने का, निश्चय |

**श्लोकार्थ**—जब से इसने नारद जी के मुख से आपके स्वभाव, विद्या, सौन्दर्य, अवस्था और गुणों को सुना है । तब से यह आपको पति बनाने का निश्चय कर चुकी है ॥

# एकादशः श्लोकः

**तत्प्रतीच्छ द्विजाग्रयेमां श्रद्धयोपहृतां मया।**
**सर्वात्मनानुरूपां ते गृहमेधिषु कर्मसु ॥११॥**

पदच्छेद—

तत् प्रतीच्छ द्विज अग्रय इमाम् श्रद्धया उपहृताम् मया।
सर्वात्मना अनुरूपाम् ते गृहमेधिषु कर्मसु॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तत् | ६. अतः (इसे) | | मया। | २. मैं |
| प्रतीच्छ | ७. स्वीकार कीजिये | | सर्वात्मना | ११. सब प्रकार से |
| द्विजअग्रय | १. हे विप्रवर ! | | अनुरूपाम् | १२. अनुकूल है |
| इमाम् | ३. इसे | | ते | ८. आपके |
| श्रद्धया | ४. श्रद्धा पूर्वक (आपको) | | गृहमेधिषु | ९. गृहस्थोचित |
| उपहृताम् | ५. समर्पित करता हूँ | | कर्मसु॥ | १०. कार्य के लिये (यह) |

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! मैं इसे श्रद्धापूर्वक आपको समर्पित करता हूँ। अतः इसे स्वीकार कीजिये। आपके गृहस्थोचित कार्य के लिये यह सब प्रकार से अनुकूल हैं॥

# द्वादशः श्लोकः

**उद्यतस्य हि कामस्य प्रतिवादो न शस्यते।**
**अपि निर्मुक्तसङ्गस्य कामरक्तस्य किं पुनः ॥१२॥**

पदच्छेद—

उद्यतस्य हि कामस्य प्रतिवादः न शस्यते।
अपि निर्मुक्त सङ्गस्य काम रक्तस्य किम् पुनः॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| उद्यतस्य | १. स्वतः प्राप्त | | अपि | ६. भी |
| हि | ११. तो | | निर्मुक्त | ५. रहित पुरुष को |
| कामस्य | २. भोग की | | सङ्गस्य | ४. वासना से |
| प्रतिवादः | ३. अवहेलना | | काम, रक्तस्य | १०. विषयों में आसक्त पुरुष की |
| न | ८. नहीं है | | किम् | १२. बात ही क्या है |
| शस्यते। | ७. उचित | | पुनः॥ | ९. फिर |

श्लोकार्थ—स्वतः प्राप्त भोग की अवहेलना वासना से रहित पुरुष को भी उचित नहीं है। फिर विषयों में आसक्त पुरुष की तो बात ही क्या है।

## त्रयोदशः श्लोकः

**य उद्यतमनादृत्य कीनाशमभियाचते ।**
**क्षीयते तद्यशः स्फीतं मानश्चावज्ञया हतः ॥१३॥**

पदच्छेद—

य: उद्यतम् अनादृत्य कीनाशम् अभियाचते ।
क्षीयते तद् यशः स्फीतम् मानः च अवज्ञया हतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यः | १. जो पुरुष | तद् | ६. उसका |
| उद्यतम् | २. स्वतः प्राप्त (भोग का) | यशः | ८. यश |
| अनादृत्य | ३. अनादर करके | स्फीतम् | ७. फैला हुआ |
| कीनाशम् | ४. कृपण से (उसकी) | मानः | ११. सम्मान |
| अभियाचते । | ५. याचना करता है | च, अवज्ञया | १०. और, तिरस्कार |
| क्षीयते | ९. नष्ट हो जाता है | हतः ॥ | १२. समाप्त हो जाता है |

श्लोकार्थ—जो पुरुष स्वतः प्राप्त भोग का अनादर करके कृपण से उसकी याचना करता है। उसका फैला हुआ यश नष्ट हो जाता है और तिरस्कार से सम्मान समाप्त हो जाता है ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

**अहं त्वाश्रृणवं विद्वन् विवाहार्थं समुद्यतम् ।**
**अतस्त्वमुपकुर्वाणः प्रत्तां प्रतिगृहाण मे ॥१४॥**

पदच्छेद—

अहम् तु आश्रृणवम् विद्वन् विवाहार्थम् समुद्यतम् ।
अतः त्वम् उपकुर्वाणः प्रत्ताम् प्रति गृहाण मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अहम् | २. मैंने | अतः | ७. इसीलिये |
| तु | ३. तो | त्वम् | ८. आप |
| आश्रृणवम् | ४. सुना है (कि आप) | उपकुर्वाणः | ९. उपकार की भावना से |
| विद्वन् | १. हे विप्रवर ! | प्रत्ताम् | ११. दी गई (इस कन्या को) |
| विवाहार्थम् | ५. विवाह के लिये | प्रतिगृहाण | १२. स्वीकार करें |
| समुद्यतम् । | ६. उद्यत है | मे ॥ | १०. मेरे द्वारा |

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! मैंने तो सुना है कि आप विवाह के लिये उद्यत हैं। इसीलिये आप उपकार की भावना से मेरे द्वारा दी गई इस कन्या को स्वीकार करें ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

ऋषिरुवाच— बाढमुद्वोढुकामोऽहमप्रत्ता च तवात्मजा ।
आवयोरनुरूपोऽसावाद्यो वैवाहिको विधिः ॥१५॥

पदच्छेद—
बाढम् उद्वोढुकामः अहम् अप्रत्ता च तव आत्मजा ।
आवयोः अनुरूपः असौ आद्यः वैवाहिकः विधिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बाढम् | १. | ठीक है | आवयोः | ११. | हम दोनों के |
| उद्वोढुकामः | ३. | विवाह करना चाहता हूँ | अनुरूपः | १२. | योग्य है |
| अहम् | २. | मैं | असौ | ७. | उस |
| अप्रत्ता | ६. | वाग्दान नहीं हुआ है (अतः) | आद्यः | ८. | सर्वश्रेष्ठ |
| च, तव | ४. | और, आपकी | वैवाहिकः | १०. | विवाह करना |
| आत्मजा । | ५. | कन्या का | विधिः॥ | ९. | ब्राह्म विधि से |

श्लोकार्थ—ठीक है, मैं विवाह करना चाहता हूँ और आपकी कन्या का वाग्दान नहीं हुआ है। अतः उस सर्वश्रेष्ठ ब्राह्म विधि से विवाह करना हम दोनों के योग्य है ॥

## षोडशः श्लोकः

कामः स भूयान्नरदेव तेऽस्याः पुत्र्याः समाम्नायविधौ प्रतीतः ।
क एव ते तनयां नाद्रियेत स्वयैव कान्त्या क्षिपतीमिव श्रियम् ॥१६॥

पदच्छेद—
कामः सः भूयात् नरदेव ते अस्याः पुत्र्याः समाम्नाय विधौ प्रतीतः ।
क एव ते तनयाम् न आद्रियेत स्वया एव कान्त्या क्षिपतीम् इव श्रियम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कामः | ५. | मेरा मनोरथ | कः | १०. | कौन (पुरुष) |
| सः | ४. | वह | एव | ९. | भला |
| भूयात् | ८. | सफल होवे | ते, तनयाम् | ११. | आपकी, पुत्री का |
| नरदेव | १. | हे राजन् ! | न, आद्रियेत | १२. | नहीं, आदर करेगा |
| ते, अस्याः | ६. | आपकी, इस | स्वया, एव | १३. | जो अपनी ही |
| पुत्र्या | ७. | पुत्री के सम्बन्ध में | कान्त्या | १४. | कान्ति से |
| समाम्नाय | २. | वैदिक | क्षिपतीम् | १६. | तिरस्कृत कर रही है |
| विधौ, प्रतीतः । | ३. | रीति से, प्रसिद्ध (सन्तानोपादन का) | इव श्रियम् ॥ | १५. | मानों, आभूषणों की शोभा को |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वैदिक रीति से प्रसिद्ध सन्तानोपादन का वह मेरा मनोरथ आपकी इस पुत्री के सम्बन्ध से सफल होवे । भला कौन पुरुष आपकी पुत्री का नहीं आदर करेगा । जो अपनी ही कान्ति से मानों आभूषणों की शोभा को तिरस्कृत कर रही है ।

## सप्तदशः श्लोकः

**यां हर्म्यपृष्ठे क्वणदङ्घ्रिशोभां विक्रीडतीं कन्दुकविह्वलाक्षीम् ।**
**विश्वावसुर्न्यपतत्स्वाद्विमानाद्विलोक्य सम्मोहविमूढचेताः ॥१७॥**

पदच्छेद— याम् हर्म्यपृष्ठे क्वणत् अङ्घ्रिशोभाम् विक्रीडतीम् कन्दुक विह्वल अक्षीम् ।
विश्वावसुः न्यपतत् स्वात् विमानात् विलोक्य सम्मोह विमूढ चेताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| याम् | १. | जो (एक बार) | विश्वावसुः | १०. | विश्वासु गन्धर्व |
| हर्म्यपृष्ठे | २. | महल की छत पर | न्यपतत् | १६. | गिर पड़ा था |
| क्वणत् | ८. | झनकार कर रहे थे | स्वात् | १४. | अपने |
| अङ्घ्रिशोभाम् | ७. | पैरों के पायजेव मधुर | विमानात् | १५. | विमान |
| विक्रीडतीम् | ३. | खेल रही थी | विलोक्य | ९. | (जिसे) देखकर |
| कन्दुक | ४. | गेंद के (पीछे दौड़ने से) | सम्मोह | ११. | मोह वश |
| विह्वल | ६. | चञ्चल हो रहे थे (और) | विमूढ | १३ | होकर |
| अक्षीम् | ५. | (उसके) नेत्र | चेताः ॥ | १२. | अचेत |

श्लोकार्थ—जो एक बार महल की छत पर खेल रही थी; गेंद के पीछे दौड़ने से उसके नेत्र चञ्चल हो रहे थे; और पैरों के पायजेव मधुर झनकार कर रहे थे । जिसे देखकर विश्वावसु गन्धर्व मोह वश अचेत होकर अपने विमान से नीचे गिर पड़ा था ॥

## अष्टदशः श्लोकः

**तां प्रार्थयन्तीं ललनाललाममसेवितश्रीचरणैरदृष्टाम् ।**
**वत्सां मनोरुच्चपदः स्वसारं को नानुमन्येत बुधोऽभियाताम् ॥१८॥**

पदच्छेद—ताम् प्रार्थयन्तीम् ललना ललामम् असेवित श्रीचरणैः अदृष्टाम् ।
वत्साम् मनोः उच्चपदः स्वसारम्, कः न अनुमन्येत बुधः अभियाताम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताम् | ७. | उस | वत्साम् | ९. | पुत्री (और) |
| प्रार्थयन्तीम् | ६. | कामना करती हुई | मनोः | ८. | स्वायम्भुव मनु की |
| ललना | ४. | रमणियों में | उच्चपदः | १०. | उत्तानपाद |
| ललामम् | ५. | श्रेष्ठ एवं | स्वसारम्, कः | ११. | बहिन को, कौन |
| असेवित | २. | सेवा नहीं करने वाले (लोग जिसे) | न, अनुमन्यते | १४. | नहीं, स्वीकार करेगा |
| श्रीचरणैः | १. | लक्ष्मी जी के चरणों की | बुधः | १२. | बुद्धिमान् पुरुष |
| अदृष्टाम् । | ३. | नहीं देख सकते हैं | अभियाताम् ॥ | १३. | सामने उपस्थित देखकर |

श्लोकार्थ—लक्ष्मी जी के चरणों की सेवा नहीं करने वाले लोग जिसे नहीं देख सकते हैं । रमणियों में श्रेष्ठ एवं कामना करती हुई उस स्वायम्भुव मनु की पुत्री और उत्तानपाद की बहिन को कौन बुद्धिमान् पुरुष सामने उपस्थित देखकर नहीं स्वीकार करेगा ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

**अतो भजिष्ये समयेन साध्वीं यावत्तेजो विभृयादात्मनो मे ।**
**अतो धर्मान् पारमहंस्यमुख्यान् शुक्लप्रोक्तान् बहु मन्येऽविहिंस्रान् ॥१६॥**

पदच्छेद—अतः भजिष्ये समयेन साध्वीम् यावत् तेजः बिभृयात् आत्मनः मे ।
अतः धर्मान् पारमहंस्य मुख्यान् शुक्ल प्रोक्तान् बहुमन्ये अविहिंस्रान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः | १. | इसलिये (आपकी) | अतः | ६. | उसके बाद |
| भजिष्ये | ४. | स्वीकार करूँगा | धर्मान् | १५. | धर्म को |
| समयेन | ३. | एक शर्त के साथ | पारमहंस्य | १३. | सन्यास |
| साध्वीम् | २. | साध्वी पुत्री के | मुख्यान् | १४. | प्रधान |
| यावत् | ५. | जब तक ये | शुक्ल | १०. | भगवान् श्रीहरि के द्वारा |
| तेजः, बिभृयात् | ८. | तेज को धारण करेगी (तभी-तक साथ रहूँगा) | प्रोक्तान् | ११. | बताये गये |
| आत्मनः | ७. | सन्तान रूप | बमन्ये | १६. | स्वीकार करूँगा |
| मे । | ६. | मेरे | अविहिंस्रान् ॥ | १२. | हिंसा से रहित |

श्लोकार्थ—इसीलिये आपकी साध्वी पुत्री के एक शर्त के साथ स्वीकार करूँगा । जब तक ये मेरे सन्तान रूप तेज को धारण करेगी । तभी तक साथ रहूँगा । उसके बाद भगवान् श्री हरि के द्वारा बताये गये हिंसा से रहित सन्यास प्रधान धर्म को स्वीकार करूँगा ॥

## विंशः श्लोकः

**यतोऽभवद्विश्वमिदं विचित्रं संस्थास्यते यत्र च वावतिष्ठते ।**
**प्रजापतीनां पतिरेष मह्यं परं प्रमाणं भगवाननन्तः ॥२०॥**

पदच्छेद—यतः अभवत् विश्वम् इदम् विचित्रम् संस्थास्यते यत्र च वा अवतिष्ठते ।
प्रजापतीनाम् पतिः एष मह्यम् परम् प्रमाणम् भगवान् अनन्तः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यतः | १. | जिससे | प्रजापतीनाम् | ६. | प्रजापतियों के |
| अभवत् | ४. | उत्पन्न हुआ है | पतिः | १०. | स्वामी |
| विश्वम् | ३. | संसार | एषः | ११. | वे |
| इदम्, विचित्रम् | २. | यह, अद्भुत | मह्यम् | १४. | मेरे |
| संस्थास्यते | ७. | विलीन होगा | परम् | १५. | सर्वाधिक |
| यत्र | ६. | जिसमें | प्रमाणम् | १६. | मान्य हैं |
| च | ५. | और | भगवान् | १२. | भगवान् |
| वा, अवतिष्ठते । | ८. | अथवा, स्थित है | अनन्तः ॥ | १३. | श्री हरि |

श्लोकार्थ—जिससे यह अद्भुत संसार उत्पन्न हुआ है; और जिसमें विलीन होगा; अथवा स्थित है । प्रजापतियों के स्वामी वे भगवान् श्री हरि मेरे सर्वाधिक मान्य हैं ॥

## एकविंशः श्लोकः

**स उग्रधन्वन्नियदेवाबभाषे आसीच्च तूष्णीमरविन्दनाभम् ।**
**धियोपगृह्णन् स्मितशोभितेन मुखेन चेतो लुलुभे देवहूत्याः ॥२१॥**

पदच्छेद— सः उग्रधन्वन् इयत् एव आवभाषे आसीत् च तूष्णीम् अरविन्द नाभम् ।
धिया उपगृह्णन् स्मित शोभितेन मुखेन चेतः लुलुभे देवहूत्याः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वे कर्दम जी | धिया | ८. | हृदय में |
| उग्रधन्वन् | १. | प्रचण्ड धनुर्धर हे विदुर जी ! | उपगृह्णन् | ९. | धारण करके |
| इयत् | ३. | इतना | स्मित् | १२. | (उस समय) मुसकान से |
| एव | ४. | ही | शोभितेन | १३. | सुशोभित (उनके) |
| आवभाषे | ५. | कह सके | मुखेन | १४. | मुख को देख कर |
| आसीत् | ११. | ध्यान मग्न हो गये | चेतः | १६. | चित्त |
| च | ६. | तदन्तर | लुलुभे | १७. | मोहित हो गया |
| तूष्णीम् | १०. | चुप चाप | देवहूत्याः ॥ | १५. | देवहूति का |
| अरविन्द नाभम् । | ७. | कमल नाभ श्री हरि को | | | |

श्लोकार्थ—प्रचण्ड धनुर्धर हे विदुर जी ! वे कर्दम जी इतना ही कह सके । तदनन्तर कमलनाभ श्री हरि को हृदय में धारण करके चुपचाप ध्यानमग्न हो गये । उस समय मुसकान से सुशोभित उनके मुख को देखकर देवहूति का चित्त मोहित हो गया ।

## द्वाविंशः श्लोकः

**सोऽनु ज्ञात्वा व्यवसितं महिष्या दुहितुः स्फुटम् ।**
**तस्मै गुणगणाढ्याय ददौ तुल्यां प्रहर्षितः ॥२२॥**

पदच्छेद—

सः अनुज्ञात्वा व्यवसितम् महिष्या दुहितुः स्फुटम् ।
तस्मै गुणगण आढ्याय ददौ तुल्याम् प्रहर्षितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे मनु महाराज | गुण | ८. | गुणों से |
| अनुज्ञात्वा | ६. | जान कर | गण | ७. | अनेक |
| व्यवसितम् | ५. | निर्णय | आढ्याय | ९. | सम्पन्न |
| महिष्या | २. | महारानी शतरूपा (और) | ददौ | १३. | दान दिया |
| दुहितुः | ३. | अपनी पुत्री का | तुल्याम् | १२. | समान गुणों वाली कन्या का |
| स्फुटम् । | ४. | स्पष्ट | प्रहर्षित ॥ | ११. | प्रसन्नता पूर्वक |
| तस्मै | १०. | उन (कर्दम जी को) | | | |

श्लोकार्थ—वे मनु महाराज महारानी शतरूपा और अपनी पुत्री का स्पष्ट निर्णय जानकर अनेक गुणों से सम्पन्न उन कर्दम जी को प्रसन्नता पूर्वक समान गुणों वाली कन्या का दान दिया ॥

# त्रयोविंशः श्लोकः

**शतरूपा महाराज्ञी पारिबर्हान्महाधनान् ।**
**दम्पत्योः पर्यदात्प्रीत्या भूषावासः परिच्छदान् ॥२३॥**

पदच्छेद—

शतरूपा महाराज्ञी पारिबर्हान् महाधनान् ।
दम्पत्योः पर्यदात् प्रीत्या भूषावासः परिच्छदान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शतरूपा | २. | शतरूपा ने | दम्पत्योः | ३. | बेटी और दामाद को |
| महाराज्ञी | १. | महारानी | पर्यदात् | १०. | दान दिया |
| परिबर्हान् | ८. | वस्त्र | प्रीत्या | ४. | प्रेम पूर्वक |
| महा | ५. | बहु | भूषावासः | ७. | आभूषण (और) गृहस्थोचित |
| धनान् । | ६. | मूल्य | परिच्छदान ॥ | ६. | सामान का |

श्लोकार्थ—महारानी शतरूपा ने बेटी और दामाद को प्रेम पूर्वक बहुमूल्य आभूषण और गृहस्थोचित सामान का दान दिया ॥

# चतुर्विंशः श्लोकः

**प्रत्तां दुहितरं सम्राट् सदृक्षाय गतव्यथः ।**
**उपगुह्य च बाहुभ्यामौत्कण्ठ्योन्मथिताशयः ॥२४॥**

पदच्छेद—

प्रत्ताम् दुहितरम् सम्राट् सदृक्षाय गत व्यथः ।
उपगुह्य च बाहुभ्याम् औत्कण्ठ्य उन्मथित आशयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रत्ताम् | ४. | देकर | उपगुह्य | १२. | आलिंगन किया |
| दुहितरम् | ३. | अपनी पुत्री | च | ७. | और (चलते समय उन्होंने) |
| सम्राट् | १. | महाराज मनु | बाहुभ्याम् | ११. | दोनों भुजाओं से (उसका) |
| सदृक्षाय | २. | अनुरूप (पति को) | औत्कण्ठ्य | ८. | उत्कण्ठावश |
| गत | ६. | रहित हो गये | उन्मथित | १०. | विह्वल होकर |
| व्यथः । | ५. | चिन्ता से | आशयः ॥ | ६. | चित्त से |

श्लोकार्थ—महाराज मनु अनुरूप पति को अपनी पुत्री देकर चिन्ता से रहित हो गये और चलते समय उन्होंने उत्कण्ठा वश चित्त से विह्वल होकर दोनों भुजाओं से उसका आलिंगन किया ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

**अशक्नुवंस्तद्विरहं मुञ्चन् बाष्पकलां मुहुः ।**
**आसिञ्चदम्ब वत्सेति नेत्रोदैर्दुहितुः शिखाः ॥२५॥**

पदच्छेद—

आशक्नुवन् तद् विरहम मुञ्चन् बाष्पकलाम् मुहुः ।
आसिञ्चत् अम्ब वत्स इति नेत्र उदैः दुहितुः शिखाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अशक्नुवन् | १. | महाराज मनु | आसिञ्चत् | १४. | भिगो दिया |
| तद् | २. | पुत्री के | अम्ब | ८. | हे बेटी ! |
| विरहम् | ३. | वियोग को (न सह सकते हुये) | वत्स | ६. | हे बेटी ! |
| मुञ्चन् | ७. | बहाने लगे | इति | १०. | कहकर |
| दाष्प | ५. | आँसुओं की | नेत्र | ११. | आँखों के |
| कलाम् | ६. | धारा | उदैः | १२. | जल से |
| मुहुः । | ४. | अपनी आँखों से | दुहितुः शिखाः ॥ | १३. | पुत्री के, सिरके बालों को |

श्लोकार्थ—महाराज मनु पुत्री के वियोग को न सह सके ; अपनी आँखों से आँसुओं की धारा बहाने लगे । हे बेटी ! हे बेटी ! कहकर आँखों के जल से पुत्री के सिर के बालों को भिगो दिया ॥

## षड्विंशः श्लोकः

**आमन्त्र्य तं मुनिवरमनुज्ञातः सहानुगः ।**
**प्रतस्थे रथमारुह्य सभार्यः स्वपुरं नृपः ॥२६॥**

पदच्छेद—

आमन्त्र्य तम् मुनिवरम् अनुज्ञातः सह अनुगः ।
प्रतस्थे रथम् आरुह्य सभार्यः स्व पुरम् नृपः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आमन्त्र्य | ३. | पूछ कर (और) | प्रतस्थे | १२. | प्रस्थान किया |
| तम् | २. | उन कर्दम जी से | रथम् | ७. | रथ पर |
| मुनिवर | १. | मुनि श्रेष्ठ | आरुह्य | ८. | चढ़कर |
| अनुज्ञातः | ४. | अनुमति पाकर | सभार्यः | ६. | अपनी पत्नी के साथ |
| सह | १०. | साथ | स्व पुरम् | ११. | अपनी राजधानी को |
| अनुगः । | ६. | सेवकों के | नृपः ॥ | ५. | मनु महाराज ने |

श्लोकार्थ—मुनि श्रेष्ठ उन कर्दम जी से पूछ कर और अनुमति पाकर मनु महाराज ने अपनी पत्नी के साथ रथ पर चढ़ कर सेवकों के साथ अपनी राजधानी को प्रस्थान किया ।

## सप्तविंशः श्लोकः

उभयोर्ऋषिकुल्यायाः सरस्वत्याः सुरोधसोः ।
ऋषीणामुपशान्तानां पश्यन्नाश्रमसम्पदः ॥२७॥

पदच्छेद—

उभयोः ऋषिः कुल्यायाः सरस्वत्याः सुरोधसोः ।
ऋषीणाम् उपशान्तानाम् पश्यन् आश्रम सम्पदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उभयोः | ४. | दोनों | ऋषीणाम् | ७. | ऋषियों के |
| ऋषिः | १. | उन्होंने मार्ग में (ऋषियों से) | उपशान्तानाम् | ६. | प्रशान्त चित्त |
| कुल्यायाः | २. | सेवित | पश्यन् | १० | दर्शन किया |
| सरस्वत्याः | ३. | सरस्वती नदी के | आश्रम | ८ | आश्रमों की |
| सुरोधसोः । | ५. | किनारों पर स्थित | सम्पदः ॥ | ९. | शोभा का |

श्लोकार्थ—उन्होंने मार्ग में ऋषियों से सेवित सरस्वती नदी के दोनों किनारों पर स्थित प्रशान्त चित्त ऋषियों के आश्रमों की शोभा का दर्शन किया ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

तमायान्तमभिप्रेत्य ब्रह्मावर्तात्प्रजाः पतिम् ।
गीतसंस्तुतिवादित्रैः प्रत्युदीयुः प्रहर्षिताः ॥२८॥

पदच्छेद—

तम् आयान्तम् अभिप्रेत्य ब्रह्मावर्तात् प्रजाः पतिम् ।
गीत संस्तुति वादित्रैः प्रत्युदीयुः प्रहर्षिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | २. | उन् महाराज मनु को | गीत | ७. | गीत |
| आयान्तम् | ३. | आया हुआ | संस्तुति | ८. | स्तुति और |
| अभिप्रेत्य | ४. | जान कर | वादित्रैः | ९. | गाजे-बाजे के साथ |
| ब्रह्मावर्तात् | ६. | नगरी से बाहर | प्रत्युदीयुः | ११ | अगवानी करने गई |
| प्रजाः | ५. | ब्रह्मावर्त की प्रजा | प्रहर्षिता ॥ | १०. | प्रसन्नता पूर्वक |
| पतिम् । | १. | अपने स्वामी | | | |

श्लोकार्थ—अपने स्वामी उन महाराज मनु को आया हुआ जान कर ब्रह्मावर्त की प्रजा नगरी से लेकर गीत, स्तुति और गाजे-बाजे के साथ प्रसन्नता पूर्वक अगवानी करने गई ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**बर्हिष्मती नाम पुरी सर्वसम्पत्समन्विता ।**
**न्यपतन् यत्र रोमाणि यज्ञस्याङ्ग विधुन्वतः ॥२९॥**

पदच्छेद—

बर्हिष्मती नाम पुरी सर्व सम्पत् समन्विता ।
न्यपतन् यत्र रोमाणि यज्ञस्य अङ्गम् विधुन्वतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बर्हिष्मती | १. | बर्हिष्मती | न्यपतन् | १२. | गिरे थे |
| नाम | २. | नाम की | यत्र | ७. | जहाँ पर |
| पुरी | ३. | राजधानी | रोमाणि | ११. | रोंये |
| सर्व | ४. | सब प्रकार की | यज्ञस्य | १०. | यज्ञस्वरूप वाराह भगवान के |
| सम्पत् | ५. | सम्पदाओं से | अङ्गम् | ८. | अपना शरीर |
| समन्विता । | ६. | सम्पन्न थी | विधुन्वतः ॥ | ९. | फटकारते समय |

श्लोकार्थ—बर्हिष्मती नाम की राजधानी सब प्रकार की सम्पदाओं से सम्पन्न थी । जहाँ पर अपना शरीर फटकारते समय यज्ञस्वरूप वाराह भगवान् के रोंये गिरे थे ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**कुशाः काशास्त एवासन् शश्वद्धरितवर्चसः ।**
**ऋषयो यैः पराभाव्य यज्ञघ्नान् यज्ञमीजिरे ॥३०॥**

पदच्छेद—

कुशाः काशाः ते एव आसन् शश्वत् हरित् वर्चसः ।
ऋषयः यैः पराभाव्य यज्ञघ्नान् यज्ञम् ईजिरे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कुशाः | ४. | कुश और | ऋषयः | ८. | ऋषियों ने |
| काशाः | ५. | काश | यैः | ७. | जिनसे |
| ते, एव | १. | वे रोंये, ही | पराभाव्य | १०. | तिरस्कृत करके |
| आसन् | ६. | हुये | यज्ञघ्नान् | ९. | यज्ञ द्रोही दैत्यों को |
| शश्वत् | २ | सदा | यज्ञम् | ११. | यज्ञ का |
| हरित, वर्चसः । | ३. | हरित, कान्ति वाले | ईजिरे ॥ | १२. | अनुष्ठान किया था |

श्लोकार्थ—वे रोयें ही सदा हरित कान्ति वाले कुश और काश हुये । जिन से ऋषियों ने यज्ञ द्रोही दैत्यों को तिरस्कृत करके यज्ञ का अनुष्ठान किया था ॥

# एकविंशः श्लोकः

**कुशकाशमयं बर्हिरास्तीर्य भगवान्मनुः ।**
**अयजद्यज्ञपुरुषं लब्धा स्थानं यतो भुवम् ॥२१॥**

पदच्छेद—

कुश काश मयम् बर्हिः अस्तीर्य भगवान् मनुः ।
अयजत् यज्ञ पुरुषम् लब्धा स्थानम् यतः भुवम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कुश | ३. | कुश (और) | अयजत् | १०. | आराधना की थी |
| काश | ४. | काश से | यज्ञ | ८. | यज्ञ |
| मयम् | ५. | बनी | पुरुषम् | ९. | पुरुष भगवान् श्री हरि की |
| बर्हिः | ६. | चटाई पर | लब्धा | १४. | प्राप्त किया था |
| अस्तीर्य | ७. | बैठकर | स्थानम् | १३. | निवास स्थान को |
| भगवान् | १. | महाराज | यतः | ११. | जिससे |
| मनुः । | २. | मनु ने | भुवम् ॥ | १२. | पृथ्वी रूप |

श्लोकार्थ—महाराज मनु के कुश और काश से बनी चटाई पर बैठकर यज्ञ पुरुष भगवान् श्री हरि की आराधना की थी। जिससे पृथ्वी रूप निवास स्थान को प्राप्त किया था॥

# द्वाविंशः श्लोकः

**बर्हिष्मती नाम विभुर्यां निर्विश्य समावसत् ।**
**तस्यां प्रविष्टो भवनं तापत्रयविनाशनम् ॥२२॥**

पदच्छेद—

बर्हिष्मती नाम विभु याम् निर्विश्य समावसत् ।
तस्याम् प्रविष्टः भवनम् तापत्रय विनाशनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बर्हिष्मती | २. | बर्हिष्मती | तस्याम् | ५. | उसमें |
| नाम | ३. | नाम की नगरी में | प्रविष्टः | १०. | प्रवेश किया |
| विभुयाम् | १. | मनु महाराज जिस | भवनम् | ९. | (अपने) भवन में |
| निर्विश्य | ६. | प्रवेश करके | तापत्रय | ७. | तीनों तापों को |
| समावसत् । | ४. | निवास करते थे | विनाशनम् ॥ | ८. | दूर करने वाले |

श्लोकार्थ—मनु महाराज जिस बर्हिष्मती नाम की नगरी में निवास करते थे। उसमें प्रवेश करके तीनों तापों को दूर करने वाले अपने भवन में प्रवेश किया॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**सभार्यः सप्रजः कामान् बुभुजेऽन्याविरोधतः ।**
**सङ्गीयमानसत्कीर्तिः सस्त्रीभिः सुरगायकैः ।**
**प्रत्यूषेष्वनुबद्धेन हृदा श्रृण्वन् हरेः कथाः ॥३३॥**

पदच्छेद— सभार्यः सप्रजः कामान् बुभुजे अन्य अविरोधतः । संगीयमान सत्कीर्तिः सस्त्रीभिः सुरगायकैः ॥ प्रत्यूषेषु अनुबद्धेन हृदा श्रृण्वन् हरेः कथाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सभार्यः | १. मनु महाराज ने अपनी पत्नी (और) | सस्त्रीभिः | ९. अपनी पत्नियों के साथ |
| सप्रजः | २. सन्तति के सहित | सुरगायकैः | ८. गन्धर्व गण |
| कामान् | ५. भोगों को | प्रत्यूषेषु | ७. प्रतिदिन प्रातः काल |
| बुभुजे | ६. भोगा | अनुबद्धेन | १२. प्रेम परिपूर्ण |
| अन्य | ३. धर्म, अर्थ और मोक्ष के | हृदा | १३. हृदय से |
| अविरोधतः | ४. अनुकूल | श्रृण्वन् | १६. श्रावण करते थे |
| संगीयमान | ११. गान करते थे (किन्तु वे) | हरेः | १४. श्री हरि की |
| सत्कीर्तिः | १०. उनके उत्तम यश का | कथाः ॥ | १५. कथाओं का ही |

श्लोकार्थ—मनु महाराज ने अपनी पत्नी और सन्तति के सहित धर्म, अर्थ और मोक्ष के अनुकूल भोगों को भोगा। प्रतिदिन प्रातः काल गन्धर्वगण अपनी पत्नियों के साथ उनके उत्तम यश का गान करते थे। किन्तु वे प्रेम परिपूर्ण हृदय से श्री हरि की कथाओं का ही श्रवण करते थे ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**निष्णातं योगमायासु मुनिं स्वायम्भुवं मनुम् ।**
**यदा भ्रंशयितुं भोगा न शेकुर्भगवत्परम् ॥३४॥**

पदच्छेद— निष्णातम् योगमायासु मुनिम् स्वायम्भुवम् मनुम् । यदा भ्रंशयितुम् भोगः न शेकुः भगवत् परम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| निष्णातम् | ४. कुशल थे | यदा | ५. फिर भी |
| योगमायासु | ३. इच्छित भोगों की रचना में | भ्रंशयितुम् | १०. भ्रमित करने में |
| मुनिम् | ६. मनन शील (और) | भोगाः | ९. विषय भोग |
| स्वायम्भुवम् | १. (यद्यपि) स्वायम्भुव | न, शेकु | ११. नहीं समर्थ हो सके |
| मनुम् । | २. मनु | भगवत् | ७. भगवान् में |
| | | परम् ॥ | ८. परायण होने से |

श्लोकार्थ—यद्यपि स्वायम्भुव मनु इच्छित भोगों की रचना में कुशल थे। फिर भी मननशील और भगवान् में परायण होने से विषय भोग भ्रमित करने में समर्थ नहीं हो सके ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

**अयातयामास्तस्यासन् यामाः स्वान्तरयापनाः ।**
**शृण्वतो ध्यायतो विष्णोः कुर्वतो ब्रुवतः कथाः ॥३५॥**

पदच्छेद—

अयात यामाः तस्य आसन् यामाः स्वान्तर यापनाः ।
शृण्वतः ध्यायतः विष्णोः कुर्वतः ब्रुवतः कथाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अयात | ११. | व्यर्थ में व्यतीत | शृण्वतः | ३. | श्रवण |
| यामाः | १२. | नहीं | ध्यायतः | ४. | ध्यान |
| तस्य | ६. | उनके | विष्णोः | १. | भगवान् श्री हरि की |
| आसन् | १३. | हुये | कुर्वतः | ५. | रचना (और) |
| यामाः | १०. | क्षण | ब्रुवतः | ६. | वर्णन करते रहने से |
| स्वान्तर | ७. | मन्वन्तर को | कथाः ॥ | २. | कथाओं का |
| यापनाः । | ८. | बिताने में | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि की कथाओं का श्रवण, ध्यान, रचना और वर्णन करते रहने से मन्वन्तर को बिताने में उनके क्षण व्यर्थ में व्यतीत नहीं हुये ॥

## षट्त्रिंशः श्लोकः

**स एवं स्वान्तरं निन्ये युगानामेकसप्ततिम् ।**
**वासुदेवप्रसङ्गेन परिभूतगतित्रयः ॥३६॥**

पदच्छेद—

सः एवम् स्वान्तरम् निन्ये युगानाम् एक सप्ततिम् ।
वासुदेव प्रसङ्गेन परिभूत गति त्रयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ७. | वे मनु महाराज | वासुदेव | २. | भगवान् श्री हरि के |
| एवम् | १. | इस प्रकार | प्रसङ्गेन | ३. | कथा प्रसङ्ग से |
| स्वान्तरम् | ८. | अपने मन्वन्तर के | परिभूत | ४. | दूर रखते हुये |
| निन्ये | ११. | बिता दिये | गति | ६. | अवस्थाओं और गुणों को |
| युगानाम् | १०. | चतुर्युग को | त्रयः ॥ | ५. | तीनों |
| एक सप्ततिम् । | ९. | एकहत्तर | | | |

श्लोकार्थ—इस प्रकार भगवान् श्रीहरि के कथा प्रसङ्ग से दूर रखते हुये तीनों अवस्थाओं और तीनों गुणों को वे मनु महाराज अपने मन्वन्तर के एकहत्तर चतुर्युग को बिता दिये ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

**शारीरा मानसा दिव्या वैयासे ये च मानुषाः ।**
**भौतिकाश्च कथं क्लेशा बाधन्ते हरिसंश्रयम् ॥३७॥**

पदच्छेद—

शरीराः मानसा दिव्या वैयासे ये च मानुषाः ।
भौतिकाः च कथम् क्लेशा बाधन्ते हरि संश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शरीराः | २. | शरीरिक | भौतिकाः | ६. | भौतिक |
| मानसा | ३. | मानसिक | च | ५. | तथा |
| दिव्या | ४. | दैविक | कथम् | १३. | किस प्रकार कष्ट |
| वैयासे | १. | हे विदुर जी ! | क्लेशा | १०. | दुःख (है वे) |
| ये | ६. | जो | बाधन्ते | १४. | पहुँचा सकते हैं |
| च | ७. | और | हरि | ११. | श्री हरि के |
| मानुषाः । | ८. | मनुष्य कृत | संश्रयम् ॥ | १२. | आश्रितजन को |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! शारीरिक, मानसिक, दैविक तथा भौतिक और मनुष्यकृत जो दुःख हैं; वे श्री हरि के आश्रितजन को किस प्रकार कष्ट पहुँचा सकते हैं ॥

## अष्टत्रिंशः श्लोकः

**यः पृष्टो मुनिभिः प्राह धर्मान्नानाविधाञ्छुभान् ।**
**नृणां वर्णाश्रमाणां च सर्वभूतहित सदा ॥३८॥**

पदच्छेद—

यः पृष्टो मुनिभिः प्राह धर्मान् नाना विधान् शुभान् ।
नृणाम् वर्ण आश्रमाणाम् च सर्वभूत हितः सदा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ४. | जिन्होंने | नृणाम् | ८. | मनुष्यों के |
| पृष्टो | ६. | पूछने पर | वर्ण | ६. | चारों वर्ण |
| मुनिभिः | ५. | मुनियों के | आश्रमाणाम् | १०. | चारों आश्रमों के |
| प्राह | १४. | बताया है | च | १०. | और |
| धर्मान् | १३. | धर्मों को | सर्वभूत | २. | सभी प्राणियों के |
| नाना, विधान् | ७. | अनेक, प्रकार के | हितः | ३. | कल्याण में लगे हुये |
| शुभान् । | १२. | मंगलमय | सदा ॥ | १. | सर्वदा |

श्लोकार्थ—सर्वदा सभी प्राणियों के कल्याण में लगे हुये जिन्होंने मुनियों के पूछने पर अनेक प्रकार के मनुष्यों के चारों वर्णों और चारों आश्रमों के मंगलमय धर्मों को बताया है ॥

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

एतत्त आदिराजस्य मनोश्चरितमद्भुतम् ।
वर्णितं वर्णनीयस्य तदपत्योदयं शृणु ॥३९॥

पदच्छेद—

एतत् ते आदि राजस्य मनोः चरितम् अद्भुतम् ।
वर्णितम् वर्णनीयस्य तद् अपत्य उदयम् शृणु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतत् | ५. | इस | वर्णितम् | ९. | वर्णन किया (अब आप) |
| ते | ८. | आपसे | वर्णनीयस्य | ३. | वर्णन करने योग्य |
| आदि | १. | हे विदुर जी ! पृथ्वी के प्रथम | तद् | १०. | उनकी |
| राजस्य | २. | सम्राट् (और) | अपत्य | ११. | सन्तान देवहूति के |
| मनोः | ४. | महाराज मनु के | उदयम् | १२. | प्रभाव को |
| चरितम् | ७. | चरित का | शृणु ॥ | १३. | सुनें |
| अद्भुतम् । | ६. | अलौकिक | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! पृथ्वी के प्रथम सम्राट् और वर्णन करने योग्य महाराज मनु के इस अलौकिक चरित का आपसे वर्णन किया, अब आप उनकी सन्तान देवहूति के प्रभाव को सुनें ।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीय स्कन्धे द्वाविंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२२॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

त्रयोविंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

**पितृभ्यां प्रस्थिते साध्वी पतिमिङ्गितकोविदा ।**
**नित्यं पर्यचरत्प्रीत्या भवानीव भवं प्रभुम् ॥१॥**

पदच्छेद—

पितृभ्याम् प्रस्थिते साध्वी पतिम् इङ्गित कोविदा ।
नित्यम् पर्यचरत् प्रीत्या भवानी इव भवम् प्रभुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पितृभ्याम् | ५. | अपने माता-पिता के | नित्यम् | ७. | प्रतिदिन |
| प्रस्थिते | ६. | चले जाने पर | पर्यचरत् | ९. | सेवा करती थी |
| साध्वी | ४. | साध्वी देवहूति | प्रीत्या | ८. | प्रेम से (पति कर्दम जी की) |
| पतिम् | १. | अपने पति कर्दम जी के | भवानी | ११. | पार्वती |
| इङ्गित | २. | आशय को | इव | १०. | जैसे |
| कोविदा । | ३. | जानने में चतुर | भवम् | १३. | शंकर की सेवा करती हैं |
| | | | प्रभुम् ॥ | १२. | भगवान् |

श्लोकार्थ—अपने पति कर्दम जी के आशय को जानने में चतुर साध्वी देवहूति अपने माता-पिता के चले जाने पर प्रतिदिन प्रेम से पति कर्दम जी की सेवा करती थीं। जैसे पार्वती भगवान् शंकर की सेवा करती हैं ॥

## द्वितीयः श्लोकः

**विश्रम्भेणात्मशौचेन गौरवेण दमेन च ।**
**शुश्रूषया सौहृदेन वाचा मधुरया च भोः ॥२॥**

पदच्छेद—

विश्रम्भेण आत्म शौचेन गौरवेण दमेन च ।
शुश्रूषया सौहृदेन वाचा मधुरया च भोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विश्रम्भेण | २. | (देवहूति ने) विश्वास | शुश्रूषया | ७. | सेवा |
| आत्म | ३. | आत्म | सौहृदेन | ८. | प्रेम |
| शौचेन | ४. | शुद्धि | वाचा | ११. | वाणी से |
| गौरवेण | ५. | गौरव | मधुरया | १०. | मधुर |
| दमेन | ६. | संयम | च | ९. | और |
| च । | १२. | अपने पति को प्रसन्न कर लिया | भोः ॥ | १. | हे विदुर जी ! |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! देवहूति ने विश्वास, आत्म-शुद्धि, गौरव, संयम, सेवा, प्रेम और मधुर वाणी से अपने पति को प्रसन्न कर लिया।

## तृतीयः श्लोकः

विसृज्य कामं दम्भं च द्वेषं लोभमघं मदम् ।
अप्रमत्तोद्यता नित्यं तेजीयांसमतोषयत् ॥३॥

पदच्छेद—

विसृज्य कामम् दम्भम् च द्वेषम् लोभम् अघम् मदम् ।
अप्रमत्तः उद्यता नित्यम् तेजीयांसम् समतोषयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विसृज्य | ११. | त्यागकर | अघम् | ८. | पाप |
| कामम् | ४. | विषय-वासना | मदम् । | १०. | घमण्ड को |
| दम्भम् | ५. | पाखण्ड | अप्रमत्तः | २. | सावधान (और) |
| च | ६. | और | उद्यता | ३. | सेवा में तत्पर (देवहूति ने) |
| द्वेषम् | ६. | वैर-भाव | नित्यम् | १. | सदा |
| लोभम् | ७. | लालच | तेजीयांसम् | १२. | अत्यन्त तेजस्वी (अपने पति को) |
| | | | समतोषयत् ॥ | १३. | सन्तुष्ट कर दिया |

श्लोकार्थ—सदा सावधान और सेवा में तत्पर देवहूति ने विषय-वासना, पाखण्ड, वैर-भाव, लालच पाप और घमण्ड को त्याग कर अत्यन्त तेजस्वी अपने पति को सन्तुष्ट कर दिया ॥

## चतुर्थः श्लोकः

स वै देवर्षिवर्यस्तां मानवीं समनुव्रताम् ।
दैवाद्गरीयसः पत्युराशासानां महाशिषः ॥४॥

पदच्छेद—

सः वै देवर्षिवर्य ताम् मानवीम् समनुव्रताम् ।
दैवात् गरीयसः पत्युः आशासाम् महाशिषः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १०. | कर्दम जी | दैवात् | १. | भाग्य से (भी) |
| वै | ११. | प्रसन्न हो गये | गरीयसः | २. | श्रेष्ठ (और) |
| देवर्षिवर्य | ९. | मुनिश्रेष्ठ | पत्युः | ५. | अपने पति की |
| ताम् | ८. | उस देवहूति पर | आशासाम् | ३. | आशाओं को |
| मानवीम् | ७. | मनु की पुत्री | महाशिषः ॥ | ४. | देने में समर्थ |
| समनुव्रताम् । | ६. | सेवा में लगी हुई | | | |

श्लोकार्थ—भाग्य से भी श्रेष्ठ और आशाओं को देने में समर्थ अपने पति की सेवा में लगी हुई मनु की पुत्री उस देवहूति पर मुनि श्रेष्ठ कर्दम जी प्रसन्न हो गये ॥

## पञ्चमः श्लोकः

**कालेन भूयसा क्षामां कर्शितां व्रतचर्यया ।**
**प्रेमगद्गदया वाचा पीडितः कृपयाब्रवीत् ॥५॥**

पदच्छेद—

कालेन भूयसा क्षामाम् कर्शिताम् व्रतचर्यया ।
प्रेमगद्गदया वाचा पीडितः कृपया अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालेन | २. | दिनों तक | प्रेमगद्गदया | ८. | प्रेम से गद्-गद् |
| भूयसा | १. | बहुत | वाचा | ६. | वाणी में |
| क्षामाम् | ४. | दुर्बल (और) | पीडितः | ७. | दुःखी होते हुये (कर्दम जी) |
| कर्शिताम् | ५. | कृश देखकर | कृपया | ६. | दया वश |
| व्रतचर्यया । | ३. | व्रतों का पालन करने से (देवहूति को) | अब्रवीत् ॥ | १०. | बोले |

श्लोकार्थ—बहुत दिनों तक व्रतों का पालन करने से देवहूति को दुर्बल और कृश देखकर दयावश दुःखी होते हुये कर्दम जी प्रेम से गद्-गद् वाणी में बोले ॥

## षष्ठः श्लोकः

कर्दम उवाच—

**तुष्टोऽहमद्य तव मानवि मानदायाः शुश्रूषया परमया परया च भक्त्या ।**
**यो देहिनामयमतीव सुहृत्स्वदेहो नावेक्षितः समुचितः क्षपितुं मदर्थे ॥६॥**

पदच्छेद—

तुष्टः अहम् अद्य तव मानवि मानदायाः शुश्रूषया परमया परया च भक्त्या ।
यः देहिनाम् अयम् अतीव सुहृत् स्वदेहः न अवेक्षितः समुचितः क्षपितुम् मदर्थे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तुष्टः | १०. | प्रसन्न हूँ | यः | १२. | जो |
| अहम् अद्य | ६. | मैं आज (तुमसे) | देहिनाम् | ११. | प्राणियों को |
| तव | ३. | तुम्हारी | अयम् | १३. | यह |
| मानवि | १. | हे मनु पुत्रि ! | अतीव सुहृत् | १५. | अत्यन्त प्रिय होता है (उसे) |
| मानदायाः | २. | मुझे आदर देने वाली | स्वदेहः | १४. | अपना शरीर |
| शुश्रूषया | ५. | सेवा | न | २०. | नहीं (की) |
| परमया | ४. | उत्तम | अवेक्षितः | १६. | परवाह |
| परया | ७. | परम | समुचितः | १८. | तनिक भी |
| च | ६. | और | क्षपितुम् | १७. | क्षीण करने में (तुमने) |
| भक्त्या | ८. | भक्ति से | मदर्थे ॥ | १६. | मेरे लिये |

श्लोकार्थ—हे मनु पुत्रि ! मुझे आदर देने वाली तुम्हारी उत्तम सेवा और परम भक्ति से मैं आज तुमसे प्रसन्न हूँ । प्राणियों को जो यह अपना शरीर अत्यन्त प्रिय होता है उसे मेरे लिये क्षीण करने में तुमने तनिक भी परवाह नहीं की ॥

## सप्तमः श्लोकः

**ये मे स्वधर्मनिरतस्य तपःसमाधिविद्यात्मयोगविजिता भगवत्प्रसादाः।**
**तानेव ते मदनुसेवनयावरुद्धान् दृष्टिं प्रपश्य वितराम्यभयानशोकान् ॥७॥**

पदच्छेद—ये मे स्वधर्म निरतस्य तपः समाधि विद्या आत्मयोग विजिता भगवत् प्रसादाः।
तान् एव ते मद् अनुसेवया अवरुद्धान् दृष्टिम् प्रपश्य वितरामि अभयान् अशोकान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | ७. | जो विभूतियाँ | तान् एव | १४. | उन विभूतियों को |
| मे | ८. | मुझे | ते | १६. | (मैं) तुम्हें |
| स्वधर्म | १. | अपने धर्म का | मद् अनुसेवया | १०. | मेरी सेवा से (तुम) |
| निरतस्य | २. | पालन करने से | अवरुद्धान् | १३. | (तथा) दुर्लभ |
| तपः समाधि | ३. | तपस्या, ध्यान | दृष्टिम् | १७. | देखने की शक्ति |
| विद्या | ४. | उपासना (और) | प्रपश्य | १५. | देखो |
| आत्मयोग | ५. | आत्म संयम के द्वारा | वितरामि | १८. | देता हूँ |
| विजिता | ६. | प्राप्त हुई हैं | अभयान् | ११. | भय (और) |
| भगवत् प्रसादाः। | ६. | भगवान् की कृपा स्वरूप | शोकान् ॥ | १२. | शोक से रहित |

श्लोकार्थ—अपने धर्म का पालन करने से तपस्या, ध्यान, उपासना और आत्मसंयम के द्वारा भगवान् की कृपा स्वरूप जो विभूतियाँ मुझे प्राप्त हुई हैं। मेरी सेवा से तुम भय और शोक से रहित तथा दुर्लभ उन विभूतियों को देखो। मैं तुम्हें देखने की शक्ति देता हूँ ॥

## अष्टमः श्लोकः

**अन्ये पुनर्भगवतो भ्रुव उद्विजृम्भविभ्रंशितार्थरचनाः किमुरुक्रमस्य।**
**सिद्धासि भुङ्क्ष्व विभवान्निजधर्मदोहान् दिव्यान्नरैर्दुरधिगान्नृपविक्रियाभिः ॥८॥**

पदच्छेद—अन्ये पुनः भगवतः भ्रुवः उद्विजृम्भ विभ्रंशित अर्थरचना किम् उरुक्रमस्य।
सिद्धा असि भुङ्क्ष्व विभवान् निजधर्म दोहान् दिव्यान् नरैः दुरधिगान् नृप, विक्रियाभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्ये | १. | दूसरे | सिद्धा | ६. | (तुम अब) कृत-कृत्य |
| पुनः भगवतः | ३. | तो, भगवान् | असि | १०. | हो गई हो (अतः) |
| भ्रुवः | ५. | भृकुटि के | भुङ्क्ष्व | १४. | भोगो |
| उद्विजृम्भ | ६. | विलास मात्र से | विभवान् | १३. | भोग को |
| विभ्रंशित | ७. | नष्ट हो जाते हैं | निजधर्म दोहान् | ११. | अपने पतिव्रत धर्म से प्राप्त हुये |
| अर्थरचना | २. | भोग | दिव्यान् | १२. | अलौकिक |
| किम् | ८. | अतः वे तुच्छ हैं | नरैः | १६. | सामान्य पुरुषों को (ये भोग) |
| उरुक्रमस्य। | ४. | श्री हरि को | दुरधिगान् | १७. | नहीं प्राप्त होते हैं |
| | | | नृप, विक्रियाभिः ॥ | १५. | मैं राजा हूँ, ऐसे अभिमानादि विकारों के कारण |

श्लोकार्थ—दूसरे भोग तो भगवान् श्री हरि की भृकुटि के विलास मात्र से नष्ट हो जाते हैं। अतः वे तुच्छ हैं। तुम अब कृत-कृत्य हो गई हो। अतः अपने पतिव्रत धर्म से प्राप्त हुये अलौकिक भोग को भोगो। मैं राजा हूँ ऐसे अभिमानादि विकारों के कारण सामान्य पुरुषों को ये भोग नहीं प्राप्त होतेहैं ॥

## नवमः श्लोक

**एवं ब्रुवाणमबलाखिलयोगमायाविद्याविचक्षणमवेक्ष्य गताधिरासीत् ।**
**सम्प्रश्रयप्रणयविह्वलया गिरेषद्व्रीडावलोकविलसद्धसिताननाऽऽह ॥९॥**

पदच्छेद—एवम् ब्रुवाणम् अवला अखिल योगमाया विद्या विचक्षणम् अवेक्ष्य गताधिः आसीत् ।
सम्प्रश्रय प्रणय विह्वलया गिरा ईषद् व्रीडा अवलोक विलसत हसित् आनना आह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् ब्रुवाणम् | १. | इस प्रकार कहते हुये (अपने पति को) | विह्वलया | १४. | गद्-गद् |
| अवला | ५. | देवहूति | गिरा | १५. | वाणी में |
| अखिल, योगमाया | २. | सम्पूर्ण, अलौकिक सिद्धियों की | ईषद् व्रीडा | ८. | कुछ संकोच भरी |
| विद्या, विचक्षणम् | ३. | विद्या में कुशल | अवलोक | ९. | चितवन और |
| अवेक्ष्य | ४. | जानकर | विलसत् | ११. | प्रसन्न हो गया |
| गताधिः, आसीत् । | ६. | चिन्तारहित हो गईं | हसित | १०. | मधुर मुसकान से |
| सम्प्रश्रय | १२. | (वे) विनय (और) | आनना | ७. | उनका मुख |
| प्रणय | १३. | प्रेम के कारण | आह ॥ | १६. | बोलीं |

श्लोकार्थ—इस प्रकार कहते हुये अपने पति को सम्पूर्ण अलौकिक सिद्धियों की विद्या में कुशल जानकर देवहूति चिन्तारहित हो गईं। उनका मुख कुछ संकोच भरी चितवन और मधुर मुसकान से प्रसन्न हो गया। वे विनय और प्रेम के कारण गद्-गद् वाणी में बोलीं ॥

## दशमः श्लोकः

देवहूति उवाच—

**राद्धं बत द्विजवृषैतदमोघयोगमायाधिपे त्वयि विभो तदवैमि भर्तुः ।**
**यस्तेऽभ्यधायि समयः सकृदङ्गसङ्गो भूयाद्गरीयसि गुणः प्रसवः सतीनाम् ॥१०॥**

पदच्छेद—राद्धम् बत द्विजवृष एतद् अमोघ योगमाया अधिपे त्वयि विभो तद् अवैमि भर्तुः ।
यः ते अभ्यधायि समयः सकृद् अङ्गसङ्गः भूयात् गरीयसि गुणः प्रसवः सतीनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| राद्धम् | ९. | सिद्धियों को मैं | यः | १३. | साथ रहने की जो |
| बत | ४. | सौभाग्य है कि | ते | १२. | आपने (गर्भाधान तक) |
| द्विजवृष | १. | हे विप्रवर ! | अभ्यधायि | १५. | की थी (अतः) |
| एतद् | ३. | यह | समयः | १४. | प्रतिज्ञा |
| अमोघ | ५. | कभी निष्फल न होने वाली | सकृद् | १६. | एक बार हमारा |
| योगमाया | ६. | योग की सिद्धियों के | अङ्गसङ्गः | १७. | शारीरिक सम्बन्ध |
| अधिपे, त्वयि | ७. | स्वामी आपकी | भूयात् | १८. | होना चाहिये |
| विभो | ११. | हे प्रभो ! | गरीयसि | २०. | श्रेष्ठ पति से |
| तद् | ८. | उन | गुणः | २२. | परम लाभ है |
| अवैमि | १०. | जानती हूँ | प्रसवः | २१. | सन्तान प्राप्ति |
| भर्तुः । | २. | हे स्वामिन् ! | सतीनाम् ॥ | १९. | पतिव्रताओं के लिये |

श्लोकार्थ—हे विप्रवर ! हे स्वामिन् ! यह सौभाग्य है कि कभी निष्फल न होने वाली योग की सिद्धियों के स्वामी आपकी उन सिद्धियों को मैं जानती हूँ। हे प्रभो ! आपने गर्भाधान तक साथ रहने की जो प्रतिज्ञा की थी। अतः एकबार हमारा शारीरिक सम्बन्ध होना चाहिये। पतिव्रताओं के लिये श्रेष्ठपति से सन्तान प्राप्ति ही परम लाभ है ॥

## एकादशः श्लोक

**तत्रेतिकृत्यमुपशिक्ष यथोपदेशं येनैष मे कर्शितोऽतिरिरंसयाऽऽत्मा ।**
**सिद्ध्येत ते कृतमनोभवधर्षिताया दीनस्तदीश भवनं सदृशं विचक्ष्व ॥११॥**

पदच्छेद—
तत्र इति कृत्यम् उपशिक्ष यथा उपदेशम् येन एषः मे कर्शितः अतिरिरंसया आत्मा ।
सिद्धयेत ते कृत मनोभव धर्षितायाः दीनः तद् ईश भवनम् सदृशम् विचक्ष्व ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्र | १. | हमारे (समागम के लिये) | सिध्येत | १४. | योग्य हो सके |
| इति कृत्यम् | ४. | कर्तव्य का | ते | १३. | आपके |
| उपशिक्ष | ५. | उपदेश करें | कृत | १६. | आपके प्रति उत्पन्न |
| यथा | ३. | अनुसार | मनोभव | १७. | काम पीड़ा से |
| उपदेशम्, | २. | (मुझे) शास्त्र के | धर्षितायाः | १८. | मैं पीड़ित हूँ |
| येन | ६. | जिससे | दीनः | ९. | दुर्बल |
| एषः | ११. | यह | तद् | १९. | अतः |
| मे | १०. | मेरा | ईश | १५. | हे स्वामि ! |
| कर्शितः | ८. | अत्यन्त कृष (और) | भवनम् | २१. | भवन बनाने का भी |
| अतिरिरंसया | ७. | मिलन की इच्छा से | सदृशम् | २०. | एक उपयुक्त |
| आत्मा । | १२. | शरीर | विचक्ष्व ॥ | २२. | विचार करें |

श्लोकार्थ—हमारे समागम के लिये मुझे शास्त्र के अनुसार कर्तव्य का उपदेश करें । जिससे मिलन की इच्छा से अत्यन्त कृश और दुर्बल मेरा यह शरीर आपके योग्य हो सके । हे स्वामि ! आपके प्रति उत्पन्न काम पीड़ा से मैं पीड़ित हूँ । अतः एक उपयुक्त भवन बनाने का भी विचार करें ॥

## द्वादशः श्लोकः

**मैत्रेय उवाच–प्रियायाः प्रियमन्विच्छन् कर्दमो योगमास्थितः ।**
**विमानं कामगं क्षत्तस्तर्ह्येवाविरचीकरत् ॥१२॥**

पदच्छेद— प्रियायाः प्रियमन्विच्छन् कर्दमः योगम् आस्थितः ।
विमानम् कामगम् क्षत्तः तर्हि एव अविरचीकरत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रियायाः | १. | अपनी प्रियतमा देवहूति की | विमानम् | ११. | विमान का |
| प्रियम् | २. | इच्छा को | कामगम् | १०. | एक इच्छाचारी |
| अन्विच्छन् | ३. | पूर्ण करने के लिये | क्षत्तः | ७. | हे विदुर जी ! |
| कर्दमः | ४. | कर्दम ऋषि | तर्हि | ८. | उसी समय |
| योगम् | ५. | ध्यान में | एव | ९. | उन्होंने |
| आस्थितः | ६. | स्थित हो गये | अविरचीकरत् ॥ | १२. | निर्माण किया |

श्लोकार्थ—अपनी प्रियतमा देवहूति की इच्छा को पूर्ण करने के लिये कर्दम ऋषि ध्यान में स्थित हो गये । हे विदुर जी ! उसी समय उन्होंने एक इच्छाचारी विमान का निर्माण किया ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

सर्वकामदुघं दिव्यं सर्वरत्नसमन्वितम् ।
सर्वर्द्ध्युपचयोदर्कं मणिस्तम्भैरुपस्कृतम् ॥१३॥

पदच्छेद—

सर्वकाम दुघम् दिव्यम् सर्व रत्न समन्वितम् ।
सर्व ऋद्धि उपचय उदर्कम् मणिस्तम्भः उपस्कृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वकाम | १. | वह विमान सभी भोगों को | सर्व | ६. | सभी |
| दुघम् | २. | देने वाला | ऋद्धि | ७. | ऐश्वर्यों को |
| दिव्यम् | १०. | अत्यन्त सुन्दर (और) | उपचय | ९. | वृद्धि से सम्पन्न |
| सर्व | ३. | सब प्रकार के | उदर्कम् | ८. | उत्तरोत्तर |
| रत्न | ४. | रत्नों से | मणि स्तम्भैः | ११. | मणिमय खम्भों से |
| समन्वितम् । | ५. | युक्त | उपस्कृतम् ॥ | १२. | सुशोभित था |

श्लोकार्थ—वह विमान सभी भोगों को देने वाला सब प्रकार के रत्नों से युक्त सभी ऐश्वर्यों की उत्तरोत्तर वृद्धि से सम्पन्न अत्यन्त सुन्दर और मणिमय खम्भों से सुशोभित था ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

दिव्योपकरणोपेतं सर्वकालसुखावहम् ।
पट्टिकाभिः पताकाभिर्विचित्राभिरलंकृतम् ॥१४॥

पदच्छेद—

दिव्य उपकरण उपेतम् सर्वकाल सुखावहम् ।
पट्टिकाभिः पताकाभिः विचित्राभिः अलंकृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दिव्य | १. | उसमें मनोहर | पट्टिकाभिः | ८. | रेशमी |
| उपकरण | २. | सामग्रियाँ | पताकाभिः | ९. | झन्डियों से |
| उपेतम् | ३. | रखी थी (वह) | विचित्राभिः | ७. | अनेक रंग की |
| सर्वकाल | ४. | सभी ऋतुओं में | अलंकृतम् ॥ | १०. | सजाया गया था |
| सुखावहम् । | ५. | आनन्द देने वाला था (और) | | | |

श्लोकार्थ—उसमें मनोहर सामग्रियाँ रखी थीं । वह सभी ऋतुओं में आनन्द देने वाला था और अनेक रंग की रेशमी झन्डियों से सजाया गया था ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

स्रग्भिर्विचित्रमाल्याभिर्मञ्जुशिञ्जत्षडङ्घ्रिभिः ।
दुकूलक्षौमकौशेयैर्नानावस्त्रैर्विराजितम् ॥१५॥

पदच्छेद—

स्रग्भिः विचित्र माल्याभिः मञ्जु शिञ्जत् षडङ्घ्रिभिः ।
दुकूल क्षौम कौशेयैः नाना वस्त्रैः विराजितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्रग्भिः | ३. | मालाओं से | दुकूल | ९. | दुपट्टों से (तथा) |
| विचित्र | १. | अनेक रंग के | क्षौम | ७. | सूती [और] |
| माल्याभिः | २. | पुष्पों की | कौशेयैः | ८. | रेशमी |
| मञ्जु | ५. | मधुर | नाना | १०. | अनेक प्रकार के |
| शिञ्जत् | ६. | गुञ्जार से | वस्त्रैः | ११. | वस्त्रों से (वह विमान) |
| षडङ्घ्रिभिः । | ४. | मोरों की | विराजितम् ॥ | १२. | सुशोभित था |

श्लोकार्थ—अनेक रंग के पुष्पों की मालाओं से मोरों की मधुर गुञ्जार से सूती और रेशमी दुपट्टों से तथा अनेक प्रकार के वस्त्रों से वह विमान सुशोभित था ॥

## षोडशः श्लोकः

उपर्युपरि विन्यस्तनिलयेषु पृथक्पृथक् ।
क्षिप्तैः कशिपुभिः कान्तं पर्यङ्कव्यजनासनैः ॥१६॥

पदच्छेद—

उपरि-उपरि विन्यस्त निलयेषु पृथक्-पृथक् ।
क्षिप्तैः कशिपुभिः कान्तम् पर्यङ्कः व्यजन आसनैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उपरि-उपरि | १. | एक के ऊपर एक | क्षिप्तैः | ६. | रखी गई |
| विन्यस्त | २. | बनाये गये | कशिपुभिः | ७. | शय्या |
| निलयेषु | ३. | कमरों में | कान्तम् | ११. | मनोहर लग रहा था |
| पृथक् | ४. | अलग | पर्यङ्कः | ८. | पलंग |
| पृथक् । | ५. | अलग | व्यजन | ९. | पंखे (और) |
| | | | आसनैः ॥ | १०. | आसनों से [वह विमान] |

श्लोकार्थ—एक के ऊपर एक बनाये गये कमरों में अलग-अलग रखी गई शय्या पलंग पंखें और आसनों से [वह विमान] मनोहर लग रहा था ॥

## सप्तदशः श्लोकः

तत्र तत्र विनिक्षिप्तनानाशिल्पोपशोभितम् ।
महामरकतस्थल्या जुष्टं विद्रुमवेदिभिः ॥१७॥

पदच्छेद—

तत्र-तत्र विनिक्षिप्त नाना शिल्प उपशोभितम् ।
महामरकत स्थल्या जुष्टम् विद्रुम वेदिभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तत्र-तत्र | १. जहाँ-तहाँ दिवारों में | महामरकत | ६. उसमें महामूल्य पन्ने को |
| विनिक्षिप्त | २. की गई | स्थल्या | ७. फर्श [और) |
| नाना | ३. अनेक प्रकार की | जुष्टम् | १०. बनाई गई थीं |
| शिल्प | ४. चित्रकारी से [वह विमान] | विद्रुम | ८. मूँगे की |
| उपशोभितम् । | ५. सुन्दर लग रहा था | वेदिभिः ॥ | ९. चौकियाँ |

श्लोकार्थ—जहाँ तहाँ दिवारों में की गई अनेक प्रकार की चित्रकारी से वह विमान सुन्दर लग रहा था । उसमें महामूल्य पन्ने की फर्श और मूँगे की चौकियाँ बनाई गई थी ॥

## अष्टदशः श्लोकः

द्वाःसु विद्रुमदेहल्या भातं वज्रकपाटवत् ।
शिखरेष्विन्द्रनीलेषु हेमकुम्भैरधिश्रितम् ॥१८॥

पदच्छेद—

द्वाःसु विद्रुम देहल्या भातम् वज्र कपाटवत् ।
शिखरेषु इन्द्रनीलेषु हेम कुम्भैः अधिश्रितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| द्वाःसु | ३. दरवाजों में | शिखरेषु | ८. शिखरों पर |
| विद्रुम | १. उस विमान में मूँगे की | इन्द्रनीलेषु | ७. इन्द्रनील मणि के |
| देहल्याः | २. देहली के | हेम | ९. सोने के |
| भातम् | ६. सुन्दर लग रहे थे (तथा] | कुम्भैः | १०. कलश |
| वज्र | ४. हीरे के | अधिश्रितम् ॥ | ११. रखे हुये थे |
| कपाटवत् । | ५. किवाड़ | | |

श्लोकार्थ—उस विमान में मूँगे की देहली के दरवाजों में हीरे के किवाड़ सुन्दर लग रहे थे । इन्द्रनील मणि के शिखरों पर सोने के कलश रखे हुये थे ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

चक्षुष्मत्पद्मरागाग्र्यैर्वज्रभित्तिषु निर्मितैः ।
जुष्टं विचित्रवैतानैर्महार्हैर्हेमतोरणैः ॥१९॥

पदच्छेद—

चक्षुष्मत् पद्मराग अग्र्यैः वज्र भित्तिषु निर्मितैः ।
जुष्टम् विचित्र वितानैः महार्हैः हेम तोरणैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| चक्षुष्मत् | ६. आँख जैसे लग रहे थे | जुष्टम् | १२. सुशोभित था |
| पद्मराग | ५. माणिक्य (उसकी) | विचित्र | ७. वह बहुरंगी |
| अग्र्यैः | ४. उत्तम कोटि के | वितानैः | ८. चंदोवों से (और) |
| वज्र | १. हीरे की | महार्हैः | ९. बहुमूल्य |
| भित्तिषु | २. दीवारों में | हेम | १०. सोने की |
| निर्मितैः । | ३. जड़े गये | तोरणैः ॥ | ११. वन्दनवारों से |

श्लोकार्थ—हीरे की दीवारों में जड़े गये उत्तम कोटि की माणिक्य उसकी आँख जैसे लग रहे थे । वह बहुरंगी चंदोवों से और बहुमूल्य सोने की वन्दनवारों से सुशोभित था ॥

## विंशः श्लोकः

हंसपारावतव्रातैस्तत्र तत्र निकूजितम् ।
कृत्रिमान् मन्यमानैः स्वानधिरुह्याधिरुह्य च ॥२०॥

पदच्छेद—

हंस पारावत व्रातैः तत्र-तत्र निकूजितम् ।
कृत्रिमान् मन्यमानैः स्वान् अधिरुह्य अधिरुह्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| हंस | ५. हंसों | कृत्रिमान् | २. चित्रों में बनाये गये (हंसों और कबूतरों को) |
| पारावत | ७. कबूतरों को | मन्यमानैः | ४. समझ कर |
| व्रातैः | ८. झुण्ड | स्वान् | ३. वास्तविक |
| तत्र-तत्र | १. जहाँ-तहाँ | अधिरुह्य | ९. वहाँ बैठ |
| निकूजितम् । | ११. आवाज़ कर रहे थे | अधिरुह्य | १०. बैठ कर |
| | | च ॥ | ६. और |

श्लोकार्थ—जहाँ-तहाँ चित्रों में बनाये गये हंसों और कबूतरों को वास्तविक समझ कर हंसों और कबूतरों के झुण्ड वहाँ बैठ-बैठकर आवाज़ कर रहे थे ॥

## एकविंशः श्लोकः

**विहारस्थानविश्रामसंवेशप्राङ्गणाजिरैः ।**
**यथोपजोषं रचितैर्विस्मापनमिवात्मनः ॥२१॥**

पदच्छेद—

विहार स्थान विश्राम संवेश प्राङ्गण अजिरैः ।
यथा उपजोषम् रचितैः विस्मापनम् इव आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विहार | ३. | क्रीडा | यथा | २. | अनुसार |
| स्थान | ४. | स्थल | उपजोषम् | १. | (उसमें) आवश्यकता के |
| विश्राम | ५. | शयन कक्ष | रचितैः | ९. | बनाये गये थे (जो) |
| संवेश | ६. | बैठक | विस्मापनम् | ११. | आश्चर्य |
| प्राङ्गण | ७. | आँगन (और) | इव | १२. | सा लगता था |
| अजिरैः । | ८. | चौक | आत्मनः ॥ | १०. | स्वयम् को |

श्लोकार्थ—उसमें आवश्यकता के अनुसार क्रीडा-स्थल, शयन-कक्ष, बैठक, उचांगन और चौक बनाये गये थे । जो स्वयम् को आश्चर्य-सा जगता था ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

**ईदृग्गृहं तत्पश्यन्तीं नातिप्रीतेन चेतसा ।**
**सर्वभूताशयाभिज्ञः प्रावोचत्कर्दमः स्वयम् ॥२२॥**

पदच्छेद—

ईदृग् गृहम् तत् पश्यन्तीम् न अति प्रीतेन चेतसा ।
सर्व भूत आशय अभिज्ञः प्रावोचत् कर्दमः स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ईदृग् | १. | देवहूति इस प्रकार के | सर्व | ८. | सभी |
| गृहम् | २. | घर को | भूत | ९. | प्राणियों के |
| तत् | ७. | अतः | आशय | १०. | आन्तरिक भाव को |
| पश्यन्तीम् | ६. | देख रही थी | अभिज्ञः | ११. | जानने वाले |
| न | ५. | नहीं | प्रावोचत् | १४. | बोले |
| अति | ३. | बहुत | कर्दमः | १२. | कर्दम जी |
| प्रीतेन चेतसा । | ४. | प्रसन्न मन से | स्वयम् ॥ | १३. | अपने आप देवहूति से |

श्लोकार्थ—देवहूति इस प्रकार के घर को बहुत प्रसन्न मन से नहीं देख रही थी । अतः सभी प्राणियों के आन्तरिक भाव को जानने वाले कर्दम जी अपने आप देवहूति से बोले ॥

# त्रयोविंशः श्लोकः

**निमज्ज्यास्मिन् ह्रदे भीरु विमानमिदमारुह।**
**इदं शुक्लकृतं तीर्थमाशिषां यापकं नृणाम् ॥२३॥**

**पदच्छेद—**

निमज्ज्य अस्मिन् ह्रदे भीरु विमानम् इदम् आरुह।
इदम् शुक्ल कृतम् तीर्थम् आशिषाम् यापकम् नृणाम् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निमज्ज्य | ४. | स्नान करके | इदम् | ८. | यह |
| अस्मिन् | २. | इस | शुक्ल | १०. | भगवान् श्री हरि के द्वारा |
| ह्रदे | ३. | बिन्दु सरोवर में | कृतम् | ११. | बनाया गया है (तथा) |
| भीरु | १. | हे भीरू | तीर्थम् | ९. | बिन्दुसर तीर्थ |
| विमानम् | ६. | विमान पर | आशिषाम् | १३. | सभी मनोरथों को |
| इदम् | ५. | इस | यापकम् | १४. | देने वाला है |
| आरुह। | ७. | चढ़ो | नृणाम्॥ | १२. | मनुष्यों के |

**श्लोकार्थ**—हे भीरू ! इस बिन्दु सरोवर में स्नान करके इस विमान पर चढ़ो। यह बिन्दुसर तीर्थ भगवान् श्री हरि के द्वारा बनाया गया है तथा मनुष्यों के सभी मनोरथों को देने वाला है ॥

# चतुर्विंशः श्लोकः

**सा तद्भर्तुः समादाय वचः कुवलयेक्षणा।**
**सरजं बिभ्रती वासो वेणीभूतांश्च मूर्धजान् ॥२४॥**

**पदच्छेद—**

सा तद् भर्तुः समादाय वचः कुवलय ईक्षणा।
सरजम् बिभ्रती वासः वेणीभूतान् च मूर्धजान् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा | ३. | देवहूति के | सरजम् | ४. | मटमैली |
| तद् | २. | उस | बिभ्रती | ६. | पहन रक्खी थी |
| भर्तुः | १०. | उसने पति के | वासः | ५. | साड़ी |
| समादाय | १२. | अनुकरण किया | वेणीभूतान् | ९. | चिपक जाने से लटदार हो गये थे |
| वचः | ११. | वचनों का | च | ७. | तथा |
| कुवलय ईक्षणा। | १. | कमल के समान आँखों वाली | मूर्धजान्॥ | ८. | (उसके) सिरे के बाल |

**श्लोकार्थ**—कमल के समान आँखों वाली उस देवहूति ने मटमैली साड़ी पहन रक्खी थी तथा उसके सिर के बाल चिपक जाने से लटदार हो गये थे। उसने पति के वचनों का अनुकरण किया ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

अङ्गं च मलपङ्केन संछन्नं शबलस्तनम् ।
आविवेश सरस्वत्याः सरः शिवजलाशयम् ॥२५॥

पदच्छेद—

अङ्गम् च मलपङ्केन संछन्नम् शबल स्तनम् ।
आविवेश सरस्वत्याः सरः शिव जलाशयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अङ्गम् | १. उसका शरीर | आविवेश | ११. प्रवेश किया |
| च | ४. और | सरस्वत्याः | ७. उसने सरस्वती नदी के |
| मलपङ्केन | २. मैल की परत से | सरः | १०. सरोवर में |
| संछन्नम् | ३. ढका हुआ था | शिव | ८. पवित्र |
| शबल | ६. ढीले पड़ गये थे | जलाशयम् ॥ | ९. जल से भरे हुये |
| स्तनम् । | ५. स्तन | | |

श्लोकार्थ—उसका शरीर मैल की परत से ढका हुआ था और स्तन ढीले पड़ गये थे । उसने सरस्वती नदी के पवित्र जल से भरे हुये सरोवर में प्रवेश किया ॥

## षड्विंशः श्लोकः

सान्तःसरसि वेश्मस्थाः शतानि दश कन्यकाः ।
सर्वाः किशोरवयसो ददर्शोत्पलगन्धयः ॥२६॥

पदच्छेद—

सा अन्तः सरसि वेश्मस्थाः शतानि दश कन्यकाः ।
सर्वाः किशोर वयसः ददर्श उत्पल गन्धयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सा | १. देवहूति ने | सर्वाः | ८. वे सभी |
| अन्तः | ३. अन्दर | किशोर | ९. किशोर |
| सरसि | २. सरोवर के | वयसः | १०. अवस्था की थीं (और) |
| वेश्मस्थाः | ४. महल में स्थित | ददर्श | ७. देखा |
| शतानि दश | ५. एक हजार | उत्पल | ११. उनके शरीर से कमल के समान |
| कन्यकाः । | ६. कन्याओं को | गन्धयः ॥ | १२. सुगन्ध (आ रही थी) |

श्लोकार्थ—देवहूति ने सरोवर के अन्दर महल में स्थित एक हजार कन्याओं को देखा । वे सभी किशोर अवस्था की थीं और उनके शरीर से कमल के समान सुगन्ध आ रही थी ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

**तां दृष्ट्वा सहसोत्थाय प्रोचुः प्राञ्जलयः स्त्रियः ।**
**वयं कर्मकरीस्तुभ्यं शाधि नः करवाम किम् ॥२७॥**

पदच्छेद—

ताम् दृष्ट्वा सहसा उत्थाय प्रोचुः प्राञ्जलयः स्त्रियः ।
वयम् कर्मकरीः तुभ्यम् शाधि नः करवाम किम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताम् | १. | देवहूति को | वयम् | ८. | हम आपकी |
| दृष्ट्वा | २. | देखकर | कर्मकरीः | ९. | दासियाँ हैं |
| सहसा | ४. | एकाएक | तुभ्यम् | १२. | आप के लिये |
| उत्थाय | ६. | खड़ी हो गईं (और) | शाधि | ११. | आदेश दें (कि हम) |
| प्रोचुः | ७. | बोलीं | नः | १०. | हमें |
| प्राञ्जलयः | ५. | हाथ जोड़कर | करवाम | १४. | करें |
| स्त्रियः । | ३. | सभी स्त्रियाँ | किम् ॥ | १३. | क्या |

श्लोकार्थ—देवहूति को देखकर सभी स्त्रियाँ एकाएक हाथ जोड़कर खड़ी हो गईं और बोलीं । हम आपकी दासियाँ हैं । हमें आदेश दें कि हम आपके लिये क्या करें ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

पदच्छेद—

**स्नानेन तां महार्हेण स्नापयित्वा मनस्विनीम् ।**
**दुकूले निर्मले नूत्ने ददुरस्यै च मानदाः ॥२८॥**

स्नानेन ताम् महार्हेण स्नापयित्वा मनस्विनीम् ।
दुकूले निर्मले नूत्ने ददुः अस्यै च मानदाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्नानेन | ३. | गन्धादि मिश्रित जल से | निर्मले | १०. | स्वच्छ |
| ताम् | ५. | देवहूति को | नूत्ने | ९. | दो नये |
| महार्हेण | २. | बहुमूल्य | ददुः | १२. | दिये |
| स्नापयित्वा | ६. | स्नान कराया | अस्यै | ८. | पहननने के लिये |
| मनस्विनीम् । | ४. | स्वाभिमानिनी | च | ७. | और |
| दुकूले । | ११. | वस्त्र | मानदाः ॥ | १. | सम्मान देने वाली स्त्रियों ने |

श्लोकार्थ—सम्मान देने वाली स्त्रियों ने बहुमूल्य गन्धाधि मिश्रित जल से स्वाभिमानिनी देवहूति को स्नान कराया और पहनने के लिये दो नये स्वच्छ वस्त्र दिये ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**भूषणानि परार्घ्यानि वरीयांसि द्युमन्ति च ।**
**अन्नं सर्वगुणोपेतं पानं चैवामृतासवम् ॥२९॥**

पदच्छेद—

भूषणानि परार्घ्यानि वरीयांसि द्युमन्ति च ।
अन्नं सर्वगुण उपेतम् पानम् च एव अमृत आसवम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूषणानि | ५. | आभूषण | सर्वगुण | ६. | सभी गुणों से |
| परार्घ्यानि | १. | उन्हें पहनने के लिये बहुमूल्य | उपेतम् | ७. | सम्पन्न |
| वरीयांसि | २. | उत्तम कोटि के | पानम् | १०. | पीने के लिये |
| द्युमन्ति | ४. | चमकदार | च एव | ९. | और |
| च । | ३. | और | अमृत | ११. | अमृत के समान मधुर |
| अन्नम् | ८. | भोजन | आसवम् ॥ | १२. | रस दिया |

श्लोकार्थ—उन्हें पहनने के लिये बहुमूल्य उत्तम कोटि के (और) चमकदार आभूषण, सभी गुणों से सम्पन्न भोजन और पीने के लिये अमृत के समान मधुर रस दिया ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**अथादर्शे स्वमात्मानं स्रग्विणं विरजाम्बरम् ।**
**विरजं कृतस्वस्त्ययनं कन्याभिर्बहुमानितम् ॥३०॥**

पदच्छेद—

अथ आदर्शे स्वम् आत्मानम् स्रग्विणम् विरजाम्बरम् ।
विरजम् कृत स्वस्त्ययनम् कन्याभिः बहु मानितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | अब (देवहूति ने) | विरजम् | ७. | (उसका शरीर) निर्मल था (और) |
| आदर्शे | २. | दर्पण में | कृत | १२. | सजाया था |
| स्वम् | ४. | प्रतिबिम्ब (देखा वह) | स्वस्त्ययनम् | ११. | आभूषणों से |
| आत्मानम् | ३. | अपना | कन्याभिः | ८. | स्त्रियों ने |
| स्रग्विणम् | ५. | माला धारण किये (और) | बहु | ९. | बहुत |
| विरज अम्बरम् । | ६. | स्वच्छ वस्त्र पहने थी | मानितम् ॥ | १०. | आदर के साथ |

श्लोकार्थ—अब देवहूति ने दर्पण में प्रतिबिम्ब देखा, वह माला धारण किये और स्वच्छ वस्त्र पहने थी । उसका शरीर निर्मल था और स्त्रियों ने बहुत आदर के साथ आभूषणों से सजाया था ॥

# एकत्रिंशः श्लोकः

स्नातं कृतशिरःस्नानं सर्वाभरणभूषितम् ।
निष्कग्रीवं वलयिनं कूजत्काञ्चननूपुरम् ॥३१॥

पदच्छेद—

स्नातम् कृत शिरः स्नानम् सर्व आभरण भूषितम् ।
निष्कग्रीवम् वलयिनम् कूजत् काञ्चन नूपुरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्नातम् | ३. | स्नान | भूषितम् । | ७. | सुशोभित था |
| कृत | ४. | किया था (उसका शरीर) | निष्कग्रीवम् | ८. | उसके गले में हार |
| शिरः | २. | सिर से | वलयिनम् | ९. | हाथों में कङ्कण (तथा) |
| स्नातम् | १. | उसने वस्त्रों को धोकर | कूजत् | १२. | आवाज कर रहे थे |
| सर्व | ५. | सभी प्रकार के | काञ्चन | १०. | (पैरों में) सोने के |
| आभरण | ६. | आभूषणों से | नूपुरम् ॥ | ११. | नूपुर (पायजेब) |

श्लोकार्थ—उसने वस्त्रों को धोकर सिर से स्नान किया था । उसका शरीर सभी प्रकार के आभूषणों से सुशोभित था । उसके गले में हार, हाथों में कङ्कण तथा पैरों में सोने के नूपुर आवाज़ कर रहे थे ॥

# द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रोण्योरध्यस्तया काञ्च्या काञ्चन्या बहुरत्नया ।
हारेण च महार्हेण रुचकेन च भूषितम् ॥३२॥

पदच्छेद—

श्रोण्योः अध्यस्तया काञ्च्या काञ्चन्या बहुरत्नया ।
हारेण च महार्हेण रुचकेन च भूषितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रोण्योः | १. | उसके कमर में | हारेण | ८. | हार |
| अध्यस्तया | ५. | पड़ी हुई थी | च | ६. | वह |
| काञ्च्या | ४. | करधनी | महार्हेण | ७. | बहुमूल्य |
| काञ्चन्या | ३. | सोने की | रुचकेन | १०. | सुगन्धित गोरोचन से |
| बहुरत्नया । | २. | रत्नों से जड़ी हुई | च | ९. | तथा |
| | | | भूषितम् ॥ | ११. | सुन्दर लग रही थी |

श्लोकार्थ—उसके कमर में रत्नों से जड़ी हुई सोने की करधनी पड़ी हुई थी । वह बहुमूल्य हार तथा सुगन्धित गोरोचन से सुन्दर लग रही थी ॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

सुदता सुभ्रुवा श्लक्ष्णस्निग्धापाङ्गेन चक्षुषा ।
पद्मकोशस्पृधा नीलैरलकैश्च लसन्मुखम् ॥३३॥

पदच्छेद—

सुदता सुभ्रुवा श्लक्ष्ण स्निग्ध अपाङ्गेन चक्षुषा ।
पद्मकोश स्पृधा नीलैः अलकैः च लसत् मुखम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सुदता | ८. | सुन्दर दाँतों से | पद्मकोश | १. | मानों कमल की कली से |
| सुभ्रुवा | ७. | मनोहर भौंहों से | स्पृधा | २. | स्पर्धा करने वाला |
| श्लक्ष्ण | ३. | प्रेम पूर्ण | नीलैः | १०. | नीली |
| स्निग्ध | ४. | भोली | अलकैः | ११. | अलकावली से |
| अपाङ्गेन | ५. | चितवन भरी | च | ९. | और |
| चक्षुषा । | ६. | आँखों से | लसत् | १३. | सुशोभित था |
| | | | मुखम् ॥ | १२. | उसका मुख |

श्लोकार्थ—मानों कमल की कली से स्पर्धा करने वाली प्रेम पूर्ण, भोली, चितवन भरी आँखों से, मनोहर भौंहों से, सुन्दर दाँतों से और नीली अलकावली से उसका मुख सुशोभित था ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

यदा सस्मार ऋषभमृषीणां दयितं पतिम् ।
तत्र चास्ते सह स्त्रीभिर्यत्रास्ते स प्रजापतिः ॥३४॥

पदच्छेद—

यदा सस्मार ऋषभम् ऋषीणाम् दयितम् पतिम् ।
तत्र च आस्ते सह स्त्रीभिः यत्र आस्ते सः प्रजापतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब देवहूति ने | आस्ते | १६. | उपस्थित पाया |
| सस्मार | ६. | स्मरण किया | सह | १०. | साथ अपने को |
| ऋषभम् | ३. | श्रेष्ठ (और) | स्त्रीभिः | ९. | स्त्रियों के |
| ऋषीणाम् | २. | ऋषियों में | यत्र | ११. | जहाँ |
| दयितम् | ४. | प्रिय | आस्ते | १५. | विराजमान थे |
| पतिम् । | ५. | अपने पति देव का | सः | १४. | कर्दम जी |
| तत्र | ८. | वहीं पर | प्रजा | १२. | प्रजा |
| च | ७. | तब | पतिः ॥ | १३. | पति |

श्लोकार्थ—जब देवहूति ने ऋषियों में श्रेष्ठ और प्रिय अपने पतिदेव का स्मरण किया तब वहीं पर स्त्रियों के साथ अपने को जहाँ प्रजापति कर्दम जी विराजमान थे उपस्थित पाया ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

भर्तुः पुरस्तादात्मानं स्त्रीसहस्रवृतं तदा ।
निशाम्य तद्योगगतिं संशयं प्रत्यपद्यत ॥३५॥

पदच्छेद—

भर्तुः पुरस्ताद् आत्मानम् स्त्री सहस्र वृतम् तदा ।
निशाम्य तद् योग गतिम् संशयम् प्रत्यपद्यत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भर्तुः | ६. | पति के | तदा । | १. | उस समय |
| पुरस्तात् | ७. | सामने | निशाम्य | ८. | देखकर |
| आत्मानम् | ५. | अपने को | तद् | ९. | उनके |
| स्त्री | ३. | स्त्रियों से | योगगतिम् | १०. | योग के, प्रभाव को जानकर |
| सहस्र | २. | हज़ारों | संशयम् | ११. | देवहूति आश्चर्य में |
| वृतम् | ४. | घिरी हुई | प्रत्यपद्यत ॥ | १२. | पड़ गई |

श्लोकार्थ—उस समय हज़ारों स्त्रियों से घिरी हुई अपने को पति के सामने देखकर उनके योग के प्रभाव को जानकर देवहूति आश्चर्य में पड़ गई ॥

## षट्त्रिंशः श्लोकः

स तां कृतमलस्नानां विभ्राजयन्तीमपूर्ववत् ।
आत्मनो बिभ्रतीं रूपं संवीतरुचिरस्तनीम् ॥३६॥

पदच्छेद—

सः ताम् कृत मल स्नानाम् विभ्राजयन्तीम् अपूर्ववत् ।
आत्मनः बिभ्रतीम् रूपम् संवीत रुचिर स्तनीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | कर्दम जी ने | आत्मनः | ८. | अपने |
| ताम् | २. | देवहूति को (देखा कि) | बिभ्रतीम् | १०. | प्राप्त हो गई थी |
| कृत | ५. | दूर हो गया है (वह) | रूपम् | ९. | स्वरूप को |
| मल | ४. | शरीर का मल | संवीत | १३. | ढका हुआ था |
| स्नानाम् | ३. | स्नान करने से (उसके) | रुचिर | ११. | उसका सुन्दर |
| विभ्राजयन्तीम् | ६. | सुन्दर लग रही थी (और) | स्तनीम् ॥ | १२. | वक्षः स्थल (चोली से) |
| अपूर्ववत् । | ७. | विवाह से पूर्व के | | | |

श्लोकार्थ—कर्दम जी ने देवहूति को देखा कि स्नान करने से उसके शरीर का मल दूर हो गया है वह सुन्दर लग रही थी और विवाह से पूर्व के अपने स्वरूप को प्राप्त हो गई थी। उसका सुन्दर वक्षःस्थल चोली से ढका हुआ था ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

**विद्याधरीसहस्रेण सेव्यमानां सुवाससम् ।**
**जातभावो विमानं तदारोहयदमित्रहन् ॥३७॥**

पदच्छेद—

विद्याधरी सहस्रेण सेव्यमानाम् सुवाससम् ।
जातभावः विमानम् तद् आरोहयत् अमित्रहन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| विद्याधरी | ३. किन्नरियों से | | जातभावः | ६. प्रेम भाव उत्पन्न हो जाने से (कर्दम जी ने) |
| सहस्रेण | २. हज़ारों | | विमानम् | ८. विमान पर |
| सेव्यमानाम् | ४. सेवित थीं (और) | | तद् | ७. उस |
| सुवाससम् । | ५. सुन्दर वस्त्र पहने थी उसमें | | आरोहयत् | ९. चढ़ाया |
| | | | अमित्रहन् ॥ | १. शत्रु विजयी हे विदुर जी ! वह |

श्लोकार्थ—शत्रु विजयी हे विदुर जी ! वह हज़ारों किन्नरियों से सेवित थीं और सुन्दर वस्त्र पहने थीं उसमें प्रेमभाव उत्पन्न हो जाने से कर्दम जी ने उसे विमान पर चढ़ाया ॥

## अष्टत्रिंशः श्लोकः

**तस्मिन्नलुप्तमहिमा प्रिययानुरक्तो विद्याधरीभिरुपचीर्णवपुर्विमाने ।**
**बभ्राज उत्कचकुमुद्गुणवानपीच्यस्ताराभिरावृत इवोडुपतिर्नभःस्थः ॥३८॥**

पदच्छेद—

तस्मिन् अलुप्त महिमा प्रियया अनुरक्तः विद्याधरी उपचीर्ण वपुः विमाने ।
बभ्राज उत्कच कुमुद गणवान् अपीच्य, ताराभिः आवृतः इव उडुपतिः नभः स्थः ॥

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| तस्मिन् | १. उस | |
| अलुप्त | ४. सम्पन्न (अपनी) | |
| महिमा | ३. प्रभुता से | |
| प्रियया | ५. प्रिया के प्रति | |
| अनुरक्तः | ६. प्रेम-भाव से युक्त | |
| विद्याधरी | ७. किन्नरियों से | |
| उपचीर्णं | ८. सेवित | |
| वपुः | ९. शरीर वाले (कर्दम जी) | |
| विमाने । | २. विमान पर | |
| बभ्राज | १२. सुन्दर लग रहे थे | |
| उत्कच | १०. खिले हुये | |
| कुमुद गणवान् | ११. कुमुदों की माला से | |
| अपीच्य | १८. सुन्दर लगता है | |
| ताराभिः | १६. नक्षत्रों से | |
| आवृतः | १७. घिर कर | |
| इव | १३. जैसे | |
| उडुपतिः | १५. चन्द्रमा | |
| नभः स्थः ॥ | १४. आकाश में स्थित | |

श्लोकार्थ—उस विमान पर प्रभुता से सम्पन्न अपनी प्रिया के प्रति प्रेम-भाव से युक्त किन्नरियों से सेवित शरीर वाले कर्दम जी खिले हुये कुमुदों की माला से सुन्दर लग रहे थे। जैसे आकाश में स्थित चन्द्रमा नक्षत्रों से घिर कर सुन्दर लगता है ॥

## एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

**तेनाष्टलोकपविहारकुलाचलेन्द्रद्रोणीष्वनङ्गसखमारुतसौभगासु ।**
**सिद्धैर्नुतो द्युधुनिपातशिवस्वनासु रेमे चिरं धनदवल्ललनावरूथी ॥३९॥**

पदच्छेद—

तेन अष्टलोकप विहार कुल-अचलेन्द्र द्रोणीषु अनङ्गसरव मारुत सौभगासु ।
सिद्धैः नुतः द्युधुनि पात शिव स्वनासु रेमे चिरम् धनदवत् ललना वरूथी ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेन | २. | उन्होंने उस विमान से | सिद्धैः | ८. | (उस समय) सिद्धगण |
| अष्टलोकप | १३. | आठों दिशाओं के लोकपाल | नुतः | ९. | उन्हें प्रणाम करते थे (वह घाटी) |
| विहार | १४. | विहार करते थे (तथा) | द्युधुनि | १५. | गंगा जी के |
| कुल अचलेन्द्र | २. | मेरु पर्वत की | पात, शिव | १६. | गिरने की पवित्र |
| द्रोणीषु | ३ | घाटियों में | स्वनासु | १७. | ध्वनि होती थी |
| अनङ्ग सरव | १०. | कामदेव के मित्र | रेमे | ७. | विहार किया |
| मारुत | ११. | शीतल मंद सुगन्ध पवन से | चिरम् | ४. | दीर्घकाल तक |
| सौभगासु। | १२. | बड़ी सुहावनी थी (वहाँ) | धनदवत् | ५. | कुबेर के समान |
| | | | ललना, वरूथी ॥ | ६ | कन्यायों के समूह के साथ |

श्लोकार्थ—उन्होंने उस विमान से मेरु पर्वत की घाटियों में दीर्घकाल तक कुवेर के समान कन्याओं के समूह के साथ विहार किया। उस समय सिद्ध गण उन्हें प्रणाम करते थे। वह घाटी कामदेव के मित्र शीतल मंद सुगन्ध पवन से बड़ी सुहावनी थी वहाँ आठों दिशाओं के लोक पाल विहार करते थे तथा गंगा जी के गिरने की पवित्र ध्वनि होती थी ॥

## चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

**वैश्रम्भके सुरसने नन्दने पुष्पभद्रके ।**
**मानसे चैत्ररथ्ये च स रेमे रामया रतः ॥४०॥**

पदच्छेद—

वैश्रम्भके सुरसने नन्दने पुष्पभद्रके ।
मानसे चैत्ररथ्ये च सः रेमे रामया रतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैश्रम्भके | २. | वैश्रम्भक | चैत्ररथ्ये | ६. | चैत्ररथ |
| सुरसने | ३. | सुरसन | च | ७. | और |
| नन्दने | ४. | नन्दन | सः | १. | उन्होंने |
| पुष्प भद्रके। | ५. | पुष्प भद्र | रेमे | ११. | विहार किया |
| मानसे | ८. | मान सरोवर में | रामया | ९. | अपनी प्रिया के साथ |
| | | | रतः ॥ | १०. | अनुराग भाव से |

श्लोकार्थ—उन्होंने वैश्रम्भक, सुरसन, नन्दन, पुष्पभद्र, चैत्ररथ और मान सरोवर में अपनी प्रिया के साथ अनुराग भाव से विहार किया ॥

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

**भ्राजिष्णुना विमानेन कामगेन महीयसा ।**
**वैमानिकानत्यशेत चरँल्लोकान् यथानिलः ॥४१॥**

पदच्छेद—

भ्राजिष्णुना विमानेन कामगेन महीयसा ।
वैमानिकान् अत्यशेत चरन् लोकान् यथा अनिलः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भ्राजिष्णुना | १. | प्रभावशाली | अत्यशेत | १०. | आगे बढ़ गये थे |
| विमानेन | ४. | विमान से | चरन् | ८. | घूमते हुये (कर्दम जी) |
| कामगेन | २. | इच्छाचारी (तथा) | लोकान् | ७. | सभी लोकों में |
| महीयसा । | ३. | महनीय | यथा | ६. | समान |
| वैमानिकान् | ९. | देवताओं से भी | अनिलः ॥ | ५. | वायु के |

श्लोकार्थ—प्रभावशाली इच्छाचारी तथा महनीय विमान से वायु के समान सभी लोकों में घूमते हुये कर्दम जी देवताओं से भी आगे बढ़ गये थे ।

# द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

**किं दुरापादनं तेषां पुंसामुद्दामचेतसाम् ।**
**यैराश्रितस्तीर्थपदश्चरणो व्यसनात्ययः ॥४२॥**

पदच्छेद—

किम् दुरापादनम् तेषाम् पुंसाम् उद्दाम चेतसाम् ।
यैः आश्रितः तीर्थपदः चरणः व्यसन अत्ययः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किम् | ११. | क्या | यैः | १. | जिन्होंने |
| दुरापादनम् | १२. | दुर्लभ है | आश्रितः | ६. | सहारा लिया है |
| तेषाम् | ९. | उन | तीर्थपदः | २. | भगवान् श्री हरि के |
| पुंसाम् | १०. | मनुष्यों को | चरणः | ५. | चरणों का |
| उद्दाम | ७. | धीर | व्यसन | ३. | भव-भय |
| चेतसाम् । | ८. | मन वाले | अत्ययः ॥ | ४. | हारी |

श्लोकार्थ—जिन्होंने भगवान् श्री हरि के भव-भय-हारी चरणों का सहारा लिया है । धीर मन वाले उन मनुष्यों को क्या दुर्लभ है ॥

## त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

प्रेक्षयित्वा भुवो गोलं पत्न्यै यावान् स्वसंस्थया ।
बह्वाश्चर्यं महायोगी स्वाश्रमाय न्यवर्तत ॥४३॥

**पदच्छेद—**

प्रेक्षयित्वा भुवः गोलम् पत्न्यै यावान् स्व संस्थया ।
बहु आश्चर्यम् महायोगी स्व आश्रमाय न्यवर्तत ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रेक्षयित्वा | ५. | दिखाकर (जो) | बहु | ८. | बहुत |
| भुवः | २. | पृथ्वी का | आश्चर्यम् | ९. | अद्भुत था |
| गतिम् | ४. | मण्डल | महायोगी | १०. | महायोगी राज (कर्दम जी) |
| गोलम् | १. | पत्नी (देवहूति को) | स्व | ११. | अपने |
| पत्न्यै | ३. | सम्पूर्ण | आश्रमाय | १२. | आश्रम को |
| यावान् | ६. | अपनी | न्यवर्तत ॥ | १३. | लौट आये |
| स्व संस्थया । | ७. | रचना से | | | |

**श्लोकार्थ—**पत्नी देवहूति को पृथ्वी का सम्पूर्ण मण्डल दिखाकर जो अपनी रचना से बहुत अद्भुत था । महायोगिराज कर्दम जी अपने आश्रम को लौट आये ॥

## चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

विभज्य नवधाऽऽत्मानं मानवीं सुरतोत्सुकाम् ।
रामां निरमयन् रेमे वर्षपूगान्मुहूर्तवत् ॥४४॥

**पदच्छेद—**

विभज्य नवधा आत्मानम् मानवीम् सुरत उत्सुकाम् ।
रामाम् निरमयन् रेमे वर्षपूगान् मुहूर्तवत् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विभज्य | ३. | विभाग करके | रामाम् | ७. | अपनी प्रिया (देवहूति का) |
| नवधा | १. | (कर्दम जी) नौरूपों में | निरमयन् | ८. | मनोविनोद करते हुये |
| आत्मानम् | २. | अपना | रेमे | ११. | विहार किया |
| मानवीम् | ४. | मनु महाराज की पुत्री (तथा) | वर्ष पूगान् | १०. | अनेकों वर्षों तक |
| सुरत | ५. | रति सुख के लिये | मुहूर्तवत् ॥ | ९. | एक क्षण के समान |
| उत्सुकाम् । | ६. | उत्सुक | | | |

**श्लोकार्थ—**कर्दम जी ने नौ रूपों में अपना विभाग करके मनु महाराज की पुत्री तथा रति सुख के लिये उत्सुक अपनी प्रिया देवहूति का मनोविनोद करते हुये एक क्षण के समान अनेकों वर्षों तक विहार किया ॥

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

**तस्मिन् विमान उत्कृष्टां शय्यां रतिकरीं श्रिता ।**
**न चाबुध्यत तं कालं पत्यापीच्येन सङ्गता ॥४५॥**

पदच्छेद—

तस्मिन् विमाने उत्कृष्टाम् शय्याम् रतिकरीम् श्रिता ।
न च अबुध्यत तम् कालम् पत्या अपीच्येन सङ्गता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मिन् | १. | उस | च | ७. | और |
| विमाने | २. | विमान में | अबुध्यत | १४. | जान सकी |
| उत्कृष्टाम् | ४. | सर्वोत्तम | तम् | ११. | उस लम्बे |
| शय्याम् | ५. | शय्या पर | कालम् | १२. | समय को |
| रतिकरीम् | ३. | रति सुख को बढ़ाने वाली | पत्या | ६. | पति कर्दम जी के |
| श्रिता । | ६. | सोई हुई | अपीच्येन | ८. | सर्वाङ्ग सुन्दर |
| न | १३. | नहीं | सङ्गता ॥ | १०. | साथ रहती हुई (देवहूति) |

श्लोकार्थ—उस विमान में रति सुख को बढ़ाने वाली सर्वोत्तम शय्या पर सोई हुई और सर्वाङ्ग सुन्दर पति कर्दम जी के साथ रहती हुई देवहूति उस लम्बे समय को नहीं जान सकी ॥

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

**एवं योगानुभावेन दम्पत्योः रममाणयोः ।**
**शतं व्यतीयुः शरदः कामलालसयोर्मनाक् ॥४६॥**

पदच्छेद—

एवम् योग अनुभावेन दम्पत्योः रममाणयोः
शतम् व्यतीयुः शरदः काम लालसयोः मनाक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | शतम् | ७. | एक सौ |
| योग | २. | योग के | व्यतीयुः | १०. | बीत गये |
| अनुभावेन | ३. | प्रभाव से | शरदः | ८. | वर्ष |
| दम्पत्योः | ६. | उन दम्पति के | कामलालसयोः | ४. | रति सुख और अनुराग पूर्ण |
| रममाणयोः । | ५. | विहार करते हुये | मनाक् ॥ | ६. | थोड़े ही समय में |

श्लोकार्थ—इस प्रकार योग के प्रभाव से रति सुख और अनुराग पूर्ण विहार करते हुये उन दम्पति के एक सौ वर्ष थोड़े ही समय में बीत गये ॥

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तस्यामाधत्त रेतस्तां भावयन्नात्मनाऽऽत्मवित् ।
नोधा विधाय रूपं स्वं सर्वसङ्कल्पविद्विभुः ॥४७॥

पदच्छेद—

तस्याम् आधत्त रेतः ताम् भावयन् आत्मना आत्मवित् ।
नोधा विधाय रूपम् स्वम् सर्व सङ्कल्पवत् विभुः ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्याम् | १२. | उसके गर्भ में | नोधा | ८. | नौ भागों में |
| आधत्त | १४. | स्थापित किया | विधाय | ६. | विभाग करके |
| रेतः | १३. | अपना बीज | रूपम् | ७. | रूप का |
| ताम् | १०. | देवहूति की | स्वम् | ६. | अपने |
| भावयन् | ११. | भावना करते हुये | सर्व | १. | सब की |
| आत्मना | ५. | अपने आप | सङ्कल्पवत् | २. | कामनाओं को जानने वाले |
| आत्मवित् । | ३. | आत्म ज्ञानी | विभुः ॥ | ४. | कर्दम जी |

श्लोकार्थ—सब की कामनाओं को जानने वाले आत्म ज्ञानी कर्दम जी अपने आप अपने रूप का नौ भागों में विभाग करके देवहूति की भावना करते हुये उसके गर्भ में अपना बीज स्थापित किया ।।

## अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

अतः सा सुषुवे सद्यो देवहूतिः स्त्रियः प्रजाः ।
सर्वास्ताश्चारुसर्वाङ्ग्यो लोहितोत्पलगन्धयः ॥४८॥

पदच्छेद—

अतः सा सुषुवे सद्यः देवहूतिः स्त्रियः प्रजाः ।
सर्वाः ताः चारु सर्वाङ्ग्यः लोहित उत्पल गन्धयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः | १. | इसलिये | सर्वाः | ६. | सभी |
| सा | २. | उस | ताः | ८. | वे |
| सुषुवे | ७. | जन्म दिया | चारु | ११. | सुन्दरी थीं (और उनके) |
| सद्यः | ४. | एक साथ | सर्वाङ्ग्यः | १०. | सर्वाङ्ग |
| देवहूतिः | ३. | देवहूति ने | लोहित | १२. | शरीर से लाल |
| स्त्रियः | ५. | (नौ) कन्या | उत्पल | १३. | कमल की सी |
| प्रजाः । | ६. | सन्तानों को | गन्धयः ॥ | १४. | सुगन्ध आ रही थी |

श्लोकार्थ—इसलिये उस देवहूति ने एक साथ नौ कन्या सन्तानों को जन्म दिया । वे सभी सर्वाङ्ग सुन्दरी थीं; और उनके शरीर से लाल कमल की सी सुगन्ध आ रही थी ॥

# एकोनपञ्चाशः श्लोकः

**पतिं सा प्रव्रजिष्यन्तं तदाऽऽलक्ष्योशती सती ।**
**स्मयमाना विक्लवेन हृदयेन विदूयता ॥४९॥**

पदच्छेद—

पतिम् सा प्रव्रजिष्यन्तम् तदा आलक्ष्य उशती सती ।
स्मयमाना विक्लवे हृदयेन विदूयता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पतिम् | २. | पति को | सती | ६. | साध्वी |
| सा | ७. | देवहूति | स्मयमाना | ८. | ऊपर से मुसकरा रही थी (किन्तु) |
| प्रव्रजिष्यन्तम् | ३. | सन्यास लेकर (जाने की इच्छा) | विक्लवेन | १०. | व्याकुल होने से |
| तदा | १. | उस समय | हृदयेन | ६. | मन से |
| आलक्ष्य | ४. | देखकर | विदूयता | ११. | खिन्न थीं |
| उशती | ५. | कामना सम्पन्न | | | |

श्लोकार्थ—उस समय पति को सन्यास लेकर जाने की इच्छा देखकर कामना सम्पन्न साध्वी देवहूति ऊपर से मुसकरा रही थी किन्तु मन से व्याकुल होने से खिन्न थीं ॥

# पञ्चाशः श्लोकः

**लिखन्त्यधोमुखी भूमिं पदा नखमणिश्रिया ।**
**उवाच ललितां वाचं निरुध्याश्रुकलां शनैः ॥५०॥**

पदच्छेद—

लिखन्ति अधोमुखी भूमिं पदा नखमणि श्रिया ।
उवाच ललिताम् वाचम् निरुध्य अश्रुकलाम् शनैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लिखन्ति | ६. | कुरेदती हुई | उवाच | १२. | बोली |
| अधोमुखी | १. | नीचे मुख करके | ललिताम् | १०. | मधुर |
| भूमिं | ५. | पृथ्वी को | वाचम् | ११. | वाणी में |
| पदा | ४. | चरण से | निरुध्य | ८. | रोक कर |
| नखमणि | २. | नखों में जड़ी मणियों से | अश्रुकलाम् | ७. | आँसुओं को |
| श्रिया । | ३. | सुशोभित | शनैः ॥ | ६. | धीरे से |

श्लोकार्थ—नीचे मुख करके नखों में जड़ी मणियों से सुशोभित चरण से पृथ्वी को कुरेदती हुई आँसुओं को रोक कर धीरे से मधुर वाणी में बोली ॥

# एकपञ्चाशः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—

सर्वं तद्भगवान्मह्यमुपोवाह प्रतिश्रुतम् ।
अथापि मे प्रपन्नायाः अभयं दातुमर्हसि ॥५१॥

पदच्छेद—

सर्वम् तद् भगवान् मह्यम् उपोवाह प्रतिश्रुतम् ।
अथापि मे प्रपन्नायाः अभयम् दातुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वम् | ४. | सब | अथापि | ७. | फिर भी |
| तद् | ३. | वह | मे | ८. | मुझे |
| भगवान् | १. | हे भगवन् ! आपने | प्रपन्नायाः | ९. | शरणागत को |
| मह्यम् | ५. | मुझे | अभयम् | १०. | अभय |
| उपोवाह | ६. | दिया | दातुम् | ११. | देने में (आप) |
| प्रतिश्रुतम् । | २. | (जो) प्रतिज्ञा की थी | अर्हसि ॥ | १२. | समर्थ हैं |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपने जो प्रतिज्ञा की थी वह सब मुझे दिया है । फिर भी मुझे शरणागत को अभय देने में आप समर्थ हैं ॥

# द्विपञ्चाशः श्लोकः

ब्रह्मन्दुहितृभिस्तुभ्यं विमृग्याः पतयः समाः ।
कश्चित्स्यान्मे विशोकाय त्वयि प्रव्रजिते वनम् ॥५२॥

पदच्छेद—

ब्रह्मन् दुहितृभिः तुभ्यम् विमृग्याः पतयः समाः ।
कश्चित् स्यात् मे विशोकाय त्वयि प्रव्रजिते वनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मन् | १. | हे ब्रह्मन् ! | कश्चित् | १२. | कोई |
| दुहितृभिः | ३. | कन्याओं के लिये | स्यात् | १३. | होना चाहिये |
| तुभ्यम् | २. | आपको (अभी) | मे | १०. | मेरे |
| विमृग्याः | ६. | ढूंढना है (तथा) | विशोकाय | ११. | शोक को शान्त करने वाला |
| पतयः | ५. | वर | त्वयि | ७. | आपके |
| समाः । | ४. | उनके योग्य | प्रव्रजिते | ९. | चले जाने पर |
| | | | वनम् ॥ | ८. | वन |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! आपको अभी कन्याओं के लिये उनके योग्य वर ढूंढना है तथा आपके वन चले जाने पर मेरे शोक को शान्त करने वाला कोई होना चाहिये ॥

## त्रिपञ्चाशः श्लोकः

एतावतालं कालेन व्यतिक्रान्तेन मे प्रभो ।
इन्द्रियार्थप्रसङ्गेन परित्यक्तपरात्मनः ॥५३॥

पदच्छेद—

एतावता अलम् कालेन व्यतिक्रान्तेन मे प्रभो ।
इन्द्रिय अर्थ प्रसङ्गेन परित्यक्त परात्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतवता | ८. | अब-तक | इन्द्रिय | २. | इन्द्रियों के |
| अलम् | ११. | निरर्थक गया | अर्थ | ३. | विषयों में |
| कालेन | १०. | समय | प्रसङ्गेन | ७. | आसक्ति होने से |
| व्यतिक्रान्तेन | ९. | बिताया गया | परित्यक्त | ६. | भूल गई (और) |
| मे | ७. | मेरा | पर | ४. | मैं परम |
| प्रभो। | १. | हे प्रभो ! | आत्मनः ॥ | ५. | आत्मा को |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! इन्द्रियों के विषयों में मैं परमात्मा को भूल गई और आसक्ति होने से मेरा अब-तक बिताया गया समय निरर्थक गया ॥

## चतुःपञ्चाशः श्लोकः

इन्द्रियार्थेषु सज्जन्त्या प्रसङ्गस्त्वयि मे कृतः ।
अजानन्त्या परं भावं तथाप्यस्त्वभयाय मे ॥५४॥

पदच्छेद—

इन्द्रिय अर्थेषु सज्जन्त्या प्रसङ्गः त्वयि मे कृतः ।
अजानन्त्या परमं भावम् तथापि अस्तु अभयाय मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इन्द्रिय | ५. | इन्द्रियों के | अजानन्त्या | ३. | नहीं जानने से |
| अर्थेषु | ६. | विषयों में | परम् | १. | (आपके) परम |
| सज्जन्त्या | ७. | आसक्त रहने के कारण | भावम् | २. | प्रभाव को |
| प्रसङ्ग | ९. | सङ्ग | तथापि | ११. | फिर भी (वह सङ्ग) |
| त्वयि | ८. | आपने | अस्तु | १४. | करने वाला हो |
| मे | ४. | मैंने | अभयाय | १३. | भव-भय का विनाश |
| कृतः । | १०. | किया था | मे ॥ | १२. | मेरे |

श्लोकार्थ—आपके परम प्रभाव को नहीं जानने से मैंने इन्द्रियों के विषयों में आसक्त रहने के कारण आपने सङ्ग किया था । फिर भी वह सङ्ग मेरे भव-भय का विनाश करे ॥

## पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

**सङ्गो यः संसृतेर्हेतुरसत्सु विहितोऽधिया ।**
**स एव साधुषु कृतो निःसङ्गत्वाय कल्पते ॥५५॥**

**पदच्छेद—**

सङ्गः यः संसृतेः हेतुः असत्सु विहितः अधिया ।
सः एव साधुषु कृतः निःसङ्गत्वाय कल्पते ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सङ्गः | ५. सङ्ग | | अधिया । | १. अज्ञान के कारण |
| यः | ४. जो | | सः | ८. वह |
| संसृते | ६. संसार बन्धन का | | एव | ९. ही (सङ्ग) |
| हेतुः | ७. कारण होता है | | साधुषु | १०. सत्पुरुषों के साथ |
| असत्सु | २. असज्जन पुरुषों के साथ | | कृतः | ११. करने पर |
| विहितः | ३. किया गया | | निःसङ्गत्वाय | १२. वैराग्य |
| | | | कल्पते ॥ | १३. उत्पन्न करता है |

**श्लोकार्थ—**अज्ञान के कारण असज्जन पुरुषों के साथ किया गया जो सङ्ग संसार-बन्धन का कारण होता है। वही सङ्ग सत्पुरुषों के साथ करने पर वैराग्य उत्पन्न करता है।

## षट्पञ्चाशः श्लोकः

**नेह यत्कर्म धर्माय न विरागाय कल्पते ।**
**न तीर्थपदसेवायै जीवन्नपि मृतो हि सः ॥५६॥**

**पदच्छेद—**

न इह यत् कर्म धर्माय न विरागाय कल्पते ।
न तीर्थपद सेवायै जीवन् अपि मृतः हि सः ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| न | ३. न | | न तीर्थपद | ८. न ही, भगवान् श्री हरि का |
| इह | १. इस संसार में | | सेवायै | ९. भजन होता है |
| यत् कर्म | २. जिस पुरुष के कर्मों से | | जीवन् | ११. जीता हुआ |
| धर्माय | ४. धर्म का साधन होता है | | अपि | १२. भी |
| न | ५. न | | मृतः | १३. मुर्दे के समान |
| विरागाय | ६. वैराग्य | | हि | १४. ही है |
| कल्पते । | ७. उत्पन्न होता है (और) | | सः ॥ | १०. वह पुरुषः |

**श्लोकार्थ—**इस संसार में जिस पुरुष के कर्मों से न धर्म का साधन होता है। न वैराग्य उत्पन्न होता है और न ही भगवान् श्री हरि का भजन होता है। वह पुरुष जीता हुआ भी मुर्दे के समान ही है ॥

## सप्तपञ्चाशः श्लोकः

**साहं भगवतो नूनं वञ्चिता मायया दृढम् ।**
**यत्त्वां विमुक्तिदं प्राप्य न मुमुक्षेय बन्धनात् ॥५७॥**

पदच्छेद—

सा अहम् भगवतः नूनम् वञ्चिता मायया दृढम् ।
यत् त्वाम् विमुक्तिदम् प्राप्य न मुमुक्षेय बन्धनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा | १. | वही | यत् | ८. | जो |
| अहम् | २. | मैं | त्वाम् | १०. | आपको |
| भगवतः | ३. | भगवान् की | विमुक्तिदम् | ९. | मुक्तिदाता |
| नूनम् | ५. | अवश्य ही | प्राप्य | ११. | पाकर (भी) |
| वञ्चिता | ७. | ठगी गई हूँ | न | १३. | नहीं की |
| मायया | ४. | माया से | मुमुक्षेय | १४. | मुक्ति होने की इच्छा कर सकी |
| दृढम् । | ६. | बहुत | बन्धनात् ॥ | १२. | भव बन्धन से |

श्लोकार्थ—वही मैं भगवान् की माया से अवश्य ही ठगी गयी हूँ। जो मुक्तिदाता आपको पाकर भी भव-बन्धन से मुक्त होने की इच्छा नहीं कर सकी ॥

**श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीय स्कन्धे कापिलेयोपाख्याने त्रयोविंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२३॥**

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### चतुर्विंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—निर्वेदवादिनीमेवं मनोर्दुहितरं मुनिः ।
दयालुः शालिनीमाह शुक्लाभिव्याहृतं स्मरन् ॥१॥

पदच्छेद—

निर्वेद वादिनीम् एवम् मनोः दुहितरम् मुनिः ।
दयालुः शालिनीम् आह शुक्ल अभिव्याहृतम् स्मरन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्वेद | ४. | वैराग्य की | दयालु | १. | कृपालु |
| वादिनीम् | ५. | बात करने वाली | शालिनीम् | ६. | सुन्दर गुणों से सुशोभित |
| एवम् | ३. | इस प्रकार | आह | १२. | बोले |
| मनोः | ७. | मनु महाराज की | शुक्ल | ९. | भगवान् श्री हरि के |
| दुहितरम् | ८. | पुत्री देवहूति से | अभिव्याहृतम् | १०. | कथन का |
| मुनिः । | २. | कर्दम मुनि | स्मरन् ॥ | ११. | स्मरण करते हुये |

श्लोकार्थ—कृपालु कर्दम मुनि इस प्रकार वैराग्य की बात करने वाली सुन्दर गुणों से सुशोभित मनु महाराज की पुत्री देवहूति से भगवान् श्री हरि के कथन का स्मरण करते हुये बोले ॥

## द्वितीयः श्लोकः

ऋषिरुवाच— मा खिदो राजपुत्रीत्थमात्मानं प्रत्यनिन्दिते ।
भगवांस्तेऽक्षरो गर्भमदूरात्सम्प्रपत्स्यते ॥२॥

पदच्छेद—

मा खिदः राजपुत्रि इत्थम् आत्मानम् प्रत्यनन्दिते ।
भगवान् ते अक्षरः गर्भम् अदूरात् सम्प्रपत्स्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मा | ६. | मत | भगवान् | ११. | भगवान् श्री हरि |
| खिदः | ७. | चिन्ता करो | ते | ८. | तुम्हारे |
| राजपुत्रि | २. | हे राजकुमारी | अक्षरः | १०. | अविनाशी |
| इत्थम् | ५. | इस प्रकार | गर्भम् | ९. | गर्भ में |
| आत्मानम् | ३. | तुम अपने | अदूरात् | १२. | शीघ्र ही |
| प्रत्य । | ४. | विषय में | सम्प्रपत्स्यते ॥ | १३. | पधारेंगे ॥ |
| नन्दिते । | १. | दोष रहित | | | |

श्लोकार्थ—दोष रहित हे राज कुमारी ! तुम अपने विषय में इस प्रकार मत चिन्ता करो, तुम्हारे गर्भ में अविनाशी भगवान् श्री हरि शीघ्र ही पधारेंगे ।

## तृतीयः श्लोकः

धृतव्रतासि भद्रं ते दमेन नियमेन च ।
तपोद्रविणदानैश्च श्रद्धया चेश्वरं भज ॥३॥

पदच्छेद—

धृतव्रत असि भद्रम् ते दमेन नियमेन च ।
तपः द्रविण दानैः च श्रद्धया च ईश्वरम् भज ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| धृतव्रत | १. | तुमने अनेक प्रकार के व्रतों का पालन | तपः | ७. | तपस्या |
| असि | २. | किया है (अतः) | द्रविण | ८. | धन से |
| भद्रम् | ४. | कल्याण होगा | दानैः | ९. | दान से |
| ते | ३. | तुम्हारा | च | १०. | और |
| दमेन | ५. | तुम संयम | श्रद्धया च | ११. | श्रद्धापूर्वक |
| नियमेन च । | ६. | नियम | ईश्वरम् | १२. | भगवान् श्री हरि का |
| | | | भज ॥ | १३. | भजन करो |

श्लोकार्थ—तुमने अनेक प्रकार के व्रतों का पालन किया है । अतः तुम्हारा कल्याण होगा । तुम संयम, नियम, तपस्या, धन तथा दान से श्रद्धापूर्वक भगवान् श्री हरि का भजन करो ॥

## चतुर्थः श्लोकः

स त्वयाऽऽराधितः शुक्लो वितन्वन्मामकं यशः ।
छेत्ता ते हृदयग्रंथिमौदर्यो ब्रह्मभावनः ॥४॥

पदच्छेद—

सः त्वया आराधितः शुक्लः वितन्वन् मामकम् यशः ।
छेत्ता ते हृदय ग्रन्थिम् औदर्यः ब्रह्म भावनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ३. | वे | छेत्ता | १४. | दूर करेंगे |
| त्वया | १. | तुम्हारी | ते | ५. | तुम्हारे |
| आराधिताः | २. | आराधना से प्रसन्न होकर | हृदय | १२. | तुम्हारे हृदय के |
| शुक्लः | ४. | भगवान् श्री हरि | ग्रन्थिम् | १३. | सन्देह को |
| वितन्वन् | ९. | बढ़ायेंगे (और) | औदर्यः | ६. | गर्भ से अवतार लेकर |
| मामकम् | ७. | मेरे | ब्रह्म | १०. | ब्रह्म ज्ञान का |
| यशः । | ८. | यश को | भावनः ॥ | ११. | उपदेश करके |

श्लोकार्थ—तुम्हारी आराधना से प्रसन्न होकर वे भगवान् श्री हरि तुम्हारे गर्भ से जन्म लेकर मेरे यश को बढ़ायेंगे और ब्रह्म-ज्ञान का उपदेश करके तुम्हारे हृदय के सन्देह को दूर करेंगे ॥

## पञ्चमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—देवहूत्यपि संदेशं गौरवेण प्रजापतेः।
सम्यक श्रद्धाय पुरुषं कूटस्थमभजद्गुरुम् ॥५॥

पदच्छेद—

देवहूति अपि सन्देशम् गौरवेण प्रजापतेः।
सम्यक् श्रद्धाय पुरुषम् कुटस्थम् अभजत् गुरुम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवहूति | १. | देवहूति | सम्यक् | ६. | भली-भाँति |
| अपि | २. | भी | श्रद्धाय | ७. | धारण करके |
| सन्देशम् | ४. | आदेश को | पुरुषम् | १०. | आदि पुरुष का |
| गौरवेण | ५. | गौरव बुद्धि से | कूटस्थम् | ८. | निर्विकार |
| प्रजापतेः। | ३. | प्रजापति कर्दम जी के | अभजत् | ११. | भजन करने लगी |
| | | | गुरुम् ॥ | ९. | जगत् गुरु भगवान् |

श्लोकार्थ—देवहूति भी प्रजापति कर्दम जी के आदेश को गौरव बुद्धि से भली-भाँति धारण करके निर्विकार जगत् गुरू भगवान् आदि पुरुष का भजन करने लगी ॥

## षष्ठः श्लोकः

तस्यां बहुतिथे काले भगवान्मधुसूदनः।
कार्दमं वीर्यमापन्नो यज्ञेऽग्निरिव दारुणि ॥६॥

पदच्छेद—

तस्याम् बहुतिथे काले भगवान् मधुसूदनः।
कार्दमम् वीर्यम् आपन्नः जज्ञे अग्निः इव दारुणि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्याम् | ८. | देवहूति के गर्भ से | कार्दमम् | ५. | कर्दम जी के |
| बहुतिथे | १. | बहुत | वीर्यम् | ६. | वीर्य के |
| काले | २. | समय बीत जाने पर | आपन्नः | ७. | सहारे |
| भगवान् | ३. | भगवान् | जज्ञे | ९. | उत्पन्न हुये |
| मधुसूदनः। | ४. | श्री हरि | अग्निः | १२. | अग्नि (उत्पन्न होता है) |
| इव | १०. | जैसे | दारुणि ॥ | ११. | काष्ठ में |

श्लोकार्थ—बहुत समय बीत जाने पर भगवान् श्री हरि कर्दम जी के वीर्य के सहारे देवहूति के गर्भ से उत्पन्न हुये। जैसे काष्ठ में अग्नि उत्पन्न होता है ॥

## सप्तमः श्लोकः

**अवादयंस्तदा व्योम्नि वादित्राणि घनाघनाः ।**
**गायन्ति तं स्म गन्धर्वा नृत्यन्त्यप्सरसो मुदा ॥७॥**

पदच्छेद—

अवादयन् तदा व्योम्नि वादित्राणि घना घनाः ।
गायन्ति तम् स्म गन्धर्वा नृत्यन्ति अप्सरसः मुदा ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अवादयन् | ५. बजाने लगे | तम् | ७. भगवान् की स्तुति |
| तदा | १. उस समय | स्म | ६. और |
| व्योम्नि | २. आकाश में | गन्धर्वा | ६. गन्धर्वगण |
| वादित्राणि | ४. (मानों) बाजे | नृत्यन्ति | १२. नाचने लगे |
| घना घनाः । | ३. मेघ गरज कर | अप्सरसः | १०. अपसरायें |
| गायन्ति | ८. गाने लगे | मुदा ॥ | ११. प्रसन्नता से |

श्लोकार्थ—उस समय आकाश में मेघ गरज कर मानों बाजे बजाने लगें। गन्धर्वगण भगवान् की स्तुति गाने लगे और अपसरायें प्रसन्नता से नाचने लगीं ॥

## अष्टमः श्लोकः

**पेतुः सुमनसो दिव्याः खेचरैरपवर्जिताः ।**
**प्रसेदुश्च दिशः सर्वा अम्भांसि च मनांसि च ॥८॥**

पदच्छेद—

पेतुः सुमनसः दिव्याः खेचरैः अपवर्जिताः ।
प्रसेदुः च दिशः सर्वाः अम्भांसि च मनांसि च ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| पेतुः | ५. वर्षा होने लगी | च | ११. और |
| सुमनसः | ४. पुष्पों की | दिशः | ७. दिशायें |
| दिव्याः | ३. दिव्य | सर्वाः | ६. सभी |
| खेचरैः | १. (उस समय) देवताओं के द्वारा | अम्भांसि | ६. सरोवरों के जल |
| अपवर्जिताः । | २. बरसाये गये | च | १०. निर्मल हो गये |
| प्रसेदुः | ८. आनन्दित हो गईं | मनांसि | १२. जीवों के मन |
| | | च ॥ | १३. प्रसन्न हो गये |

श्लोकार्थ— उस समय देवताओं के द्वारा बरसाये गये दिव्य पुष्पों की वर्षा होने लगी। सभी दिशायें आनन्दित हो गईं। सरोवरों के जल निर्मल हो गये और जीवों के मन प्रसन्न हो गये ॥

## नवमः श्लोकः

**तत्कर्दमाश्रमपदं सरस्वत्या परिश्रितम् ।**
**स्वयम्भूः साकमृषिभिर्मरीच्यादिभिरभ्ययात् ॥९॥**

पदच्छेद—

तत् कर्दम आश्रम पदम् सरस्वत्या परिश्रितम् ।
स्वम्भूः साकम् ऋषिभिः मरीचि आदिभिः अभ्ययात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | ४. | उस | स्वम्भूः | ११. | ब्रह्मा जी |
| कर्दम् | ३. | कर्दम जी के | साकम् | १०. | साथ |
| आश्रम | ५. | आश्रम | ऋषिभिः | ९. | मुनियों के |
| पदम् | ६. | स्थान में | मरीचि | ७. | मरीचि |
| सरस्वत्या | १. | सरस्वती नदी से | आदिभिः | ८. | इत्यादि |
| परिश्रितम् । | २. | घिरे हुये | अभ्ययात् ॥ | १२. | पधारे |

श्लोकार्थ—सरस्वती नदी से घिरे हुये कर्दम जी के आश्राम स्थान में मरीचि इत्यादि मुनियों के साथ ब्रह्मा जी पधारे ॥

## दशमः श्लोकः

**भगवन्तं परं ब्रह्म सत्त्वेनांशेन शत्रुहन् ।**
**तत्त्वसंख्यानविज्ञप्त्यै जातं विद्वानजः स्वराट् ॥१०॥**

पदच्छेद—

भगवन्तम् परम् ब्रह्म सत्त्वेन अंशेन शत्रुहन् ।
तत्त्व संख्यान विज्ञप्त्यै जातम् विद्वान् अजः स्वराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भगवन्तम् | ७. | परमात्मा (अपने) | तत्त्व | १०. | संख्या |
| परम् | ५. | परम् | संख्यान | ११. | शास्त्र का |
| ब्रह्म | ६. | ब्रह्म | विज्ञप्त्यै | १२. | उपदेश करने के लिये |
| सत्त्वेन | ८. | सत्त्वगुण के | जातम् | १३. | उत्पन्न हुये हैं |
| अंशेन | ९. | अंश से | विद्वान् | ४. | जान गये कि |
| शत्रुहन् । | १. | शत्रु नाशन हे विदुर जी ! | अजः | २. | अजन्मा ब्रह्मा जी |
| | | | स्वराट् ॥ | ३. | अपने अन्तः प्रकाश से |

श्लोकार्थ—शत्रुनाशन हे विदुर जी ! अजन्मा ब्रह्मा जी अपने अन्तः प्रकाश से जान गये कि परम ब्रह्म परमात्मा अपने सत्त्वगुण के अंश से सांख्य शास्त्र का उपदेश करने के लिये उत्पन्न हुये हैं ॥

## एकादशः श्लोकः

**सभाजयन् विशुद्धेन चेतसा तच्चिकीर्षितम् ।**
**प्रहृष्यमाणैरसुभिः कर्दमं चेदमभ्यधात् ॥११॥**

पदच्छेद—

सभाजयन् विशुद्धेन चेतसा तत् चिकीर्षितम् ।
प्रहृष्यमाणैः असुभिः कर्दमम् च इदम् अभ्यधात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सभाजयन् | ५. | सम्मान करते हुये | प्रहृष्यमाणैः | ८. | प्रसन्न होते हुये (ब्रह्मा जी) |
| विशुद्धेन | ३. | विशुद्ध | असुभिः | ७. | सभी इन्द्रियों से |
| चेतसा | ४. | मन से | कर्दमम् | ९. | कर्दम जी से |
| तत् | १. | भगवान् की | च | ६. | और |
| चिकीर्षितम् । | २. | लीला करने की इच्छा का | इदम् | १०. | इस प्रकार |
| | | | अभ्यधात् ॥ | १२. | बोले |

श्लोकार्थ—भगवान् की लीला करने की इच्छा का विशुद्ध मन से सम्मान करते हुये और सभी इन्द्रियों से प्रसन्न होते हुये ब्रह्मा जी कर्दम जी से इस प्रकार बोले ॥

## द्वादशः श्लोकः

**ब्रह्मोवाच— त्वया मेऽपचितिस्तात कल्पिता निर्व्यलीकतः ।**
**यन्मे सञ्जगृहे वाक्यं भवान्मानद मानयन् ॥१२॥**

पदच्छेद—

त्वया मे अपचितिः तात कल्पिता निर्व्यलीकतः यत् ।
मे सत् जगृहे वाक्यम् भवान् मानद मानयन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वया | १०. | तुम्हारे द्वारा | मे | ५. | मेरे |
| मे | ११. | मेरी | सत् | ६. | उत्तम |
| अपचितिः | १३. | पूजा | जगृहे | ९. | पालन किया है (उससे) |
| तात | २. | प्रिय कर्दम जी | वाक्यम् | ७. | आदेश का |
| कल्पिता | १४. | हुई है | भवान् | ३. | तुमने |
| निर्व्यलीकतः । | १२. | निष्कपट भाव से | मानद | १. | दूसरों का सम्मान करने वाले |
| यत् | ४. | जो | मानयन् ॥ | ८. | सम्मान करते हुये |

श्लोकार्थ—दूसरों का सम्मान करने वाले प्रिय कर्दम जी तुमने जो उत्तम आदेश का सम्मान करते हुये पालन किया है । उससे तुम्हारे द्वारा मेरी निष्कपट भाव से पूजा हुई है ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

एतावत्येव शुश्रूषा कार्या पितरि पुत्रकैः ।
बाढमित्यनुमन्येत गौरवेण गुरोर्वचः ॥१३॥

पदच्छेद—

एतावती एव शुश्रूषा कार्या पितरि पुत्रकैः ।
बाढम् इति अनुमन्येत गौरवेण गुरोः वचः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावती | ३. | (सबसे बड़ी) यह | बाढम् | ७. | जैसी आज्ञा |
| एव | ४. | ही | इति | ८. | ऐसा कहकर |
| शुश्रूषा | ५. | सेवा | अनुमन्येत | १२. | पालन करें |
| कार्या | ६. | करनी चाहिये (कि) | गौरवेण | ११. | आदर के साथ |
| पितरि | २. | पिता की | गुरोः | ९. | पिता के |
| पुत्रकैः । | १. | पुत्रों को | वचः ॥ | १०. | आदेश का |

श्लोकार्थ—पुत्रों को पिता की सबसे बड़ी यह ही सेवा करनी चाहिये कि जैसी आज्ञा ऐसा कहकर पिता के आदेश का आदर के साथ पालन करे ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

इमा दुहितरः सभ्य तव वत्स सुमध्यमाः ।
सर्गमेतं प्रभावैः स्वैर्बृंहयिष्यन्त्यनेकधा ॥१४॥

पदच्छेद—

इमाः दुहितरः सभ्य तव वत्स सुमध्यमाः ।
सर्गम् एतम् प्रभावैः स्वैः बृहयिष्यन्ति अनेकधा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इमाः | ४. | ये | सर्गम् | १०. | सृष्टि को |
| दुहितरः | ६. | कन्यायें | एतम् | ९. | इस |
| सभ्य | २. | बड़े सभ्य हो | प्रभावैः | ८. | प्रभाव से |
| तव | ३. | तुम्हारी | स्वैः | ७. | अपने वंश के |
| वत्स | १. | हे बेटा ! तुम | बृहयिष्यन्ति | १२. | बढ़ायेगा |
| सुमध्यमाः । | ५. | सुन्दरि | अनेकधा ॥ | ११. | अनेक प्रकार से |

श्लोकार्थ—हे बेटा ! तुम बड़े सभ्य हो तुम्हारी ये सुन्दरि कन्यायें अपने वंश के प्रभाव से इस सृष्टि को अनेक प्रकार से बढ़ायेंगी ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**अतस्त्वमृषिमुख्येभ्यो यथाशीलं यथारुचि ।**
**आत्मजाः परिदेह्यद्य विस्तृणीहि यशो भुवि ॥१५॥**

पदच्छेद—

अतः त्वम् ऋषि मुख्येभ्यः यथा शीलम् यथारुचि ।
आत्मजाः परिदेहि अद्य विस्तृणीहि यशः भुवि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतः | १. | इसलिये (अब) | आत्मजाः | ७. | अपनी कन्याओं का |
| त्वम् | २. | तुम | परिदेहि | ८. | विवाह करो (और) |
| ऋषि मुख्येभ्यः | ३. | प्रधान मुनियों को | अद्य | १०. | अपना |
| यथा | ५. | अनुसार (और) | विस्तृणीहि | १२. | फैलाओ |
| शीलम् | ४. | उनके स्वभाव के | यशः | ११. | सुयश |
| यथारुचि । | ६. | रुचि के अनुकूल | भुवि ॥ | ९. | संसार में |

श्लोकार्थ—इसलिये अब तुम प्रधान मुनियों को उनके स्वभाव के अनुसार और रुचि के अनुकूल अपनी कन्याओं का विवाह करो और संसार में अपना सुयश फैलाओ ॥

## षोडशः श्लोकः

**वेदाहमाद्यं पुरुषमवतीर्णं स्वमायया ।**
**भूतानां शेवधिं देहं बिभ्राणं कपिलं मुने ॥१६॥**

पदच्छेद—

वेद अहम् आद्यम् पुरुषम् अवतीर्णम् स्वमायया ।
भूतानाम् शेवधिम् देहम् बिभ्राणम् कपिलम् मुने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वेद | ३. | जानता हूँ (कि) | भूतानाम् | ४. | सभी प्राणियों की |
| अहम् | २. | मैं | शेवधिम् | ५. | निधि |
| आद्यम् | ६. | आदि | देहम् | ९. | शरीर |
| पुरुषम् | ७. | पुरुष नारायण | बिभ्राणम् | १०. | धारण करके |
| अवतीर्णम् | १२. | अवतार लिये हैं | कपिलम् | ११. | कपिल इस नाम से |
| स्वमायया । | ८. | अपनी माया से | मुने ॥ | १. | हे कर्दम जी ! |

श्लोकार्थ—हे कर्दम जी ! मैं जानता हूँ कि सभी प्राणियों की निधि आदि पुरुष-नारायण अपनी मायां से शरीर धारण करके 'कपिल' इस नाम से अवतार लिये हैं ॥

## सप्तदशः श्लोकः

ज्ञानविज्ञानयोगेन कर्मणामुद्धरञ्जटाः ।
हिरण्यकेशः पद्माक्षः पद्ममुद्रापदाम्बुजः ॥१७॥

पदच्छेद—

ज्ञान विज्ञान योगेन कर्मणाम् उद्धरन् जटाः ।
हिरण्यकेशः पद्मअक्षः पद्ममुद्रा पद अम्बुजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञान | १. | वे तत्त्व ज्ञान (और) | हिरण्यकेशः | ७. | उनके सुनहरे बाल हैं |
| विज्ञान | २. | अध्यात्म ज्ञान के | पद्मअक्ष | ८. | कमल के समान विशाल नेत्र हैं और |
| योगेन | ३. | प्रभाव से | पद्ममुद्रा | ११. | कमल के चिह्न से अंकित हैं |
| कर्मणाम् | ४. | कर्मों की | पद | ९. | उनके चरण |
| उद्धरन् | ६. | विनाश करते हैं | अम्बुजः ॥ | १०. | कमल |
| जटाः । | ५. | जड़ का | | | |

श्लोकार्थ—वे तत्त्व-ज्ञान और अध्यात्म-ज्ञान के प्रभाव से कर्मों की जड़ का विनाश करते हैं। उनके सुनहरे बाल हैं। कमल के समान विशाल नेत्र हैं और उनके चरण कमल, कमल के चिह्न से अंकित हैं ॥

## अष्टदशः श्लोकः

एष मानवि ते गर्भं प्रविष्टः कैटभार्दनः ।
अविद्यासंशयग्रन्थिं छित्त्वा गां विचरिष्यति ॥१८॥

पदच्छेद—

एषः मानवि गर्भम् प्रविष्टः कैटभ अर्दनः ।
अविद्या संशय ग्रन्थिम् छित्त्वा गाम् विचरिष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः | ७. | ये | अविद्या | ८. | अज्ञान से उत्पन्न |
| मानवि | १. | हे राजकुमारी ! | संशय | ९. | मोह के |
| ते | ४. | तुम्हारे | ग्रन्थिम् | १०. | बन्धन को |
| गर्भम् | ५. | गर्भ में | छित्त्वा | ११. | काट कर |
| प्रविष्टः | ६. | प्रवेश किये हैं | गाम् | १२. | पृथ्वी पर |
| कैटभ | २. | कैटभासुर को | विचरिष्यति ॥ | १३. | विचरण करेंगे |
| अर्दनः । | ३. | मारने वाले (भगवान् श्री हरि) | | | |

श्लोकार्थ—हे राजकुमारी ! कैटभासुर को मारने वाले भगवान् श्री हरि तुम्हारे गर्भ में प्रवेश किये हैं। वे अज्ञान से उत्पन्न मोह के वन्धन को काट कर पृथ्वी पर विचरण करेंगे ॥

# एकोनविंशः श्लोकः

**अयं सिद्धगणाधीशः साङ्ख्याचार्यैः सुसम्मतः ।**
**लोके कपिल इत्याख्यां गन्ता ते कीर्तिवर्धनः ॥१९॥**

पदच्छेद—

अयम् सिद्धगण अधीशः साङ्ख्याचार्यैः सुसम्मतः ।
लोके कपिलः इति आख्याम् गन्ता ते कीर्तिवर्धनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अयम् | १. | ये | कपिलः | ७. | कपिल |
| सिद्धगण | २. | सिद्धगणों के | इति | ८. | इस |
| अधीशः | ३. | स्वामी है | आख्याम् | ९. | नाम |
| साङ्ख्याचार्यैः | ४. | सांख्य शास्त्र के आचार्यों से | गन्ता | १०. | प्रसिद्ध होंगे |
| सुसम्मतः । | ५. | मान्य (और) | ते | ११. | (तथा) तुम्हारे |
| लोके | ६. | संसार में | कीर्तिवर्धनः ॥ | १२. | यश को बढ़ायेंगे |

श्लोकार्थ—ये सिद्ध गणों के स्वामी हैं सांख्य शास्त्र के आचार्यों से मान्य और संसार में 'कपिल' इस नाम से प्रसिद्ध होंगे तथा तुम्हारे यश को बढ़ायेंगे ॥

# त्रिंशः श्लोकः

**मैत्रेय उवाच—तावाश्वास्य जगत्स्रष्टा कुमारैः सहनारदः ।**
**हंसो हंसेन यानेन त्रिधामपरमं ययौ ॥२०॥**

पदच्छेद—

तौ आश्वास्य जगत् स्रष्टा कुमारैः सह नारदः ।
हंस हंसेन यानेन त्रिधाम परमम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तौ | ४. | उन दोनों को | हंस | ३. | ब्रह्मा जी |
| आश्वास्य | ५. | आश्वासन देकर | हंसेन | १०. | हंस से |
| जगत् | १. | संसार को | यानेन | ९. | अपने वाहन |
| स्रष्टा | २. | बनाने वाले | त्रिधाम | १२. | ब्रह्म लोक को |
| कुमारैः | ६. | सनकादि कुमारों (और) | परमम् | ११. | उत्तम |
| सह | ८. | साथ | ययौ ॥ | १३. | चले गये |
| नारदः । | ७. | देवर्षि नारद के | | | |

श्लोकार्थ—संसार को बनाने वाले ब्रह्मा जी उन दोनों को आश्वासन देकर सनकादि कुमारों और देवर्षि नारद के साथ अपने वाहन हंस से उत्तम ब्रह्मलोक को चले गये ॥

## एकविंशः श्लोकः

**गते शतधृतौ क्षत्तः कर्दमस्तेन चोदितः ।**
**यथोदितं स्वदुहितृः प्रादाद्विश्वसृजां ततः ॥२१॥**

पदच्छेद—

गते शतधृतौ क्षत्तः कर्दमः तेन चोदितः ।
यथा उदितम् स्वदुहितृः प्रादात् विश्वसृजाम् ततः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गते | ३. | चले जाने पर | यथा | ९. | अनुसार |
| शतधृतौ | २. | ब्रह्मा जी के | उदितम् | ८. | उनके कथन के |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी ! | स्वदुहितृः | ११. | अपनी कन्याओं |
| कर्दमः | ५. | कर्दम जी ने | प्रादात् | १२. | विधि पूर्वक विवाह किया |
| तेन | ६. | उनसे | विश्वसृजाम् | १०. | मरीचि इत्यादि प्रजापतियों के साथ |
| चोदितः । | ७. | प्रेरणा पाकर | ततः ॥ | ४. | तदनन्तर |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! ब्रह्मा जी के चले जाने पर तदनन्तर कर्दम जी ने उनसे प्रेरणा पाकर उनके कथन के अनुसार मरीचि इत्यादि प्रजापतियों के साथ अपनी कन्याओं का विधि पूर्वक विवाह किया ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

**मरीचये कलां प्रादादनसूयामथात्रये ।**
**श्रद्धामङ्गिरसेऽयच्छत्पुलस्त्याय हविर्भुवम् ॥२२॥**

पदच्छेद—

मरीचये कलाम् प्रादात् अनुसूयाम् अथ अत्रये ।
श्रद्धाम् अङ्गिरसे अयच्छत् पुलस्त्याय हविर्भुवम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मरीचये | १. | उन्होंने मरीचि ऋषि को | श्रद्धाम् | ८. | श्रद्धा और |
| कलाम् | २. | कला नाम की पुत्री का | अङ्गिरसे | ७. | अङ्गिरा ऋषि को |
| प्रादात् | ६. | विवाह किया | अयच्छत् | ११. | प्रदान की |
| अनुसूयाम् | ५. | अनुसूया का | पुलस्त्याय | ९. | पुलस्त्य ऋषि को |
| अथ | ३. | और | हविर्भुवम् ॥ | १०. | हविर्भू नाम की कन्या |
| अत्रये । | ४. | अत्रि से | | | |

श्लोकार्थ—उन्होंने मरीचि ऋषि को कला नाम की पुत्री का और अत्रि से अनुसूया का विवाह किया । अङ्गिरा ऋषि को श्रद्धा और पुलस्त्य ऋषि को हविर्भू नाम की कन्या प्रदान की ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

**पुलहाय गतिं युक्तां क्रतवे च क्रियां सतीम् ।**
**ख्यातिं च भृगवेऽयच्छद्वसिष्ठायाप्यरुन्धतीम् ॥२३॥**

पदच्छेद—

पुलहाय गतिम् युक्ताम् क्रतवे च क्रियाम् सतीम् ।
ख्यातिं च भृगवे अयच्छत् वशिष्ठाय अपि अरुंधतीम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पुलहाय | १. | उन्होंने पुलह ऋषि को | ख्यातिं | १०. | ख्याति नाम की कन्या |
| गतिम | ३. | गति नाम की कन्या | च | ८. | तथा |
| युक्ताम् | २. | उनके अनुरूप | भृगवे | ९. | भृगु ऋषि को |
| क्रतवे | ५. | क्रतु ऋषि को | अयच्छत् | १४. | प्रदान की |
| च | ४. | और | वसिष्ठाय | १२. | वसिष्ठ जी को |
| क्रियाम् | ७. | क्रिया नाम की कन्या | अपि | ११. | एवम् |
| सतीम् । | ६. | परम साध्वी | अरुंधतीम् ॥ | १३. | अरुन्धती नाम की कन्या |

श्लोकार्थ—उन्होंने पुलह ऋषि को उनके अनुरूप गति नाम की कन्या और क्रतु ऋषि को परम साध्वी क्रिया नाम की कन्या तथा भृगु ऋषि को ख्याति नाम की कन्या एवम् वसिष्ठ जी को अरुन्धती नाम की कन्या प्रदान की ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

**अथर्वणेऽददाच्छान्तिं यया यज्ञो वितन्यते ।**
**विप्रर्षभान् कृतोद्वाहान् सदारान् समलालयत् ॥२४॥**

पदच्छेद—

अथर्वणे अददात् शान्तिम् यथा यज्ञः वितन्यते ।
विप्र ऋषभान् कृत उद्वाहान् सदारान् समलालयत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथर्वणे | १. | उन्होंने अथर्वा ऋषि को | विप्र | १०. | ऋषियों का (उनकी) |
| अददात् | ३. | प्रदान की | ऋषभान् | ९. | उन श्रेष्ठ |
| शान्तिम् | २. | शान्ति नाम की कन्या | कृत | ८. | करने के बाद |
| यथा | ४. | जिससे | उद्वाहान् | ७. | विवाह संस्कार |
| यज्ञः | ५. | यज्ञ कर्म का | सदारान् | ११. | पत्नियों के साथ |
| वितन्यते । | ६. | विस्तार किया जाता है (अतः) | समलालयत् ॥ | १२. | खूब सत्कार किया |

श्लोकार्थ—उन्होंने अथर्वा ऋषि को शान्ति नाम की कन्या प्रदान की । जिससे यज्ञ कर्म का विस्तार किया जाता है । अतः विवाह संस्कार करने के बाद उन श्रेष्ठ ऋषियों का उनकी पत्नियों के साथ खूब सत्कार किया ॥

# पञ्चविंशः श्लोकः

**ततस्त ऋषयः क्षत्तः कृतदारा निमन्त्र्य तम् ।**
**प्रातिष्ठन्नन्दिमापन्नाः स्वं स्वमाश्रममण्डलम् ॥२५॥**

पदच्छेद—

ततः ते ऋषयः क्षत्तः कृत दाराः निमन्त्र्य तम् ।
प्रातिष्ठन् नन्दिम् आपन्नाः स्वम्-स्वम् आश्रम मण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | २. | तदनन्तर | तम् | ७. | उन कर्दम जी से |
| ते | ५. | वे | प्रातिष्ठन् | १४. | चले गये |
| ऋषयः | ६. | मुनिगण | नन्दिम् | ९. | आनन्द |
| क्षत्तः | १. | हे विदुर जी ! | आपन्नाः | १०. | पूर्वक |
| कृत | ४. | सम्पन्न | स्वम्-स्वम् | ११. | अपने-अपने |
| दाराः | ३. | विवाह संस्कार से | आश्रम | १२. | आश्रम |
| निमन्त्र्य | ८. | आज्ञा लेकर | मण्डलम् ॥ | १३. | स्थान को |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तदनन्तर विवाह संस्कार से सम्पन्न वे मुनिगण उन कर्दम जी से आज्ञा लेकर आनन्द पूर्वक अपने-अपने आश्रम स्थान को चले गये ॥

# षट्विंशः श्लोकः

**स चावतीर्णं त्रियुगमाज्ञाय विबुधर्षभम् ।**
**विविक्त उपसङ्गम्य प्रणम्य समभाषत ॥२६॥**

पदच्छेद—

सः च अवतीर्णम् त्रियुगम् आज्ञाय विबुध ऋषभम् ।
विविक्ते उपसङ्गम्य प्रणम्य समभाषत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वे कर्दम जी | ऋषभम् | ४. | अधिदेव |
| च | १. | तदन्तर | विविक्ते | ८. | एकान्त में |
| अवतीर्णम् | ६. | अवतार लिया | उपसङ्गम्य | ९. | उनके पास गये (और) |
| त्रियुगम् | ५. | भगवान् श्री हरि को | प्रणम्य | १०. | प्रणाम करके |
| आज्ञाय | ७. | जानकर | समभाषत ॥ | ११. | बोले |
| विबुध | ३. | देवों के | | | |

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे कर्दम जी देवों के अधिदेव भगवान् श्री हरि को अवतार लिया जान कर एकान्त में उनके पास गये और प्रणाम करके बोले ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

**अहो पापच्यमानानां निरये स्वैरमङ्गलैः ।**
**कालेन भूयसा नूनं प्रसीदन्तीह देवताः ॥२७॥**

**पदच्छेद—**

अहो पापच्यमानानाम् निरये स्वैः अमङ्गलैः ।
कालेन भूयसा नूनम् प्रसीदन्ति इह देवताः ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहो | १. | आश्चर्य है (कि) | कालेन | ६. | समय के बाद |
| पापच्यमानानाम् | ६. | कष्टों से पीड़ित होने वाले | भूयसा | ८. | बहुत |
| निरये | ३. | दुःखमय संसार में | नूनम् | १०. | ही |
| स्वैः | ४. | अपने | प्रसीदन्ति | ११. | प्रसन्न होते हैं |
| अमङ्गलैः । | ५. | पापों के | इह | २. | इस |
| | | | देवताः ॥ | ७. | मनुष्यों पर देवगण |

**श्लोकार्थ—**आश्चर्य है कि इस दुःखमय संसार में अपने पापों के कष्टों से पीड़ित होने वाले मनुष्यों पर देवगण बहुत समय के बाद ही प्रसन्न होते हैं ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

**बहुजन्मविपक्वेन सम्यग्योगसमाधिना ।**
**द्रष्टुं यतन्ते यतयः शून्यागारेषु यत्पदम् ॥२८॥**

**पदच्छेद—**

बहु जन्म विपक्वेन सम्यग् योग समाधिना ।
द्रष्टुम् यतन्ते यतयः शून्यआगारेषु यत् पदम् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बहु | २. | बहुत | द्रष्टुम् | १०. | देखने का |
| जन्म | ३. | जन्मों की | यतन्ते | ११. | प्रयास करते हैं |
| विपक्वेन | ४. | सिद्धियों के बाद | यतयः | १. | योगिजन |
| सम्यग् | ५. | भली-भाँति | शून्यआगारेषु | ७. | एकान्त स्थान में |
| योग | ६. | योग | यत् | ८. | जिनके |
| समाधिना । | ७. | समाधि के द्वारा | पदम् ॥ | ९. | चरण कमल को |

**श्लोकार्थ—**योगिजन बहुत जन्मों की सिद्धियों के बाद भली-भाँति योग समाधि के द्वारा जिनके चरण कमल को देखने का प्रयास करते हैं ॥

# एकोनत्रिंशः श्लोकः

**स एव भगवानद्य हेलनं नगणय्य नः ।**
**गृहेषु जातो ग्राम्याणां यः स्वानां पक्षपोषणः ॥२९॥**

पदच्छेद—

स: एव भगवान् अद्य हेलनम् नगणय्य नः ।
गृहेषु जातः ग्राम्याणाम् यः स्वानाम् पक्षपोषणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वे | नः । | ९. | हम लोगों के द्वारा किये गये |
| एव | २. | ही | गृहेषु | १२. | हमारे घर में |
| भगवान् | ३. | भगवान् श्री हरि | जातः | १३. | अवतार लिये हैं |
| अद्य | ७. | आज | ग्राम्याणाम् | ८. | विषय लोलुप |
| हेलनम् | १०. | अपमान का | यः | ४. | जो |
| नगणय्य | ११. | विचार न करके | स्वानाम् | ५. | अपने भक्तों की |
| | | | पक्षपोषणः ॥ | ६. | रक्षा करते हैं |

श्लोकार्थ—वे ही भगवान् श्री हरि जो अपने भक्तों की रक्षा करते हैं आज विषय लोलुप हम लोगों के द्वारा किये गये अपमान का विचार न करके हमारे घर में अवतार लिये हैं ॥

# त्रिंशः श्लोकः

**स्वीयं वाक्यमृतं कर्तुमवतीर्णोऽसि मे गृहे ।**
**चिकीर्षुर्भगवान् ज्ञानं भक्तानां मानवर्धनः ॥३०॥**

पदच्छेद—

स्वीयम् वाक्यम् ऋतम् कर्तुम् अवतीर्णः असि मे गृहे ।
चिकीर्षुः भगवान् ज्ञानम् भक्तानाम् मानवर्धनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वीयम् | ४. | अपने | मे गृहे । | १०. | मेरे घर में |
| वाक्य | ५. | वचन को | चिकीर्षुः | ९. | करने की इच्छा से ही |
| ऋतम् | ६. | सत्य | भगवान् | ३. | हे भगवन् ! आप |
| कर्तुम् | ७. | करने के लिये (तथा) | ज्ञानम् | ८. | सांख्य शास्त्र का उपदेश |
| अवतीर्णः | ११. | अवतार | भक्तानाम् | १. | भक्तों का |
| असि | १२. | लिये हैं | मानवर्धनः ॥ | २. | सम्मान बढ़ाने वाले |

श्लोकार्थ—भक्तों का सम्मान बढ़ाने वाले हे भगवन् ! आप अपने वचन को सत्य करने के लिये तथा सांख्य शास्त्र का उपदेश करने की इच्छा से ही मेरे घर में अवतार लिये हैं ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

**तान्येव तेऽभिरूपाणि रूपाणि भगवंस्तव ।**
**यानि यानि च रोचन्ते स्वजनानामरूपिणः ॥३१॥**

पदच्छेद—

तानि एव ते अभिरूपाणि रूपाणि भगवन् तव ।
यानि यानि च रोचन्ते स्व जनानाम् अरूपिणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तानि | १०. | वे | यानि | ४. | जिन |
| एव | ११. | ही | यानि | ५. | जिन |
| ते | १३. | आपके | च | ६. | रूपों को |
| अभिरूपाणि | १४. | योग्य हैं | रोचन्ते | ९. | पसन्द करते हैं |
| रूपाणि | १२. | स्वरूप | स्व | ७. | आपके |
| भगवन् | १. | हे भगवन् ! | जनानाम् | ८. | भक्त जन |
| तव । | ३. | आपके | अरूपिणः ॥ | २. | रूप रहित |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! रूप रहित आपके जिन-जिन रूपों को आपके भक्त जन पसन्द करते हैं। वे ही स्वरूप आपके योग्य हैं ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**त्वां सूरिभिस्तत्त्वबुभुत्सयाद्धा सदाभिवादार्हणपादपीठम् ।**
**ऐश्वर्यवैराग्ययशोऽवबोधवीर्यश्रिया पूर्त्तमहं प्रपद्ये ॥३२॥**

पदच्छेद—

त्वाम् सूरिभिः तत्त्व बुभुत्सया अद्धा सदा अभिवाद अर्हण पादपीठम् ।
ऐश्वर्य वैराग्य यशः अवबोध वीर्य श्रिया पूर्त्तम् अहम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वाम् | १७. | आप की | ऐश्वर्य | ९. | आप ऐश्वर्य |
| सूरिभिः | ५. | विद्वानों के द्वारा | वैराग्य | १०. | वैराग्य |
| तत्त्व | ३. | तत्त्व को | यशः | ११. | यश |
| बुभुत्सया | ४. | जानने की इच्छा | अवबोध | १२. | ज्ञान |
| अद्धा | १. | हे भगवन् ! आपके | वीर्य | १३. | पराक्रम (और) |
| सदा | ६. | सर्वदा | श्रिया | १४. | शोभा से |
| अभिवाद | ७. | पूजन के | पूर्त्तम् | १५. | परिपूर्ण हैं |
| अर्हण | ८. | योग्य हैं | अहम् | १६. | मैं |
| पादपीठम् । | २. | चरणों की चौकी | प्रपद्ये ॥ | १८. | शरण में हूँ ॥ |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपके चरणों की चौकी तत्त्व को जानने की इच्छा से विद्वानों के द्वारा सर्वदा पूजन के योग्य हैं। आप ऐश्वर्य, वैराग्य, यश, ज्ञान, पराक्रम और शोभा से परिपूर्ण हैं। मैं आपकी शरण में हूँ ॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**परं प्रधानं पुरुषं महान्तं कालं कविं त्रिवृतं लोकपालम् ।**
**आत्मानुभूत्यानुगतप्रपञ्चं स्वच्छन्दशक्तिं कपिलं प्रपद्ये ॥३३॥**

पदच्छेद— परम् प्रधानम् पुरुषम् महान्तम् कालम् कविम् त्रिवृतम् लोक पालम् ।
आत्म अनुभूत्या अनुगत प्रपञ्चम् स्वच्छन्द शक्तिम् कपिलम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परम् प्रधानम् | १. | (आप) पर-ब्रह्म-प्रकृति | आत्म | ९. | आप अपने |
| पुरुषम् | २. | पुरुष | अनुभूत्या | १०. | ज्ञान से |
| महान्तम् | ३. | महत्तत्त्व | अनुगत | १२. | व्याप्त हैं |
| कालम् | ४. | काल | प्रपञ्चम् | ११. | समस्त विश्व में |
| कविम् | ६. | अहंकार | स्वच्छन्द | १४. | आपके अधीन हैं (अतः मैं) |
| त्रिवृतम् | ५. | त्रिविध | शक्तिम् | १३. | सारी शक्तियाँ |
| लोक | ७. | सम्पूर्ण लोक (और) | कपिलम् | १५. | आप कपिल भगवान् की |
| पालम् । | ८. | (उनके) स्वामी हैं | प्रपद्ये ॥ | १६. | शरण लेता हूँ |

श्लोकार्थ—आप पर-ब्रह्म-प्रकृति, पुरुष, महत्तत्त्व, काल, त्रिविध अहंकार सम्पूर्ण लोक और उसके स्वामी हैं। आप अपने ज्ञान से समस्त विश्व में व्याप्त हैं। सारी शक्तियाँ आपके आधीन हैं। अतः मैं आप कपिल भगवान् की शरण लेता हूँ ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**आस्माभिपृच्छेऽद्य पतिं प्रजानां त्वयावतीर्णर्ण उताप्तकामः ।**
**परिव्रजत्पदवीमास्थितोऽहं चरिष्ये त्वां हृदि युञ्जन् विशोकः ॥३४॥**

पदच्छेद— आस्माभिपृच्छे अद्य पतिम् प्रजानाम् त्वया अवतीर्ण ऋणः उत आप्तकामः ।
परिव्रजत् पदवीम् आस्थितः अहम् चरिष्ये त्वाम् हृदि युञ्जन् विशोकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आस्माभिपृच्छे | १८. | आपकी आज्ञा चाहता हूँ | परिव्रजत् | ८. | संन्यास |
| अद्य | ६. | अब | पदवीम् | ९. | मार्ग में |
| पतिम् | १७. | स्वामी हैं (अतः) | आस्थितः | १०. | स्थित होकर |
| प्रजानाम् | १६. | (आप) सारी प्रजा के | अहम् | ७. | मैं |
| त्वया | १. | आपके द्वारा (मैं) | चरिष्ये | १५. | विचरण करना चाहता हूँ (अतः) |
| अवतीर्ण | ३. | मुक्त कर दिया गया हूँ (तथा) | त्वाम् | १२. | आपका |
| ऋणः | २. | तीनों ऋणों से | हृदि | ११. | हृदय में |
| उत | ५. | परिपूर्ण हूँ | युञ्जन् | १३. | चिन्तन करता हुआ |
| आप्तकामः । | ४. | सारी कामनाओं से | विशोकः ॥ | १४. | शोक रहित होकर |

श्लोकार्थ—आपके द्वारा मैं तीनों ऋणों से मुक्त कर दिया गया हूँ तथा सारी कामनाओं से परिपूर्ण हूँ। अब मैं सन्यास मार्ग में स्थित होकर हृदय में आपका चिन्तन करता हुआ शोक रहित होकर विचरण करना चाहता हूँ। आप सारी प्रजाओं के स्वामी हैं। अतः आपकी आज्ञा चाहता हूँ ॥

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—**मया प्रोक्तं हि लोकस्य प्रमाणं सत्यलौकिके ।**
**अथाजनि मया तुभ्यं यदवोचमृतं मुने ॥३५॥**

पदच्छेद—

मया प्रोक्तम् हि लोकस्य प्रमाणम् सत्य लौकिके ।
अथ अजनि मया यद् अवोचम् ऋतम् मुने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मया | ४. | मेरा | अथ अजनि | १४. | ही, शरीर धारण किया है |
| प्रोक्तम् | ५. | कथन | मया | ९. | मैंने |
| हि | ६. | ही | तुभ्यम् | १०. | तुम्हें |
| लोकस्य | ७. | संसार के लिये | यद् | ११. | जो |
| प्रमाणम् | ८. | प्रमाण है | अवोचम् | १२. | कहा था |
| सत्य | २. | वैदिक (और) | ऋतम् | १३. | उसे सत्य करने के लिये |
| लौकिके । | ३. | लौकिक कर्मों में | मुने ॥ | १. | हे कर्दम जी ! |

श्लोकार्थ—हे कर्दम जी ! वैदिक और लौकिक कर्मों में मेरा कथन ही संसार के लिये प्रमाण है । मैंने तुम्हें जो कहा था उसे सत्य करने के लिये ही शरीर धारण किया है ॥

# षट्त्रिंशः श्लोकः

**एतन्मे जन्म लोकेऽस्मिन्मुमुक्षूणां दुराशयात् ।**
**प्रसंख्यानाय तत्त्वानां सम्मतायात्मदर्शने ॥३६॥**

पदच्छेद—

एतद् मे जन्म लोके अस्मिन् मुमुक्षूणाम् दुराशयात् ।
प्रसंख्यानाय तत्त्वानाम् लोके सम्मताय आत्म दर्शने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | १०. | यह | दुराशयात् | ३. | सूक्ष्म शरीर से |
| मे | ११. | मेरा | प्रसंख्यानाय | ९. | उपदेश करने के लिये |
| जन्म | १२. | जन्म (हुआ है) | तत्त्वानाम् | ८. | पच्चीस तत्त्वों का |
| लोके | २. | संसार में | सम्मताय | ७. | उपयोगी |
| अस्मिन् | १. | इस | आत्म | ५. | आत्म |
| मुमुक्षूणाम् | ४. | मुक्त होने की इच्छा वाले पुरुषों के | दर्शने ॥ | ६. | दर्शन में |

श्लोकार्थ—इस संसार में सूक्ष्म शरीर से मुक्त होने की इच्छा वाले पुरुष के आत्म दर्शन में उपयोगी पच्चीस तत्त्वों का उपदेश करने के लिये यह मेरा जन्म हुआ है ॥

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

एष आत्मपथोऽव्यक्तो नष्टः कालेन भूयसा ।
तं प्रवर्तयितुं देहमिमं विद्धि मया भृतम् ॥३७॥

पदच्छेद—

एष आत्म पथः अव्यक्तः नष्टः कालेन भूयसा ।
तम् प्रवर्तयितुम् देहम् इमम् विद्धि मया भृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एषः | २. | यह | तम् | ८. | उसे फिर से |
| आत्म | १. | आत्म ज्ञान का | प्रवर्तयितुम् | ९. | प्रारम्भ करने के लिये |
| पथः | ४. | मार्ग | देहम् | १२. | शरीर |
| अव्यक्तः | ३. | सूक्ष्म | इमम् | ११. | यह |
| नष्टः | ७. | लुप्त हो गया है | विद्धि | १४. | (ऐसा) जानो |
| कालेन | ६. | समय से | मया | १०. | मैंने |
| भूयसा । | ५. | बहुत | भृतम् ॥ | १३. | धारण किया है |

श्लोकार्थ—आत्म ज्ञान का यह सूक्ष्म मार्ग बहुत समय से लुप्त हो गया है । उसे फिर से प्रारम्भ करने के लिये मैंने यह शरीर धारण किया है । ऐसा जानो ॥

# अष्टत्रिंशः श्लोकः

गच्छ कामं मयाऽऽपृष्टो मयि संन्यस्तकर्मणा ।
जित्वा सुदुर्जयं मृत्युममृतत्वाय मां भज ॥३८॥

पदच्छेद—

गच्छ कामम् मया आपृष्टः मयि संन्यस्त कर्मणा ।
जित्वा सुदुर्जयम् मृत्युम् अमृत तत्त्वाय माम् भज ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गच्छ | ७. | जाओ (तथा) | जित्वा | १०. | जीत कर |
| कामम् | ६. | इच्छानुसार | सुदुर्जयम् | ८. | अजेय |
| मया | १. | मेरी | मृत्युम् | ९. | मृत्यु को |
| आपृष्टः | २. | आज्ञा है (कि तुम) | अमृत | ११. | मोक्ष की |
| मयि | ४. | मुझे | तत्त्वाय | १२. | प्राप्ति के लिये |
| संन्यस्त | ५. | समर्पण करके | माम् | १३. | मेरा |
| कर्मणा । | ३. | समस्त कर्मों को | भज ॥ | १४. | भजन करो |

श्लोकार्थ—मेरी आज्ञा है कि तुम समस्त कर्मों को मुझे समर्पण करके इच्छानुसार जाओ तथा अजेय मृत्यु को जीत कर मोक्ष की प्राप्ति के लिये मेरा भजन करो ॥

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

**मामात्मानं स्वयंज्योतिः सर्वभूतगुहाशयम् ।**
**आत्मन्येवात्मना वीक्ष्य विशोकोऽभयमृच्छसि ॥३६॥**

पदच्छेद—

माम् आत्मानम् स्वयम् ज्योतिः सर्वभूत गुहा आशयम् ।
आत्मनि एव आत्मना वीक्ष्य विशोकः अभयम् ऋच्छसि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| माम् | १०. | मेरा | आत्मनि | ८. | अन्तः करण में |
| आत्मानम् | ६. | परमात्मा हूँ | एव | ९. | ही |
| स्वयम् | ४. | स्वयं | आत्मना | ७. | (अपनी) बुद्धि से |
| ज्योतिः | ५. | प्रकाश | वीक्ष्य | ११. | दर्शन करके |
| सर्वभूत | १. | सभी जीवों के | विशोकः | १२. | शोक रहित होकर |
| गुहा | २. | अन्तः करण में | अभयम् | १३. | मोक्ष पद को |
| आशयम् । | ३. | रहने वाला (मैं) | ऋच्छसि ॥ | १४ | प्राप्त करोगे |

श्लोकार्थ—सभी जीवों के अन्तः करण में रहने वाला मैं स्वयं प्रकाश परमात्मा हूँ । अपनी बुद्धि से अन्तः करण में ही मेरा दर्शन करके शोक रहित होकर मोक्ष पद को प्राप्त करोगे ॥

# चत्वारिंशः श्लोकः

**मात्र आध्यात्मिकीं विद्यां शमनीं सर्वकर्मणाम् ।**
**वितरिष्ये यया चासौ भयं चातितरिष्यति ॥४०॥**

पदच्छेद—

मात्रे आध्यात्मिकीं विद्याम् शमनीम् सर्व कर्मणाम् ।
वितरिष्ये यया च असौ भयम् च अति तरिष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मात्रे | १. | माता देवहूति को भी | वितरिष्ये | ७. | उपदेश दूंगा |
| आध्यात्मिकीं | ५. | अध्यात्म | यया | ८. | जिससे |
| विद्याम् | ६. | ज्ञान का | च | ९. | कि |
| शमनीम् | ४. | समाप्त करने वाले | असौ | १०. | वह |
| सर्व | २. | सभी | भयम् | ११. | भव-भय बन्धन को |
| कर्मणाम् । | ३. | कर्मों को | च अतितरिष्यति ॥ | १२. | भी दूर कर देगी |

श्लोकार्थ—माता देवहूति को भी सभी कर्मों को समाप्त करने वाले अध्यात्म-ज्ञान का उपदेश दूंगा । जिससे कि वह भव-भय बन्धन को भी दूर कर देगी ॥

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एवं समुदितस्तेन कपिलेन प्रजापतिः ।
दक्षिणीकृत्य तं प्रीतो वनमेव जगाम ह ॥४१॥

पदच्छेद—

एवम् समुदितः तेन कपिलेन प्रजापतिः ।
दक्षिणीकृत्य तम् प्रीतः वनम् एव जगाम ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ४. | इस प्रकार | दक्षिणीकृत्य | ७. | प्रदक्षिण करके |
| समुदितः | ५. | आज्ञा पाकर | तम् | ६. | उनकी |
| तेन | १. | उन | प्रीतः | ८. | प्रसन्नता पूर्वक |
| कपिलेन | २. | भगवान् कपिल से | वनम् एव | ९. | वन को |
| प्रजापतिः । | ३. | प्रजापति कर्दम जी | जगाम ह ॥ | १०. | चले गये |

श्लोकार्थ—उन भगवान् कपिल से प्रजापति कर्दम जी इस प्रकार आज्ञा पाकर उनकी प्रदक्षिण करके प्रसन्नता पूर्वक वन को चले गये ॥

## द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

व्रतं स आस्थितो मौनमात्मैकशरणो मुनिः ।
निःसङ्गो व्यचरत्क्षोणीमनग्निरनिकेतनः ॥४२॥

पदच्छेद—

व्रतम् सः आस्थितः मौनम् आत्म एक शरणः मुनिः ।
निःसङ्गः व्यचरत् क्षोणीम् अनग्निः अनिकेतनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| व्रतम् | ७. | व्रत | मुनिः । | ५. | कर्दम मुनि |
| सः | ४. | वे | निःसङ्गः | ११. | आसक्ति रहित होकर |
| आस्थितः | ८. | धारण करके (तथा) | व्यचरत् | १३. | विचरने लगे |
| मौनम् | ६. | मौन | क्षोणीम् | १२. | पृथ्वी पर |
| आत्म | २. | भगवान् श्री हरि की | अनग्निः | ९. | अग्नि (और) |
| एक | १. | एक मात्र | अनिकेतनः ॥ | १०. | आश्रम का त्याग करके |
| शरणः | ३. | शरण में रहने वाले | | | |

श्लोकार्थ—एक मात्र भगवान् श्री हरि की शरण में रहने वाले वे कर्दम जी मौन व्रत धारण करके तथा अग्नि और आश्रम का त्याग करके आसक्ति रहित होकर पृथ्वी पर विचरने लगे ।

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

**मनो ब्रह्मणि युञ्जानो यत्तत्सदसतः परम् ।**
**गुणावभासे विगुण एकभक्त्यानुभाविते ॥४३॥**

पदच्छेद—

मनः ब्रह्मणि युञ्जानः यत् तत् सत् असतः परम् ।
गुण अवभासे विगुणः एक भक्त्या अनुभाविते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनः | १३. | (उन्होंने) मन को | परम् । | ४. | परे है |
| ब्रह्मणि | १२. | पर ब्रह्म में | गुण | ८. | सत्त्वादि गुणों के |
| युञ्जानः | १४. | लगा दिया | अवभासे | ९. | प्रकाशक हैं |
| यत् | १. | जो | विगुणः | ११. | निर्गुण |
| तत् | १०. | उस | एक | ५. | अनन्य |
| सत् | ३. | कारण से | भक्त्या | ६. | भक्ति से |
| असतः | २. | कार्य (और) | अनुभाविते ॥ | ७. | प्रसन्न होते हैं |

श्लोकार्थ— जो कार्य और कारण से परे हैं । अनन्य भक्ति से प्रसन्न होते हैं । सत्त्वादि गुणों के प्रकाशक हैं । उस निर्गुण परब्रह्म में उन्होंने मन को लगा दिया ।

## चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

**निरहंकृतिर्निर्ममश्च निर्द्वन्द्वः समदृक् स्वदृक् ।**
**प्रत्यक्प्रशान्तधीर्धीरः प्रशान्तोर्मिरिवोदधिः ॥४४॥**

पदच्छेद—

निरहंकृतिः निर्ममः च निर्द्वन्द्वः समदृक् स्वदृक् ।
प्रत्यक् प्रशान्त धीः धीरः प्रशान्त ऊर्मि इव उदधिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निरहंकृतिः | २. | अहंकार | प्रत्यक् | ८. | अन्तर्मुखी (और) |
| निर्ममः | ३. | ममता | प्रशान्त | ९. | शान्त (हो गई) |
| च | ४. | और | धीः | ७. | उनकी बुद्धि |
| निर्द्वन्द्वः | ५. | सुख दुखादि से (रहित होकर) | धीरः | १३. | गम्भीर हो गये |
| समदृक् | १. | समदर्शी (कर्दम जी) | प्रशान्तऊर्मि | १०. | (उस समय वे) शान्त लहरों वाले |
| स्वदृक् । | ६. | सबमें परमात्मा का दर्शन करने लगे | इव | १२. | समान |
| | | | उदधिः ॥ | ११. | समुद्र |

श्लोकार्थ—समदर्शी कर्दम जी अहंकार, ममता और सुख-दुखादि से रहित होकर सबमें परमात्मा का दर्शन करने लगे । उनकी बुद्धि अन्तर्मुखी और शान्त हो गई । उस समय वे शान्त लहरों वाले समुद्र के समान गम्भीर हो गये ॥

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

**वासुदेवे भगवति सर्वज्ञे प्रत्यगात्मनि ।**
**परेण भक्तिभावेन लब्धात्मा मुक्तबन्धनः ॥४५॥**

पदच्छेद—

वासुदेवे भगवति सर्वज्ञे प्रत्यगात्मनि ।
परेण भक्तिभावेन लब्ध आत्मा मुक्त बन्धनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वासुदेवे | ४. | वासुदेव में | भक्तिभावेन | ६. | भक्ति भाव से |
| भगवति | ३. | भगवान् | लब्ध | ७. | दर्शन करके (कर्दम जी) |
| सर्वज्ञे | १. | सर्वज्ञ (एवं) | आत्मा | ७. | आत्मा का |
| प्रत्यगात्मनि । | २. | सर्वान्तिर्यामि | मुक्त | १०. | मुक्त हो गये |
| परेण | ५. | परम | बन्धनः ॥ | ९. | सारे बन्धनों से |

श्लोकार्थ—सर्वज्ञ एवम् सर्वान्तिर्यामि भगवान् वासुदेव में परम भक्ति भाव से आत्मा का दर्शन करके कर्दम जी सारे बन्धनों से मुक्त हो गये ॥

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

**आत्मानं सर्वभूतेषु भगवन्तमवस्थितम् ।**
**अपश्यत्सर्वभूतानि भगवत्यपि चात्मनि ॥४६॥**

पदच्छेद—

आत्मानम् सर्व भूतेषु भगवन्तम् अवस्थितम् ।
अपश्यत् सर्व भूतानि भगवति अपि च आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मानम् | १. | आत्म-स्वरूप | अपश्यत् | ११. | देखने लगे |
| सर्व | ३. | सभी | सर्वभूतानि | ६. | सभी जीवों को |
| भूतेषु | ४. | जीवों में | भगवति | ९. | भगवान् में |
| भगवन्तम् | २. | भगवान को | अपि | ७. | भी |
| अवस्थितम् । | १०. | व्याप्त | च | ५. | और |
| | | | आत्मनि ॥ | ८. | आत्म-स्वरूप |

श्लोकार्थ—आत्म-स्वरूप भगवान् को सभी जीवों में और सभी जीवों को भी आत्म-स्वरूप भगवान् में व्याप्त देखने लगे ॥

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

इच्छाद्वेषविहीनेन सर्वत्र समचेतसा ।
भगवद्भक्तियुक्तेन प्राप्ता भागवती गतिः ॥४७॥

पदच्छेद—

इच्छा द्वेष विहीनेन सर्वत्र सम चेतसा ।
भगवद् भक्ति युक्तेन प्राप्ता भागवती गतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इच्छा | १. | राग (और) | भगवद् | ७. | भगवान् की |
| द्वेष | २. | द्वेष से | भक्ति | ८. | अनन्य भक्ति से |
| विहीनेन | ३. | रहित (तथा) | युक्तेन | ९. | युक्त होकर |
| सर्वत्र | ४. | सब जगह | प्राप्ता | १२. | प्राप्त हो गये |
| सम | ५. | समान | भागवती | १०. | भगवान् के |
| चेतसा । | ६. | भाव रखने वाले (कर्दम जी) | गतिः ॥ | ११. | परमधाम को |

श्लोकार्थ—राग और द्वेष से रहित तथा सब जगह समान भाव रखने वाले कर्दम जी भगवान् की अनन्य भक्ति से युक्त होकर भगवान् के परमधाम को प्राप्त हो गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये
चतुर्विंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२४॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

पंचविंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

**कपिलस्तत्त्वसंख्याता भगवानात्ममायया ।**
**जातः स्वयमजः साक्षादात्मप्रज्ञप्तये नृणाम् ॥१॥**

पदच्छेद—

कपिलः तत्त्व संख्याता भगवान् आत्म मायया ।
जातः स्वयम् अजः साक्षात् आत्म प्रज्ञप्तये नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कपिलः | ४. | कपिल | जातः | १३. | उत्पन्न हुये |
| तत्त्व | १. | पच्चीस तत्त्वों के | स्वयम् | ५. | स्वयं |
| संख्याता | २. | उपदेशक | अजः | ६. | अजन्मा होकर भी |
| भगवान् | ३. | भगवान् | साक्षात् | १२. | साक्षात् |
| आत्म | १०. | अपनी | आत्म | ८. | आत्म-ज्ञान का |
| मायया । | ११. | योग माया से | प्रज्ञप्तये | ९. | उपदेश करने के लिये |
| | | | नृणाम् ॥ | ७. | मनुष्यों को |

श्लोकार्थ—पच्चीस तत्त्वों के उपदेशक भगवान् कपिल स्वयं अजन्मा होकर भी मनुष्यों को आत्म-ज्ञान का उपदेश करने के लिये अपनी योग माया से साक्षात् उत्पन्न हुये ॥

## द्वितीयः श्लोकः

**न ह्यस्य वर्ष्मणः पुंसां वरिम्णः सर्वयोगिनाम् ।**
**विश्रुतौ श्रुतदेवस्य भूरि तृप्यन्ति मेऽसवः ॥२॥**

पदच्छेद—

न हि अस्य वर्ष्मणः पुंसाम् वरिम्णः सर्वयोगिनाम् ।
विश्रुतौ श्रुत देवस्य भूरि तृप्यन्ति मे असवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १३. | नहीं | विश्रुतौ | ९. | कीर्ति सुनते-सुनते |
| हि | १. | यद्यपि (मैंने) | श्रुत | ३. | कीर्ति सुनी है (फिर भी) |
| अस्य | ८. | इन भगवान् कपिल की | देवस्य | २. | भगवान् की |
| वर्ष्मणः | ७. | श्रेष्ठ | भूरि | १२. | बहुत |
| पुंसाम् | ६. | पुरुषों में | तृप्यन्ति | १४. | तृप्त हो रही है |
| वरिम्णः | ५. | वरिष्ठ (और) | मे | १०. | मेरी |
| सर्वयोगिनाम् । | ४. | सभी योगियों में | असवः ॥ | ११. | इन्द्रियाँ |

श्लोकार्थ—यद्यपि मैंने भगवान् की कीर्ति सुनी है । फिर भी सभी योगियों में वरिष्ठ और पुरुषों में श्रेष्ठ इन भगवान कपिल की कीर्त्ति सुनते-सुनते मेरी इन्द्रियाँ बहुत तृप्त नहीं हो रही हैं ॥

## तृतीयः श्लोकः

**यद्यद्विधत्ते भगवान् स्वच्छन्दात्माऽऽत्ममायया ।**
**तानि मे श्रद्दधानस्य कीर्तन्यान्यनुकीर्तय ॥३॥**

पदच्छेद—

यद्-यद् विधत्ते भगवान् स्वच्छन्द आत्मा आत्म मायया ।
तानि मे श्रद्दधानस्य कीर्तन्यानि अनुकीर्तय ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद्-यद् | ६. | जो-जो लीलायें | मायया । | ५. | योग माया से |
| विधत्ते | ७. | करते हैं (वे) | तानि | १०. | उन्हें |
| भगवान् | ३. | भगवान् | मे | ११. | मुझे |
| स्वच्छन्द | १. | स्वतन्त्र | श्रद्दधानस्य | ९. | उन पर मेरी श्रद्धा है (तथा) |
| आत्मा | २. | स्वरूप वाले | कीर्तन्यानि | ८. | कीर्तन करने योग्य है |
| आत्म | ४. | अपनी | अनुकीर्तय ॥ | १२. | सुनावें |

श्लोकार्थ—स्वतन्त्र स्वरूप वाले भगवान् अपनी योग माया से जो-जो लीलायें करते हैं । वे कीर्तन करने योग्य हैं । उन पर मेरी श्रद्धा है । तथा उन्हें मुझे सुनावें ॥

## चतुर्थः श्लोकः

सूतउवाच—

**द्वैपायनसखस्त्वेवं मैत्रेयो भगवांस्तथा ।**
**प्राहेदं विदुरं प्रीत आन्वीक्षिक्यां प्रचोदितः ॥४॥**

पदच्छेद—

द्वैपायन सखः तु एवम् मैत्रेयः भगवान् तथा ।
प्राह इदम् विदुरम् प्रीतः आन्वीक्षिक्याम् प्रचोदितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्वैपायन | ५. | वेद व्यास के | प्राह | १२. | कहा |
| सखः | ६. | मित्र | इदम् | ११. | इस प्रकार |
| तु | २. | ही | विदुरम् | १०. | विदुर जी से |
| एवम् | १. | (आपके) समान | प्रीतः | ९. | प्रसन्न होकर |
| मैत्रेयः | ८. | मैत्रेय जी ने | आन्वीक्षिक्याम् | ३. | आत्म ज्ञान के विषय में |
| भगवान् तथा । | ७. | भगवान | प्रचोदितः ॥ | ४. | प्रश्न पूछने पर |

श्लोकार्थ—आपके समान ही आत्म ज्ञान के विषय में प्रश्न पूछने पर वेद व्यास के मित्र भगवान् मैत्रेय जी ने प्रसन्न होकर विदुर जी से इस प्रकार कहा ॥

## पञ्चमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— पितरि प्रस्थितेऽरण्यं मातुः प्रियचिकीर्षया ।
तस्मिन् बिन्दुसरेऽवात्सीद्भगवान् कपिलः किल ॥५॥

पदच्छेद—

पितरि प्रस्थिते अरण्यम् मातुः प्रिय चिकीर्षया ।
तस्मिन् विन्दुसरे अवात्सीत् भगवान् कपिलः किल ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पितरि | १. | पिता के | तस्मिन् | ९. | उस |
| प्रस्थिते | ३. | चले जाने पर | विन्दुसरे | १०. | विन्दुसर तीर्थ में |
| अरण्यम् | २. | वन | अवात्सीत् | ११. | निवास किया |
| मातुः | ६. | माता के | भगवान् | ४. | भगवान् |
| प्रिय | ७. | हित | कपिलः | ५. | कपिल ने |
| चिकीर्षया । | ८. | साधन की इच्छा से | किल ॥ | १२. | यह प्रसिद्ध है |

श्लोकार्थ—पिता के वन चले जाने पर भगवान् कपिल ने माता के हित साधन की इच्छा से उस विन्दुसर तीर्थ में निवास किया । यह प्रसिद्ध है ॥

## षष्ठः श्लोकः

तमासीनमकर्माणं तत्त्वग्रामाग्रदर्शनम् ।
स्वसुतं देवहूत्याह धातुः संस्मरती वचः ॥६॥

पदच्छेद—

तम् आसीनम् अकर्माणम् तत्त्वग्राम अग्रदर्शनम् ।
स्वसुतम् देवहूती आह धातुः संस्मरती वचः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ४. | वे भगवान् कपिल जी | स्वसुतम् | १०. | अपने पुत्र से |
| आसीनम् | ५. | आसन पर बैठे थे | देवहूती | ९. | माता देवहूति |
| अकर्माणम् | ३. | कर्मों से विरत | आह | ११. | बोली |
| तत्त्वग्राम | १. | पच्चीस तत्त्व समूह के | धातुः | ६. | (उस समय) ब्रह्मा जी के |
| अग्रदर्शनम् । | २. | पारदर्शी (तथा) | संस्मरती | ८. | स्मरण करती हुई |
| | | | वचः ॥ | ७. | वचन का |

श्लोकार्थ—पच्चीस तत्त्व समूह के पारदर्शी तथा कर्मों से विरत वे भगवान् कपिल जी आसन पर बैठे थे । उस समय ब्रह्मा जी के वचन का स्मरण करती हुई माता देवहूति अपने पुत्र से बोलीं ॥

# सप्तमः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—निर्विण्णा नितरां भूमन्नसदिन्द्रियतर्षणात् ।
येन सम्भाव्यमानेन प्रपन्नान्धं तमः प्रभो ॥७॥

पदच्छेद—

निर्विण्णा नितराम् भूमन् असद् इन्द्रिय तर्षणात् ।
येन सम्भाव्यमानेन प्रपन्ना अन्धम् तमः प्रभो! ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्विण्णा | ७. | दुःखी हूँ | येन | ८. | जिन इन्द्रियों की |
| नितराम् | ६. | बहुत | सम्भाव्यमानेन | ९. | इच्छा पूरी करने से ही |
| भूमन् | १. | हे भूमन् ! | प्रपन्ना | १२. | प्राप्त हुई हूँ |
| असद् | ३. | दुष्ट | अन्धम् | ११. | अज्ञानान्धकार को |
| इन्द्रिय | ४. | इन्द्रियों की | तमः | १०. | घोर |
| तर्षणात् । | ५. | विषय लालसा से (मैं) | प्रभो! ॥ | २. | हे भगवन् |

श्लोकार्थ—हे भूमन् ! हे भगवन् ! दुष्ट इन्द्रियों की विषय लालसा से मैं बहुत दुःखी हूँ । जिन इन्द्रियों की इच्छा पूरी करने से ही घोर अज्ञानान्धकार को प्राप्त हुई हूँ ॥

# अष्टमः श्लोकः

तस्य त्वं तमसोऽन्धस्य दुष्पारस्याद्य पारगम् ।
सच्चक्षुर्जन्मनामन्ते लब्धं मे त्वदनुग्रहात् ॥८॥

पदच्छेद—

तस्य त्वम् तमसः अन्धस्य दुष्पारस्य अद्य पारगम् ।
सत् चक्षुः जन्मनाम् अन्ते लब्धम् मे त्वद् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ६. | (क्योंकि) उस | सत् चक्षुः | ११. | श्रेष्ठ नेत्र के समान |
| त्वम् | १२. | आप | जन्मनाम् | ४. | जन्म परम्परा का |
| तमसः | ८. | अज्ञान रूप | अन्ते | ५. | अन्त (है) |
| अन्धस्य | ९. | अन्धकार से | लब्धम् | १४. | प्राप्त हुये हैं |
| दुष्पारस्य | ७. | अपार | मे | १३. | मुझे |
| अद्य | १. | अब | त्वद् | २. | आपकी |
| पारगम् । | १०. | पार कराने वाले | अनुग्रहात् ॥ | ३. | कृपा से (मेरी) |

श्लोकार्थ—अब आपकी कृपा से मेरी जन्म परम्परा का अन्त है । क्योंकि उस अपार अज्ञान रूप अन्धकार से पार कराने वाले श्रेष्ठ नेत्र के समान आप मुझे प्राप्त हुये हैं ॥

## नवमः श्लोकः

**य आद्यो भगवान् पुंसामीश्वरो वै भवान् किल।**
**लोकस्य तमसान्धस्य चक्षुः सूर्य इवोदितः ॥९॥**

पदच्छेद—

य: आद्यः भगवान् पुंसाम् ईश्वरः वै भवान् किल।
लोकस्य तमसा अन्धस्य चक्षुः सूर्यः इव उदितः॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ३. | जो | लोकस्य | १०. | लोगों के लिये |
| आद्यः | ५. | आदि पुरुष हैं | तमसा | ८. | अज्ञानान्धकार से |
| भगवान् | ४. | भगवान् | अन्धस्य | ९. | अन्धे |
| पुंसाम् | १. | सभी जीवों के | चक्षुः | ११. | नेत्र वाले |
| ईश्वरः | २. | स्वामी | सूर्यः | १२. | सूर्य के |
| वै | ६. | वह | इव | १३. | समान |
| भवान् किल। | ७. | आप ही | उदितः॥ | १४. | उत्पन्न हुये हैं |

श्लोकार्थ—सभी जीवों के स्वामी जो भगवान् आदि पुरुष हैं। वह आप ही अज्ञानान्धकार से अन्धे लोगों के लिये नेत्र वाले सूर्य के समान उत्पन्न हुये हैं॥

## दशमः श्लोकः

**अथ मे देव सम्मोहमपाक्रष्टुं त्वमर्हसि।**
**योऽवग्रहोऽहंममेतीत्येतस्मिन् योजितस्त्वया ॥१०॥**

पदच्छेद—

अथ मे देव सम्मोहम् अपाक्रष्टुम् त्वम् अर्हसि।
यः अवग्रहः अहम् मम इति एतस्मिन् योजितः त्वया॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | ११. | अब | अवग्रहः | ८. | दुराग्रह है (वह) |
| मे | १३. | मेरे | अहम् | ३. | मैं (और) |
| देव | १. | हे देव! | मम | ४. | मेरा |
| सम्मोहम् | १४. | इस महामोह को | इति | ५. | इस प्रकार का |
| अपाक्रष्टुम् | १५. | दूर | इति | ७. | यह |
| त्वम् | १२. | आप | एतस्मिन् | २. | इस देह-गेह में |
| अर्हसि। | १६. | कीजिये | योजितः | १०. | कराया गया है |
| यः | ६. | जो | त्वया॥ | ९. | आप ही के द्वारा |

श्लोकार्थ—हे देव! इस देह-गेह में मैं और मेरा इस प्रकार का जो यह दुराग्रह है। वह आप ही के द्वारा कराया गया है। अब आप मेरे इस महा मोह को दूर कीजिये॥

# एकादशः श्लोकः

**तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम् ।**
**जिज्ञासयाहं प्रकृतेः पूरुषस्य नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम् ॥११॥**

पदच्छेद— तम्, त्वा गता अहम् शरणम् शरण्यम् स्वभृत्य संसारतरोः कुठारम् ।
जिज्ञासया अहम् प्रकृतेः पूरुषस्य नमामि सद्धर्म विदाम् वरिष्ठम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम्, त्वा | ३. | उन आपकी | जिज्ञासया | १३. | जानने की इच्छा से |
| गता | ५. | आई हूँ (आप) | अहम् | १०. | मैं |
| अहम् | १. | मैं | प्रकृतेः | ११. | प्रकृति (और) |
| शरणम् | ४. | शरण में | पूरुषस्य | १२. | पुरुष के स्वरूप को |
| शरण्यम् | २. | शरणागत वत्सल | नमामि | १७. | प्रणाम करती हूँ |
| स्वभृत्य | ६. | अपने भक्तों के | सद्धर्म | १४. | भागवत् धर्म के |
| संसारतरोः | ७. | संसार रूपी वृक्ष के लिये | विदाम् | १५. | ज्ञानियों में |
| कुठारम् । | ८. | कुठार के समान हैं | वरिष्ठम् ॥ | १६. | सर्व श्रेष्ठ (आपको) |

श्लोकार्थ—मैं शरणागत वत्सल उन आपकी शरण में आई हूँ । आप अपने भक्तों के संसार रूपी वृक्ष के लिये कुठार के समान हैं । मैं प्रकृति और पुरुष के स्वरूप को जानने की इच्छा से भागवत धर्म के ज्ञानियों में सर्व श्रेष्ठ आपको प्रणाम करती हूँ ॥

# द्वादशः श्लोकः

**मैत्रेय उवाच—इति स्वमातुर्निरवद्यमीप्सितं निशम्य पुंसामपवर्गवर्धनम् ।**
**धियाभिनन्द्यात्मवतां सतां गतिर्बभाष ईषत्स्मितशोभिताननः ॥१२॥**

पदच्छेद—इति अभिनन्द्य स्वमातुः निरवद्यम् ईप्सितम् निशम्य पुंसाम् अपवर्ग वर्धनम् ।
धिया अभिनन्द्य आत्मवताम् सताम् गतिः बभाषे ईषत् स्मित शोभित आननः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | अभिनन्द्य | १०. | स्वागत करके |
| स्वमातुः | २. | अपनी माता देवहूति की | आत्मवताम् | ११. | आत्म ज्ञानी |
| निरवद्यम् | ३. | परम् पवित्र (एवम्) | सताम् | १२. | संतों के |
| ईप्सितम् | ७. | इच्छा को | गतिः | १३. | आराध्य (भगवान् कपिल) |
| निशम्य | ८. | सुनकर (तथा) | बभाषे | १८. | बोले |
| पुंसाम् | ४. | मनुष्यों को | ईषत् | १४. | मन्द |
| अपवर्ग | ५. | मोक्ष | स्मित | १५. | मुसकान से |
| वर्धनम् । | ६. | देने वाली | शोभित | १६. | सुशोभित |
| धिया | ९. | (उसका) हृदय से | आननः ॥ | १७. | मुख से |

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपनी माता देवहूती की परम पवित्र एवम् मनुष्यों को मोक्ष देने वाली इच्छा को सुनकर तथा उसका हृदय से स्वागत करके आत्म ज्ञानी संतों के आराध्य भगवान् कपिल मन्द मुसकान से सुशोभित मुख से बोले ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—योग आध्यात्मिकः पुंसां मतो निःश्रेयसाय मे ।
अत्यन्तोपरतिर्यत्र दुःखस्य च सुखस्य च ॥१३॥

पदच्छेद—

योगः आध्यात्मिकः पुंसाम् मतः निःश्रेयसाय मे ।
अत्यन्त उपरतिः यत्र दुःखस्य च सुखस्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| योगः | ४. | योग | अत्यन्त | ११. | सदा-सदा के लिये |
| आध्यात्मिकः | ३. | आध्यात्म | उपरतिः | १२. | अभाव हो जाता है |
| पुंसाम् | १. | मनुष्यों के | यत्र | ७. | जिसमें |
| मतः | ६. | मान्य है | दुःखस्य | १०. | दुःख का |
| निःश्रेयसाय | २. | परम कल्याण के लिये | च | ९ | और |
| मे। | ५. | मुझे | सुखस्य च ॥ | ८. | सुख का |

श्लोकार्थ—मनुष्यों के परम कल्याण के लिये आध्यात्म योग मुझे मान्य है। जिसमें सुख का और दुःख का सदा-सदा के लिये अभाव हो जाता है ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

तमिमं ते प्रवक्ष्यामि यमवोचं पुरानघे ।
ऋषीणां श्रोतुकामानां योगं सर्वाङ्गनैपुणम् ॥१४॥

पदच्छेद—

तम् इमम् ते प्रवक्ष्यामि यम् अवोचम् पुरा अनघे ।
ऋषीणाम् श्रोतुकामानाम् योगम् सर्वाङ्ग नैपुणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ११. | उसे | अनघे। | १. | हे साध्वी ! |
| इमम् | १०. | अब | ऋषीणाम् | ७. | नारदादि ऋषियों से |
| ते | १२. | तुमसे | श्रोतुकामानाम् | ८. | (उनकी) सुनने की इच्छा होने पर |
| प्रवक्ष्यामि | १३. | कहूँगा | योगम् | ५. | योग को (मैंने) |
| यम् | ४. | जिस | सर्वाङ्ग | २. | सभी अंगों से |
| अवोचम् | ९. | कहा था | नैपुणम् ॥ | ३. | सम्पन्न |
| पुरा | ६. | पहले | | | |

श्लोकार्थ—हे साध्वी ! सभी अङ्गों से सम्पन्न जिस योग को मैंने पहले नारदादि ऋषियों से उनका सुनने की इच्छा होने पर कहा था। अब उसे तुमसे कहूँगा ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**चेतः खल्वस्य बन्धाय मुक्तये चात्मनो मतम् ।**
**गुणेषु सक्तं बन्धाय रतं वा पुंसि मुक्तये ॥१५॥**

पदच्छेद—

चेतः खलु अस्य बन्धाय मुक्तये च आत्मनः मतम् ।
गुणेषु सक्तम् बन्धाय रतम् वा पुंसि मुक्तये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चेतः | ३. | मन | गुणेषु | ९. | विषयों में |
| खलु | ४. | ही | सक्तम् | १०. | आसक्ति से |
| अस्य | १. | इस | बन्धाय | ११. | बन्धन होता है |
| बन्धाय | ५. | बन्धन | रतम् | १४. | अनुराग करने से |
| मुक्तये | ७. | मुक्ति का कारण | वा | १२. | तथा |
| च | ६. | और | पुंसि | १३. | परमात्मा में |
| आत्मनः | २. | जीव का | मुक्तये ॥ | १५. | मुक्ति मिलती है |
| मतम् । | ८. | माना गया है | | | |

श्लोकार्थ—इस जीव का मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण माना गया है। विषयों में आसक्ति से बन्धन होता है। तथा परमात्मा में अनुराग करने से मुक्ति मिलती है।

## षोडशः श्लोकः

**अहंममाभिमानोत्थैः कामलोभादिभिर्मलैः ।**
**वीतं यदा मनः शुद्धमदुःखमसुखं समम् ॥१६॥**

पदच्छेद—

अहम् मम अभिमान उत्थैः कामलोभ आदिभिः मलैः ।
वीतम् यदा मनः शुद्धम् अदुःखम् असुखम् समम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम् | ३. | मैं (और) | वीतम् | १०. | रहित होकर |
| मम | ४. | मेरे पन के | यदा | १. | जब |
| अभिमान | ५. | घमंड से | मनः | २. | मन |
| उत्थैः | ६. | उत्पन्न | शुद्धम् | ११. | शुद्ध हो जाता है (तब वह) |
| कामलोभ | ७. | काम-लोभ | अदुःखम् | १२. | दुःख और |
| आदिभिः | ८. | इत्यादि | असुखम् | १३. | सुख से रहित होकर |
| मलैः । | ९. | विकारों से | समम् ॥ | १४. | समता में स्थित हो जाता है ॥ |

श्लोकार्थ—जब मन मैं और मेरे पन के घमंड से उत्पन्न काम-लोभ इत्यादि विकारों से रहित होकर शुद्ध हो जाता है। तब वह दुःख और सुख से रहित होकर समता में स्थित हो जाता है ॥

## सप्तदशः श्लोकः

तदा पुरुष आत्मानं केवलं प्रकृतेः परम् ।
निरन्तरं स्वयंज्योतिरणिमानमखण्डितम् ॥१७॥

पदच्छेद—

तदा पुरुषः आत्मानम् केवलम् प्रकृतेः परम् ।
निरन्तरम् स्वयम् ज्योतिः अणिमानम् अखण्डितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तदा | १. | तब | निरन्तरम् | ५. | भेद रहित |
| पुरुषः | २. | जीव | स्वयम् | ६. | स्वयं |
| आत्मानम् | ११. | परमात्मा को (देखता है) | ज्योतिः | ७. | प्रकाश |
| केवलम् | १०. | एक मात्र | अणिमानम् | ८. | अतिसूक्ष्म (और) |
| प्रकृतेः | ३. | प्रकृति से | अखण्डितम् ॥ | ९. | अखण्ड |
| परम् । | ४. | परे | | | |

श्लोकार्थ—तब जीव प्रकृति से परे भेद रहित स्वयं प्रकाश अति सूक्ष्म और अखण्ड एक मात्र परमात्मा को देखता है ॥

## अष्टादशः श्लोकः

ज्ञानवैराग्ययुक्तेन भक्तियुक्तेन चात्मना ।
परिपश्यत्युदासीनं प्रकृतिं च हतौजसम् ॥१८॥

पदच्छेद—

ज्ञान वैराग्य युक्तेन भक्ति युक्तेन च आत्मना ।
परिपश्यति उदासीनम् प्रकृतिम् च हत ओजसम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञान | १. | (उस समय वह) ज्ञान (और) | परिपश्यति | १३. | देखता है |
| वैराग्य | २. | वैराग्य से | उदासीनम् | ८. | उदासीन |
| युक्तेन | ३. | युक्त | प्रकृतिम् | १०. | प्रकृति को |
| भक्ति | ५. | भक्ति से | च | ९. | और। |
| युक्तेन | ६. | सम्पन्न | हत | १२. | हीन |
| च | ४. | और | ओजसम् ॥ | ११. | शक्ति |
| आत्मना । | ७. | हृदय से (परमात्मा को) | | | |

श्लोकार्थ—उस समय वह ज्ञान और वैराग्य से युक्त और भक्ति से सम्पन्न हृदय से परमात्मा को उदासीन और प्रकृति को शक्ति से हीन देखता है ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

**न युज्यमानया भक्त्या भगवत्यखिलात्मनि ।**
**सदृशोऽस्ति शिवः पन्था योगिनां ब्रह्मसिद्धये ॥१६॥**

पदच्छेद—

न युज्यमानया भक्त्या भगवति अखिल आत्मनि ।
सदृशः अस्ति शिवः पन्था योगिनाम् ब्रह्मसिद्धये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ११. | नहीं | सदृशः | ८. | समान |
| युज्यमानया | ६. | लगाई गई | अस्ति | १२. | है |
| भक्त्या | ७. | अनन्य भक्ति के | शिवः | ९. | कल्याणकारी |
| भगवति | ५. | भगवान् में | पन्थाः | १०. | कोई दूसरा मार्ग |
| अखिल | ३. | सब की | योगिनाम् | १. | योगियों को |
| आत्मनि । | ४. | आत्मा | ब्रह्मसिद्धये ॥ | २. | ब्रह्म की प्राप्ति के लिये |

श्लोकार्थ—योगियों को ब्रह्म की प्राप्ति के लिये सबकी आत्मा भगवान् में लगाई गई अनन्य भक्ति के समान कल्याणकारी कोई दूसरा मार्ग नहीं है ॥

## विंशः श्लोकः

**प्रसङ्गमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः ।**
**स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम् ॥२०॥**

पदच्छेद—

प्रसङ्गम् अजरम् पाशम् आत्मनः कवयः विदुः ।
सः एव साधुषु कृतः मोक्षद्वारम् अपा वृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रसङ्गम् | २. | आसक्ति को | सः एव | ७. | वही आसक्ति (जब) |
| अजरम् | ४. | अच्छेद्य | साधुषु | ८. | महात्माओं के प्रति |
| पाशम् | ५. | बन्धन | कृतः | ९. | की जाती है (तब वह) |
| आत्मनः | ३. | आत्मा का | मोक्ष | १०. | मोक्ष का |
| कवयः | १. | ज्ञानी जन | द्वारम् | १२. | द्वार बन जाती है |
| विदुः । | ६. | मानते हैं | अपावृतम् ॥ | ११. | खुला |

श्लोकार्थ—ज्ञानी जन आसक्ति को आत्मा का अच्छेद्य बन्धन मानते हैं। वही आसक्ति जब महात्माओं के प्रति की जाती है तब वह मोक्ष का खुला द्वार बन जाती है ।

## एकविंशः श्लोकः

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्वदेहिनाम् ।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः ॥२१॥

पदच्छेद—

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्वदेहिनाम् ।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तितिक्षवः | ५. | सहनशील (एवं) | अजात | ७. | न हुआ हो |
| कारुणिकाः | ४. | दयालु | शत्रवः | ६. | (जिनके कभी कोई) शत्रु |
| सुहृदः | ३. | अकारण हितैषी | शान्ताः | ८. | शान्त (और) |
| सर्व | १. | जो सभी | साधवः | १०. | संत पुरुष हैं (उन्हें कष्ट नहीं होता है) |
| देहिनाम् । | २. | देह धारियों के | साधुभूषणा ॥ | ९. | सज्जनों का सम्मान करने वाले |

श्लोकार्थ—जो सभी देह धारियों के अकारण हितैषी, दयालु, सहनशील एवं जिनके कोई शत्रु न हुआ हो, शान्त और सज्जनों का सम्मान करने वाले संत पुरुष हैं, उन्हें कष्ट नहीं होता है ।

## द्वाविंशः श्लोकः

मय्यनन्येन भावेन भक्तिं कुर्वन्ति ये दृढाम् ।
मत्कृते त्यक्तकर्माणस्त्यक्तस्वजनबान्धवाः ॥२२॥

पदच्छेद—

मयि अनन्येन भावेन भक्तिम् कुर्वन्ति ये दृढाम् ।
मत्कृते त्यक्तकर्माणः त्यक्तस्वजनबान्धवाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मयि | २. | मुझसे, | मत्कृते | ७. | मेरे लिये |
| अनन्येनभावेन | ३. | अनन्य भाव से | त्यक्त | ९. | त्याग करते हैं (तथा) |
| भक्तिम् | ५. | प्रेम | कर्माणः | ८. | सभी कर्मों का |
| कुर्वन्ति | ६. | करते हैं | त्यक्त | १२. | त्याग देते हैं (वे लोग कष्ट नहीं पाते हैं) |
| ये | १. | जो लोग | स्वजन | १०. | सगे |
| दृढाम् । | ४. | सुदृढ | बान्धवाः ॥ | ११. | सम्बन्धियों को (भी) |

श्लोकार्थ—जो लोग मुझसे अनन्य भाव से सुदृढ़ प्रेम करते हैं; मेरे लिये सभी कर्मों का त्याग करते हैं; और सगे सम्बन्धियों को भी त्याग देते हैं । वे लोग कष्ट नहीं पाते हैं ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

मदाश्रयाः कथा मृष्टाः शृण्वन्ति कथयन्ति च ।
तपन्ति विविधास्तापा नैतान्मद्गतचेतसः ॥२३॥

पदच्छेद—

मद् आश्रयाः कथाः मृष्टाः शृण्वन्ति कथयन्ति च ।
तपन्ति विविधाः तापाः न एतान् मद् गत चेतसः ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मद् | १. | जो लोग मुझसे | तपन्ति | १४. | दुःख पहुँचाते हैं |
| आश्रयाः | २. | सम्बन्धित | विविधाः | १२. | अनेक प्रकार के |
| कथाः | ४. | कथायें | तापाः न | १३. | सांसारिक कष्ट नहीं |
| मृष्टाः | ३. | मधुर | एतान् | ११. | उन्हें |
| शृण्वन्ति | ५. | सुनते हैं | मद् | ८. | (जिन्होंने) मुझमें |
| कथयन्ति | ७. | कहते हैं | गत | १०. | लगा दिया है |
| च । | ६. | और | चेतसः ॥ | ९. | मन |

श्लोकार्थ—जो लोग मुझसे सम्बन्धित मधुर कथायें सुनते हैं, और कहते हैं; जिन्होंने मुझमें मन लगा दिया है । उन्हें अनेक प्रकार के सांसारिक कष्ट दुःख नहीं पहुँचाते हैं ।।

## चतुर्विंशः श्लोकः

त एते साधवः साध्वि सर्वसङ्गविवर्जिताः ।
सङ्गस्तेष्वथ ते प्रार्थ्यः सङ्गदोषहरा हि ते ॥२४॥

पदच्छेद—

ते एते साधवः साध्वि सर्व सङ्ग विवर्जिताः ।
सङ्गः तेषु अथ ते प्रार्थ्यः सङ्ग दोषहरा हि ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ते | ३. | वे | सङ्ग | १०. | सत्संग |
| एते | २. | इस प्रकार के | तेषु | ९. | उन्हीं के साथ |
| साधवः | ४. | सत्पुरुष | अथ, ते | ८. | अब, तुम्हें |
| साध्वि | १. | हे मातः । | प्रार्थ्यः | ११. | करना चाहिये |
| सर्व | ५. | सभी प्रकार की | सङ्ग दोष | १३. | आसक्ति के दोष को |
| सङ्ग | ६. | आसक्तियों से | हराः | १४. | दूर कर देते हैं |
| विवर्जिताः । | ७. | रहित होते हैं | हि, ते | १२. | क्योंकि, वे लोग |

श्लोकार्थ—हे मातः । इस प्रकार के वे सत्पुरुष सभी प्रकार की आसक्तियों से रहित होते हैं । अब तुम्हें उन्हीं के साथ सत्संग करना चाहिये । क्योंकि वे लोग आसक्ति को दोष को दूर कर देते हैं ।।

## पञ्चविंशः श्लोकः

**सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।**
**तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ॥२५॥**

पदच्छेद— सताम् प्रङ्गात् मम वीर्य संविदः भवन्ति हृत्कर्ण रसायनाः कथाः।
तद् जोषणात् आशु अपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिः भक्तिः अनुक्रमिष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सताम् | १. | महात्माओं के | तद् | ९. | उनमें |
| प्रसङ्गात् | २. | सत्संग से | जोषणात् | १०. | प्रेम होने से |
| मम वीर्य- | ३. | मेरे पराक्रम का | आशु | १५. | शीघ्र |
| संविदः | ४. | ज्ञान कराने वाली (तथा) | अपवर्ग | ११. | मोक्ष के |
| भवन्ति | ८. | होती हैं | वर्त्मनि | १२. | मार्ग में |
| हृत्कर्ण | ५. | हृदय और कानों को | श्रद्धा, रतिः | १३. | श्रद्धा प्रेम (और) |
| रसायनाः | ६. | सुन्दर लगने वाली | भक्तिः | १४. | भक्ति का |
| कथाः। | ७. | कथायें | अनुक्रमिष्यति ॥ | १६. | विकास होता है |

श्लोकार्थ—महात्माओं के सत्संग से मेरे पराक्रम का ज्ञान कराने वाली तथा हृदय और कानों को सुन्दर लगने वाली कथायें होती हैं। उनमें प्रेम होने से मोक्ष के मार्ग में श्रद्धा, प्रेम और भक्ति का शीघ्र विकास होता है॥

## षड्विंशः श्लोकः

**भक्त्या पुमाञ्जातविराग ऐन्द्रियाद् दृष्टश्रुतान्मद्रचनानुचिन्तया।**
**चित्तस्य यत्तो ग्रहणे योगयुक्तो यतिष्यते ऋजुभिर्योगमार्गैः ॥२६॥**

पदच्छेद—भक्त्या पुमान् जातविरागः ऐन्द्रियात्, दृष्टश्रुतात् मद् रचना अनुचिन्तया ॥
चित्तस्य यत्तः ग्रहणे योगयुक्तः यतिष्यते, ऋजुभिः योग मार्गैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भक्त्या पुमान् | ३. | भक्ति से मनुष्य को | चित्तस्य | १४. | मन को |
| जात | ८. | हो जाता है (अतः वह) | यत्तः | १०. | सावधानी पूर्वक |
| विरागः | ७. | वैराग्य | ग्रहणे | १५. | एकाग्र करने का |
| ऐन्द्रियात् | ६. | सुखों से | योगयुक्तः | ९. | योग से युक्त होकर |
| दृष्ट | ४. | लौकिक (और) | यतिष्यते | १६. | प्रयास करने लगता है |
| श्रुतात् | ५. | पार लौकिक | ऋजुभिः | १२. | सरल |
| मद् रचना | १. | मेरी लीला के | योग | ११. | योग के |
| अनुचिन्तया। | २. | चिन्तन की | मार्गैः ॥ | १३. | उपायों से |

श्लोकार्थ— मेरी लीला के चिन्तन की भक्ति से मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक सुखों से वैराग्य हो जाता है। अतः वह योग से युक्त होकर सावधानी पूर्वक योग के सरल उपायों से मन को एकाग्र करने का प्रयास करने लगता है॥

## अष्टविंशः श्लोकः

**असेवयायं प्रकृतेर्गुणानां ज्ञानेन वैराग्यविजृम्भितेन ।**
**योगेन मय्यर्पितया च भक्त्या मां प्रत्यगात्मानमिहावरुन्धे ॥२७॥**

पदच्छेद—

**असेवया अयम् प्रकृतेः गुणानाम् ज्ञानेन वैराग्यविजृम्भितेन ।**
**योगेन मयि अर्पितया च भक्त्या माम् प्रत्यगात्मानम् इह अवरुन्धे ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| असेवया | ३. | त्याग करने से | योगेन | ७. | योग से |
| अयम् | ११. | यह पुरुष | मयि अर्पितया | ९. | मुझमें समर्पित की गईं |
| प्रकृतेः | १. | प्रकृति के | च | ८. | और |
| गुणानाम् | २. | गुणों से उत्पन्न विषयों का | भक्त्या | १०. | भक्ति से |
| ज्ञानेन | ६. | ज्ञान से | माम् प्रत्यगात्मानम् | १३. | मुझ अन्तरात्मा का |
| वैराग्य | ४. | वैराग्य से | इह | १२ | इस शरीर में ही |
| विजृम्भितेन । | ५. | परिपूर्ण | अवरुन्धे ॥ | १४. | दर्शन करता है |

श्लोकार्थ—प्रकृति के गुणों से उत्पन्न विषयों का त्याग करने से, वैराग्य से परिपूर्ण ज्ञान से योग से और मुझमें समर्पित की गई भक्ति से यह पुरुष इस शरीर में ही मुझ अन्तरात्मा का दर्शन करता है ॥

## विंशः श्लोकः

**देवहूतिरुवाच—काचित्त्वय्युचिता भक्तिः कीदृशी मम गोचरा ।**
**यया पदं ते निर्वाणमञ्जसान्वाश्नवा अहम् ॥२८॥**

पदच्छेद—

**काचित् त्वयि उचिता भक्तिः कीदृशी मम गोचरा ।**
**यया पदम् ते निर्वाणम् अञ्जसा अन्वाश्नवा अहम् ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| काचित् | २. | किस प्रकार की | यया | ८. | जिससे |
| त्वयि | १. | (हे भगवान्) आपकी | पदम् | १२. | धाम को |
| उचिता | ४. | उचित है (और) | ते | १०. | आपके |
| भक्तिः | ३. | भक्ति | निर्वाणम् | ११. | परम |
| कीदृशी | ५. | किस तरह की (भक्ति) | अञ्जसा | १३. | सरलता से |
| मम | ६. | मेरे | अन्वाश्नवा | १४. | प्राप्त कर सकूँ |
| गोचरा । | ७. | योग्य (है) | अहम् | ९. | मैं |

श्लोकार्थ— हे भगवन् ! किस प्रकार की भक्ति उचित है और किस तरह की भक्ति मेरे योग्य है। जिससे मैं आपके परम धाम को सरलता से प्राप्त कर सकूँ ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

यो योगो भगवद्बाणो निर्वाणात्मंस्त्वयोदितः ।
कीदृशः कति चाङ्गानि यतस्तत्त्वावबोधनम् ॥२९॥

पदच्छेद—

यः योगः भगवतः बाणः निर्वाण आत्मन् त्वया उदितः ।
कीदृशः कति च अङ्गानि यतः तत्त्व अवबोधनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ३. | जो | की दृशः | ११. | कैसा है |
| योगः | ४. | योग | कति | १३. | कितने |
| भगवतः | ५. | भगवान् की प्राप्ति का | च | १२. | और (उसके) |
| बाणः | ६. | अचूक साधन है (और) | अङ्गानि | १४. | अङ्ग हैं |
| निर्वाण | १. | (हे प्रभो ! आप) मोक्ष | यतः | ८. | जिससे |
| आत्मन् | २. | स्वरूप हैं | तत्त्व | ९. | आत्म स्वरूप का |
| त्वया उदितः । | ७. | (जिसे) आपने कहा है (तथा) | अवबोधनम् ॥ | १०. | ज्ञान होता है (वह) |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप मोक्ष स्वरूप हैं ! जो योग भगवान् की प्राप्ति का अचूक साधन है ; और जिसे आपने कहा है । तथा जिससे आत्म स्वरूप का ज्ञान होता है । वह कैसा है । और उसके कितने अङ्ग हैं ॥

## त्रिंशः श्लोकः

तदेतन्मे विजानीहि यथाहं मन्दधीर्हरे ।
सुखं बुद्ध्येय दुर्बोधं योषा भवदनुग्रहात् ॥३०॥

पदच्छेद—

तद् एतद् मे विजानीहि यथा अहम् मन्दधीः हरे ।
सुखम् बुद्ध्येय दुर्बोधम् योषा भवत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद्, एतद् | ३. | उसे, इस प्रकार | सुखम् | १२. | सहज में (ही) |
| मे | २. | मुझे | बुद्ध्येय | १३. | जान सकूँ |
| विजानीहि | ४. | बतावें | दुर्बोधम् | ११. | (उस) कठिन विषय को |
| यथा | ५. | जिससे | योषा | ८. | स्त्री जाति |
| अहम् | ६. | मैं | भवत् | ९. | आपकी |
| मन्दधीः | ७. | मूढबुद्धि (और) | अनुग्रहात् ॥ | १०. | कृपा से |
| हरे । | १. | हे प्रभो ! | | | |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! मुझे उसे इस प्रकार बतावें जिससे मैं मूढ बुद्धि और स्त्री जाति आपकी कृपा से उस कठिन विषय को सहज में ही जान सकूँ ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेयउवाच—

विदित्वार्थं कपिलो मातुरित्थं जातस्नेहो यत्र तन्वाभिजातः ।
तत्त्वाम्नायं यत्प्रवदन्ति सांख्यं प्रोवाच वै भक्तिवितानयोगम् ॥३१॥

पदच्छेद— विदित्वा अर्थम् कपिलः मातुः इत्थम् जात स्नेहः यत्रतन्वा अभिजातः ।
तत्त्व आम्नायम् यत् प्रवदन्ति सांख्यम् प्रोवाच वै भक्ति वितानयोगम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विदित्वा | ७. | जानकर | तत्त्व | १५. | तत्त्वों को |
| अर्थम् | ६. | इच्छा को | आम्नायम् | १६. | बताने वाला |
| कपिलः | १. | भगवान् कपिल | यत् | १४. | जिसे |
| मातुः | ४. | (उस) माता की | प्रवदन्ति | १८. | कहते हैं |
| इत्थम् | ५. | इस प्रकार की | सांख्यम् | १७. | सांख्य शास्त्र |
| जात | ९. | उत्पन्न हो गया | प्रोवाच | १३. | वर्णन किया |
| स्नेहः | ८. | (उनमें) प्रेम | वै | १०. | (अतः) उन्होंने |
| यत्रतन्वा | २. | जिसके शरीर से | भक्ति | ११. | भक्ति का |
| अभिजातः । | ३. | उत्पन्न हुये थे | वितानयोगम् ॥ | १२. | विस्तार करने वाले योग का |

श्लोकार्थ— भगवान कपिल जिसके शरीर से उत्पन्न हुये थे; उस माता की इस प्रकार की इच्छा को जानकर उनमें प्रेम उत्पन्न हो गया। अतः उन्होंने भक्ति का विस्तार करने वाले योग का वर्णन किया। जिसे तत्त्वों को बताने वाला सांख्य शास्त्र कहते हैं ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—देवानां गुणलिङ्गानामानुश्रविककर्मणाम् ।
सत्त्व एवैकमनसो वृत्तिः स्वाभाविकी तु या ॥३२॥

पदच्छेद—

देवानाम् गुण लिङ्गानाम् आनुश्रविकम् कर्मणाम् ।
सत्त्व एव एक मनसः वृत्तिः स्वाभाविकी तु या ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देवानाम् | ७. | इन्द्रियाँ | एक | १. | एक मात्र (भगवान् में) |
| गुण | ५. | विषयों का | मनसः | २. | मन लगाये हुये (लोगों की) |
| लिङ्गानम् | ६. | ज्ञान कराने वाली | वृत्तिः | १०. | लगी रहती है |
| आनुश्रविकम् | ३. | वैदिक | स्वाभाविकी | १२. | स्वाभाविक है |
| कर्मणाम् । | ४. | कर्मों में लगी हुई (तथा) | तु | ११. | वह |
| सत्त्व एव | ८. | सत्त्व मूर्ति श्री हरि में ही | या ॥ | ९. | जो |

श्लोकार्थ—एक मात्र भगवान् में मन लगाये हुये लोगों की वैदिक कर्मों में लगी हुई। तथा विषयों का ज्ञान कराने वाली इन्द्रियाँ सत्त्वमूर्ति श्री हरि में ही जो लगी रहती हैं। वह स्वाभाविक है ॥

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**अनिमित्ता भागवती भक्तिः सिद्धेर्गरीयसी ।**
**जरयत्याशु या कोशं निगीर्णमनलो यथा ॥३३॥**

पदच्छेद—

अनिमित्ता भागवती भक्तिः सिद्धेः गरीयसी ।
जरयति आशु या कोशम् निगीर्णम् अनलः यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अनिमित्ता | २. | अहैतुकी | आशु | ११. | तत्काल |
| भागवती | १. | (वह) भगवान् की | या | ९. | उसी प्रकार वह |
| भक्तिः | ३. | भक्ति है | कोशम् | १०. | सूक्ष्म शरीर को |
| सिद्धेः | ४. | जो मोक्ष से | निगीर्णम् | ८. | खाये हुये को (पचा देती है) |
| गरीयसी । | ५. | बढ़ कर है | अनलः | ७. | जठराग्नि |
| जरयति | १२. | भस्म कर देती है | यथा ॥ | ६. | जैसे |

श्लोकार्थ—वह भगवान् की अहैतुकी भक्ति है जो मोक्ष से बढ़कर है; जैसे जठराग्नि खाये हुये को पचा देती है उसी प्रकार वह सूक्ष्म शरीर को तत्काल भस्म कर देती है ॥

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**नैकात्मतां मे स्पृहयन्ति केचिन्मत्पादसेवाभिरता मदीहाः ।**
**येऽन्योन्यतो भागवताः प्रसज्य सभाजयन्ते मम पौरुषाणि ॥३४॥**

पदच्छेद—

न एक आत्मताम् मे स्पृहयन्ति केचित् मत् पाद्सेवा अभिरता मदीहाः ।
ये अन्योन्यतः भागवताः प्रसज्य सभाजयन्ते मम पौरुषाणि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १४. | नहीं | ये | १. | जो |
| एक आत्मताम् | १३. | सायुज्य मोक्ष की भी | अन्योन्यतः | ६. | आपस में |
| मे | १२. | मेरे | भागवताः | ५. | भक्त जन हैं (वे) |
| स्पृहयन्ति | १५. | इच्छा करते हैं | प्रसज्य | ७ | मिलकर |
| केचित् | ११. | (इस प्रकार के) कुछ भक्त जन | सभाजयन्ते | १०. | आदर के साथ चर्चा करते हैं |
| मत् पाद्सेवा | २. | मेरे, चरणों की सेवा में | मम | ८. | मेरे |
| अभिरता | ३. | प्रेम करने वाले (और) | पौरुषाणि ॥ | ९. | पराक्रमों की |
| मदीहाः । | ४. | मेरी इच्छा वाले | | | |

श्लोकार्थ—जो मेरे चरणों की सेवा में प्रेम करने वाले और मेरी इच्छा वाले भक्त जन हैं वे आपस में मिलकर मेरे पराक्रमों की आदर के साथ चर्चा करते हैं। इस प्रकार के कुछ भक्त जन मेरे सायुज्य मोक्ष की भी इच्छा नहीं करते हैं ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

**पश्यन्ति ते मे रुचिराण्यम्ब सन्तः प्रसन्नवक्त्रारुणलोचनानि ।**
**रूपाणि दिव्यानि वरप्रदानि साकं वाचं स्पृहणीयां वदन्ति ॥३५॥**

**पदच्छेद—** पश्यन्ति ते मे रुचिराणि अम्ब सन्तः प्रसन्न वक्त्र अरुण लोचनानि ।
रूपाणि दिव्यानि वरप्रदानि साकम् वाचम् स्पृहणीयाम् वदन्ति ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पश्यन्ति | १०. | झाँकी करते हैं (तथा) | रूपाणि | ९. | रूपों की |
| ते | ६. | वे | दिव्यानि | ८. | अलौकिक |
| मे रुचिराणि | ६. | मेरे सुन्दर | वर प्रदानि | ७. | वर दायक (और) |
| अम्ब | १. | हे मातः । | साकम् | ११. | उनके साथ |
| सन्तः | ३. | सन्तजन | वाचम् | १२. | सम्भाषण करते हैं |
| प्रसन्न वक्त्र | ४. | प्रसन्न, मुखारविन्द (और) | स्पृहणीयाम् | १३. | जिसकी योगिजन इच्छा |
| अरुण लोचनानि । | ५. | लाल आँखों से युक्त | वदन्ति ॥ | १४. | करते हैं |

**श्लोकार्थ—** हे मातः । वे सन्तजन प्रसन्न मुखारविन्द और लाल आँखों से युक्त मेरे सुन्दर वर दायक और अलौकिक रूपों की झाँकी करते हैं । तथा उनके साथ सम्भाषण करते हैं जिसकी योगिजन इच्छा करते हैं ।।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

**तैर्दर्शनीयावयवैरुदारविलासहासेक्षितवामसूक्तैः ।**
**हृतात्मनो हृतप्राणांश्च भक्तिरनिच्छतो मे गतिमण्वीं प्रयुङ्क्ते ॥३६॥**

**पदच्छेद—** तैः दर्शनीय अवयवैः उदार विलास हास ईक्षित वाम सूक्तैः ।
हृत आत्मनः हृत प्राणान् च भक्तिः अनिच्छतः मे गतिम् अण्वीम् प्रयुङ्क्ते ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तैः | ६. | उन रूपों से (जिनका) | हृत | ११. | तल्लीन हो गई हैं |
| दर्शनीय | १. | मनोहर | प्राणान् | १०. | इन्द्रियाँ |
| अवयवैः | २. | अङ्ग | च | ९. | और (उनमें) |
| उदार, विलास | ३. | उन्मुक्त, हाव-भाव | भक्तिः | १३. | भक्ति (उन भक्तों के) |
| हास ईक्षित | ४. | मुसकान भरी, चितवन (और) | अनिच्छतः | १४. | न चाहने पर भी |
| वाम, सूक्तैः । | ५. | सुन्दर वचनों से युक्त | मे | १२. | मेरी |
| हृत | ८. | चुरा लिया गया है | गतिम् | १६. | पद |
| आत्मनः | ७. | शरीर | अण्वीम् | १५. | उन्हें परम |
| | | | प्रयुङ्क्ते ॥ | १७. | प्रदान करती है |

**श्लोकार्थ—** मनोहर अङ्ग उन्मुक्त, हाव-भाव मुसकान भरी चितवन और सुन्दर वचनों से युक्त उन रूपों से जिनका शरीर चुरा लिया गया है । और उनमें इन्द्रियाँ तल्लीन हो गई हैं । मेरी भक्ति उन भक्तों के न चाहने पर भी उन्हें परम पद प्रदान करती है ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

अथो विभूतिं मम मायाविनस्तामैश्वर्यमष्टाङ्गमनुप्रवृत्तम् ।
श्रियं भागवतीं वा स्पृहयन्ति भद्रां परस्य मे तेऽश्नुवते तु लोके ॥३७॥

पदच्छेद—अथो विभूतिम् मम मायाविनः ताम् ऐश्वर्यम् अष्टाङ्गम् अनुप्रवृत्तम् ।
श्रियम् भागवतीम् वास्पृहयन्ति भद्राम् परस्य मे ते अश्नुवते तु लोके ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथो | १. | तदनन्तर | भागवतीम् | १०. | भगवदीय |
| विभूतिम् | ५. | भोग सम्पत्ति | वास्पृहयन्ति | १२. | इच्छा नहीं करते हैं |
| मम | २. | मुझ | भद्राम् | ९. | मंगलमय |
| मायाविनः | ३. | माया पति की | परस्य | १५. | परमात्मा के |
| ताम् | ४. | तीनों लोकों में प्रसिद्ध | मे | १४. | मुझ |
| ऐश्वर्यम् | ८. | ऐश्वर्य (अथवा) | ते | १७. | उन्हें (उसका) |
| अष्टाङ्गम् | ७. | आठ प्रकार के | अश्नुवते | १८. | भोग प्राप्त होता ही है |
| अनुप्रवृत्तम् । | ६. | स्वयं प्रकाश होने वाले | तु | १३. | किन्तु |
| श्रियम् | ११. | शोभा की (भी) | लोके ॥ | १६. | वैकुण्ठ लोक में |

श्लोकार्थ—तदनन्तर मुझ माया पति की तीनों लोकों में प्रसिद्ध भोग सम्पत्ति स्वयं प्रकाश होने वाले आठ प्रकार के ऐश्वर्य अथवा मंगलमय भगवदीय शोभा की भी इच्छा नहीं करते हैं । किन्तु मुझ परमात्मा के वैकुण्ठलोक में उन्हें उसका भोग प्राप्त होता ही है ।।

## अष्टत्रिंशः श्लोकः

न कर्हिचिन्मत्पराः शान्तरूपे नङ्क्ष्यन्ति नो मेऽनिमिषो लेढि हेतिः ।
येषामहं प्रिय आत्मा सुतश्च सखा गुरुः सुहृदो दैवमिष्टम् ॥३८॥

पदच्छेद— न कर्हिचित् मत्पराः शान्तरूपे नङ्क्ष्यन्ति नो मे अनिमिषः लेढि हेतिः ।
येषाम् प्रियः आत्मा सुतः च सखा गुरुः सुहृदः दैवम् इष्टम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ११. | नहीं | हेतिः । | ११. | चक्रभी (उन्हें) |
| कर्हिचित् | १२. | कभी भी | येषाम्, अहम् | १. | जिनका मैं |
| मत्पराः | ९. | मेरे आश्रय में रहने वाले वे भक्त | प्रियः | २. | प्रिय पात्र |
| शान्तरूपे | १०. | शान्त स्वरूप (वैकुण्ठ लोक में) | आत्मा, सुतः | ३. | शरीर, पुत्र |
| नङ्क्ष्यन्ति | १३. | नष्ट होते (और) | च | ६. | और |
| नो | १६. | नहीं | सखा, गुरु, | ४. | मित्र, गुरु |
| मे अनिमिषः | १४. | मेरा काल | सुहृदः | ५. | हितैषी |
| लेढि | १७. | ग्रस्ता है | दैवम् | ८. | देव हूँ |
| | | | इष्टम् ॥ | ७. | इष्ट |

श्लोकार्थ—जिनका मैं प्रिय पात्र शरीर, पुत्र, मित्र, गुरु, हितैषी और इष्ट देव हूँ । मेरे आश्रय में रहने वाले वे भक्त शान्त स्वरूप वैकुण्ठ लोक में कभी भी नष्ट नहीं होते हैं । और मेरा काल चक्र भी उन्हें नहीं ग्रस्ता है ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**इमं लोकं तथैवामुमात्मानमुभयायिनम् ।**
**आत्मानमनु ये चेह ये रायः पशवो गृहाः ॥३९॥**

पदच्छेद—

इमम् लोकम् तथैव अमुम् आत्मानम् उभयायिनम् ।
आत्मानम् अनु ये च इह ये रायः, पशवः गृहाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इमम् | १. | इस | आत्मानम् | ९. | अपने |
| लोकम् | २. | लोक को (और) | अनु | १०. | सम्बन्धी हैं |
| तथैव | ४. | उसी प्रकार | ये | ११. | और जो |
| अमुम् | ३. | परलोक को तथा | च | ७. | और |
| आत्मानम् | ६. | सूक्ष्म शरीर को | इह, ये | ८. | इस संसार में जो |
| उभयायिनम् । | ५ | दोनों लोकों में साथ रहने वाले | रायः, पशवः | १२. | धन, सम्पत्ति, पशु |
| गृहाः ॥ | १३. | घर (इत्यादि हैं उसे छोड़देना चाहिये) | | | |

श्लोकार्थ—इस लोक को और परलोक को तथा उसी प्रकार दोनों लोकों में साथ रहने वाले सूक्ष्म शरीर को और इस संसार में जो अपने सम्बन्धी हैं। और जो धन सम्पत्ति-पशु घर इत्यादि है उसे छोड़ देना चाहिये ॥

## चत्वारिंशः श्लोकः

**विसृज्य सर्वानन्यांश्च मामेवं विश्वतोमुखम् ।**
**भजन्त्यनन्यया भक्त्या तान्मृत्योरति पारये ॥४०॥**

पदच्छेद—

विसृज्य सर्वान् अन्यान् च माम् एवम् विश्वतोमुखम् ।
भजन्ति अनन्यया भक्त्या तान् मृत्योः अति पारये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विसृज्य | ४. | छोड़ कर | भजन्ति | १०. | भजन करते हैं |
| सर्वान् | १. | इन सब को | अनन्यया | ७. | अनन्य |
| अन्यान् | ३. | दूसरों को | भक्त्या | ८. | भक्ति के द्वारा (जो) |
| च | २. | और | तान् | ११. | मैं (उन्हें) |
| माम् | ९. | मेरा | मृत्योः | १२. | मृत्यु के भय से |
| एवम् | ५. | इस प्रकार | अति | १३. | मुक्त |
| विश्वतो मुखम् | ६. | चारों ओर से | पारये ॥ | १४. | कर देता हूँ |

श्लोकार्थ—इन सब को और दूसरों को छोड़कर इस प्रकार चारों ओर से अनन्य भक्ति के द्वारा जो मेरा भजन करते हैं। मैं उन्हें मृत्यु के भय से मुक्त कर देता हूँ ॥

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

नान्यत्र मद्भगवतः प्रधानपुरुषेश्वरात् ।
आत्मनः सर्वभूतानां भयं तीव्रं निवर्तते ॥४१॥

पदच्छेद—

न अन्यत्र मद्भगवतः प्रधान पुरुष ईश्वरात् ।
आत्मनः सर्व भूतानाम् भयम् तीव्रम् निवर्तते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ११. | नहीं | आत्मनः | ६. | आत्मा हूँ |
| अन्यत्र | ८. | किसी दूसरे से | सर्व | ४. | सभी |
| मद्भगवतः | ७. | मुझ भगवान् के अतिरिक्त | भूतानाम् | ५. | प्राणियों की |
| प्रधान | १. | (मैं) प्रकृति और | भयम् | १०. | भय |
| पुरुष | २. | पुरुष का | तीव्रम् | ९. | संसार का भयंकर |
| ईश्वरात् । | ३. | स्वामी हूँ | निवर्तते ॥ | १२. | दूर हो सकता है |

श्लोकार्थ—मैं प्रकृति और पुरुष का स्वामी हूँ। सभी प्राणियों की आत्मा हूँ। मुझ भगवान् के अतिरिक्त किसी दूसरे से संसार का भयंकर भय दूर नहीं हो सकता है ॥

# द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

मद्भयाद्वाति वातोऽयं सूर्यस्तपति मद्भयात् ।
वर्षतीन्द्रो दहत्यग्निर्मृत्युश्चरति मद्भयात् ॥४२॥

पदच्छेद—

मद्भयात् वाति वातः अयम् सूर्यः तपति मद्भयात् ।
वर्षति इन्द्रः दहति अग्निः मृत्युः चरति मद् भयात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मद्भयात् | १. | मेरे भय से | वर्षति | १२. | वर्षा करता है |
| वाति | ४. | बहती है | इन्द्रः | ११. | इन्द्र |
| वातः | ३. | हवा | दहति | १४. | जलाती है |
| अयम् | २. | यह | अग्निः | १३. | आग |
| सूर्यः | ७. | सूर्य | मृत्युः | १५. | मौत |
| तपति | ८. | तपता है | चरति | १६. | अपना काम करती है |
| मद् | ५. | मेरे | मद् | ९. | मेरे |
| भयात् । | ६. | भय से | भयात् ॥ | १०. | भय से |

श्लोकार्थ—मेरे भय से यह हवा बहती है; मेरे भय से सूर्य तपता है। मेरे भय से इन्द्र वर्षा करता है, आग जलाती है; मौत अपना काम करती है ॥

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

**ज्ञानवैराग्ययुक्तेन भक्तियोगेन योगिनः ।**
**क्षेमाय पादमूलं मे प्रविशन्त्यकुतोभयम् ॥४३॥**

पदच्छेद—

ज्ञान वैराग्य युक्तेन भक्ति योगेन योगिनः ।
क्षेमाय पादमूलम् मे प्रविशन्ति अकुतोभयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञान | २. | ज्ञान (और) | क्षेमाय | ७. | अपने कल्याण के लिये |
| वैराग्य | ३. | वैराग्य से | पादमूलम् | ११. | चरणों का |
| युक्तेन | ४. | परिपूर्ण | मे | १०. | मेरे |
| भक्ति | ५. | भक्ति | प्रविशन्ति | १२. | सहारा लेते हैं |
| योगेन | ६. | योग के द्वारा | अकुतो | ९. | होकर |
| योगिनः । | १. | योगिजन | भयम् ॥ | ८. | निर्भय |

श्लोकार्थ—योगिजन ज्ञान और वैराग्य से परिपूर्ण भक्ति योग के द्वारा अपने कल्याण के लिये निर्भय होकर मेरे चरणों का सहारा लेते हैं ॥

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

**एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसां निःश्रेयसोदयः ।**
**तीव्रेण भक्तियोगेन मनो मय्यर्पितं स्थिरम् ॥४४॥**

पदच्छेद—

एतावान् एव लोके अस्मिन् पुंसाम् निःश्रेयस उदयः ।
तीव्रेण भक्तिः योगेन मनः मयि अर्पितम् स्थिरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ४. | सबसे बड़ी | तीव्रेण | ९. | तीव्र |
| एव | ५. | वही | भक्ति | १०. | भक्ति |
| लोके | २. | संसार में | योगेन | ११. | योग के द्वारा |
| अस्मिन् | १. | इस | मनः | ८. | चित्त |
| पुंसाम् | ३. | मनुष्यों की | मयि | १२. | मुझमें |
| निःश्रेयस | ६. | कल्याण की | अर्पितम् | १३. | समर्पित (होकर) |
| उदयः । | ७. | प्राप्ति है (कि) (उसका) | स्थिरम् ॥ | १४. | स्थिर हो जाये |

श्लोकार्थ—इस संसार में मनुष्यों की सब से बड़ी वही कल्याण की प्राप्ति है । कि उसका चित्त तीव्र भक्ति योग के द्वारा मुझमें समर्पित होकर स्थिर हो जाये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये
पञ्चविंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२५॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

## षड्विंशः अध्यायः

### प्रथमः श्लोकः

**श्रीभगवानुवाच—अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि तत्त्वानां लक्षणं पृथक् ।**
**यद्विदित्वा विमुच्येत पुरुषः प्राकृतैर्गुणैः ॥१॥**

पदच्छेद—

अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि तत्त्वानाम् लक्षणम् पृथक् ।
यद् विदित्वा विमुच्येत पुरुषः प्राकृतैः गुणैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | हे मातः ! अब मैं | यद् | ७. | जिसे |
| ते | २. | तुम्हें | विदित्वा | ८. | जान कर |
| सम्प्रवक्ष्यामि | ६. | बताऊँगा | विमुच्येत | १२. | मुक्त हो जाता है |
| तत्त्वानाम् | ३. | तत्त्वों का | पुरुषः | ९. | पुरुष |
| लक्षणम् | ५. | स्वरूप | प्राकृतैः | १०. | प्रकृति के |
| पृथक् । | ४. | अलग-अलग | गुणैः ॥ | ११. | सत्त्वादि गुणों से |

श्लोकार्थ—हे मातः ! अब मैं तुम्हें तत्त्वों का अलग-अलग स्वरूप बताऊँगा । जिसे जानकर पुरुष प्रकृति के सत्त्वादि गुणों से मुक्त हो जाता है ॥

### द्वितीयः श्लोकः

**ज्ञानं निःश्रेयसार्थाय पुरुषस्यात्मदर्शनम् ।**
**यदाहुर्वर्णये तत्ते हृदयग्रन्थि भेदनम् ॥२॥**

पदच्छेद—

ज्ञानम् निःश्रेयस अर्थाय पुरुषस्य आत्म दर्शनम् ।
यद् आहुः वर्णये तत् ते हृदय ग्रन्थि भेदनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ४. | ज्ञान को | यद् | ३. | जिस |
| निःश्रेयस | ६. | कल्याण का | आहुः | ८. | कहा गया है (तथा जो) |
| अर्थाय | ७. | साधन | वर्णये | १२. | वर्णन करता हूँ |
| पुरुषस्य | ५. | पुरुष के | तत् ते | ११. | उसका तुमसे |
| आत्म | १. | (हे मातः !) आत्मा का | हृदय, ग्रन्थि | ९. | हृदय के, अज्ञान की ग्रन्थि को |
| दर्शनम् । | २. | दर्शन कराने वाले | भेदनम् ॥ | १०. | काटने वाला है |

श्लोकार्थ—हे मातः ! आत्मा का दर्शन कराने वाले जिस ज्ञान को पुरुष के कल्याण का साधन कहा गया है । तथा जो हृदय के अज्ञान की ग्रन्थि को काटने वाला है । उसका तुमसे वर्णन करूँगा ॥

## तृतीयः श्लोकः

अनादिरात्मा पुरुषो निर्गुणः प्रकृतेः परः ।
प्रत्यग्धामा स्वयंज्योतिर्विश्वं येन समन्वितम् ॥३॥

पदच्छेद—

अनादिः आत्मा पुरुषः निर्गुणः प्रकृतेः परः ।
प्रत्यग्धामा स्वयं ज्योतिः विश्वम् येन समन्वितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अनादिः | ४ | अनादि | प्रत्यग्धामा | ७. | अन्तःरात्मा (और) |
| आत्मा | ६. | आत्मा है (वह सबकी) | स्वयं | ८. | स्वयम् |
| पुरुषः | ५. | पुरुष ही | ज्योतिः | ६. | प्रकाश (है) |
| निर्गुणः | ३. | निर्गुण | विश्वम् | ११. | सारा संसार |
| प्रकृतेः | १. | प्रकृति से | येन | १०. | जिससे |
| परः । | २. | परे | समन्वितम् ॥ | १२. | व्याप्त है |

श्लोकार्थ—प्रकृति से परे निर्गुण अनादि पुरुष ही आत्मा है। वह सबकी अन्तरात्मा और स्वयम् प्रकाश है। जिससे सारा संसार व्याप्त है ॥

## चतुर्थः श्लोकः

स एष प्रकृतिं सूक्ष्मां दैवीं गुणमयीं विभुः ।
यदृच्छयैवोपगतामभ्यपद्यत लीलया ॥४॥

पदच्छेद—

सः एषः प्रकृतिम् सूक्ष्माम् दैवीम् गुणमयीं विभुः ।
यदृच्छया एव उपगताम् अभ्यपद्यत लीलया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | उस | यदृच्छया | ४. | स्वेच्छा से |
| एषः | ३. | परमात्मा ने | एव | ५. | ही |
| प्रकृतिम् | १०. | प्रकृति को | उपगताम् | ६. | (अपने) पास आई हुई |
| सूक्ष्माम् | ६. | अव्यक्त | अभ्यपद्यत | १२. | स्वीकार कर लिया |
| दैवीम् | ८. | पदार्थ प्रकाशिका | लीलया ॥ | ११. | सहज में |
| गुणमयीं | ७. | सत्त्वादि गुण स्वरूपा (और) | विभुः । | २. | व्यापक |

श्लोकार्थ—उस व्यापक परमात्मा ने स्वेच्छा से ही अपने पास आई हुई सत्त्वादि गुण स्वरूपा और अव्यक्त प्रकृति को सहज में स्वीकार कर लिया ॥

## पञ्चमः श्लोकः

गुणैर्विचित्राः सृजतीं सरूपाः प्रकृतिं प्रजाः ।
विलोक्य मुमुहे सद्यः स इह ज्ञानगूहया ॥५॥

पदच्छेद—

गुणैः विचित्राः सृजतीम् सरूपाः प्रकृतिम् प्रजाः ।
विलोक्य मुमुहे सद्यः सः इह ज्ञानगूहया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गुणैः | २. | सत्त्वादि गुणों से | विलोक्य | ८. | देख कर |
| विचित्राः | ४. | अनेक प्रकार की | मुमुहे | १२. | मोहित हो गये |
| सृजतीम् | ६. | सृष्टि करती हुई | सद्यः | ११. | तत्काल |
| सरूपाः | ३. | समान रूप वाली | सः | ९. | वह परमात्मा |
| प्रकृतिम् | ७. | प्रकृति को | इह | १. | संसार में |
| प्रजाः। | ५. | प्रजाओं की | ज्ञानगूहया ॥ | १०. | ज्ञान के आवरण से ढकाहोने के कारण |

श्लोकार्थ— संसार में सत्त्वादि गुणों से समानरूप वाली अनेक प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि करती हुई प्रकृति को देखकर वह परमात्मा ज्ञान के आवरण से ढका होने के कारण तत्काल मोहित हो गया ॥

## षष्ठः श्लोकः

एवं पराभिध्यानेन कर्तृत्वं प्रकृतेः पुमान् ।
कर्मसु क्रियमाणेषु गुणैरात्मनि मन्यते ॥६॥

पदच्छेद—

एवम् पर अभिध्यानेन कर्तृत्वम् प्रकृतेः पुमान् ।
कर्मसु क्रियमाणेषु गुणैः आत्मनि मन्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | कर्मसु | ६. | कर्मों में |
| पर | २. | प्रकृति के | क्रियमाणेषु | ५. | किये जाते हुये |
| अभिध्यानेन | ३. | स्वरूप का चिन्तन करने से | गुणैः | ९. | गुणों के द्वारा |
| कर्तृत्वम् | ८. | कर्ता पन को | आत्मनि | १०. | अपने में |
| प्रकृतेः | ७. | प्रकृति के | मन्यते ॥ | ११. | समझने लगता है |
| पुमान्। | ४. | पुरुष | | | |

श्लोकार्थ—इस प्रकार प्रकृति के स्वरूप का चिन्तन करने से पुरुष किये जाते हुये कर्मों में प्रकृति के कर्तापन को गुणों के द्वारा अपने में समझने लगता है ॥

## सप्तमः श्लोकः

तदस्य संसृतिर्बन्धः पारतन्त्र्यं च तत्कृतम् ।
भवत्यकर्तुरीशस्य साक्षिणो निर्वृतात्मनः ॥७॥

पदच्छेद—

तद् अस्य संसृतिः बन्धः पारतन्त्र्यम् च तत् कृतम् ।
भवति अकर्तुः ईशस्य साक्षिणः निवृत आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ७. | वही | भवति | १३. | होती है |
| अस्य | ६. | इस पुरुष का | अकर्तुः | १. | अकर्ता |
| संसृतिः | ८. | जन्म-मरण रूप | ईशस्य | २. | स्वाधीन |
| बन्धः | ९. | बन्धन है | साक्षिणः | ३. | साक्षी (और) |
| पारतन्त्र्यम् | १२. | पराधीनता | निवृत | ४. | आनन्द |
| च | १०. | और | आत्मनः ॥ | ५. | स्वरूप |
| तत् कृतम् । | ११. | उसी के कारण | | | |

श्लोकार्थ—अकर्ता, स्वाधीन, साक्षी और आनन्द स्वरूप इस पुरुष का वही जन्म-मरण रूप बन्धन है। और उसी के कारण पराधीनता होती है ॥

## अष्टमः श्लोकः

कार्यकारणकर्तृत्वे कारणं प्रकृतिं विदुः ।
भोक्तृत्वे सुखदुःखानां पुरुषं प्रकृतेः परम् ॥८॥

पदच्छेद—

कार्य-कारण कर्तृत्वे कारणम् प्रकृतिम् विदुः ।
भोक्तृत्वे सुख दुःखानाम् पुरुषम् प्रकृतेः परम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कार्य | २. | शरीरादि कार्य | भोक्तृत्वे | १०. | भोक्तापन का |
| कारण | ३. | इन्द्रियादि कारण (और) | सुख | ८. | सभी सुखों (और) |
| कर्तृत्वे | }४. | उसके देवता का (तथा) | दुःखानाम् | ९. | दुःखों के |
| कारणम् | ११. | कारण | पुरुषम् | ७. | पुरुष को |
| प्रकृतिम् | १. | प्रकृति के | प्रकृतेः | ५. | प्रकृति से |
| विदुः । | १२. | कहा गया है | परम् ॥ | ६. | परे |

श्लोकार्थ—प्रकृति के शरीरादि कार्य, इन्द्रयादि कारण और उसके देवता का तथा प्रकृति से परें पुरुष को सभी सुखों और दुखों के भोक्तापन का कारण कहा गया है ॥

## नवमः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—प्रकृतेः पुरुषस्यापि लक्षणं पुरुषोत्तम ।
ब्रूहि कारणयोरस्य सदसच्च यदात्मकम् ॥९॥

पदच्छेद—

प्रकृतेः पुरुषस्य अपि लक्षणम् पुरुषोत्तम् ।
ब्रूहि कारणयोः अस्य सद् असद् च यद् आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रकृतेः | ४. | प्रकृति | कारणयोः | ३. | कारण |
| पुरुषस्य | ६. | पुरुष का | अस्य | २. | इस संसार के |
| अपि | ५. | और | सद् | ७. | सत् |
| लक्षणम् | ११. | उस स्वरूप को भी | असद् | ९. | असत् |
| पुरुषोत्तम् । | १. | हे पुरुषोत्तम ! | च | ८. | और |
| ब्रूहि | १२. | बतावें | यद् आत्मकम् ॥ | १०. | जो स्वरूप है |

श्लोकार्थ—हे पुरुषोत्तम ! इस संसार के कारण प्रकृति और पुरुष का सत् और असत् जो स्वरूप है उस स्वरूप को भी बतावें ॥

## दशमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—यत्तत्त्रिगुणमव्यक्तं नित्यं सदसदात्मकम् ।
प्रधानं प्रकृतिं प्राहुरविशेषं विशेषवत् ॥१०॥

पदच्छेद—

यत् तत् त्रिगुणम् अव्यक्तम् नित्यम् सद्-असद् आत्मकम् ।
प्रधानम् प्रकृतिम् प्राहुः अविशेषम् विशेषवत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | ६. | जो | आत्मकम् । | ५. | रूप |
| तत् | ८. | उसे | प्रधानम् | ७. | प्रधान तत्त्व है |
| त्रिगुणम् | १. | हे मातः ! सत्त्वादि तीनों गुणों से युक्त | प्रकृतिम् | ९. | प्रकृति |
| अव्यक्तम् | २. | सूक्ष्म | प्राहुः | १०. | कहते हैं |
| नित्यम् | ३. | नित्य (और) | अविशेषम् | ११. | वह निर्विशेष होकर भी |
| सद्-असद् | ४. | कार्य-कारण | विशेषवत् ॥ | १२. | विशेष धर्मों से युक्त है |

श्लोकार्थ—हे मातः ! सत्त्वादि तीनों गुणों से युक्त सूक्ष्म, नित्य और कार्य-कारण रूप जो प्रधान तत्त्व हैं; उसे प्रकृति कहते हैं। वह निर्विशेष होकर भी विशेष धर्मों से युक्त है ॥

## एकादशः श्लोकः

पञ्चभिः पञ्चभिर्ब्रह्म चतुर्भिर्दशभिस्तथा ।
एतच्चतुर्विंशतिकं गणं प्राधानिकं विदुः ॥११॥

पदच्छेद—

पञ्चभिः पञ्चभिः ब्रह्म चतुर्भिः दशभिः तथा ।
एतद् चतुर्विंशतिकम् गणम् प्राधानिकम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पञ्चभिः | २. | पञ्च महाभूत | एतद् | ७. | इस |
| पञ्चभिः | ३. | पाँच तन्मात्रा | चतुर्विंशतिकम् | ८. | चौबीस तत्त्वों के |
| ब्रह्म | १. | भगवान् ने कहा हे मातः ! | गणम् | ९. | समूह को (विद्वान लोग) |
| चतुर्भिः | ४. | चार अन्तःकरण | प्राधानिकम् | १०. | प्रकृति का कार्य |
| दशभिः | ६. | दस इन्द्रियां | विदुः ॥ | ११. | मानते हैं |
| तथा । | ५. | तथा | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् ने कहा हे मातः । पञ्च महाभूत पांच तन्मात्रा, चार अन्तःकरण तथा दस इन्द्रियाँ इन चौबीस तत्त्वों के समूह को विद्वान लोग प्रकृति का कार्य मानते हैं ॥

## द्वादशः श्लोकः

महाभूतानि पञ्चैव भूरापोऽग्निर्मरुन्नभः ।
तन्मात्राणि च तावन्ति गन्धादीनि मतानि मे ॥१२॥

पदच्छेद—

महाभूतानि पञ्च एव भूः अपि अग्निः मरुत् नभः ।
तन्मात्राणि च तावन्ति गन्ध आदिनि मतानि मे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महाभूतानि | ७. | महाभूत हैं | तन्मात्राणि | १२. | तन्मात्रायें |
| पञ्च एव | ६. | ये पांच | च | ८. | तथा |
| भूः | १. | पृथ्वी | तावन्ति | ११. | उतनी ही |
| अपिः | २. | जल | गन्ध | ९. | गन्ध |
| अग्निः | ३. | तेज़ | आदिनि | १०. | रस, रूप, स्पर्श, शब्द |
| मरुत् | ४. | वायु (और) | मतानि | १४. | मानी गई है |
| नभः । | ५. | आकाश | मे ॥ | १३. | मेरे द्वारा |

श्लोकार्थ—पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ये पांच महाभूत हैं, तथा गन्ध रस, रूप, स्पर्श, शब्द उतनी ही तन्मात्रायें मेरे द्वारा मानी गई हैं ॥

# त्रयोदशः श्लोकः

इन्द्रियाणि दश श्रोत्रं त्वग्दृग्रसननासिकाः ।
वाक्करौ चरणौ मेढ्ं पायुर्दशम उच्यते ॥१३॥

पदच्छेद—

इन्द्रियाणि दश श्रोत्रम् त्वक् दृक् रसन नासिकाः ।
वाक् करौ चरणौ मेढ्म् पायुः दशमः उच्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इन्द्रियाणि | १. | इन्द्रियाँ | वाक् | ८. | वाणी |
| दश | २. | दश हैं (ये) | करौ | ९. | हाथ |
| श्रोत्रम् | ३. | कान | चरणौ | १०. | पैर |
| त्वक् | ४. | चमड़ी | मेढ्म् | ११. | जननेन्द्रिय (तथा) |
| दृक् | ५. | आँख | पायुः | १३. | गुदा |
| रसन | ६. | जिह्वा | दशमः | १२. | दस इन्द्रियाँ |
| नासिकाः । | ७. | नाक | उच्यते ॥ | १४. | कही जाती हैं |

श्लोकार्थ—इन्द्रियाँ दस हैं; ये कान, चमड़ी, आँख, जिह्वा, नाक, वाणी, हाथ, पैर, जननेन्द्रि तथा गुदा दस इन्द्रियाँ कही जाती हैं ॥

# चतुर्दशः श्लोकः

मनो बुद्धिरहङ्कारश्चित्तमित्यन्तरात्मकम् ।
चतुर्धा लक्ष्यते भेदो वृत्त्या लक्षणरूपया ॥१४॥

पदच्छेद—

मनः बुद्धिः अहंकारः चित्तम् इति अन्तरात्मकम् ।
चतुर्धा लक्ष्यते भेदः वृत्त्या लक्षण रूपया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनः | ५. | मन | चतुर्धा | १०. | चार |
| बुद्धिः | ६. | बुद्धि | लक्ष्यते | १२. | होते हैं |
| अहंकारः | ७. | अहंकार (और) | भेदः | ११. | भेद |
| चित्तम् | ८. | चित्त | वृत्त्या | ३. | वृत्ति के कारण |
| इति | ९. | इस प्रकार | लक्षण | १. | लक्षण |
| अन्तरात्मकम् । | ४. | अन्तःकरण के | रूपया ॥ | २. | स्वरूप |

श्लोकार्थ—लक्षण, स्वरूप, वृत्ति के कारण अन्तःकरण के मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त इस प्रकार चार भेद होते हैं ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**एतावानेव सङ्ख्यातो ब्रह्मणः सगुणस्य ह ।**
**सन्निवेशो मया प्रोक्तो यः कालः पञ्चविंशकः ॥१५॥**

पदच्छेद—

एतावान् एव संख्यातः ब्रह्मणः सगुणस्य ह ।
सन्निवेश मया प्रोक्तः यः कालः पञ्चविंशकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ४. | इतनी | सन्निवेश | ६. | रचना |
| एव | ५. | ही | मया | १. | मैंने |
| संख्यातः | ७. | गिनाई है (और) | प्रोक्तः | ८. | बतलायी है |
| ब्रह्मणः | ३. | परमात्मा की | यः | १०. | जो |
| सगुणस्य | २. | सगुण | कालः | ११. | काल है |
| ह । | ६. | तथा | पञ्चविंशकः ॥ | १२. | वह पच्चीसवां तत्त्व है |

श्लोकार्थ—मैंने सगुण परमात्मा की इतनी ही रचना गिनाई है और बतलायी है, तथा जो काल है वह पच्चीसवां तत्त्व है ॥

## षोडशः श्लोकः

**प्रभावं पौरुषं प्राहुः कालमेके यतो भयम् ।**
**अहङ्कारविमूढस्य कर्तुः प्रकृतिमीयुषः ॥१६॥**

पदच्छेद—

प्रभावम् पौरुषम् प्राहुः कालम् एके यतः भयम् ।
अहंकार विमूढस्य कर्तुः प्रकृतिम् ईयुषः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रभावम् | ४. | सामर्थ्य | भयम् । | १२. | भय होता है |
| पौरुषम् | ३. | पुरुष का | अहंकार | ६. | अहंकार से |
| प्राहुः | ५. | कहते हैं | विमूढस्य | ७. | मोहित तथा |
| कालम् | २. | काल को | कर्तुः | १०. | कर्ता जीव को |
| एके | १. | कुछ लोग | प्रकृतिम् | ८. | प्रकृति के धर्म को |
| यतः | ११. | जिस काल से | ईयुषः ॥ | ९. | अपना समझने वाले |

श्लोकार्थ—कुछ लोग काल को पुरुष का सामर्थ्य कहते हैं । अहंकार से मोहित तथा प्रकृति के धर्म को अपना समझने वाले कर्ता जीव को जिस काल से भय होता है ॥

## सप्तदशः श्लोकः

प्रकृतेर्गुणसाम्यस्य निर्विशेषस्य मानवि ।
चेष्टा यतः स भगवान् काल इत्युपलक्षितः ॥१७॥

पदच्छेद—

प्रकृतेः गुण साम्यस्य निर्विशेषस्य मानवि ।
चेष्टा यतः सः भगवान् कालः इति उपलक्षितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रकृतेः | ५. | प्रकृति को | यतः | ६. | जिससे |
| गुण | ३. | गुणों वाली | सः | ८. | वे |
| साम्यस्य | २. | समान | भगवान् | ९. | भगवान् |
| निर्विशेषस्य | ४. | सामान्य | कालः | १०. | काल |
| मानवि । | १. | हे मनु पुत्री ! | इति | ११. | इस शब्द से |
| चेष्टा | ७. | गति (मिलती है ।) | उपलक्षितः ॥ | १२. | जाने जाते हैं |

श्लोकार्थ—हे मनु पुत्री ! समान गुणों वाली सामान्य प्रकृति को जिससे गति मिलती है । वे भगवान् काल इस शब्द से जाने जाते हैं ॥

## अष्टदशः श्लोकः

अन्तः पुरुषरूपेण कालरूपेण यो बहिः ।
समन्वेत्येष सत्त्वानां भगवानात्ममायया ॥१८॥

पदच्छेद—

अन्तः पुरुष रूपेण कालरूपेण योः बहिः ।
समन्वेति एषः सत्त्वानाम् भगवान् आत्म मायया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तः | ७. | अन्दर | समन्वेति | १२. | व्याप्त है |
| पुरुष | ८. | जीव के | एषः | २. | ये |
| रूपेण | ९. | रूप में | सत्त्वानाम् | ६. | सभी प्राणियों के |
| कालरूपेण | ११. | काल रूप में | भगवान् | ३. | भगवान् |
| योः | १. | वही | आत्म | ४. | अपनी |
| बहिः । | १०. | बाहर | मायया ॥ | ५. | माया से |

श्लोकार्थ—वही ये भगवान् अपनी माया से सभी प्राणियों के अन्दर जीव के रूप में बाहर काल के रूप में व्याप्त है ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

**दैवात्क्षुभितधर्मिण्यां स्वस्यां योनौ परः पुमान् ।**
**आधत्त वीर्यं सासूत महत्तत्त्वं हिरण्मयम् ॥१९॥**

पदच्छेद—

दैवात् क्षुभित धीर्यण्याम् स्वस्याम् योनौ परः पुमान् ।
आधत्त वीर्यम् सा आसूत महत्तत्त्वम् हिरण्यमयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दैवात् | २. | अदृष्टवश | आधत्त | ८. | स्थापित किया (अतः) |
| क्षुभित | ३. | शोक को प्राप्त हुई | वीर्यम् | ७. | वीर्य रूप चित शक्ति को |
| धीर्मण्याम् | ६. | मायामय प्रकृति में | सा | ९. | उसने |
| स्वस्याम् | ५. | अपनी | आसूत | १२. | उत्पन्न किया |
| योनौ | ४. | जगत की कारण रूपा | महत्तत्त्वम् | ११. | महत्तत्व को |
| परः पुमान् । | १. | परम् पुरुष परमात्मा ने | हिरण्यमयन् ॥ | १०. | सुवर्णमय |

श्लोकार्थ—परम पुरुष परमात्मा ने अदृष्टवश शोक को प्राप्त हुई, जगत की कारणरूपा अपनी मायामय प्रकृति में वीर्यरूप चित शक्ति को स्थापित किया। उसने सुवर्णमय महतत्त्व को उत्पन्न किया ॥

## विंशः श्लोकः

**विश्वमात्मगतं व्यञ्जन् कूटस्थो जगदङ्कुरः ।**
**स्वतेजसापिबत्तीव्रमात्मप्रस्वापनं तमः ॥२०॥**

पदच्छेद—

विश्वम् आत्मगतम् व्यञ्जन कूटस्थः जगद अङ्कुरः ।
स्वतेजसा अपिबत् तीव्रम् आत्म प्रस्वापनम् तमः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विश्वम् | ५. | संसार को | स्वतेजसा | ७. | अपने तेज से |
| आत्मगतम् | ४. | अपने में स्थित | अपिबत् | १२. | पान कर लिया |
| व्यञ्जन | ६. | प्रकट करता हुआ | तीव्रम् | १०. | गहरे |
| कूटस्थः | ३. | निर्विकार (महत्तत्त्व) | आत्म | ८. | अपने को |
| जगद | १. | संसार को | प्रस्वापनम् | ९. | ढक देने वाले |
| अङ्कुरः। | २. | अङ्कुर रूप में स्थित | तमः ॥ | ११. | अन्धकार का |

श्लोकार्थ—संसार को अङ्कुर रूप में स्थित निर्विकार महत्तत्त्व अपने में स्थिर संसार को प्रकट करता हुआ अपने तेज से अपने को ढक देने वाले गहरे अन्धकार का पान कर लिया ॥

# एकविंशः श्लोकः

**यत्तत्सत्त्वगुणं स्वच्छं शान्तं भगवतः पदम् ।**
**यदाहुर्वासुदेवाख्यं चित्तं तन्महदात्मकम् ॥२१॥**

पदच्छेद—

यत् तत् सत्त्वगुणम् स्वच्छम् शान्तम् भगवतः पदम् ।
यद् आहुः वासुदेव आख्यम् चित्तम् तत् महद् आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्-तत् | १. | जो वह | यद् | ६. | जिसे |
| सत्त्वगुणम् | २. | सत्त्वगुणों वाल | आहुः | १२. | कहते हैं |
| स्वच्छम् | ३. | निर्मल | वासुदेव | १०. | वासुदेव |
| शान्तम् | ४. | शान्त (और) | आख्यम् | ११. | नाम से |
| भगवतः | ५. | भगवान् की | चित्तम्, तत् | ७. | चित्त है वह |
| पदम् । | ६. | प्राप्ति का स्थान | महद्, आत्मकम् ॥ | ८. | महत्तत्त्व का स्वरूप है |

श्लोकार्थ—जो वह सत्त्वगुणों वाला निर्मल, शान्त और भगवान् की प्राप्ति का स्थान चित्त है वह महत्तत्त्व का स्वरूप है। जिसे वासुदेव कहते हैं ॥

# द्वाविंशः श्लोकः

**स्वच्छत्वमविकारित्वं शान्तत्वमिति चेतसः ।**
**वृत्तिभिर्लक्षणं प्रोक्तं यथापां प्रकृतिः परा ॥२२॥**

पदच्छेद—

स्वच्छत्वम् अविकारित्वम् शान्तत्वम् इति चेतसः ।
वृत्तिभिः अक्षणम् प्रोक्तम् यथा अपाम् प्रकृतिः परा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वच्छत्वम् | ७. | निर्मल होना | लक्षणम् | ११. | लक्षण |
| अविकारित्वम् | ८. | विकार न होना (और) | प्रोक्तम् | १२. | कहा गया है |
| शान्तत्वम् | ९. | शान्त रहना | यथा | ४. | समान |
| इति | १०. | यह | अपाम् | १. | जल की |
| चेतसः । | ६. | चित्त का | प्रकृतिः | ३. | प्रकृति के |
| वृत्तिभिः | ५. | (अपनी) वृत्तियों के साथ | परा ॥ | २. | परा |

श्लोकार्थ—जल की परा प्रकृति के समान अपनी वृत्तियों के साथ चित्त का निर्मल होना, विकार न होना और शान्त रहना यह लक्षण कहा गया है ॥

# त्रयोविंशः श्लोकः

**महत्तत्त्वाद्विकुर्वाणाद्भगवद्वीर्यसम्भवात् ।**
**क्रियाशक्तिरहङ्कारस्त्रिविधः समपद्यत ॥२३॥**

पदच्छेद—

महत्तत्त्वात् विकुर्वाणात् भगवत् वीर्य सम्भवात् ।
क्रिया शक्तिः अहंकार त्रिविधः समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महत्तत्त्वात् | ४. | महत्तत्त्व के | क्रिया | ७. | क्रिया |
| विकुर्वाणात् | ५. | विकृत होने पर (उससे) | शक्तिः | ८. | शक्ति रूप |
| भगवत् | १. | भगवान् की | अहंकार | ९. | अहंकार |
| वीर्य | २. | चित्त शक्ति से | त्रिविधः | ६. | तीन प्रकार का |
| सम्भवात् । | ३. | उत्पन्न | समपद्यत ॥ | १०. | उत्पन्न हुआ |

श्लोकार्थ—भगवान् की चित्त शक्ति से उत्पन्न महत्तत्त्व के विकृत होने पर उससे तीन प्रकार का क्रिया शक्ति रूप अहंकार उत्पन्न हुआ ॥

# चतुर्विंशः श्लोकः

**वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्च यतो भवः ।**
**मनसश्चेन्द्रियाणां च भूतानां महतामपि ॥२४॥**

पदच्छेद—

वैकारिकः तेजसः च तामसः च यतः भवः ।
मनसः च इन्द्रियाणाम् च भूतानाम् महताम् अपि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैकारिकः | १. | (इस अहंकार को) वैकारिक | मनसः | ७. | मन |
| तेजसः | २. | तैजस | च | ८. | और |
| च | ३. | और | इन्द्रियाणाम् | ९. | इन्द्रियाँ |
| तामसः | ४. | तामस | च | १०. | तथा |
| च | ५. | कहते हैं | भूतानाम् | १२. | भूतों की |
| यतः | ६. | जिससे | महताम् | ११. | पञ्च महा |
| भवः । | १४. | उत्पत्ति हुई है | अपि ॥ | १३. | भी |

श्लोकार्थ—इस अहंकार को वैकारिक, तैजस और तामस कहते हैं; जिससे मन और इन्द्रियाँ तथा पञ्च महाभूतों की भी उत्पत्ति हुई है ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

**सहस्त्रशिरसं साक्षाद्यमनन्तं प्रचक्षते।**
**सङ्कर्षणाख्यं पुरुषं भूतेन्द्रियमनोमयम् ॥२५॥**

पदच्छेद—

सहस्त्र शिरसम् साक्षात् यम् अनन्तम् प्रचक्षते।
संङ्कर्षण आख्यम् पुरुषम् भूतेन्द्रिय मनोमयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सहस्त्र | ७. | उसे ही हज़ार | संङ्कर्षण | ४. | संकर्षण |
| शिरसम् | ८. | सिरों से युक्त | आख्यम् | ५. | नामक |
| साक्षात् | ९. | साक्षात् | पुरुषम् | ६. | पुरुष कहते हैं (और) |
| यम् | ३. | जिस (अहंकार) को | भूतेन्द्रिय | १. | भूत इन्द्रिय (और) |
| अनन्तम् | १०. | अनन्त देव | मनोमयम् ॥ | २ | मनोमयरूप |
| प्रचक्षते। | ११. | कहते हैं | | | |

श्लोकार्थ—भूत इन्द्रिय और मनोमयरूप जिस अहंकार को संकर्षण नामक पुरुष कहते हैं और उसे ही हज़ार सिरों से युक्त साक्षात् अनन्तदेव कहते हैं ॥

## षड्विंशः श्लोकः

**कर्तृत्वं करणत्वं च कार्यत्वं चेति लक्षणम्।**
**शान्तघोरविमूढत्वमिति वा स्यादहंकृतेः ॥२६॥**

पदच्छेद—

कर्तृत्वम् करणत्वम् च कार्यत्वम् च इति लक्षणम्।
शान्त घोर विमूढत्वम् इति वा स्यात् अहंकृते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कर्तृत्वम् | २. | (मनरूप से) कर्तृत्व | शान्त | ९. | शान्तरूप |
| करणत्वम् | ३. | (इन्द्रिय रूप से) करणत्व | घोर | १०. | घोर रूप (और) |
| च | ४. | और | विमूढत्वम् | ११. | अज्ञान रूप |
| कार्यत्वम् | ५. | (पञ्चभूत रूप से) कार्यत्व | इति | १२. | ये |
| च | ८. | तथा (गुणों की दृष्टि से) | वा | १३. | भी (अहंकार के ही) |
| इति | ६. | यह | स्यात् | १४. | लक्षण है |
| लक्षणम्। | ७. | लक्षण है | अहंकृते ॥ | १. | अहंकार का |

श्लोकार्थ—अहंकार का मनरूप से कर्तृत्व, इन्द्रिय रूप से करणत्व और पञ्च महाभूत रूप से कार्यत्व यह लक्षण हैं। शान्त रूप, घोर रूप और अज्ञान रूप ये भी अहंकार के ही लक्षण हैं ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

**वैकारिकाद्विकुर्वाणान्मनस्तत्त्वमजायत ।**
**यत्सङ्कल्पविकल्पाभ्यां वर्तते कामसम्भवः ॥२७॥**

पदच्छेद—

वैकारिकात् विकुर्वाणात् मनस्तत्त्वम् अजायत ।
यत् संङ्कल्प विकल्पाभ्याम् वर्तते काम सम्भवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वैकारिकात् | १. | वैकारिक अहंकार के | सङ्कल्प | ६. | सङ्कल्प (और) |
| विकुर्वाणात् | २. | विकृत होने पर (उससे) | विकल्पाभ्याम् | ७. | विकल्प के द्वारा |
| मनस्तत्त्वम् | ३. | मन | वर्तते | १०. | है |
| अजायत । | ४. | उत्पन्न हुआ | काम | ८. | कामनाओं का |
| यत् | ५. | जो | सम्भवः ॥ | ६. | उत्पत्ति स्थान |

श्लोकार्थ—वैकारिक अहंकार के विकृत होने पर उससे मन उत्पन्न हुआ, जो सङ्कल्प और विकल्प के द्वारा कामनाओं का उत्पत्ति स्थान है ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

**यद्विदुर्ह्यनिरुद्धाख्यं हृषीकाणामधीश्वरम् ।**
**शारदेन्दीवरश्यामं संराध्यं योगिभिः शनैः ॥२८॥**

पदच्छेद—

यद् विदुः अनिरुद्ध आख्यम् हृषीकाणाम् अधीश्वरम ।
शारद इन्दीवर श्यामम् संराध्यम् योगिभिः शनैः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | ३. | जो | शारद | ६. | शरत् कालीन |
| विन्दुः | ६. | प्रसिद्ध है | इन्दीवर | १०. | नील कमल के समान |
| अनिरुद्ध | ४. | अनिरुद्ध | श्यामम् | ११. | श्याम वर्ण (उस अनिरुद्ध की) |
| आख्यम् | ५. | नाम से | संराध्यम् | १२. | आराधना करते हैं |
| हृषीकाणाम् | १. | इन्द्रियों का | योगिभिः | ७. | योगिजन |
| अधीश्वरम् । | २. | अधिष्ठाता | शनैः ॥ | ८. | शनैः-शनैः |

श्लोकार्थ—इन्द्रियों का अधिष्ठाता जो अनिरुद्ध नाम से प्रसिद्ध है । योगिजन शनैः शनैः शरत्कालीन नील कमल के समान श्याम वर्ण उस अनिरुद्ध की आराधना करते हैं ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**तैजसात्तु विकुर्वाणाद् बुद्धितत्त्वमभूत्सति ।**
**द्रव्यस्फुरणविज्ञानमिन्द्रियाणामनुग्रहः ॥२९॥**

पदच्छेद—

तैजसात् तु विकुर्वाणात् बुद्धितत्त्वम् अभूत् सती ।
द्रव्य स्फुरण विज्ञानम् इन्द्रियाणाम् अनुग्रहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तैजसात् | ३. | तैजस अहंकार से | द्रव्य | ९. | पदार्थों का |
| तु | २. | तदनन्तर | स्फुरण | ११. | प्रकाश होता है |
| विकुर्वाणात् | ४. | विकार होने पर | विज्ञानम् | १०. | ज्ञान (और) |
| बुद्धितत्त्वम् | ५. | बुद्धि-तत्त्व | इन्द्रियाणाम् | ८. | इन्द्रियों के द्वारा |
| अभूत् | ६. | उत्पन्न हुआ | अनुग्रहः ॥ | ७. | जिसकी कृपा से |
| सती । | १. | हे साध्वी ! | | | |

श्लोकार्थ—हे साध्वी ! तदनन्तर तैजस अहंकार से विकार होने पर बुद्धि-तत्त्व उत्पन्न हुआ । जिसकी कृपा से इन्द्रियों के द्वारा पदार्थों का ज्ञान और प्रकाश होता है ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**संशयोऽथ विपर्यासो निश्चयः स्मृतिरेव च ।**
**स्वाप इत्युच्यते बुद्धेर्लक्षणं वृत्तितः पृथक् ॥३०॥**

पदच्छेद—

संशयः अथ विपर्यासः निश्चयः स्मृति एव च ।
स्वापः इति उच्यते बुद्धे लक्षणम् वृत्तितः पृथक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| संशयः | २. | सन्देह | स्वापः | ८. | निन्द्रा |
| अथ | ५. | और | इति | ९. | ये |
| विपर्यासः | ३. | विपरीत ज्ञान | उच्यते | १४. | कहे जाते हैं |
| निश्चयः | ४. | निश्चय | बुद्धे | ११. | बुद्धि के |
| स्मृति | ६. | स्मृति | लक्षणम् | १३. | लक्षण |
| एव | १०. | ही | वृत्तितः | १. | कार्य के भेद से |
| च ॥ | ७. | तथा | पृथक् ॥ | १२. | अलग-अलग |

श्लोकार्थ—कार्य के भेद से सन्देह, विपरीत ज्ञान, निश्चय और स्मृति तथा निद्रा ये ही बुद्धि के अलग-अलग लक्षण कहे जाते हैं ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

**तैजसानीन्द्रियाण्येव क्रियाज्ञानविभागशः ।**
**प्राणस्य हि क्रिया शक्तिर्बुद्धेर्विज्ञानशक्तिता ॥३१॥**

पदच्छेद—

तैजसानि इन्द्रियाणि एव क्रिया ज्ञान विभागशः ।
प्राणस्य हि क्रिया शक्तिः बुद्धेः विज्ञान शक्तिता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तैजसानि | १. | तैजस अहंकार से उत्पन्न | प्राणस्य | ८. | प्राण की |
| इन्द्रियाणि | २. | इन्द्रियाँ | हि क्रिया | ७. | उनमें कर्मेन्द्रियाँ |
| एव | ३. | ही | शक्तिः | ९. | शक्ति हैं और |
| क्रिया | ४. | कर्म (और) | बुद्धेः | ११. | बुद्धि की |
| ज्ञान | ५. | ज्ञान के | विज्ञान | १०. | ज्ञानेन्द्रियाँ |
| विभागशः । | ६. | भेद से (दो प्रकार की हैं) | शक्तिता ॥ | १२. | शक्ति हैं |

श्लोकार्थ—तैजस अहंकार से उत्पन्न इन्द्रियाँ ही कर्म और ज्ञान के भेद से दो प्रकार की हैं । उनमें कर्मेन्द्रियाँ प्राण की शक्ति हैं; और ज्ञानेन्द्रियाँ बुद्धि की शक्ति हैं ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**तामसाच्च विकुर्वाणाद्भगवद्वीर्यचोदितात् ।**
**शब्दमात्रमभूत्तस्मान्नभः श्रोत्रं तु शब्दगम् ॥३२॥**

पदच्छेद—

तामसात् च विकुर्वाणात् भगवत् वीर्य चोदितात् ।
शब्दमात्रम् अभूत तस्मात् नभः श्रोत्रम् तु शब्दगम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तामसात् | ५. | तामस अहंकार में | शब्दमात्रम् | ७. | शब्द तन्मात्रा |
| च | १. | तदनन्तर | अभूत तस्मात् | ८. | उत्पन्न हुई उससे |
| विकुर्वाणात् | ६. | विकार होने पर उससे | नभः | ९. | आकाश |
| भगवत् | २. | भगवान् की | श्रोत्रम् | १२. | श्रवणेन्द्रिय उत्पन्न हुई |
| वीर्य | ३. | चेतन शक्ति से | तु | १०. | तथा |
| चोदितात् । | ४. | प्रेरणा पाकर | शब्दगम् ॥ | ११. | शब्द का ज्ञान कराने वाली |

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् की चेतन शक्ति से प्रेरणा पाकर तामस अहंकार में विकार होने पर उससे शब्द तन्मात्रा उत्पन्न हुई, उससे आकाश तथा शब्द का ज्ञान कराने वाली श्रवणेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**अर्थाश्रयत्वं शब्दस्य द्रष्टुर्लिङ्गत्वमेव च ।**
**तन्मात्रत्वं च नभसो लक्षणं कवयो विदुः ॥३३॥**

पदच्छेद—

अर्थ आश्रयत्वम् शब्दस्य द्रष्टुः लिङ्गत्वम् एव च ।
तन्मात्रत्वम् च नभसः लक्षणम् कवयः विदुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्थ | १. | अर्थ का | तन्मात्रत्वम् | ८. | सूक्ष्म रूप होना |
| आश्रयत्वम् | २. | प्रकाशक होना | च | ११. | ये |
| शब्दस्य | १०. | शब्द के | नभसः | ७. | आकाश का |
| द्रष्टुः | ३. | परोक्ष वक्ता का | लक्षणम् | १२. | लक्षण |
| लिङ्गत्वम् | ५. | ज्ञान करा देना | कवयः | ९. | विद्वानों ने |
| एव | ४. | भी | विदुः ॥ | १३. | बताये हैं |
| च । | ६. | और | | | |

श्लोकार्थ—अर्थ का प्रकाशक होना परोक्ष वक्ता का भी ज्ञान करा देना; और आकाश का सूक्ष्म रूप होना विद्वानों ने शब्द के ये लक्षण बताये हैं ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**भूतानां छिद्रदातृत्वं बहिरन्तरमेव च ।**
**प्राणेन्द्रियात्मधिष्ण्यत्वं नभसो वृत्तिलक्षणम् ॥३४॥**

पदच्छेद—

भूतानाम् छिद्र दातृत्वम् बहिः अन्तरम् एव च ।
प्राण इन्द्रिय आत्मधिष्ण्यत्वम् नभसः वृत्ति लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूतानाम् | १. | प्राणियों को | प्राण | ८. | प्राण |
| छिद्र | २. | अवकाश | इन्द्रिय | ९. | इन्द्रिय (और) |
| दातृत्वम् | ३. | देना | आत्म | १०. | मन का |
| बहिः | ४. | (शरीर के) बाहर | धिष्ण्यत्वम् | ११. | आश्रय होना (ये) |
| अन्तरम् | ६. | अन्दर | नभसः | १२. | आकाश के |
| एव | ७. | भी (रहना तथा) | वृत्ति | १३. | वृत्ति रूप |
| च । | ५. | और | लक्षणम् ॥ | १४. | लक्षण हैं |

श्लोकार्थ—प्राणियों को अवकाश देना शरीर के बाहर और अन्दर भी रहना, तथा प्राण, इन्द्रिय और मन का आश्रय होना ये आकाश के वृत्ति रूप लक्षण हैं ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

**नभसः शब्दतन्मात्रात्कालगत्या विकुर्वतः ।**
**स्पर्शोऽभवत्ततो वायुस्त्वक् स्पर्शस्य च संग्रहः ॥३५॥**

पदच्छेद—

नभसः शब्द तन्मात्रात् काल गत्या विकुर्वतः ।
स्पर्शः अभवत् ततः वायुः त्वक् स्पर्शस्य च संग्रहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नभसः | ५. आकाश में | | अभवत् | ८. उत्पन्न हुई | |
| शब्द | ३. शब्द | | ततः | ९. उस तन्मात्रा से | |
| तन्मात्रात् | ४. तन्मात्रा वाले | | वायुः | १०. वायु | |
| काल | १. काल की | | त्वक् | १४. त्वक इन्द्रिय (उत्पन्न हुई) | |
| गत्या | २. गति से | | स्पर्शस्य | १२. स्पर्श का | |
| विकुर्वतः । | ६. विकार होने पर (उससे) | | च | ११. और | |
| स्पर्शः | ७. स्पर्श तन्मात्रा | | संग्रहः ॥ | १३. ज्ञान कराने वाली | |

श्लोकार्थ—काल की गति से शब्द तन्मात्रा वाले आकाश में विकार होने पर उससे स्पर्श तन्मात्रा उत्पन्न हुई; उस तन्मात्रा से वायु और स्पर्श का ज्ञान कराने वाली त्वक्-इन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

## षट्त्रिंशः श्लोकः

**मृदुत्वं कठिनत्वं च शैत्यमुष्णत्वमेव च ।**
**एतत्स्पर्शस्य स्पर्शत्वं तन्मात्रत्वं नभस्वतः ॥३६॥**

पदच्छेद—

मृदुत्वम् कठिनत्वम् च शैत्यम् उष्णत्वम् एव च ।
एतत् स्पर्शस्य स्पर्शत्वम् तन्मात्रत्वम् नभः स्वतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| मृदुत्वम् | १. कोमलता | एतत् | ९. ये |
| कठिनत्वम् | २. कठोरता | स्पर्शस्य | १०. स्पर्श के |
| च | ४. और | स्पर्शत्वम् | ११. लक्षण हैं |
| शैत्यम् | ३. शीतलता | तन्मात्रत्वम् | ८. तन्मात्रा होना |
| उष्णत्वम् | ५. उष्णता | नभः स्वतः ॥ | ७. वायु की |
| एव च । | ६. तथा | | |

श्लोकार्थ—कोमलता, कठोरता, शीतलता और उष्णता तथा वायु की तन्मात्रा होना ये स्पर्श के लक्षण हैं ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

चालनं व्यूहनं प्राप्तिर्नेतृत्वं द्रव्यशब्दयोः ।
सर्वेन्द्रियाणामात्मत्वं वायोः कर्माभिलक्षणम् ॥३७॥

पदच्छेद—

चालनम् व्यूहनम् प्राप्तिः नेतृत्वम् द्रव्य शब्दयोः ।
सर्व इन्द्रियाणाम् आत्मत्वम् वायोः कर्म अभिलक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चालनम् | १. | वृक्षादि को हिलाना | सर्व | ७. | सभी |
| व्यूहनम् | २. | (तृण इत्यादि) इकट्ठा करना | इन्द्रियाणाम् | ८. | इन्द्रियों को |
| प्राप्तिः | ३. | सर्वत्र पहुँचाना | आत्मत्वम् | ९. | शक्ति होना |
| नेतृत्वम् | ६. | इन्द्रियों तक पहुँचाना (और) | वायोः | १०. | ये वायु के |
| द्रव्य | ४. | सुगन्धित वस्तु (और) | कर्म | ११. | कार्य |
| शब्दयोः । | ५. | शब्द को | अभिलक्षणम् ॥ | १२. | लक्षण हैं |

श्लोकार्थ—वृक्षादि को हिलाना, तृणादि इत्यादि इकट्ठा करना, सर्वत्र पहुँचाना और सुगन्धित वस्तुओं और शब्द को इन्द्रियों तक पहुँचाना और सभी इन्द्रियों को शक्ति देना । ये वायु के कार्य लक्षण हैं ॥

## अष्टत्रिंशः श्लोकः

वायोश्च स्पर्शतन्मात्राद्रूपं दैवेरितादभूत् ।
समुत्थितं ततस्तेजश्चक्षू रूपोपलम्भनम् ॥३८॥

पदच्छेद—

वायोः च स्पर्शतन्मात्रात् रूपम् दैव ईरितात् अभूत ।
समुत्थितम् ततः तेजः चक्षु रूप उपलम्भनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वायोः | ४. | वायु से | समुत्थितम् | १३. | उत्पन्न हुई |
| च | ७. | और | ततः | ८. | उससे |
| स्पर्शतन्मात्रात् | ३. | स्पर्श तन्मात्रा वाले | तेजः | ९. | रूप तन्मात्रा (और) |
| रूपम् | ५. | तेज | चक्षुः | १२. | नेत्रेन्द्रिय |
| दैव | १. | भगवान् की | रूप | १०. | रूप का |
| ईरितात् | २. | प्रेरणा पाकर | उपलम्भनम् ॥ | ११. | ज्ञान कराने वाली |
| अभूत । | ६. | उत्पन्न हुआ | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् की प्रेरणा पाकर स्पर्श तन्मात्रा वाले वायु से तेज उत्पन्न हुआ । और उससे रूप तन्मात्रा और रूप का ज्ञान कराने वाली नेत्रेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

## एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

द्रव्याकृतित्वं गुणता व्यक्तिसंस्थात्वमेव च ।
तेजस्त्वं तेजसः साध्वि रूपमात्रस्य वृत्तयः ॥३९॥

पदच्छेद—

द्रव्य आकृतित्वम् गुणता व्यक्ति संस्थात्वम् एव च ।
तेजस्त्वम् तेजसः साध्वि रूपमात्रस्य वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| द्रव्य | २. वस्तु का | तेजस्त्वम् | ८. सूक्ष्म तन्मात्रा रूप होना |
| आकृतित्वम् | ३. ज्ञान कराना | तेजसः | १२. तेज की |
| गुणता | ४. वस्तु के अन्दर रहना | साध्वि | १. हे मातः ! |
| व्यक्ति | ५. द्रव्य के | रूप | १०. रूप |
| संस्थात्वम् | ६. आकार-प्रकार का होना | मात्रस्य | ११. तन्मात्रा वाले |
| एव | ९. ये ही | वृत्तयः ॥ | १३. वृत्तियाँ हैं |
| च । | ७. और | | |

श्लोकार्थ—हे मातः ! वस्तु का ज्ञान कराना, वस्तु के अन्दर रहना, द्रव्य के आकार प्रकार का होना और सूक्ष्म तन्मात्रा रूप होना ये ही रूप तन्मात्रा वाले तेज की वृत्तियाँ हैं ॥

## चत्वारिंशः श्लोकः

द्योतनं पचनं पानमदनं हिममर्दनम् ।
तेजसो वृत्तयस्त्वेताः शोषणं क्षुत्तृडेव च ॥४०॥

पदच्छेद—

द्योतनम् पचनम् पानम् अदनम् हिम मर्दनम् ।
तेजसः वृत्तयः तु एताः शोषणम् क्षुत् तृड् एव च ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| द्योतनम् | २. चमकना | तेजसः वृत्तयः | १२. तेज के कार्य हैं |
| पचनम् | ३. पचाना | तु | १. तथा |
| पानम् | ९. पीना | एताः | १०. ये |
| अदनम् | ८. खाना | शोषणम्, क्षुत्, तृड | ६. सुखाना, भूख, प्यास लगना |
| हिम | ४. शीत को | एव | ११. ही |
| मर्दनम् । | ५. दूर करना | च ॥ | ७. और |

श्लोकार्थ—तथा चमकना, पचाना, शीत को, दूर करना, सुखाना, भूख, प्यास लगना और खाना, पीना ये ही तेज के कार्य हैं ॥

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

**रूपमात्राद्विकुर्वाणात्तेजसो दैवचोदितात् ।**
**रसमात्रमभूत्तस्मादम्भो जिह्वा रसग्रहः ॥४१॥**

पदच्छेद—

रूपमात्राम् विकुर्वाणात् तेजसः दैव चोदितात् ।
रसमात्रम् अभूत तस्मात् अम्भः जिह्वा रस ग्रहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रूपमात्राम् | ३. | रूप तन्मात्रामय | अभूत | ७. | उत्पन्न हुई (तथा) |
| विकुर्वाणात् | ५. | विकार होने पर (उससे) | तस्मात् | ८. | उस तन्मात्रा से |
| तेजसः | ४. | तेज में | अम्भः | ९. | जल (और) |
| दैव | १. | भगवान् की | जिह्वा | १२. | रसनेन्द्रिय हुई |
| चोदितात् । | २. | प्रेरणा से | रस | १०. | रस का |
| रसमात्रम् | ६. | रस तन्मात्रा | ग्रहः ॥ | ११. | ज्ञान कराने वाली |

श्लोकार्थ—भगवान् की प्रेरणा से रूप तन्मात्रामय तेज में विकार होने पर उससे रस तन्मात्रा उत्पन्न हुई तथा उस तन्मात्रा से जल और रस का ज्ञान कराने वाली रसनेन्द्रिय हुई ॥

## द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

**कषायो मधुरस्तिक्तः कट्वम्ल इति नैकधा ।**
**भौतिकानां विकारेण रस एको विभिद्यते ॥४२॥**

पदच्छेद—

कषायः मधुरः तिक्तः कटु अम्ल इति नैकधा ।
भौतिकानाम् विकारेण रसः एकः विभिद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कषायः | ५. | कषैला | नैकधा । | ११. | अनेक प्रकार का |
| मधुरः | ६. | मीठा | भौतिकानाम् | १. | भौतिक वस्तुओं के |
| तिक्तः | ७. | तीखा | विकारेण | २. | संयोग से |
| कटु | ८. | कड़ुवा (और) | रसः | ४. | रस |
| अम्ल | ९. | खट्टा | एकः | ३. | एक ही |
| इति | १०. | इस तरह | विभिद्यते ॥ | १२. | हो जाता है |

श्लोकार्थ—भौतिक वस्तुओं के संयोग से एक ही रस कषैला, मीठा, तीखा, कड़ुवा और खट्टा इस तरह अनेक प्रकार का हो जाता है ॥

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

**क्लेदनं पिण्डनं तृप्तिः प्राणनाप्यायनोन्दनम् ।**
**तापापनोदो भूयस्त्वमम्भसो वृत्तयस्त्विमाः ॥४३॥**

पदच्छेद—

क्लेदनम् पिण्डनम् तृप्तिः प्राणन अप्यायन अन्दनम् ।
ताप अपनोदः भूयस्त्वम् अम्भसः वृत्तयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्लेदनम् | १. | गीला करना | ताप, अपनोदः | ७. | गर्मी को शान्त करना |
| पिण्डनम् | २. | पिण्डी बनाना | भूयस्त्वम् | ९. | बार-बार प्रकट हो जाना |
| तृप्तिः | ३. | तृप्त करना | अम्भसः | ११. | जल की |
| प्राणन | ४. | जीवित रखना | वृत्तयः | १२. | वृत्तियाँ हैं |
| अप्यायन | ५. | प्यास बुझाना | तु | ८. | तथा |
| अन्दनम्। | ६. | कोमल बना देना | इमाः। | १०. | ये |

श्लोकार्थ—गीला करना, पिण्डी बनाना, तृप्त करना, जीवित रखना, प्यास बुझाना, कोमल बना देना, गर्मी को शान्त करना तथा बार-बार प्रकट हो जाना-ये जल की वृत्तियाँ हैं ॥

## चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

**रसमात्राद्विकुर्वाणादम्भसो दैवचोदितात् ।**
**गन्धमात्रमभूत्तस्मात्पृथ्वी घ्राणस्तु गन्धगः ॥४४॥**

पदच्छेद—

रसमात्रात् विकुर्वाणात् अम्भसः दैव चोदितात् ।
गन्धमात्रम् अभूत् तस्मात् पृथ्वी घ्राणः तु गन्धगः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रसमात्रात् | ३. | रस तन्मात्रा वाले | अभूत् | ७. | उत्पन्न हुई |
| विकुर्वाणात् | ५. | विकृत होने पर (उससे) | तस्मात् | ९. | उस तन्मात्रा से |
| अम्भसः | ४. | जल के | पृथ्वी | १०. | पृथ्वी (और) |
| दैव | १. | भगवान से | घ्राणः | १२. | घ्राणेन्द्रिय (उत्पन्न हुई) |
| चोदितात् । | २. | प्रेरित | तु | ८. | तथा |
| गन्धमात्रम् | ६. | गन्ध तन्मात्रा | गन्धगः ॥ | ११. | गन्ध का ज्ञान कराने वाली |

श्लोकार्थ—भगवान् से प्रेरित रस तन्मात्रा वाले जल के विकृत होने पर उससे गन्ध तन्मात्रा उत्पन्न हुई । तथा उस तन्मात्रा से पृथ्वी और गन्ध का ज्ञान कराने वाली घ्राणेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

**करम्भपूतिसौरभ्यशान्तोग्राम्लादिभिः पृथक् ।**
**द्रव्यावयववैषम्याद्गन्ध एको विभिद्यते ॥४५॥**

पदच्छेद—

करम्भ पूति सौरभ्य शान्त उग्र अम्ल आदिभिः पृथक् ।
द्रव्य अवयव वैषम्यात् गन्धः एकः विभिद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| करम्भ | ६. | मिश्रित | पृथक् । | १३. | अलग-अलग रूप में |
| पूति | ७. | दुर्गन्ध | द्रव्य | १. | वस्तु के |
| सौरभ्य | ८. | सुगन्ध | अवयव | २. | भागों को |
| शान्त | ९. | मधुर | वैषम्यात् | ३. | न्यूनाधिकता से |
| उग्र | १०. | तीव्र | गन्धः | ५. | गन्ध |
| अम्ल | ११. | खट्टी गन्ध | एकः | ४. | एक ही |
| आदिभिः | १२. | इत्यादि | विभिद्यते ॥ | १४. | कई प्रकार का हो जाता है |

श्लोकार्थ—वस्तु के भागों की न्यूनाधिकता से एक ही गन्ध मिश्रित, दुर्गन्ध, सुगन्ध, मधुर तीव्र, खट्टी गन्ध इत्यादि अलग-अलग रूप में कई प्रकार का हो जाता है ॥

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

**भावनं ब्रह्मणः स्थानं धारणं सद्विशेषणम् ।**
**सर्वसत्त्वगुणोद्भेदः पृथिवीवृत्तिलक्षणम् ॥४६॥**

पदच्छेद—

भावनम् ब्रह्मणः स्थानम् धारणम् सद् विशेषणम् ।
सर्वसत्त्व गुण उदभेदः पृथिवी वृत्ति लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भावनम् | २. | प्रतिमादि रूप में भावना करना | सर्वसत्त्व | ७. | सभी प्राणियों के |
| ब्रह्मणः | १. | ब्रह्म की | गुण | ८. | स्त्री पुरुषादि गुणों को |
| स्थानम् | ३. | आधार होना | उदभेदः | ९. | प्रकट करना (ये) |
| धारणम् | ४. | (जल आदि को) धारण करना | पृथिवी | १०. | पृथ्वी की |
| सद् | ५. | नित्य पदार्थों में | वृत्ति | ११. | वृत्ति के |
| विशेषणम् । | ६. | भेद करना | लक्षणम् ॥ | १२. | लक्षण हैं |

श्लोकार्थ—ब्रह्म की प्रतिमादि रूप में भावना करना, आधार होना, जल आदि को धारण करना, नित्य पदार्थों में भेद करना, सभी प्राणियों के स्त्री-पुरुषादि गुणों को प्रकट करना—ये पृथ्वी की वृत्ति के लक्षण हैं ॥

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

**नभोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तच्छ्रोत्रमुच्यते ।**
**वायोर्गुणविशेषोऽर्थो यस्य तत्स्पर्शनं विदुः ॥४७॥**

पदच्छेद— नभः गुणविशेषः अर्थः यस्य तत् श्रोत्रम् उच्यते ।
वायोः गुणविशेषः अर्थः यस्य तत् स्पर्शनम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नभः | १. | आकाश का | वायोः | ६. | वायु का |
| गुण | ३. | गुण शब्द | गुण | ११. | गुण स्पर्श |
| विशेषः | २. | विशेष | विशेषः | १०. | विशेष |
| अर्थः | ५. | विषय (है) | अर्थः | १३. | विषय (है) |
| यस्य | ४. | जिसका | यस्य | १२. | जिसका |
| तत् | ६. | वह | तत् | १४. | उसे |
| श्रोत्रम् | ७. | श्रवणेन्द्रिय | स्पर्शनम् | १५. | त्वग् इन्द्रिय |
| उच्यते । | ८. | कही जाती है | विदुः ॥ | १६. | कहते हैं |

श्लोकार्थ—आकाश का विशेष गुण शब्द जिसका विषय है वह श्रवणेन्द्रिय कही जाती है । वायु का विशेष गुण स्पर्श जिसका विषय है, उसे त्वग् इन्द्रिय कहते हैं ॥

## अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

**तेजोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तच्चक्षुरुच्यते ।**
**अम्भोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तद्रसनं विदुः ।**
**भूमेर्गुणविशेषोऽर्थो यस्य स घ्राण उच्यते ॥४८॥**

पदच्छेद— तेजः गुण विशेषः अर्थः यस्य तद् चक्षुः उच्यते ।
अम्भः गुणविशेषः अर्थः यस्य तद् रसनम् विदुः ।
भूमेः गुणविशेषः अर्थः यस्य सः घ्राणः उच्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेजः | १. | तेज का | अर्थः | ११. | विषय है |
| गुण | ३. | गुण रूप | यस्य | १०. | जिसका |
| विशेषः | २. | विशेष | तद्, रसनम् | १२. | उसे रसनेन्द्रिय |
| अर्थः | ५. | विषय (है) | विदुः । भूमेः | १३. | कहते हैं । पृथ्वी का |
| यस्य | ४. | जिसका | गुण | १५. | गुण गन्ध |
| तद्, चक्षुः | ६. | उसे नेत्रेन्द्रिय | विशेषः | १४. | विशेष |
| उच्यते । अम्भः | ७. | कहते हैं । जल का | अर्थः | १७. | विषय है |
| गुण | ९. | गुण रस | यस्य | १६. | जिसका |
| विशेषः | ८. | विशेष | सः | १८. | वह |
| | | | घ्राणः उच्यते ॥ | १९. | घ्राणेन्द्रिय कही गई है |

श्लोकार्थ—तेज का विशेष गुण रूप जिसका विषय है, उसे नेत्रेन्द्रिय कहते हैं । जल का विशेष गुणरस जिसका विषय है, उसे रसनेन्द्रिय कहते हैं । पृथ्वी का विशेष गुण गन्ध जिसका विषय है, वह घ्राणेन्द्रिय कही गई है ॥

## एकोनपञ्चाशः श्लोकः

परस्य दृश्यते धर्मो ह्यपरस्मिन् समन्वयात् ।
अतो विशेषो भावानां भूमावेवोपलक्ष्यते ॥४९॥

पदच्छेद—

परस्य दृश्यते धर्मः हि अपरस्मिन् समन्वयात् ।
अतः विशेषः भावानाम् भूमौ एव उपलक्ष्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परस्य | २. | कारण का | अतः | ७. | इसलिये |
| दृश्यते | ६. | पाया जाता है | विशेषः | ९. | विशेष गुण |
| धर्मः | ३. | गुण | भावानाम् | ८. | आकाशादि महाभूतों के (सारे) |
| हि | १. | क्योंकि | भूमौ | १०. | पृथ्वी में |
| अपरस्मिन् | ४. | कार्य में | एव | ११. | ही |
| समन्वयात् । | ५. | व्याप्त होने से (वह वहाँ) | उपलक्ष्यते ॥ | १२. | देखे जाते हैं |

श्लोकार्थ—क्योंकि कारण का गुण कार्य में व्याप्त होने से वह वहाँ पाया जाता है। इसलिये आकाशादि महाभूतों के सारे विशेष गुण पृथ्वी में देखे जाते हैं ॥

## पञ्चाशः श्लोकः

एतान्यसंहत्य यदा महदादीनि सप्त वै ।
कालकर्मगुणोपेतो जगदादिरुपाविशत् ॥५०॥

पदच्छेद—

एतानि संहत्य यदा महत् आदीनि सप्त वै ।
काल कर्म गुण उपेतः जगत् आदिः उपविशत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतानि | ४. | ये | काल | १०. | काल |
| संहत्य | ६. | अलग-अलग स्थित थे | कर्म | ११. | कर्म (और) |
| यदा | १. | जब | गुण | १२. | सत्त्वादि गुणों के |
| महत् | २. | महत्तत्त्व | उपेतः | १३. | सहित (उसमें) |
| आदीनि | ३. | अहंकार और पञ्च महाभूत | जगत् | ८. | संसार के |
| सप्त | ५. | सातों तत्त्व | आदिः | ९. | कारण (भगवान् श्री हरि ने) |
| वै । | ७ | उस समय | उपविशत् ॥ | १४. | प्रवेश किया |

श्लोकार्थ—जब महत्त्व, अहंकार और पञ्च महाभूत ये सातों तत्त्व अलग-अलग स्थित थे। उस समय संसार के कारण भगवान् श्री हरि ने काल, कर्म और सत्त्वादि गुणों के सहित उसमें प्रवेश किया ॥

## एकपञ्चाशः श्लोकः

ततस्तेनानुविद्धेभ्यो युक्तेभ्योऽण्डमचेतनम् ।
उत्थितं पुरुषो यस्मादुदतिष्ठदसौ विराट् ॥५१॥

पदच्छेद—

ततः तेन अनुविद्धेभ्यः युक्तेभ्यः अण्डम् चेतनम् ।
उत्थितम् पुरुषः यस्मात् उदतिष्ठत् असो विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | तदन्तर | उत्थितम् | ७. | उत्पन्न हुआ |
| तेन | २. | भगवान् श्री हरि से | पुरुषः | ११. | पुरुष की |
| अनुविद्धेभ्यः | ४. | गति पाकर (महत्तत्त्वादि से) | यस्मात् | ८. | जिस अण्ड से |
| युक्तेभ्यः | ३. | युक्त होने पर | उदतिष्ठत् | १२. | अभिव्यक्ति हुई है |
| अण्डम् | ६. | अण्डाकार ब्रह्माण्ड | असौ | ९. | उस |
| चेतनम् । | ५. | जड़ | विराट् ॥ | १०. | विराट् |

श्लोकार्थ—तदन्तर भगवान् श्री हरि से युक्त होने पर गति पाकर महत्तत्त्वादि से जड़ अण्डाकार ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ । जिस अण्ड से उस विराट् पुरुष की अभिव्यक्ति हुई है ।

## द्विपञ्चाशः श्लोकः

एतदण्डं विशेषाख्यं क्रमवृद्धैर्दशोत्तरैः ।
तोयादिभिः परिवृतं प्रधानेनावृतैर्बहिः ।
यत्र लोकवितानोऽयं रूपं भगवतो हरेः ॥५२॥

पदच्छेद—

एतद् अण्डम् विशेषः आख्यम् क्रम वृद्धैः दश उत्तरैः ।
तोय आदिभिः परिवृत्तम् प्रधानेन आवृतैः बहिः ।
यत्र लोक वितानः अयम् रूपम् भगवतः हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद्, अण्डम् | २. | यह, अण्ड | प्रधानेन | ११. | प्रकृति के (आवरण) से |
| विशेष, आख्यम् | १. | विशेष, नामक | आवृतैः | १२. | ढका है |
| क्रम | ३. | क्रमशः | बहिः । | १०. | सबके ऊपर |
| वृद्धैः | ६. | बड़े | यत्र | १६. | जिसमें |
| दश | ५. | दश गुने | लोक | १७. | सारे लोकों का |
| उत्तरैः । | ४. | एक के बाद एक | वितानः | १८. | विस्तार है |
| तोय | ७. | जल, तेज, वायु, आकाश | अयम् | १३. | यह |
| आदिभिः | ८. | अहंकार और महत्तत्त्व के | रूपम् | १५. | रूप है |
| परिवृत्तम् | ९. | आवरणों से घिरा है (तथा) | भगवतः हरिः ॥ | १४. | भगवान् श्री हरि का |

श्लोकार्थ— विशेष नामक यह अण्ड क्रमशः एक के बाद एक दश गुने बड़े जल, तेज, वायु आकाश, अहंकार और महत्तत्त्व के आवरणों से घिरा है । तथा सबके ऊपर प्रकृति के आवरण से ढका है । यह भगवान् श्री हरि का रूप है । जिससे सारे लोकों का विस्तार है ॥

## त्रिपञ्चाशः श्लोकः

हिरण्मयादण्डकोशादुत्थाय सलिलेशयात् ।
तमाविश्य महादेवो बहुधा निर्बिभेद खम् ॥५३॥

पदच्छेद—

हिरण्मयात् अण्डकोशात् उत्थाय सलिले शयात् ।
तम् आविश्य महादेवः बहुधा निर्विभेद खम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हिरण्मयात् | ३. | तेजोमय | तम् | ७. | पुनः उसमें |
| अण्डकोशात् | ४. | अण्डकोश से | आविश्य | ८. | प्रवेश किया (और) |
| उत्थाय | ५. | उठकर | महादेवः | ६. | विराट पुरुष ने |
| सलिले | १. | जल में | बहुधा | १०. | अनेक प्रकार से |
| शयात् । | २. | पड़े हुये | निर्विभेद | ११. | छिद्र किया |
| | | | खम् ॥ | ९. | उसके अन्दर |

श्लोकार्थ—जल में पड़े हुये तेजोमय अण्डकोश से उठकर विराट पुरुष ने पुनः उसमें प्रवेश किया; और उसके अन्दर अनेक प्रकार से छिद्र किया ॥

## चतुःपञ्चाशः श्लोकः

निरभिद्यतास्य प्रथमं मुखं वाणी ततोऽभवत् ।
वाण्या वह्निरथो नासे प्राणोतो घ्राण एतयोः ॥५४॥

पदच्छेद—

निरभिद्यत अस्य प्रथमम् मुखम् वाणी ततः अभवत् ।
वाण्याः वह्निः अथो नासो प्राणः अतः घ्राण एतयोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निरभिद्यत | ४. | उत्पन्न हुआ | वाण्याः | ८. | वाणी से |
| अस्य | २. | इस विराट् पुरुष का | विह्नः | ९. | उसके अधिष्ठाता अग्नि |
| प्रथमम् | १. | सबसे पहले | अथो | १०. | तत्पश्चात् |
| मुखम् | ३. | मुख | नासे | ११. | दोनों नासिका पुट (और) |
| वाणी | ६. | वाक् इन्द्रिय | प्राणः | १३. | प्राण (तया) |
| ततः | ५. | उससे | अतः घ्राण | १४. | उससे, घ्राणेन्द्रिय (उत्पन्न हुई) |
| अभवत् । | ७. | उत्पन्न हुई | एतयोः ॥ | १२. | उन दोनों से |

श्लोकार्थ—सबसे पहले इस विराट् पुरुष का मुख उत्पन्न हुआ, उससे वाक् इन्द्रिय उत्पन्न हुई । वाणी से उसके अधिष्ठाता अग्नि तत्पश्चात् दोनों नासिका पुट और उन दोनों से प्राण तथा उससे घ्राणेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

## पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

घ्राणाद्वायुरभिद्येतामक्षिणी चक्षुरेतयोः ।
तस्मात्सूर्यो व्यभिद्येतां कर्णौ श्रोत्रं ततो दिशः ॥५५॥

पदच्छेद—

घ्राणात् वायुः अभिद्येताम् अक्षिणी चक्षुः एतयोः ।
तस्मात् सूर्यः व्यभिद्येताम् कर्णौ श्रोत्रम् ततः दिशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| घ्राणात् | १. | घ्राणेन्द्रिय से (उसके) | तस्मात् | ७. | उससे |
| वायुः | २. | अधिष्ठाता वायु हुआ (उसके बाद) | सूर्यः | ८. | अधिष्ठाता सूर्य (उत्पन्न हुये) फिर |
| अभिद्येताम् | ६. | प्रकट हुईं | व्यभिद्येताम् | १०. | प्रकट हुये |
| अक्षिणी | ३. | दोनों आँखें (और) | कर्णौ | ९. | दोनों कान |
| चक्षुः | ५. | इन्द्रिय चक्षुः | श्रोत्रम् | १२. | श्रोत्रेन्द्रिय (और) |
| एतयोः । | ४. | इन दोनों की | ततः | ११. | उससे |
| | | | दिशः ॥ | १३. | दिशायें हुईं |

श्लोकार्थ—फिर घ्राणेन्द्रिय से उसके अधिष्ठाता वायु हुआ । उसके बाद दोनों आँखें और इन दोनों की इन्द्रिय चक्षुः प्रकट हुईं । उससे अधिष्ठाता सूर्य उत्पन्न हुये; फिर दोनों कान प्रकट हुये उससे श्रोत्रेन्द्रिय और दिशायें हुईं ।

## षट्पञ्चाशः श्लोकः

निर्बिभेद विराजस्त्वग्रोमश्मश्र्वादयस्ततः ।
तत ओषधयश्चासन् शिश्नं निर्बिभिदे ततः ॥५६॥

पदच्छेद—

निर्बिभेद विराजः त्वक् रोम श्मश्रु आदयः ततः ।
ततः ओषधयः च आसन् शिश्नम् निर्बिभिदे ततः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निर्बिभेद | ४. | उत्पन्न हुई (तथा) | ततः | ८. | तदनन्तर |
| विराजः | २. | विराट पुरुष की | ओषधयः | ९. | वनस्पतियाँ |
| त्वक् | ३. | त्वचा | च | ११. | और |
| रोम | ५. | (उससे) रोयें | आसन् | १०. | उत्पन्न हुईं |
| श्मश्रु | ६. | दाढ़ी-मूंछ | शिश्नम् | १३. | जननेन्द्रिय |
| आदयः | ७. | सिर के बाल इत्यादि हुये | निर्बिभिदे | १४. | प्रकट हुई |
| ततः ॥ | १. | उसके बाद | ततः । | १२. | उसके बाद |

श्लोकार्थ—उसके बाद विराट पुरुष की त्वचा उत्पन्न हुई; तथा उससे रोयें, दाढ़ी मूंछ सिर के बाल इत्यादि हुये । तदनन्तर वनस्पतियाँ उत्पन्न हुईं और उसके बाद जननेन्द्रिय प्रकट हुई ॥

## सप्तपञ्चाशः श्लोकः

**रेतस्तस्मादाप आसन्निरभिद्यत वै गुदम् ।**
**गुदादपानोऽपानाच्च मृत्युर्लोकभयङ्करः ॥५७॥**

पदच्छेद—

रेतः तस्मात् आपः आसन् निरभिद्यत वै गुदम् ।
गुदात् अपानः अपानात् च मृत्युः लोक भयंकरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रेतः | २. | वीर्य (और) | गुदात् | ८. | उस गुदा से |
| तस्मात् | १. | उस जननेन्द्रिय से | अपानः | ९. | अपान वायु |
| आपः | ३. | उसके देवता जल | अपानात् | ११. | अपान वायु से |
| आसन् | ४. | उत्पन्न हुये | च | १०. | और |
| निरभिद्यत | ७. | प्रकट हुई | मृत्युः | १४. | उसके देवता मृत्यु हुये |
| वै | ५. | उसके वाद | लोक | १२. | प्राणिमात्र को |
| गुदम् | ६. | गुदा इन्द्रिय | भयंकरः ॥ | १३. | भयभीत कर देने वाले |

श्लोकार्थ—उस जननेन्द्रिय से वीर्य और उसके देवता जल उत्पन्न हुये; उसके वाद गुदा इन्द्रिय प्रकट हुई । उस गुदा से अपान वायु और अपान वायु से प्राणिमात्र को भयभीत कर देने वाले उसके देवता मृत्यु हुये ॥

## अष्टपञ्चाशः श्लोकः

**हस्तौ च निरभिद्येतां बलं ताभ्यां ततः स्वराट् ।**
**पादौ च निरभिद्येतां गतिस्ताभ्यां ततो हरिः ॥५८॥**

पदच्छेद—

हस्तौ च निरभिद्येताम् बलम् ताभ्याम् ततः स्वराट् ।
पादौ च निरभिद्येताम् गतिः ताभ्याम् ततः हरिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हस्तौ | १. | दोनों हाथ | पादौ | ८. | दोनों पैर |
| च | ३. | और | च | १०. | तथा |
| निरभिद्येताम् | २. | प्रकट हुये | निरभिद्येताम् | ९. | प्रकट हुये |
| बलम् | ५. | बल (तथा) | गतिः | १२. | गमन शक्ति और |
| ताभ्याम् | ४. | उन दोनों से | ताभ्याम् | ११. | उन दोनों से |
| ततः | ७. | उसके बाद | ततः | १३. | उसके देवता |
| स्वराट् । | ६. | उसके देवता इन्द्र (हुये) | हरिः ॥ | १४. | भगवान् विष्णु (उत्पन्न हुये) |

श्लोकार्थ—दोनों हाथ प्रकट हुये और उन दोनों से बल तथा उसके देवता इन्द्र हुये उसके बाद दोनों पैर प्रकट हुये तथा उन दोनों से गमन शक्ति और उसके देवता भगवान् विष्णु उत्पन्न हुये ॥

## एकोनषष्टितमः श्लोकः

**नाड्योऽस्य निरभिद्यन्त ताभ्यो लोहितमाभृतम् ।**
**नद्यस्ततः समभवन्नुदरं निरभिद्यत ॥५९॥**

पदच्छेद—

नाड्य अस्य निरभिद्यन्त ताभ्यः लोहितम् आभृतम् ।
नद्यः ततः समभवन् उदरम् निरभिद्यत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाड्य | २. | नाड़ियाँ | नद्यः | ८. | उसके देवता नदियाँ |
| अस्य | १. | इस विराट पुरुष की | ततः | ७. | उससे |
| निरभिद्यन्त | ३. | उत्पन्न हुईं (और) | समभवन् | ९. | उत्पन्न हुईं |
| ताभ्यः | ४. | उनसे | उदरम् | १०. | तत्पश्चात् पेट |
| लोहितम् | ५. | रक्त | निरभिद्यतः ॥ | ११. | प्रकट हुआ |
| आभृतम् । | ६. | उत्पन्न हुआ | | | |

श्लोकार्थ—इस विराट पुरुष की नाड़ियाँ उत्पन्न हुईं; और उनसे रक्त उत्पन्न हुआ । उससे उसके देवता नदियाँ उत्पन्न हुईं । तत्पश्चात् पेट उत्पन्न हुआ ॥

## षष्ठितमः श्लोकः

**क्षुत्पिपासे ततः स्यातां समुद्रस्त्वेतयोरभूत् ।**
**अथास्य हृदयं भिन्नं हृदयान्मन उत्थितम् ॥६०॥**

पदच्छेद—

क्षुत् पिपासे ततः स्याताम् समुद्रः तु एतयोः अभूत् ।
अथ अस्य हृदयम् भिन्नम् हृदयात् मनः उत्थितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षुत् | २. | भूख | अथ | ८. | तदनन्तर |
| पिपासे | ३. | प्यास | अस्य | ९. | विराट् पुरुष का |
| ततः | १. | उस पेट से | हृदयम् | १०. | हृदय |
| स्याताम् | ४. | उत्पन्न हुई | भिन्नम् | ११. | प्रकट हुआ (और) |
| समुद्रः | ६. | देवता समुद्र | हृदयात् | १२. | हृदय से |
| तु एतयोः | ५. | तथा इन दोनों के | मनः | १३. | मन |
| अभूत् । | ७. | उत्पन्न हुये | उत्थितम् ॥ | १४. | उत्पन्न हुआ |

श्लोकार्थ—उस पेट से भूख, प्यास, उत्पन्न हुई तथा इन दोनों के देवता समुद्र उत्पन्न हुये । तदनन्तर विराट पुरुष का हृदय प्रकट हुआ और हृदय से मन उत्पन्न हुआ ।

## एकषष्ठितमः श्लोकः

**मनसश्चन्द्रमा जातो बुद्धिर्बुद्धेर्गिरां पतिः ।**
**अहङ्कारस्ततो रुद्रश्चित्तं चैत्यस्ततोऽभवत् ॥६१॥**

पदच्छेद—

मनसः चन्द्रमा जातः बुद्धिः बुद्धेः गिराम् पतिः ।
अहङ्कारः ततः रुद्रः चित्तम् चैत्यः ततः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनसः | १. | मन से | अहङ्कारः | ६. | अहंकार (और) |
| चन्द्रमाः | २. | चन्द्रमा | ततः | ८. | उसके बाद |
| जातः | ३. | उत्पन्न हुआ | रुद्रः | १०. | उसके देवता रुद्र (हुये) |
| बुद्धिः | ४. | (उससे) बुद्धि (और) | चित्तम् | ११. | तत्पश्चात् चित्त (और) |
| बुद्धेः | ५. | बुद्धि से | चैत्यः | १३. | क्षेत्रज्ञ आत्मा |
| गिराम् | ६. | वाणी के देवता | ततः | १२. | उससे (उसके देवता) |
| पतिः । | ७. | ब्रह्मा जी (उत्पन्न हुये) | अभवत् ॥ | १४. | उत्पन्न हुआ |

श्लोकार्थ—मनसे चन्द्रमा उत्पन्न हुआ । उससे बुद्धि और बुद्धि से वाणी के देवता ब्रह्मा जी उत्पन्न हुये । उसके बाद अहंकार और उसके देवता रुद्र हुये । तत्पश्चात् चित्त और उससे उसके देवता क्षेत्रज्ञ आत्मा उत्पन्न हुआ ॥

## द्वाषष्ठितमः श्लोकः

**एते ह्यभ्युत्थिता देवा नैवास्योत्थापनेऽशकन् ।**
**पुनराविविशुः खानि तमुत्थापयितुं क्रमात् ॥६२॥**

पदच्छेद—

एते हि अभ्युत्थिताः देवाः न एव अस्य उत्थापने अशकन् ।
पुनः आविविशुः खानि तम् उत्थापयितुम् क्रमात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एते | १. | ये | अशकन् । | ८. | समर्थ हो सके (तब) |
| हि | ४. | भी (जब) | पुनः | १२. | फिर से |
| अभ्युत्थिताः | २. | उत्पन्न हुये | आविविशुः | १४. | प्रवेश कर गये |
| देवाः | ३. | देवता | खानि | १३. | विराट पुरुष के शरीर में |
| न एव | ७. | नहीं | तम् | ९. | उस विराट पुरुष को |
| अस्य | ५. | इस विराट पुरुष को | उत्थापयितुम् | १०. | उठाने के लिये |
| उत्थापने | ६. | उठाने में | क्रमात् ॥ | ११. | क्रमशः |

श्लोकार्थ—ये उत्पन्न हुये देवता भी जब इस विराट पुरुष को उठाने में समर्थ नहीं हो सके तब उस विराट को उठाने के लिये क्रमशः फिर से विराट पुरुष के शरीर में प्रवेश कर गये ॥

## त्रिषष्ठितमः श्लोकः

**वह्निर्वाचा मुखं भेजे नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।**
**घ्राणेन नासिके वायुर्नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६३॥**

पदच्छेद—

वह्निः वाचा मुखम् भेजे न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
घ्राणेन नासिके वायुः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| वह्निः | १. अग्नि ने | | घ्राणेन | १०. घ्राणेन्द्रिय के साथ |
| वाचा | २. वाणी के साथ | | नासिके | ११. नासिका में (प्रवेश किया) |
| मुखम् | ३. मुख में | | वायुः | ९. वायु देवता ने |
| भेजे | ४. प्रवेश किया | | न | १४. नहीं |
| न | ७. नहीं | | उदतिष्ठत् | १५. उठा |
| उदतिष्ठत् | ८. उठा (तदनन्तर) | | तदा | १२. उससे भी |
| तदा | ५. उससे | | विराट् ॥ | १३. विराट् पुरुष |
| विराट् । | ६. विराट् पुरुष | | | |

श्लोकार्थ—अग्नि ने वाणी के साथ मुख में प्रवेश किया; उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर वायु देवता ने घ्राणेन्द्रिय के साथ नासिका में प्रवेश किया; उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

## चतुःषष्ठितमः श्लोकः

**अक्षिणी चक्षुषाऽऽदित्यो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।**
**श्रोत्रेण कर्णौ च दिशो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६४॥**

पदच्छेद—

अक्षिणी चक्षुषा आदित्यः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
श्रोत्रेण कर्णौ च दिशः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अक्षिणी | ३. आँखों में (प्रवेश किया) | | श्रोत्रेण | १०. श्रवणेन्द्रिय के साथ |
| चक्षुषा | २. नेत्र इन्द्रिय के साथ | | कर्णौ | ११. कानों में (प्रवेश किया) |
| आदित्यः | १. सूर्य देवता ने | | च | ८. तदनन्तर |
| न | ६. नहीं | | दिशः | ९. दिशाओं ने |
| उदतिष्ठत् | ७. उठा | | न | १४. नहीं |
| तदा | ४. उससे भी | | उदतिष्ठत् | १५. उठा |
| विराट् | ५. विराट् पुरुष | | तदा | १२. तो भी |
| | | | विराट् ॥ | १३. विराट् पुरुष |

श्लोकार्थ—सूर्य देवता ने नेत्र इन्द्रिय के साथ आँखों में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर दिशाओं ने श्रवणेन्द्रिय के साथ कानों में प्रवेश किया तो भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

## पञ्चषष्ठितमः श्लोकः

त्वचं रोमभिरोषध्यो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
रेतसा शिश्नमापस्तु नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६५॥

पदच्छेद—

त्वचम् रोमभिः ओषध्यः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
रेतसा शिश्नम् आपः तु न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| त्वचम् | ३. त्वचा इन्द्रिय में (प्रवेश किया) | | रेतसा | १०. वीर्य के साथ |
| रोमभिः | २. रोओं के साथ | | शिश्नम् | ११. जननेन्द्रिय में (प्रवेश किया) |
| ओषध्यः | १. वनस्पतियों ने | | आपः | ९. जल देवता |
| न | ६. नहीं | | तु | ८. तदनन्तर |
| उदतिष्ठत् | ७. उठा | | न | १४. नहीं |
| तदा | ४. उससे भी | | उदतिष्ठत् | १५. उठा |
| विराट् । | ५. विराट् पुरुष | | तदा | १२. उससे भी |
| | | | विराट् । | १३. विराट् पुरुष |

श्लोकार्थ—वनस्पतियों ने रोओं के साथ त्वचा इन्द्रिय में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा। तदनन्तर जल देवता ने वीर्य के साथ जननेन्द्रिय में प्रवेश किया। उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा।

## षट्षष्ठितमः श्लोकः

गुदं मृत्युरपानेन नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
हस्ताविन्द्रो बलेनैव नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६६॥

पदच्छेद—

गुदम् मृत्युः अपानेन न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
हस्तौ इन्द्रः बलेन एव न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| गुदम् | ३. गुदाइन्द्रिय में (प्रवेश किया) | | हस्तौ | १०. दोनों हाथों में |
| मृत्युः | १. मृत्यु ने | | इन्द्रः | ८. (तदनन्तर) इन्द्र देवता ने |
| अपानेन | २. अपान वायु के साथ | | बलेन | ९. बल के साथ |
| न | ६. नहीं | | एव | ११. प्रवेश किया |
| उदतिष्ठत् | ७. उठा | | न | १४. नहीं |
| तदा | ४. उससे भी | | उदतिष्ठत् | १५. उठा |
| विराट् । | ५. विराट् पुरुष | | तदा | १२. उससे भी |
| | | | विराट् ॥ | १३. विराट् पुरुष |

श्लोकार्थ—मृत्यु ने अपान वायु के साथ गुदा इन्द्रिय में प्रवेश किया उससे भी विराट्-पुरुष नहीं उठा। तदनन्तर इन्द्र देवता ने दोनों हाथों में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

## सप्तषष्ठितमः श्लोकः

विष्णुर्गत्यैव चरणौ नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
नाडीर्नद्यो लोहितेन नोदत्तिष्ठत्तदा विराट् ॥६७॥

पदच्छेद—

विष्णुः गत्या एव चरणौ न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
नाडीः नद्यः लोहितेन न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विष्णुः | १. | भगवान् विष्णु ने | नाडीः | ११. | नाड़ियों में (प्रवेश किया |
| गत्या | २. | गमन शक्ति के साथ | नद्यः | ९. | (तदनन्तर) नदियों ने |
| एव | ४. | प्रवेश किया | लोहितेन | १०. | रक्त के साथ |
| चरणौ | ३. | दोनों पैरों में | न | १४. | नहीं |
| न | ७. | नहीं | उदतिष्ठत् | १५. | उठा |
| उदतिष्ठत् | ८. | उठा | तदा | १२. | उससे भी |
| तदा | ५. | उससे भी | विराट् । | १३. | विराट् पुरुष |
| विराट् ॥ | ६. | विराट् पुरुष | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु ने गमन शक्ति के साथ दोनों पैरों में प्रवेश किया । उससे भी विराट्-पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर नदियों ने रक्त के साथ नाड़ियों में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

## अष्टषष्ठितमः श्लोकः

क्षुत्तृड्भ्यामुदरं सिन्धुर्नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
हृदयं मनसा चन्द्रो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६८॥

पदच्छेद—

क्षुत् तृड्भ्याम् उदरम् सिन्धुः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
हृदयं मनसा चन्द्रः न उदतिष्ठत् उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षुत् | २. | क्षुधा | हृदयं | ११. | हृदय में (प्रवेश किया) |
| तृड्भ्याम् | ३. | पिपासा के साथ | मनसा | १०. | मन के साथ |
| उदरम् | ४. | पेट में (प्रवेश किया) | चन्द्रः | ९. | चन्द्रमा ने |
| सिन्धुः | १. | समुद्र ने | न | १४. | नहीं |
| न | ७. | नहीं | उदतिष्ठत् | १५. | उठा |
| उदतिष्ठत् | ८. | उठा | तदा | १२. | उससे भी |
| तदा | ५. | उससे भी | विराट् ॥ | १३. | विराट् पुरुष |
| विराट् । | ६. | विराट् पुरुष | | | |

श्लोकार्थ—समुद्र ने क्षुधा, पिपासा के साथ पेट में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । चन्द्रमा ने मन के साथ हृदय में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

## एकोनसप्ततितमः श्लोकः

बुद्ध्या ब्रह्मापि हृदयं नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
रुद्रोऽभिमत्या हृदयं नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६९॥

पदच्छेद—

बुद्ध्या ब्रह्मा अपि हृदयम् न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
रुद्रः अभिमत्या हृदयम् न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बुद्ध्या | ३. | बुद्धि के साथ | रुद्रः | ९. | (तदनन्तर) रुद्र ने |
| ब्रह्मा | १. | ब्रह्मा जी ने | अभिमत्या | १०. | अहंकार के साथ |
| अपि | २. | भी | हृदयम् | ११. | हृदय में (प्रवेश किया) |
| हृदयम् | ४. | हृदय में (प्रवेश किया) | न | १४. | नहीं |
| न | ७. | नहीं | उदतिष्ठत् | १५. | उठा |
| उदतिष्ठत् | ८. | उठा | तदा | १२. | उससे भी |
| तदा | ५. | उससे भी | विराट् । | १३. | विराट् पुरुष |
| विराट् । | ६. | विराट् पुरुष | | | |

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने भी बुद्धि के साथ हृदय में प्रवेश किया; उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा। तदनन्तर रुद्र ने अहंकार के साथ हृदय में प्रवेश किया, उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा।

## सप्ततितमः श्लोकः

चित्तेन हृदयं चैत्यः क्षेत्रज्ञः प्राविशद्यदा ।
विराट् तदैव पुरुषः सलिलादुदतिष्ठत ॥७०॥

पदच्छेद—

चित्तेन हृदयम् चैत्यः क्षेत्रज्ञः प्राविशत् यदा ।
विराट् तद् एव पुरुषः सलिलात् उदतिष्ठत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चित्तेन | ५. | चित्त के साथ | विराट् | ९. | विराट् |
| हृदयम् | ४. | हृदय में | तद् | ७. | उसी |
| चैत्यः | २. | चित्त में रहने वाला | एव | ८. | समय |
| क्षेत्रज्ञः | ३. | आत्मा ने | पुरुषः | १०. | पुरुष |
| प्राविशत् | ६. | प्रवेश किया | सलिलात् | ११. | प्रलय काल के जल से |
| यदा । | १. | (किन्तु) जब | उदतिष्ठत् ॥ | १२. | उठ कर खड़ा हुआ |

श्लोकार्थ—किन्तु जब चित्त में रहने वाला आत्मा ने हृदय में चित्त के साथ प्रवेश किया। उसी समय विराट् पुरुष प्रलयकाल के जल से उठ कर खड़ा हो गया॥

## एकसप्ततितमः श्लोकः

**यथा प्रसुप्तं पुरुषं प्राणेन्द्रियमनोधियः ।**
**प्रभवन्ति विना येन नोत्थापयितुमोजसा ॥७१॥**

पदच्छेद—

यथा प्रसुप्तम् पुरुषम् प्राण इन्द्रिय मनः धिया ।
प्रभवन्ति विना येन न उत्थापयितुम् ओजसा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | क्योंकि | प्रभवन्ति | १३. | समर्थ होते है |
| प्रसुप्तम् | ६. | सोये हुये | विना | ७. | विना (केवल) |
| पुरुषम् | १०. | पुरुष की | येन | ६. | जिस आत्मा के |
| प्राण | २. | प्राण | न | १२. | नहीं |
| इन्द्रिय | ३. | इन्द्रिय | उत्थाप यितुम् | ११. | उठाने में |
| मनः | ४. | मन (और) | ओजसा ॥ | ८. | अपने बल से |
| धिया । | ५. | बुद्धि | | | |

श्लोकार्थ—क्योंकि प्राण, इन्द्रिय, मन और बुद्धि जिस आत्मा के विना केवल अपने बल से सोये हुये पुरुष को उठाने में समर्थ नहीं होते हैं ॥

## द्वासप्ततितमः श्लोकः

**तमस्मिन् प्रत्यगात्मानं धिया योगप्रवृत्तया ।**
**भक्त्या विरक्त्या ज्ञानेन विविच्यात्मनि चिन्तयेत् ॥७२॥**

पदच्छेद—

तम् अस्मिन् प्रत्यगात् आत्मानम् धिया योग प्रवृत्तया ।
भक्त्या विरक्त्या ज्ञानेन विविच्य आत्मनि चिन्तयेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | ७. | उस | भक्त्या | १. | (अतः) भक्ति |
| अस्मिन् | ५. | इस | विरक्त्या | २. | वैराग्य (और) |
| प्रत्यगात् | ८. | अन्तर्यामि | ज्ञानेन | ३. | ज्ञान से |
| आत्मानम् | ९. | परमात्मा का | विविच्य | ४. | विचार करके |
| धिया | १२. | एकाग्र बुद्धि से | आत्मनि | ६. | शरीर में (स्थित) |
| योग | १०. | समाधि में | चिन्तयेत् ॥ | १३. | चिन्तन करना चाहिये |
| प्रवृत्तया । | ११. | लगी हुई । | | | |

श्लोकार्थ—अतः भक्ति, वैराग्य और ज्ञान से विचार करके इस शरीर में स्थित उस अन्तर्यामि परमात्मा का समाधि में लगी हुई एकाग्र बुद्धि से चिन्तन करना चाहिये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये तत्त्वसमाम्नाये षड्विंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२६॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

सप्तविंशः अध्यायः

# प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—प्रकृतिस्थोऽपि पुरुषो नाज्यते प्राकृतैर्गुणैः ।
अविकारादकर्तृत्वान्निर्गुणत्वाज्जलार्कवत् ॥१॥

पदच्छेद—

प्रकृतिस्थः अपि पुरुषः न अज्यते प्राकृतैः गुणैः ।
अविकारात् कर्तृत्वात् निर्गुणत्वात् जल अर्कवत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रकृतिस्थः | १. | प्रकृति में स्थित रहकर | गुणैः । | ७. | सुख-दुःखादि धर्मों में |
| अपि | २. | भी | अविकारात् | १०. | (क्योंकि वह) निर्विकार है (किसी का) |
| पुरुषः | ३. | आत्मा | कर्तृत्वात् | ११. | कर्ता नहीं है (और) |
| न | ८. | नहीं | निर्गुणत्वात् | १२. | निर्गुण है |
| अज्यते | ९. | लिप्त होता है | जल | ४. | जल में (प्रतिबिम्बित) |
| प्राकृतैः | ६. | प्रकृति के | अर्कवत् ॥ | ५. | सूर्य के समान |

श्लोकार्थ—प्रकृति में स्थित रहकर भी आत्मा जल में प्रतिबिम्बित सूर्य के समान प्रकृति के सुख-दुःखादि धर्मों में लिप्त नहीं होता है । क्योंकि वह निर्विकार है किसी का कर्ता नहीं है और निर्गुण है ॥

# द्वितीयः श्लोकः

स एष यर्हि प्रकृतेर्गुणेष्वभिविषज्जते ।
अहंक्रियाविमूढात्मा कर्तास्मीत्यभिमन्यते ॥२॥

पदच्छेद—

सः एषः यर्हि प्रकृतेः गुणेषु अभिविषज्जते ।
अहंक्रिया विमूढात्मा कर्ता अस्मि इति अभिमन्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वही | अहंक्रिया | ७. | अहंकार से |
| एषः | २. | आत्मा | विमूढात्मा | ८. | मोहित बुद्धि होकर |
| यर्हि | ३. | जब | कर्ता | ९. | सब का कर्त्ता |
| प्रकृतेः | ४. | प्रकृति के | अस्मि | १०. | हूँ |
| गुणेषु | ५. | गुणों में | इति | ११. | इस प्रकार |
| अभिविषज्जते । | ६. | लिप्त हो जाता है (तब) | अभिमन्यते ॥ | १२. | मानने लगता है |

श्लोकार्थ—वही आत्मा जब प्रकृति के गुणों में लिप्त हो जाता है । तब अहंकार से मोहित बुद्धि होकर सब का कर्ता हूँ इस प्रकार मानने लगता है ॥

## तृतीयः श्लोकः

**तेन संसारपदवीमवशोऽभ्येत्य निर्वृतः ।**
**प्रासङ्गिकैः कर्मदोषैः सदसन्मिश्रयोनिषु ॥३॥**

पदच्छेद—

तेन संसार पदवीम् अवशः अभ्येत्य निवृतः ।
प्रासङ्गिकैः कर्मदोषैः सत् असत् मिश्र योनिषु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेन | ३. | उस अभिमान के कारण | प्रासङ्गिकैः | ७. | प्रकृति के सङ्ग से किये गये |
| संसार | ४. | संसार के (जन्म-मृत्यु के) | कर्मदोषैः | ८. | कर्मों के दोषों से |
| पदवीम् | ५. | चक्र में | सत् | ९. | उत्तम |
| अवशः | १. | स्वतन्त्र (और) | असत् | ११. | अधम |
| अभ्येत्य | ६. | फंसकर | मिश्र | १०. | मध्यम (और) |
| निवृतः । | २. | शान्तानन्द आत्मा | योनिषु ॥ | १२. | योनियों में (भटकता रहता है) |

श्लोकार्थ—स्वतन्त्र और शान्तानन्द आत्मा उस अभिमान के कारण संसार के जन्म-मृत्यु के चक्र में फंसकर प्रकृति के सङ्ग से किये गये कर्मों के दोषों से उत्तम, मध्यम और अधम योनियों में भटकता रहता है ।

## चतुर्थः श्लोकः

**अर्थे ह्यविद्यमानेऽपि संसृतिर्न निवर्तते ।**
**ध्यायतो विषयानस्य स्वप्नेऽनर्थागमो यथा ॥४॥**

पदच्छेद—

अर्थे हि अविद्यमाने अपि संसृतिः न निवर्तते ।
ध्यायतो विषयान् अस्य स्वप्ने अनर्थ आगमः यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्थे हि | ५. | (उसी प्रकार) संसार के | ध्यायतो | ९. | सुख-दुःख की प्राप्ति होती है |
| अविद्यमाने | ६. | असत् होने पर | विषयान् | ८. | विषयों में |
| अपि | ७. | भी | अस्य | १०. | इस पुरुष का |
| संसृतिः | ११. | आवागमन | स्वप्ने | २. | स्वप्न में |
| न | १२. | नहीं | अनर्थ | ३. | वस्तु के अभाव में भी |
| निवर्तते । | १३. | समाप्त होता है | आगमः | ४. | ध्यान रहने से |
| | | | यथा । | १. | जैसे |

श्लोकार्थ—जैसे स्वप्न में वस्तुओं के अभाव में भी सुख-दुःख की प्राप्ति होती है । उसी प्रकार संसार के असत् होने पर भी विषयों में ध्यान रहने से इस पुरुष का आवागमन समाप्त नहीं होता है ॥

## पञ्चमः श्लोकः

**अतएव शनैश्चित्तं प्रसक्तमसतां पथि ।**
**भक्तियोगेन तीव्रेण विरक्त्या च नयेद्वशम् ।।५।।**

पदच्छेद—

अतएव शनैः चित्तम् प्रसक्तम् सताम् पथि ।
भक्तियोगेन तीव्रेण विरक्त्या च नयेत् वशम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अतएव | १. | इसीलिये | भक्तियोगेन | ७. | भक्ति योग से |
| शनैः | ६. | धीरे-धीरे | तीव्रेण | ६. | तीव्र |
| चित्तम् | ५. | चित्त को | विरक्त्या | ९. | वैराग्य से |
| प्रसक्तम् | ४. | फंसे हुये | च। | ८. | और |
| सताम् | २. | असत | नयेत् | ११. | करे |
| पथि । | ३. | मार्ग में | वशम् ।। | १०. | वश में |

श्लोकार्थ—इसीलिये असत् मार्ग में फँसे हुये चित्त को धीरे-धीरे तीव्र भक्ति योग से और वैराग्य से वश में करे ।

## षष्ठः श्लोकः

**यमादिभिर्योगपथैरभ्यसञ् श्रद्धयान्वितः ।**
**मयि भावेन सत्येन मत्कथाश्रवणेन च ।।६।।**

पदच्छेद—

यम आदिभिः योगपथैः अभ्यसन् श्रद्धया अन्वितः ।
मयि भावेन सत्येन मत् कथा श्रवणेन च ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यम | १०. | यम-नियम | मयि | १. | मेरे प्रति |
| आदिभिः | ११. | इत्यादि | भावेन | ३. | भाव से |
| योगपथैः | १२. | अष्टाङ्ग योग के मार्ग से | सत्येन | २. | शुद्ध |
| अभ्यसन् | १३. | अभ्यास करना चाहिये | मत् | ४. | मेरी |
| श्रद्धया | ८. | श्रद्धा से | कथा | ५. | कथा के |
| अन्वितः । | ९. | युक्त होकर | श्रवणेन | ६. | श्रवण से |
| | | | च ।। | ७. | और |

श्लोकार्थ—मेरे प्रति शुद्ध भाव से मेरी कथा के श्रवण से और श्रद्धा से शुद्ध होकर यम-नियम इत्यादि अष्टाङ्ग योग के मार्ग से अभ्यास करना चाहिये ।।

## सप्तमः श्लोकः

सर्वभूतसमत्वेन निर्वैरेणाप्रसङ्गतः ।
ब्रह्मचर्येण मौनेन स्वधर्मेण बलीयसा ॥७॥

पदच्छेद—

सर्वभूत समत्वेन निर्वैरेण अप्रसङ्गतः ।
ब्रह्मचर्येण मौनेन स्वधर्मेण बलीयसा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्वभूत | २. | सभी प्राणियों के प्रति | ब्रह्मचर्येण | ५. | ब्रह्मचर्य (और) |
| समत्वेन | ३. | समभाव | मौनेन | ६. | मौन रखकर |
| निर्वैरेण | ४. | मैत्री भाव | स्वधर्मेण | ८. | अपने धर्म का (अनुष्ठान करे) |
| अप्रसङ्गतः । | १. | आसक्ति से रहित होकर | बलीयसा ॥ | ७. | भगवान् में समर्पण करके |

श्लोकार्थ— आसक्ति से रहित होकर सभी प्राणियों के प्रति समभाव, मैत्री भाव, ब्रह्मचर्य और मौन रखकर भगवान् में समर्पण करके अपने धर्म का अनुष्ठान करे ॥

## अष्टमः श्लोकः

यदृच्छयोपलब्धेन सन्तुष्टो मितभुङ् मुनिः ।
विविक्तशरणः शान्तो मैत्रः करुण आत्मवान् ॥८॥

पदच्छेद—

यदृच्छया उपलब्धेन सन्तुष्टः मित भुक् मुनिः ।
विविक्त शरणः शान्तः मैत्रः करुण आत्मवान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदृच्छया | १. | अपने-आप | विविक्त | ६. | एकान्त स्थान में |
| उपलब्धेन | २. | प्राप्त हुये विषयों से | शरणः | ७. | निवास करे (उससे) |
| सन्तुष्टः | ३. | सन्तुष्ट रहकर | शान्तः | ८. | शान्ति |
| मित | ४. | थोड़ा | मैत्रः | ९. | अनुराग |
| भुक् | ५. | भोजन करे (और) | करुण | १०. | करुणा (और) |
| मुनिः । | ६. | मनन पूर्वक | आत्मवान् ॥ | ११. | आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है |

श्लोकार्थ—अपने-आप प्राप्त हुये विषयों से सन्तुष्ट रहकर थोड़ा-भोजन करे और मनन पूर्वक एकान्त स्थान में निवास करे । उससे शान्ति, अनुराग, करुणा और आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है ॥

## नवमः श्लोकः

सानुबन्धे च देहेऽस्मिन्नकुर्वन्नसदाग्रहम् ।
ज्ञानेन दृष्टतत्त्वेन प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥९॥

पदच्छेद—

सानुबन्धे च देहे अस्मिन् अकुर्वन् असद् आग्रहम् ।
ज्ञानेन दृष्ट तत्त्वेन प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सानुबन्धे | ४. | बन्धु-बान्धवों में | ज्ञानेन | ७. | ज्ञान से |
| च | ३. | और | दृष्ट | १२. | दर्शन करे |
| देहे | २. | शरीर में | तत्त्वेन | ११. | वास्तविक स्वरूप का |
| अस्मिन् | १. | इस | प्रकृतेः | ८. | प्रकृति के |
| अकुर्वन् | ६. | रक्खे (तथा) | पुरुषस्य | १०. | पुरुष के |
| असद्-आग्रहम् । | ५. | असत्य, बुद्धि | च ॥ | ९. | और |

श्लोकार्थ—इस शरीर में और बन्धु-बान्धवों में असत्य, बुद्धि रक्खे । तथा ज्ञान से प्रकृति के और पुरुष के वास्तविक स्वरूप का दर्शन करे ॥

## दशमः श्लोकः

निवृत्तबुद्ध्यवस्थानो दूरीभूतान्यदर्शनः ।
उपलभ्यात्मनाऽऽत्मानं चक्षुषेवार्कमात्मदृक् ॥१०॥

पदच्छेद—

निवृत्त बुद्धिः अवस्थानः दूरीभूत अन्य दर्शनः ।
उपलभ्य आत्मना आत्मानम् चक्षुषा इव अर्कम् आत्म दृक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निवृत्त | ३. | ऊपर उठकर | आत्मना | ७. | अन्तःकरण से |
| बुद्धिः | १. | बुद्धि की | आत्मानम् | ८. | आत्मा को |
| अवस्थानः | २. | तीनों अवस्थाओं से | चक्षुषा | १३. | नेत्रों से |
| दूरीभूत | ६. | न करे (किन्तु) | इव | १२. | जैसे |
| अन्य | ४. | दूसरे का | अर्कम् | १४. | सूर्य का (दर्शन किया जाता है) |
| दर्शनः । | ५. | दर्शन | आत्म | १०. | आत्मा का |
| उपलभ्य | ९. | प्राप्त करके | दृक् ॥ | ११. | दर्शन करे |

श्लोकार्थ—बुद्धि की तीनों अवस्थाओं से ऊपर उठकर दूसरे का दर्शन न करे । किन्तु अन्तःकरण से आत्मा को प्राप्त करके आत्मा का दर्शन करे । जैसे नेत्रों से सूर्य का दर्शन किया जाता है ॥

## एकादशः श्लोकः

**मुक्तलिङ्गं सदाभासमसति प्रतिपद्यते ।**
**सतो बन्धुमसच्चक्षुः सर्वानुस्यूतमद्वयम् ॥११॥**

पदच्छेद—

मुक्त लिङ्गम् सत् आभासम् असति प्रतिपद्यते ।
सतः बन्धुम् असत् चक्षुः सर्वं अनुस्यूतम् अद्वयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुक्त | २. | रहित है | सतः | ७. | वह प्रकृति आदि सत् कारण का |
| लिङ्गम् | १. | यह आत्मा सूक्ष्म शरीर से | बन्धुम् | ८. | अधिष्ठान है |
| सत् | ४. | उस सत् का | असत् | ९. | देहादि असत् वस्तुओं का |
| आभासम् | ५. | आभास | चक्षुः | १०. | प्रकाशक है |
| असति | ३. | अहंकारादि असत् वस्तुओं में | सर्वं | ११. | वह सभी पदार्थों में |
| प्रतिपद्यते । | ६. | होता है | अनुस्यूतम् | १२. | व्याप्त |
| | | | अद्वयम् ॥ | १३. | अद्वितीय तत्त्व है |

श्लोकार्थ—यह आत्मा सूक्ष्म शरीर से रहित है । अहंकारादि असत् वस्तुओं में उस सत् का आभास होता है । वह प्रकृति आदि सत् कारण का अधिष्ठान है, देहादि असत् वस्तुओं का प्रकाशक है । वह सभी पदार्थों में व्याप्त अद्वितीय तत्त्व है ॥

## द्वादशः श्लोकः

**यथा जलस्थ आभासः स्थलस्थेनावदृश्यते ।**
**स्वाभासेन तथा सूर्यो जलस्थेन दिवि स्थितः ॥१२॥**

पदच्छेद—

यथा जलस्थः आभासः स्थलस्थेन अवदृश्यते ।
स्व आभासेन तथा सूर्यः जलस्थेन दिवि स्थितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे | स्व | ३. | अपनी |
| जलस्थः | ५. | जल में स्थित | आभासेन | ४. | परछाई से |
| आभासः | ६. | सूर्य का प्रतिबिम्ब | तथा | ८. | उसी प्रकार |
| स्थलस्थेन | २. | दीवार पर पड़ी | सूर्यः | १२. | सूर्य का (ज्ञान होता है) |
| अवदृश्यते । | ७. | ज्ञात होता है | जलस्थेन | ९. | जल में स्थित उस प्रतिबिम्ब से |
| दिवि | १०. | आकाश में | स्थितः ॥ | ११. | विद्यमान |

श्लोकार्थ—जैसे दीवार पर पड़ी अपनी परछाई से जल में स्थित, सूर्य का प्रतिबिम्ब ज्ञात होता है । उसी प्रकार जल में स्थित उस प्रतिबिम्ब से आकाश में विद्यमान सूर्य का ज्ञान होता है ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

एवं त्रिवृदहङ्कारो भूतेन्द्रियमनोमयैः ।
स्वाभासैर्लक्षितोऽनेन सदाभासेन सत्यदृक् ॥१३॥

पदच्छेद—

एवम् त्रिवृत् अहंकारः भूत इन्द्रिय मनोमयैः ।
स्वाभासैः लक्षितः अनेन सत् आभासेन सत्य दृक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | उसी प्रकार | स्वाभासैः | ५. | अपने आभास से |
| त्रिवृत् | ६. | वैकारिकादि तीनों प्रकार का | लक्षितः | ११. | ज्ञात होता है (और) |
| अहंकारः | ७. | अहंकार (और) | अनेन | १०. | इस अहंकार से |
| भूत | २. | शरीर | सत् | ८. | सत् स्वरूप आत्मा के |
| इन्द्रिय | ३. | इन्द्रिय और | आभासेन | ९. | आभास से युक्त |
| मनोमयैः | ४. | मन पर पड़े | सत्य | १२. | सत्य स्वरूप परमात्मा का |
| | | | दृक् ॥ | १३. | दर्शन होता है |

श्लोकार्थ—उसी प्रकार शरीर इन्द्रिय और मन पर पड़े अपने आभास से वैकारिकादि तीनों प्रकार का अहंकार और सत् स्वरूप आत्मा के आभास से युक्त इस अहंकार से ज्ञात होता है और सत्य स्वरूप भगवान् परमात्मा का दर्शन होता है ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

भूतसूक्ष्मेन्द्रियमनोबुद्ध्यादिष्विह निद्रया ।
लीनेष्वसति यस्तत्र विनिद्रो निरहंक्रियः ॥१४॥

पदच्छेद—

भूतसूक्ष्म इन्द्रिय मनः बुद्धिः आदिषु इह निद्रया ।
लीनेषु असति यः तत्र विनिद्रः निरहंक्रियः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूत सूक्ष्म | ३. | सूक्ष्म तन्मात्रा | लीनेषु | ८. | लीन हो जाने पर |
| इन्द्रिय | ४. | इन्द्रिय | असति | १०. | इस शरीर में |
| मनः | ५. | मन | यः | ११. | जो (आत्मा है वह) |
| बुद्धिः | ६. | बुद्धि | तत्र | ९. | वहाँ |
| आदिषु | ७. | इत्यादि के | विनिद्रः | १२. | निद्रा से (और) |
| इह | १. | सुषुप्ति अवस्था में | निरहंक्रियः ॥ | १३. | अहंकार से रहित रहता है |
| निद्रया । | २. | नींद से | | | |

श्लोकार्थ—सुषुप्ति अवस्था में नींद से सूक्ष्म तन्मात्रा इन्द्रिय, मन, बुद्धि, इत्यादि के लीन हो जाने पर वहाँ इस शरीर में जो आत्मा है वह निद्रा से और अहंकार से रहित रहता है ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**मन्यमानस्तदाऽऽत्मानमनष्टो नष्टवन्मृषा ।**
**नष्टेऽहङ्करणे द्रष्टा नष्टवित्त इवातुरः ॥१५॥**

पदच्छेद—

मन्यमानः तदा आत्मानम् अनष्टः नष्टवत् मृषा ।
नष्टे अहंकरणे द्रष्टा नष्ट वित्त इव आतुरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मन्यमानः | ९. | मानता हुआ | नष्टे | ४. | नष्ट हो जाने पर |
| तदा | ५. | उस समय | अहंकरणे | ३. | अहंकार के |
| आत्मानम् | ७. | अपने को | द्रष्टा | १. | (यद्यपि) साक्षी आत्मा |
| अनष्टः | २. | अविनाशी है (फिर भी मनुष्य) | नष्ट | ११. | नष्ट हो गया (हो उसके) |
| नष्टवत् | ८. | नष्ट हुये की भाँति | वित्त | १०. | जिसका धन |
| मृषा । | ६. | भ्रान्ति से | इव आतुरः ॥ | १२. | समान व्याकुल हो जाता है |

श्लोकार्थ—यद्यपि साक्षी आत्मा अविनाशी है फिर भी मनुष्य अहंकार के नष्ट हो जाने पर उस समय भ्रान्ति से अपने को नष्ट हुये की भाँति मानता हुआ जिसका धन नष्ट हो गया हो उसके समान व्याकुल हो जाता है ॥

## षोडशः श्लोकः

**एवं प्रत्यवमृश्यासावात्मानं प्रतिपद्यते ।**
**साहङ्कारस्य द्रव्यस्य योऽवस्थानमनुग्रहः ॥१६॥**

पदच्छेद—

एवम् प्रत्यवमृश्य असौ आत्मानम् प्रतिपद्यते ।
स अहंकारस्य द्रव्यस्य यः अवस्थानम् अनुग्रहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | स अहंकारस्य | ७. | अहंकार के साथ-साथ |
| प्रत्यवमृश्य | २. | विचार करके | द्रव्यस्य | ८. | सभी द्रव्यों का |
| असौ | ३. | वह पुरुष | यः | ६. | जो आत्मा |
| आत्मानम् | ४. | आत्मा को | अवस्थानम् | ९. | अधिष्ठान (और) |
| प्रतिपद्यते । | ५. | पहिचानता है | अनुग्रहः ॥ | १०. | प्रकाशक है |

श्लोकार्थ—इस प्रकार विचार करके वह पुरुष आत्मा को पहिचानता है जो आत्मा अहंकार के साथ सभी द्रव्यों का अधिष्ठान और प्रकाशक है ॥

## सप्तदशः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—पुरुषं प्रकृतिर्ब्रह्मन्न विमुञ्चति कर्हिचित् ।
अन्योन्यापाश्रयत्वाच्च नित्यत्वादनयोः प्रभो ॥१७॥

पदच्छेद—

पुरुषम् प्रकृतिः ब्रह्मन् न विमुञ्चति कर्हिचित् ।
अन्योन्य अपाश्रयत्वात् च नित्यत्वात् अनयोः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| पुरुषम् | ३. पुरुष को | | अन्योन्य | ११. एक दूसरे पर |
| प्रकृतिः | २. प्रकृति | | अपाश्रयत्वात् | १२. आश्रित हैं |
| ब्रह्मन् | १. हे ब्रह्मन् ! | | च | १०. और |
| न | ५. नहीं | | नित्यत्वात् । | ६. नित्य है |
| विमुञ्चति | ६. छोड़ सकती है (क्योंकि) | | अनयोः | ८. ये दोनों |
| कर्हिचित् । | ४. कभी भी | | प्रभो ॥ | ७. हे भगवन् |

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! प्रकृति, पुरुष को कभी भी नहीं छोड़ सकती है । क्योंकि हे भगवन् ! ये दोनों नित्य हैं, और एक दूसरे पर आश्रित हैं ॥

## अष्टादशः श्लोकः

यथा गन्धस्य भूमेश्च न भावो व्यतिरेकतः ।
अपां रसस्य च यथा तथा बुद्धेः परस्य च ॥१८॥

पदच्छेद—

यथा गन्धस्य भूमेः च न भावः व्यतिरेकतः ।
अपाम् रसस्य च यथा तथा बुद्धेः परस्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यथा | १. जैसे | अपाम् | ६. जल |
| गन्धस्य | २. गन्ध | रसस्य | ८. रस की |
| भूमेः | ४. पृथ्वी की (तथा) | च | ७. और |
| च | ३. और | यथा | ५. जैसे |
| न | ११. नहीं (होती) | तथा | १२. उसी तरह |
| भावः | १०. स्थिति | बुद्धेः | १३. प्रकृति |
| व्यतिरेकतः । | ६. अलग-अलग | परस्य | १५. पुरुष की (भी स्थिति अलग नहीं हो सकती है) |
| | | च ॥ | १४. और |

श्लोकार्थ—जैसे गन्ध और पृथ्वी की तथा जैसे जल और रस की अलग-अलग स्थिति नहीं होती है । उसी तरह प्रकृति और पुरुष की भी स्थिति अलग नहीं हो सकती है ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

**अकर्तुः कर्मबन्धोऽयं पुरुषस्य यदाश्रयः ।**
**गुणेषु सत्सु प्रकृतेः कैवल्यं तेष्वतः कथम् ॥१९॥**

पदच्छेद—

अकर्तुः कर्मबन्धः अयम् पुरुषस्य यद् आश्रयः ।
गुणेषु सत्सु प्रकृतेः कैवल्यम् तेषु अतः कथम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अकर्तुः | १. | कर्ता न होने पर भी | गुणेषु | १०. | गुणों के |
| कर्मबन्धः | ६. | संसार का बन्धन (होता है) | सत्सु | ११. | रहते |
| अयम् | ५. | यह | प्रकृतेः | ८. | प्रकृति के |
| पुरुषस्य | २. | पुरुष को | कैवल्यम् | १२. | मोक्ष |
| यद् | ३. | जिस | तेषु | ९. | उन |
| आश्रयः । | ४. | कारण से | अतः | ७. | इसलिये |
| | | | कथम् ॥ | १३. | कैसे हो सकता है |

श्लोकार्थ—कर्ता न होने पर भी पुरुष को जिस कारण से यह संसार का बन्धन होता है । इसलिये प्रकृति के उन गुणों के रहते मोक्ष कैसे हो सकता है ॥

## विंशः श्लोकः

**क्वचित् तत्त्वावमर्शेन निवृत्तं भयमुल्वणम् ।**
**अनिवृत्तनिमित्तत्वात्पुनः प्रत्यवतिष्ठते ॥२०॥**

पदच्छेद—

क्वचित् तत्त्व अवमर्शेन निवृत्तम् भयम् ।
उल्वणम् अनिवृत्त निमित्तत्वात् पुनः प्रत्यवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्वचित् | ५. | यदि कहीं | उल्वणम् | ३. | संसार का तीव्र |
| तत्त्व | १. | तत्त्वों के | अनिवृत्त | ८. | नाश न होने से |
| अवमर्शेन | २. | विवेक से | निमित्तत्वात् | ७. | कारण रूप गुणों का |
| निवृत्तम् | ६. | समाप्त भी हो जाये (तो) | पुनः | ९. | वह (फिर से) |
| भयम् | ४. | भय | प्रत्यवतिष्ठते ॥ | १०. | उपस्थित हो सकता है |

श्लोकार्थ—तत्त्वों के विवेक से संसार का तीव्र भय समाप्त भी हो जाये तो कारण रूप गुणों का नाश न होने से वह फिर से उपस्थित हो सकता है ॥

## एकविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अनिमित्तनिमित्तेन स्वधर्मेणामलात्मना ।
तीव्रया मयि भक्त्या च श्रुतसम्भृतया चिरम् ॥२१॥

पदच्छेद—

अनिमित्त निमित्तेन स्वधर्मेण अमल आत्मना ।
मयि भक्त्या च श्रुत सम्भृतया चिरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अनिमित्त | १. | निष्काम | मयि | १०. | मेरी |
| निमित्तेन | २. | कर्म से | भक्त्या | १२. | भक्ति से (प्रकृति के गुणों का नाश हो जाता है) |
| स्वधर्मेण | ३. | अपने कर्तव्य पालन से | च | ६. | और |
| अमल | ४. | शुद्ध | श्रुत | ८. | सुनी हुई कथाओं में |
| आत्मना । | ५. | अन्तःकरण से | सम्भृतया | ९. | पुष्ट हुई |
| तीव्रया | ११. | तीव्र | चिरम् ॥ | ७. | बहुत समय तक |

श्लोकार्थ—निष्काम कर्म से अपने कर्तव्य पालन से शुद्ध अन्तःकरण से और बहुत समय तक सुनी हुई कथाओं से पुष्ट हुई मेरी तीव्र भक्ति से प्रकृति के गुणों का नाश हो जाता है ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

ज्ञानेन दृष्टतत्त्वेन वैराग्येण बलीयसा ।
तपोयुक्तेन योगेन तीव्रेणात्मसमाधिना ॥२२॥

पदच्छेद—

ज्ञानेन दृष्ट तत्त्वेन वैराग्येण बलीयसा ।
तपः युक्तेन योगेन तीव्रेण आत्म समाधिना ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञानेन | ३. | ज्ञान से | तपः | ६. | तपस्या से |
| दृष्ट | २. | साक्षात्कार कराने वाले | युक्तेन | ७. | परिपूर्ण |
| तत्त्वेन | १. | तत्त्वों का | योगेन | ८. | योगाभ्यास से (और) |
| वैराग्येण | ५. | वैराग्य से | तीव्रेण | १०. | तीव्र |
| बलीयसा । | ४. | दृढ़ | आत्म | ९. | चित्त की |
| | | | समाधिना ॥ | ११. | एकाग्रता से (प्राकृत गुणों का नाश होता है) |

श्लोकार्थ—तत्त्वों का साक्षात्कार कराने वाले ज्ञान से दृढ़ वैराग्य से तपस्या से परिपूर्ण योगाभ्यास से और चित्त की तीव्र एकाग्रता से (प्राकृत गुणों का नाश होता है) ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

**प्रकृतिः पुरुषस्येह दह्यमाना त्वहर्निशम् ।**
**तिरोभवित्री शनकैरग्नेर्योनिरिवारणिः ॥२३॥**

पदच्छेद—

प्रकृतिः पुरुषस्य इह दह्यमाना तु अहर्निशम् ।
तिरोभवित्री शनकैः अग्नेः योनिः इव अरणिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| प्रकृतिः | ६. प्रकृति | | तिरोभवित्री | १२. तिरोहित हो जाती है |
| पुरुषस्य | ८. पुरुष की | | शनकैः | ११. धीरे-धीरे |
| इह | १०. संसार में | | अग्नेः | २. अग्नि से |
| दह्यमाना | ७. क्षीण होती हुई | | योनिः | ३. उसका कारण |
| तु | ५. उसी प्रकार (इन साधनों से) | | इव | १. जैसे |
| अहर्निशम् । | ६. दिन-रात | | अरणिः ॥ | ४. अरणि से भस्म हो जाती है |

श्लोकार्थ——जैसे अग्नि से उसका कारण अरणि से भस्म हो जाती है। उसी प्रकार इन साधनों मे दिन-रात क्षीण होती हुई पुरुष की प्रकृति संसार में धीरे-धीरे तिरोहित हो जाती है ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

**भुक्तभोगा परित्यक्ता दृष्टदोषा च नित्यशः ।**
**नेश्वरस्याशुभं धत्ते स्वे महिम्नि स्थितस्य च ॥२४॥**

पदच्छेद—

भुक्त भोगा परित्यक्ता दृष्ट दोषा च नित्यशः ।
न ईश्वरस्य अशुभम् धत्ते स्वे महिम्नि स्थितस्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| भुक्त | २. भोग कर | | न | १४. नहीं |
| भोगा | १. भोगों को | | ईश्वरस्य | १२. समर्थ पुरुष का |
| परित्यक्ता | ३. छोड़ी गई | | अशुभम् | १३. अकल्याण |
| दृष्ट | ७. देखे जाने से | | धत्ते | १५. कर सकती है |
| दोषा | ६. दोष | | स्वेमहिम्नि | ८. अपने स्वरूप में |
| च | ४. प्रकृति | | स्थितस्य | १०. स्थित |
| नित्यशः । | ५. सदा | | च ॥ | ११. और |

श्लोकार्थ——भोगों को भोगकर छोड़ी गई प्रकृति सदा दोष देखे जाने से अपने स्वरूप में स्थित और समर्थ पुरुष का अकल्याण नहीं कर सकती है ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

**यथा ह्यप्रतिबुद्धस्य प्रस्वापो बह्वनर्थभृत् ।**
**स एव प्रतिबुद्धस्य न वै मोहाय कल्पते ॥२५॥**

पदच्छेद—

यथा हि प्रतिबुद्धस्य प्रस्वापः बहु अनर्थभृत् ।
सः एव प्रतिबुद्धस्य न वै मोहाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे | सः एव | ८. | उसे |
| हि | ६. | किन्तु | प्रतिबुद्धस्य | ७. | जग जाने पर |
| अप्रतिबुद्धस्य | २. | सोये हुये मनुष्य को | न | ११. | नहीं |
| प्रस्वापः | ३. | स्वप्न में | वै | ९. | उससे |
| बहु | ४. | अनेक प्रकार के | मोहाय | १०. | मोह |
| अनर्थभृत् । | ५. | कष्टों का अनुभव होता है | कल्पते ॥ | १२. | होता है |

श्लोकार्थ—जैसे सोये हुये मनुष्य को स्वप्न में अनेक प्रकार के कष्टों का अनुभव होता है। किन्तु जग जाने पर उसे, उससे मोह नहीं होता है ॥

## षड्विंशः श्लोकः

**एवं विदिततत्त्वस्य प्रकृतिर्मयि मानसम् ।**
**युञ्जतो नापकुरुत आत्मारामस्य कर्हिचित् ॥२६॥**

पदच्छेद—

एवम् युञ्जतः विदित तत्त्वस्य प्रकृतिः मयि मानसम् ।
युञ्जतः न अपकुरुते आत्मा रामस्य कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | उसी प्रकार | युञ्जतः | ६. | लगाये हुये हैं |
| विदित | ३. | ज्ञान हो गया है (तथा) | न | ११. | नहीं |
| तत्त्वस्य | २. | जिनको तत्त्वों का | अपकुरुते | १२. | अपकार कर सकती है |
| प्रकृतिः | ९. | प्रकृति | आत्मा | ७. | आत्मा में |
| मयि | ४. | मुझमें | रामस्य | ८. | विहार करने वाले (उन पुरुषों का) |
| मानसम् । | ५. | मन | कर्हिचित् ॥ | १०. | कभी भी |

श्लोकार्थ—उसी प्रकार जिनको तत्त्वों का ज्ञान हो गया है, तथा मुझमें मन लगाये हुये हैं। आत्मा में विहार करने वाले उन पुरुषों का प्रकृति कभी भी अपकार नहीं कर सकती है ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

यदैवमध्यात्मरतः　कालेन　बहुजन्मना ।
सर्वत्र　जातवैराग्य　आ　ब्रह्मभुवनान्मुनिः ॥२७॥

पदच्छेद—

यदा एवम् अध्यात्म रतः कालेन बहु जन्मना ।
सर्वत्र जात वैराग्य आ ब्रह्म भुवनात् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब | सर्वत्र | १२. | सभी भोगों से |
| एवम् | २. | इस प्रकार | जात | १४. | हो जाता है |
| अध्यात्म | ७. | परमात्मा से | वैराग्य | १३. | वैराग्य |
| रतः | ८. | प्रेम करता है (तब उसे) | आ | ११. | पर्यन्त |
| कालेन | ६. | बहुत काल | ब्रह्म | ९. | ब्रह्म |
| बहु | ४. | अनेक | भुवनात् | १०. | लोक |
| जन्मना । | ५. | जन्मों में | मुनिः ॥ | ३. | चिन्तनशील पुरुष |

श्लोकार्थ—जब इस प्रकार चिन्तन शील पुरुष अनेक जन्मों में बहुत काल परमात्मा से प्रेम करता है । तब उसे ब्रह्म लोक पर्यन्त सभी भोगों से वैराग्य हो जाता है ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

मद्भक्तः　प्रतिबुद्धार्थो　मत्प्रसादेन　भूयसा ।
निःश्रेयसं　स्वसंस्थानं　कैवल्याख्यं　मदाश्रयम् ॥२८॥

पदच्छेद—

मद् भक्तः प्रतिबुद्धे अर्थे मत् प्रसादेन भूयसा ।
निः श्रेयशम् स्व संस्थानम् कैवल्य आख्यम् मद् आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मद् | ३. | मेरा | निः श्रेयसम् | १४. | मुक्ति को (प्राप्त करता है) |
| भक्तः | ४. | भक्त | स्व | १०. | अपने |
| प्रतिबुद्धे | २. | ज्ञानी | संस्थानम् | ११. | स्वरूप भूत |
| अर्थे | १. | आत्म स्वरूप का | कैवल्य | १२. | कैवल्य |
| मत् | ५. | मेरी | आख्यम् | १३. | नाम की |
| प्रसादेन | ७. | कृपा से | मद् | ८. | मेरे |
| भूयसा । | ६. | महती | आश्रयम् ॥ | ९. | आश्रित |

श्लोकार्थ—आत्म स्वरूप का ज्ञानी मेरा भक्त मेरी महती कृपा से मेरे आश्रित अपने स्वरूप भूत कैवल्य नाम की मुक्ति को प्राप्त करता है ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**प्राप्नोतीहाञ्जसा धीरः स्वदृशाच्छिन्नसंशयः ।**
**यद्गत्वा न निवर्तेत योगी लिङ्गाद्विनिर्गमे ॥२९॥**

पदच्छेद—

प्राप्नोति इह अञ्जसा धीरः स्वदृशा छिन्न संशयः ।
यद् गत्वा न निवर्तेत योगी लिङ्गाद्विनिर्गमे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्राप्नोति | १०. | प्राप्त कर लेता है | यद् | ११. | जहाँ |
| इह | ३. | इस संसार में | गत्वा | १२. | जाकर |
| अञ्जसा | ९. | सहज में (उस पद को) | न | १३. | नहीं |
| धीरः | १. | धैर्यशाली | निवर्तेत | १४. | लौटना होता है |
| स्वदृशा | ४. | अपने अनुभव से | योगी | २. | योगी पुरुष |
| छिन्न | ६. | रहित हो जाता है | लिङ्गात् | ७. | सूक्ष्म शरीर का |
| संशयः । | ५. | सन्देह | विनिर्गमे ॥ | ८. | नाश हो जाने पर |

श्लोकार्थ—धैर्यशाली योगी पुरुष इस संसार में अपने अनुभव से सन्देह रहित हो जाता है । सूक्ष्म शरीर का नाश हो जाने पर सहज में उस पद को प्राप्त कर लेता है । जहाँ जाकर लौटना नहीं होता है ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**यदा न योगोपचितासु चेतो मायासु सिद्धस्य विषज्जतेऽङ्ग ।**
**अनन्यहेतुष्वथ मे गतिः स्याद् आत्यन्तिकी यत्र न मृत्युहासः ॥३०॥**

पदच्छेद—

यदा न योग उपचितासु चेतः मायासु सिद्धस्य विषज्जते अङ्ग ।
अनन्य हेतुषु अथ मे गतिः स्यात् आत्यन्तिकी यत्र न मृत्यु हासः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | २. | जब | अनन्य | ८. | नहीं प्राप्त होने वाली |
| न | १०. | नहीं | हेतुषु | ७. | अन्य उपायों से |
| योग | ५. | योग से | अथ, मे | १२. | तब उसे, मेरा |
| उपचितासु | ६. | बढ़ी हुई (तथा) | गतिः, स्यात् | १४. | परम्धाम, मिलता है |
| चेतः | ४. | चित्त | आत्यन्तिकी | १३. | अविनाशी |
| मायासु | ९. | माया मयी (अणिमादि सिद्धियों में) | यत्र | १५. | जहाँ |
| सिद्धस्य | ३. | सिद्धियों को प्राप्त पुरुष का | न | १७. | नहीं |
| विषज्जते | ११. | फंसता है | मृत्यु | १६. | मृत्यु कुछ भी |
| अङ्गः ॥ | १. | हे माता जी ! | हासः ॥ | १८. | कर सकती है |

श्लोकार्थ—हे माता जी ! जब सिद्धियों को प्राप्त पुरुष का चित्त योग से बढ़ी हुई तथा अन्य उपायों से प्राप्त होने वाली मायामयी आणिमादि सिद्धियों में नहीं फंसता है तब उसे मेरा अविनाशी परम-धाम मिलता है । जहाँ मृत्यु कुछ भी नहीं कर सकती है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपख्याने
सप्तविंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२७॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### अष्टविंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

**श्रीभगवानुवाच—योगस्य लक्षणं वक्ष्ये सबीजस्य नृपात्मजे।**
**मनो येनैव विधिना प्रसन्नं याति सत्पथम् ॥१॥**

पदच्छेद—

योगस्य लक्षणम् वक्ष्ये सबीजस्य नृप आत्मजे।
मनः येन एव विधिना प्रसन्नम् याति सत् पथम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| योगस्य | ३. | योग का | येन | ६. | जिसके |
| लक्षणम् | ४. | लक्षण | एव | ८. | ही |
| वक्ष्ये | ५. | कहूँगा | विधिना | ७. | आचरण से |
| सबीजस्य | २. | ध्यान मंत्र के साथ | प्रसन्नम् | १०. | सन्तुष्ट होकर |
| नृप आत्मजे। | १. | हे मातः ! मैं | याति | १२. | प्रवृत्त होता है |
| मनः | ९. | चित्त | सत् पथम् ॥ | ११. | सन्मार्ग में |

श्लोकार्थ—हे मातः ! मैं ध्यान मंत्र के साथ योग का लक्षण कहूँगा। जिसके आचरण से ही चित्त सन्तुष्ट होकर सन्मार्ग में प्रवृत्त होता है ॥

## द्वितीयः श्लोकः

**स्वधर्माचरणं शक्त्या विधर्माच्च निवर्तनम्।**
**दैवाल्लब्धेन सन्तोष आत्मविच्चरणार्चनम् ॥२॥**

पदच्छेद—

स्वधर्म आचरणम् शक्त्या विधर्मात् च निवर्तनम्।
दैवात् लब्धेन सन्तोष आत्मवित् चरण अर्चनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वधर्म | २. | अपने धर्म का | दैवात् | ७. | भाग्य से |
| आचरणम् | ३. | पालन | लब्धेन | ८. | प्राप्त हुई वस्तुओं से |
| शक्त्या | १. | यथाशक्ति | सन्तोष | ९. | सन्तुष्टि (तथा) |
| विधर्मात् | ४. | अधर्म का | आत्मवित् | १०. | आत्मज्ञानियों के |
| च | ६. | और | चरण | ११. | चरणों की |
| निवर्तनम। | ५. | परित्याग | अर्चनम्। | १२. | सेवा (करें) |

श्लोकार्थ—यथाशक्ति अपने धर्म का पालन, अधर्म का परित्याग और भाग्य से प्राप्त हुई वस्तुओं से सन्तुष्टि तथा आत्म-ज्ञानियों के चरणों की सेवा करें ॥

## तृतीयः श्लोकः

ग्राम्यधर्मनिवृत्तिश्च मोक्षधर्मरतिस्तथा ।
मितमेध्यादनं शश्वद्विविक्तक्षेमसेवनम् ॥३॥

पदच्छेद—

ग्राम्यधर्म निवृत्तिः च मोक्षधर्म रतिः तथा ।
मितमेध्य अदनम् शश्वत् विविक्त क्षेम सेवनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ग्राम्यधर्म | १. | विषयों के भोगों से | मितमेध्य | ७. | थोड़ा और पवित्र |
| निवृत्तेः | २. | दूर रहना | अदनम् | ८. | भोजन करना (एवम्) |
| च | ३. | और | शश्वत् | ९. | निरन्तर |
| मोक्षधर्म | ४. | मुक्ति के मार्ग में | विविक्त | १०. | एकान्त (और) |
| रतिः | ५. | अनुराग करना | क्षेम | ११. | निर्भय स्थान में |
| तथा । | ६. | तथा | सेवनम् ॥ | १२. | निवास करना चाहिये |

श्लोकार्थ—विषयों के भोगों से दूर रहना और मुक्ति के मार्ग में अनुराग करना तथा थोड़ा और पवित्र भोजन करना एवम् निरन्तर एकान्त और निर्भय स्थान में निवास करना चाहिये ॥

## चतुर्थः श्लोकः

अहिंसा सत्यमस्तेयं यावदर्थपरिग्रहः ।
ब्रह्मचर्यं तपः शौचं स्वाध्यायः पुरुषार्चनम् ॥४॥

पदच्छेद—

अहिंसा सत्यम् अस्तेयम् यावत् अर्थ परिग्रहः ।
ब्रह्मचर्यम् तपः शौचम् स्वाध्यायः पुरुष अर्चनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहिंसा | १. | किसी जीव को न सताना | ब्रह्मचर्यम् | ७. | ब्रह्मचर्य से रहना |
| सत्यम् | २. | सत्य बोलना | तपः | ८. | तपस्या करना |
| अस्तेयम् | ३. | चोरी नहीं करना | शौचम् | ९. | अन्दर-बाहर से शुद्ध रहना |
| यावत् | ४. | आवश्यकता के अनुसार | स्वाध्यायः | १०. | प्रतिदिन शास्त्राध्यन करना |
| अर्थ | ५. | वस्तु का | पुरुष | ११. | भगवान् श्री हरि की |
| परिग्रहः । | ६. | संग्रह करना | अर्चनम् ॥ | १२. | पूजा करनी चाहिये |

श्लोकार्थ—किसी जीव को न सताना, सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, आवश्यकता के अनुसार वस्तु का संग्रह करना, ब्रह्मचर्य से रहना, तपस्या करना, अन्दर-बाहर से शुद्ध रहना, प्रतिदिन शास्त्राध्ययन करना तथा भगवान् श्री हरि की पूजा करनी चाहिये ॥

## पञ्चमः श्लोकः

**मौनं सदाऽऽसनजयस्थैर्यं प्राणजयः शनैः।**
**प्रत्याहारश्चेन्द्रियाणां विषयान्मनसा हृदि ॥५॥**

पदच्छेद—

मौनम् सदा आसन जय स्थैर्यम् प्राणजयः शनैः।
प्रत्याहारः च इन्द्रियाणाम् विषयात् मनसा हृदि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मौनम् | २. | कम बोलना | प्रत्याहार | ११. | हटाकर |
| सदा | १. | हमेशा | च | ८. | और |
| आसन | ३. | आसनों का | इन्द्रियाणाम् | ९. | इन्द्रियों को |
| जय | ४. | अभ्यास करके | विषयात् | १०. | विषयों से |
| स्थैर्यम् | ५. | स्थिरता से बैठना | मनसा | १२. | मन के द्वारा |
| प्राणजयः | ७. | स्वांस को जीतना | हृदि ॥ | १३. | हृदय में ले जाना चाहिये |
| शनैः। | ६. | धीरे-धीरे | | | |

श्लोकार्थ—हमेशा कम बोलना, आसनों का अभ्यास करके स्थिरता से बैठना, धीरे-धीरे स्वास को जीतना और इन्द्रियों को विषयों से हटा कर मन के द्वारा हृदय में ले जाना चाहिये ॥

## षष्ठः श्लोकः

**स्वधिष्ण्यानामेकदेशे मनसा प्राणधारणम्।**
**वैकुण्ठलीलाभिध्यानं समाधानं तथात्मनः ॥६॥**

पदच्छेद—

स्वधिष्ण्यानाम् एक देशे मनसा प्राण धारणम्।
वैकुण्ठ लीला अभिध्यानम् समाधानम् तथा आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वधिष्ण्यानाम् | १. | अपने अनेक स्थानों में से | वैकुण्ठ लीला | ६. | भगवान् श्री हरि की लीलाओं का |
| एक देशे | २. | एक स्थान में | अभिध्यानम् | ७. | निरन्तर चिन्तन करना |
| मनसा | ३. | मन से | समाधानम् | १०. | एकाग्र रखना चाहिये |
| प्राण | ४. | प्राण वायु से | तथा | ८. | तथा |
| धारणम्। | ५. | धारण करना | आत्मनः ॥ | ९. | चित्त को |

श्लोकार्थ—अपने अनेक स्थानों में से एक स्थान में मन से प्राण वायु से धारण करना, भगवान् श्री हरि की लीलाओं का निरन्तर चिन्तन करना तथा चित्त को एकाग्र रखना चाहिये ॥

## सप्तमः श्लोकः

**एतैरन्यैश्च पथिभिर्मनो दुष्टमसत्पथम् ।**
**बुद्ध्या युञ्जीत शनकैर्जितप्राणो ह्यतन्द्रितः ॥७॥**

**पदच्छेद—**

एतैः अन्यैः च पथिभिः मनः दुष्टम् असत्, पथम् ।
बुद्धया युञ्जीत शनकैः जित प्राणः हि अतन्द्रितः ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतैः | ४. | इन साधनों से | बुद्धया | ११. | बु[illegible] |
| अन्यैः | ६. | दूसरे | युञ्जीत | १४. | [illegible] |
| च | ५. | और | शनकैः | १२. | [illegible] |
| पथिभिः | ७. | उपायों | जित | ३. | रोक कर |
| मनः | १०. | चित्त को | प्राणः | [illegible] | प्राण वायु को |
| दुष्टम् | ९. | दुष्ट | हि | १३. | परमात्मा में |
| असत्, पथम् । | ८. | कुमार्गगामी | अतन्द्रितः ॥ | १. | सावधान मनुष्य |

**श्लोकार्थ—**सावधान मनुष्य प्राण वायु को रोक कर इन साधनों से और दूसरे उपायों से कुमार्गगामी दुष्ट चित्त को बुद्धि के साथ धीरे-धीरे परमात्मा में लगावे ॥

## अष्टमः श्लोकः

**शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य विजितासन आसनम् ।**
**तस्मिन् स्वस्ति समासीन ऋजुकायः समभ्यसेत् ॥८॥**

**पदच्छेद—**

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य विजित आसन आसनम् ।
तस्मिन् स्वस्ति समासीनः ऋजु कायः समभ्यसेत् ॥

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शुचौ | ३. | पवित्र | तस्मिन् | ७. | उस पर |
| देशे | ४. | स्थान पर | स्वस्ति | ८. | सुखपूर्वक |
| प्रतिष्ठाप्य | ६. | लगा कर | समासीनः | ९. | बैठ कर (तथा) |
| विजित | २. | सिद्धि के पश्चात् (पुरुष) | ऋजु | ११. | सीधा करके |
| आसन | १. | आसन | कायः | १०. | शरीर को |
| आसनम् । | ५. | कुश-मृग चर्मादि का आसन | समभ्यसेत् ॥ | १२. | समाधि का अभ्यास करे |

**श्लोकार्थ—**आसन सिद्धि के पश्चात् पुरुष पवित्र स्थान पर कुश-मृग-चर्मादि का आसन लगा कर उस पर सुखपूर्वक बैठ कर तथा शरीर को सीधा करके समाधि का अभ्यास करे ।

## नवमः श्लोकः

**प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः ।**
**प्रतिकूलेन वा चित्तं यथास्थिरमचञ्चलम् ॥९॥**

पदच्छेद—

प्राणस्य शोधयेत् मार्गम् पूर कुम्भक रेचकैः ।
प्रतिकूलेन वा चित्तम् यथा स्थिरम् अचञ्चलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्राणस्य | ६. | प्राण वायु के | प्रतिकूलेन | ५. | विपरीत क्रम से |
| शोधयेत् | ८. | शोधन करे | वा | ४. | अथवा इसके |
| मार्गम् | ७. | मार्ग का | चित्तम् | १०. | मन |
| पूर | १. | पूरक | यथा | ९. | जिससे कि |
| कुम्भक | २. | कुम्भक (और) | स्थिरम् | ११. | स्थिर हो कर |
| रेचकैः । | ३. | रेचक प्राणायामों से | अचञ्चलम् ॥ | १२. | चञ्चल न हो सके |

श्लोकार्थ—पूरक, कुम्भक, रेचक प्राणायामों से अथवा इसके विपरीत क्रम से प्राण वायु के मार्ग का शोधन करे जिससे कि मन स्थिर होकर चञ्चल न हो सके ॥

## दशमः श्लोकः

**मनोऽचिरात्स्याद्विरजं जितश्वासस्य योगिनः ।**
**वाय्वग्निभ्यां यथा लोहं ध्मातं त्यजति वै मलम् ॥१०॥**

पदच्छेद—

मनः अचिरात् स्यात् विरजम् जित श्वासस्य योगिनः ।
वायु अग्निभ्याम् यथा लोहम् ध्मातम् त्यजति वै मलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मनः | १२. | चित्त | वायु | २. | हवा और |
| अचिरात् | १३. | प्राणायाम से शीघ्र ही | अग्निभ्याम् | ३. | आग से |
| स्यात् | १५. | हो जाता है | यथा | १. | जैसे |
| विरजम् | १४. | निर्मल | लोहम् | ५. | सोना अपने |
| जित | १०. | जीते हुये | ध्मातम् | ४. | तपाया हुआ |
| श्वासस्य | ९. | प्राण वायु को | त्यजति | ७. | छोड़ देता है |
| योगिनः । | ११. | योगी पुरुष का | वै | ८. | उसी प्रकार |
| | | | मलम् ॥ | ६. | मल को |

श्लोकार्थ—जैसे हवा और आग से तपाया हुआ सोना अपने मल को छोड़ देता है । उसी प्रकार प्राण वायु को जीते हुये योगी पुरुष का चित्त प्राण वायु से शीघ्र ही निर्मल हो जाता है ।

# एकादशः श्लोकः

प्राणायामैर्दहेद्दोषान्धारणाभिश्च किल्विषान् ।
प्रत्याहारेण संसर्गान्ध्यानेनानीश्वरान् गुणान् ॥११॥

पदच्छेद—

प्राणायामैः दहेत् दोषान् धारणाभिः च किल्विषान् ।
प्रत्याहारेण संसर्गान् ध्यानेन अनीश्वरान् गुणान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| प्राणायामैः | १. प्राणायाम में | | प्रत्याहारेण | ५. प्रत्याहार से |
| दहेत् | ११. दूर करना चाहिये | | संसर्गान् | ६. विषयों के सम्बन्ध को |
| दोषान् | २. शरीर के मल को | | ध्यानेन | ८. ध्यान से |
| धारणाभिः | ३. धारणा से | | अनीश्वरान् | ९. प्रकृति के |
| च | ७. और | | गुणान् । | १०. दुर्गुणों को |
| किल्विषम् ॥ | ४. पापों को | | | |

श्लोकार्थ—प्राणायाम से शरीर के मल को, धारणा से पापों को, प्रत्याहार से विषयों के सम्बन्ध को और ध्यान से प्रकृति के दुर्गुणों को दूर करना चाहिये ॥

# द्वादशः श्लोकः

यदा मनः स्वं विरजं योगेन सुसमाहितम् ।
काष्ठां भगवतो ध्यायेत्स्वासाग्रावलोकनः ॥१२॥

पदच्छेद—

यदा मनः स्वम् विरजम् योगेन सुसमाहितम् ।
काष्ठाम् भगवतः ध्यायेत् स्व स्वासाग्र अवलोकनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यदा | १. जब | | काष्ठाम् | ११. रूप का |
| मनः | ४. मन | | भगवतः | १०. भगवान् के |
| स्वम् | ३. अपना | | ध्यायेत् | १२. ध्यान करना चाहिये |
| विरजम् | ५. निर्मल (और) | | स्व | ७. अपनी |
| योगेन | २. योग के द्वारा | | स्वासाग्र | ९. नासिका के अग्रभाग में स्थिर करके |
| सुसमाहितम् । | ६. एकाग्र हो जाये (तब) | | अवलोकनः ॥ | ८. दृष्टि को |

श्लोकार्थ—जब योग के द्वारा अपना मन निर्मल और एकाग्र हो जाये तब अपनी दृष्टि को नासिका के अग्रभाग में स्थिर करके भगवान् के रूप का ध्यान करना चाहिये ॥

# त्रयोदशः श्लोकः

**प्रसन्नवदनाम्भोजं　　पद्मगर्भारुणेक्षणम् ।**
**नीलोत्पलदलश्यामं　　शङ्खचक्रगदाधरम् ॥१३॥**

पदच्छेद—

**प्रसन्न वदन अम्भोजम् पद्मगर्भ अरुण ईक्षणम् ।**
**नील उत्पलदल श्यामम् शङ्ख चक्र गदाधरम् ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रसन्न | ३. | आनन्द से प्रसन्न है | नील | ७. | शरीर नील |
| वदन | १. | भगवान् का मुख | उत्पलदल | ८. | कमल-दल के समान |
| अम्भोजम् | २. | कमल | श्यामम् | १०. | श्याम वर्ण का है (और) |
| पद्मगर्भ | ५. | कमल-कोश के समान | शङ्ख | ११. | हाथों में शङ्ख |
| अरुण | ६. | लाल है | चक्र | १२. | चक्र (एवं) |
| ईक्षणम् । | ४. | नेत्र | गदाधरम् ॥ | १३. | गदा सुशोभित है |

श्लोकार्थ— भगवान् का मुख-कमल आनन्द से प्रसन्न है, नेत्र कमल-कोश के समान लाल हैं। शरीर नील-कमल-दल के समान श्याम वर्ण का है और हाथों में शङ्ख चक्र एवं गदा सुशोभित है ॥

# चतुर्दशः श्लोकः

**लसत्पङ्कजकिञ्जल्कपीतकौशेयवाससम्　　।**
**श्रीवत्सवक्षसं　　भ्राजत्कौस्तुभामुक्तकन्धरम् ॥१४॥**

पदच्छेद—

**लसत् पङ्कज किञ्जल्क पीत कौशेय वाससम् ।**
**श्रीवत्स वक्षसम् भ्राजत् कौस्तुभ आमुक्त कन्धरम् ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लसत् | ६. | लहरा रहा है | श्रीवत्स | ८. | श्रीवत्स का चिह्न है |
| पङ्कज | १. | (उनके शरीर पर) कमल के | वक्षसम् | ७. | वक्षः स्थल पर |
| किञ्जल्क | २. | पराग के समान | भ्राजत् | ११. | शोभा दे रहा है |
| पीत | ३. | पीला | कौस्तुभ | ६. | कौस्तुभ |
| कौशेय | ४. | रेशमी | आमुक्त | १०. | मणि |
| वाससम् । | ५. | पीताम्बर | कन्धरम् ॥ | ६. | गले में |

श्लोकार्थ—उनके शरीर पर कमल के पराग के समान पीला रेशमी पीताम्बर लहरा रहा है। वक्षः स्थल पर श्रीवत्स का चिह्न है, गले में कौस्तुभ मणि शोभा दे रहा है ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

मत्तद्विरेफकलया परीतं वनमालया ।
परार्ध्यहारवलयकिरीटाङ्गदनूपुरम् ॥१५॥

पदच्छेद—

मत्त द्विरेफ कलया परीतम् वन मालया ।
परार्ध्य हार वलय किरीट अङ्गद नूपुरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मत्त | ४. | मतवाले | परार्ध्य | ७. | (उनके अङ्गों में) वहुमूल्य |
| द्विरेफ | ५. | भौरों की | हार | ८. | हार |
| कलया | ६. | गुञ्जार है (तथा) | वलय | ९. | कंकण |
| परीतम् | १. | (चरणों तक) लटको हुई | किरीट | १०. | मुकुट |
| वन | २. | वन | अङ्गद | ११. | बाजूवन्द (और) |
| मालया । | ३. | माला के ऊपर | नूपुरम् ॥ | १२. | पायजेब शोभित हैं |

श्लोकार्थ—चरणों तक लटकी हुई वनमाला के ऊपर मतवाले भौरों की गुञ्जार है तथा जिनके अङ्गों में वहुमूल्य हार, कंकण, मुकुट, बाजूवन्द और पायजेब शोभित हैं ॥

## षोडशः श्लोकः

काञ्चीगुणोल्लसच्छ्रोणिं हृदयाम्भोजविष्टरम् ।
दर्शनीयतमं शान्तं मनोनयनवर्धनम् ॥१६॥

पदच्छेद—

काञ्ची गुण उल्लसत् श्रोणिम् हृदय अम्भोज विष्टरम् ।
दर्शनीय तमम् शान्तम् मनः नयन वर्धनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| काञ्ची | १. | करधनी की | विष्टरम् । | ७. | आसन है (उनका) |
| गुण | २. | लडियाँ (भगवान् के) | दर्शनीय तमम् | ८. | बहुत मनोहर |
| उल्लसत् | ४. | शोभा बढ़ा रही हैं | शान्तम् | ९. | शान्त-स्वरूप |
| श्रोणिम् | ३. | कमर की | मनः | १०. | हृदय (और) |
| हृदय | ५. | भक्तों का हृदय | नयन | ११. | नेत्रों को |
| अम्भोज | ६. | कमल (उनका) | वर्धनम् ॥ | १२. | आनन्द देने वाला है |

श्लोकार्थ—करधनी की लड़ियाँ भगवान् के कमर की शोभा बढ़ा रही है । भक्तों का हृदय कमल उनका आसन है तथा उनका वहुत मनोहर शान्त-स्वरूप हृदय और नेत्रों को आनन्द देने वाला है ॥

## सप्तदशः श्लोकः

**अपीच्यदर्शनं शश्वत्सर्वलोकनमस्कृतम् ।**
**सन्तं वयसि कैशोरे भृत्यानुग्रहकातरम् ॥१७॥**

पदच्छेद—

अपीच्य दर्शनम् शश्वत् सर्वलोक नमस्कृतम् ।
सन्तम् वयसि कैशोरे भृत्य अनुग्रह कातरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अपीच्य | १०. | बड़ी मनोहर है | सन्तम् | ३. | भगवान् विद्यमान हैं |
| दर्शनम् | ९. | उनकी झाँकी | वयसि | २. | अवस्था में |
| शश्वत् | ६. | सदा | कैशोरे | १. | किशोर |
| सर्वलोक | ७. | सभी लोकों में | भृत्य | ४. | अपने भक्तों के ऊपर |
| नमस्कृतम् । | ८. | वन्दनीय हैं (और) | अनुग्रह, कातरम् ॥ | ५. | दया करने के लिये व्याकुल हैं |

श्लोकार्थ—किशोर अवस्था में भगवान् विद्यमान हैं । अपने भक्तों के ऊपर दया करने के लिये व्याकुल हैं । सदा सभी लोकों में वन्दनीय हैं और उनकी झाँकी बड़ी मनोहर है ॥

## अष्टदशः श्लोकः

**कीर्तन्यतीर्थयशसं पुण्यश्लोकयशस्करम् ।**
**ध्यायेद्देवं समग्राङ्गम् यावन्न च्यवते मनः ॥१८॥**

पदच्छेद—

कीर्तन्य तीर्थ यशसम् पुण्य श्लोक यशस्करम् ।
ध्यायेत् देवम् समग्र अङ्गम् यावत् न च्यवते मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कीर्तन्य | ३. | कीर्तन करने योग्य हैं (वे) | ध्यायेत् | ८. | ध्यान करे |
| तीर्थ | १. | भगवान् की पवित्र | देवम् | ६. | नारायण देव के |
| यशसम् | २. | कीर्ति | समग्र, अङ्गम् | ७. | सभी, अङ्गों का (तब-तक) |
| पुण्य श्लोक | ४. | पवित्र कीर्ति (बलि इत्यादि भक्तों के) | यावत् | ९. | जब-तक (कि) |
| यशस्करम् । | ५. | (इस प्रकार) यश को बढ़ाने वाले हैं | न च्यवते | १०. | न हटे |
| | | | मनः ॥ | १०. | मन (वहाँ से) |

श्लोकार्थ—भगवान् की पवित्र कीर्ति कीर्तन करने योग्य हैं (वे पवित्र कीर्ति बलि इत्यादि भक्तों के यश को बढ़ाने वाले हैं । इस प्रकार नारायण देव के सभी अङ्गों का तब-तक ध्यान करे जब तक कि मन वहाँ से न हटे ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

स्थितं व्रजन्तमासीनं शयानं वा गुहाशयम्।
प्रेक्षणीयेहितं ध्यायेच्छुद्धभावेन चेतसा ॥१९॥

पदच्छेद—

स्थितम् व्रजन्तम् आसीनम् शयानम् वा गुहाशयम्।
प्रेक्षणीय ईहितम् ध्यायेत् शुद्ध भावेन चेतसा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्थितम् | ३. | खड़े हुये | प्रेक्षणीय | १. | (भगवान् का रूप) दर्शनीय है |
| व्रजन्तम् | ४. | चलते हुये | ईहितम् | २. | अपनी इच्छानुसार |
| आसीनम् | ५. | बैठे हुये | ध्यायेत् | १०. | ध्यान करना चाहिये |
| शयानम् | ६. | सोये हुये | शुद्धभावेन | ८. | निर्मल |
| वा, गुहाशयम् | ७. | अथवा, अन्तर्यामिरूप का | चेतसा | ९. | मन से |

श्लोकार्थ—भगवान् का स्वरूप दर्शनीय है, अपनी इच्छानुसार खड़े हुये, चलते हुये, बैठे हुये, सोये हुये अथवा अन्तर्यामि रूप का निर्मल मन से ध्यान करना चाहिये ॥

## विंशः श्लोकः

तस्मिँल्लब्धपदं चित्तं सर्वावयवसंस्थितम्।
विलक्ष्यैकत्र संयुज्यादङ्गे भगवतो मुनिः ॥२०॥

पदच्छेद—

तस्मिन् लब्ध पदम् चित्रम् सर्व अवयव संस्थितम्।
विलक्ष्य एकत्र संयुज्यात् अङ्गे भगवतः मुनिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मिन् | १. | भगवान् के रूप में | विलक्ष्य | ४. | ऐसा देखकर |
| लब्ध | ३. | प्राप्त हो गयी है | एकत्र | १०. | किसी एक |
| पदम् | २. | स्थिति (उनके) | संयुज्यात् | १२. | लगा |
| चित्तम् | ९. | मन को | अङ्गे | ११. | अङ्ग में |
| सर्व अवयव | ७. | सभी अङ्गों में | भगवतः | ६. | भगवान् के |
| संस्थितम्। | ८. | स्थित हुये | मुनिः ॥ | ५. | योगि-पुरुष |

श्लोकार्थ—भगवान् के रूप में स्थिति प्राप्त हो गयी है। ऐसा देखकर योगि-पुरुष भगवान् के सभी अङ्गों में स्थित हुये मन को उनके किसी एक अंग में लगावे ॥

## एकविंशः श्लोकः

सञ्चिन्तयेद्भगवतश्चरणारविन्दं वज्राङ्कुशध्वजसरोरुहलाञ्छनाढ्यम् ।
उत्तुङ्गरक्तविलसन्नखचक्रवालज्योत्स्नाभिराहतमहद्धृदयान्धकारम् ॥२१॥

पदच्छेद—

सञ्चिन्तयेत् भगवतः चरण अरविन्दम् वज्र अंङ्कुश ध्वज सरोरुह लाञ्छन आढ्यम् ।
उत्तुङ्ग रक्त विलसत् नख चक्रवाल ज्योत्स्नाभिः आहत महत् हृदय अन्धकारम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सञ्चिन्तयेत् | ४ | ध्यान करना चाहिये (वे) | उत्तुङ्ग | १०. | उनके उभरे हुये |
| भगवतः | १. | सबसे पहले भगवान् के | रक्त, विलसत् | ११. | लाल शोभा मय |
| चरण, अरविन्दम् | २,३ | चरण, कमलों का | नख, चक्रवाल | १२,१३ | नख चन्द्रमण्डल की |
| वज्र, अंङ्कुश | ५. | वज्र अंकुश | ज्योत्स्नाभिः | १४. | चाँदनी से (वे) |
| ध्वज, सरोरुह | ६,७. | ध्वज (और) कमल के | आहत | १८. | दूर कर देती है |
| लाञ्छन | ८. | चिह्नों से | महत् | १६. | घोर |
| आढ्यम् । | ९. | युक्त हैं | हृदय | १५. | भक्तों के हृदय के |
| | | | अन्धकारम् ॥ | १७. | अज्ञान रूप अन्धकार को |

श्लोकार्थ—सबसे पहले भगवान् के चरण कमलों का ध्यान करना चाहिये । वे वज्र, अंङ्कुश, ध्वज और कमल के चिह्नों से युक्त हैं । उनके उभरे हुये लाल शोभामय नख चन्द्रमण्डल की चाँदनी से वे भक्तों के हृदय के घोर अज्ञान रूप अन्धकार को दूर कर देती है ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

यच्छौचनिःसृतसरित्प्रवरोदकेन तीर्थेन मूर्ध्न्यधिकृतेन शिवः शिवोऽभूत् ।
ध्यातुर्मनःशमलशैलनिसृष्टवज्रं ध्यायेच्चिरं भगवतश्चरणारविन्दम् ॥२२॥

पदच्छेद—

यत् शौच निःसृत सरित् प्रवर उदकेन तीर्थेन मूर्ध्नि अधिकृतेन शिवः शिवः अभूत् ।
ध्यातुः मनः शमल शैल निसृष्ट वज्रम् ध्यायेत् चिरम् भगवतः चरण अरविन्दम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत्, शौच | ६. | जिन चरणों के धोवन से | ध्यातुः | १५. | ध्यान करने वालों के |
| निःसृत | ८. | निकली हैं (जिनके) | मनः शमल | १६. | मन के, पाप रूप |
| सरित, प्रवर | ७. | नदियों में श्रेष्ठ गंगा जी | शैल, निसृष्ट | १७. | पर्वत पर, छोड़े गये |
| उदकेन | १०. | जल को | वज्रम् | १८. | इन्द्र के वज्र के समान हैं |
| तीर्थेन | ९. | पवित्र | ध्यायेत् | ५. | ध्यान करना चाहिये |
| मूर्ध्नि | ११. | मस्तक पर | चिरम् | ४. | चिर काल तक |
| अधिकृतेन | १२. | धारण करने से | भगवतः | १. | भगवान् श्री हरि के |
| शिवः | १३. | मंगलमय महादेव जी | चरण | २. | उन चरण |
| शिवः, अभूत् । | १४. | अधिक मंगलमय हो गये (वे चरण) | अरविन्दम् ॥ | ३. | कमलों का |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के उन चरण कमलों का चिरकाल तक ध्यान करना चाहिये । जिन चरणों के धोवन से नदियों में श्रेष्ठ गंगा जी निकली हैं। जिनके पवित्र जल मस्तक पर धारण करने से मंगलमय महादेव जो अधिक मंगलमय हो गये । वे चरण ध्यान करने वालों के मन के पापरूप पर्वत पर छोड़े गये इन्द्र के वज्र के समान हैं ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

**जानुद्वयं जलजलोचनया जनन्या लक्ष्म्याखिलस्य सुरवन्दितया विधातुः ।**
**ऊर्वोर्निधाय करपल्लवरोचिषा यत् संलालितं हृदि विभोरभवस्य कुर्यात् ॥२३॥**

पदच्छेद—

जानु द्वयम् जलज लोचनया जनन्या लक्ष्म्या अखिलस्य सुरवन्दितया विधातुः ।
ऊर्वोः निधाय करपल्लव रोचिषा यत् संलालितम् हृदि विभोः अभवस्य कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जानु | ४. | घुटनों और पिंडलियों का | ऊर्वोः निधाय | १५. | अपनी जाँघों पर रखकर |
| द्वयम् | ३. | दोनों | करपल्लव | १६. | हाथ रूपी पत्तों की |
| जलज | १२. | कमल | रोचिषा | १७. | कान्ति से |
| लोचनया | १३. | नयना | यत् | ७. | जिनको |
| जनन्या | १०. | माता | संलालितम् | १८. | प्रेम-पूर्वक दबाती हैं |
| लक्ष्म्या | १४. | लक्ष्मी जी | हृदि | ५. | हृदय में |
| अखिलस्य | ८. | सम्पूर्ण विश्व के | विभोः | २. | भगवान् श्री हरि के |
| सुरवन्दितया | ११. | देवताओं से पूजित | अभवस्य | १. | अजन्मा |
| विधातुः । | ९. | रचयिता ब्रह्मा जी की | कुर्यात् ॥ | ६. | ध्यान करना चाहिये |

श्लोकार्थ—अजन्मा भगवान् श्री हरि के दोनों घुटनों और पिंडलियों का हृदय में ध्यान करना चाहिये। जिनको सम्पूर्ण विश्व के रचयिता ब्रह्मा जी की माता कमलनयना लक्ष्मी जी अपनी जाघों पर रखकर हाथ रूपी पत्तों की कान्ति से प्रेम पूर्वक दबाती हैं ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

**ऊरू सुपर्णभुजयोरधिशोभमानावोजोनिधी अतसिकाकुसुमावभासौ ।**
**व्यालम्बिपीतवरवाससि वर्तमानकाञ्चीकलापपरिरम्भि नितम्बबिम्बम् ॥२४॥**

पदच्छेद—

उरू सुपर्ण भुजयोः अधिशोभमानौ ओजः निधी अतसिका कुसुम अवभासौ ।
व्यालम्बि पीतवर वाससि वर्तमान काञ्ची कलाप परिरम्भि नितम्ब बिम्बम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उरू | ९. | भगवान् की जाँघों का (ध्यान करे ततः) | व्यालम्बि | १२. | एड़ी तक लटकते हुये |
| सुपर्ण | ६. | गरुड़ के | पीतवर | १३. | पीले, उत्तम |
| भुजयोः | ७. | दोनों पंखों पर | वाससि | १४. | पीताम्बर के ऊपर |
| अधिशोभमानौ | ८. | अधिक सुशोभित | वर्तमान | १५. | पहनी हुई |
| ओजः, निधि | ४,५. | बल की खान (तथा) | काञ्ची, कलाप | १६,१७ | करधनी की लड़ियों का |
| अतसिका | १. | अलसी के | परिरम्भि | १८. | आलिङ्गन कर रहा है |
| कुसुम | २. | पुष्पों के समान | नितम्ब | १०. | कटि |
| अवभासौ । | ३. | नीली | बिम्बम् ॥ | ११. | भाग का (चिन्तन करें जो) |

श्लोकार्थ—अलसी के पुष्पों के समान नीली बल की खान तथा गरुड़ के दोनों पंखों पर अधिक सुशोभित भगवान की जाँघों का ध्यान करे। ततः कटि भाग का चिन्तन करे, जो एड़ी तक लटकते हुये पीले उत्तम पीताम्बर के ऊपर पहनी हुई करधनी की लड़ियों का आलिगन कर रहा है ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

**नाभिह्रदं भुवनकोशगुहोदरस्थं यत्रात्मयोनिधिषणाखिललोकपद्मम् ।**
**व्यूढं हरिन्मणिवृषस्तनयोरमुष्य ध्यायेद् द्वयं विशदहारमयूखगौरम् ॥२५॥**

पदच्छेद—

नाभि ह्रदम् भुवन कोशगुहा उदरस्थम् यत्र आत्मयोनि धिषण अखिललोक पद्मम् ।
व्यूढम् हरिन्मणि वृषः स्तनयोः अमुष्य ध्यायेत् द्वयम् विशद, हार मयूखगौरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाभि, ह्रदम् | ४. | नाभि सरोवर का (ध्यान करें) | व्यूढम् | १६. | धारण किये गये |
| भुवन | १. | समस्त ब्रह्माण्ड का | हरिन्मणि | १२. | मरकत मणि के समान नीले |
| कोशगुहा | २. | आश्रय स्थान | वृषः | ११. | श्रेष्ठ |
| उदरस्थम् | ३. | उदर में स्थित (भगवान् के) | स्तनयोः | १३. | दोनों स्तनों का |
| यत्र | ५. | जिसमें | अमुष्य | १०. | उन भगवान् के |
| आत्मयोनि | ६. | ब्रह्माजी का | ध्यायेत् | १४. | ध्यान करे |
| धिषण | ७. | आश्रय स्थान | द्वयम् | १५. | जो (वक्षः स्थल पर) |
| अखिललोक | ८. | सम्पूर्ण, लोकमय | विशद, हार | १७. | उज्ज्वल हार की |
| पद्मम् । | ९ | कमल (प्रकट हुआ है तदनन्तर) | मयूख गौरम् ॥ | १८. | किरणों के, गौरवर्ण के प्रतीत होते हैं |

श्लोकार्थ—समस्त ब्रह्माण्ड का आश्रय स्थान सम्पूर्ण, लोकमय कमल प्रकट हुआ है । तदनन्तर उन भगवान् के श्रेष्ठ मरकत मणि के समान नीले दोनों स्तनों का ध्यान करे, जो वक्षः स्थल पर धारण किये गये उज्वल हार की किरणों से गौरवर्ण के प्रतीत होते हैं ॥

## षड्विंशः श्लोकः

**वक्षोऽधिवासमृषभस्य महाविभूतेः पुंसां मनोनयननिर्वृतिमादधानम् ।**
**कण्ठं च कौस्तुभमणेरधिभूषणार्थं कुर्यान्मनस्यखिललोकनमस्कृतस्य ॥२६॥**

पदच्छेद—

वक्षः अधिवासम् ऋषभस्य महाविभूतेः पुंसाम् मनः नयन निर्वृतिम् आदधानम् ।
कण्ठम् च कौस्तुभमणेः अधिभूषणार्थम् कुर्यात् मनसि अखिललोक नमस्कृतस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वक्षः | २. | वक्षः स्थल | कण्ठम् | ११. | गले का |
| अधिवासम् | ४. | निवास स्थान है | च | १४. | जो |
| ऋषभस्य | १. | पुरुषोत्तम भगवान् का | कौस्तुभमणेः | १५. | कौस्तुभमणि की |
| महाविभूतेः | ३. | लक्ष्मी जी का | अधिभूषणार्थम् | १६. | शोभा बढ़ाता है |
| पुंसाम् | ५. | तथा मनुष्यों के | कुर्यात् | १३. | ध्यान करे |
| मनः नयन | ६. | मन और नेत्रों को | मनसि | १२. | हृदय में |
| निर्वृतिम् | ७. | आनन्द | अखिललोक | ९. | सम्पूर्ण विश्व के |
| आदधानम् । | ८. | देता है (तदनन्तर) | नमस्कृतस्य ॥ | १०. | वन्दनीय भगवान् के |

श्लोकार्थ—पुरुषोत्तम भगवान् का वक्षः स्थल लक्ष्मी जी का निवास स्थान है, तथा मनुष्यों के मन और नेत्रों को आनन्द देता है । तदनन्तर सम्पूर्ण विश्व के वन्दनीय भगवान् के गले का हृदय में ध्यान करे । जो कौस्तुभ मणि की शोभा बढ़ाता है ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

**बाहूंश्च मन्दरगिरेः परिवर्तनेन निर्णिक्तबाहुवलयानधिलोकपालान् ।**
**सञ्चिन्तयेद्दशशतारमसह्यतेजः शङ्खं च तत्करसरोरुहराजहंसम् ॥२७॥**

पदच्छेद—

बाहून् च मन्दरगिरेः परिवर्तनेन निर्णिक्त बाहु वलयान् अधिलोक पालान् ।
सञ्चिन्तयेत् दशशत अरम् असह्य तेजः शङ्खम् च तत् कर सरोरुह राजहंसम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बाहून् | ३. | भगवान् की भुजाओं का (चिन्तन करे) | सञ्चिन्तयेत् | १७. | चिन्तन करे |
| च | ४. | जिन | दशशत | ११. | एक हजार |
| मन्दरगिरेः | ६. | मदाराचल की | अरम् | १२. | धार वाले (सुदर्शन चक्र का) |
| परिवर्तनेन | ७. | रगड़ से | असह्य | १०. | सहन नहीं, किया जा सकता है (उसे) |
| निर्णिक्त | ८. | और अधिक उज्ज्वल हो गये हैं | तेजः | ६. | तदनन्तर जिसका तेज |
| बाहु, वलयान् | ५. | भुजाओं में पहने हुए, कंकण | शङ्खम् | १६. | श्वेत शंख का |
| अधिलोक | १. | लोक पालों के | च, तत् | १३. | और, उनके |
| पालान् । | २ | आश्रय भूत | कर सरोरूह | १४. | कर कमल में स्थित |
| | | | राज हंसम् ॥ | १५ | राजहंस के समान |

श्लोकार्थ—लोकपालों के आश्रय भूत भगवान् की भुजाओं का चिन्तन करे; जिन भुजाओं में पहने हुये कंकण मदराचल की रगड़ से और अधिक उज्ज्वल हो गये हैं। तदनन्तर जिसका तेज़ सहन नहीं किया जा सकता है। एक हजार धार वाले सुदर्शन चक्र का और उनके कर कमल में स्थित राजहंस के समान श्वेत शंख का चिन्तन करे ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

**कौमोदकीं भगवतो दयितां स्मरेत दिग्धामरातिभटशोणितकर्दमेन ।**
**मालां मधुव्रतवरूथगिरोपघुष्टां चैत्यस्य तत्त्वममलं मणिमस्य कण्ठे ॥२८॥**

पदच्छेद—

कौमोदकीम् भगवतः दयिताम् स्मरेत दिग्धाम् आराति भट शोणित कर्दमेन ।
मालाम् मधुव्रत वरूथ गिरा उपघुष्टाम् चैत्यस्य तत्त्वम् अमलम् मणिम् अस्य कण्ठे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कौमोदकीम् | ८. | कौमोदकी गदा का | मालाम् | १२. | वन माला का (तथा) |
| भगवतः | ६. | भगवान् की | मधुव्रत | ९. | (और) भौंरों के |
| दयिताम् | ७. | प्रिय | वरूथ गिरा | १०. | झुण्ड की, गुञ्जार से |
| स्मरेत | १८. | स्मरण करना चाहिये | उपघुष्टाम् | ११. | गुञ्जायमान |
| दिग्धाम् | ५. | सनी हुई | चैत्यस्य | १४. | जीव के |
| आराति | १ | विपक्षी | तत्त्वम् | १६. | तत्त्व स्वरूप |
| भट | २. | वीरों के | अमलम् | १५. | निर्मल |
| शोणित | ३. | रुधिरसे (और) | मणिम् | १७. | कस्तुभ मणि का |
| कर्दमेन । | ४. | चर्बी से | अस्य कण्ठे ॥ | १३. | भगवान् के गले में |

श्लोकार्थ—विपक्षी वीरों के रुधिर से और चर्बी से सनी हुई भगवान् की प्रिय कौमोदकी गदा का और भौंरों के झुन्ड की गुञ्जार से गुञ्जायमान वनमाला का तथा भगवान् के गले में, जीव के निर्मल तत्त्व स्वरूप कौस्तुभ मणि का स्मरण करना चाहिये ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**भृत्यानुकम्पितधियेह गृहीतमूर्तेः सञ्चिन्तयेद्भगवतो वदनारविन्दम् ।**
**यद्विस्फुरन्मकरकुण्डलवल्गितेन विद्योतितामलकपोलमुदारनासम् ॥ २९॥**

पदच्छेद—

भृत्य अनुकम्पित धिया इह गृहीत मूर्तेः सञ्चिन्त्येत् भगवतः वदन अरविन्दम् ।
यद् विस्फुरत् मकर कुण्डल वल्गितेन विद्योतित अमल कपोलम् उदार नासम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भृत्य | १. | भक्तों पर | यद्, विस्फुरत् | १०. | जिसमें चमकते हुये |
| अनुकम्पित | २. | दया करने की | मकर, कुण्डल | ११. | मकराकृत कुण्डलों के |
| धिया, इह | ३,४. | बुद्धि से ही इस संसारमें | वल्गितेन | १२. | हिलने से |
| गृहीत | ६. | धारण करने वाले | विद्योतित | १३. | प्रकाशमान |
| मूर्तेः | ५. | सगुण साकार (रूप में) | अमल | १४. | निर्मल |
| सञ्चिन्त्येत् | ९. | ध्यान करना चाहिये | कपोलम् | १५. | कपोल (और) |
| भगवतः | ७. | भगवान् श्री हरि को | उदार | १६. | सुघड़ |
| वदन, अरविन्दम् । | ८. | मुख-कमल का | नासम् ॥ | १७. | नासिका (शोभित हो रही है) |

श्लोकार्थ—भक्तों पर दया करने की बुद्धि से ही इस संसार में सगुण-साकार रूप में धारण करने वाले भगवान् श्री हरि के मुख-कमल का ध्यान करना चाहिये। जिसमें चमकते हुये मकराकृत कुण्डलों के हिलने से प्रकाशमान निर्मल कपोल और सुघड़ नासिका शोभित हो रही है।

## त्रिंशः श्लोकः

**यच्छ्रीनिकेतमलिभिः परिसेव्यमानं भूत्या स्वया कुटिलकुन्तलवृन्दजुष्टम् ।**
**मीनद्वयाश्रयमधिक्षिपदब्जनेत्रं ध्यायेन्मनोमयमतन्द्रित उल्लसद्भ्रूः ॥३०॥**

पदच्छेद—

यत् श्रीनिकेतम् अलिभिः परिसेव्यमानम् भूत्या स्वया कुटिल कुन्तलवृन्द जुष्टम् ।
मीनद्वय आश्रयम् अधिक्षिपत् अब्ज नेत्रम् ध्यायेत् मनोमयम् अतन्द्रितः उल्लसद् भ्रूः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | ४. | जो मुख-कमल | मीनद्वय | ११. | दो मछलियों की |
| श्रीनिकेतम् | ७. | कमल के समान | आश्रयम् | १२. | शोभा को |
| अलिभिः | ५. | भौरों से | अधिक्षिपत् | १३. | तिरस्कृत कर रहे हैं |
| परिसेव्यमानम् | ६. | सेवित | अब्ज, नेत्रम् | १०. | कमल के समान विशाल, दोनों नेत्र |
| भूत्या | ९. | छवि से (शोभित है) | ध्यायेत् | १८. | ध्यान करना चाहिये |
| स्वया | ८. | अपनी | मनोमयम् | १७. | हृदय में |
| कुटिल | १. | घुंघराली | अतन्द्रितः | १६. | आलस्य रहित होकर |
| कुन्तल वृन्द | २. | अलकावली से | उल्लसद् | १५. | उभरी हुई हैं ऐसे मुख का भगवान् के |
| जुष्टम् । | ३. | सुशोभित | भ्रूः ॥ | १४. | भौंहें |

श्लोकार्थ—घुंघराली अलकावली से सुशोभित जो मुख कमल भौरों से सेवित कमल के समान अपनी छवि से शोभित है। कमल के समान विशाल दोनों नेत्र दो मछलियों की शोभा को तिरस्कृत कर रहे हैं भौंहें उभरी हुई हैं ऐसे मुख का भगवान् के आलस्य रहित होकर हृदय में ध्यान करना चाहिये।

## एकत्रिंशः श्लोकः

**तस्यावलोकमधिकं कृपयातिघोरतापत्रयोपशमनाय निसृष्टमक्ष्णोः ।**
**स्निग्धस्मितानुगुणितं विपुलप्रसादं ध्यायेच्चिरं विततभावनया गुहायाम् ॥३१॥**

पदच्छेद—

तस्य अवलोकम् अधिकम् कृपया अतिघोर तापत्रय उपशमनाय निसृष्टम् अक्ष्णोः ।
स्निग्ध स्मित अनुगुणितम् विपुल प्रसादम् ध्यायेत् चिरम् वितत भावनया गुहायाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ४. | भगवान् श्री हरि की | स्निग्ध | १३. | प्रेम (और) |
| अवलोकम् | ६. | चितवन का | स्मित | १४. | मुसकान से |
| अधिकम् | १५. | अधिकाधिक | अनुगुणितम् | १६. | वढ़ती रहती है (तथा) |
| कृपया | ११. | कृपा-पूर्वक | विपुल | १७. | अत्यन्त |
| अतिघोर | ८. | जो बहुत भयानक | प्रसादम् | १८. | प्रसन्नता की वर्षा करती हैं |
| तापत्रय | ९. | तीनों तापों को | ध्यायेत् | ७. | ध्यान करना चाहिये (जो) |
| उपशमनाय | १०. | शान्त करने के लिये | चिरम् | २. | चिरकाल तक |
| निसृष्टम् | १२. | प्रकट हुई है | वितत भावनया | ३. | अनन्य भक्ति से |
| अक्ष्णोः । | ५. | आँखों की | गुहायाम् ॥ | १. | हृदय की गुहा में |

श्लोकार्थ—हृदय की गुहा में चिरकाल तक अनन्य भक्ति से भगवान् श्री हरि की आँखों की चितवन का ध्यान करना चाहिये। जो बहुत भयानक तीनों तापों को शान्त करने के लिये कृपा-पूर्वक प्रकट हुई हैं। प्रेम और मुसकान से अधिकाधिक वढ़ती रहती है तथा अत्यन्त प्रसन्नता की वर्षा करती है।

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**हासं हरेरवनताखिललोकतीव्रशोकाश्रुसागरविशोषणमत्युदारम् ।**
**सम्मोहनाय रचितं निजमाययास्य भ्रूमण्डलं मुनिकृते मकरध्वजस्य ॥३२॥**

पदच्छेद—

हासम् हरेः अवनत अखिललोक तीव्र शोक अश्रु सागर विशोषणम् अति उदारम् ।
सम्मोहनाय रचितम् निजमायया अस्य भ्रूः मण्डलम् मुनिकृते मकरध्वजस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| हासम् | २. | हास्य का ध्यान करे | सम्मोहनाय | १४. | मोहित करने के लिये |
| हरेः | १. | भगवान् श्री हरि के | रचितम् | १७. | निर्मित है |
| अवनत | ४. | प्रणत | निजमायया | १६. | अपनी माया से |
| अखिल,लोक | ३,५. | जो समस्त, जनों के | अस्य | १५. | भगवान् के द्वारा |
| तीव्र, शोक | ६. | भयंकर, शोक से उत्पन्न | भ्रूः | १०. | भौंहों का |
| अश्रु, सागर | ७. | आँसुओं के, सागर को | मण्डलम् | ११. | ध्यान करे (जो) |
| विशोषणम् । | ८. | सुखा देता है (और) | मुनिकृते | १२. | मुनियों के हित के लिये (और) |
| अतिउदारम् । | ९. | बहुत ही, दयालु है (तदनन्तर) | मकरध्वजस्य ॥ | १३. | कामदेव को |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के हास्य का ध्यान करे; जो समस्त प्रणत जनों के भयंकर शोक से उत्पन्न आँसुओं के सागर को सुखा देता है और बहुत ही दयालु है। तदनन्तर भौंहों का ध्यान करे; जो मुनियों के हित के लिये और कामदेव को मोहित करने के लिये भगवान् के द्वारा अपनी माया से निर्मित है॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**ध्यानायनं प्रहसितं बहुलाधरोष्ठभासारुणायिततनुद्विजकुन्दपङ्क्ति ।**
**ध्यायेत्स्वदेहकुहरेऽवसितस्य विष्णोर्भक्त्याऽऽर्द्रयार्पितमना न पृथग्दिदृक्षेत् ।३३**

पदच्छेद—

ध्यान अयनम् प्रहसितम् बहुल अधरोष्ठ भासा अरुणायित तनुद्विज कुन्द पंक्ति ।
ध्यायेत् स्वदेह कुहरे अवसितस्य विष्णोः भक्त्या आर्द्रया अर्पितमनाः न पृथक् दिदृक्षेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ध्यान, अयनम् | ७. ध्यान के, योग्य हैं (जिसमें) | ध्यायेत् | ६. ध्यान करना चाहिये (जो) |
| प्रहसितम् | ५. अट्टहास का | स्वदेह, कुहरे | ३. अपने शरीर के अन्दर हृदय में |
| बहुल | ६. गाढ़ी | अवसितस्य, विष्णोः | ४. विराजमान, भगवान् श्री हरि के |
| अधरोष्ठ | ८. ऊपर-नीचे के होठों की | भक्त्या | २. भक्ति-भाव से |
| भासा | १०. लालिमा से | आर्द्रया | १. प्रेम-पूर्ण |
| अरुणायित | १४. लाल लगती है (उसमें) | अर्पितमनाः | १५. तन्मय होकर उसके |
| तनुद्विज | १२. छोटे-छोटे दाँतों की | न | १७. नहीं |
| कुन्द, | ११. कुन्द पुष्प के समान, | पृथक् | १६. अतिरिक्त किसी को |
| पंक्ति । | १३. पङ्क्तियाँ | दिदृक्षेत् ॥ | १८. देखने की इच्छा करे |

श्लोकार्थ—प्रेम-पूर्ण भक्ति-भाव से अपने शरीर के अन्दर हृदय में विराजमान भगवान् श्री हरि के अट्टहास का ध्यान करना चाहिये। जिसमें ऊपर-नीचे के होठों की गाढ़ी लालिमा से कुन्द पुष्प के समान छोटे-छोटे दाँतों की पङ्क्तियाँ लाल लगती हैं। उसमें तन्मय होकर उसके अतिरिक्त किसी को देखने की इच्छा नहीं करे ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**एवं हरौ भगवति प्रतिलब्धभावो भक्त्या द्रवद्धृदय उत्पुलकः प्रमोदात् ।**
**औत्कण्ठ्यबाष्पकलया मुहुरर्द्यमानस्तच्चापि चित्तबडिशं शनकैर्वियुङ्क्ते ॥३४॥**

पदच्छेद—

एवम् हरौ भगवति प्रतिलब्ध भावः भक्त्या द्रवत् हृदय उत्पुलकः प्रमोदात् ।
औत्कण्ठ्य बाष्प कलया मुहुः अर्द्यमानः तद् च अपि चित्त बडिशम् शनकैः वियुङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| एवम् | ३. इस प्रकार के ध्यान से (पुरुष) | औत्कण्ठ्य, बाष्प | ११. उत्कण्ठा से उत्पन्न, आँसुओं की |
| हरौ | २. श्री हरि में | कलया, मुहुः | १२. धारा से वह बार-बार |
| भगवति | १. भगवान् | अर्द्यमानः | १३. शरीर को भिगोने लगता है |
| प्रतिलब्ध | ५. प्राप्त कर लेता है | तद् | १६. उस |
| भावः | ४. भक्ति-भाव को | च | १४. तदनन्तर |
| भक्त्या | ६. भक्ति से (उसका) | अपि | १८. भी |
| द्रवत् | ८. द्रवित हो जाता है (और) | चित्त | १७. साधन भूत मन को |
| हृदय | ७. हृदय | बडिशम् | १५. मछली पकड़ने के काँटे के समान |
| उत्पुलकः | १२. रोमाञ्च हो जाता है | शनकैः | १९. धीरे-धीरे |
| प्रमोदात् । | ९. आनन्द के कारण शरीर में | वियुङ्क्ते ॥ | २०. परमात्मा से अलग कर लेता है |

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि में इस प्रकार के ध्यान से पुरुष भक्ति-भाव को प्राप्त कर लेता है। भक्ति से उसका हृदय द्रवित हो जाता है और आनन्द के कारण शरीर में रोमाञ्च हो जाता है। उत्कण्ठा से उत्पन्न आँसुओं की धारा से वह बार-बार शरीर को भिगोने लगता है। तदनन्तर मछली पकड़ने के काँटे के समान उस साधन-भूत मन को भी धीरे-धीरे परमात्मा से अलग कर लेता है ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

**मुक्ताश्रयं यर्हि निर्विषयं विरक्तं निर्वाणमृच्छति मनः सहसा यथार्चिः ।**
**आत्मानमत्र पुरुषोऽव्यवधानमेकमन्वीक्षते प्रतिनिवृत्तगुणप्रवाहः ॥३५॥**

पदच्छेद—

मुक्त आश्रयम् यर्हि निर्विषयम् विरक्तम् निर्वाणम् ऋच्छति मनः सहसा यथा अर्चिः ।
आत्मानम् अत्र पुरुष अव्यवधानम् एकम् अन्वीक्षते प्रतिनिवृत्त गुणप्रवाहः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मुक्त | ४. | बिना | यथा | ६. | समान |
| आश्रयम् | ३. | आश्रय के | अर्चिः । | ८. | दीपक की लौ के |
| यर्हि | १. | जब | आत्मानम् | १८. | आत्मा को |
| निर्विषयम् | ५. | विषयों से रहित (और) | अत्र | १५. | यहाँ सब जगह |
| विरक्तम् | ६. | आसक्ति से दूर हो जाता है | पुरुष | १२. | तदनन्तर पुरुष |
| निर्वाणम् | १०. | ब्रह्म स्वरूप को | अव्यवधानम् | १७. | अखण्ड |
| ऋच्छति | ११. | प्राप्त कर लेता है | एकम् | १६. | एक |
| मनः | २. | चित्त | अन्वीक्षते | १९. | व्याप्त देखता है |
| सहसा | ७. | (तब-तक) अकस्मात् | प्रतिनिवृत्त | १४. | समाप्त हो जाने से |
| | | | गुणप्रवाहः ॥ | १३. | देहादि उपाधियों के |

श्लोकार्थ—जब चित्त आश्रय के बिना विषयों से रहित और आसक्ति से दूर हो जाता है । तब-वह अकस्मात् दीपक की लौ के समान ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त कर लेता है । तदनन्तर पुरुष देहादि उपाधियों के समाप्त हो जाने से यहाँ सब जगह एक अखण्ड परमात्मा को व्याप्त देखता है ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

**सोऽप्येतया चरमया मनसो निवृत्त्या तस्मिन्महिम्न्यवसितः सुखदुःखबाह्ये ।**
**हेतुत्वमप्यसति कर्तरि दुःखयोर्यत् स्वात्मन् विधत्त उपलब्धपरात्मकाष्ठः ॥३६॥**

पदच्छेद—

सः अपि एतया चरमया मनसः निवृत्त्या तस्मिन्, महिम्नि अवसितः सुख दुःख-बाह्ये ।
हेतुत्वम् अपि, असति कर्तरि दुःखयोः यत्, स्वात्मन् विधत्ते उपलब्ध परात्मकाष्ठः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| सः | १. वह योगि-पुरुष | बाह्ये । | ८. रहित |
| अपि | २. भी | हेतुत्वम् | १६. कारण मानता था |
| एतया | ४. इस | अपि, असति | १७. कारण अब अहंकार को |
| चरमया | ५. अन्तिम | कर्तरि | १५. कर्तापन का |
| मनसः | ३. चित्त की | दुःखयोः | १४. सुख, दुःख के |
| निवृत्त्या | ६. निवृत्ति हो जाने से | यत् स्वात्मन् | १३. जो, अपनी आत्मा को |
| तस्मिन्, महिम्नि | ९. उस, आत्मा की महिमा में | विधत्ते | १८. समझने लगता है |
| अवसितः | १०. स्थित हो जाता है | उपलब्ध | १२. साक्षात्कार कर लेने पर (वह) |
| सुख-दुःख | ७. सुख और दुःख से | परात्म काष्ठः ॥ | ११. परमात्मा के स्वरूप का |

श्लोकार्थ—वह योगि-पुरुष भी चित्त की इस अन्तिम निवृत्ति हो जाने से सुख और दुःख से रहित उस आत्मा की महिमा में स्थित हो जाता है । परमात्मा के स्वरूप का साक्षात्कार कर लेने पर वह जो अपनी आत्मा को सुख-दुःख के कर्तापन का कारण मानता था । अब अहंकार को समझने लगता है ॥

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

देहं च तं न चरमः स्थितमुत्थितं वा।
सिद्धो विपश्यति यतोऽध्यगमत्स्वरूपम् ॥
दैवादुपेतमथ दैववशादपेतं ।
वासो यथा परिकृतं मदिरामदान्धः ॥३७॥

पदच्छेद—

देहम् च तम् न चरमः स्थितम् उत्थितम् वा सिद्ध विपश्यति यतः अध्यगमत् स्वरूपम् । दैवात् उपेतम् अथ दैववशात् अपेतम् वासः यथा परिकृतम् मदिरा मद अन्धः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देहम् | १०. | शरीर के | दैवात् | १४. | भाग्य से |
| च | २२. | वह | उपेतम् | १५. | कहीं जाने |
| तम् | ६. | उस | अथ | १६. | अथवा |
| न | १९. | नहीं | दैववशात् | १७. | भाग्य वश |
| चरमः | ७. | अन्तिम अवस्था को प्राप्त | अपेतम् | १८. | कहीं से आने का |
| स्थितम् | १३. | बैठने का (और) | वासः | ६. | वस्त्र का ध्यान नहीं रहता है। (उसी प्रकार) |
| उत्थितम् | ११. | खड़े होने का | यथा | १. | जैसे |
| वा | १२. | अथवा | परिकृतम् | ५. | पहने हुये |
| सिद्ध | ८. | योगि-पुरुष (को अपने) | मदिरा | २. | मदिरा के |
| विपश्यति | २०. | ज्ञान रहता है | मद | ३. | नशे से |
| यतः | २१. | क्योंकि | अन्धः ॥ | ४. | मतवाले पुरुष को |
| अध्यगमत् | २४. | स्थित रहता है | स्वरूपम् । | २३. | परमानन्द स्वरूप में |

श्लोकार्थ—जैसे मदिरा के नशे से मतवाले पुरुष को पहने हुये वस्त्र का ध्यान नहीं रहता है। उसी तरह अन्तिम अवस्था को प्राप्त योगिपुरुष को अपने उस शरीर के खड़े होने का अथवा बैठने का और भाग्य से कहीं जाने अथवा भाग्यवश कहीं से आने का ज्ञान नहीं रहता है। क्योंकि वह परमानन्द स्वरूप में स्थिर रहता है ॥

# अष्टत्रिंशः श्लोकः

देहोऽपि देववशगः खलु कर्म यावत् ।
स्वारम्भकं प्रतिसमीक्षत एव सासुः ॥
तं सप्रपञ्चमधिरूढसमाधियोगः ।
स्वाप्नं पुनर्न भजते प्रतिबुद्धवस्तुः ॥३८॥

पदच्छेद—

देहः अपि दैव वशगः खलु कर्म यावत् स्वारम्भकम् प्रतिसमोक्षते एव सः असुः ।
तम् सप्रपञ्चम् अधिरूढ समाधि योगः स्वाप्नम् पुनः न भजते प्रतिबुद्ध वस्तुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देहः | ३. | यह शरीर | तम् | १८. | उस शरीर को |
| अपि | ४. | भी | सप्रपञ्चम् | १७. | प्रपञ्च वाले |
| दैव | १. | कर्म के | अधिरूढ | १३. | स्थित होकर |
| वशगः | २. | अधीन रहने वाला | समाधि योगः | १२. | समाधि में |
| खलु | ८. | रहता है | स्वाप्नम् | १६. | स्वप्न के समान |
| कर्म | ७. | कर्म | पुनः | १९. | फिर से |
| यावत् | ५. | जब-तक | न | २०. | नहीं |
| स्वारम्भकम् | ६. | प्रारब्ध | भजते | २१. | धारण करता है |
| प्रतिसमोक्षते | ११. | प्रतीक्षा करता है (तदनन्तर) | प्रतिबुद्ध | १५. | साक्षात्कार कर लेने पर वह (योगी) |
| एव | ९. | तभी तक | वस्तुः ॥ | १४. | परमात्मा का |
| सः असुः ॥ | १०. | इन्द्रियों के साथ (जीव की) | | | |

श्लोकार्थ—कर्म के अधीन रहने वाला यह शरीर भी जब-तक प्रारब्ध कर्म रहता है, तभी तक इन्द्रियों के साथ जीव की प्रतीक्षा करता है। तदनन्तर समाधि में स्थित होकर परमात्मा का साक्षात्कार कर लेने पर वह योगी स्वप्न के समान प्रपञ्च वाले उस शरीर को फिर से नहीं धारण करता है ॥

## एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

**यथा पुत्राच्च वित्ताच्च पृथङ्मर्त्यः प्रतीयते ।**
**अप्यात्मत्वेनाभिमताद्देहादेः पुरुषस्तथा ॥३९॥**

पदच्छेद—

यथा पुत्राच्च वित्तात् च पृथक् मर्त्यः प्रतीयते ।
अपि आत्मत्वेन अभिमतात् देह आदेः पुरुषः तथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे (विचार करने पर) | अपि | १३. | अलग है |
| पुत्रात् च | ३. | पुत्र से और | आत्मत्वेन | ९. | आत्मरूप से |
| वित्तात् च | ४. | धन से | अभिमतात् | १०. | मान्य |
| पृथक् | ५ | अलग | देह | ११. | शरीर |
| मर्त्यः | २. | जीव | आदेः | १२. | इन्द्रिय इत्यादि से |
| प्रतीयते । | ६. | प्रतीत होता है | पुरुषः | ८. | पुरुष |
| | | | तथा ॥ | ७. | उसी प्रकार |

श्लोकार्थ—जैसे विचार करने पर जीव पुत्र से और धन से अलग प्रतीत होता है। उसी प्रकार पुरुष आत्म-स्वरूप से मान्य शरीर इन्द्रिय इत्यादि से अलग है ॥

## चत्वारिंशः श्लोकः

**यथोल्मुकाद्विस्फुलिङ्गाद्धूमाद्वापि स्वसम्भवात् ।**
**अप्यात्मत्वेनाभिमताद्यथाग्निः पृथगुल्मुकात् ॥४०॥**

पदच्छेद—

यथा उल्मुकात् विस्फुलिङ्गात्, धूमात् वा अपि स्व सम्भवात् ।
अपि आत्मत्वेन अभिमतात्, यथा अग्निः पृथक् उल्मुकात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे | अपि | ८. | तथा |
| उल्मुकात् | २. | जलती लकड़ी से | आत्मत्वेन | १०. | आत्मरूप में |
| विस्फुलिङ्गात् | ३. | चिनगारी | अभिमतात् | ११. | मान्य |
| धूमात् | ७. | धुयें से | यथा | ९. | जैसे |
| वा अपि | ४. | अथवा | अग्निः | १३. | आग |
| स्व | ५. | अपने से | पृथक् | १४. | अलग है |
| सम्भवात् । | ६. | उत्पन्न | उल्मुकात् ॥ | १२. | जलती लकड़ी से |

श्लोकार्थ—जैसे जलती लकड़ी से चिनगारी अथवा अपने से उत्पन्न धुयें से तथा जैसे आत्मारूप में मान्य आग अलग है ॥

# एकचत्वारिंशः श्लोकः

भूतेन्द्रियान्तःकरणात्प्रधानाज्जीवसंज्ञितात् ।
आत्मा तथा पृथग्द्रष्टा भगवान् ब्रह्मसंज्ञितः ॥४१॥

पदच्छेद—

भूत इन्द्रिय अन्तः करणात् प्रधानात् जीवसंज्ञितात् ।
आत्मा तथा पृथक् द्रष्टा भगवान् ब्रह्म संज्ञितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भूत | २. | शरीरादि पञ्चमहाभूत | आत्मा | ५. | आत्मा |
| इन्द्रिय | ३. | चक्षुः आदि इन्द्रिय (और) | तथा | १. | उसी प्रकार |
| अन्तःकरणात् | ४. | अन्तः करण से | पृथक् | १३. | अलग है |
| प्रधानात् | ६. | प्रकृति से | द्रष्टा | ७. | साक्षी पुरुष (तथा) |
| जीव | ८. | जीव | भगवान् | १२. | भगवान् श्री हरि |
| संज्ञितात् । | ९. | नामक आत्मा से | ब्रह्म | १०. | ब्रह्म |
| | | | संज्ञितः ॥ | ११. | नाम वाले |

श्लोकार्थ—उसी प्रकार शरीरादि-पञ्चमहाभूत चक्षुः आदि इन्द्रिय और अन्तः करण से आत्मा प्रकृति से साक्षी पुरुष तथा जीव नामक आत्मा से ब्रह्मनाम वाले भगवान् श्री हरि अलग हैं ॥

# द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षेतानन्यभावेन भूतेष्विव तदात्मताम् ॥४२॥

पदच्छेद—

सर्वभूतेषु च आत्मानं सर्वभूतानि च आत्मनि ।
ईक्षेत अनन्य भावेन भूतेषु इव तद् आत्मताम् ॥

शब्दार्थं—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सर्व | ५. | सभी | आत्मनि । | ११. | आत्मामें |
| भूतेषु | ६. | प्राणियों में | ईक्षेत | १४. | देखना चाहिये |
| च | ८. | और | अनन्य | १२. | समान |
| आत्मानम् | ७. | आत्मा को | भावेन | १३. | रूप से |
| सर्व | ९. | सभी | भूतेषु | २. | सभी शरीरों में |
| भूतानि | १०. | प्राणियों को | इव | १. | जैसे |
| च | ४. | उसी प्रकार | तदात्मताम् ॥ | ३. | समानता है |

श्लोकार्थं— जैसे-सभी शरीरों में समानता है। उसी प्रकार सभी प्राणियों में आत्मा को और सभी प्राणियों को आत्मा में समान रूप से देखना चाहिये ॥

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

**स्वयोनिषु यथा ज्योतिरेकं नाना प्रतीयते ।**
**योनीनां गुणवैषम्यात्तथाऽऽत्मा प्रकृतौ स्थितः ॥४३॥**

पदच्छेद—

स्वयोनिषु यथा ज्योतिः एकम् नाना प्रतीयते ।
योनीनाम् गुणवैषम्यात् तथा आत्मा प्रकृतौ स्थितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्व | ४. | अपने | योनीनाम् | ९. | कारणों के |
| योनिषु | ५. | आश्रमों के भेद से | गुण | १०. | गुणों की |
| यथा | १. | जैसे | वैषम्यात् | ११. | विषमता से |
| ज्योतिः | ३. | अग्नि | तथा | ८. | उसी प्रकार |
| एकम् | २. | एक ही | आत्मा | १२. | एक ही आत्मा |
| नाना | ६. | अनेक रूपों में | प्रकृतौ | १३. | प्रकृति में (अनेक रूप से) |
| प्रतीयते । | ७. | प्रतीत होती है | स्थितः । | १४. | भासित होता है |

श्लोकार्थ—जैसे एक ही अग्नि अपने आश्रमों के भेदसे अनेक रूपों में प्रतीत होता है । उसी प्रकार कारणों के गुणों की विषमता से एक ही आत्मा प्रकृति में अनेक रूपों में भासित होता है ॥

## चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

**तस्मादिमां स्वां प्रकृतिं दैवीं सदसदात्मिकाम् ।**
**दुर्विभाव्यां पराभाव्य स्वरूपेणावतिष्ठते ॥४४॥**

पदच्छेद—

तस्मात् इमाम् स्वाम् प्रकृतिम् दैवीम् सद् असद् आत्मिकाम् ।
दुर्विभाव्याम् पराभाव्य स्वरूपेण अवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. | इसलिये (योगी पुरुष-अपने) | असद् | ४. | कार्य |
| इमाम् | ८. | इस | आत्मिकाम् । | ५. | स्वरूपा (और) |
| स्वाम् | ७. | अपनी | दुर्विभाव्याम् | ६. | अचिन्त्य शक्तिमयी |
| प्रकृतिम् | ९. | माया को | पराभाव्य | १०. | जीत कर |
| दैवीम् | २. | स्वरूप को ढँक देने वाली | स्वरूपेण | ११. | अपने ब्रह्म स्वरूप में |
| सद् | ३. | कारण | अवतिष्ठते ॥ | १२. | स्थित होता है ॥ |

श्लोकार्थ—इसीलिये योगी पुरुष अपने स्वरूप को ढँक देने वाली कारण-कार्य स्वरूपा और अचिन्त्य शक्तिमयी अपनी इस माया को जीत कर अपने ब्रह्म-स्वरूप में स्थित होता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये साधनानुष्ठानं अष्टविंशः अध्यायः समाप्तः ॥२८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

एकोनत्रिंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—लक्षणं महदादीनां प्रकृतेः पुरुषस्य च ।
स्वरूपं लक्ष्यतेऽमीषां येन तत्पारमार्थिकम् ॥१॥

पदच्छेद—

लक्षणम् महद् आदीनाम् प्रकृतेः पुरुषस्य च ।
स्वरूपम् लक्ष्यते अमीषाम् येन तस्य पारमार्थिकम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लक्षणम् | ७. | लक्षण (तथा) | स्वरूपम् | ११. | स्वरूप |
| महद् | ५. | महत्तत्त्व | लक्ष्यते | १२. | ज्ञात होता है (उसे आपने बताया) |
| आदीनाम् | ६. | इत्यादि का | अमीषाम् | ८. | उनका |
| प्रकृतेः | २. | प्रकृति | येन | १. | जिस सांख्य शास्त्र से |
| पुरुषस्य | ३. | पुरुष | तस्य | ९. | वह |
| च । | ४. | और | पारमार्थिकम् ॥ | १०. | वास्तविक |

श्लोकार्थ—जिस सांख्यशाख्य शास्त्र से प्रकृति पुरुष और महत्तत्त्व इत्यादि का लक्षण तथा उनका वह वास्तविक स्वरूप ज्ञात होता है। उसे आपने बताया।

## द्वितीयः श्लोकः

यथा सांख्येषु कथितं यन्मूलं तत्प्रचक्षते ।
भक्तियोगस्य मे मार्गं ब्रूहि विस्तरशः प्रभो ॥२॥

पदच्छेद—

यथा सांख्येषु कथितम् यत् मूलम् तत् प्रचक्षते ।
भक्ति योगस्य मे मार्गम् ब्रूहि विस्तरशः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | ३. | संसार का जैसा | भक्ति | ११. | भक्ति |
| सांख्येषु | २. | सांख्यशास्त्र में | योगस्य | १२. | योग का |
| कथितम् | ६. | कहा गया है | मे | ९. | (अब) मुझे |
| यत् | ४. | जो | मार्गम् | १३. | स्वरूप |
| मूलम् | ५. | कारण | ब्रूहि | १४. | बतावें |
| तत् | ७. | उसे (आपने) | विस्तरशः | १०. | विस्तार से |
| प्रचक्षते । | ८. | बता दिया | प्रभो ॥ | १. | हे भगवन् ॥ |

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सांख्यशास्त्र में संसार का जैसा जो कारण कहा गया है। उसे आपने बता दिया। अब मुझे विस्तार से भक्ति-योग का स्वरूप बतायें ॥

## तृतीयः श्लोकः

**विरागो येन पुरुषो भगवन् सर्वतो भवेत् ।**
**आचक्ष्व जीवलोकस्य विविधा मम संसृतीः ॥३॥**

पदच्छेद—

विरागः येन पुरुषः भगवन् सर्वतः भवेत् ।
आचक्ष्व जीव लोकस्य विविधा मम संसृतीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विरागः | ४. | वैराग्य | आचक्ष्व | १२. | बतावें |
| येन | १. | जिस भक्ति योग से | जीव | ८. | प्राणियों की |
| पुरुषः | २. | पुरुष को | लोकस्य | ७. | सभी लोकों के |
| भगवन् | ६. | हे प्रभो ! | विविधा | ९. | अनेक प्रकार की |
| सर्वतः | ३. | सभी वस्तुओं से | मम | ११. | मुझे |
| भवेत् । | ५. | हो जाता है (तदनन्तर) | संसृतीः ॥ | १०. | जन्म-मरणादि गतियों को भी |

श्लोकार्थ—जिस भक्तियोग से पुरुष को सभी वस्तुओं से वैराग्य हो जाता है । तदनन्तर हे प्रभो ! सभी लोकों के प्राणियों की जन्म-मरणादि गतियों को भी बतावें ॥

## चतुर्थः श्लोकः

**कालस्येश्वररूपस्य परेषां च परस्य ते ।**
**स्वरूपं बत कुर्वन्ति यद्धेतोः कुशलं जनाः ॥४॥**

पदच्छेद—

कालस्य ईश्वररूपस्य परेषाम् च परस्य ते ।
स्वरूपम् बत् कुर्वन्ति यद् हेतोः कुशलम् जनाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कालस्य | ११. | काल भगवान् का | स्वरूपम् | १२. | स्वरूप (बतावें) |
| ईश्वररूपस्य | ६. | सर्व समर्थ | बत् | १. | आश्चर्य है (कि) |
| परेषाम् | ८. | ब्रह्मादि देवताओं के | कुर्वन्ति | ५. | करते हैं (उस) |
| च | ७. | और | यद् | ३. | जिसमें |
| परस्य | ९. | स्वामी | हेतोः कुशलम् | ४. | भय से, शुभकर्म |
| ते | १०. | आप | जनाः ॥ | २. | मनुष्य |

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि मनुष्य जिसके भय से शुभ कर्म करते हैं, उस सर्व समर्थ और ब्रह्मादि देवताओं के स्वामी आप काल भगवान् का स्वरूप बतावें ॥

## पञ्चमः श्लोकः

**लोकस्य मिथ्याभिमतेरचक्षुषश्चिरं प्रसुप्तस्य तमस्यनाश्रये ।**
**श्रान्तस्य कर्मस्वनुविद्धया धिया त्वमाविरासीः किल योगभास्करः ॥५॥**

पदच्छेद—
लोकस्य मिथ्या अभिमतेः अचक्षुषः चिरम् प्रसुप्तस्य तमसि अनाश्रये ।
श्रान्तस्य कर्मसु अनुविद्धया धिया त्वम् आविरासीः किल योग भास्करः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लोकस्य | ११. | लोगों को | श्रान्तस्य | १०. | थके हुये |
| मिथ्या | २. | देहादि अनित्य वस्तुओं में | कर्मसु, अनुविद्धया | ८. | कर्म में आसक्त |
| अभिमतेः | ३. | आत्माभिमान करने वाले | धिया | ९. | बुद्धि के कारण |
| अचक्षुषः | १. | हे प्रभो ! अज्ञान के कारण | त्वम् | १३. | आप |
| चिरम् | ६. | दीर्घ काल तक | आविरासीः | १६. | प्रकट हुये हैं |
| प्रसुप्तस्य | ७. | सोये हुये (तथा) | किल | १५. | रूप में |
| तमसि | ५. | अज्ञानान्धकार में | योग | १२. | योग का उपदेश देने के लिये |
| अनाश्रये । | ४. | अपार | भास्करः ॥ | १४. | सूर्य के |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! अज्ञान के कारण देहादि अनित्य वस्तुओं में आत्माभिमान करने वाले अपार अज्ञानान्धकार में दीर्घकाल तक सोये हुये, तथा कर्म में आसक्त बुद्धि के कारण थके हुये लोगों को योग का उपदेश देने के लिये आप सूर्य के रूप में प्रकट हुये हैं ॥

## षष्ठः श्लोकः

**मैत्रेय उवाच—इति मातुर्वचः श्लक्ष्णं प्रतिनन्द्य महामुनिः ।**
**आबभाषे कुरुश्रेष्ठ प्रीतस्तां करुणार्दितः ॥६॥**

पदच्छेद—
इति मातुः वचः श्लक्ष्णम् प्रतिनन्द्य महामुनिः ।
आबभाषे कुरुश्रेष्ठ प्रीतः ताम् करुणा अर्दितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | २. | इस प्रकार | आबभाषे | १२. | बोले |
| मातुः | ३. | अपनी माता के | कुरुश्रेष्ठ | १. | हे विदुर जी ! |
| वचः | ५. | वचन की | प्रीतः | १०. | प्रसन्न होकर |
| श्लक्ष्णम् | ४. | मधुर | ताम् | ११. | अपनी माता से |
| प्रतिनन्द्य | ६. | प्रशंसा करके | करुणा | ८. | दया से |
| महामुनिः । | ७. | महामुनि कपिल जी | अर्दितः ॥ | ९. | द्रवित और |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार अपनी माता के मधुर वचन की प्रशंसा करके महामुनि कपिल जी दया से द्रवित और प्रसन्न होकर अपनी माता से बोले ॥

## सप्तमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—भक्तियोगो बहुविधो मार्गैर्भामिनि भाव्यते ।
स्वभावगुणमार्गेण पुंसां भावो विभिद्यते ॥७॥

पदच्छेद—

भक्तियोग बहुविधः मार्गैः भामिनि भाव्यते ।
स्वभाव गुण मार्गेण पुंसाम् भावः विभिद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भक्तियोग | ३. | भक्ति योग | स्वभाव | ६. | स्वभाव (और) |
| बहुविधः | ४. | अनेक प्रकार का | गुण | ७. | गुण के |
| मार्गैः | २. | भाव के भेद से | मार्गेण | ८. | भेद से |
| भामिनि | १. | हे मातः । | पुंसाम् | ९. | मनुष्यों की |
| भाव्यते । | ५. | बताया गया है (तथा) | भावः | १०. | भावनायें (भी) |
| | | | विभिद्यते ॥ | ११. | अनेक प्रकार की होती हैं |

श्लोकार्थ—हे मातः ! भाव के भेद से भक्ति योग अनेक प्रकार का बताया गया है तथा स्वभाव और गुण के भेद से मनुष्यों की भावनायें भी अनेक प्रकार की होती हैं ॥

## अष्टमः श्लोकः

अभिसंधाय यो हिंसां दम्भं मात्सर्यमेव वा ।
संरम्भी भिन्नदृग्भावं मयि कुर्यात्स तामसः ॥८॥

पदच्छेद—

अभिसंधाय यः हिंसाम् दम्भम् मात्सर्यम् एव वा ।
संरम्भी भिन्नदृग्भावं मयि कुर्यात् सः तामसः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अभिसंधाय | ८. | भाव से | संरम्भी | २. | क्रोधी |
| यः | १. | जो मनुष्य | भिन्नदृग्भावं | ३. | भेद-भाव रखने वाला |
| हिंसाम् | ४. | और हिंसा | मयि | ८. | मुझमें |
| दम्भम् | ५. | अहंकार | कुर्यात् | ९. | भक्ति करता है |
| मात्सर्यम् | ७. | ईर्ष्या से | सः | १०. | वह |
| एव वा | ६. | अथवा | तामसः ॥ | ११. | तामस भक्त कहलाता है |

श्लोकार्थ—जो मनुष्य क्रोधी, भेद-भाव रखने वाला और हिंसा, अहंकार, अथवा ईर्ष्या से मुझमें भक्ति करता है, वह तामस भक्त कहलाता है ॥

## नवमः श्लोकः

**विषयानभिसंधाय यश ऐश्वर्यमेव वा ।**
**अर्चादावर्चयेद्यो मां पृथग्भावः स राजसः ॥९॥**

पदच्छेद—

विषयान् अभिसंधाय यशः ऐश्वर्यम् एव वा ।
अर्चा आदौ अर्चयेत् यः माम् पृथक् भावः सः राजसः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विषयान् | ५. | विषयों की | अर्चा आदौ | ८. | मूर्ति आदि में |
| अभिसंधाय | ६. | कामना से | अर्चयेत् | १०. | पूजा करता है |
| यशः | २. | यश | यः | १. | जो मनुष्य |
| ऐश्वर्यम् | ३. | ऐश्वर्य | माम् | ९. | मेरी |
| एव | ७. | ही | पृथक् भावः | ११. | भेद-भाव रखने वाला |
| वा । | ४. | अथवा | सः राजसः ॥ | १२. | वह राजस भक्त (कहलाता है) |

श्लोकार्थ—जो मनुष्य ऐश्वर्य, यश अथवा विषयों की कामना से ही मूर्ति आदि में मेरी पूजा करता है। भेद-भाव रखने वाला वह राजस भक्त कहलाता है ॥

## दशमः श्लोकः

**कर्मनिर्हारमुद्दिश्य परस्मिन् वा तदर्पणम् ।**
**यजेद्यष्टव्यमिति वा पृथग्भावः स सात्त्विकः ॥१०॥**

पदच्छेद—

कर्म निर्हारम् उद्दिश्य परस्मिन् वा तद् अर्पणम् ।
यजेत् यष्टव्यम् इति वा पृथक् भावः सः सात्त्विकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कर्म | १. | (जो मनुष्य) पापों के | यजेत् | ११. | भजन करता है |
| निर्हारम् | २. | नाश के | यष्टव्यम् | ९. | भजन करना चाहिये |
| उद्दिश्य | ३. | प्रयोजन से | इति | १०. | इस भावना से |
| परस्मिन् | ५. | परमात्मा में | वा | ८. | अथवा |
| वा | ४. | अथवा | पृथक् भावः | १२. | भेद- दृष्टि वाला |
| तद् | ६. | कर्मों के | सः | १३. | वह |
| अर्पणम् । | ७. | समर्पण के लिये | सात्त्विकः ॥ | १४. | सात्त्विक भक्त कहलाता है |

श्लोकार्थ—जो मनुष्य पापों के नाश के प्रयोजन से अथवा परमात्मा में कर्मों के समर्पण के लिये अथवा भजन करना चाहिये इस भावना से भजन करता है। भेद दृष्टि वाला वह सात्त्विक भक्त कहलाता है ॥

## एकादशः श्लोकः

**मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्वगुहाशये ।**
**मनोगतिरविच्छिन्ना यथा गङ्गाम्भसोऽम्बुधौ ॥११॥**

पदच्छेद—

मद् गुण श्रुति मात्रेण मयि सर्व गुहाशये ।
मनो गतिः अविच्छिन्ना यथा गङ्गा अम्भसः अम्बुधौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मद् | ५. | (उसी प्रकार) मेरे | मनो | ११. | मन की |
| गुण | ६. | गुणों को | गतिः | १२. | स्थिति (निर्गुण भक्ति है) |
| श्रुति | ७. | श्रवण | अविच्छिन्ना | ४. | निरन्तर गिरता रहता है |
| मात्रेण | ८. | मात्र से | यथा | १. | जैसे |
| मयि | ९. | मुझ | गङ्गा अम्भसः | २. | गङ्गा का प्रवाह |
| सर्व गुहाशये । | १०. | सर्वान्तिर्यामि में | अम्बुधौ ॥ | ३. | समुद्र में |

श्लोकार्थ—जैसे गङ्गा का प्रवाह समुद्र में निरन्तर गिरता रहता है । उसी प्रकार मेरे गुणों के श्रवण मात्र से मुझ सर्वान्तिर्यामि में मन की स्थिति निर्गुण भक्ति है ॥

## द्वादशः श्लोकः

**लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतम् ।**
**अहैतुक्यव्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥१२॥**

पदच्छेद—

लक्षणम् भक्ति योगस्य निर्गुणस्य हि उदाहृतम् ।
अहैतुकी व्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| लक्षणम् | १०. | लक्षण | अहैतुकी | ३. | निष्काम (और) |
| भक्ति | ८. | भक्ति | व्यवहिता | ४. | अनन्य |
| योगस्य | ९. | योग का | या | २. | जो |
| निर्गुणस्य | ७. | निर्गुण | भक्तिः | ५. | प्रेम (है) |
| हि | ६. | वही | पुरुषोत्तमे ॥ | १. | भगवान् पुरुषोत्तम में |
| उदाहृतम् । | ११. | कहा गया है | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् पुरुषोत्तम में जो निष्काम और अनन्य प्रेम है । वही निर्गुण भक्ति योग का लक्षण कहा गया है ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

**सालोक्यसार्ष्टिसामीप्यसारूप्यैकत्वमप्युत ।**
**दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ॥१३॥**

पदच्छेद—

सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य सारूप्य एकत्वम् अपि उत ।
दीयमानम् न गृह्णन्ति विना मत् सेवनम् जनाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सालोक्य | ६. | भगवान् के धाम में नित्यनिवास | दीयमानम् | ५. | दिये जाने पर (भी) |
| सार्ष्टि | ७. | भगवत् ऐश्वर्य का भोग | न | १३. | नहीं |
| सामीप्य | ८. | भगवान् की नित्य सन्निधि | गृह्णन्ति | १४. | स्वीकार करते हैं |
| सारूप्य | ९. | भगवान् के समान रूप प्राप्ति | विना | ४. | छोड़कर |
| एकत्वम् | ११. | ब्रह्म रूप की प्राप्ति | मत् | २. | मेरी |
| अपि | १२. | भी | सेवनम् | ३. | सेवा भक्ति को |
| उत । | १०. | अथवा | जनाः ॥ | १. | भक्त जन |

श्लोकार्थ—भक्त जन मेरी सेवा भक्ति को छोड़कर दिये जाने पर भी भगवान् के धाम में नित्य निवास भगवत् ऐश्वर्य का भोग भगवान् की नित्य सन्निधि भगवान् के समान रूप प्राप्ति अथवा ब्रह्म रूप की प्राप्ति भी स्वीकार नहीं करते हैं ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

**स एव भक्तियोगाख्य आत्यन्तिक उदाहृतः ।**
**येनातिव्रज्य त्रिगुणं मद्भावायोपपद्यते ॥१४॥**

पदच्छेद—

सः एव भक्तियोग आख्य आत्यन्तिकः उदाहृतः ।
येन अतिव्रज्य त्रिगुणम् मद् भावाय उपपद्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वह | येन | ७. | जिससे (पुरुष) |
| एव | २. | ही | अतिव्रज्य | ९. | छोड़कर |
| भक्तियोग | ३. | भक्ति योग | त्रिगुणम् | ८. | तीनों गुणों को |
| आख्य | ४. | नाम से प्रसिद्ध | मद् | १०. | मेरी |
| आत्यन्तिकः | ५. | परम पुरुषार्थ | भावाय | ११. | प्रेमा भक्ति को |
| उदाहृतः। | ६. | कहा गया है | उपपद्यते ॥ | १२. | प्राप्त करता है |

श्लोकार्थ—वह ही भक्ति योग नाम से प्रसिद्ध परम पुरुषार्थ कहा गया है। जिससे तीनों गुणों को छोड़कर मेरी प्रेमा भक्ति को प्राप्त करता है ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

निषेवितेनानिमित्तेन स्वधर्मेण महीयसा ।
क्रियायोगेन शस्तेन नातिहिंस्रेण नित्यशः ॥१५॥

पदच्छेद—

निषेवितेन अनिमित्तेन स्व धर्मेण महीयसा ।
क्रियायोगेन शस्तेन न अतिहिंस्रेण नित्यशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निषेवितेन | ५. | पालन करने से (तथा) | क्रियायोगेन | १०. | क्रिया का अनुष्ठान करने से (भगवान् में लग जाता है मन) |
| अनिमित्तेन | १. | निष्काम भाव से | शस्तेन | ९. | उत्तम |
| स्व | ३. | अपने | न | ८. | रहित |
| धर्मेण | ४. | नित्य-नैमित्तिक धर्म का | अतिहिंस्रेण | ७. | हिंसा से |
| महीयसा । | २ | श्रद्धापूर्वक | नित्यशः ॥ | ६. | प्रतिदिन |

श्लोकार्थ—निष्काम भाव से श्रद्धापूर्वक अपने नित्य-नैमित्तिक धर्म का पालन करने से तथा प्रतिदिन हिंसा से रहित उत्तम क्रिया का अनुष्ठान करने से मन भगवान् में लग जाता है ॥

## षोडशः श्लोकः

मद्धिष्ण्यदर्शनस्पर्शपूजास्तुत्यभिवन्दनैः ।
भूतेषु मद्भावनया सत्त्वेनासङ्गमेन च ॥१६॥

पदच्छेद—

मद् धिष्ण्य दर्शन स्पर्श पूजा स्तुति अभिवन्दनैः ।
भूतेषु मद् भावनया सत्त्वेन असङ्गमेन च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मद् | १. | मेरी | भूतेषु | ७. | प्राणियों में |
| धिष्ण्य | २. | प्रतिमा का | मद् | ८. | मेरी |
| दर्शन | ३. | दर्शन | भावनया | ९. | भावना करने से |
| स्पर्श | ४. | स्पर्श | सत्त्वेन | ११. | धीरतापूर्वक (विषयों में) |
| पूजा, स्तुति | ५. | पूजा, स्तुति (और) | असङ्गमेन | १२. | अनासक्ति से (मन भगवान् में लगता है) |
| अभिवन्दनैः । | ६. | प्रणाम करने से | च ॥ | १०. | और |

श्लोकार्थ—मेरी प्रतिमा का दर्शन, स्पर्श, पूजा, स्तुति और प्रणाम करने से प्राणियों में मेरी भावना करने से और धीरतापूर्वक विषयों में अनासक्ति से मन भगवान् में लगता है

## सप्तदशः श्लोकः

महतां बहुमानेन दीनानामनुकम्पया ।
मैत्र्या चैवात्मतुल्येषु यमेन नियमेन च ॥१७॥

पदच्छेद—

महताम् बहुमानेन दीनानाम् अनुकम्पया ।
मैत्र्या च एव अत्मतुल्येषु यमेन नियमेन च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| महताम् | १. | महान् लोगों का | च | ८. | और |
| बहुमानेन | २. | आदर करने से | एव | ६. | ही |
| दीनानाम् | ३. | अनाथों पर | आत्मतुल्येषु | ५. | अपने समान लोगों में |
| अनुकम्पया । | ४. | कृपा करने से | यमेन | ९. | यम |
| मैत्र्या | ७. | मैत्री-भाव से | नियमेन | ११. | नियम का पालन करने से भगवान् में लगता है मन |
| च ॥ | १०. | एवं | | | |

श्लोकार्थ—महान् लोगों का आदर करने से अनाथों पर कृपा करने से अपने समान लोगों में ही मैत्री भाव से और यम एवम् नियम का पालन करने से मन भगवान् में लगता है ॥

## अष्टदशः श्लोकः

आध्यात्मिकानुश्रवणान्नामसङ्कीर्तनाच्च मे ।
आर्जवेनार्यसङ्गेन निरहंक्रियया तथा ॥१८॥

पदच्छेद—

आध्यात्मिक अनुश्रवणात् नाम संङ्कीर्तनात् च मे ।
आर्जवेन आर्य सङ्गेन निरहंक्रियया तथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आध्यात्मिक | १. | अध्यात्म विषयों का | आर्जवेन | ६. | सरलता से |
| अनुश्रवणात् | २. | श्रवण करने से | आर्य | ७. | श्रेष्ठ लोगों के |
| नाम संङ्कीर्तनात् | ४. | नाम का संकीर्तन करने से | सङ्गेन | ८. | सत्संग से |
| च | ५. | और | निरहंक्रियया | १०. | निरहंकार से मन भगवान् में |
| मे ॥ | ३. | मेरे | तथा ॥ | ९. | तथा |

श्लोकार्थ—अध्यात्म विषयों का श्रवण करने से मेरे नाम का संकीर्तन करने से और सरलता से श्रेष्ठ लोगों के सत्संग से तथा निरहंकार से मन भगवान् में लगता है ॥

# एकोनविंशः श्लोकः

मद्धर्मणो गुणैरेतैः परिसंशुद्ध आशयः ।
पुरुषस्याञ्जसाभ्येति श्रुतमात्रगुणं हि माम् ॥१९॥

पदच्छेद—

मद् धर्मणः गुणैः एतैः परिसंशुद्धः आशयः ।
पुरुषस्य अञ्जसा अभ्येति श्रुतमात्र गुणम् हि माम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| मद् | ३. मेरे | पुरुषस्य | ५. | भक्त-पुरुष का |
| धर्मणः | ४. भागवत धर्म का पालन करने से | अञ्जसा | ११. | सरलता से |
| गुणैः | २. गुणों से | अभ्येति | १२. | लग जाता है |
| एतैः | १. इन | श्रुतमात्र | ९. | श्रवण मात्र से |
| परिसंशुद्धः | ६. निर्मल | गुणम् | ८. | (मेरे) गुणों के |
| आशयः ॥ | ७. अन्तः करण | हि माम् ॥ | १०. | ही मुझ में |

श्लोकार्थ—इन गुणों से मेरे भागवत धर्म का पालन करने से भक्त-पुरुष का निर्मल अन्त.करण मेरे गुणों के श्रवण मात्र से ही मुझमें सरलता से लग जाता है ॥

# विंशः श्लोकः

यथा वातरथो घ्राणमावृङ्क्ते गन्ध आशयात् ।
एवं योगरतं चेत आत्मानमविकारि यत् ॥२०॥

पदच्छेद—

यथा वातरथः घ्राणम् आवृङ्क्ते गन्ध आशयात् ।
एवम् योगरतम् चेतः आत्मानम् अविकारि यत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| यथा | १. जैसे | एवम् | ७. | उसी प्रकार |
| वातरथः | ३. वायुरूप रथ के द्वारा | योगरतम् | ८. | भक्ति-योग में लगा हुआ, |
| घ्राणम् | ५. नासिका इन्द्रिय तक | चेतः | १०. | चित्त है (वह) |
| आवृङ्क्ते | ६. पहुँच जाता है | आत्मानम् | १२. | परमात्मा को (प्राप्त कर लेता है) |
| गन्ध | २. गन्ध | अविकारि | ११. | निर्गुण |
| आशयात् । | ४. पुष्प से (उड़कर) | यत् ॥ | ९. | जो |

श्लोकार्थ—जैसे गन्ध वायुरूप रथ के द्वारा पुष्प से उड़कर नासिका इन्द्रिय तक पहुँच जाता है । उसी प्रकार भक्ति-योग में लगा हुआ जो चित्त है वह निर्गुण परमात्मा को प्राप्त करता है ॥

## एकविंशः श्लोकः

**अहं सर्वेषु भूतेषु भूतात्मावस्थितः सदा ।**
**तमवज्ञाय मां मर्त्यः कुरुतेऽर्चाविडम्बनम् ॥२१॥**

पदच्छेद—

अहम् सर्वेषु भूतेषु भूत आत्मा अवस्थितः सदा ।
तम् अवज्ञाय माम् मर्त्यः कुरुते अर्चा विडम्बमम् ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम् | १. | मैं | तम्, अवज्ञाय | ७. | उसका, अनादर कर |
| सर्वेषु | ३. | सभी | माम् | ९. | मेरी |
| भूतेषु | ४. | प्राणियों को | मर्त्यः | ८. | मनुष्य |
| भूत आत्मा | ५. | आत्मा रूप से | कुरुते | १२. | करता है |
| अवस्थितः | ६. | स्थित हूँ | अर्चा | १० | प्रतिमा में पूजा करने का |
| सदा । | २. | हमेशा | विडम्बनम् | ११. | केवल पाखण्ड |

श्लोकार्थ—मैं हमेशा सभी प्राणियों में आत्मा रूप से स्थित हूँ। उसका अनादर करके मनुष्य मेरी प्रतिमा में पूजा करने का केवल पाखण्ड करता है ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

**यो मां सर्वेषु भूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम् ।**
**हित्वार्चां भजते मौढ्याद्भस्मन्येव जुहोति सः ॥२२॥**

पदच्छेद—

यः माम् सर्वेषु भूतेषु सन्तम् आत्मानम् ईश्वरम् ।
हित्वा अर्चाम् भजते मौढ्यात् भस्मनि एव जुहोति सः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जो मनुष्य | हित्वा | ८. | छोड़कर |
| माम् | ६. | मुझ | अर्चाम् | १०. | प्रतिमा में |
| सर्वेषु | २. | सम्पूर्ण | भजते | ११. | आराधना करता है |
| भूतेषु | ३. | प्राणियों में | मौढ्यात् | ९. | अज्ञान-वश |
| सन्तम् | ५. | विद्यमान | भस्मनि | १३. | राख में |
| आत्मानम् | ४. | आत्मा रूप से | एव | १४. | ही |
| ईश्वरम् । | ७. | परमात्मा को | जुहोति | १५. | हवन करता है |

श्लोकार्थ—जो मनुष्य सम्पूर्ण प्राणियों में आत्मा रूप से विद्यमान मुझ परमात्मा को छोड़कर अज्ञान वश प्रतिमा में अराधना करता है। वह राख में ही हवन करता है ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**द्विषतः परकाये मां मानिनो भिन्नदर्शिनः ।**
**भूतेषु बद्धवैरस्य न मनः शान्तिमृच्छति ॥२३॥**

पदच्छेद—

द्विषतः परकाये माम् मानिनः भिन्न दर्शिनः ।
भूतेषु बद्ध वैरस्य न मनः शान्तिम् ऋच्छति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्विषतः | ८. | द्वेष करते हैं | भूतेषु | ३. | सभी प्राणियों से |
| परकाये | ६. | दूसरों के शरीर में स्थित | बद्ध | ५. | करते हैं (वे मानों) |
| माम् | ७. | मुझसे | वैरस्य | ४. | वैर |
| मानिनः | २. | अहंकारी (जो लोग) | न | १०. | नहीं |
| भिन्न दर्शिनः । | १. | भेद बुद्धि रखने वाले | मनःशान्तिम् | ६. | (उनका) मन शान्ति को |
| | | | ऋच्छति ॥ | ११. | प्राप्त करता है |

श्लोकार्थ—भेद बुद्धि रखने वाले अहंकारी जो लोग सभी प्राणियों से वैर करते हैं। वे मानों दूसरों के शरीर में स्थित मुझसे द्वेष करते हैं। उनका मन शान्ति को नहीं प्राप्त करता है ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

**अहमुच्चावचैर्द्रव्यैः क्रिययोत्पन्नयानघे ।**
**नैव तुष्येऽर्चितोऽर्चायां भूतग्रामावमानिनः ॥२४॥**

पदच्छेद—

अहम् अच्चावचैः द्रव्यैः क्रियया उत्पन्नया अनघे ।
नैव तुष्ये अर्चितः अर्चायाम् भूत ग्राम अवमानिनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहम् | १०. | मैं | नैव | ११. | नहीं |
| उच्चावचैः | ४. | बढ़िया-घटिया | तुष्ये | १२. | प्रसन्न होता हूँ |
| द्रव्यैः | ५. | सामग्रियों के द्वारा | अर्चितः | ६. | पूजा करे (तो भी) |
| क्रियया | ७. | अनुष्ठान से (मेरी) | अर्चायाम् | ८. | प्रतिमा में |
| उत्पन्नया | ६. | किये गये | भूतग्राम | २. | (जो) प्राणियों के समूह का |
| अनघे । | ३. | हे मातः । | अवमानिनः ॥ | ३. | अनादर करता है (यदि वह) |

श्लोकार्थ— हे मातः ! जो प्राणियों के समूह का अनादर करता है। यदि वह बढ़िया-घटिया सामग्रियों के द्वारा किये गये अनुष्ठान से मेरी प्रतिमा में पूजा करें, तो भी मैं प्रसन्न नहीं होता हूँ ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

अर्चादावर्चयेत्तावदीश्वरं मां स्वकर्मकृत् ।
यावन्न वेद स्वहृदि सर्वभूतेष्ववस्थितम् ॥२५॥

पदच्छेद—

अर्चा आदौ अर्चयेत् तावत् ईश्वरम् माम् स्वकर्म कृत् ।
यावत् न वेद स्वहृदि सर्व भूतेषु अवस्थितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्चा आदौ | ३. | प्रतिमा, आदि में | यावत् | ८. | जब-तक |
| अर्चयेत् | ७. | पूजन करे | न | १३. | न |
| तावत् | ४. | तब-तक | वेद | १४. | ज्ञान हो जावे |
| ईश्वरम् | ६. | परमात्मा का | स्वहृदि | ९. | अपने हृदय में (और) |
| माम् | ५. | मुझ | सर्व | १०. | सभी |
| स्वकर्म | १. | अपने धर्म का | भूतेषु | ११. | प्राणियों में |
| कृत् । | २. | पालन करने वाला (मनुष्य) | अवस्थितम् ॥ | १२. | विराजमान मुझ (परमात्मा का) |

श्लोकार्थ—अपने धर्म का पालन करने वाला मनुष्य प्रतिमा-आदि में तब-तक मुझ परमात्मा का पूजन करे। जब-तक अपने हृदय में और सभी प्राणियों में विराजमान मुझ परमात्मा का ज्ञान न हो जावे ॥

## षड्विंशः श्लोकः

आत्मनश्च परस्यापि यः करोत्यन्तरोदरम् ।
तस्य भिन्नदृशो मृत्युर्विदधे भयमुल्वणम् ॥२६॥

पदच्छेद—

आत्मनः च परस्य अपि यः करोति अन्तरः उदरम् ।
तस्य भिन्न दृशः मृत्यु विदधे भयम् उल्वणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्मनः | २. | अपने | तस्य | ८. | उस |
| च परस्य | ३. | और, पराये का | भिन्न | ९. | भेद |
| अपि | ५. | भी | दृशः | १०. | दर्शी के सामने (मैं) |
| यः | १. | जो (मनुष्य) | मृत्यु | ११. | मृत्यु के रूप में |
| करोति | ७. | करता है | विदधे | १४. | उत्पन्न करता हूँ |
| अन्तरः | ६. | भेद | भयम् | १३. | भय |
| उदरम् । | ४. | थोड़ा | उल्वणम् ॥ | १२. | महान् |

श्लोकार्थ—जो मनुष्य अपने और पराये का थोड़ा भी भेद करता है। उस भेद-दर्शी के सामने मैं मृत्यु के रूप महान् भय उत्पन्न करता हूँ।

## सप्तविंशः श्लोकः

**अथ मां सर्वभूतेषु भूतात्मानं कृतालयम् ।**
**अर्हयेद्दानमानाभ्यां मैत्र्याभिन्नेन चक्षुषा ॥२७॥**

पदच्छेद—

अथ माम् सर्व भूतेषु भूत आत्मानम् कृत आलयम् ।
अर्हयेत् दान मानाभ्याम् मैत्र्या अभिन्नेन चक्षुषा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | १. | अतः (मनुष्यों को) | अर्हयेत् | १३. | पूजन करना चाहिये |
| माम् | ७. | मुझ (परमात्मा का) | दान | ८. | दान (और) |
| सर्व | २. | सभी | मानाभ्याम् | ९. | सम्मान से |
| भूतेषु | ३. | प्राणियों में | मैत्र्या | ११. | मित्रता |
| भूत आत्मानम् | ६. | उनकी आत्मा रूप से स्थित | अभिन्नेन | १०. | प्रगाढ़ |
| कृत | ५. | बनाकर | चक्षुषा ॥ | १२. | समान दृष्टि से |
| आलयम् । | ४. | घर | | | |

श्लोकार्थ—अतः मनुष्यों को सभी प्राणियों में घर बना कर उनकी आत्मारूप से स्थित मुझ परमात्मा का दान और सम्मान से प्रगाढ़ मित्रता से तथा समान दृष्टि से पूजन करना चाहिये ॥

## अष्टविंशः श्लोकः

**जीवाः श्रेष्ठा ह्यजीवानां ततः प्राणभृतः शुभे ।**
**ततः सचित्ताः प्रवरास्ततश्चेन्द्रियवृत्तयः ॥२८॥**

पदच्छेद—

जीवाः श्रेष्ठाः हि अजीवानाम् ततः प्राणभृतः शुभे ।
ततः सचित्ताः प्रवराः ततः च इन्द्रिय वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जीवाः | ३. | वृक्षादि जीव | ततः | ८. | श्वास लेने वालों से |
| श्रेष्ठाः | ४. | उत्तम हैं | सचित्ताः | ९. | चित्त वाले जीव |
| हि | ७. | श्रेष्ठ हैं | प्रवराः | १४. | श्रेष्ठ हैं |
| अजीवानाम् | २. | पाषाण आदि जड़ की अपेक्षा | ततः | ११. | उनसे |
| ततः | ५. | उससे | च | १०. | और |
| प्राणभृतः | ६. | श्वास लेने वाले जीव | इन्द्रिय | १२. | इन्द्रियों की |
| शुभे । | १. | हे मातः ! | वृत्तयः ॥ | १३. | वृत्ति वाले जीव |

श्लोकार्थ—हे मातः ! पाषाण आदि जड़ की अपेक्षा वृक्षादि जीव उत्तम हैं । उससे श्वास लेने वाले जीव श्रेष्ठ हैं । श्वास लेने वालों से चित्त वाले जीव और उनसे इन्द्रियों की वृत्ति वाले जीव श्रेष्ठ हैं ॥

# एकोनविंशः श्लोकः

तत्रापि स्पर्शवेदिभ्यः प्रवरा रसवेदिनः ।
तेभ्यो गन्धविदः श्रेष्ठास्ततः शब्दविदो वराः ॥२९॥

पदच्छेद—

तत्र अपि स्पर्श वेदिभ्यः प्रवराः रसवेदिनः ।
तेभ्यः गन्ध विदः श्रेष्ठाः ततः शब्द विदाः वरा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्र | १. | उन इन्द्रिय वाले प्राणियों में | तेभ्यः | ७. | उनकी अपेक्षा |
| अपि | २. | भी | गन्ध | ८. | गन्ध का |
| स्पर्श | ३. | स्पर्श का | विदः | ९. | ग्रहण करने वाले (भौंरे आदि जीव) |
| वेदिभ्यः | ४. | अनुभव करने वाले जीवों से | श्रेष्ठाः | १०. | श्रेष्ठ हैं (तथा) |
| प्रवराः | ६. | श्रेष्ठ हैं | ततः शब्द | ११. | उनसे भी, शब्द को |
| रसवेदिनः । | ५. | रस का ग्रहण करने वाले (मछली आदि जीव) | विदाः वरा ॥ | १२. | सुनने वाले सर्पादि जीव उत्तम हैं । |

श्लोकार्थ—उन इन्द्रियों वाले प्राणियों में भी स्पर्श का अनुभव करने वाले जीवों से रसका ग्रहण करने वाले मछली आदि जीव श्रेष्ठ हैं । उनकी अपेक्षा गन्ध का ग्रहण करने वाले भौंरे आदि जीव-श्रेष्ठ हैं । तथा उनसे भी शब्द को सुनने वाले सर्पादि जीव उत्तम हैं ॥

# त्रिंशः श्लोकः

रूपभेदविदस्तत्र ततश्चोभयतोदतः ।
तेषां बहुपदाः श्रेष्ठाश्चतुष्पादस्ततो द्विपात् ॥३०॥

पदच्छेद—

रूप भेद विदः तत्र ततः च उभयतोदतः ।
तेषाम् बहुपदाः श्रेष्ठाः चतुष्पादः ततः द्विपात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रूप | ३. | रूपों का | तेषाम् | ८. | उनमें भी |
| भेद | २. | भिन्न-भिन्न | बहुपदाः | १०. | अनेक पैर वाले जीव (तथा) |
| विदः | ४. | ज्ञान रखने वाले (काकादि जीव श्रेष्ठ हैं) | श्रेष्ठाः | १४. | श्रेष्ठ हैं |
| तत्र | १. | उनमें भी | चतुष्पादः | ११. | चार पैर वाले जीव |
| ततः | ५. | उनकी अपेक्षा | ततः | १२. | उनकी अपेक्षा |
| च | ७. | और | द्विपात् ॥ | १३. | दो पैर वाले मनुष्य |
| उभयतोदतः । | ६. | ऊपर-नीचे दाँत वाले जीव (श्रेष्ठ हैं) | | | |

श्लोकार्थ—उनमें भी भिन्न-भिन्न रूपों का ज्ञान रखने वाले काकादि जीव श्रेष्ठ हैं । उनकी अपेक्षा ऊपर-नीचे दाँतों वाले जीव श्रेष्ठ हैं और उनमें भी अनेक पैर वाले जीव तथा चार पैर वाले जीव उनकी अपेक्षा दो पैर वाले मनुष्य श्रेष्ठ हैं ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

ततो वर्णाश्च चत्वारस्तेषां ब्राह्मण उत्तमः ।
ब्राह्मणेष्वपि वेदज्ञो ह्यर्थज्ञोऽभ्यधिकस्ततः ॥३१॥

पदच्छेद—

ततः वर्णाः च चत्वारः तेषाम् ब्राह्मणः उत्तमः ।
ब्राह्मणेषु अपि वेदज्ञः हि अर्थज्ञः अभ्यधिकः ततः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | १. | उन मनुष्यों में | ब्राह्मणेषु | ८. | ब्राह्मणों में |
| वर्णाः | ३. | वर्ण | अपि | ६. | भी |
| च | ४. | और | वेदज्ञः | १०. | वेद पाठी |
| चत्वारः | २. | (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) चार | हि | ११. | तथा |
| तेषाम् | ५. | उन वर्णों में (भी) | अर्थज्ञः | १३. | वेद के तात्पर्य को जानने वाले |
| ब्राह्मणः | ६. | ब्राह्मण | अभ्यधिकः | १४. | अधिक श्रेष्ठ हैं |
| उत्तमः । | ७. | उत्तम है | ततः ॥ | १२. | उसकी अपेक्षा |

श्लोकार्थ—उन मनुष्यों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण और उन वर्णों में भी ब्राह्मण उत्तम हैं। ब्राह्मणों में भी वेदपाठी तथा उसको अपेक्षा वेद के तात्पर्य को जानने वाले अधिक श्रेष्ठ हैं॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

अर्थज्ञात्संशयच्छेत्ता ततः श्रेयान् स्वकर्मकृत् ।
मुक्तसङ्गस्ततो भूयानदोग्धा धर्ममात्मनः ॥३२॥

पदच्छेद—

अर्थज्ञात् संशय छेत्ता ततः श्रेयान् स्वकर्म कृत् ।
मुक्त सङ्ग ततः भूयान् अदोग्धा धर्मम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्थज्ञात् | १. | वेद के ज्ञाता की अपेक्षा | मुक्त | ६. | रहित (और) |
| संशय | २. | सन्देह का | सङ्ग | ८. | आसक्ति से |
| छेत्ता | ३. | निवारण करने वाला | ततः | १०. | उसकी अपेक्षा |
| ततः | ४. | (तथा) उसकी अपेक्षा | भूयान् | १४. | मनुष्य श्रेष्ठ है |
| श्रेयान् | ७. | श्रेष्ठ है (उससे भी अधिक) | अदोग्धा | १३. | निष्काम भाव से पालन करने वाला |
| स्वकर्म | ५. | अपने धर्म का | धर्मम् | १२. | धर्म का |
| कृत् । | ६. | पालन करने वाला | आत्मनः ॥ | ११. | अपने |

श्लोकार्थ—वेद के ज्ञाता की अपेक्षा सन्देह का निवारण करने वाला तथा उसकी अपेक्षा अपने धर्म का पालन करने वाला श्रेष्ठ है। उससे भी अधिक आसक्ति से रहित और उसकी अपेक्षा अपने धर्म का निष्काम भाव से पालन करने वाला मनुष्य श्रेष्ठ है॥

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**तस्मान्मय्यर्पिताशेषक्रियार्थात्मा निरन्तरः ।**
**मय्यर्पितात्मनः पुंसो मयि संन्यस्तकर्मणः ।**
**न पश्यामि परं भूतमकर्तुः समदर्शनात् ॥३३॥**

पदच्छेद—

तस्मात् मयि अर्पित अशेष क्रिया अर्थ आत्मा निरन्तरः ।
मयि अर्पित आत्मनः पुंसः मयि सन्यस्त कर्मणः ।
न पश्यामि परम् भूतम् अकर्तुः सम दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. इसलिये | पुंसः | १५. मनुष्य से |
| मयि | ४. मुझमें | मयि | १०. मुझे |
| अर्पित | ५. समर्पण करके | सन्यस्त | १२. अर्पण करके |
| अशेष, क्रिया | २. सम्पूर्ण कर्म | कर्मणः । | ११. कर्म |
| अर्थ, आत्मा | ३. फल शरीर को | न पश्यामि | १८. नहीं देखता हूँ |
| निरन्तरः । | ६ भेद-भाव से रहित होना चाहिये | परम्, | १६. श्रेष्ठ (किसी दूसरे) |
| मयि | ७. मुझमें | भूतम् | १७. प्राणी को |
| अर्पित | ९. समर्पित करके (तथा) | अकर्तुः | १३. कर्तापन से रहित (और) |
| आत्मनः | ८. चित्त | सम दर्शनात् ॥ | १४. समदर्शी |

श्लोकार्थ—इसलिये सम्पूर्ण कर्म फल और शरीर को मुझमें समर्पण करके भेद-भाव से रहित होना चाहिये । मुझमें चित्त समर्पित करके तथा मुझे कर्म अर्पण करके कर्तापन से रहित और समदर्शी मनुष्य से श्रेष्ठ किसी दूसरे प्राणी को नहीं देखता हूँ ॥

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**मनसैतानि भूतानि प्रणमेद्बहु मानयन् ।**
**ईश्वरो जीवकलया प्रविष्टो भगवानिति ॥३४॥**

पदच्छेद—

मनसः एतानि भूतानि प्रणमेत् बहु मानयन् ।
ईश्वरः जीवः कलया प्रविष्टः भगवान् इति ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| मनसः | ११. मन से | ईश्वरः | १. परमात्मा |
| एतानि | ७. इन सभी | जीवः | ३. जीव रूप में |
| भूतानि | ८. प्राणियों को | कलया | ४. अपने अंश से |
| प्रणमेत् | १२. प्रणाम करना चाहिये | प्रविष्टः | ५. विद्यमान है |
| बहु | ९. बहुत | भगवान् | २. भगवान् ही |
| मानयन् । | १०. आदर के साथ | इति ॥ | ६. ऐसा समझ कर |

श्लोकार्थ—परमात्मा भगवान् ही जीव रूप में अपने अंश से विद्यमान है । ऐसा समझ कर इन सभी प्राणियों को बहुत आदर के साथ प्रणाम करना चाहिये ॥

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

भक्तियोगश्च योगश्च मया मानव्युदीरितः ।
ययोरेकतरेणैव पुरुषः पुरुषं व्रजेत् ॥३५॥

पदच्छेद—

भक्तियोगः च योगः च मया मानवि उदीरितः ।
ययोः एकतरेण एव पुरुषः पुरुषम् व्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| भक्तियोगः | ३. भक्तियोग | | ययोः | ७. जिन दोनों में से |
| च | ४. और | | एकतरेण | ८. किसी एक साधन से |
| योगः च | ५ अष्टांग योग का | | एव | ६. ही |
| मया | २. मैंने (तुमसे) | | पुरुषः | १०. जीवात्मा |
| मानवि | १. हे मातः । | | पुरुषम् | ११. परमात्मा को |
| उदीरितः । | ६. वर्णन किया है | | व्रजेत् ॥ | १२. प्राप्त कर सकता है |

श्लोकार्थ—हे मातः ! मैंने तुमसे भक्ति-योग और अष्टांग-योग का वर्णन किया है । जिन दोनों में से किसी एक साधन से ही जीवात्मा परमात्मा को प्राप्त कर सकता है ॥

# षट्त्रिंशः श्लोकः

एतद्भगवतो रूपं ब्रह्मणः परमात्मनः ।
परं प्रधानपुरुषं दैवं कर्मविचेष्टितम् ॥३६॥

पदच्छेद—

एतद् भगवतः रूपम् ब्रह्मणः परमात्मनः ।
परम् प्रधान पुरुषम् दैवम् कर्म विचेष्टितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| एतद् | १. यही | | परम् | ७. श्रेष्ठ (एवं) |
| भगवतः | ४. भगवान का | | प्रधान, पुरुषम् | ६. प्रकृति और पुरुष से |
| रूपम् | ५. स्वरूप है (जो) | | दैवम् | ८. अदृष्ट कहलाता है |
| ब्रह्मणः | २. पर-ब्रह्म | | कर्म | ६. इसी से सारी क्रियायें |
| परमात्मनः । | ३. परमात्मा | | विचेष्टितम् ॥ | १०. होती हैं |

श्लोकार्थ—यही पर-ब्रह्म परमात्मा भगवान् का स्वरूप है । जो प्रकृति और पुरुष से श्रेष्ठ एवं अदृष्ट कहलाता है । इसी से सारी क्रियायें होती हैं ॥

# सप्तत्रिंशः श्लोकः

**रूपभेदास्पदं दिव्यं काल इत्यभिधीयते ।**
**भूतानां महदादीनां यतो भिन्नदृशां भयम् ॥३७॥**

पदच्छेद—

रूप भेद आस्पदम् दिव्यम् कालः इति अभिधीयते ।
भूतानाम् महत् आदीनाम् यतः भिन्न दृशाम् भयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रूप | १. भिन्न-भिन्न | | भूतानाम् | १३. | प्राणियों को |
| भेद | २. रूपों का | | महत् | ९. | महत्तत्त्व |
| आस्पदम् | ३. कारण (और) | | आदीनाम् | १०. | इत्यादि के अभिमानी |
| दिव्यम् | ४. अलौकिक | | यतः | ८. | जिससे |
| कालः | ५. (वही) काल | | भिन्न | ११. | भेद |
| इति | ६. इस नाम से | | दृशाम् | १२. | दर्शी |
| अभिधीयते । | ७. कहा जाता है | | भयम् ॥ | १४. | भय होता है |

श्लोकार्थ—भिन्न-भिन्न रूपों का कारण और अलौकिक वही काल इस नाम से कहा जाता है । जिससे महत्तत्त्व इत्यादि के अभिमानी भेद-दर्शी प्राणियों को भय होता है ॥

# अष्टत्रिंशः श्लोकः

**योऽन्तःप्रविश्य भूतानि भूतैरत्त्यखिलाश्रयः ।**
**स विष्ण्वाख्योऽधियज्ञोऽसौ कालः कलयतां प्रभुः ॥३८॥**

पदच्छेद—

यः अन्तः प्रविश्य भूतानि भूतैः अत्ति अखिल आश्रयः ।
सः विष्णु आख्यः अधियज्ञः असौ कालः कलयताम् प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यः | १. जो | सः | ११. वही |
| अन्तः | ५. अन्तःकरण में | विष्णु | १४. विष्णु |
| प्रविश्य | ६. प्रविष्ट होकर | आख्यः | १५. स्वरूप से |
| भूतानि | ४. सभी प्राणियों के | अधियज्ञः | १३. यज्ञों का फल देने वाला |
| भूतैः | ७. प्राणियों से ही (उनका) | असौ | १६. प्रसिद्ध है |
| अत्ति | ८. संहार कराता है | कालः | १२. काल |
| अखिल | २. सम्पूर्ण जगत् का | कलयताम् | ९. सृष्टि करने वाले देवताओं का भी |
| आश्रयः । | ३. कारण होने से | प्रभुः ॥ | १०. शासक |

श्लोकार्थ—जो सम्पूर्ण जगत का कारण होने से सभी प्राणियों के अन्तःकरण में प्रविष्ट होकर प्राणियों से ही उनका संहार कराता है । सृष्टि करने वाले देवताओं का भी शासक वही काल यज्ञों का फल देने वाला विष्णु स्वरूप से प्रसिद्ध है ॥

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

**न चास्य कश्चिद्दयितो न द्वेष्यो न च बान्धवः ।**
**आविशत्यप्रमत्तोऽसौ प्रमत्तं जनमन्तकृत् ॥३६॥**

पदच्छेद—

न च अस्य कश्चित् दयितः न द्वेष्यः न च बान्धवः ।
आविशति अप्रमत्तः असौ प्रमत्तम् जनम् अन्तकृत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न, च | २. | न तो | बान्धवः | ८. | सगा सम्बन्धी है |
| अस्य | १. | इस काल रूप विष्णु का | आविशति | १३. | प्रवेश करके उनका |
| कश्चित् | ३. | कोई | अप्रमत्तः | १०. | सावधान रहता है (और) |
| दयितः | ४. | प्रिय है | असौ | ६. | वह सदा |
| न द्वेष्य | ५. | न शत्रु है | प्रमत्तम् | ११. | असावधान |
| न | ७. | न कोई | जनम् | १२. | मनुष्यों के अन्दर |
| च | ६. | और | अन्तकृत् ॥ | १४. | नाश कर देता है |

श्लोकार्थ—इस काल रूप विष्णु का न तो कोई प्रिय है, न शत्रु है और न कोई सगा सम्बन्धी है। वह सदा सावधान रहता है, और असावधान मनुष्यों के अन्दर प्रवेश करके उनका नाश कर देता है ॥

# चत्वारिंशः श्लोकः

**यद्भयाद्वाति वातोऽयं सूर्यस्तपति यद्भयात् ।**
**यद्भयाद्वर्षते देवो भगणो भाति यद्भयात् ॥४०॥**

पदच्छेद—

यद् भयात् वाति वातः अयम् सूर्यः तपति यद् भयात् ।
यद् भयात् वर्षते देवः भगणः भाति यद् भयात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | १. | जिस काल के | यद् | ६. | जिसके |
| भयात् | २. | भय से | भयात् | १०. | भय से |
| वाति | ४. | बहती है | वर्षते | १२. | वर्षा करता है (और) |
| वातः | ३. | हवा | देवः | ११. | इन्द्र |
| अयम् | ७. | यह | भगणः | १५. | तारे |
| सूर्यः तपति | ८. | सूर्य तपता है | भाति | १६. | चमकते हैं |
| यद् | ५. | जिसके | यद् | १३. | जिसके |
| भयात् । | ६. | भय से | भयात् ॥ | १४. | भय से |

श्लोकार्थ—जिस काल के भय से हवा बहती है, जिसके भय से सूर्य तपता है। जिसके भय से इन्द्र वर्षा करता है और जिसके भय से तारे चमकते हैं ॥

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

**यद्वनस्पतयो भीता लताश्चौषधिभिः सह।**
**स्वे स्वे कालेऽभिगृह्णन्ति पुष्पाणि च फलानि च ॥४१॥**

पदच्छेद—

यद् वनस्पतयः भीताः लताः च औषधिभिः सह ।
स्वे-स्वे काले अभिगृह्णन्ति पुष्पाणि च फलानि च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | १. | जिस काल से | स्वे-स्वे | ८. | अपने-अपने |
| वनस्पतयः | ५. | वनस्पतियां | काले | ९. | समय पर |
| भीताः | २. | भयभीत होकर | अभिगृह्णन्ति | १३. | धारण करती है |
| लताः | ७. | लतायें | पुष्पाणि | १०. | फूलों को |
| च | ६. | और | च | ११. | और |
| औषधिभिः ॥ | ३. | औषधियों के | फलानि च | १२. | फलों को |
| सह । | ४. | सहित | | | |

श्लोकार्थ—जिस काल से भयभीत होकर औषधियों के सहित वनस्पतियाँ और लतायें अपने-अपने समय पर फूलों को और फलों को धारण करती है ।

## द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

**स्रवन्ति सरितो भीता नोत्सर्पत्युदधिर्यतः ।**
**अग्निरिन्धे सगिरिभिर्भूर्न मज्जति यद्भयात् ॥४२॥**

पदच्छेद—

स्रवन्ति सरितः भीताः न उत्सर्पति उदधिः यतः ।
अग्निः इन्धे सगिरिभिः भूः न मज्जति यद् भयात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्रवन्ति | ४. | वहती है | अग्निः | १०. | अग्नि |
| सरितः | ३. | नदियाँ | इन्धे | ११. | जलती है (और) |
| भीताः | २. | डर से | सगिरिभिः | १२. | पर्वतों के साथ |
| न | ६. | नहीं | भूः न | १३. | पृथ्वी नहीं |
| उत्सर्पति | ७. | उलंघन करता है | मज्जति | १४. | डूबती है |
| उदधिः | ५. | समुद्र (मर्यादा का) | यद् | ८. | जिसके |
| यतः । | १. | जिस काल के | भयात् ॥ | ९. | भय से |

श्लोकार्थ—जिस काल के डर से नदियाँ बहती हैं। समुद्र मर्यादा का उलंघन नहीं करता है। जिसके भय से अग्नि जलती है और पर्वतों के साथ पृथ्वी नहीं डूबती है ॥

## त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

**नभो ददाति श्वसतां पदं यन्नियमाददः ।**
**लोकं स्वदेहं तनुते महान् सप्तभिरावृतम् ॥४३॥**

पदच्छेद—

नभः ददाति श्वसताम् पदम् यत् नियमाद् अदः ।
लोकम् स्वदेहम् तनुते महान् सप्तभिः आवृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| नभः | ४. आकाश | लोकम् | १२. | ब्रह्माण्ड की |
| ददाति | ७. अवकाश देता है (तथा) | स्वदेहम् | ११. | अपने शरीर की (और) |
| श्वसताम् | ५. प्राणियों को | तनुते | १३. | सृष्टि करता है |
| पदम् | ६. साँस लेने का | महान् | ८. | महत्तत्त्व |
| यत् | १. जिस काल के | सप्तभिः | ९. | अहंकारादि सात |
| नियमाद् | २. आदेश से | आवृतम् ॥ | १०. | आवरणों से युक्त |
| अदः । | ३. वह | | | |

श्लोकार्थ—जिस काल के आदेश से वह आकाश प्राणियों को अवकाश देता है तथा महत्तत्त्व अहंकारादि सात आवरणों से युक्त अपने शरीर की और ब्रह्माण्ड की सृष्टि करता है ॥

## चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

**गुणाभिमानिनो देवाः सर्गादिष्वस्य यद्भयात् ।**
**वर्तन्तेऽनुयुगं येषां वश एतच्चराचरम् ॥४४॥**

पदच्छेद—

गुण अभिमानिनः देवाः सर्गादिषु अस्य यद् भयात् ।
वर्तन्ते अनुयुगम् येषाम् वश एतत् चराचरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| गुण | ३. सत्त्वादि गुणों के | वर्तन्ते | १३. | प्रवृत्त होते हैं |
| अभिमानिनः | ४. नियामक | अनुयुगम् | १२. | युग के अनुसार |
| देवाः | ५. देवगण | येषाम् | ६. | जिनके |
| सर्गादिषु | ११. सृष्टि आदि में | वश | ७. | अधीन |
| अस्य | १०. इस जगत् की | एतत् | ८. | यह |
| यद् | १. जिस काल के | चराचरम् ॥ | ९. | चराचर जगत् है |
| भयात् । | २. भय से | | | |

श्लोकार्थ—जिस काल के भय से सत्त्वादि गुणों के नियामक देवगण, जिनके अधीन यह चराचर जगत् है, इस जगत् की सृष्टि आदि में युग के अनुसार प्रवृत्त होते हैं ॥

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सोऽनन्तोऽन्तकरः कालोऽनादिरादिकृदव्ययः ।
जनं जनेन जनयन्मारयन्मृत्युनान्तकम् ॥४५॥

पदच्छेद—

स: अनन्त: अन्तकर: काल: अनादि: आदिकृत् अव्यय: ।
जनम् जनेन जनयन् मारयन् मृत्युना अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स: | १. | वह | जनम् | ९. | पुत्र को |
| अनन्त: | ६. | उसका अन्त न होने पर भी | जनेन | ८. | पिता से |
| अन्तकर | ७. | अन्त करने वाला है (वह) | जनयन् | १०. | उत्पन्न करता हुआ |
| काल: | ३. | काल | मारयन् | १३. | अन्त कर देता है |
| अनादि: | ४. | स्वयं अनादि है किन्तु दूसरों का | मृत्युना | ११. | मृत्यु से |
| आदिकृत् | ५. | उत्पादक है | अन्तकम् ॥ | १२. | स्वयं यमराज का भी |
| अव्यय: । | २. | अविनाशी | | | |

श्लोकार्थ—वह अविनाशी काल स्वयं अनादि है, किन्तु दूसरों का उत्पादक है। उसका अन्त न होने पर भी अन्त करने वाला है। पिता से पुत्र को उत्पन्न करता हुआ मृत्यु से स्वयं यमराज का भी अन्त कर देता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपाख्याने एकोनत्रिंशः अध्यायः समाप्तः ॥२९॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

### त्रिंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

कपिल उवाच—तस्यैतस्य जनो नूनं नायं वेदोरुविक्रमम् ।
कालयमानोऽपि बलिनो वायोरिव घनावलिः ॥१॥

पदच्छेद— तस्य एतस्य जनः नूनम् न अयम् वेद उरु विक्रमम् ।
कालयमानः अपि बलिनः वायोः इव घन आवलिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | १०. | सर्व प्रसिद्ध उस | विक्रमम् । | १३. | पराक्रम को |
| एतस्य | ११. | काल के | कालयमानः | ६. | उड़ाये जाने पर |
| जनः | ९. | मनुष्य | अपि | ७. | भी उसके बल को नहीं जानता है |
| नूनम् | १४. | अवश्य ही | बलिनः | ४. | बलवान |
| न | १५. | नहीं | वायोः | ५. | वायु से |
| अयम् | ८. | (उसी प्रकार) | इव | १. | जैसे |
| वेद | १६. | जानता है | घन | २. | मेघों का |
| उरु | १२. | महान् | आवलिः ॥ | ३. | समूह |

श्लोकार्थ— जैसे मेघों का समूह बलवान् वायु से उड़ाये जाने पर भी उसके बल को नहीं जानता है। उसी प्रकार यह मनुष्य सर्व प्रसिद्ध उस काल के महान् पराक्रम को अवश्य ही नहीं जानता है ॥

## द्वितीयः श्लोकः

यं यमर्थमुपादत्ते दुःखेन सुखहेतवे ।
तं तं धुनोति भगवान् पुमाञ्छोचति यत्कृते ॥२॥

पदच्छेद—

यम्-यम् अर्थम् उपादत्ते दुःखेन सुख हेतवे ।
तम्-तम् धुनोति भगवान् पुमान् शोचति यत् कृते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यम्-यम् | ४. | जिस-जिस | तम्-तम् | ९. | उस-उस वस्तु को |
| अर्थम् | ५. | वस्तु को | धुनोति | १०. | नष्ट कर देते हैं |
| उपादत्ते | ७. | एकत्रित करता है | भगवान् | ८. | भगवान् |
| दुःखेन | ६. | कष्ट से | पुमान् | १. | पुरुष |
| सुख | २. | सुख | शोचति | १२. | शोक करता है |
| हेतवे । | ३. | पाने के लिये | यत् कृते ॥ | ११. | जिसके लिये (वह) |

श्लोकार्थ—पुरुष सुख पाने के लिये जिस-जिस वस्तु को कष्ट से एकत्रित करता है। भगवान् उस-उस वस्तु को नष्ट कर देता है। जिसके लिये वह शोक करता है ॥

## तृतीयः श्लोकः

**यदध्रुवस्य देहस्य सानुबन्धस्य दुर्मतिः ।**
**ध्रुवाणि मन्यते मोहाद् गृहक्षेत्रवसूनि च ॥३॥**

पदच्छेद—

यद् ध्रुवस्य देहस्य सानुबन्धस्य दुर्मतिः ।
ध्रुवाणि मन्यते मोहाद् गृह क्षेत्र वसूनि च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यद् | १. | क्योंकि | ध्रुवाणि | १०. | नित्य |
| ध्रुवस्य | ४. | नाशवान् | मन्यते | ११. | मानता है |
| देहस्य | ५. | शरीर के (और) | मोहाद् | ३. | अज्ञान-वश |
| सानुबन्धस्य | ६. | बन्धु-बान्धवों के | गृह, क्षेत्र | ७. | घर, खेत |
| दुर्मतिः । | २. | कुबुद्धि मनुष्यों के | वसूनि | ९. | धन को |
| | | | च ॥ | ८. | एवम् |

श्लोकार्थ—क्योंकि कुबुद्धि मनुष्यों के अज्ञान-वश नाशवान् शरीर के और बन्धु-बान्धवों के घर, खेत एवम् धन को नित्य मानता है ॥

## चतुर्थः श्लोकः

**जन्तुर्वै भव एतस्मिन् यां यां योनिमनुव्रजेत् ।**
**तस्यां तस्यां स लभते निर्वृतिं न विरज्यते ॥४॥**

पदच्छेद—

जन्तुः वै भव एतस्मिन् याम्-याम् योनिम् अनुव्रजेत् ।
तस्याम् तस्याम् सः लभते निर्वृतिम् न विरज्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जन्तुः | १. | जीव | तस्याम् | ८. | उसी |
| वै | १२. | अतः उससे | तस्याम् | ९. | उसी योनि में |
| भव | ३. | संसार में | सः | ७. | वह |
| एतस्मिन् | २. | इस | लभते | ११. | अनुभव करने लगता है |
| याम्-याम् | ४. | जिस-जिस | निर्वृतिम् | १०. | सुख का |
| योनिम् | ५. | योनि को | न | १३. | नहीं |
| अनुव्रजेत् । | ६. | प्राप्त करता है | विरज्यते ॥ | १४. | विरत होता है |

श्लोकार्थ—जीव इस संसार में जिस-जिस योनि को प्राप्त करता है । वह उसी-उसी योनि में सुख का अनुभव करने लगता है । अतः उससे विरत नहीं होता है ॥

## पञ्चमः श्लोकः

**नरकस्थोऽपि देहं वै न पुमांस्त्यक्तुमिच्छति ।**
**नारक्यां निर्वृतौ सत्यां देवमायाविमोहितः ॥५॥**

पदच्छेद—

नरकस्थः अपि देहम् वै न पुमान् त्यक्तुम् इच्छति ।
नारक्याम् निर्वृतौ सत्याम् देवमाया विमोहितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नरकस्थः | ४. | नरक में रहने पर | इच्छति । | १४. | चाहता है |
| अपि | ५. | भी | नारक्याम् | ६. | नारकीय योनि में |
| देहम् | ६. | उस शरीर को | निर्वृतौ | ७. | सुख का |
| वै | १०. | भी | सत्याम् | ८. | अनुभव करने के कारण |
| न | ११. | नहीं | देवमाया | १. | भगवान् की माया से |
| पुमान् | ३. | मनुष्य | विमोहितः ॥ | २. | मोहित हुआ |
| त्यक्तुम् | १२. | छोड़ना | | | |

श्लोकार्थ—भगवान् की माया से मोहित हुआ मनुष्य नरक में रहने पर भी नारकीय योनि में सुख का अनुभव करने के कारण उस शरीर को भी छोड़ना नहीं चाहता है ॥

## षष्ठः श्लोकः

**आत्मजायासुतागारपशुद्रविणबन्धुषु ।**
**निरूढमूलहृदय आत्मानं बहु मन्यते ॥६॥**

पदच्छेद—

आत्म जाया सुत आगार पशु द्रविण बन्धुषु ।
निरूढ मूल हृदयः आत्मानम् बहु मन्यते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आत्म | १. | शरीर | निरूढ | १०. | आसक्त करके (वह) |
| जाया | २. | स्त्री | मूल | ९. | अत्यन्त |
| सुत | ३. | पुत्र | हृदयः | ८. | मन को |
| आगार | ४. | घर | आत्मानम् | ११. | अपने को |
| पशु | ५. | पशु | बहु | १२. | भाग्यशाली |
| द्रविण | ६. | धन (और) | मन्यते ॥ | १३. | मानता है |
| बन्धुषु । | ७. | बन्धु-बान्धवों में | | | |

श्लोकार्थ—शरीर, स्त्री, पुत्र, घर, पशु, धन, और बन्धु-बान्धवों में मन को अत्यन्त आसक्त करके वह अपने को भाग्यशाली मानता है ॥

## सप्तमः श्लोकः

सन्दह्यमानसर्वाङ्ग एषामुद्वहनाधिना ।
करोत्यविरतं मूढो दुरितानि दुराशयः ॥७॥

पदच्छेद—

सन्दह्यमान सर्व अङ्ग एषाम् उद्वहन आधिना ।
करोति अविरतम् मूढः दुरितानि दुराशयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सन्दह्यमान | ६. | जलते रहते हैं (अतः) | करोति | ११. | करता है |
| सर्व | ४. | उसके सारे | अविरतम् | ९. | निरन्तर |
| अङ्ग | ५. | अङ्ग | मूढः | ८. | मूर्ख |
| एषाम् | १. | इन कुटुम्बियों के | दुरितानि | १०. | अनेक प्रकार का पाप |
| उद्वहन | २. | पालन-पोषण की | दुराशयः ॥ | ७. | दूषित हृदय (वह) |
| आधिना । | ३. | चिन्ता से | | | |

श्लोकार्थ— इन कुटम्बियों के पालन-पोषण की चिन्ता से उसके सारे अङ्ग जलते रहते हैं । अतः दूषित हृदय वह मूर्ख निरन्तर अनेक प्रकार का पाप करता है ॥

## अष्टमः श्लोकः

आक्षिप्तात्मेन्द्रियः स्त्रीणामसतीनां च मायया ।
रहोरचितयाऽऽलापैः शिशूनां कलभाषिणाम् ॥८॥

पदच्छेद—

आक्षिप्ता आत्म इन्द्रियः स्त्रीणाम् असतीनाम् च मायया ।
रहः रचितया आलापैः शिशूनाम् कलभाषिणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आक्षिप्ता | १२. | फंस जाती है | मायया | ५. | माया में |
| आत्म | १०. | मन (और) | रहः | ३. | एकान्त में |
| इन्द्रियः | ११. | इन्द्रियां | रचितया | ४. | फैलाई गई |
| स्त्रीणाम् | २. | स्त्रियों की | आलापैः | ९. | बातों में (उनका) |
| असतीनाम् | १. | कुलटा | शिशूनाम् | ८. | बालकों की |
| च | ६. | और | कलभाषिणाम् ॥ | ७. | मधुर बोलने वाले |

श्लोकार्थ—कुलटा स्त्रियों की एकान्त में फैलाई गई माया में और मधुर बोलने वाले बालकों की बातों में उनका मन और इन्द्रियां फंस जाती है ।

## नवमः श्लोकः

**गृहेषु कूटधर्मेषु दुःखतन्त्रेष्वतन्द्रितः ।**
**कुर्वन्दुःखप्रतीकारं सुखवन्मन्यते गृही ॥९॥**

पदच्छेद—

गृहेषु कूट धर्मेषु दुःख तन्त्रेषु अतन्द्रितः ।
कुर्वन् दुःख प्रतीकारम् सुखवत् मन्यते गृही ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गृहेषु | २. | घर के | कुर्वन् | १०. | करता हुआ (कुछ) |
| कूट | ५. | कपट पूर्ण | दुःख | ८. | दुःख का |
| धर्मेषु | ६. | कर्मों में | प्रतीकारम् | ९. | निवारण |
| दुःख | ३. | दुःख | सुखवत् | ११. | सुख का |
| तन्त्रेषु | ४. | प्रधान (और) | मन्यते | १२. | अनुभव करता है |
| अतन्द्रितः । | ७. | आलस्य रहित होकर | गृही ॥ | १. | वह गृहस्थ |

श्लोकार्थ—वह गृहस्थ घर के दुःख-प्रधान और कपट पूर्ण कर्मों में आलस्य रहित होकर दुःख का निवारण करता हुआ कुछ सुख का अनुभव करता है ॥

## दशमः श्लोकः

**अर्थैरापादितैर्गुर्व्या हिंसयेतस्ततश्च तान् ।**
**पुष्णाति येषां पोषेण शेषभुग्यात्यधः स्वयम् ॥१०॥**

पदच्छेद—

अर्थैं आपादितैः गुर्व्या हिंसया इतः ततः च तान् ।
पुष्णाति येषाम् पोषेण शेषभुक् याति अधः स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अर्थैः | ६. | धन से | पुष्णाति | ९. | पालन-पोषण करता है |
| आपादितैः | ५. | संचित | येषाम् | १०. | जिनके |
| गुर्व्या | ३. | भयंकर | पोषेण | ११. | पालन-पोषण में (उनसे) |
| हिंसया | ४. | हिंसा के द्वारा | शेषभुक् | १२. | बचा अन्न खाता है (और) |
| इतः | १. | यहाँ | याति | १५. | जाता है |
| ततः | २. | वहाँ | अधः | १४. | अधो गति में |
| च | ७. | वह | स्वयम् ॥ | १३. | अपने आप |
| तान् । | ८. | उन लोगों का | | | |

श्लोकार्थ—यहाँ-वहाँ भयंकर हिंसा के द्वारा संचित धन से वह उन लोगों का पालन-पोषण करता है जिनके पालन-पोषण में उनसे बचा अन्न खाता है और अपने आप अधोगति में जाता है ॥

# एकादशः श्लोकः

वार्तायां लुप्यमानायामारब्धायां पुनः पुनः ।
लोभाभिभूतो निःसत्त्वः परार्थे कुरुते स्पृहाम् ॥११॥

पदच्छेद—

वार्तायाम् लुप्यमानायाम् आरब्धायाम् पुनः पुनः ।
लोभ अभिभूतः निः सत्त्वः परार्थे कुरुते स्पृहाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वार्तायाम् | ४. | जीविका | लोभ | ६. | लोभ के |
| लुप्यमानायाम् | ५. | न मिलने पर (वह) | अभिभूतः | ७ | वश में |
| आरब्धायाम् | ३. | प्रयत्न करने पर भी | निः सत्त्वः | ८. | अधीर होकर |
| पुनः | १. | बार | परार्थे | ९. | दूसरे के धन की |
| पुनः । | २. | बार | कुरुते | ११. | करता है |
| | | | स्पृहाम् ॥ | १०. | लालच |

श्लोकार्थ—बार-बार प्रयत्न करने पर भी जीविका न मिलने पर वह लोभ के वश में अधीर होकर दूसरे के धन की लालच करता है ॥

# द्वादशः श्लोकः

कुटुम्बभरणाकल्पो मन्दभाग्यो वृथोद्यमः ।
श्रिया विहीनः कृपणो ध्यायञ्छ्वसिति मूढधीः ॥१२॥

पदच्छेद—

कुटुम्ब भरण अकल्पः मन्दभाग्यः वृथा उद्यमः ।
श्रिया विहीनः कृपणः ध्यायन् श्वसिति मूढधीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कुटुम्ब | १. | परिवार के | श्रिया | ७. | धन से |
| भरण | २. | पालन-पोषण में | विहीनः | ८. | हीन होकर (वह) |
| अकल्पः | ३. | असमर्थ | कृपणः | १०. | दीन |
| मन्दभाग्यः | ४. | (इस) अभागे का | ध्यायन् | ११. | सोचता रहता है (तथा) |
| वृथा | ६. | व्यर्थ हो जाता है | श्वसिति | १२. | लम्बी-लम्बी सांसे लेता है |
| उद्यमः । | ५. | प्रयत्न | मूढधीः ॥ | ९. | मूर्ख (और) |

श्लोकार्थ—परिवार के पालन-पोषण में असमर्थ उस अभागे का प्रयत्न व्यर्थ हो जाता है। धन से हीन होकर वह मूर्ख और दीन सोचता रहता है तथा लम्बी-लम्बी सांसें लेता है ॥

## त्रयोदशः श्लोकः

**एवं स्वभरणाकल्पं तत्कलत्रादयस्तथा ।**
**नाद्रियन्ते यथा पूर्वं कीनाश इव गोजरम् ॥१३॥**

पदच्छेद—

एवम् स्व भरण अकल्पम् तत् कलत्र आदयः तथा ।
न आद्रियन्ते यथा पूर्वम् कीनाश इव गो जरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | न | ११. | नहीं |
| स्व | २. | अपने | आद्रियन्ते | १२. | आदर करते हैं |
| भरण | ३. | पालन-पोषण में | यथा | १०. | जैसा |
| अकल्पम् | ४. | असमर्थ (उस व्यक्ति का) | पूर्वम् | ९. | पहले |
| तत् | ५. | उसके | कीनाश | १४. | कृपण किसान |
| कलत्र | ६. | स्त्री, पुत्र | इव | १३. | जैसे |
| आदयः | ७. | इत्यादि | गो | १६. | बैल की (उपेक्षा करते हैं) |
| तथा । | ८. | उसी प्रकार | जरम्॥ | १५. | बुड्ढे |

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने पालन-पोषण में असमर्थ उस व्यक्ति का उसके स्त्री-पुत्र इत्यादि, उसी प्रकार पहले जैसा आदर नहीं करते हैं । जैसे कृपण किसान बुड्ढे बैल की उपेक्षा करता है ॥

## चतुर्दशः श्लोकः

**तत्राप्यजातनिर्वेदो भ्रियमाणः स्वयम्भृतैः ।**
**जरयोपात्तवैरूप्यो मरणाभिमुखो गृहे ॥१४॥**

पदच्छेद—

तत्रापि अजात निर्वेदः भ्रियमाणः स्वयम् भृतैः ।
जरया उपात्त वैरूप्यः मरण अभिमुखः गृहे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्रापि | १. | फिर भी (उसे) | जरया | ७. | बुढ़ापे से (वह) |
| अजात | ३. | नहीं होता है (अपितु) | उपात्त | ९. | हो जाता है (और) |
| निर्वेदः | २. | वैराग्य | वैरूप्यः | ८. | कुरूप |
| भ्रियमाणः | ६. | (उसका) पालन करते हैं | मरण | ११. | मरण |
| स्वयम् | ४. | अपने आप | अभिमुखः | १२. | आसन्न (पड़ा रहता है) |
| भृतैः । | ५. | जिनका पालन करता था (वे लोग) | गृहे ॥ | १०. | घर में |

श्लोकार्थ—फिर भी उसे वैराग्य नहीं होता है, अपितु अपने-आप जिनका पालन करता था, वे लोग उसका पालन करते हैं । बुढ़ापे से वह कुरूप हो जाता है, और घर में मरण-आसन्न पड़ा रहता है ॥

# पञ्चदशः श्लोकः

आस्तेऽवमत्योपन्यस्तं गृहपाल इवाहरन् ।
आमयाव्यप्रदीप्ताग्निरल्पाहारोऽल्पचेष्टितः ॥१५॥

पदच्छेद—

आस्ते अवमत्या उपन्यस्तम् गृहपालः इव आहरन् ।
आमयावी अप्रदीप्त अग्निः अल्प आहारः अल्प चेष्टितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आस्ते | १२. पड़ा रहता है | आमयावी | १. (उसका शरीर) रोगी (और) |
| अवमत्या | ९. अपमान के साथ | अप्रदीप्त | ३. मन्द हो जाने से वह |
| उपन्यस्तम् | १०. टुकड़े | अग्निः | २. जठराग्नि |
| गृहपालः | ७. कुत्ते के | अल्प | ४. थोड़ा |
| इव | ८. समान | आहारः | ५. भोजन (और) |
| आहरन् । | ११. खाकर | अल्प, चेष्टितः | ६. कम काम करता है (तथा) |

श्लोकार्थ—उसका शरीर रोगी और जठराग्नि मन्द हो जाने से वह थोड़ा भोजन और कम काम करता है तथा कुत्ते के समान अपमान के साथ टुकड़े खाकर पड़ा रहता है ॥

# षोडशः श्लोकः

वायुनोत्क्रमतोत्तारः कफसंरुद्धनाडिकः ।
कासश्वासकृतायासः कण्ठे घुरघुरायते ॥१६॥

पदच्छेद—

वायुना उत्क्रमता उत्तारः कफ संरुद्ध नाडिकः ।
कास श्वास कृत आयासः कण्ठे घुरघुरायते ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| वायुना | २. वायु से (उसकी) | कास | ७. खांसने (और) |
| उत्क्रमता | १. उठती | श्वास | ८. साँस लेने में |
| उत्तारः | ३. पुतलियाँ चढ़ जाती हैं | कृत | १०. होता है (और) |
| कफ | ५. कफ | आयासः | ९. कष्ट |
| संरुद्ध | ६. जम जाता है | कण्ठे | ११. गले में |
| नाडिकः । | ४. नाड़ियों में | घुरघुरायते ॥ | १२. घर-घराहट की आवाज़ होती है । |

श्लोकार्थ—उठती वायु से उसकी पुतलियाँ चढ़ जाती हैं नाड़ियों में कफ़ जम जाता है । खांसने और सांस लेने में कष्ट होता और गले में घर-घराहट की आवाज होती है ॥

# सप्तदशः श्लोकः

**शयानः परिशोचद्भिः परिवीतः स्वबन्धुभिः ।**
**वाच्यमानोऽपि न ब्रूते कालपाशवशं गतः ॥१७॥**

पदच्छेद—

शयानः परिशोचद्भिः परिवीतः स्वबन्धुभिः ।
वाच्यमानः अपि न ब्रूते कालपाश वशम् गतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| शयानः | ४. पड़ा हुआ (वह) | | अपि | ६. भी |
| परिशोचद्भिः | १. शोक करते हुये | | नब्रूते | १०. नहीं बोलता है |
| परिवीतः | ३. बीच में | | कालपाश | ७. मृत्यु के |
| स्वबन्धुभिः । | २. अपने-वन्धुओं के | | वशम् | ८. वश में |
| वाच्यमानः | ५. बुलाये जाने पर | | गतः ॥ | ६. होने से |

श्लोकार्थ—शोक करते हुये अपने-वन्धुओं के बीच में पड़ा हुआ वह बुलाये जाने पर भी मृत्यु के वश में होने से नहीं बोलता है ॥

# अष्टादशः श्लोकः

**एवं कुटुम्बभरणे व्यापृतात्माजितेन्द्रियः ।**
**म्रियते रुदतां स्वानामुरुवेदनयास्तधीः ॥१८॥**

पदच्छेद—

एवम् कुटुम्ब भरणे व्यापृत आत्मा अजित इन्द्रियः ।
म्रियते रुदताम् स्वानाम् उरु वेदनया अस्त धीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| एवम् | १. इस प्रकार | म्रियते | १४. मृत्यु को प्राप्त (हो जाता है) |
| कुटुम्ब | २. परिवार के | रुदताम् | १०. रोते हुये |
| भरणे | ३. पालन-पोषण में | स्वानाम् | ११. अपने वन्धुओं के बीच |
| व्यापृत | ४. आसक्त | उरु | १२. भयंकर |
| आत्मा | ७. चित्त | वेदनया | १३. पीड़ा से |
| अजित | ७. वश में न कर सकने वाला | अस्त | ८. (वह) मूढ |
| इन्द्रियः । | ६. इन्द्रियों को | धीः ॥ | ६. बुद्धि |

श्लोकार्थ—इस प्रकार परिवार के पालन-पोषण में आसक्त चित्त इन्द्रियों को वश में न कर सकने वाला वह मूढ बुद्धि रोते हुये अपने बन्धुओं के बीच भयंकर पीड़ा से मृत्यु को प्राप्त हो जाता है ॥

# एकोनविंशः श्लोकः

यमदूतौ तदा प्राप्तौ भीमौ सरभसेक्षणौ ।
स दृष्ट्वा त्रस्तहृदयः शकृन्मूत्रं विमुञ्चति ॥१९॥

पदच्छेद—

यम दूतौ तदा प्राप्तौ भीमौ सरभस ईक्षणौ ।
सः दृष्ट्वा त्रस्ता हृदयः शकृत् मूत्रम् विमुञ्चति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यम | २. | यम राज के | सः | ८. | वह |
| दूतौ | ६. | दो दूत | दृष्ट्वा | ९. | (उन्हें) देखकर |
| तदा | १. | उस समय | त्रस्ता | ११. | भयभीत होता हुआ |
| प्राप्तौ | ७. | आते हैं | हृदयः | १०. | मन से |
| भीमौ | ५. | भयंकर | शकृत् | ११. | मल |
| सरभस | ३. | क्रोध से लाल-लाल | मूत्रम् | १२. | मूत्र |
| ईक्षणौ । | ४. | आँखों वाले | विमुञ्चति । | १३. | करने लगता है |

श्लोकार्थ—उस समय यमराज के क्रोध से लाल-लाल आँखों वाले भयंकर दो दूत आते हैं वह उन्हें देखकर मन में भयभीत होता हुआ मल-मूत्र करने लगता है ॥

# विंशः श्लोकः

यातनादेह आवृत्य पाशैर्बद्ध्वा गले बलात् ।
नयतो दीर्घमध्वानं दण्ड्यं राजभटा यथा ॥२०॥

पदच्छेद—

यातना देहे आवृत्य पाशैः बद्ध्वा गले बलात् ।
नयतः दीर्घम् अध्वानम् दण्ड्यम् राजभटाः यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यातना | ४. | (उसी प्रकार वे उसे) | नयतः | १३. | ले जाते है |
| देहे | ५. | शरीर में | दीर्घम् | १०. | लम्बे |
| आवृत्य | ६. | डालकर (और) | अध्वानम् | ११. | यमलोक के मार्ग में |
| पाशैः | ८. | फन्दा | दण्ड्यम् | ३. | अपराधी को (ले जाता है) |
| बद्ध्वा | ९. | बाँधकर | राजभटाः | २. | सिपाही |
| गले | ७. | बल पूर्वक | यथा ॥ | १. | जैसे |
| बलात् । | १२. | बल पूर्वक | | | |

श्लोकार्थ—जैसे सिपाही अपराधी को ले जाता है । उसी प्रकार वे लोग उसे यातना शरीर में डालकर और गले में फन्दा बाँधकर यमलोक के लम्बे मार्ग में बल पूर्वक ले जाते हैं ॥

## एकविंशः श्लोकः

तयोर्निर्भिन्नहृदयस्तर्जनैर्जातवेपथुः　　　।
पथि श्वभिर्भक्ष्यमाण आर्तोऽघं स्वमनुस्मरन् ॥२१॥

पदच्छेद—

तयोः निर्भिन्न हृदयः तर्जनैः जात वेपथुः ।
पथिः श्वभिः भक्ष्यमाणः आर्तः अधम् स्वम् अनुस्मरन् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तयोः | १. | उन दोनों की | पथि श्वभिः | ७. | मार्ग में कुत्ते |
| निर्भिन्न | ४. | फटने लगता है | भक्ष्यमाणः | ८. | नोचते हैं (और वह) |
| हृदयः | ३. | उसका हृदय | आर्तः | १२. | दुःखी हो जाता है |
| तर्जनैः | २. | फटकार से | अघम् | १०. | पापों का |
| जात | ६. | होने लगता है | स्वम् | ९. | अपने |
| वेपथुः । | ५. | शरीर में कम्पन | अनुस्मरन् ॥ | ११. | स्मरण करके |

श्लोकार्थ—उन दोनों की फटकार से उसका हृदय फटने लगता है । शरीर में कम्पन होने लगता है । मार्ग में कुत्ते नोचते हैं । और वह अपने पापों का स्मरण करके दुःखी हो जाता है ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

क्षुत्तृट्परीतोऽर्कदवानलानिलैः सन्तप्यमानः पथि तप्तबालुके ।
कृच्छ्रेण पृष्ठे कशया च ताडितश्चलत्यशक्तोऽपि निराश्रमोदके ॥२२॥

पदच्छेद—

क्षुत् तृट् परीतः अर्क दवानल अनिलैः सन्तप्यमानः पथि तप्त बालुके ।
कृच्छ्रेण पृष्ठे कशया च ताडितः चलति अशक्तः अपि निराश्रम उदके ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्षुत्, तृट् | ६. | भूख (और) प्यास से | कृच्छ्रेण | १५. | बड़े कष्ट से |
| परीतः अर्क | ७. | बेचैन (वह) धूप | पृष्ठे, कशया | १२. | पीठ पर, कोड़े से |
| दवानल | ८. | दावानल (और) | च | १४. | और (वह) |
| अनिलैः | ९. | लू से | ताडितः | १३. | मारते हैं |
| सन्तप्यमानः | १०. | तपता है | चलति | १६. | चलता है |
| पथि | ५. | मार्ग में | अशक्तः, अपि | ११. | चलने में असमर्थ होने पर, भी (उसे यमदूत) |
| तप्त | ३. | तपी | निराश्रम | १. | विश्राम स्थान (और) |
| बालुके । | ४. | रेती वाले | उदके ॥ | २. | जल से रहित |

श्लोकार्थ—विश्राम स्थान और जल से रहित तपी रेती वाले मार्ग में भूख और प्यास से बेचैन वह धूप, दावानल और लू से तपता है । चलने में असमर्थ होने पर भी उसे यमदूत पीठ पर कोड़े से मारते हैं । और वह बड़े कष्ट से चलता है ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

तत्र तत्र पतञ्छ्रान्तो मूर्च्छितः पुनरुत्थितः ।
पथा पापीयसा नीतस्तरसा यमसादनम् ॥२३॥

पदच्छेद—

तत्र तत्र पतन् श्रान्तः मूर्च्छितः पुनः उत्थितः ।
पथा पापीयसा नीतः तरसा यम सादनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत्र-तत्र | १. | वह जहाँ-तहाँ | पथा | ८. | मार्ग से |
| पतन् | ४. | गिरता है (और) | पापीयसा | ७. | कष्ट दायक |
| श्रान्तः | २. | थक कर (एवं) | नीतः | १२. | ले जाया जाता है |
| मूर्च्छितः | ३. | मूर्च्छित होकर | तरसा | ११. | बड़े वेग से |
| पुनः | ५. | फिर से | यम | ९. | यम के |
| उत्थितः । | ६. | उठता है (इस प्रकार) | सादनम् ॥ | १०. | लोक को |

श्लोकार्थ—वह जहाँ-तहाँ थक कर एवं मूर्छित होकर गिरता है और फिर से उठता है। इस प्रकार कष्ट दायक मार्ग से यम के लोक को ले जाया जाता है ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

योजनानां सहस्राणि नवतिं नव चाध्वनः ।
त्रिभिर्मुहूर्तैर्द्वाभ्यां वा नीतः प्राप्नोति यातनाः ॥२४॥

पदच्छेद—

योजनानाम् सहस्राणि नवतिम् नव च अध्वनः ।
त्रिभिः मुहूर्तैः द्वाभ्याम् वा नीतः प्राप्नोति यातनाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| योजनानाम् | ४. | योजन | त्रिभिः मुहूर्तैः | ७. | तीन, मुहूर्त में |
| सहस्राणि | ३. | हज़ार | द्वाभ्याम्, वा | ६. | दो, अथवा |
| नवतिम् नव | २. | निन्यानवे | नीतः | ८. | पार कराते हैं (और वह) |
| च | १. | यमदूत उससे | प्राप्नोति | १०. | यम पुरी में पहुँचता है |
| अध्वनः । | ५. | मार्ग को | यातनाः ॥ | ९. | यातना भोग के लिये |

श्लोकार्थ—यमदूत उससे निन्यानवे हज़ार योजन मार्ग को दो, अथवा तीन मुहूर्त में पार कराते हैं। और वह यातना भोग के लिये यम पुरी में पहुँचता है ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

**आदीपनं स्वगात्राणां वेष्टयित्वोल्मुकादिभिः ।**
**आत्ममांसादनं क्वापि स्वकृत्तं परतोऽपि ॥२५॥**

पदच्छेद—

आदीपनम् स्व गात्राणाम् वेष्टयित्वा उल्मुक आदिभिः ।
आत्म मांस अदनम् क्वापि स्व कृत्तम् परतः अपि वा ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आदीपनम् | ६. जलाते हैं (और वह) | आत्म | १२. अपने शरीर के |
| स्व | ४. उसके | मांस अदनम् | १३. मांस को, खाता है |
| गात्राणाम् | ५. शरीर को | क्वापि | ७. कहीं |
| वेष्टयित्वा | ३. डाल कर | स्व | ८. स्वयम् |
| उल्मुक | १. जलती लकड़ी | कृत्तम् | ११. काटे गये |
| आदिभिः । | २. इत्यादि के (बीच में) | परतः अपि | १०. दूसरे से, भी |
| | | वा ॥ | ९. अथवा |

श्लोकार्थं—जलती लकड़ी इत्यादि के बीच में डाल कर उसके शरीर को जलाते हैं, और वह कहीं स्वयम् अथवा दूसरे से काटे गये अपने शरीर के मांस को खाता है ॥

## षड्विंशः श्लोकः

**जीवतश्चान्त्राभ्युद्धारः श्वगृध्रैर्यमसादने ।**
**सर्पवृश्चिकदंशाद्यैर्दशद्भिश्चात्मवैशसम् ॥२६॥**

पदच्छेद—

जीवतः च अन्त्र अभ्युद्धारः श्वगृध्रैः यम सादने ।
सर्प वृश्चिक दंश आद्यैः दशद्भिः च आत्म वैशसम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| जीवतः | ३. जीते जी (उसकी) | सर्प, वृश्चिक | ८. सांप, बिच्छू |
| च | ६. और | दंशः आद्यैः | ९. डांस, इत्यादि जीव |
| अन्त्र | ४. अंतड़ियों को | दशद्भिः | ७. डंक मारने वाले |
| अभ्युद्धारः | ५. खींचते हैं | च | १०. उसके |
| श्वगृध्रैः | २. कुत्ते और गीध | आत्म | ११. शरीर को |
| यम सादने । | १. यम पुरी में | वैशसम् ॥ | १२. पीड़ा पहुँचाते हैं |

श्लोकार्थ—यम पुरी में जीते जी उसकी अंतड़ियों को खींचते हैं, और डंक मारने वाले सांप, बिच्छू, डांस इत्यादि जीव उसके शरीर को पीड़ा पहुँचाते हैं ॥

# सप्तविंशः श्लोकः

**कृन्तनं चावयवशो गजादिभ्यो भिदापनम् ।**
**पातनं गिरिशृङ्गेभ्यो रोधनं चाम्बुगर्तयोः ॥२७॥**

पदच्छेद—

कृन्तनम् च अवयवशः गज आदिभ्यः भिदापनम् ।
पालनम् गिरिश्रृङ्गेभ्यः रोधनम् च अम्बु गर्तयोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृन्तनम् | २. | काटा जाता है | पालनम् | ८. | गिराया जाता है |
| च | ३. | तथा (उसे) | गिरिश्रृङ्गेभ्यः | ७. | उसे पर्वत की चोटी से |
| अवयवशः | १. | उसके एक-एक अङ्ग को | रोधनम् | १२. | बन्द कर दिया जाता है |
| गज | ४. | हाथी | च | ९. | और |
| आदिभ्यः | ५. | इत्यादि मे | अम्बु | १०. | जल या |
| भिदापनम् । | ६. | चिरवाया जाता है | गर्तयोः ॥ | ११. | गड्ढे में |

श्लोकार्थ—उसके एक-एक अङ्ग को काटा जाता है । तथा उसे हाथी इत्यादि से चिरवाया जाता है । उसे पर्वत की चोटी से गिराया जाता है । और जल या गड्ढे में बन्द कर दिया जाता है ।

# अष्टविंशः श्लोकः

**यास्तामिस्रान्धतामिस्रा रौरवाद्याश्च यातनाः ।**
**भुङ्क्ते नरो वा नारी वा मिथः सङ्गेन निर्मिताः ॥२८॥**

पदच्छेद—

याः तामिस्र अन्धतामिस्राः रौरव आद्याः च यातनाः ।
भुङ्क्ते नरः वा नारी वा मिथः, सङ्गेन निर्मिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| याः | ६. | जो | भुङ्क्ते | १५. | भोगना पड़ता है |
| तामिस्र | १. | तामिस्र | नरः | ११. | पुरुष हो |
| अन्धतामिस्राः | २. | अन्धतामिस्र | वा | १२. | या |
| रौरव | ४. | रौरव | नारी | १३. | स्त्री |
| आद्याः | ५. | इत्यादि नरक की | वा | १४. | उन्हें |
| च | ३. | और | मिथः, सङ्गेन | ८. | परस्पर, संसर्ग से |
| यातनाः । | ७. | यातनायें | निर्मिता ॥ | १०. | उत्पन्न हैं । |

श्लोकार्थ—तामिस्र, अन्धतामिस्र और रौरव इत्यादि नरक की जो यातनायें परस्पर संसर्ग से उत्पन्न हैं । पुरुष हो या स्त्री उन्हें भोगना पड़ता है ।।

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**अत्रैव नरकः स्वर्ग इति मातः प्रचक्षते ।**
**या यातना वै नारक्यस्ता इहाप्युपलक्षिताः ॥२९॥**

पदच्छेद—

अत्र एव नरकः स्वर्गः इति मातः प्रचक्षते ।
याः यातना वै नारक्यः ताः इह अपि उपलक्षिताः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अत्र | २. यहीं | याः | ९. जो |
| एव | ३. पर | यातनाः | ११. यातनायें हैं |
| नरकः | ४. नरक (और) | वै | ८. क्योंकि |
| स्वर्गः | ५. स्वर्ग है | नारक्यः | १०. नारकी |
| इति | ६. ऐसा लोग | ताः | १२. वे |
| मातः | १. हे मातः जी ! | इह, अपि | १३. यहाँ पर भी |
| प्रचक्षते । | ७. कहते हैं | उपलक्षिताः ॥ | १४. देखी जाती हैं |

श्लोकार्थ—हे माता जी ! यहीं पर नरक और स्वर्ग है, ऐसा लोग कहते हैं, क्योंकि जो नारकी यातनायें हैं; वे यहाँ पर भी देखी जाती हैं ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**एवं कुटुम्बं बिभ्राण उदरम्भर एव वा ।**
**विसृज्येहोभयं प्रेत्य भुङ्क्ते तत्फलमीदृशम् ॥३०॥**

पदच्छेद—

एवम् कुटुम्बम् बिभ्राणः उदरम्भरः एव वा ।
विसृज्य इह उभयम् प्रेत्य भुङ्क्ते तत् फलम् ईदृशम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| एवम् | १. इस प्रकार | विसृज्य | ९. छोड़कर |
| कुटुम्बम् | २. परिवार को | इह | ७. इस संसार में |
| बिभ्राणः | ३. पालन-पोषण करने वाला | उभयम् | ८. कुटुम्ब और शरीर दोनों को |
| उदरम्भरः | ६. पेट भरने वाला (मनुष्य) | प्रेत्य | १०. परलोक में जाने पर |
| एव | ५. केवल (अपना ही) | भुङ्क्ते | १३. भोगता है |
| वा । | ४. अथवा | तत्, फलम् | १२. पाप के, फल को |
| | | ईदृशम् ॥ | ११. इस प्रकार |

श्लोकार्थ—इस प्रकार परिवार का पालन-पोषण करने वाला अथवा केवल अपना ही पेट भरने वाला मनुष्य इस संसार में कुटुम्ब और शरीर दोनों को छोड़ कर परलोक में जाने पर इस प्रकार पाप के फल को भोगता है ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

एकः प्रपद्यते ध्वान्तं हित्वेदं स्वकलेवरम् ।
कुशलेतरपाथेयो भूतद्रोहेण यद् भृतम् ॥३१॥

पदच्छेद—

एकः प्रपद्यते ध्वान्तम् हित्वा इदम् स्व कलेवरम् ।
कुशल इतर पाथेयः भूत द्रोहेण यद् भृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एकः | १२. | अकेले ही | कुशल | ९. | पुण्य (से भिन्न) |
| प्रपद्यते | १४. | पहुँचता है | इतर | १०. | पाप कर्म को |
| ध्वान्तम् | १३. | नरक में | पाथेयः | ११. | साथ लेकर (वह) |
| हित्वा | ४. | छोड़कर | भूत | ५. | प्राणियों के |
| इदम् | २. | इस | द्रोहेण | ६. | वैर से |
| स्व | १. | अपने | यद् | ७. | जो |
| कलेवरम् । | ३. | शरीर को (यहीं) | भृतम् ॥ | ८. | एकत्रित है (उस) |

श्लोकार्थ—अपने इस शरीर को यहीं छोड़कर प्राणियों के वैर से जो एकत्रित है; उस पाप कर्म को साथ लेकर वह अकेला ही नरक में पहुँचता है ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

दैवेनासादितं तस्य शमलं निरये पुमान् ।
भुङ्क्ते कुटुम्बपोषस्य हृतवित्त इवातुरः ॥३२॥

पदच्छेद—

दैवेन आसादितम् तस्य शमलम् निरये पुमान् ।
भुङ्क्ते कुटुम्ब पोषस्य हृतवित्तः इव आतुरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दैवेन | १. | भाग्य से | भुङ्क्ते | ९. | भोगता है (और) |
| आसादितम् | २. | प्राप्त | कुटुम्ब | ३. | परिवार |
| तस्य | ५. | उस | पोषस्य | ४. | पालन के |
| शमलम् | ६. | पाप के फल को | हृतवित्तः | १०. | जिसका सर्वस्व चुरा लिया गया है (उसके) |
| निरये | ८. | नरक में | इव | ११. | समान |
| पुमान् । | ७. | मनुष्य | आतुरः | १२. | व्याकुल (होता है) |

श्लोकार्थ—भाग्य से प्राप्त परिवार पालन के उस पाप के फल को मनुष्य नरक में भोगता है। और जिसका सर्वस्व चुरा लिया गया है, उसके समान व्याकुल होता है ॥

# त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**केवलेन　　ह्यधर्मेण　　कुटुम्बभरणोत्सुकः ।**
**याति जीवोऽन्धतामिस्रं चरमं तमसः पदम् ॥३३॥**

पदच्छेद—

केवलेन हि अधर्मेण कुटुम्ब भरण उत्सुकः ।
याति जीवः अन्धतामिस्रम् चरमम् तमसः पदम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| केवलेन | १. | जो केवल | याति | ९. | जाता है (जिसका) |
| हि | ६. | (अपने) ही | जीवः | ५. | वह मनुष्य |
| अधर्मेण | ७. | पाप से | अन्धतामिस्रम् | ८. | अन्धतामिस्र नरक में |
| कुटुम्ब | २. | परिवार के | चरमम् | ११. | अन्तिम |
| भरण | ३. | पालन-पोषण में (ही) | तमसः | १०. | नरकों में |
| उत्सुकः । | ४. | लगा रहता है | पदम् ॥ | १२. | स्थान है |

श्लोकार्थ—जो केवल परिवार के पालन-पोषण में ही लगा रहता है; वह मनुष्य अपने ही पाप से अन्तामिस्र नरक में जाता है, जिसका नरकों में अन्तिम स्थान है ॥

# चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**अधस्तान्नरलोकस्य　　यावतीर्यातनादयः ।**
**क्रमशः　　समनुक्रम्य　　पुनरत्राव्रजेच्छुचिः ॥३४॥**

पदच्छेद—

अधस्तात् नरलोकस्य यावतीः यातना आदयः ।
क्रमशः समनुक्रम्य पुनः अत्र आव्रजेत् शुचिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अधस्तात् | २. | पहले | क्रमशः | ६. | (उनको) क्रम से |
| नरलोकस्य | १. | मनुष्य योनि मिलने के | समनुक्रम्य | ७. | भोग कर |
| यावतीः | ३. | जितनी | पुनः | ९. | फिर से |
| यातना | ४. | यातनायें (और) | अत्र | १०. | इस मनुष्य योनि को |
| आदयः । | ५. | शूकरादि योनियों के कष्ट हैं | आव्रजेत् | ११. | प्राप्त करता है |
| | | | शुचिः ॥ | ८. | पवित्र होकर (वह जीव) |

श्लोकार्थ—मनुष्य योनि मिलने के पहले जितनी यातनायें और शूकरादि योनियों के कष्ट हैं उनको क्रम से भोगकर पवित्र होकर वह जीव फिर से इस मनुष्य योनि को प्राप्त करता है ॥

**श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपाख्याने कर्मविपाको नाम त्रिंशः अध्यायः समाप्तः ॥३०॥**

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

## एकत्रिंशः अध्यायः

### प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—कर्मणा दैवनेत्रेण जन्तुर्देहोपपत्तये ।
स्त्रियाः प्रविष्टः उदरं पुंसो रेतः कणाश्रयः ॥१॥

पदच्छेद—

कर्मणा दैव नेत्रेणा जन्तुः देह उपपत्तये ।
स्त्रियाः प्रविष्टः उदरम् पुंसः रेतः कण आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कर्मणा | ४. | पूर्व जन्म के कर्मानुसार | स्त्रियाः | १०. | स्त्री के |
| दैव | २. | भगवान् की | प्रविष्टः | १२. | प्रवेश करता है |
| नेत्रेण | ३. | प्रेरणा से (अपने) | उदरम् | ११. | गर्भ में |
| जन्तुः | १. | जीव | पुंसः | ७. | पुरुष के |
| देह | ५. | मनुष्य शरीर | रेतः कण | ८. | वीर्य के कण के |
| उपपत्तये । | ६. | पाने के लिये | आश्रयः ॥ | ९. | सहारे |

श्लोकार्थ—जीव भगवान् की प्रेरणा से अपने पूर्व जन्म के कर्मानुसार मनुष्य शरीर पाने के लिये पुरुष के वीर्य के सहारे स्त्री के गर्भ में प्रवेश करता है ॥

### द्वितीयः श्लोकः

कललं त्वेकरात्रेण पञ्चरात्रेण बुद्बुदम् ।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततः परम् ॥२॥

पदच्छेद—

कललम् तु एक रात्रेण पञ्च रात्रेण बुद्बुदम् ।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेशी अण्डम् वा ततः परम् ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कललम् | ३. | एकाकार कलल | दशाहेन | ८. | (तदनन्तर वह) दस दिन में |
| तु | ४. | तथा | तु | १०. | तथा |
| एक | १. | एक | कर्कन्धूः | ९. | बेर के समान कड़ा |
| रात्रेण | २. | रात्रि में (वह वीर्य के साथ मिलकर) | पेशी | १२. | मांस पेशी |
| पञ्च | ५. | पांच | अण्डम् | १४. | अण्डाकार हो जाता है |
| रात्रेण | ६. | रात्रि में | वा | १३. | अथवा |
| बुद्बुदम् । | ७. | बुल-बुले के समान हो जाता है | ततः परम् ॥ | ११. | उसके बाद |

श्लोकार्थ—एक रात्रि में वह वीर्य के साथ मिलकर एकाकार कलल तथा पांच रात्रि में बुल-बुले के समान हो जाता है । तदनन्तर वह दश दिन में बेर के समान कड़ा तथा उसके बाद मांस पेशी अथवा अण्डाकार हो जाता है ॥

## तृतीयः श्लोकः

**मासेन तु शिरो द्वाभ्यां बाह्वङ्घ्र्याद्यङ्गविग्रहः।**
**नखलोमास्थिचर्माणि लिङ्गच्छिद्रोद्भवस्त्रिभिः ॥३॥**

पदच्छेद—

मासेन तु शिरो द्वाभ्याम् बाहु अङ्घ्रि आदि अङ्गविग्रहः।
नख लोम अस्थि चर्माणि लिङ्ग छिद्र उद्भवः त्रिभिः॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मासेन | २. | एक मास में | नख | १०. | नाखून |
| तु | १ | तदनन्तर | लोम | ११. | रोम |
| शिरो | ३. | शिर (तथा) | अस्थि | १२. | हड्डी |
| द्वाभ्याम् | ४. | दूसरे महीने | चर्माणि | १३. | चमड़ी |
| बाहु | ५. | हाथ | लिङ्ग | १४. | स्त्री, पुरुष के चिह्न (और) |
| अङ्घ्रि | ६. | पैर | छिद्र | १५. | अन्य छिद्र |
| आदि | ७. | इत्यादि | उद्भवः | १६. | उत्पन्न हो जाते हैं |
| अङ्गविग्रहः। | ८. | अङ्ग निकल आते हैं | त्रिभिः॥ | ९. | तीसरे महीने में |

श्लोकार्थ—तदनन्तर एक मास में शिर तथा दूसरे महीने हाथ, पैर इत्यादि अङ्ग निकल आते हैं तीसरे महीने नाखून, रोम, चमड़ा, स्त्री-पुरुष के चिह्न और अन्य छिद्र उत्पन्न हो जाते हैं॥

## चतुर्थः श्लोकः

**चतुर्भिर्धातवः सप्त पञ्चभिः क्षुत्तृडुद्भवः।**
**षड्भिर्जरायुणा वीतः कुक्षौ भ्राम्यति दक्षिणे ॥४॥**

पदच्छेद—

चतुर्भिः धातवः सप्त पञ्चभिः क्षुत् तृड् उद्भवः।
षड्भिः जरायुणा वीतः कुक्षौ भ्राम्यति दक्षिणे॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चतुर्भिः | १. | चौथे मास | षड्भिः | ७. | छठवें मास (वह) |
| धातवः | ३. | धातुयें (उत्पन्न हो जाती हैं) | जरायुणा | ८. | झिल्ली में |
| सप्त | २. | रक्त, मांसादि सातों | वीतः | ९. | लिपट कर (माँ की) |
| पञ्चभिः | ४. | पांचवें मास | कुक्षौ | ११. | कोख में |
| क्षुत् तृड् | ५. | भूख और प्यास | भ्राम्यति | १२. | घूमने लगता है |
| उद्भवः। | ६. | लगने लगती है | दक्षिणे॥ | १०. | दाहिनी |

श्लोकार्थ—चौथे मास रक्त मांसादि सातों धातुयें उत्पन्न हो जाती हैं। पांचवें मास भूख और प्यास लगने लगती है। छठवें मास वह झिल्ली में लिपट कर मां की दाहिनी कोख में घूमने लगता है॥

## पञ्चमः श्लोकः

मातुर्जग्धान्नपानाद्यैरेधद्धातुरसम्मते ।
शेते विण्मूत्रयोर्गर्ते स जन्तुर्जन्तुसम्भवे ॥५॥

पदच्छेद—

मातुः जग्ध अन्न पान आद्यैः एधत् धातुः असम्मते ।
शेते विष्ट मूत्रयोः गर्ते सः जन्तुः जन्तु सम्भवे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मातुः | १. | (उस समय) माता के | शेते | १६. | सोया पड़ा रहता है |
| जग्ध | २. | खाये हुये | विष्ट | १३. | विष्ठा (और) |
| अन्न | ३. | अन्न | मूत्रयोः | १४. | मूत्र के |
| पान | ४. | जल | गर्ते | १५. | गड्ढे में |
| आद्यैः | ५. | इत्यादि से | सः | ८. | इस प्रकार वह |
| एधत् | ७. | पुष्ट होती हैं | जन्तुः | ९. | जीव |
| धातुः | ६. | उसकी धातुयें | जन्तु | १०. | (जहाँ) कीड़े |
| असम्मते । | १२. | घृणित | सम्भवे ॥ | ११. | उत्पन्न होते हैं (उस) |

श्लोकार्थ—उस समय माता के खाये हुये अन्न-जल इत्यादि से उसकी धातुयें पुष्ट होती हैं। इस प्रकार वह जीव जहाँ कीड़े उत्पन्न होते हैं; उस घृणित विष्ठा और मूत्र के गड्ढे में पड़ा रहता है ॥

## षष्ठः श्लोकः

कृमिभिः क्षतसर्वाङ्गः सौकुमार्यात्प्रतिक्षणम् ।
मूर्च्छामाप्नोत्युरुक्लेशस्तत्रत्यैः क्षुधितैर्मुहुः ॥६॥

पदच्छेद—

कृमिभिः क्षत सर्व अङ्गः सौकुमार्यात् प्रतिक्षणम् ।
मूर्च्छाम् आप्नोति उरु क्लेशः तत्रत्यैः क्षुधितै र्मुहुः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कृमिभिः | ३. | कीड़े | मूर्च्छाम् | ११. | अचेत |
| क्षत | ६. | काटते रहते हैं | आप्नोति | १२. | हो जाता है |
| सर्व | ४. | उसके सारे | उरु क्लेशः | ८. | उसे भयंकर पीड़ा होती है (और वह) |
| अङ्गः | ५. | अङ्गों को | तत्रत्यैः | १. | वहाँ के |
| सौकुमार्यात् | ७. | अत्यन्त कोमल होने से | क्षुधितैः | २. | भूखे |
| प्रतिक्षणम् । | ९. | क्षण-क्षण में | मुहुः ॥ | १०. | बार-बार |

श्लोकार्थ—वहाँ के भूखे कीड़े उसके सारे अङ्गों को काटते रहते हैं; अत्यन्त कोमल होने से उसे भयंकर पीड़ा होती हैं और वह क्षण-क्षण में बार-बार अचेत हो जाता है ॥

## सप्तमः श्लोकः

**कटुतीक्ष्णोष्णलवणरूक्षाम्लादिभिरुल्बणैः ।**
**मातृभुक्तैरुपस्पृष्टः सर्वाङ्गोत्थितवेदनः ॥७॥**

पदच्छेद—

कटु तीक्ष्ण उष्ण लवण रूक्ष, अम्ल आदिभिः उल्वणैः ।
मातृ भुक्तैः उपस्पृष्टः सर्व अङ्ग उत्थित वेदनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कटु | ३. | कड़वे | मातृ | १. | माता के द्वारा |
| तीक्ष्ण | ४. | तीते | भुक्तैः | २. | खाये गये |
| उष्ण | ५. | गर्म | उपस्पृष्टः | १०. | स्पर्श होने पर |
| लवण | ६. | नमकीन | सर्व | ११. | (उसके) सारे |
| रूक्ष, अम्ल | ७. | रूखे, खट्टे | अङ्ग | १२. | अङ्गों में |
| आदिभिः | ८. | इत्यादि | उत्थित | १४. | होती है |
| उल्वणैः । | ९. | उग्र पदार्थों का | वेदनः ॥ | १३. | वहुत पीड़ा |

श्लोकार्थ—माता के द्वारा खाये गये कड़ुवे, तीते, गर्म, नमकीन, रूखे खट्टे इत्यादि उग्र पदार्थों का स्पर्श होने पर उसके सारे अङ्गों में वहुत पीड़ा होती है ॥

## अष्टमः श्लोकः

**उल्बेन संवृतस्तस्मिन्नन्त्रैश्च बहिरावृतः ।**
**आस्ते कृत्वा शिरः कुक्षौ भुग्नपृष्ठशिरोधरः ॥८॥**

पदच्छेद—

उल्बेन संवृतः तस्मिन् अन्त्रैः च बहिः आवृतः ।
आस्ते कृत्वा शिरः कुक्षौ भुग्न पृष्ठ शिरोधरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| उल्बेन | २. | झिल्ली से | आस्ते | १४. | पड़ा रहता है |
| संवृतः | ३. | लिपटा (हुआ वह जीव) | कृत्वा | १०. | कुण्डलाकार करके |
| तस्मिन् | १. | (माता के) उस गर्भ में | शिरः | ८. | सिर को |
| अन्त्रैः | ५. | आँतों से | कुक्षौ | ९. | पेट की ओर |
| च | ७. | और | भुग्न | १३. | मोड़ कर |
| बहिः | ४. | ऊपर | पृष्ठ | ११. | पीठ और |
| आवृतः । | ६. | बंधा रहता है | शिरोधरः ॥ | १२. | गर्दन को |

श्लोकार्थ—माता के उस गर्भ में झिल्ली से लिपटा हुआ वह जीव झिल्ली से ऊपर आँतों से बंधा रहता है; और सिर को पेट की ओर कुण्डलाकार करके पीठ और गर्दन को मोड़ कर पड़ा रहता है ॥

## नवमः श्लोकः

**अकल्पः स्वाङ्गचेष्टायां शकुन्त इव पञ्जरे।**
**तत्र लब्धस्मृतिर्दैवात्कर्म जन्मशतोद्भवम्।**
**स्मरन्दीर्घमनुच्छ्वासं शर्म किं नाम विन्दते ॥९॥**

पदच्छेद— अकल्पः स्वाङ्ग चेष्टायाम् शकुन्तः इव पञ्जरे।
तत्र लब्ध स्मृतिः दैवात् कर्म जन्म शत उद्भवम्।
स्मरन् दीर्घम् अनुच्छ्वासम् शर्म किम् नाम विन्दते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अकल्पः | ५. | असमर्थ (रहता है) | जन्म | ११. | जन्मों में |
| स्वाङ्ग | ३. | अपने अङ्गों को | शत | १०. | सैकड़ों |
| चेष्टायाम् | ४. | हिलाने-डुलाने में | उद्भवम्। | १२. | किये गये |
| शकुन्तः, इव | २. | पक्षी के समान | स्मरन् | १४. | स्मरण करता हुआ (वह) |
| पञ्जरे। | १. | पिंजरे में बन्द | दीर्घम् | १५. | लम्बी |
| तत्र | ६. | उस समय | अनुच्छ्वासम् | १६. | सांसें (लेता है) |
| लब्ध | ९. | हो जाने के कारण | शर्म | १९. | शान्ति |
| स्मृतिः | ८. | स्मरण शक्ति | किम् | १८. | क्या (उसे) |
| दैवात् | ७. | भगवान् की प्रेरणा से | नाम | १७. | उस स्थिति में |
| कर्म | १३. | कर्मों का | विन्दते ॥ | २०. | मिल सकती है |

श्लोकार्थ—पिंजरे में बन्द पक्षी के समान अपने अङ्गों को हिलाने डुलाने में असमर्थ रहता है। उस समय भगवान् की प्रेरणा से स्मरण शक्ति हो जाने के कारण सैकड़ों जन्मों में किये गये कर्मों का स्मरण करता हुआ वह लम्बी सांसें लेता है। उस स्थिति में क्या उसे शान्ति मिल सकती है ॥

## दशमः श्लोकः

**आरभ्य सप्तमान्मासाल्लब्धबोधोऽपि वेपितः।**
**नैकत्रास्ते सूतिवातैर्विष्ठाभूरिव सोदरः ॥१०॥**

पदच्छेद— आरभ्य सप्तमात् मासात् लब्ध बोधः अपि वेपितः।
न एकत्र आस्ते सूति वातैः विष्ठा भूः इव सोदरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आरभ्य | ३. | प्रारम्भ में (उसमें) | न | १४. | नहीं (रह सकता है) |
| सप्तमात् | १. | सातवें | एकत्र, आस्ते | १३. | एक जगह, स्थिर |
| मासात् | २. | महीने के | सूति, वातैः | ७. | प्रसूति के, वायु से |
| लब्ध | ६. | उदय हो जाता है (उस समय) | विष्ठा | ११. | मल के, कीड़ों के |
| बोधः | ४. | ज्ञान शक्ति का | भूः | १०. | उत्पन्न होने वाले |
| अपि | ५. | भी | इव | १२. | समान |
| वेपितः। | ८. | चलायमान | सोदरः ॥ | ९. | उसी उदर में |

श्लोकार्थ—सातवें महीने के प्रारम्भ में उसमें ज्ञान शक्ति का भी उदय हो जाता है। उस समय प्रसूति के वायु से चलायमान वह उसी उदर में उत्पन्न होने वाले मल के कीड़ों के समान एक जगह स्थिर नहीं रह सकता है ॥

# एकादशः श्लोकः

**नाथमान ऋषिर्भीतः सप्तवध्रिः कृताञ्जलिः ।**
**स्तुवीत तं विक्लवया वाचा येनोदरेऽर्पितः ।।११।।**

पदच्छेद— नाथमान ऋषिः भीतः सप्त वध्रिः कृत अञ्जलिः ।
स्तुवीत तम् विक्लवया वाचा येन उदरे अर्पितः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नाथमान | ७. | दया की याचना करता हुआ | स्तुवीत | ११. | स्तुति करता है |
| ऋषिः | ३. | देहात्मदर्शी (वह जीव) | तम् | १०. | उस परमात्मा की |
| भीतः | ४. | भयभीत होकर | विक्लवया | ५. | दीन |
| सप्त | १. | रक्त; मांसादि सात धातुओं से | वाचा | ६. | वाणी में |
| वध्रिः | २. | बंधा हुआ | येन | १२. | जिसने उसे |
| कृत | ६. | जोड़ कर | उदरे | १३. | माता के उदर में |
| अञ्जलिः । | ८. | हाथ | अर्पितः ।। | १४. | डाला है |

श्लोकार्थ—रक्त, मांसादि सात धातुओं से बंधा हुआ देहात्मदर्शी वह जीव भयभीत होकर दीन वाणी में दया की याचना करता हुआ हाथ जोड़ कर उस परमात्मा को स्तुति करता है । जिसने उसे माता के उदर में डाला है ।।

# द्वादशः श्लोकः

**जन्तुरुवाच—तस्योपसन्नमवितुं जगदिच्छयात्तनानातनोर्भुवि चलच्चरणारविन्दम् ।**
**सोऽहं व्रजामि शरणं ह्यकुतोभयं मे येनेदृशी गतिरदर्श्यसतोऽनुरूपा ।।१२।।**

पदच्छेद—तस्य उपसन्नम् अवितुम् जगत् इच्छया आत्त, नाना तनोः भुवि चलत् चरण अरविन्दम् ।
सः अहम् व्रजामि शरणम् हि अकुतो भयम् मे येन ईदृशी गतिः, अर्दशि असतः अनुरूपा ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्य | ८. | उस परमात्मा के | सः अहम् | १२. | वह अधम मैं |
| उपसन्नम् | १. | अपनी शरण में आये हुये | व्रजामि | १४. | लेता हूँ |
| अवितुम् | ३. | रक्षा करने की | शरणम् | १३. | शरण |
| जगत् | २. | संसार की | हि | १६. | जो मुझ |
| इच्छया | ४. | इच्छा से | अकुतो, भयम् | १०. | निर्भय |
| आत्त | ७. | धारण करने वाले | मे | १६. | मुझे |
| नाना | ५. | अनेक प्रकार के | येन | १५. | जिन्होंने |
| तनोः | ६. | शरीर को | ईदृशी | १७. | इस प्रकार की |
| भुवि चलत् | ६. | पृथ्वी पर, विचरण करने वाले | गतिः, अर्दशि | १८. | दशा दिखलाई है |
| चरण अरविन्दम् । | ११. | पाद पदमों की | असतः अनुरूपा ।। | २०. | दुष्ट के योग्य |

श्लोकार्थ—अपनी शरण में आये हुये संसार की रक्षा करने की इच्छा से अनेक प्रकार के शरीर को धारण करने वाले उस परमात्मा के पृथ्वी पर विचरण करने वाले निर्भय पाद पदमों की, वह अधम मैं शरण लेता हूँ । जिन्होंने मुझे इस प्रकार की दशा दिखलाई है, जो मुझ दुष्ट के योग्य है ।।

# त्रयोदशः श्लोकः

**यस्त्वत्र बद्ध इव कर्मभिरावृतात्मा भूतेन्द्रियाशयमयीमवलम्ब्य मायाम् ।**
**आस्ते विशुद्धमविकारमखण्डबोधमातप्यमानहृदयेऽवसितं नमामि ॥१३॥**

पदच्छेद—

य: तु अत्र बद्धः इव कर्मभिः आवृत, आत्मा भूत इन्द्रिय आशयमयीम् अवलम्ब्य मायाम् ।
आस्ते विशुद्धम् अविकारम् अखण्ड बोधम् आतप्यमान हृदये अवसितम् नमामि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | ८. | जो जीव | आस्ते | १०. | पड़ा रहता है (सो मैं) |
| तु, अत्र | १. | तथा, इस माता के गर्भ में | विशुद्धम् | १४ | उपाधि रहित |
| बद्धः इव | ९. | बंधे हुये के, समान | अविकारम् | १५. | निर्विकार |
| कर्मभिः | ६. | पुण्य और पाप कर्मों से | अखण्ड | १६. | अखण्ड |
| आवृत, आत्मा | ७. | आच्छादित स्वरूप वाला | बोधम् | १७. | ज्ञान स्वरूप (परमात्मा को) |
| भूत, इन्द्रिय | २. | शरीर, इन्द्रिय (और) | आतप्यमान | ११. | (अपने) सन्तप्त |
| आशयमयीम् | ३. | अन्तःकरण रूप | हृदये | १२. | हृदय में |
| अवलम्ब्य | ५. | सहारा लेकर | अवसितम् | १३. | स्फुरित होने वाले |
| मायाम् । | ४. | माया का | नमामि ॥ | १८. | नमस्कार करता हूँ |

श्लोकार्थ—तथा इस माता के गर्भ में शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण रूप माया का सहारा लेकर पुण्य और पाप कर्मों से आच्छादित स्वरूप वाला जो जीव बंधे हुये के समान पड़ा रहता है; सो मैं अपने सन्तप्त हृदय में स्फुरित होने वाले उपाधि रहित, निर्विकार, अखण्ड ज्ञान स्वरूप परमात्मा को नमस्कार करता हूँ ॥

# चतुर्दशः श्लोकः

**यः पञ्चभूतरचिते रहितः शरीरेच्छन्नो यथेन्द्रियगुणार्थचिदात्मकोऽहम् ।**
**तेनाविकुण्ठमहिमानमृषिं तमेनं वन्दे परं प्रकृतिपूरुषयोः पुमांसम् ॥१४॥**

पदच्छेद—

यः पञ्चभूत रचिते रहितः शरीरे छन्नः यथा इन्द्रिय गुण अर्थ चिदात्मकः अहम् ।
तेन अविकुण्ठ महिमानम् ऋषिम् तम् एनम् वन्दे परम प्रकृति पूरुषयोः पुमांसम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | १. | जो | तेन | १०. | उस (अहंकारी से) |
| पञ्चभूत | ४. | पाँच महाभूतों से | अविकुण्ठ | १२. | कुण्ठित नहीं हुई है |
| रचिते | ५. | निमित | महिमानम् | ११. | जिसकी महिमा |
| रहितः | ३. | असङ्ग (होने पर भी) | ऋषिम्, तम् | १३. | आत्मदर्शी, उस |
| शरीरे, छन्नः | ६. | शरीर में, बंधा हुआ हूँ | एनम् | १६. | इस |
| यथा, इन्द्रिय | ७. | इसलिये, इन्द्रिय | वन्दे | १८. | वन्दना करता हूँ |
| गुण, अर्थ | ८. | सत्त्वादि गुण, शब्दादि विषय | परम | १५. | परे |
| चिदात्मकः | ९. | अहंकार स्वरूप हूँ | प्रकृति, पूरुषयोः | १४. | प्रकृति (और) पुरुष से |
| अहम् । | २. | मैं | पुमांसम् ॥ | १७. | परम पुरुष की |

श्लोकार्थ—जो मैं असङ्ग होने पर भी पांच महाभूतों से निमित शरीर में बंधा हुआ हूँ । इसलिये इन्द्रिय सत्त्वादि गुण शब्दादि विषय और अहंकार स्वरूप हूँ । उस अहंकारी से जिसकी महिमा कुण्ठित नहीं हुई है; आत्मदर्शी उस प्रकृति और पुरुष से परे परम पुरुष की वन्दना करता हूँ ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**यन्माययोरुगुणकर्मनिबन्धनेऽस्मिन् सांसारिके पथि चरंस्तदभिश्रमेण ।**
**नष्टस्मृतिः पुनरयं प्रवृणीत लोकं युक्त्या कया महदनुग्रहमन्तरेण ॥१५॥**

पदच्छेद–यत् मायया उरु गुण कर्म निबन्धने अस्मिन् सांसारिके पथि चरन् तद् अभिश्रमेण ।
नष्ट स्मृतिः पुनः अयम् प्रवृणीत लोकम् युक्त्या कया महत् अनुग्रहम् अन्तरेण ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् | १. | जिस परमात्मा की | नष्ट | ४. | नाश हो जाने के कारण |
| मायया | २. | माया से | स्मृतिः | ३. | स्मरण शक्ति का |
| उरु, गुण | ६. | अनेक प्रकार के सत्त्वादि गुण (और) | पुनः | १८. | फिर से |
| कर्म | ७. | पुण्य-पाप-कर्मों के | अयम् | ५. | यह जीव |
| निबन्धने | ८. | बन्धन से युक्त | प्रवृणीत | १९. | जान सकेगा |
| अस्मिन् | ९. | इस | लोकम्, | १७. | अपने स्वरूप को, |
| सांसारिके, पथि | १०. | संसार के, मार्ग में | युक्त्या | १६. | उपाय से |
| चरन् | १२. | भटकता रहता है | कया | १५. | किस |
| तद्, अभिश्रमेण । | ११. | उसके कष्टों को झेलता हुआ | महत्, अनुग्रहम् | १३. | उस परमात्मा की, कृपा के |
| | | | अन्तरेण ॥ | १४. | विना (यह) |

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा की माया से स्मरण शक्ति का नाश हो जाने के कारण यह जीव अनेक प्रकार के सत्त्वादि गुण और पुण्य-पाप कर्मों के बन्धन से युक्त इस संसार के मार्ग में उसके कष्टों को झेलता हुआ भटकता रहता है। उस परमात्मा की कृपा के विना यह किस उपाय से अपने स्वरूप को जान सकेगा।

## षोडशः श्लोकः

**ज्ञानं यदेतददधात्कतमः स देवस्त्रैकालिकं स्थिरचरेष्वनुवर्तितांशः ।**
**तं जीवकर्मपदवीमनुवर्तमानास्तापत्रयोपशमनाय वयं भजेम ॥१६॥**

पदच्छेद–ज्ञानम् यद् एतद् अदधात् कतमः सः देवः त्रैकालिकम् स्थिर चरेषु अनुवर्तित अंशः ।
तम् जीव कर्म पदवीम् अनुवर्तमानाः तापत्रय उपशमनाय वयम् भजेम ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ३. | ज्ञान (हुआ है उसे) | अंशः । | ९. | अन्तर्यामि अंश से |
| यद्, एतद् | १. | (मुझे) जो, यह | तम् | १७. | उस परमात्मा का |
| अदधात् | ७. | दिया है (वह परमात्मा) | जीव | ११. | जीव रूप |
| कतमः | ५. | अतिरिक्त किस | कर्म, पदवीम् | १२. | कर्म के, बन्धन को |
| सः | ४. | उस परमात्मा के | अनुवर्तमानाः | १३. | प्राप्त होने वाले |
| देवः | ६. | देवता ने | ताप त्रय | १५ | तीनों तापों की |
| त्रैकालिकम् | २. | तीनों कालों का | उपशमनाय | १६. | शान्ति के लिये |
| स्थिर, चरेषु | ८. | स्थावर और जंगम, समस्त प्राणियों में | वयम् | १४. | हम लोग |
| अनुवर्तित | १० | विद्यमान है (अतः) | भजेम ॥ | १८. | भजन करते हैं |

श्लोकार्थ—मुझे जो यह तीनों कालों का ज्ञान हुआ है उसे उस परमात्मा के अतिरिक्त किस देवता ने दिया है। वह परमात्मा स्थावर और जंगम समस्त प्राणियों में अन्तर्यामि अंश से विद्यमान है। अतः जीवरूप कर्म के बन्धन को प्राप्त होने वाले हम लोग तीनों तापों की शान्ति के लिये उस परमात्मा का भजन करते हैं।।

## सप्तदशः श्लोकः

देह्यन्यदेहविवरे जठराग्निनासृग् ।
विण्मूत्रकूपपतितो भृशतप्तदेहः ।
इच्छन्नितो विवसितुं गणयन् स्वमासान् ।
निर्वास्यते कृपणधीर्भगवन् कदा नु ॥१७॥

पदच्छेद—

देही अन्य देह विवरे जठराग्निना असृग् विट् मूत्र कूप पतितः भृश तप्त देहः ।
इच्छन् इतः विवसितुम् गणयन् स्वमासाम् निर्वास्यते कृपण धीः भगवन् कदा नु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देही, अन्य | १. | शरीरधारी यह जीव, माता के | इतः, विवसितुम् | ९. | इस उदर से निकलने की |
| देह, विवरे | २. | शरीर के, उदर में | गणयन् | १२. | गिनता रहता है (तथा) |
| जठराग्निना | ६. | उसकी जठराग्नि से | स्वमासान् | ११. | अपने महीने |
| असृग् | ४. | रुधिर के | निर्वास्यते | १८. | निकाला जायेगा |
| विट्, मूत्र | ३. | मल-मूत्र के (एवं) | कृपण | १६. | दीन यहाँ से |
| कूप पपितः | ५. | कुयें में पड़ा रहता है (और) | धीः | १५. | मन्द बुद्धि |
| भृश, तप्त | ८. | अत्यन्त, तपता है | भगवन् | १४. | हे भगवन् ! यह |
| देहः । | ७. | उसका शरीर | कदा | १७. | कब |
| इच्छन् | १०. | इच्छा करता हुआ (वह) | नु ॥ | १३. | यह प्रार्थना करता है कि |

श्लोकार्थ—शरीरधारी यह जीव माता के उदर में मल-मूत्र एवं रुधिर के कुयें में पड़ा रहता है; और उसकी जठराग्नि से उसका शरीर अत्यन्त तपता है। इस उदर से निकलने की इच्छा करता हुआ वह अपने महीने गिनता रहता है। तथा यह प्रार्थना करता है कि हे भगवन् ! यह मन्द बुद्धि दीन यहाँ से कब निकाला जायेगा ॥

# अष्टादशः श्लोकः

येनेदृशीं गतिमसौ दशमास्य ईश ।
संग्राहितः पुरुदयेन भवादृशेन ।
स्वेनैव तुष्यतु कृतेन स दीननाथः ।
को नाम तत्प्रति विनाञ्जलिमस्य कुर्यात् ॥१८॥

पदच्छेद—

येन ईदृशीम् गतिम् असौ दशमास्यः ईश, संग्राहितः पुरुदयेन भवादृशेन ।
स्वेन एव तुष्यतु कृतेन सः दीननाथः कः नाम तत् प्रति विना अञ्जलिम् अस्य कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| येन | ४. | जिस परमात्मा ने | कृतेन | १२. | उपकार से |
| ईदृशीम् गतिम् | ७. | इस प्रकार का, ज्ञान | सः | १०. | सो आप |
| असौ | ६. | उस जीव को | दीननाथः | ९. | दीनों के स्वामी |
| दशमास्यः | ५. | दस महीने के | कः | १५. | कौन प्राणी |
| ईश, | १. | हे स्वामिन ! | नाम | १४. | भला |
| संग्राहितः | ८. | दिया है | तत् प्रति | १९. | प्रतिकार |
| पुरुदयेन | २. | अत्यन्त दयालु | विना | १७. | सिवाय |
| भवादृशेन । | ३. | आप सरीखे | अञ्जलिम् | १६. | हाथ जोड़ने के |
| स्वेन एव | ११. | अपने ही | अस्य | १८. | इसका |
| तुष्यतु | १३. | प्रसन्न हों | कुर्यात् ॥ | २०. | कर सकता है |

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! अत्यन्त दयालु आप सरीखे जिस परमात्मा ने दस महीने के उस जीव को इस प्रकार का ज्ञान दिया है । दीनों के स्वामी सो आप अपने ही उपकार से प्रसन्न हों । भला कौन प्राणी हाथ जोड़ने के सिवाय इसका प्रतिकार कर सकता है ॥

# एकोनविंशः श्लोकः

**पश्यत्ययं धिषणया ननु सप्तवध्रिः शारीरके दमशरीर्यपरः स्वदेहे ।**
**यत्सृष्टयाऽऽसं तमहं पुरुषं पुराणं पश्ये बहिर्हृदि च चैत्यमिव प्रतीतम् ॥१९॥**

पदच्छेद—पश्यति अयम् धिषणया ननु सप्तवध्रिः शारीरके दमशरीरी अपरः स्वदेहे ।
यत् सृष्टया आसम् तम् अहम् पुरुषम् पुराणम् पश्ये बहिः हृदि च चैत्यम् इव प्रतीतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पश्यति | ७. | अनुभव करते हैं | आसम् | १० | हूँ (अतः) |
| अयम् | २. | ये | तम् | १७. | उस |
| धिषणया | ५. | बुद्धि के द्वारा | अहम् | ११. | मैं |
| ननु | ८. | किन्तु (मैं) | पुरुषम् | १९. | पुरुष परमात्मा का |
| सप्तवध्रिः | १. | रक्त मांसादि सात आवरणों से बंधे | पुराणम् | १८. | पुराण |
| शारीरके | ६. | शरीर के सुख-दुःख का | पश्ये | २०. | दर्शन करता हूँ |
| दमशरीरी | ९. | शम दमादि के साधन, शरीरयुक्त जीव | बहिः | १३. | बाहर |
| अपरः | ३. | दूसरे पशु-पक्षी आदि जीव | हृदि, च | १४. | हृदय में, और |
| स्वदेहे । | १२. | अपने शरीर के | चैत्यम् | १५. | आत्मा के |
| यत् सृष्टया | ४. | जिस-परमात्मा से निर्मित | इव, प्रतीतम् ॥ | १६. | समान, अनुभव में आने वाले |

श्लोकार्थ—रक्त मांसादि सात आवरणों से बंधे ये दूसरे पशु-पक्षी आदि जीव जिस परमात्मा से निर्मित बुद्धि के द्वारा शरीर के सुख-दुःख का अनुभव करते हैं; किन्तु मैं शम-दमादि के साधन शरीर से युक्त जीव हूँ; अतः मैं अपने शरीर के बाहर और हृदय में आत्मा के समान अनुभव में आने वाले उस पुराण पुरुष परमात्मा का दर्शन करता हूँ ॥

# विंशः श्लोकः

**सोऽहं वसन्नपि विभो बहुदुःखवासं गर्भान्न निर्जिगमिषे बहिरन्धकूपे ।**
**यत्रोपयातमुपसर्पति देवमाया मिथ्यामतिर्यदनु संसृतिचक्रमेतत् ॥२०॥**

पदच्छेद—सः अहम् वसन् अपि विभो बहु दुःख वासम् गर्भात् न निर्जिगमिषे बहिः अन्धकूपे ।
यत्र उपयातम् उपसर्पति देवमाया मिथ्या मतिः यदनु संसृति चक्रम् एतत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः अहम् | २. | वह, मैं | यत्र | १०. | जहाँ |
| वसन्, अपि | ५. | रहने पर, भी | उपयातम् | ११. | जाने पर |
| विभो | १. | हे प्रभो ! | उपसर्पति | १३. | घेर लेती है (जिसके कारण) |
| बहुदुःख | ३. | अत्यन्त कष्ट दायक | देवमाया | १२. | आपकी माया |
| वासम् | ४. | गर्भाशय में | मिथ्या, मतिः | १४. | अहंकार, बुद्धि (होती है) |
| गर्भात् | ६. | उस गर्भ से | यदनु | १५. | जिसके फल स्वरूप |
| न, निर्जिगमिषे | ९. | नहीं, निकलना चाहता हूँ | संसृति, चक्रम् | १७. १८. | संसार चक्र (प्राप्त होता है) |
| बहिः, अन्धकूपे । | ७. ८ | बाहर, अज्ञान सागर, में | एतत् ॥ | १६. | यह |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! वह मैं अत्यन्त कष्ट दायक गर्भाशय में रहने पर भी उस गर्भ से बाहर अज्ञान सागर संसार में नहीं निकलना चाहता हूँ । जहाँ जाने पर आपकी माया घेर लेती है । जिसके कारण अहंकार बुद्धि होती है । जिसके फल स्वरूप यह संसार चक्र प्राप्त होता है ॥

# एकविंशः श्लोकः

**तस्मादहं विगतविक्लव उद्धरिष्य आत्मानमाशु तमसः सुहृदाऽऽत्मनैव ।**
**भूयो यथा व्यसनमेतदनेकरन्ध्रं मा मे भविष्यदुपसादितविष्णुपादः ॥२१॥**

पदच्छेद—तस्मात्, अहम् विगत विक्लवः उद्धरिष्ये आत्मानम् आशु तमसः सुहृदा आत्मना एव ।
भूयः यथा व्यसनम् एतद् अनेक रन्ध्रम् मा मे भविष्यत् उपसादित विष्णुपादः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात्, अहम् | १. | इसलिये मैं | भूयः | १८. | फिर से |
| विगत | ५. | रहित होकर | यथा | १३. | जिससे कि |
| विक्लवः | ४. | व्याकुलता से | व्यसनम् | १६. | संसार रूप विपत्ति |
| उद्धरिष्ये | १२. | उद्धार करूँगा | एतद् | १५. | यह |
| आत्मानम् | ९. | अपनी आत्मा का | अनेक, रन्ध्रम् | १४. | बहुत प्रकार के, दोषों से युक्त |
| आशु | ११. | शीघ्र | मा | १९. | न |
| तमसः | १०. | संसार सागर से | मे | १७. | मुझे |
| सुहृदा | ७. | सहायता से | भविष्यत् | २०. | हो सके |
| आत्मना | ६. | अपनी बुद्धि की | उपसादित | ३. | स्थापित करके |
| एव । | ८. | ही | विष्णुपादः ॥ | २. | भगवान् विष्णु के चरणों को हृदय में |

श्लोकार्थ—इसलिये मैं भगवान् विष्णु के चरणों को हृदय में स्थापित करके व्याकुलता से रहित होकर अपनी बुद्धि की सहायता से ही अपनी आत्मा का संसार सागर से शीघ्र उद्धार करूँगा । जिससे कि बहुत प्रकार के दोषों से युक्त यह संसार रूप विपत्ति मुझे फिर से न हो सके ॥

# द्वाविंशः श्लोकः

**कपिल उवाच—एवं कृतमतिर्गर्भे दशमास्यः स्तुवन्नृषिः ।**
**सद्यः क्षिपत्यवाचीनं प्रसूत्यै सूतिमारुतः ॥२२॥**

पदच्छेद— एवम् कृत मतिः गर्भे दशमास्यः स्तुवन् ऋषिः ।
सद्यः क्षिपति अवाचीनम् प्रसूत्यै सूति मारुतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | ३. | इस प्रकार | सद्यः | ७. | उसी समय |
| कृत | ५. | करते हुये (भगवान् की) | क्षिपति | १२. | धकेलतो है |
| मतिः | ४. | विवेक | अवाचीनम् | १०. | अधोमुख उस बालक को |
| गर्भे, दशमास्यः | १. | गर्भ में, दश महीने का | प्रसूत्यै | ११. | बाहर आने के लिये |
| स्तुवन् | ६. | स्तुति करता है | सूति | ८. | प्रसव की |
| ऋषिः । | २. | देहात्मदर्शी वह जीव | मारुतः ॥ | ९. | वायु |

श्लोकार्थ—गर्भ में दश महीने का देहात्मदर्शी वह जीव इस प्रकार विवेक करते हुये भगवान् की स्तुति करता है । उसी समय प्रसव की वायु अधोमुख उस बालक को बाहर आने के लिये धकेलती है ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

**तेनावसृष्टः सहसा कृत्वावाक् शिर आतुरः।**
**विनिष्क्रामति कृच्छ्रेण निरुच्छ्वासो हतस्मृतिः ॥२३॥**

पदच्छेद—

तेन अवसृष्टः सहसा कृत्वा अवाक् शिरः।
आतुरः विनिष्क्रामति कृच्छ्रेण निरुच्छ्वासः हत स्मृतिः॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेन | १. | उस वायु के | आतुरः | ४. | व्याकुल होता हुआ वह |
| अवसृष्टः | ३. | धकेलने पर | विनिष्क्रामति | ९. | बाहर निकलता है (उस समय) |
| सहसा | २. | एकाएक | कृच्छ्रेण | ८. | बड़े कष्ट से |
| कृत्वा | ७. | करके | निरुच्छ्वासः | १०. | उसकी सांस रुक जाती है (और) |
| अवाक् | ६. | नीचे | हत | १२. | नष्ट हो जाती है |
| शिरः | ५. | सिर को | स्मृतिः | ११. | पूर्व जन्म की स्मृति |

श्लोकार्थ—उस वायु के एकाएक धकेलने पर व्याकुल होता हुआ वह सिर को नीचे करके बड़े कष्ट से बाहर निकलता है। उस समय उसकी सांस रुक जाती है। और पूर्व जन्म की स्मृति नष्ट हो जाती है॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

**पतितो भुव्यसृङ्मूत्रे विष्ठाभूरिव चेष्टते।**
**रोरूयति गते ज्ञाने विपरीतां गतिं गतः ॥२४॥**

पदच्छेद—

पतितः भुवि असृक् मूत्रे विष्ठा भूः इव चेष्टते।
रोरूयति गते ज्ञाने विपरीताम् गतिम् गतः॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पतितः | ४. | पड़ा हुआ वह | चेष्टते। | ८. | अपने अङ्गों को हिलाता है (तथा) |
| भुवि | १. | पृथ्वी पर (माता के) | रोरूयति | १४. | ज़ोर-ज़ोर से रोता है |
| असृक् | २. | रुधिर और | गते | १०. | समाप्त हो जाने से |
| मूत्रे | ३. | मूत्र में | ज्ञाने | ९. | पूर्व ज्ञान के |
| विष्ठा | ५. | मल के | विपरीताम् | ११. | विपरीत अज्ञान |
| भूः | ६. | कीड़े के | गतिम् | १२. | दशा को |
| इव | ७. | समान | गतः॥ | १३. | प्राप्त होकर |

श्लोकार्थ—पृथ्वी पर माता के रुधिर और मूत्र में पड़ा हुआ वह मल के कीड़े के समान अपने अङ्गों को हिलाता है। तथा पूर्व ज्ञान के समाप्त हो जाने से विपरीत अज्ञान दशा को प्राप्त होकर ज़ोर-ज़ोर से रोता है॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

परच्छन्दं न विदुषा पुष्यमाणो जनेन सः ।
अनभिप्रेतमापन्नः प्रत्याख्यातुमनीश्वरः ॥२५॥

पदच्छेद—

परच्छन्दम् न विदुषा पुष्यमाणः जनेन सः ।
अनभिप्रेतम् आपन्नः प्रत्याख्यातुम् अनीश्वरः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परच्छन्दम् | १. | उसके मनो भावों को | सः । | ५. | उसका |
| न | २. | नहीं | अनभिप्रेतम् | ७. | प्रतिकूलता |
| विदुषा | ३. | जानने वाले | आपन्नः | ८. | होने पर (उसका) |
| पुष्यमाणः | ६. | पालन-पोषण करते हैं | प्रत्याख्यातुम् | ९. | निषेध करने में |
| जनेन | ४. | लोग | अनीश्वरः ॥ | १०. | समर्थ नहीं होता है |

श्लोकार्थ—उसके मनो भावों को नहीं जानने वाले लोग उसका पालन-पोषण करते हैं। प्रतिकूलता होने पर वह उसका निषेध करने में समर्थ नहीं होता है ॥

## षड्विंशः श्लोकः

शायितोऽशुचिपर्यङ्के जन्तुः स्वेदजदूषिते ।
नेशः कण्डूयनेऽङ्गानामासनोत्थानचेष्टने ॥२६॥

पदच्छेद—

शायितः अशुचि पर्यङ्के जन्तुः स्वेदज दूषिते ।
न, ईशः कण्डूयने अङ्गानाम् आसन उत्थान चेष्टने ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| शायितः | ६. | सुलाया जाता है | न, ईशः | १२. | नहीं समर्थ होता है |
| अशुचि | ४. | मैली | कण्डूयने | ८. | खुजलाने में |
| पर्यङ्के | ५. | खाट पर | अङ्गानाम् | ७. | अपने अङ्गों को |
| जन्तुः | १. | उस बालक को | आसन | ९. | बैठाने |
| स्वेदज | २. | पसीने से होने वाले | उत्थान | १०. | उठाने (अथवा) |
| दूषिते । | ३. | खटमल इत्यादि से युक्त | चेष्टने ॥ | ११. | करवट बदलने में |

श्लोकार्थ—उस बालक को पसीने से होने वाले खटमल इत्यादि से युक्त मैली खाट पर सुलाया जाता है। वह अपने अङ्गों को खुजलाने में, बैठाने उठाने अथवा करवट बदलने में समर्थ नहीं होता है ॥

# सप्तविंशः श्लोकः

तुदन्त्यामत्वचं दंशा मशका मत्कुणादयः ।
रुदन्तं विगतज्ञानं कृमयः कृमिकं यथा ॥२७॥

पदच्छेद—

तुदन्ति आम त्वचम् दंशाः मशकाः मत्कुण आदयः ।
रुदन्तम् विगत ज्ञानम् कृमयः कृमिकम् यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तुदन्ति | ६. | काटते हैं | रुदन्तम् | १२. | रोता है |
| आम, त्वचम् | ५. | कच्ची चमड़ी को | विगत | ११. | नष्ट हो जाने से (वह केवल) |
| दंशाः | १. | डांस | ज्ञानम् | १०. | (तब गर्भावस्था का) ज्ञान |
| मशकाः | २. | मच्छर | कृमयः | ८. | छोटे कीड़े |
| मत्कुण | ३. | खटमल | कृमिकम् | ९. | बड़े कीड़ों को (काटते हैं) |
| आदयः । | ४. | इत्यादि कीड़े (उसकी) | यथा ॥ | ७. | जैसे |

श्लोकार्थ—डांस, मच्छर, खटमल, इत्यादि कीड़े उसकी कच्ची चमड़ी को काटते हैं। जैसे छोटे कीड़े, बड़े कीड़ों को काटते हैं। तब गर्भावस्था का ज्ञान नष्ट हो जाने से वह केवल रोता है।

# अष्टाविंशः श्लोकः

इत्येवं शैशवं भुक्त्वा दुःखं पौगण्डमेव च ।
अलब्धाभीप्सितोऽज्ञानादिद्धमन्युः शुचार्पितः ॥२८॥

पदच्छेद—

इति, एवम् शैशवम् भुक्त्वा दुःखम् पौगण्डम् एव च ।
अलब्ध अभीप्सितः अज्ञानात् इद्ध मन्युः शुचः अर्पितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति, एवम् | १. | इस प्रकार, वह | अलब्ध | ९. | न मिलने से |
| शैशवम् | २. | बाल्यावस्था के | अभीप्सितः | ८. | इच्छित भोग |
| भुक्त्वा | ७. | भोग कर (युवावस्था में) | अज्ञानात् | १०. | अज्ञान के कारण |
| दुःखम् | ६. | दुःख | इद्ध | १२. | बढ़ जाता है (और वह) |
| पौगण्डम् | ४. | किशोरावस्था के | मन्युः | ११. | उसका क्रोध |
| एव | ५. | भी | शुचः | १३. | शोक |
| च । | ३. | और | अर्पितः ॥ | १४. | मग्न (हो जाता है) |

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह बाल्यावस्था के और किशोरावस्था के भी दुःख भोग कर (युवावस्था में) इच्छित भोग न मिलने से अज्ञान के कारण उसका क्रोध बढ़ जाता है। और वह शोक मग्न हो जाता है॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**सह देहेन मानेन वर्धमानेन मन्युना ।**
**करोति विग्रहं कामी कामिष्वन्ताय चात्मनः ॥२९॥**

पदच्छेद—

सह देहेन मानेन वर्धमानेन मन्युना ।
करोति विग्रहम् कामी कामिषु अन्ताय च आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सह | २. साथ-साथ | | विग्रहम् | ११. वैर |
| देहेन | १. शरीर के | | कामी | ६. कामनाओं में आसक्त (वह जीव) |
| मानेन | ३. अभिमान (और) | | कामिषु | १०. विषयानुरागी (लोगों से) |
| वर्धमानेन | ५. बढ़ जाने के कारण | | अन्ताय | ९. नाश के लिये |
| मन्युना । | ४. क्रोध | | च | ८. ही |
| करोति | १२. करता है | | आत्मनः ॥ | ७. अपने |

श्लोकार्थ—शरीर के साथ-साथ अभिमान और क्रोध बढ़ जाने के कारण कामनाओं में आसक्त वह जीव अपने ही नाश के लिये विषयानुरागी लोगों से वैर करता है ॥

## त्रिंशः श्लोकः

**भूतैः पञ्चभिरारब्धे देहे देह्यबुधोऽसकृत् ।**
**अहंममेत्यसद्ग्राहः करोति कुमतिर्मतिम् ॥३०॥**

पदच्छेद—

भूतैः पञ्चभिः आरब्धे देहे देही अबुधः असकृत् ।
अहम् मम इति असद् ग्राहः करोति मतिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| भूतैः | ७. महाभूतों से | | अहम्, मम | ११. मैं और मेरा |
| पञ्चभिः | ६. आकाशादि पांच | | इति | १२. इस प्रकार का |
| आरब्धे | ८. रचित | | असद् | ४. मिथ्या |
| देहे | ९. शरीर के प्रति | | ग्राहः | ५. अभिनिवेश होने के कारण |
| देही | ३. जीव | | करोति | १४. करता है |
| अबुधः | २. अज्ञानी | | कुमतिः | १. खोटि बुद्धि वाला |
| असकृत् । | १०. निरन्तर | | मतिम् ॥ | १३. दुरभिमान |

श्लोकार्थ—खोटि बुद्धि वाला अज्ञानी जीव मिथ्या अभिनिवेश होने के कारण आकाशादि पांच महाभूतों से रचित शरीर के प्रति निरन्तर मैं और मेरा इस प्रकार का दुरभिमान करता है ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

**तदर्थं कुरुते कर्म यद्बद्धो याति संसृतिम् ।**
**योऽनुयाति ददत्क्लेशमविद्याकर्मबन्धनः ॥३१॥**

पदच्छेद—

तद् अर्थम् कुरुते कर्म यद् बद्धः याति संसृतिम् ।
यः अनुयाति ददत् क्लेशम् अविद्या कर्म बन्धनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद्, अर्थम् | ८. | उसी के लिये (जीव) | यः | १. | जो शरीर |
| कुरुते | १०. | करता है | अनुयाति | ७. | पीछे लगा रहता है |
| कर्म | ९. | अनेकों प्रकार के कर्म | ददत् | ६. | देता हुआ |
| यद् | ११. | जिसके | क्लेशम् | ५. | वृद्धावस्थादि कष्ट को |
| बद्धः | १२. | बन्धन से (वह) | अविद्या | २. | अज्ञान (और) |
| याति | १४. | पड़ता है | कर्म | ३. | कर्म से |
| संसृतिम् । | १३. | संसार चक्र में | बन्धनः ॥ | ४. | बंधा हुआ (तथा) |

श्लोकार्थ—जो शरीर अज्ञान और कर्म से बंधा हुआ तथा वृद्धावस्थादि के कष्ट को देता हुआ पीछे लगा रहता है। उसी के लिये जीव अनेकों प्रकार के कर्म करता है। जिसके बन्धन से वह संसार चक्र में पड़ता है ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**यद्यसद्भिः पथि पुनः शिश्नोदरकृतोद्यमैः ।**
**आस्थितो रमते जन्तुस्तमो विशति पूर्ववत् ॥३२॥**

पदच्छेद—

यदि असद्भिः पथि पुनः शिश्न उदर कृत उद्यमैः ।
आस्थितः रमते जन्तुः तमः विशति पूर्ववत् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदि | १. | अगर जीव | आस्थितः | ६. | चलता हुआ |
| असद्भिः | ४. | दुष्ट लोगों के | रमते | ७. | बिहार करता है (तो) |
| पथि | ५. | उनके रास्ते पर | जन्तुः | ८. | (वह) जीव |
| पुनः | १०. | फिर से | तमः | ११. | नारकी योनियों में |
| शिश्न, उदर | २. | जननेन्द्रिय और पेट के ही | विशति | १२. | प्रवेश करता है |
| कृत उद्यमैः । | ३. | निमित्त, उद्योग में लगा हुआ एवं | पूर्ववत् ॥ | ९. | पहले के समान |

श्लोकार्थ—अगर जीव जननेन्द्रिय और पेट के ही निमित्त उद्योग में लगा हुआ; एवम् दुष्ट लोगों के साथ उनके रास्ते पर चलता हुआ बिहार करता है तो वह पहले के समान फिर से नारकी योनियों में प्रवेश करता है ॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**सत्यं शौचं दया मौनं बुद्धिः श्रीर्ह्रीर्यशः क्षमा ।**
**शमो दमो भगश्चेति यत्सङ्गाद्याति सङ्क्षयम् ॥३३॥**

पदच्छेद— सत्यम् शौचम् दया मौनम् बुद्धिः श्रीः ह्रीः यशः क्षमा ।
शमः दमः भगः च इति यत् सङ्गात् याति सङ्क्षयम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सत्यम् | ३. | (उसके) सत्य | शमः | १२. | जितेन्द्रियता |
| शौचम् | ४. | बाहर और भीतर की पवित्रता | दमः | १३. | मन का दमन |
| दया | ५. | दयालुता | भगः | १५. | ऐश्वर्य |
| मौनम् | ६. | मितभाषिता | च | १४. | और |
| बुद्धिः | ७. | विवेक | इति | १६. | ये सब |
| श्रीः | ८. | सम्पत्ति | यत् | १. | जिन दुष्टों के |
| ह्रीः | ९. | लज्जा | सङ्गात | २. | कुसंग से |
| यशः | १०. | कीर्ति | याति | १८. | हो जाते हैं |
| क्षमा । | ११. | सहन शीलता | सङ्क्षयम् ॥ | १७. | नष्ट |

श्लोकार्थ—जिन दुष्टों के कुसंग से उसके सत्य, बाहर और भीतर की पवित्रता, दयालुता, मितभाषिता विवेक, सम्पत्ति, लज्जा, कीर्ति सहनशीलता, जितेन्द्रियता, मन का दमन और ऐश्वर्य ये सब नष्ट हो जाते हैं ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**तेष्वशान्तेषु मूढेषु खण्डितात्मस्वसाधुषु ।**
**सङ्गं न कुर्याच्छोच्येषु योषित्क्रीडामृगेषु च ॥३४॥**

पदच्छेद— तेषु अशान्तेषु मूढेषु खण्डित आत्मषु साधुषु ।
सङ्गम न कुर्यात् शोच्येषु योषित् क्रीडा, मृगेषु च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तेषु | १. | उन | सङ्गम | ११. | साथ |
| अशान्तेषु | ५. | अशान्त | न | १२. | नहीं |
| मूढेषु | ६. | मूर्ख | कुर्यात् | १३. | करना चाहिये |
| खण्डित | ८. | अजित | शोच्येषु | २. | अत्यन्त शोचनीय |
| आत्मषु | ९. | इन्द्रिय | योषित् | ३. | स्त्रियों के |
| असाधुषु । | १०. | दुष्ट जनों का | क्रीडा, मृगेषु | ४. | खिलौने |
| | | | च ॥ | ७. | और |

श्लोकार्थ—उन अत्यन्त शोचनीय स्त्रियों के खिलौने अशान्त मूर्ख और अजित इन्द्रिय दुष्ट जनों का साथ नहीं करना चाहिये ॥

# पञ्चत्रिंशः श्लोकः

न तथास्य भवेन्मोहो बन्धश्चान्यप्रसङ्गतः ।
योषित्सङ्गाद्यथा पुंसो यथा तत्सङ्गिसङ्गतः ॥३५॥

पदच्छेद—

न तथा अस्य भवेत् मोहः बन्धः च अन्य प्रसङ्गतः ।
योषित् सङ्गात् यथा पुंसः यथा तत् सङ्गि सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | ८. | नहीं | योषित् | ११. | स्त्रियों के |
| तथा | ४. | वैसा | सङ्गात् | १२. | सङ्ग से (अथवा) |
| अस्य | १. | इस | यथा | १०. | जैसा |
| भवेत् | ९. | हो सकता है | पुंसः | २. | पुरुष को |
| मोहः | ५. | अज्ञान | यथा | १३. | जैसा |
| बन्धः | ७. | बन्धन | तत् | १४. | स्त्रियों के |
| च | ६. | और | सङ्गि | १५. | चक्कर में रहने वालों के |
| अन्य प्रसङ्गतः । | ३. | किसी और के साथ से | सङ्गतः ॥ | १६. | साथ से (होता है) |

श्लोकार्थ—इस पुरुष को किसी और के साथ से वैसा अज्ञान और बन्धन नहीं हो सकता है। जैसा स्त्रियों के सङ्ग से अथवा जैसा स्त्रियों के चक्कर में रहने वालों के साथ से होता है ॥

# षट्त्रिंशः श्लोकः

प्रजापतिः स्वां दुहितरं दृष्ट्वा तद्रूपधर्षितः ।
रोहिद्भूतां सोऽन्वधावदृक्षरूपी हतत्रपः ॥३६॥

पदच्छेद—

प्रजापतिः स्वाम् दुहितरम् दृष्ट्वा तद् रुप धर्षितः ।
रोहित् भूताम् सः अन्वधावत् ऋक्षरूपी हत त्रपः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतिः | ४. | प्रजापति ब्रह्मा जी | रोहित् | ८. | मृगी का |
| स्वाम् | १. | एक बार अपनी | भूताम् | ९. | रूप धारण करके |
| दुहितरम् | २. | पुत्री (सरस्वती को) | सः | १०. | उसके भागने पर वे भी |
| दृष्ट्वा | ३. | देखकर | अन्वधावत् | १४. | पीछे-पीछे दौड़ने लगे |
| तद् | ५. | उसके | ऋक्षरूपी | ११. | मृग का रूप धारण करके (तथा) |
| रूप | ६. | सौन्दर्य से | हत | १३. | छोड़कर |
| धर्षितः । | ७. | मोहित हो गये (और) | त्रपः ॥ | १२. | लज्जा |

श्लोकार्थ—एक बार अपनी पुत्री सरस्वती को देखकर प्रजापति ब्रह्मा जी उसके सौन्दर्य से मोहित हो गये; और मृगी का रूप धारण करके उसके भागने पर वे भी मृग का रूप धारण करके तथा लज्जा छोड़कर पीछे-पीछे दौड़ने लगे ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

**तत्सृष्टसृष्टसृष्टेषु को न्वखण्डितधीः पुमान् ।**
**ऋषिं नारायणमृते योषिन्मय्येह मायया ॥३७॥**

पदच्छेद—

तत् सृष्ट सृष्ट सृष्टेषु कः नु अखण्डित, धीः पुमान् ।
ऋषिम् नारायणम् ऋते योषिन्मय्या इह मायया ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| तत् | १. उन ब्रह्मा जी से उत्पन्न | पुमान् । | ११. | मनुष्य है (जो) |
| सृष्ट | २. मरीचि आदि से | ऋषिम् | ५. | आदि ऋषि |
| सृष्ट | ३. पैदा हुये कश्यपादि से | नारायणम् | ६. | एक नारायण को |
| सृष्टेषु | ४. रचित मनुष्य में | ऋते | ७. | छोड़कर |
| कः | ९. कौन | योषिन्मय्या | १३. | स्त्री रूपिणी |
| नु | ८. भला | इह | १२. | इस संसार में |
| अखण्डित, धीः | १०. विवेक, बुद्धि वाला | मायया ॥ | १४. | माया से (मोहित न हुआ हो) |

श्लोकार्थ—उन ब्रह्मा जी से उत्पन्न मरीचि आदि से पैदा हुये कश्यपादि से रचित मनुष्यों में आदि ऋषि नारायण को छोड़कर भला कौन विवेक बुद्धि वाला मनुष्य है, जो इस संसार में स्त्रीरूपिणी माया से मोहित न हुआ हो ॥

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

**बलं मे पश्य मायायाः स्त्रीमय्या जयिनो दिशाम् ।**
**या करोति पदाक्रान्तान् भ्रूविजृम्भेण केवलम् ॥३८॥**

पदच्छेद—

बलम् मे पश्य मायायाः स्त्रीमय्याः जयिनः दिशाम् ।
या करोति पद आक्रान्तान् भ्रू विजृम्भेण केवलम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| बलम् | ४. शक्ति को | या | ६. जो |
| मे | १. मेरी | करोति | १४. देती है |
| पश्य | ५. देखो | पद | १२. (अपने) पैरों से |
| मायायाः | ३. माया की | आक्रान्तान् | १३. रौंद |
| स्त्रीमय्याः | २. स्त्री रूपिणी | भ्रू | ७. अपने भौहों के |
| जयिनः | ११. जीतने वाले वीरों को भी | विजृम्भेण | ८. विलास |
| दिशाम् । | १०. चारों दिशाओं को | केवलम् ॥ | ९. मात्र से |

श्लोकार्थ—मेरी स्त्री रूपिणी माया की शक्ति को देखो; जो अपने भौहों के विलास मात्र से चारों दिशाओं को जीतने वाले वीरों को भी अपने पैरों से रौंद देती है।

## एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

**सङ्गं न कुर्यात्प्रमदासु जातु योगस्य पारं परमारुरुक्षुः ।**
**मत्सेवया प्रतिलब्धात्मलाभो वदन्ति या निरयद्वारमस्य ॥३९॥**

पदच्छेद— सङ्गम् न कुर्यात् प्रमदासु जातु, योगस्य पारम् परम् आरुरुक्षुः ।
मत् सेवया प्रतिलब्ध आत्म लाभः वदन्ति याः निरयः द्वारम् अस्य ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सङ्गम् | ११. | साथ, | मत्,सेवया, | ५. | (तथा) मेरी, सेवा भक्ति से |
| न | १२. | नहीं | प्रतिलब्ध | ६. | जिसे |
| कुर्यात् | १३. | करना चाहिये (क्योंकि) | आत्म | ७. | आत्मा के स्वरूप का |
| प्रमदासु | १०. | स्त्रियों का | लाभः | ८. | ज्ञान प्राप्त हो गया है (उसे) |
| जातु | ९. | कभी भी | वदन्ति | १८. | कहते हैं |
| योगस्य | १. | योग के | याः | १४. | उन्हें |
| पारम् | ३. | पद पर | निरयः | १६. | नरक का |
| परम् | २. | परम् | द्वारम् | १७. | खुला द्वार |
| आरुरुक्षुः । | ४. | आरूढ होने के इच्छुक पुरुष को | अस्य ॥ | १५. | पुरुष के लिये |

श्लोकार्थ—योग के परम् पद पर आरूढ़ होने के इच्छुक पुरुष को तथा मेरी सेवा भक्ति से जिसे आत्मा के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त हो गया है उसे कभी भी स्त्रियों का साथ नहीं करना चाहिये; क्योंकि उन्हें पुरुष के नरक का खुला द्वार कहते हैं ॥

## चत्वारिंशः श्लोकः

**योपयाति शनैर्माया योषिद्देवविनिर्मिता ।**
**तामीक्षेतात्मनो मृत्युं तृणैः कूपमिवावृतम् ॥४०॥**

पदच्छेद— या उपयाति शनैः माया योषित् देव विनिर्मिता ।
ताम् ईक्षेत् आत्मनः मृत्युम् तृणैः कूपम् इव आवृतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| या | ४. | जो | ताम् | ११. | उसे |
| उपयाति | ७. | पास में आती है | ईक्षेत् | १४. | समझनी चाहिये |
| शनैः | ६. | धीरे-धीरे | आत्मनः, मृत्युम् | १२,१३. | अपनी, मौत |
| माया | ५. | माया | तृणैः | ८. | तिनके से |
| योषित् | ३. | स्त्री-रूपी | कूपम्, इव | १०. | कुयें के, समान |
| देव,विनिर्मिता। | १.२. | भगवान् से, रचित | आवृतम् ॥ | ९. | ढके हुये |

श्लोकार्थ—भगवान् से रचित स्त्री रूपी जो माया धीरे-धीरे पास में आती है; तिनके से ढके कुयें के समान उसे अपनी मौत समझनी चाहिये ॥

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

**यां मन्यते पतिं मोहान्मन्मायामृषभायतीम् ।**
**स्त्रीत्वं स्त्रीसङ्गतः प्राप्तो वित्तापत्यगृहप्रदम् ॥४१॥**

पदच्छेद—

याम् मन्यते पतिम् मोहात् मत् मायाम् ऋषभा यतीम् ।
स्त्रीत्वम् स्त्री सङ्गतः प्राप्तः वित्त अपत्य गृह प्रदम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| याम् | ७. | जिस | स्त्रीत्वम् | ३. | स्त्री की योनि को |
| मन्यते | १६. | मानने लगता है | स्त्री | १. | अन्त समय स्त्रियों में |
| पतिम् | १५. | पति | सङ्गतः | २. | आसक्ति होने से (मनुष्य) |
| मोहात् | १०. | अज्ञानवश | प्राप्तः | ४ | प्राप्त होता है (उस समय) |
| मत् | ८. | मेरी | वित्त,अपत्य | ११,१२. | धन, पुत्र और |
| मायाम् | ६. | माया को ही (वह) | गृह | १३. | घर |
| ऋषभा, यतीम् । | ५,६. | पुरुष रूप में, प्रतीत होने वाली | प्रदम् ॥ | १४. | प्रदान करने वाला |

श्लोकार्थ—अन्त समय स्त्रियों में आसक्ति होने से मनुष्य स्त्री की योनि को प्राप्त होता है । उस समय पुरुष रूप में प्रतीत होने वाली मेरी माया को ही वह अज्ञानवश धन, पुत्र और घर प्रदान करने वाला पति मानने लगता है ॥

## द्विचत्वारिंशः श्लोकः

**तामात्मनो विजानीयात्पत्यपत्यगृहात्मकम् ।**
**दैवोपसादितं मृत्युं मृगयोर्गायनं यथा ॥४२॥**

पदच्छेद—

ताम् आत्मनः विजानीयात् पति अपत्य गृह आत्मकम् ।
दैव उपसादितम् मृत्युम् मृगयोः गायनम् यथा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ताम् | ८. | उस माया को | दैव | ९. | भगवान् के द्वारा |
| आत्मनः | ११. | अपनी | उपसादितम् | १०. | दिया गया |
| विजानीयात् | १३. | समझना चाहिये | मृत्युम् | १२. | मौत का कारण |
| पति | ४. | (उसी प्रकार) पति | मृगयोः | २. | व्याध का |
| अपत्य | ५. | पुत्र (और) | गायनम् | ३. | गान पक्षियों के नाश का कारण होता है |
| गृह | ६. | घर | यथा ॥ | १. | जैसे |
| आत्मकम् । | ७. | स्वरूप | | | |

श्लोकार्थ—जैसे व्याध का गान पक्षियों के नाश का कारण होता है । उसी प्रकार पति, पुत्र और घर स्वरूप उस माया को भगवान् के द्वारा दिया गया अपनी मौत का कारण समझना चाहिये ॥

# त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

देहेन जीवभूतेन लोकाल्लोकमनुव्रजन् ।
भुञ्जान एव कर्माणि करोत्यविरतं पुमान् ॥४३॥

पदच्छेद—

देहेन जीव भूतेन लोकात् लोकम् अनुव्रजन् ।
भुञ्जानः एव कर्माणि करोति अविरतम् पुमान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देहेन | ३. | सूक्ष्म शरीर से | भुञ्जानः | ८. | प्रारब्ध कर्मों को भोगता है |
| जीव | १. | जीव के | एव | ११. | भी |
| भूतेन | २. | उपाधिरूप | कर्माणि | १०. | दूसरे कर्मों को |
| लोकात् | ५. | एक लोक से | करोति | १२. | करता है |
| लोकम् | ६. | दूसरे लोक में | अविरतम् | ९. | (तथा) निरन्तर |
| अनुव्रजन् । | ७. | विचरण करता हुआ | पुमान् ॥ | ४. | पुरुष |

श्लोकार्थ—जीव के उपाधिरूप सूक्ष्म शरीर से पुरुष एक लोक से दूसरे लोक में विचारण करता हुआ प्रारब्ध कर्मों को भोगता है। तथा निरन्तर दूसरे कर्मों को भी करता है ॥

# चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

जीवो ह्यस्यानुगो देहो भूतेन्द्रियमनोमयः ।
तन्निरोधोऽस्य मरणमाविर्भावस्तु सम्भवः ॥४४॥

पदच्छेद—

जीवः हि अस्य अनुगः देहः भूत इन्द्रिय मनोमयः ।
तद् निरोधः अस्य मरणम् आविर्भावः तु सम्भवः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जीवः | १. | जीव | तद् | ९. | सूक्ष्म शरीर और, स्थूल शरीर का |
| हि | ७. | ही (उसका) | निरोधः | १०. | एक साथ न रहना |
| अस्य | २. | इस उपाधि रूप सूक्ष्म शरीर के | अस्य | ११. | इस जीव की |
| अनुगः | ३. | साथ रहता है | मरणम् | १२. | मृत्यु है |
| देहः | ८. | भोगाधिष्ठान है | आविर्भावः | १४. | उन दोनों का, एक साथ प्रकट होना |
| भूत | ४. | पंच महाभूत | तु | १३. | तथा |
| इन्द्रिय | ५. | इन्द्रिय (और) | सम्भवः ॥ | १५. | जन्म है |
| मनोमयः । | ६. | मन कार्य रूप स्थूल शरीर | | | |

श्लोकार्थ—जीव इस उपाधि रूप सूक्ष्म शरीर के साथ रहता है। पंच महाभूत, इन्द्रिय और मन का कार्यरूप स्थूल शरीर ही उसका भोगाधिष्ठान है। सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर का एक साथ न रहना इस जीव की मत्यु है। तथा उन दोनों का एक साथ प्रकट होना जन्म है ॥

## पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

द्रव्योपलब्धिस्थानस्य द्रव्येक्षायोग्यता यदा ।
तत्पञ्चत्वमहंमानादुत्पत्तिर्द्रव्यदर्शनम् ॥४५॥

पदच्छेद—

द्रव्य उपलब्धि स्थानस्य द्रव्य ईक्ष्य अयोग्यता यदा ।
तत् पञ्चत्वम् अहम् मानात् उत्पत्ति द्रव्य दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्रव्य | १. | पदार्थ के | तत् | ८. | (तब) उसे |
| उपलब्धि | २. | अनुभव | पञ्चत्वम् | ९. | मृत्यु कहते हैं (तथा) |
| स्थानस्य | ३. | स्थान शरीर में | अहम् | १०. | मैं और मेरे पन के |
| द्रव्य | ५. | पदार्थों के | मानात् | ११. | अभिमान से |
| ईक्ष्य | ६. | दर्शन की | उत्पत्ति | १४. | जन्म है |
| अयोग्यता | ७. | योग्यता नहीं होती | द्रव्य | १२. | पदार्थों का |
| यदा । | ४. | जब | दर्शनम् ॥ | १३. | अनुभव करना ही |

श्लोकार्थ——पदार्थ के अनुभव स्थान शरीर में जब पदार्थों के दर्शन की योग्यता नहीं होती तब उसे मृत्यु कहते हैं । तथा मैं और मेरेपन के अभिमान से पदार्थों का अनुभव करना ही जन्म है ॥

## षट्चत्वारिंशः श्लोकः

यथाक्ष्णोर्द्रव्यावयवदर्शनायोग्यता यदा ।
तदैव चक्षुषो द्रष्टुर्द्रष्टृत्वायोग्यतानयोः ॥४६॥

पदच्छेद—

यथा अक्ष्णोः द्रव्य अवयव दर्शन अयोग्यता यदा ।
तदा एव चक्षुषः द्रष्टुः द्रष्टृत्व अयोग्यता अनयोः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जैसे | तदा एव | ८. | उसी समय |
| अक्ष्णोः | २. | नेत्रों की | चक्षुषः | ९. | शक्तिरूप, चक्षुः इन्द्रिय (और) |
| द्रव्य | ४. | पदार्थों के | द्रष्टुः | १०. | जीव |
| अवयव | ५. | रूप | द्रष्टृत्व | १२. | देखने की |
| दर्शन | ६. | दर्शन की | अयोग्यता | १३. | सामर्थ्य नहीं रहती है |
| अयोग्यता | ७. | असामर्थ्य होती है | अनयोः ॥ | ११. | इन दोनों में (भी) |
| यदा । | ३. | जब | | | |

श्लोकार्थ——जैसे नेत्रों की जब पदार्थों के रूप दर्शन की असामर्थ्य होती है । उसी समय शक्ति रूप चक्षुः इन्द्रिय और जीव इन दोनों में भी देखने की सामर्थ्य नहीं रहती है ॥

## सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

**तस्मान्न कार्यः सन्त्रासो न कार्पण्यं न सम्भ्रमः ।**
**बुद्ध्वा जीवगतिं धीरो मुक्तसङ्गश्चरेदिह ॥४७॥**

पदच्छेद—

तस्मात् न कार्यः सन्त्रासः न कार्पण्यम् न सम्भ्रमः ।
बुद्ध्वा जीव गतिम् धीरः मुक्त सङ्गः चरेत् इह ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. | इसलिये | बुद्ध्वा | १२. | समझकर |
| न | ३. | न | जीव | १०. | जीव के |
| कार्यः | ९. | करनी चाहिये (अपितु) | गतिम् | ११. | वास्तविक स्वरूप को |
| सन्त्रासः | ४. | भय | धीरः | २. | धीर पुरुष को |
| न | ५. | न | मुक्त | १५. | रहित होकर |
| कार्पण्यम् | ६. | दीनता (और) | सङ्गः | १४. | आसक्ति से |
| न | ७. | न | चरेत् | १६. | विचरण करना चाहिये |
| सम्भ्रमः । | ८. | भ्रान्ति | इह ॥ | १३. | इस संसार में |

श्लोकार्थ—इसलिये धीर पुरुष को न भय न दीनता और न भ्रान्ति करनी चाहिये । अपितु जीव के वास्तविक स्वरूप को समझकर इस संसार में आसक्ति से रहित होकर विचरण करना चाहिये ॥

## अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

**सम्यग्दर्शनया बुद्ध्या योगवैराग्ययुक्तया ।**
**मायाविरचिते लोके चरेन्न्यस्य कलेवरम् ॥४८॥**

पदच्छेद—

सम्यक् दर्शनया बुद्धया योग वैराग्य युक्त्या ।
माया विरचिते लोके चरेत् नयस्य कलेवरम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सम्यक् | ४. | वास्तविक स्वरूप का | माया | १. | माया के द्वारा |
| दर्शनया | ५. | दर्शन करने वाली | विरचिते | २. | निर्मित |
| बुद्धया | ६. | बुद्धि के द्वारा | लोके | ३. | संसार |
| योग | ६. | योग (और) | चरेत् | १२. | विचरण करना चाहिये |
| वैराग्य | ७. | विराग से | नयस्य | ११. | धरोहर समझकर |
| युक्त्या । | ८. | सम्पन्न | कलेवरम् ॥ | १०. | शरीर को |

श्लोकार्थ—माया के द्वारा निर्मित संसार में वास्तविक स्वरूप का दर्शन करने वाली योग और विराग से सम्पन्न बुद्धि के द्वारा शरीर को धरोहर समझकर विचरण करना चाहिये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपाख्याने जीवगतिर्नामैकत्रिंशोऽध्यायः समाप्तः ॥३१॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

द्वात्रिंशः अध्यायः

## प्रथमः श्लोकः

कपिल उवाच—अथ यो गृहमेधीयान्धर्मानेवावसन् गृहे ।
काममर्थं च धर्मान् स्वान् दोग्धि भूयः पिपर्ति तान् ॥१॥

पदच्छेद—

अथ यः गृहमेधीयान् धर्मान् एव अवसन् गृहे ।
कामम् अर्थम् च धर्मान् स्वान् दोग्धि, भूयः पिपर्ति तान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथ | ७. | तथा | कामम् | १०. | काम का |
| यः | १. | जो पुरुष | अर्थम् | १२. | अर्थ का |
| गृहमेधीयान् | ४. | गृहस्थ के | च | ११. | और |
| धर्मान् | ६. | धर्मों का (पालन करता है) | धर्मान् | ९. | धर्मों से |
| एव | ५. | ही | स्वान् | ८. | अपने |
| आवसन् | ३. | रहता हुआ | दोग्धि, भूयः | १३. | भोग करता है (एवं) फिर से |
| गृहे । | २. | घर में | पिपर्ति, | १५. | पालन करता है |
| | | | तान् ॥ | १४. | उन्हीं का |

श्लोकार्थ—जो पुरुष घर में रहता हुआ गृहस्थ के धर्मों का पालन करता है। तथा अपने धर्मों से काम का और अर्थ का भोग करता है। एवं फिर से उन्हीं का पालन करता है॥

## द्वितीयः श्लोकः

स चापि भगवद्धर्मात्काममूढः पराङ्मुखः ।
यजते क्रतुभिर्देवान् पितृंश्च श्रद्धयान्वितः ॥२॥

पदच्छेद—

सः च अपि भगवत् धर्मात् काममूढः पराङ्मुखः ।
यजते क्रतुभिः देवान् पितृन् च श्रद्धया अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | १. | वह | यजते | १४. | पूजन करता है |
| च | ४. | और | क्रतुभिः | ८. | यज्ञों के द्वारा |
| अपि | २. | भी | देवान् | ११. | देवताओं का |
| भगवत् | ५. | भगवान् की | पितृन् | १३. | पितरों का |
| धर्मात् | ६. | भक्ति से | च | १२. | और |
| काममूढः | ३. | कामनाओं से मोहित | श्रद्धया | ९. | श्रद्धा के |
| पराङ्मुखः। | ७ | विमुख होकर | अन्वितः ॥ | १०. | साथ |

श्लोकार्थ—वह भी कामनाओं से मोहित और भगवान् की भक्ति से विमुख होकर यज्ञों के द्वारा श्रद्धा के साथ देवताओं का और पितरों का पूजन करता है ॥

## तृतीयः श्लोकः

तच्छ्रद्धयाक्रान्तमतिः पितृदेवव्रतः पुमान् ।
गत्वा चान्द्रमसं लोकं सोमपाः पुनरेष्यति ॥३॥

पदच्छेद—

तत् श्रद्धया आक्रान्त मतिः पितृ देव व्रतः पुमान् ।
गत्वा चान्द्रमसम् लोकम् सोमपाः पुनः एष्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तत् | २. | उस | गत्वा | १०. | जाकर (और वहाँ) |
| श्रद्धया | ३. | श्रद्धा से | चान्द्रमसम् | ८. | चन्द्रमा के |
| आक्रान्त | ४. | युक्त रहती है | लोकम् | ९. | लोक में |
| मतिः | १. | उसकी बुद्धि | सोमपाः | ११. | सोमपान करके |
| पितृ देव | ५. | पितर और देवता (उसके) | पुनः | १२. | (पुण्य क्षीण होने पर) फिर से |
| व्रतः | ६. | उपास्य होते हैं | एष्यति ॥ | १३. | (इस लोक में) आता है |
| पुमान् । | ७. | (अतः वह) पुरुष | | | |

श्लोकार्थ—उसकी बुद्धि उस श्रद्धा से युक्त रहती है, पितर और देवता उसके उपास्य होते हैं । अतः वह पुरुष चन्द्रमा के लोक में जाकर और वहाँ सोमपान करके पुण्यक्षीण होने पर फिर से इस लोक में लौट आता है ।

## चतुर्थः श्लोकः

यदा चाहीन्द्रशय्यायां शेतेऽनन्तासनो हरिः ।
तदा लोका लयं यान्ति त एते गृहमेधिनाम् ॥४॥

पदच्छेद—

यदा च अहीन्द्र शय्यायाम् शेते अनन्त आसनः हरिः ।
तदा लोकाः लयम् यान्ति ते एते गृहमेधिनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | २. | जब | तदा | ८. | उस समय |
| च | १. | तथा | लोकाः | १२. | लोक |
| अहीन्द्र | ५. | शेष नाग की | लयम् | १३. | लीन |
| शय्यायाम् | ६. | शय्या पर | यान्ति | १४. | हो जाते हैं |
| शेते | ७. | शयन करते हैं | ते | १०. | प्राप्त होने वाले |
| अनन्त आसनः | ३. | शेषशायी | एते | ११. | ये सब |
| हरिः । | ४. | भगवान् श्री हरि | गृह मेधिनाम् ॥ | ९. | गृहस्थाश्रमियों को |

श्लोकार्थ—तथा जब शेषशायी भगवान् श्री हरि शेष नाग की शय्या पर शयन करते हैं, उस समय गृहस्थाश्रमियों को प्राप्त होने वाले ये सब लोक लीन हो जाते हैं ।

## पञ्चमः श्लोकः

**ये स्वधर्मान्न दुह्यन्ति धीराः कामार्थहेतवे ।**
**निःसङ्गा न्यस्तकर्माणः प्रशान्ताः शुद्धचेतसः ॥५॥**

पदच्छेद—

ये स्वधर्मात् न दुह्यन्ति धीराः काम अर्थ हेतवे ।
निः सङ्गाः न्यस्त कर्माणः प्रशान्ताः शुद्ध चेतसः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | १. | जो | निःसङ्गा | ७. | अनासक्त |
| स्वधर्मात् | ५. | अपने धर्म का | न्यस्त | ९. | विरत |
| न दुह्यन्ति | ६. | उपयोग नहीं करते हैं (वे) | कर्माणः | ८. | कर्मों से |
| धीराः | २. | विवेकी पुरुष | प्रशान्ताः | १०. | अत्यन्तशान्त (और) |
| काम | ३. | काम और | शुद्ध | ११. | निर्मल |
| अर्थ हेतवे । | ४. | अर्थ के लिये | चेतसः ॥ | १२. | मनवाले (होते हैं) |

श्लोकार्थ—जो विवेकी पुरुष काम और अर्थ के लिये अपने धर्म का उपयोग नहीं करते हैं। वे अनासक्त, कर्मों से विरत, अत्यन्तशान्त और निर्मल मन वाले होते हैं ॥

## षष्ठः श्लोकः

**निवृत्तिधर्मनिरता निर्ममा निरहङ्कृताः ।**
**स्वधर्माख्येन सत्त्वेन परिशुद्धेन चेतसा ॥६॥**

पदच्छेद—

निवृत्ति धर्म निरताः निर्ममाः निरहङ्कृताः ।
स्वधर्म आख्येन सत्त्वेन परिशुद्धेन चेतसा ।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निवृत्ति | १. | वे संन्यास | स्वधर्म | ७. | अपने धर्म |
| धर्म | २. | धर्म में | आख्येन | ८. | स्वरूप |
| निरताः | ३. | परायण | सत्त्वेन | ९. | सत्त्वगुण से |
| निर्ममाः | ४. | ममता से रहित (और) | परिशुद्धेन | १०. | निर्मल हो जाता है |
| निरहङ्कृताः । | ५. | अभिमान से रहित (होते हैं) | चेतसा ॥ | ६. | (तथा उनका) चित्त |

श्लोकार्थ— वे संन्यास धर्म में परायण, ममता से रहित और अभिमान से रहित होते हैं। तथा उनका चित्त अपने धर्म स्वरूप सत्त्वगुण से निर्मल हो जाता है ॥

## सप्तमः श्लोकः

सूर्यद्वारेण ते यान्ति पुरुषं विश्वतोमुखम् ।
परावरेशं प्रकृतिमस्योत्पत्त्यन्तभावनम् ॥७॥

पदच्छेद—

सूर्य द्वारेण ते यान्ति पुरुषम् विश्वतोमुखम् ।
परावरेशम् प्रकृतिम् अस्य उत्पत्ति अन्त भावनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सूर्य | २. | सूर्य के | परावरेशम् | ५. | परात्पर |
| द्वारेण | ३. | द्वार से | प्रकृतिम् | ९. | उपादान कारण हैं |
| ते | १. | वे पुरुष | अस्य | ८. | जो इस संसार के |
| यान्ति | ७. | प्राप्त करते हैं | उत्पत्ति | १०. | (और इसका) जन्म |
| पुरुषम् | ६. | परम पुरुष को | अन्त | ११. | संहार करते हैं |
| विश्वतोमुखम् । | ४. | सर्व व्यापक | भावनम् ॥ | १२. | पालन एवं |

श्लोकार्थ—वे पुरुष सूर्य के द्वार से सर्वव्यापक परात्पर परम पुरुष को प्राप्त करते हैं, जो इस संसार के उपादान कारण हैं और इसका जन्म, पालन एवं संहार करते हैं।

## अष्टमः श्लोकः

द्विपरार्द्धावसाने यः प्रलयो ब्रह्मणस्तु ते ।
तावदध्यासते लोकं परस्य परचिन्तकाः ॥८॥

पदच्छेद—

द्विपरार्द्ध अवसाने यः प्रलयः ब्रह्मणः तु ते ।
तावद् अध्यासते लोकम् परस्य परचिन्तकाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| द्विपरार्द्ध | १. | दो परार्धकाल के | ते | ७. | वे |
| अवसाने | २. | अन्त में | तावद् | ६. | तब-तक |
| यः | ४. | जो | अध्यासते | १२. | निवास करते हैं |
| प्रलयः | ५. | प्रलय होता है | लोकम् | ११. | लोक में |
| ब्रह्मणः | ३. | ब्रह्मा जी का | परस्य | ९. | ब्रह्मा जी के |
| तु | १०. | ही | परचिन्तकाः ॥ | ८. | ब्रह्मा जी के उपासक |

श्लोकार्थ—दो परार्धकाल के अन्त में ब्रह्मा जी का जो प्रलय होता है, तब-तक वे ब्रह्मा जी के उपासक ब्रह्माजी के ही लोक में निवास करते हैं ॥

## नवमः श्लोकः

**क्ष्माम्भोऽनलानिलवियन्मनइन्द्रियार्थभूतादिभिः परिवृतं प्रतिसञ्जिहीर्षुः ।**
**अव्याकृतं विशति यर्हि गुणत्रयात्मा कालं पराख्यमनुभूय परः स्वयम्भूः ॥९॥**

पदच्छेद—
क्ष्मा अम्भः अनल अनिल वियत् मनः इन्द्रिय अर्थ भूत आदिभिः परिवृतम् प्रतिसञ्जिहीर्षुः ।
अव्याकृतम् विशति यर्हि गुणत्रय आत्मा कालम् पराख्यम् अनुभूय परः स्वयम्भूः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्ष्मा, अम्भः | ६. | पृथ्वी, जल | अव्याकृतम् | १७. | निर्विशेष परमात्मा में |
| अनल, अनिल | ७. | अग्नि, वायु | विशति | १८. | लीन हो जाते हैं |
| वियत्, मनः | ८. | आकाश, मन | यर्हि | १. | जिस समय |
| इन्द्रिय | ९. | इन्द्रिय | गुणत्रय | १५. | तीनों गुणों के साथ |
| अर्थ | १०. | उनके शब्दादि विषय (और) | आत्मा | १६. | एक रूप होकर |
| भूत | ११. | अहंकार | कालम् | ४. | काल के अधिकार का |
| आदिभिः | १२. | इत्यादि के | पराख्यम् | ३. | अपने दो परार्ध |
| परिवृतम् | १३. | सहित (सम्पूर्ण विश्व से) | अनुभूय | ५. | भोग करके |
| प्रतिसञ्जिहीर्षुः । | १४. | संहार करने की इच्छा से | परःस्वयम्भूः ॥ | २. | देवतादि से श्रेष्ठ, ब्रह्मा जी |

श्लोकार्थ—जिस समय देवता आदि से श्रेष्ठ ब्रह्मा जी अपने दो परार्ध काल के अधिकार का भोग करके पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, इन्द्रिय, उनके शब्दादि विषय और अहंकार इत्यादि के सहित सम्पूर्ण विश्व के संहार करने की इच्छा से तीनों गुणों के साथ एकरूप होकर निर्विशेष परमात्मा में लीन हो जाते हैं ॥

## दशमः श्लोकः

**एवं परेत्य भगवन्तमनुप्रविष्टा ये योगिनो जितमरुन्मनसो विरागाः ।**
**तेनैव साकममृतं पुरुषं पुराणं ब्रह्म प्रधानमुपयान्त्यगताभिमानाः ॥१०॥**

पदच्छेद—एवम् परेत्य भगवन्तम् अनुप्रविष्टा ये योगिनः जित मरुत् मनसः विरागाः ।
तेन एव साकम् अमृतम् पुरुषम् पुराणम् ब्रह्म प्रधानम् उपयान्ति अगत अभिमानाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम्, परेत्य | ८. | एवम्, शरीर का त्याग करके | एव | १२. | ही |
| भगवन्तम् | ९. | भगवान् ब्रह्मा जी में | साकम्, अमृतम् | १३. | साथ, परमानन्द |
| अनुप्रविष्टा | १०. | प्रवेश किये रहते हैं | पुरुषम् | २४. | पुरुष |
| ये, योगिनः | ४. | जो, योगिजन | पुराणम् | १४. | पुराण |
| जित | ७. | जीत कर | ब्रह्म | १७. | ब्रह्म में |
| मरुत् | ५ | प्राण वायु को (और) | प्रधानम् | १६. | परात्पर |
| मनसः | ६. | मनको | उपयान्ति | १८. | लीन हो जाते हैं |
| विरागाः । | १. | (उस समय) अनासक्त (और) | अगत | ३. | रहित |
| तेन | ११. | (वे) उनके | अभिमानाः ॥ | २. | अभिमान से |

श्लोकार्थ—उस समय अनासक्त और अभिमान से रहित जो योगिजन प्राण वायु को और मन को जीत कर एवम् शरीर का त्याग करके भगवान् ब्रह्मा जी में प्रवेश किये रहते हैं, वे उनके ही साथ परमानन्द पुराण पुरुष परात्पर ब्रह्म में लीन हो जाते हैं ॥

# एकादशः श्लोकः

अथ तं सर्वभूतानां हृत्पद्मेषु कृतालयम् ।
श्रुतानुभावं शरणं व्रज भावेन भामिनि ॥११॥

पदच्छेद—

अथ तम् सर्वभूतानाम् हृत् पद्मेषु कृत आलयम् ।
श्रुत अनुभावम् शरणम् व्रज भावेन भामिनि ॥

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| अथ | २. | अब तुम |
| तम् | १०. | उन भगवान् की |
| सर्वभूतानाम् | ४. | सभी प्राणियों के |
| हृत् पद्मेषु | ५. | हृदय कमल में |
| कृत | ७. | करने वाले (तथा) |
| आलयम् । | ६. | निवास |
| श्रुत | ९. | सुना है |
| अनुभावम् | ८. | जिनका प्रभाव (हमसे) |
| शरणम् | ११. | शरण में |
| व्रज | १२. | जाओ |
| भावेन | ३. | भक्तिभाव से |
| भामिनि ॥ | १. | हे मातः ! |

श्लोकार्थ—हे मातः ! अब तुम भक्ति भाव से सभी प्राणियों के हृदय कमल में निवास करने वाले तथा जिनका प्रभाव हमसे सुना है, उन भगवान् की शरण में जाओ ॥

# द्वादशः श्लोकः

आद्यः स्थिरचराणां यो वेदगर्भः सहर्षिभिः ।
योगेश्वरैः कुमाराद्यैः सिद्धैर्योगप्रवर्तकैः ॥१२॥

पदच्छेद—

आद्यः स्थिर चराणाम् यः वेदगर्भः सह ऋषिभिः ।
योगेश्वरैः कुमाराद्यैः सिद्धैः योग प्रवर्तकैः ॥

शब्दार्थ—

| | | |
|---|---|---|
| आद्यः | ३. | आदि कारण |
| स्थिर | १. | स्थावर (और) |
| चराणाम् | २. | जङ्गम रूप संसार के |
| यः | ४. | जो |
| वेदगर्भः | ५. | ब्रह्मा जी |
| सह ऋषिभिः । | ६. | मरीचि आदि ऋषि |
| योगेश्वरः | ८. | योगेश्वर (और) |
| कुमाराद्यैः | ७. | सनकादि कुमार आदि |
| सिद्धैः | ११. | सिद्ध गणों के साथ रहते हैं |
| योग | ९. | योग शास्त्र के |
| प्रवर्तकैः ॥ | १०. | संस्थापक |

श्लोकार्थ—स्थावर और जङ्गमरूप संसार के आदि कारण जो ब्रह्मा जी मरीचि आदि ऋषि, सनकादि-कुमार आदि योगेश्वर और योगशास्त्र के संस्थापक सिद्धगणों के साथ रहते हैं ॥

# त्रयोदशः श्लोकः

**भेददृष्ट्याभिमानेन निःसङ्गेनापि कर्मणा ।**
**कर्तृत्वात्सगुणं ब्रह्म पुरुषं पुरुषर्षभम् ॥१३॥**

पदच्छेद—

भेद दृष्ट्या अभिमानेन निःसङ्गेन अपि कर्मणा ।
कर्तृत्वात् सगुणम् ब्रह्म पुरुषम् पुरुषर्षभम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| भेद दृष्ट्या | ४. | भेद की दृष्टि होने से (तथा) | कर्तृत्वात् | ५. | कर्तापन के |
| अभिमानेन | ६. | अभिमान के कारण | सगुणम् | ९. | सगुण |
| निः सङ्गेन | १. | निष्काम | ब्रह्म | १०. | ब्रह्म को (प्राप्त करते हैं) |
| अपि | ३. | भी (वे ब्रह्मादि) | पुरुषम् | ८. | आदि पुरुष |
| कर्मणा । | २. | कर्म करने पर | पुरुषर्षभम् ॥ | ७. | पुरुषों में श्रेष्ठ |

श्लोकार्थ—निष्काम कर्म करने पर भी वे ब्रह्मादि भेद की दृष्टि होने से तथा कर्तापन के अभिमान के कारण पुरुषों में श्रेष्ठ आदि पुरुष सगुण ब्रह्म को प्राप्त करते हैं ॥

# चतुर्दशः श्लोकः

**स संसृत्य पुनः काले कालेनेश्वरमूर्तिना ।**
**जाते गुणव्यतिकरे यथापूर्वं प्रजायते ॥१४॥**

पदच्छेद—

सः संसृत्या पुनः काले कालेन ईश्वर मूर्तिना ।
जाते गुण व्यतिकरे यथा पूर्वम् प्रजायते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वे ब्रह्मा जी | मूर्तिना । | ६. | प्रेरणा से |
| संसृत्या | १. | (वहाँ) रहकर | जाते | ९. | होने पर |
| पुनः | ११. | फिर से | गुण | ७. | सत्त्वादि गुणों में |
| काले | ३. | सामने आने पर | व्यतिकरे | ८. | क्षोभ |
| कालेन | ४. | कालरूप | यथा पूर्वम् | १०. | पूर्व कल्प के समान |
| ईश्वर | ५. | भगवान् की | प्रजायते ॥ | १२. | उत्पन्न होते हैं |

श्लोकार्थ—वहाँ रहकर वे ब्रह्मा जी सामने आने पर कालरूप भगवान् की प्रेरणा से सत्त्वादि गुणों में क्षोभ होने पर पूर्व कल्प के समान फिर से उत्पन्न होते हैं ॥

## पञ्चदशः श्लोकः

**ऐश्वर्यं पारमेष्ठ्यं च तेऽपि धर्मविनिर्मितम् ।**
**निषेव्य पुनरायान्ति गुणव्यतिकरे सति ॥१५॥**

पदच्छेद—

ऐश्वर्यम् पारमेष्ठ्यम् च ते अपि धर्म विनिर्मितम् ।
निषेव्य पुनरायान्ति गुण व्यतिकरे सति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ऐश्वर्यम् | ७. | भोगों को | निषेव्य | ८. | भोगकर |
| पारमेष्ठ्यम् | ६. | ब्रह्म लोक के | पुनरायान्ति | ११. | फिर से इहलोक में (ही) आ जाते हैं |
| च ते | २. | वे मरीचि आदि ऋषिगण | गुण | ९. | सत्त्वादि गुणों में |
| अपि | ३. | भी | व्यतिकरे | १०. | क्षोभ होने पर |
| धर्म | ४. | सकम धर्मों से | सति ॥ | १. | हे माता जी ! |
| विनिर्मितम् । | ५. | प्राप्त | | | |

श्लोकार्थ—हे माता जी ! वे मरीचि आदि ऋषिगण भी सकाम धर्मों से प्राप्त ब्रह्मलोक में भोगों को भोगकर सत्त्वादि गुणों में क्षोभ होने पर फिर से इहलोक में आ जाते हैं ॥

## षोडशः श्लोकः

**ये त्विहासक्तमनसः कर्मसु श्रद्धयान्विताः ।**
**कुर्वन्त्यप्रतिषिद्धानि नित्यान्यपि च कृत्स्नशः ॥१६॥**

पदच्छेद—

ये तु इह आसक्त मनसः कर्मसु श्रद्धया अन्विताः ।
कुर्वन्ति अप्रतिषिद्धानि नित्यानि अपि च कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ये | २. | जो लोग | अन्विताः । | ८. | युक्त हैं (वे लोग) |
| तु | १. | तथा | कुर्वन्ति | १४. | करते हैं |
| इह | ३. | इस संसार में | अप्रतिषिद्धानि | ९. | वेद-विहित |
| आसक्त | ४. | विषयों में आसक्त | नित्यानि | १०. | नित्य कर्मों को |
| मनसः | ५. | चित्त वाले हैं (और) | अपि | १२. | काम्य कर्मों को भी |
| कर्मसु | ६. | सकाम कर्मों के प्रति | च | ११. | और |
| श्रद्धया | ७. | श्रद्धा से | कृत्स्नशः ॥ | १३. | विधि विधान से |

श्लोकार्थ—तथा जो लोग इस संसार में विषयों में आसक्त चित्त वाले हैं और सकाम कर्मों के प्रति श्रद्धा से युक्त हैं, वे लोग वेदविहित नित्य कर्मों को भी और काम्य कर्मों को भी विधि-विधान से करते हैं ॥

## सप्तदशः श्लोकः

**रजसा कुण्ठमनसः कामात्मानोऽजितेन्द्रियाः ।**
**पितॄन् यजन्त्यनुदिनं गृहेष्वभिरताशयाः ॥१७॥**

पदच्छेद—

रजसा कुण्ठ मनसः काम आत्मानः अजित इन्द्रियाः ।
पितॄन् यजन्ति अनुदिनम् गृहेषु अभिरत आशयाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| रजसा | १. | रजोगुण से | पितॄन् | १२. | पितरों की |
| कुण्ठ | ३. | मन्द रहती है | यजन्ति | १३. | आराधना करते हैं |
| मनसः | २. | उसकी बुद्धि | अनुदिनम् | ११. | प्रतिदिन |
| काम | ५. | कामनाओं का जाल होता है | गृहेषु | ८. | वे लोग घर में |
| आत्मनः | ४. | हृदय में | अभिरत | १०. | आसक्त करके |
| अजित | ७. | वश में नहीं रहती है | आशयाः ॥ | ९. | चित्त को |
| इन्द्रियः । | ६. | और इन्द्रियाँ | | | |

श्लोकार्थ—रजोगुण से उसकी बुद्धि मन्द रहती है। हृदय में कामनाओं का जाल रहता है। और इन्द्रियाँ वश में नहीं रहती हैं। वे लोग घर में चित्त को आसक्त करके प्रतिदिन पितरों की आराधना करते हैं ॥

## अष्टादशः श्लोकः

**त्रैवर्गिकास्ते पुरुषा विमुखा हरिमेधसः ।**
**कथायां कथनीयोरुविक्रमस्य मधुद्विषः ॥१८॥**

पदच्छेद—

त्रैवर्गिकाः ते पुरुषाः विमुखाः हरि मेधसः ।
कथायाम् कथनीय ऊरु विक्रमस्य मधुद्विषः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्रैवर्गिकाः | १. | धर्म, अर्थ और काल में आसक्त | कथायाम् | ९. | कथाओं से |
| ते | २. | वे | कथनीयः | ६. | कहने योग्य है उन |
| पुरुषाः | ३. | लोग | ऊरु | ४. | जिनका महान |
| विमुखाः | १०. | विमुख रहते हैं | विक्रमस्य | ५. | पराक्रम |
| हरि मेधसः । | ७. | भव-भय हारी | मधुद्विषः ॥ | ६. | मधुसूदन भगवान् की |

श्लोकार्थ—धर्म, अर्थ, और काम में आसक्त वे लोग जिनका महान् पराक्रम कहने योग्य है; उन भव-भय-हारी मधुसूदन भगवान् की कथाओं से विमुक्त रहते हैं ॥

# एकोनविंशः श्लोकः

**नूनं दैवेन विहता ये चाच्युतकथासुधाम् ।**
**हित्वा शृण्वन्त्यसद्गाथाः पुरीषमिव विड्भुजः ॥१६॥**

पदच्छेद—

नूनम् दैवेन विहताः ये च अच्युत कथा सुधाम् ।
हित्वा शृण्वन्ति असद् गाथाः पुरीषम् इव विड्भुजः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| नूनम् | १२. | अवश्य ही वे | हित्वा | ८. | पान छोड़कर |
| दैवेन | १३. | विधाता द्वारा | शृण्वन्ति | ११. | सुनते हैं |
| विहताः | १४. | मारे गये हैं | असद् | ९. | बुरे विषयों की |
| ये च | ४. | (उसी प्रकार) वे लोग | गाथाः | १०. | बातें |
| अच्युत | ५. | भगवान् श्री हरि की | पुरीषम् | ३. | विष्ठा की (चाह करते हैं) |
| कथा | ६. | कथा रूपी | इव | २. | जैसे |
| सुधाम् । | ७. | अमृत का | विड्भुजः ॥ | १. | विष्ठा भोजी (दूसरे कूकरादि जीव) |

श्लोकार्थ—विष्ठा भोजी दूसरे कूकरादि जीव जैसे विष्ठा की चाह करते हैं । उसी प्रकार वे लोग भगवान् श्री हरि को कथा रूपी अमृत का पान छोड़कर बुरे विषयों की बात सुनते हैं । अवश्य ही वे विधाता द्वारा मारे गये हैं ॥

# विंशः श्लोकः

**दक्षिणेन पथार्यम्णः पितृलोकं व्रजन्ति ते ।**
**प्रजामनु प्रजायन्ते श्मशानान्तक्रियाकृतः ॥२०॥**

पदच्छेद—

दक्षिणेन पथा अर्यम्णः पितृलोकम् व्रजन्ति ते ।
प्रजाम् अनु प्रजायन्ते श्मशान अन्त क्रिया कृतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| दक्षिणे | ६. | दक्षिण की ओर | प्रजाम् | ११. | अपने ही वंश में |
| पथा | ७. | पितृ मार्ग से | अनु | १०. | फिर से |
| अर्यम्णः | ५. | सूर्य से | प्रजायन्ते | १२. | जन्म लेते हैं |
| पितृलोकम् | ८. | पितरों के लोक को | श्मशान अन्त | १. | जो लोग गर्भाधान से अन्त्येष्टि पर्यन्त |
| व्रजन्ति | ९. | जाते हैं (और) | क्रिया | २. | संस्कारों को |
| ते ॥ | ४. | वे लोग | कृतः ॥ | ३. | करते हैं |

श्लोकार्थ—जो लोग गर्भाधान से अन्त्येष्टि पर्यन्त संस्कारों को करते हैं । वे लोग सूर्य से दक्षिण की ओर पितृ मार्ग से पितरों के लोक को जाते हैं । और फिर से अपने ही वंश में जन्म लेते हैं ॥

## एकविंशः श्लोकः

**ततस्ते क्षीणसुकृताः पुनर्लोकमिमं सति ।**
**पतन्ति विवशा देवैः सद्यो विभ्रंशितोदयाः ॥२१॥**

पदच्छेद—

ततः ते क्षीण सुकृताः पुनः लोकम् इमम् सति ।
पतन्ति विवशाः देवैः सद्यः विभ्रंशित उदयाः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ततः | २. | तदनन्तर | सति ! | १. | हे माता जी ! |
| ते | ३. | वे लोग | पतन्ति | १४. | आ जाते हैं |
| क्षीण | ५. | समाप्त होने पर | विवशाः | ९. | विवश होकर |
| सुकृताः | ४. | पुण्य | देवैः | ६. | देवताओं द्वारा |
| पुनः | ११. | फिर से | सद्यः | १०. | तुरन्त |
| लोकम् | १३. | लोक में | विभ्रंशितः | ८. | वंचित कर दिये जाने के कारण |
| इमम् | १२. | इस | उदयाः ॥ | ७. | ऐश्वर्य से |

श्लोकार्थ—हे माता जी ! तदनन्तर वे लोग पुण्य समाप्त होने पर देवताओं द्वारा ऐश्वर्य से वंचित कर दिये जाने के कारण विवश होकर तुरन्त फिर से इस लोक में आते हैं ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

**तस्मात्त्वं सर्वभावेन भजस्व परमेष्ठिनम् ।**
**तद्गुणाश्रयया भक्त्या भजनीयपदाम्बुजम् ॥२२॥**

पदच्छेद—

तस्मात् त्वम् सर्वभावेन भजस्व परमेष्ठिनम् ।
तद् गुण आश्रय या भक्त्या भजनीय पद अम्बुजम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. | इसलिये (हे माता जी) | गुण | ८. | गुणों को |
| त्वम् | २. | तुम | आश्रय या | ९. | आश्रय बनाने वाली |
| सर्वभावेन | ११. | सब प्रकार से | भक्त्या | १०. | भक्ति के द्वारा |
| भजस्व | १२. | भजन करो | भजनीय | ५. | भजने योग्य हैं |
| परमेष्ठिनम् । | ६. | उन भगवान् श्री हरि का | पद | ३. | जिनके चरण |
| तद् | ७. | उनके | अम्बुजम् ॥ | ४. | कमल |

श्लोकार्थ—इसलिये हे माता जी ! तुम जिनके चरण कमल भजने योग्य हैं, उन भगवान् श्री हरि का उनके गुणों का आश्रय बनाने वाली भक्ति के द्वारा सब प्रकार से भजन करो ॥

# त्रयोविंशः श्लोकः

**वासुदेवे भगवति भक्तियोगः प्रयोजितः ।**
**जनयत्याशु वैराग्यं ज्ञानं यद्ब्रह्मदर्शनम् ॥२३॥**

पदच्छेद—

वासुदेवे भगवति भक्तियोगः प्रयोजितः ।
जनयति आशु वैराग्यम् ज्ञानम् यद् ब्रह्म दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वासुदेवे | २. | वासुदेव के प्रति | आशु | ५. | तत्काल ही |
| भगवति | १. | भगवान् | वैराग्यम् | ६. | संसार से वैराग्य (और) |
| भक्तियोगः | ४. | भक्ति योग | ज्ञानम् | ७. | ज्ञान को |
| प्रयोजितः । | ३. | किया गया | यद्'ब्रह्म | ९. | जिससे ब्रह्म का |
| जनयति | ८. | प्राप्त कराता है | दर्शनम् ॥ | १०. | साक्षात्कार होता है |

श्लोकार्थ—भगवान् वासुदेव के प्रति किया गया भक्तियोग तत्काल ही संसार से वैराग्य और ज्ञान को प्राप्त कराता है। जिससे ब्रह्म का साक्षात्कार होता है।।

# चतुर्विंशः श्लोकः

**यदास्य चित्तमर्थेषु समेष्विन्द्रियवृत्तिभिः ।**
**न विगृह्णाति वैषम्यं प्रियमप्रियमित्युत ॥२४॥**

पदच्छेद—

यदा चित्तम् अर्थेषु समेषु इन्द्रिय वृत्तिभिः ।
न विगृह्णाति वैषम्यं प्रियम् अप्रियम् इति उत ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यदा | १. | जब | न | १३. | नहीं |
| अस्य | २. | इस मनुष्य का | विगृह्णाति | १४. | ग्रहण करता है |
| चित्तम् | ३. | अन्तः करण | वैषम्यं | १२. | विषमता का |
| अर्थेषु | ७. | वस्तुओं में | प्रियम् | ८. | प्रिय |
| समेषु | ६. | समान | अप्रियम् | १०. | अप्रिय |
| इन्द्रिय | ४. | इन्द्रियों की | इति | ११. | इस प्रकार की |
| वृत्तिभिः । | ५. | वृतियों के द्वारा | उत ॥ | ९. | तथा |

श्लोकार्थ—जब इस मनुष्य का अन्तः करण इन्द्रियों की वृत्तियों के द्वारा समान वस्तुओं में प्रिय तथा अप्रिय इस प्रकार की विषमता का ग्रहण नहीं करता है ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

स तदैवात्मनाऽऽत्मानं निःसङ्गं समदर्शनम् ।
हेयोपादेयरहितमारूढं पदमीक्षते ॥२५॥

पदच्छेद—

सः तदा एव आत्मना आत्मानम् निः सङ्गम् समदर्शनम् ।
हेय उपादेय रहितम् आरूढम् पदम् ईक्षते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | २. | वह जीव | हेय | ५. | त्याज्य (और) |
| तदा एव | १. | उसी समय | उपादेय | ६. | ग्रहण करने योग्य गुणों से |
| आत्मना | ११. | आत्मरूप से | रहितम् | ७. | रहित (एवं) |
| आत्मानम् | १०. | परमात्मा का | आरूढम् | ९. | प्रतिष्ठित |
| निःसङ्गम् | ३. | असङ्ग | पदम् | ८. | अपनी महिमा में |
| सम दर्शनम् । | ४. | समान दर्शी | ईक्षते ॥ | १२. | दर्शन करता है |

श्लोकार्थ—उसी समय वह जीव असङ्ग, समानदर्शी, त्याज्य और ग्रहण करने योग्य गुणों से रहित एवं अपनी महिमा में प्रतिष्ठित परमात्मा का आत्मरूप से दर्शन करता है ॥

## षड्विंशः श्लोकः

ज्ञानमात्रं परं ब्रह्म परमात्मेश्वरः पुमान् ।
दृश्यादिभिः पृथग्भावैर्भगवानेक ईयते ॥२६॥

पदच्छेद—

ज्ञान मात्रम् परम् ब्रह्म परमात्मा ईश्वरः पुमान् ।
दृश्य आदिभिः पृथग् भावैः भगवान् एकः ईयते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञान | १. | वही ज्ञान | दृश्य | १०. | शरीर, इन्द्रिय और विषय |
| मात्रम् | २. | स्वरूप | आदिभिः | ११. | इत्यादि |
| परम् | ३. | परम | पृथग् | १२. | विभिन्न |
| ब्रह्म | ४. | ब्रह्म | भावैः | १३. | रूपों में |
| परमात्मा | ५. | परमात्मा | भगवान् | ९. | भगवान् |
| ईश्वरः | ६ | ईश्वर (और) | एकः | ८. | (वह) एक ही |
| पुमान् । | ७. | आदि पुरुष हैं | ईयते ॥ | १४ | प्रतीत होता है |

श्लोकार्थ—वही ज्ञान स्वरूप परम् ब्रह्म परमात्मा ईश्वर और आदि पुरुष हैं । वह एक ही भगवान् शरीर, इन्द्रिय और विषय इत्यादि विभिन्न रूपों में प्रतीत होता है ॥

## सप्तविंशः श्लोकः

एतावानेव योगेन समग्रेणेह योगिनः ।
युज्यतेऽभिमतो ह्यर्थो यदसङ्गस्तु कृत्स्नशः ॥२७॥

पदच्छेद—

एतावान् एव योगेन समग्रेण इह योगिनः ।
युज्यते अभिमतः हि अर्थः यद् असङ्गः तु कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ८. | यह | युज्यते | १३. | माना गया है |
| एव | ६. | ही | अभिमतः | १०. | अभीष्ठ |
| योगेन | ६. | योग साधन से | हि | १२. | ही |
| समग्रेण | ५. | सम्पूर्ण | अर्थः | ११. | फल |
| इह | १. | इस संसार में | यद् | ३. | जो |
| योगिनः । | ७. | योगियों का | असङ्गः तु | ४. | वैराग्य है |
| | | | कृत्स्नशः ॥ | २. | सम्पूर्ण विषयों से |

श्लोकार्थ—इस संसार में सम्पूर्ण विषयों से जो वैराग्य है, सम्पूर्ण योग साधन से योगियों का यही अभीष्ट फल ही माना गया है ॥

## अष्टाविंशः श्लोकः

ज्ञानमेकं पराचीनैरिन्द्रियैर्ब्रह्म निर्गुणम् ।
अवभात्यर्थरूपेण भ्रान्त्या शब्दादिधर्मिणा ॥२८॥

पदच्छेद—

ज्ञानम् एकम् पराचीनैः इन्द्रियैः ब्रह्म निर्गुणम् ।
अवभाति अर्थ रूपेण भ्रान्त्या शब्दादि धर्मिणा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ज्ञानम् | ३. | ज्ञान स्वरूप और | अवभाति | १२. | प्रतीत होता है |
| एकम् | २. | केवल | अर्थ | १०. | पदार्थ |
| पराचीनैः | ५. | बहिर्मुखी | रूपेण | ११. | रूप में |
| इन्द्रियैः | ६. | इन्द्रियों से | भ्रान्त्या | ७. | भ्रम वश |
| ब्रह्म | १. | (वह) ब्रह्म | शब्दादि | ८. | शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध, इत्यादि |
| निर्गुणम् | ४. | निर्गुण है तथा | धर्मिणा ॥ | ६. | गुणों से युक्त |

श्लोकार्थ—वह ब्रह्म केवल ज्ञान स्वरूप और निर्गुण है तथा बहिर्मुखी इन्द्रियों से भ्रमवश शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध इत्यादि गुणों से युक्त पदार्थरूप में प्रतीत होता है ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

**यथा महानहंरूपस्त्रिवृत्पञ्चविधः स्वराट् ।**
**एकादशविधस्तस्य वपुरण्डं जगद्यतः ॥२९॥**

पदच्छेद—

यथा महान् अहंरूपः स्त्रिवृत् पञ्चविधः स्वराट् ।
एकादशविधः तस्य वपुः अण्डम् जगत् यतः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जिस प्रकार | एकादशविधः | ६. | ग्यारह प्रकार की |
| महान | २. | महत्तत्त्व | तस्य | ८. | (उसी प्रकार) उस परमात्मा का |
| अहंरूपः | ४. | अहंकार | वपुः | ९. | शरीर रूप |
| स्त्रिवृत् | ३. | सात्त्विक, राजस, तामस (तीन प्रकार का) | अण्डम् | १०. | ब्रह्माण्ड भी (उसका स्वरूप है) क्योंकि |
| पञ्चविधः | ५. | पांच महाभूत (और) | जगत् | १२. | उत्पत्ति होती है |
| स्वराट् । | ७. | इन्द्रिय उसका स्वरूप है | यतः ॥ | ११. | उसी से (उसकी) |

श्लोकार्थ—जिस प्रकार महत्तत्त्व, सात्त्विक, राजस, तामस तीन प्रकार का अहंकार पाँच महाभूत और ग्यारह प्रकार की इन्द्रिय उसका स्वरूप है। उसी प्रकार उस परमात्मा का शरीररूप ब्रह्माण्ड भी उसका शरीर है। क्योंकि उसी से उसकी उत्पत्ति होती है।

## त्रिंशः श्लोकः

**एतद्वै श्रद्धया भक्त्या योगाभ्यासेन नित्यशः ।**
**समाहितात्मा निःसङ्गो विरक्त्या परिपश्यति ॥३०॥**

पदच्छेद—

एतद् वै श्रद्धया भक्त्या योगाभ्यासेन नित्यशः ।
समाहित आत्मा निःसङ्गः विरक्त्या परिपश्यति ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् वै | १. | इसे वही | समाहित | ८. | एकाग्र |
| श्रद्धया | ३. | जो श्रद्धा | आत्मा | ९. | चित्त (और) |
| भक्त्या | ४. | भक्ति | निःसङ्गः | १०. | असंग (हो गया है) |
| योगाभ्यासेन | ७. | योगाभ्यास से | विरक्त्या | ५. | वैराग्य (और) |
| नित्यशः । | ६. | निरन्तर के | परिपश्यति ॥ | २. | देखता है |

श्लोकार्थ—इसे वही देखता है, जो श्रद्धा, भक्ति, वैराग्य और निरन्तर के योगाभ्यास से एकाग्र चित्त और असंग हो गया है ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

इत्येतत्कथितं गुर्वि ज्ञानं तद्ब्रह्मदर्शनम् ।
येनानुबुद्ध्यते तत्त्वं प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥३१॥

पदच्छेद—

इति एतत् कथितम् गुर्वि ज्ञानम् तद् ब्रह्म दर्शनम् ।
येन अनुबुद्ध्यते तत्त्वम् प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| इति | ३. यह | | दर्शनम् | ६. साक्षात्कार का |
| एतत् | २. अब | | येन | ९. जिससे |
| कथितम् | ८. बता दिया | | अनुबुद्ध्यते | १४. बोध होता है |
| गुर्वि | १. हे मातः ! | | तत्त्वम् | १३. यथार्थ स्वरूप का |
| ज्ञानम् | ७. साधनभूत ज्ञान (तुम्हें) | | प्रकृतेः | १०. प्रकृति के |
| तद् | ४. उस | | पुरुषस्य | १२. पुरुष के |
| ब्रह्म | ५. ब्रह्म के | | च ॥ | ११. और |

श्लोकार्थ—हे मातः ! अब यह उस ब्रह्म के साक्षात्कार का साधनभूत ज्ञान तुम्हें बता दिया । जिससे प्रकृति के और पुरुष के यथार्थ स्वरूप का बोध होता है ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

ज्ञानयोगश्च मन्निष्ठो नैर्गुण्यो भक्तिलक्षणः ।
द्वयोरप्येक एवार्थो भगवच्छब्दलक्षणः ॥३२॥

पदच्छेद—

ज्ञानयोगः च मत् निष्ठः नैर्गुण्यः भक्ति लक्षणः ।
द्वयोः अपि एकः एव अर्थः भगवत् शब्द लक्षणः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ज्ञानयोगः | २. ज्ञानयोग | | द्वयोः अपि | ८. इन दोनों का |
| च | ३. और | | एकः | ९. एक |
| मत् | ४. मेरे | | एव | १०. ही |
| निष्ठः | ५. प्रति | | अर्थः | ११. फल है (जिसे) |
| नैर्गुण्यः | १. निर्गुण ब्रह्म के विषय में | | भगवत् | १२. भगवान् |
| भक्ति | ६. भक्ति | | शब्द | १३. शब्द से |
| लक्षणः । | ७. योग | | लक्षणः ॥ | १४. कहते हैं |

श्लोकार्थ—निर्गुण ब्रह्म के विषय में ज्ञान योग और मेरे प्रति भक्तियोग इन दोनों का एक ही फल है । जिसे भगवान् शब्द से कहते हैं ॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

**यथेन्द्रियैः पृथग्द्वारैरर्थो बहुगुणाश्रयः ।**
**एको नानेयते तद्वद्भगवान् शास्त्रवर्त्मभिः ॥३३॥**

पदच्छेद—

यथा इन्द्रियैः पृथक् द्वारैः अर्थः बहुगुण आश्रयः ।
एकः नाना ईयते तद्वत् भगवान् शास्त्र वर्त्मभिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यथा | १. | जिस प्रकार | एकः | ७. | एक ही |
| इन्द्रियैः | ४. | इन्द्रियों से | नाना | ९. | अनेक रूपों में |
| पृथक् | २. | भिन्न-भिन्न | ईयते | १०. | प्रतीत होता है |
| द्वारैः | ३. | द्वारों वाली | तद्वत् | ११. | उसी प्रकार |
| अर्थः | ८. | पदार्थ | भगवान् | १४. | भगवान् का (अनुभव होता है) |
| बहुगुण | ५. | अनेक गुणों का | शास्त्र | १२. | शास्त्रों के |
| आश्रयः । | ६. | आधार | वर्त्मभिः ॥ | १३. | अनेक मार्गों से (एक ही) |

श्लोकार्थ—जिस प्रकार भिन्न-भिन्न द्वारों वाली इन्द्रियों से अनेक गुणों का आधार एक ही पदार्थ अनेकरूपों में प्रतीत होता है। उसी प्रकार शास्त्रों के अनेक मार्गों से एक ही भगवान् का अनुभव होता है ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

**क्रियया क्रतुभिर्दानैस्तपः स्वाध्यायमर्शनैः ।**
**आत्मेन्द्रियजयेनापि संन्यासेन च कर्मणाम् ॥३४॥**

पदच्छेद—

क्रियया क्रतुभिः दानैः तपः स्वाध्याय मर्शनैः ।
आत्म इन्द्रिय जयेन अपि न्यासेन च कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| क्रियया | १. | अनेक कर्मों से | आत्म | ७. | मन (और) |
| क्रतुभिः | २. | यज्ञ | इन्द्रिय | ८. | इन्द्रियों को |
| दानैः | ३. | दान | जयेन | ९. | जीतने से |
| तपः | ४. | तपस्या | अपि | १०. | भी |
| स्वाध्याय | ५. | वेदाध्ययन (और) | न्यासेन | १३. | त्याग से (भगवान् की प्राप्ति होती है) |
| मर्शनैः | ६. | वेद-विचार से | | ११. | तथा |
| | | | कर्मणाम् ॥ | १२. | कर्मों के |

श्लोकार्थ—अनेक कर्मों से यज्ञ, दान, तपस्या, वेदाध्ययन और वेद विचार से मन और इन्द्रियों को जीतने से भी तथा कर्मों के त्याग से भगवान् को प्राप्ति होती है ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

योगेन विविधाङ्गेन भक्तियोगेन चैव हि।
धर्मेणोभयचिह्नेन यः प्रवृत्तिनिवृत्तिमान् ॥३५॥

पदच्छेद—

योगेन विविध अङ्गेन भक्तियोगेन च एव हि।
धर्मेण उभय चिह्नेन यः प्रवृत्ति निवृत्तिमान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| योगेन | ३. योग से | धर्मेण | १२. धर्म है (उससे भगवत् प्राप्ति होती है) |
| विविध | १. अनेक | उभय | १०. सकाम और निष्काम दोनों |
| अङ्गेन | २. अङ्गों वाले | चिह्नेन | ११. लक्षणों से युक्त |
| भक्तियोगेन | ५. भक्ति योग से | यः | ९. जो |
| च एव | ४. और | प्रवृत्ति | ७. संसार में प्रवृत्ति और उससे |
| हि। | ६. तथा | निवृत्तिमान् ॥ | ८. निवृत्ति कराने वाला |

श्लोकार्थ—अनेक अङ्गों वाले योग से और भक्ति योग से तथा संसार में प्रवृत्ति और उससे निवृत्ति कराने वाला जो सकाम और निष्काम दोनों लक्षणों से युक्त धर्म है, उससे भगवत्प्राप्ति होती है ॥

## षट्त्रिंशः श्लोकः

आत्मतत्त्वावबोधेन वैराग्येण दृढेन च।
ईयते भगवानेभिः सगुणो निर्गुणः स्वदृक् ॥३६॥

पदच्छेद—

आत्म तत्त्व अवबोधेन वैराग्येण दृढेन च।
ईयते भगवान् एभिः सगुणः निर्गुणः स्वदृक् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| आत्म तत्त्व | १. आत्मा के स्वरूप | इयते | ११. प्राप्ति होती है |
| अवबोधेन | २. ज्ञान | भगवान् | १०. भगवान् की |
| वैराग्येण | ५. वैराग्यादि | एभिः | ६. इन साधनों से |
| दृढेन | ४. पुष्ट | सगुणः | ७. सगुण (और) |
| च। | ३. और | निर्गुणः | ८. निर्गुण |
| | | स्वदृक् ॥ | ९. स्वयं प्रकाश |

श्लोकार्थ—आत्मा के स्वरूप ज्ञान और पुष्ट वैराग्यादि इन साधनों से सगुण और निर्गुण स्वयं प्रकाश भगवान् की प्राप्ति होती है ॥

## सप्तत्रिंशः श्लोकः

**प्रावोचं भक्तियोगस्य स्वरूपं ते चतुर्विधम् ।**
**कालस्य चाव्यक्तगतेर्योऽन्तर्धावति जन्तुषु ॥३७॥**

पदच्छेद—

प्रावोचम् भक्ति योगस्य स्वरूपम् ते चतुर्विधम् ।
कालस्य च अव्यक्त गतेः अन्तः धावति जन्तुषु ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रावोचम् | ८. | बता दिया | कालस्य | ७. | काल का (लक्षण) |
| भक्ति | २. | भक्ति | च अव्यक्तगतेः | ६. | तथा सूक्ष्म स्वरूप वाले |
| योगस्य | ३. | योग का | यः | ६. | जो |
| स्वरूपम् | ५. | लक्षण | अन्तः | ११. | विकारों का |
| ते | १. | हे मातः ! मैंने तुम्हें | धावति | १२. | हेतु है |
| चतुर्विधम् । | ४. | (सात्त्विक, राजस, तामस और निर्गुण) चार प्रकार का | जन्तुषु ॥ | १० | प्राणियों के |

श्लोकार्थ— हे मातः ! मैंने तुम्हें भक्ति योग का सात्त्विक, राजस, तामस और निर्गुण चार प्रकार का लक्षण तथा सूक्ष्म स्वरूप वाले काल का लक्षण बता दिया, जो प्राणियों के विकारों का हेतु है ॥

## अष्टात्रिंशः श्लोकः

**जीवस्य संसृतीर्बह्वीरविद्याकर्मनिर्मिताः ।**
**यास्वङ्ग प्रविशन्नात्मा न वेद गतिमात्मनः ॥३८॥**

पदच्छेद—

जीवस्य संसृतीः बह्वीः अविद्या कर्म निर्मिताः ।
यासु अङ्ग प्रविशन् आत्मा न वेद गतिम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| जीवस्य | ५. | जीव की | यासु | ८. | जिन गतियों में |
| संसृतीः | ७. | गतियाँ बताई गई हैं | अङ्ग | १. | हे मातः ! |
| बह्वीः | ६. | अनेक प्रकार की | प्रविशन् | ६. | प्रवेश करने पर |
| अविद्या | २. | अज्ञान मूलक | आत्मा | १०. | जीव |
| कर्म | ३. | कर्मों से | न वेद | १३. | नहीं जान सकता है |
| निर्मिता । | ४. | उत्पन्न | गतिम् | १२. | स्वरूप को |
| | | | आत्मा ॥ | ११. | अपनी आत्मा के |

श्लोकार्थ—हे मातः ! अज्ञान मूलक कर्मों से उत्पन्न जीव की अनेक प्रकार की गतियाँ बताई गई हैं । जिन गतियों में प्रवेश करने पर जीव अपनी आत्मा के स्वरूप को नहीं जान सकता है ॥

# एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

नैतत्खलायोपदिशेन्नाविनीताय कर्हिचित् ।
न स्तब्धाय न भिन्नाय नैव धर्मध्वजाय च ॥३९॥

पदच्छेद—

न एतत् खलाय उपदिशेत् न अविनीताय कर्हिचित् ।
न स्तब्धाय न भिन्नाय न एव धर्मध्वजाय च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १. | न | न | ५. | न |
| एतत् | १३. | इसका | स्तब्धाय | ६. | घमंडी को |
| खलाय | २. | दुष्ट व्यक्ति को | न | ७. | न |
| उपदिशेत् | १५. | उपदेश करना चाहिये | भिन्नाय | ८. | दुराचारी को |
| न | ३. | न | न | १०. | न |
| अविनीताय | ४. | उद्दण्ड व्यक्ति को | एव | ११. | ही |
| कर्हिचित् । | १४. | कभी | धर्मध्वजाय | १२. | दम्भी को |
| | | | च । | ९. | और |

श्लोकार्थ—न दुष्ट व्यक्ति को, न उद्दण्ड व्यक्ति को, न घमंडी को, न दुराचारी को और न ही दम्भी को ही इसका कभी उपदेश करना चाहिये ॥

# चत्वारिंशः श्लोकः

न लोलुपायोपदिशेन्न गृहारूढचेतसे ।
नाभायक्त च मे जातु न मद्भक्तद्विषामपि ॥४०॥

पदच्छेद—

लोलुपाय उपदिशेत् न गृह आरूढ चेतसे ।
न अभक्ताय च मे जातु न मद् भक्त द्विषाम् अपि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| न | १. | न | न | ७. | न |
| लोलुपाय | २. | विषयाभिलाषी को | अभक्ताय | ९. | भक्ति से रहित |
| उपदिशेत् | १४. | उपदेश देना चाहिये | च | १०. | और |
| न | ३. | न | मे | ८. | मेरी |
| गृह | ४ | घर में | जातु | १३. | कभी (इसका) |
| आरूढ | ६. | आसक्त किये हुये (पुरुष को) | न, मद्, भक्त | ११. | न मेरे भक्तों से |
| चेतसे । | ५. | चित्त को | द्विषाम् अपि ॥ | १२. | वैर करने वालों को ही |

श्लोकार्थ—न विषयाभिलाषी को, न घर में चित्त को आसक्त किये हुये पुरुष को, न मेरी भक्ति से से रहित और न मेरे भक्तों से वैर करने वालों को ही कभी इसका उपदेश देना चाहिये ॥

## एकचत्वारिंशः श्लोकः

**श्रद्दधानाय भक्ताय विनीतायानसूयवे ।**
**भूतेषु कृतमैत्राय शुश्रूषाभिरताय च ॥४१॥**

पदच्छेद—

श्रद्दधानाय भक्ताय विनीताय अनसूयवे भूतेषु ।
कृत मैत्राय शुश्रूषा अभिरताय च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रद्दधानाय | १. | श्रद्धालु | कृत | ७. | रखने वाले |
| भक्ताय | २. | भगवद्भक्त | मैत्राय | ६. | मैत्री भाव |
| विनीताय | ३. | विनयी | शुश्रूषा | ९. | भगवत् सेवा में |
| अनसूयवे । | ४. | निन्दा न करने वाले | अभिरताय | १०. | तत्पर (मनुष्य को इसका उपदेश करना चाहिये) |
| भूतेषु | ५. | प्राणीमात्र के प्रति | च ॥ | ८. | और |

श्लोकार्थ—श्रद्धालु, भगवद्भक्त, विनयी, निन्दा न करने वाले, प्राणिमात्र के प्रति मैत्री-भाव रखने वाले और भगवत् सेवा में तत्पर मनुष्य को इसका उपदेश करना चाहिये ॥

## द्विचत्वारिंशः श्लोकः

**बहिर्जातविरागाय शान्तचित्ताय दीयताम् ।**
**निर्मत्सराय शुचये यस्याहं प्रेयसां प्रियः ॥४२॥**

पदच्छेद—

बहिर्जात विरागाय शान्त चित्ताय दीयताम् ।
निर्मत्सराय शुचये यस्य अहम् प्रेयसाम् प्रियः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| बहिर्जात | १. | सांसारिक विषयों से जिसे | निर्मत्सराय | ६. | जो ईर्ष्यालु नहीं है (तथा) |
| विरागाय | २. | वैराग्य उत्पन्न हो गया है | शुचये | ११. | पवित्र (मनुष्य) को इसका |
| शान्त | ४. | शान्त है | यस्य | ७. | जिसका |
| चित्ताय | ३. | जिसका चित्त | अहम् | ८. | मैं |
| दीयताम् । | १२. | उपदेश करना चाहिए | प्रेयसाम् | ९. | प्रियों में भी (अत्यन्त) |
| | | | प्रियः ॥ | १०. | प्रिय हूँ (उस) |

श्लोकार्थ—सांसारिक विषयों से जिसे वैराग्य उत्पन्न हो गया है, जिसका चित्त शान्त है, जो ईर्ष्यालु नहीं है तथा जिसका मैं प्रियों में भी प्रिय हूँ उस पवित्र मनुष्य को इसका उपदेश करना चाहिये ॥

# त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

**य इदं शृणुयादम्ब श्रद्धया पुरुषः सकृत् ।**
**यो वाभिधत्ते मच्चित्तः स ह्येति पदवीं च मे ॥४३॥**

**पदच्छेद—**

**यः इदम् शृणुयात् अम्ब श्रद्धया पुरुषः सकृत् ।**
**यः वा अभिधत्ते मत् चित्तः सः हि एति पदवीम् च मे ॥**

**शब्दार्थ—**

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यः | २. | जो | अभिधत्ते | १२. | कथन करता है |
| इदम् | ७. | इस कथा का | मत् | ४. | मुझमें |
| शृणुयात् | ९. | श्रवण करता है | चित्तः | ५. | मन लगाकर |
| अम्ब | १. | हे मातः ! | सः | १३. | वह |
| श्रद्धया | ६. | श्रद्धा के साथ | हि | १४. | अवश्य |
| पुरुषः | ३. | पुरुष | एति | १८. | प्राप्त करता है |
| सकृत् । | ८. | एक बार भी | पदवीम् | १७. | परम पद को |
| यः | ११. | जो (इसका) | च | १५. | ही |
| वा | १०. | अथवा | मे ॥ | १६. | मेरे |

**श्लोकार्थ—** हे मातः ! जो पुरुष मुझमें मन लगा कर श्रद्धा के साथ इस कथा का एक बार भी श्रवण करता है । अथवा जो इसका कथन करता है; वह अवश्य ही मेरे परम पद को प्राप्त करता है ॥

**श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये**
**द्वात्रिंशः अध्यायः समाप्तः ॥३२॥**

ॐ श्रीगणेशाय नमः
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## तृतीयः स्कन्धः

*त्रयस्त्रिंशः अध्यायः*

## प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

**एवं निशम्य कपिलस्य वचो जनित्री सा कर्दमस्य दयिता किल देवहूतिः।**
**विस्रस्तमोहपटला तमभिप्रणम्य तुष्टाव तत्त्वविषयाङ्कितसिद्धिभूमिम् ॥१॥**

पदच्छेद—एवम् निशम्य कपिलस्य वचः जनित्री सा कर्दमस्य दयिता किल देवहूतिः।
विस्रस्त मोह पटला तम् अभिप्रणम्य तुष्टाव तत्त्व विषय अङ्कित सिद्धि भूमिम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | २. | इस प्रकार के | विस्रस्त | १०. | हट गया |
| निशम्य | ४. | सुनकर | मोह पटला | ९. | अज्ञान का परदा |
| कपिलस्य | १. | कपिल भगवान् के | तम् | १७. | उनको |
| वचः | ३. | वचन को | अभिप्रणम्य | १६. | प्रणाम करके |
| जनित्री | ७. | माता | तुष्टाव | १८. | स्तुति करने लगीं |
| सा | ६. | उस | तत्त्व विषय | १२. | पच्चीस तत्त्वरूप अर्थों के |
| कर्दमस्य दयिता | ५. | कर्दम ऋषि की प्रिय पत्नी | अङ्कित | १३. | प्रतिपादक सांख्यशास्त्र के |
| किल | ११. | तथा (वे) | सिद्धि | १४. | ज्ञान के |
| देवहूतिः। | ८. | देवहूति के | भूमिम् ॥ | १५. | आधार (भगवान् कपिल) को |

श्लोकार्थ—कपिल भगवान् के इस प्रकार के वचन को सुनकर कर्दम ऋषि की प्रिय पत्नी उस माता देवहूती के अज्ञान का परदा हट गया तथा वे पच्चीस तत्त्वरूप अर्थों के प्रतिपादक सांख्यशास्त्र के ज्ञान के आधार भगवान् कपिल को प्रणाम करके उनकी स्तुति करने लगीं ॥

## द्वितीयः श्लोकः

**देवहूतिरुवाच—अथाप्यजोऽन्तःसलिले शयानं भूतेन्द्रियार्थात्ममयं वपुस्ते।**
**गुणप्रवाहं सदशेषबीजं दध्यौ स्वयं यज्जठराब्जजातः ॥२॥**

पदच्छेद—अथापि अजः अन्तः सलिले शयानम् भूत इन्द्रिय अर्थ आत्ममयम् वपुः ते।
गुण प्रवाहम् सद् अशेष बीजम् दध्यौ स्वयम् यत् जठर अब्ज जातः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अथापि | ११. | केवल | गुण प्रवाहम् | १४. | गुणों के प्रवाह से युक्त |
| अजः | ३. | ब्रह्मा जी ने | सद् | १५. | सत् स्वरूप (और) |
| अन्तः सलिले | ४. | प्रलय काल के जल में | अशेष बीजम् | १६. | कार्य कारण का मूल है |
| शयानम् | ५. | शयन करने वाले | दध्यौ | १२. | ध्यान किया था |
| भूत | ७. | पञ्च महाभूत | स्वयम् | १०. | अपने आप |
| इन्द्रिय, अर्थ | ८. | इन्द्रिय, शब्दादि विषय (और) | यत् | १३. | जो |
| आत्ममयम् वपुः | ९. | मनोमय शरीर का | जठर अब्ज | १. | नाभि कमल से |
| ते। | ६. | आपके | जातः। | २. | उत्पन्न हुये |

श्लोकार्थ—नाभि कमल से उत्पन्न हुये ब्रह्मा जी ने प्रलय काल के जल में शयन करने वाले आपके पञ्चमहाभूत इन्द्रिय, शब्दादि विषय और मनोमय शरीर का अपने आप केवल ध्यान किया था, जो गुणों के प्रवाह से युक्त सत् स्वरूप और कार्य कारण का मूल है ॥

## तृतीयः श्लोकः

**स एव विश्वस्य भवान् विधत्ते गुणप्रवाहेण विभक्तवीर्यः ।**
**सर्गाद्यनीहोऽवितथाभिसन्धिरात्मेश्वरोऽतर्क्यसहस्रशक्तिः ॥३॥**

पदच्छेद—सः एव विश्वस्य भवान् विधत्ते गुणप्रवाहेण विभक्त वीर्यः ।
सर्ग आदि अनीहः अवितथः अभिसन्धिः आत्म ईश्वरः अतर्क्य सहस्र शक्तिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः | ९. | वह | सर्ग आदि | १७. | उत्पत्ति आदि |
| एव | १०. | ही | अनीहः | १. | (आप) निष्क्रिय |
| विश्वस्य | १६. | सम्पूर्ण जगत् की | अवितथ | २. | सत्य |
| भवान् | ११. | आप | अभिसन्धिः | ३. | संकल्प |
| विधत्ते | १८. | करते हैं | आत्म | ४. | सम्पूर्ण जीवों के |
| गुण | १२. | सत्त्वादि गुणों के | ईश्वरः | ५. | स्वामी (और) |
| प्रवाहेण | १३. | प्रवाह से | अतर्क्य | ७. | अचिन्त्य |
| विभक्त | १५. | ब्रह्मादिरूपों में (विभाग करके | सहस्र | ६. | हज़ारों |
| वीर्यः | १४. | अपने पराक्रम का | शक्तिः ॥ | ८. | शक्तियों से सम्पन्न हैं |

श्लोकार्थ—आप निष्क्रिय, सत्यसंकल्प, सम्पूर्ण जीवों के स्वामी और हज़ारों अचिन्त्य शक्तियों से सम्पन्न हैं। वह ही आप सत्त्वादिगुणों के प्रवाह से अपने पराक्रम का ब्रह्मादि रूपों में विभाग करके सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति आदि करते हैं ॥

## चतुर्थः श्लोकः

**स त्वं भृतो मे जठरेण नाथ कथं नु यस्योदर एतदासीत् ।**
**विश्वं युगान्ते वटपत्र एकः शेते स्म मायाशिशुरङ्घ्रिपानः ॥४॥**

पदच्छेद— सः त्वम् भृतः मे जठरेण नाथ कथम् नु यस्य उदरे एतद् आसीत् ।
विश्वम् युगान्ते वटपत्रे एकः शेते स्म माया शिशुः अङ्घ्रि पानः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सः त्वम् | ३. | उस आप को | विश्वम् | १०. | सम्पूर्ण जगत् |
| भृतः | ७. | धारण किया | युगान्ते | १२. | प्रलय काल आने पर |
| मे | ४. | मैंने | वटपत्रे | १३. | वट वृक्ष के पत्ते पर |
| जठरेण | ६. | अपने उदर में | एकः | १८. | अकेले |
| नाथ | १. | हे स्वामिन् ! | शेते स्म | १९. | सोते रहते हैं |
| कथम् | ५. | कैसे | माया | १४. | मायामय |
| नु | २. | आश्चर्य है कि | शिशुः | १५. | बालक के रूप में |
| यस्य उदरे | ८. | जिसके उदर में | अङ्घ्रि | १६. | अपने चरणों का अंगूठा |
| एतद् आसीत् । | ९. | यह, ११. लीन रहता है (तथा जो) | पानः ॥ | १७. | चूसते हुये |

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आश्चर्य है कि उस आप को मैंने कैसे अपने उदर में धारण किया । जिसके उदर में यह सम्पूर्ण जगत् लीन रहता है। प्रलयकाल आने पर वट वृक्ष के पत्ते पर मायामय बालक के रूप में अपने चरण का अंगूठा चूसते हुये अकेले सोते रहते हैं ।

## पञ्चमः श्लोकः

**त्वं देहतन्त्रः प्रशमाय पाप्मनां निदेशभाजां च विभो विभूतये ।**
**यथावतारास्तव सूकरादयस्तथायमप्यात्मपथोपलब्धये ॥५॥**

पदच्छेद—त्वम् देह तन्त्रः प्रशमाय पाप्मनाम् निदेशभाजाम् च विभो विभूतये ।
यथा अवताराः तव सूकर आदयः तथा अयम् अपि विभो आत्मपथ उपलब्धये ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| त्वम् | २. | आप | यथा | ९. | जिस प्रकार |
| देह तन्त्रः | ८. | शरीर धारण करते हैं | अवताराः | १२. | अवतार हैं |
| प्रशमाय | ४. | दमन के लिये | तव | १०. | आपके |
| पाप्मनाम् | ३. | पापियों के | सूकर आदयः | ११. | वाराह आदि |
| निदेशभाजाम् | ६. | आज्ञाकारी भक्तों के | तथा | १३. | उसी प्रकार |
| च | ५. | और | अयम् अपि | १४. | यह कपिलावतार भी |
| विभो | १. | हे प्रभो ! | आत्म पथ | १५. | आत्मज्ञान की |
| विभूतये । | ७. | मंगल के लिये | उपलब्धये ॥ | १६. | प्राप्ति करने के लिये है |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप पापियों के दमन के लिये और आज्ञाकारी भक्तों के मंगल के लिये शरीर धारण करते हैं । जिस प्रकार आपके वाराह आदि अवतार हैं । उसी प्रकार यह कपिलावतार भी आत्मज्ञान की प्राप्ति करने के लिये है ।

## षष्ठः श्लोकः

**यन्नामधेयश्रवणानुकीर्तनाद् यत्प्रह्वणाद्यत्स्मरणादपि क्वचित् ।**
**श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात् ॥६॥**

पदच्छेद—यत् नामधेय श्रवण अनुकीर्तनात् यत् प्रह्वणात् यत् स्मरणात् अपि क्वचित् ।
श्वादः अपि सद्यः सवनाय कल्पते कुतः पुनः ते भगवन् नु दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| यत् नामधेय | २. | जिस आपके नामों का | अपि | १०. | भी |
| श्रवण | ३. | श्रवण (और) | सद्यः सवनाय | ११. | तत्काल, सोमयाजी ब्राह्मण के समान |
| अनुकीर्तनात् | ४. | कीर्तन करने से | कल्पते | १२. | पवित्र हो जाता है |
| यत् प्रह्वणात् | ६. | आपके वन्दन से (तथा) | कुतः | १६. | बात ही क्या है |
| यत् स्मरणात् | ७. | आपके स्मरण से | पुनः ते | १३. | फिर आपका |
| अपि | ८. | भी | भगवन् | १. | हे प्रभो ! |
| क्वचित् । | ५. | (भूले-भटके) कभी-कभी | नु | १५. | कृत-कृत्य हो जाये (इसमें) |
| श्वादः | ९. | कुक्कुर भोजी चण्डाल | दर्शनात् ॥ | १४. | दर्शन करने से |

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! जिस आपके नामों का श्रवण और कीर्तन करने से भूले-भटके कभी-कभी आपके वन्दन से तथा आपके स्मरण से भी कुक्कुर भोजी चाण्डाल भी तत्काल सोमयाजी ब्राह्मण के समान पवित्र हो जाता है । फिर आपका दर्शन करने से कृत-कृत्य हो जाये इसमें बात ही क्या है ॥

## सप्तमः श्लोकः

अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान् यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥७॥

पदच्छेद—अहो बत श्वपचः अतः गरीयान् यत् जिह्वा अग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुः तपः ते जुहुवुः सस्नुः आर्याः ब्रह्म अनूचुः नाम गृणन्ति ये ते ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अहो बत | १. | अहो आश्चर्य है कि | तपः | १४. | तपस्या का |
| श्वपचः | ३. | चाण्डाल | ते | १३. | उन्होंने |
| अतः | २. | इसी से | जुहुवुः | १७. | हवन कर लिया है |
| गरीयान् | ४. | श्रेष्ठ है | सस्नुः | १६. | तीर्थ स्नान कर लिया (और) |
| यत् जिह्वा अग्रे | ५. | जिसकी जीभ के अग्रभाग में | आर्याः | १०. | श्रेष्ठ जन |
| वर्तते | ८. | विराजमान है | ब्रह्म अनूचुः | १८. | वेद का अध्ययन भी कर लिया है |
| नाम | ७. | नाम | नाम गृणन्ति | १२. | नाम का उच्चारण करते हैं |
| तुभ्यम् । | ६. | आपका | ये | ९. | जो |
| तेपुः | १५. | अनुष्ठान कर लिया है | ते ॥ | ११. | आपके |

श्लोकार्थ—अहो आश्चर्य है कि इसी से चाण्डाल श्रेष्ठ है, जिसकी जीभ के अग्रभाग में आपका नाम विराजमान है । जो श्रेष्ठजन आपके नाम का उच्चारण करते हैं, उन्होंने तपस्या का अनुष्ठान कर लिया है, तीर्थ स्नान कर लिया है, वेद का अध्ययन कर लिया है, हवन कर लिया है ॥

## अष्टमः श्लोकः

तं त्वामहं ब्रह्म परं पुमांसं प्रत्यक्स्रोतस्यात्मनि संविभाव्यम् ।
स्वतेजसा ध्वस्तगुणप्रवाहं वन्दे विष्णुं कपिलं वेदगर्भम् ॥८॥

पदच्छेद—तम् त्वाम् अहम् ब्रह्म परम् पुमांसम् प्रत्यक् स्रोतसि आत्मनि संविभाव्यम् ।
स्वतेजसा ध्वस्त गुण प्रवाहम् वन्दे विष्णुम् कपिलम् वेद गर्भम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् | १५. | उस | स्वतेजसा | ७. | अपने प्रभाव से |
| त्वाम् | १६. | आप | ध्वस्त | १०. | शान्त कर देते हैं |
| अहम् | १८. | मैं | गुण | ८. | माया के कार्य के |
| ब्रह्म | १. | (आप) पर ब्रह्म हैं (और) | प्रवाहम्, | ९. | वेग को |
| परम् पुमांसम् | २. | आदि, पुरुष हैं | वन्दे | १८. | वन्दना करती हूँ |
| प्रत्यक् | ४. | अन्तर्मुख करके | विष्णुम् | १४. | विष्णु स्वरूप |
| स्रोतसि | ३. | वृत्तियों के प्रवाह को | कपिलम् | १७. | कपिल भगवान् की |
| आत्मनि | ५. | अन्तः करण में (आपका) | वेद | १३. | वेद तत्त्व स्थित है |
| संविभाव्यम् । | ६. | चिन्तन किया जाता है (आप) | गर्भम् ॥ | १२. | (आपके) उदर में |

श्लोकार्थ—आप पर ब्रह्म हैं, और आदि पुरुष हैं, वृत्तियों के प्रवाह को अन्तर्मुख करके अन्तःकरण में आपका चिन्तन किया जाता है । आप अपने प्रभाव से माया के कार्य के वेग को शान्त कर देते हैं ।

## नवमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—ईडितो भगवानेवं कपिलाख्यः परः पुमान् ।
वाचाविक्लवयेत्याह मातरं मातृवत्सलः ॥९॥

पदच्छेद—

ईडितः भगवान् एवम् कपिलाख्यः परः पुमान् ।
वाचा विक्लवया इति आह मातरम् मातृवत्सलः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ईडितः | २. | स्तुति करने पर | वाचा | ९. | वाणी में |
| भगवान् | ७. | भगवान् | विक्लवया | ८. | गम्भीर |
| एवम् | १. | इस प्रकार | इति | ११. | यह |
| कपिलाख्यः | ४. | कपिल नाम के | आह | १२. | बोले |
| परः | ५. | आदि | मातरम् | १०. | माता से |
| पुमान् । | ६. | पुरुष | मातृवत्सलः ॥ | ३. | माता पर स्नेह रखने वाले |

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्तुति करने पर माता पर स्नेह रखने वाले कपिल नाम के आदि पुरुष भगवान् गम्भीर वाणी में माता से यह बोले ॥

## दशमः श्लोकः

कपिल उवाच—मार्गेणानेन मातस्ते सुसेव्येनोदितेन मे ।
आस्थितेन परां काष्ठामचिरादवरोत्स्यसि ॥१०॥

पदच्छेद—

मार्गेण अनेन मातः ते सुसेव्येन उदितेन मे ।
आस्थितेन पराम् काष्ठाम् अचिरात् अवरोत्स्यसि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मार्गेण | ६. | मार्ग का | मे । | २. | मेरे द्वारा |
| अनेन | ४. | इस | आस्थितेन | ७. | सहारा लेने से |
| मातः | १. | हे माता जी ! | पराम् | ९. | परम |
| ते | ८. | तुम | काष्ठाम् | १०. | पद को |
| सुसेव्येन | ५. | सुगम | अचिरात् | ११. | शीघ्र ही |
| उदितेन | ३. | कहे गये | अवरोत्स्यसि ॥ | १२. | प्राप्त कर लोगी |

श्लोकार्थ—हे माता जी ! मेरे द्वारा कहे गये इस सुगम मार्ग का सहारा लेने से तुम परम पद को शीघ्र ही प्राप्त कर लोगी ॥

## एकादशः श्लोकः

**श्रद्धत्स्वैतन्मतं मह्यं जुष्टं यद्ब्रह्मवादिभिः ।**
**येन मामभवं याया मृत्युमृच्छन्त्यतद्विदः ॥११॥**

पदच्छेद—

श्रद्धस्व एतत् मतम् मह्यम् जुष्टम् यद् ब्रह्म वादिभिः ।
येन माम् अभवम् यायाः मृत्युम् ऋच्छन्ति अतद् विदः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रद्धत्स्व | ४. | विश्वास रक्खो | येन | ९. | जिससे |
| एतत् | २. | इस | माम् | १०. | मेरे |
| मतम् | ३. | मत पर | अभवम् | ११. | मोक्ष पद को |
| मह्यम् | १. | मेरे | यायाः | १२. | प्राप्त कर लोगी |
| जुष्टम् | ८. | सेवन किया है | मृत्युम् | १५. | जन्म-मरण के चक्र को |
| यद् | ५. | जिसका | ऋच्छन्ति | १६. | प्राप्त करते हैं |
| ब्रह्म | ६. | वेद | अतद् | १३. | उसे नहीं |
| वादिभिः । | ७. | ज्ञानियों ने | विदः ॥ | १४. | जानने वाले लोग |

श्लोकार्थ—मेरे इस मत पर विश्वास रक्खो; जिसका वेद-ज्ञानियों ने सेवन किया है। जिससे मेरे मोक्षपद को प्राप्त कर लोगी उसे नहीं जानने वाले लोग जन्म-मरण के चक्र को प्राप्त करते हैं ॥

## द्वादशः श्लोकः

**मैत्रेय उवाच—इति प्रदर्श्य भगवान् सतीं तामात्मनो गतिम् ।**
**स्वमात्रा ब्रह्मवादिन्या कपिलोऽनुमतो ययौ ॥१२॥**

पदच्छेद—

इति प्रदर्श्य भगवान् सतीम् ताम् आत्मनः गतिम् ।
स्व मात्रा ब्रह्म वादिन्या कपिलः अनुमतः ययौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इति | १. | इस प्रकार | स्व | ११. | अपनी |
| प्रदर्श्य | ६. | उपदेश देने के पश्चात् | मात्रा | १२. | माता से |
| भगवान् | ७. | भगवान् | ब्रह्म | ९. | ब्रह्म |
| सतीम् | ३. | सर्व श्रेष्ठ | वादिन्या | १०. | वादिनी |
| ताम् | २. | उस | कपिलः | ८. | कपिल |
| आत्मनः | ४. | आत्म | अनुमतः | १३. | अनुमति लेकर |
| गतिम् । | ५. | ज्ञान का | ययौ ॥ | १४ | वहाँ से चले गये |

श्लोकार्थ—इस प्रकार उस सर्व श्रेष्ठ आत्म ज्ञान का उपदेश देने के पश्चात् भगवान् कपिल ब्रह्मवादिनी अपनी माता से अनुमति लेकर वहाँ से चले गये ॥

# त्रयोदशः श्लोकः

**सा चापि तनयोक्तेन योगादेशेन योगयुक् ।**
**तस्मिन्नाश्रम आपीडे सरस्वत्याः समाहिता ॥१३॥**

पदच्छेद—

सा च अपि तनय उक्तेन योग आदेशेन योगयुक् ।
तस्मिन् आश्रमे आपीडे सरस्वत्याः समाहिता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सा | १०. | वह माता देवहूति | योगयुक् । | ९. | योगाभ्यास करती हुई |
| च | १. | तदनन्तर | तस्मिन् | ४. | उस |
| अपि | ११. | भी | आश्रमे | ५. | आश्रम में |
| तनय उक्तेन | ६. | पुत्र के द्वारा कहे गये | आपीडे | ३. | मुकुट स्वरूप |
| योग | ७. | योग के | सरस्वत्याः | २. | सरस्वती नदी के |
| आदेशेन | ८. | साधन से | समाहिता ॥ | १२. | समाधि में स्थित हो गईं |

श्लोकार्थ—तदनन्तर सरस्वती नदी के मुकुट स्वरूप उस आश्रम में पुत्र के द्वारा कहे गये योग के साधन से योगाभ्यास करती हुई वह माता देवहूति भी समाधि में स्थित हो गईं ॥

# चतुर्दशः श्लोकः

**अभीक्ष्णावगाहकपिशान् जटिलान् कुटिलालकान् ।**
**आत्मानं चोग्रतपसा बिभ्रती चीरिणं कृशम् ॥१४॥**

पदच्छेद—

अभीक्ष्ण अवगाह कपिशान् जटिलान् कुटिल अलकान् ।
आत्मानम् च उग्र तपसा बिभ्रती चीरिणम् कृशम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अभीक्ष्ण | ३. | तीनों कालों में | अत्मानम् | ११. | शरीर को |
| अवगाह | ४. | स्नान करने से | च | ७. | तथा (वे) |
| कपिशान् | ५. | भूरी | उग्र तपसा | ८. | कठोर तपस्या के कारण |
| जटिलान् | ६. | जटाओं में बदल गयी थीं | बिभ्रती | १२. | धारण किये थीं |
| कुटिल | १. | (उनकी) घुंघराली | चीरिणम् | ९. | चीर वस्त्र से ढके |
| अलकान् । | २ | काली अलकें | कृशम् ॥ | १०. | अत्यन्त दुर्बल |

श्लोकार्थ—उनकी घुंघराली अलकें तीनों कालों में स्नान करने से भूरी जटाओं में बदल गयी थीं। तथा वे कठोर तपस्या के कारण चीर वस्त्र से ढके अत्यन्त दुर्बल शरीर को धारण किये थीं ॥

# पञ्चदशः श्लोकः

**प्रजापतेः कर्दमस्य तपोयोगविजृम्भितम् ।**
**स्वगार्हस्थ्यमनौपम्यं प्रार्थ्यं वैमानिकैरपि ॥१५॥**

पदच्छेद—

प्रजापतेः कर्दमस्य तपः योग विजृम्भितम् ।
स्व गार्हस्थ्य अनौपम्यम् प्रार्थ्यम् वैमानिकैः अपि ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रजापतेः | १. | उन्होंने प्रजापति | स्व | ६. | अपने |
| कर्दमस्य | २. | कर्दम ऋषि की | गार्हस्थ्य | ८. | गृहस्थाश्रम सुख को त्याग दिया |
| तपः | ३. | तपस्या (और) | अनौपम्यम् | ७. | अनुपम् |
| योग | ४. | योग के प्रभाव से | प्रार्थ्यम | १०. | इच्छा करते हैं |
| विजृम्भितम् । | ५. | प्राप्त | वैमानिकैः अपि ॥ | ९. | जिसकी देवगण भी |

श्लोकार्थ—उन्होंने प्रजापति कर्दम ऋषि की तपस्या और योग के प्रभाव से प्राप्त अपने अनुपम गृहस्थाश्रम सुख को त्याग दिया, जिसकी देवगण भी इच्छा करते हैं ॥

# षोडशः श्लोकः

**पयःफेननिभाः शय्या दान्ता रुक्मपरिच्छदाः ।**
**आसनानि च हैमानि सुस्पर्शास्तरणानि च ॥१६॥**

पदच्छेद—

पयः फेननिभाः शय्या दान्ताः रुक्म परिच्छदाः ।
आसनानि च हैमानि सुस्पर्श आस्तरणानि च ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| पयः | १. | (उस भवन में) दूध की | आसनानि | ८. | सिंहासन |
| फेननिभाः | २. | झाग के समान सफेद | च | ९. | और |
| शय्या | ४. | पलंग | हैमानि | ७. | सुवर्ण के |
| दान्ताः | ३. | हाँथी दाँत से वने | सुस्पर्श | १०. | अत्यन्त कोमल |
| रुक्म | ५. | सुवर्ण के | आस्तरणानि | ११ | गद्दे |
| परिच्छदाः । | ६. | पात्र | च ॥ | १२. | विद्यमान थे |

श्लोकार्थ—उस भवन में दूध की झाग के समान सफेद हाथी दाँत से वने पलँग सुवर्ण के पात्र, सुवर्ण के सिंहासन और अत्यन्त कोमल गद्दे विद्यमान थे ॥

## सप्तदशः श्लोकः

स्वच्छस्फटिककुड्येषु महामारकतेषु च ।
रत्नप्रदीपा आभान्ति ललनारत्नसंयुताः ॥१७॥

पदच्छेद—

स्वच्छ स्फटिक कुडयेषु महामारकतेषु च ।
रत्न प्रदीपाः आभान्ति ललना रत्न संयुता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वच्छ | १. | वहाँ निर्मल | रत्न प्रदीपाः | ६. | रत्नों के दीपक |
| स्फटिक | २. | स्फटिक मणि की | आभान्ति | ७. | शोभित थे (तथा) |
| कुडयेषु | ५. | दीवारों पर | ललना | ९ | रमणीयों की मूर्तियाँ |
| महामारकतेषु | ४. | महा मरकत मणि की | रत्न | ८. | रत्नों से |
| च । | ३. | और | संयुताः ॥ | १०. | बनीं थीं |

श्लोकार्थ—वहाँ निर्मल स्फटिक मणि की और महामरकत मणि की दीवारों पर रत्नों के दीपक शोभित थे । तथा रत्नों से रमणीयों की मूर्तियाँ बनी थीं ॥

## अष्टादशः श्लोकः

गृहोद्यानं कुसुमितै रम्यं बह्वमरद्रुमैः ।
कूजद्विहङ्गमिथुनं गायन्मत्तमधुव्रतम् ॥१८॥

पदच्छेद—

गृह उद्यानम् कुसुमितैः रम्यम् बहु अमर द्रुमैः ।
कूजत् विहङ्ग मिथुनम् गायत् मत्त मधुव्रतम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| गृह | ४. | (उनके) भवन का | कूजत् | ९. | कलरव (और) |
| उद्यानम् | ५. | बगीचा | विहङ्ग | ७. | पक्षियों के |
| कुसुमितैः | १. | फूलों से लदे हुये | मिथुनम् | ८. | जोड़ों का |
| रम्यम् | ६. | रमणीक लग रहा था (तथा) | गायत् | १२. | गुञ्जार हो रहा था |
| बहु | २. | अनेकों | मत्त | १०. | मतवाले |
| अमर द्रुमैः । | ३. | दिव्य वृक्षों से | मधुव्रतम् ॥ | ११. | भौंरों का |

श्लोकार्थ—फूलों से लदे हुये अनेकों दिव्य वृक्षों से उनके भवन का बगीचा पक्षियों के जोड़ों का कलरव और मतवाले भौंरों का गुञ्जार हो रहा था था ॥

## एकोनविंशः श्लोकः

यत्र प्रविष्टमात्मानं विबुधानुचरा जगुः ।
वाप्यामुत्पलगन्धिन्यां कर्दमेनोपलालितम् ॥१९॥

पदच्छेद—

यत्र प्रविष्टम् आत्मानम् विबुध अनुचरा जगुः ।
वाप्याम् उत्पल गन्धिन्याम् कर्दमेन उपलालितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| यत्र | १. जहाँ | वाप्याम् | ६. बावली में |
| प्रविष्टम् | ७. क्रीडा के लिये प्रवेश करने पर | उत्पल | ४. कमल की |
| आत्मानम् | १०. उनकी (कीर्ति का) | गन्धिन्याम् | ५. सुगन्ध से सुवासित |
| विबुध | ८. देवताओं के | कर्दमेन | २. कर्दम ऋषि का |
| अनुचराः | ९. सेवक (गन्धर्वगण) | उपलालितम् ॥ | ३. लाड-प्यार पाकर |
| जगुः । | ११. गान करते थे | | |

श्लोकार्थ—जहाँ कर्दम ऋषि का लाड़-प्यार पाकर कमल की सुगन्ध से सुवासित बावली क्रीड़ा के लिए प्रवेश करने पर देवताओं के सेवक गन्धर्वगण उनकी कीर्ति का गान करते थे ॥

## विंशः श्लोकः

हित्वा तदीप्सिततममप्याखण्डलयोषिताम् ।
किञ्चिचकार वदनं पुत्रविश्लेषणातुरा ॥२०॥

पदच्छेद—

हित्वा तद् ईप्सित तमम् अपि आखण्डल योषिताम् ।
किञ्चित् चकार वदनम् पुत्र विश्लेषण आतुरा ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| हित्वा | ६. त्याग दिया | किञ्चित् | १०. कुछ |
| तद् | ५. उस भवन को (उन्होंने) | चकार | १२. हो गया था |
| ईप्सित तमम् | ४. अत्यन्त, लालायित रहती थीं | वदनम् | ९. मुख |
| अपि | ३. भी | पुत्र | ७. पुत्र के |
| आखण्डल | १. जिसके लिये इन्द्र की | विश्लेषण | ८. वियोग से (उनका) |
| योषिताम् । | २. पट रानियाँ भी | आतुरा ॥ | ११. उदास |

श्लोकार्थ—जिसके लिये इन्द्र की पटरानियाँ भी अत्यन्त लालायित रहती थीं; उस भवन को उन्होंने त्याग दिया । किन्तु पुत्र के वियोग से उनका मुख कुछ उदास हो गया था ॥

## एकविंशः श्लोकः

वनं प्रव्रजिते पत्यावपत्यविरहातुरा ।
ज्ञाततत्त्वाप्यभून्नष्टे वत्से गौरिव वत्सला ॥२१॥

पदच्छेद—

वनम् प्रव्रजिते पत्यौ अपत्य विरह आतुरा ।
ज्ञात तत्त्वा अपि अभूत् नष्टे वत्से गौः इव वत्सला ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वनम् | ६. | वन | तत्त्वा | ८. | आत्म ज्ञान से |
| प्रव्रजिते | ७. | चले जाने पर | अपि | १०. | भी |
| पत्यौ | ५. | (माता देवहूति) पति के | अभूत् | १४. | हो गयीं |
| अपत्य | ११. | पुत्र के | नष्टे | २. | बिछुड़ जाने पर |
| विरह | १२. | वियोग से | वत्से | १. | बछड़े के |
| आतुरा । | १३. | दुःखी | गौः इव | ३. | गाय के समान |
| ज्ञात | ९. | सम्पन्न होने पर | वत्सला ॥ | ४. | वात्सल्यभाव रखने वाली |

श्लोकार्थ—बछड़े के बिछुड़ जाने पर गाय के समान वात्सल्य भाव रखने वाली माता देवहूति पति के वन चले जाने पर आत्मज्ञान से सम्पन्न होने पर भी पुत्र के वियोग से दुःखी हो गयीं ॥

## द्वाविंशः श्लोकः

तमेव ध्यायती देवमपत्यं कपिलं हरिम् ।
बभूवाचिरतो वत्स निःस्पृहा तादृशे गृहे ॥२२॥

पदच्छेद—

तम् एव ध्यायती देवम् अपत्यम् कपिलम् हरिम् ।
बभूव अचिरतः वत्स निःस्पृहा तादृशे गृहे ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तम् एव | ३. | उन ही | बभूव | १२. | हो गयीं |
| ध्यायती | ७. | ध्यान करती हुई (माता देवहूती) | अचिरतः | १०. | शीघ्र |
| देवम् | ५. | देव | वत्स | १. | हे विदुर जी ! |
| अपत्यम् | २. | पुत्र स्वरूप | निःस्पृहा | ११. | विरत |
| कपिलम् | ४. | कपिल | तादृशे | ८. | उस प्रकार |
| हरिम् । | ६. | भगवान् श्री हरि का | गृहे ॥ | ९. | वैभव सम्पन्न घर से |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! पुत्र स्वरूप उन्हीं कपिल देव भगवान् श्री हरि का ध्यान करती हुई माता देवहूति उस प्रकार के वैभव सम्पन्न घर से शीघ्र विरत हो गयीं ॥

## त्रयोविंशः श्लोकः

**ध्यायती भगवद्रूपं यदाह ध्यानगोचरम् ।**
**सुतः प्रसन्नवदनं समस्तव्यस्तचिन्तया ॥२३॥**

पदच्छेद—

**ध्यायती भगवत् रूपम् यद् आह ध्यान गोचरम् ।**
**सुतः प्रसन्न वदनम् समस्त व्यस्त चिन्तया ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **ध्यायती** | १३. | ध्यान करने लगीं | **सुतः** | १. | पुत्र (कपिल देव भगवान् ने) |
| **भगवत्** | ६. | भगवान् के | **प्रसन्न** | ४. | हँसमुख |
| **रूपम्** | ८. | स्वरूप का | **वदनम्** | ५. | मुखारविन्द वाले |
| **यद्** | ७. | जिस | **समस्त** | ११. | सम्पूर्ण (अवयवों) का |
| **आह** | ९. | वर्णन किया था (उसके) | **व्यस्त** | १०. | एक-एक अवयवों का (और) |
| **ध्यान** | २. | ध्यान करने | **चिन्तया ॥** | १२. | चिन्तन करती हुईं (माता देवहूति) |
| **गोचरम् ।** | ३. | योग्य | | | |

**श्लोकार्थ**—पुत्र कपिलदेव भगवान् ने ध्यान करने योग्य हँसमुख मुखारविन्द वाले भगवान् के जिस स्वरूप का वर्णन किया था; उसके एक-एक अवयवों का और सम्पूर्ण अवयवों का चिन्तन करती हुई माता देवहूति ध्यान करने लगीं ॥

## चतुर्विंशः श्लोकः

**भक्तिप्रवाहयोगेन वैराग्येण बलीयसा ।**
**युक्तानुष्ठानजातेन ज्ञानेन ब्रह्महेतुना ॥२४॥**

पदच्छेद—

**भक्ति प्रवाह योगेन वैराग्येण बलीयसा ।**
**युक्त अनुष्ठान जातेन ब्रह्म हेतुना ॥**

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **भक्ति** | १. | भगवद् भक्ति के | **युक्त अनुष्ठान** | ६. | उचित कर्मों के अनुष्ठान से (उनमें) |
| **प्रवाह** | २. | वेग के | **जातेन** | १०. | उत्पन्न हो गया |
| **योगेन** | ३. | प्रभाव से | **ज्ञानेन** | ९. | ज्ञान |
| **वैराग्येण** | ५. | वैराग्य से (और) | **ब्रह्म** | ७. | पर ब्रह्म का |
| **बलीयसा ।** | ४. | प्रबल | **हेतुना ॥** | ८. | साक्षात्कार कराने वाले |

**श्लोकार्थ**—भगवद् भक्ति के वेग के प्रभाव से, प्रबल वैराग्य से और उचित कर्मों के अनुष्ठान से उनमें परब्रह्म का साक्षात्कार कराने वाला ज्ञान उत्पन्न हो गया ॥

## पञ्चविंशः श्लोकः

**विशुद्धेन तदाऽऽत्मानमात्मना विश्वतोमुखम् ।**
**स्वानुभूत्या तिरोभूतमायागुणविशेषणम् ॥२५॥**

पदच्छेद—

विशुद्धेन तदा आत्मानम् आत्मना विश्वतोमुखम् ।
स्व अनुभूत्या तिरोभूत माया गुण विशेषणम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| विशुद्धेन | २. | निर्मल हुई | स्व अनुभूत्या | ६. | (जो) अपने प्रकाश से |
| तदा | १. | उस समय | तिरोभूत | १०. | दूर कर देते हैं |
| आत्मानम् | ५. | परमात्मा का ध्यान करने लगीं | माया | ७. | माया के |
| आत्मना | ३. | आत्मा से (वे) | गुण | ८. | कार्य |
| विश्वतोमुखम् । | ४. | सर्व व्यापक | विशेषणम् ॥ | ९. | आवरण को |

श्लोकार्थ—उस समय निर्मल हुई आत्मा से वे सर्व व्यापक परमात्मा का ध्यान करने लगीं जो अपने प्रकाश से माया के कार्य आवरण को दूर कर देते हैं ॥

## षड्विंशः श्लोकः

**ब्रह्मण्यवस्थितमतिर्भगवत्यात्मसंश्रये ।**
**निवृत्तजीवापत्तित्वात्क्षीणक्लेशाऽऽप्तनिर्वृतिः ॥२६॥**

पदच्छेद—

ब्रह्मणि अवस्थित मतिः भगवति आत्म संश्रये ।
निवृत्त जीव आपत्तित्वात् क्षीण क्लेश आप्त निर्वृत्तिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| ब्रह्मणि | ३. | पर ब्रह्म | निवृत्त | ८. | समाप्त हो गया |
| अवस्थित | ६. | स्थिर होने से (उनका) | जीव आपत्तित्वात् | ७. | जीव-भाव |
| मतिः | ५. | बुद्धि | क्षीण | १०. | नष्ट हो गये (और वे) |
| भगवति | ४. | भगवान् श्री हरि में | क्लेश | ९. | सारे कष्ट |
| आत्म | १. | जीव के | आप्त | १२. | निमग्न हो गईं |
| संश्रये । | २. | आश्रय | निर्वृत्तिः ॥ | ११. | ब्रह्मानन्द में |

श्लोकार्थ—जीव के आश्रय पर ब्रह्म भगवान् श्री हरि में बुद्धि के स्थिर होने से उनका जीव-भाव समाप्त हो गया; सारे कष्ट नष्ट हो गये और वे ब्रह्मानन्द में निमग्न हो गईं ॥

# सप्तविंशः श्लोकः

नित्यारूढसमाधित्वात्परावृत्तगुणभ्रमा ।
न सस्मार तदाऽऽत्मानं स्वप्ने दृष्टमिवोत्थितः ॥२७॥

पदच्छेद—

नित्य आरूढ समाधित्वात् परावृत्त गुण भ्रमा ।
न सस्मार तदा आत्मानम् स्वप्ने दृष्टम् इव उत्थितम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| नित्य | १. निरन्तर | न सस्मार | १२. सुध नहीं रही |
| आरूढ | ३. स्थिर रहने से (उनकी) | तदा | १०. उस समय (उन्हें) |
| समाधित्वात् | २. समाधि में | आत्मानम् | ११. अपने शरीर की |
| परावृत्त | ६. मिट गई | स्वप्ने | ८. स्वप्न में |
| गुण | ४. विषयों के | दृष्टम् | ९. देखे हुये शरीर की (उसी प्रकार स्मृति नहीं रहती है) |
| भ्रमा । | ५. सत्यत्व की भ्रान्ति | इव उत्थितम् ॥ | ७. जैसे जगे हुये मनुष्य को |

श्लोकार्थ—निरन्तर समाधि में स्थित रहने से उनकी विषयों के सत्यत्व की भ्रान्ति मिट गई। जैसे जगे हुये मनुष्य को स्वप्न में देखे हुये शरीर की स्मृति नहीं रहती है, उसी प्रकार उस समय उन्हें अपने शरीर की सुध नहीं रही ॥

# अष्टाविंशः श्लोकः

तद्देहः परतः पोषोऽप्यकृशश्चाध्यसम्भवात् ।
बभौ मलैरवच्छन्नः सधूम इव पावकः ॥२८॥

पदच्छेद—

तद् देहः परतः पोषः अपि अकृशः च आधि असम्भवात् ।
बभौ मलैः अवच्छन्नः सधूमः इव पावकः ॥

शब्दार्थ—

| | | | |
|---|---|---|---|
| तद् देहः | १. उनके शरीर का | बभौ | १२. सुन्दर लगता था |
| परतः | ३. दूसरों से होता था | मलैः | ७. वह मैल से |
| पोषः अपि | २. पोषण भी | अवच्छन्नः | ८. ढका रहने पर भी |
| अकृशः | ६. अत्यन्त दुर्बल नहीं था | सधूमः | ९. धूम से युक्त |
| च आधि | ४. किन्तु मानसिक क्लेश | इव | ११. समान |
| असम्भवात् । | ५. न होने से (वह) | पावकः ॥ | १०. अग्नि के |

श्लोकार्थ—उनके शरीर का पोषण भी दूसरों से होता था। किन्तु मानसिक क्लेश न होने से वह अत्यन्त दुर्बल नहीं था। वह मैल से ढका रहने पर भी धूम से युक्त अग्नि के समान सुन्दर लगता था ॥

## एकोनत्रिंशः श्लोकः

स्वाङ्गं तपोयोगमयं मुक्तकेशं गताम्बरम् ।
दैवगुप्तं न बुबुधे वासुदेवप्रविष्टधीः ॥२९॥

पदच्छेद—

स्वाङ्गम् तपो योगमयम् मुक्त केशम् गत अम्बरम् ।
दैव गुप्तम् न बुबुधे वासुदेव प्रविष्ट धीः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| स्वाङ्गम् | ३. | उनका शरीर | दैव | ४. | भाग्य से |
| तपो | १. | तपस्या (और) | गुप्तम् | ५. | सुरक्षित (था) |
| योगमयम् | २. | योग से युक्त | न | १३. | (उसकी) नहीं |
| मुक्त | ७. | खुले थे (और) | बुबुधे | १४. | सुध रही |
| केशम् | ६. | (उनके) बाल | वासुदेव | १०. | भगवान् श्री हरि में |
| गत | ९. | गिर गया था | प्रविष्ट | १२. | लग जाने से (उन्हें) |
| अम्बरम् । | ८. | वस्त्र | धीः ॥ | ११. | चित्त के |

श्लोकार्थ—तपस्या और योग से युक्त उनका शरीर भाग्य से सुरक्षित था। उनके बाल खुले थे और वस्त्र गिर गया था। भगवान् श्री हरि में चित्त के लग जाने से उन्हें उसकी सुध नहीं रही ॥

## त्रिंशः श्लोकः

एवं सा कपिलोक्तेन मार्गेणाचिरतः परम् ।
आत्मानं ब्रह्म निर्वाणं भगवन्तमवाप ह ॥३०॥

पदच्छेद—

एवम् सा कपिल उक्तेन मार्गेण अचिरतः परम् ।
आत्मानम् ब्रह्म निर्वाणम् भगवन्तम् अवाप ह ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एवम् | १. | इस प्रकार | आत्मानम् | ८. | आत्म स्वरूप |
| सा | २. | माता देवहूति ने | ब्रह्म | ७. | पर ब्रह्म |
| कपिल | ३. | भगवान् कपिल के द्वारा | निर्वाणम् | ९. | नित्य मुक्त |
| उक्तेन मार्गेण | ४ | बताये हुये मार्ग से | भगवन्तम् | १०. | भगवान् श्री हरि को |
| अचिरतः | ५. | थोड़े ही समय में | अवाप | ११. | प्राप्त कर लिया |
| परम् । | ६ | परात्पर | ह ॥ | १२. | यह प्रसिद्ध है |

श्लोकार्थ—इस प्रकार माता देवहूति ने भगवान् कपिल के द्वारा बताये हुये मार्ग से थोड़े ही समय में परात्पर पर ब्रह्म, आत्म स्वरूप, नित्य मुक्त भगवान् श्री हरि को प्राप्त कर लिया, यह प्रसिद्ध है ॥

## एकत्रिंशः श्लोकः

**तद्वीरासीत्पुण्यतमं क्षेत्रं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।**
**नाम्ना सिद्धपदं यत्र सा संसिद्धिमुपेयुषी ॥३१॥**

पदच्छेद—

तद् वीर आसीत् पुण्यतमम् क्षेत्रम् त्रैलोक्य विश्रुतम् ।
नाम्ना सिद्ध पदम् यत्र सा संसिद्धिम् उपेयुषी ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ६. | वह | नाम्ना | १२. | नाम से |
| वीर | १. | हे विदुर जी ! | सिद्ध | १०. | सिद्ध |
| आसीत् | १४. | हुआ | पदम् | ११. | पद |
| पुण्यतमम् | ७. | परम पवित्र | यत्र | २. | जहाँ पर |
| क्षेत्रम् | ८. | स्थान | सा | ३. | देवहूति ने |
| त्रैलोक्य | ९. | त्रिलोकी में | संसिद्धिम् | ४. | सिद्धि |
| विश्रुतम् । | १३. | विख्यात | उपेयुषी ॥ | ५. | प्राप्त की थी |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! जहाँ पर देवहूति ने सिद्धि प्राप्त की थी; वह परम पवित्र स्थान त्रिलोकी में सिद्धपद नाम से विख्यात हुआ ॥

## द्वात्रिंशः श्लोकः

**तस्यास्तद्योगविधुतमार्त्यं मर्त्यमभूत्सरित् ।**
**स्रोतसां प्रवरा सौम्य सिद्धिदा सिद्धसेविता ॥३२॥**

पदच्छेद—

तस्याः तद् योग विधुतम् आर्त्यम् मर्त्यम् अभूत् सरित् ।
स्रोतसाम् प्रवरा सौम्य सिद्धिदा सिद्ध सेविता ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्याः | ३. | उनके | स्रोतसाम् | ७. | नदियों में |
| तद् योग | २. | उस योग साधन से | प्रवरा | ८. | प्रसिद्ध |
| विधुतम् | ६. | धुल गये (और वे) | सौम्य | १. | हे विदुर जी ! |
| आर्त्यम् | ५. | सारे मैल | सिद्धिदा | १३. | सिद्धि देने वाली है |
| मर्त्यम् | ४. | शरीर के | सिद्ध | ११. | सिद्ध महात्माओं से |
| अभूत् | १०. | परिणत हो गईं (जो) | सेविता ॥ | १२. | सेवित (और) |
| सरित् | ९. | नदी के रूप में | | | |

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उस योग साधन से उनके शरीर के सारे मैल धुल गये; और वे नदियों में प्रसिद्ध नदी के रूप में परिणत हो गईं; जो सिद्ध महात्माओं से सेवित और सिद्धि देने वाली है ॥

## त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कपिलोऽपि महायोगी भगवान् पितुराश्रमात् ।
मातरं समनुज्ञाप्य प्रागुदीचीं दिशं ययौ ॥३३॥

पदच्छेद—

कपिलः अपि महायोगी भगवान् पितुः आश्रमात् ।
मातरम् समनुज्ञाप्य प्राग् उदीचीम् दिशम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| कपिलः | २. | कपिल | मातरम् | ५. | माता की |
| अपि | ४. | भी | समनुज्ञाप्य | ६. | अनुमति पाकर |
| महायोगी | १. | महान् योगिराज | प्राग् | ९. | पूर्व (और) |
| भगवान् | ३. | भगवान् | उदीचीम् | १०. | उत्तर के |
| पितुः | ७. | पिता के | दिशम् | ११. | ईशान कोण में |
| आश्रमात् । | ८. | आश्रम से | ययौ ॥ | १२. | चले गये |

श्लोकार्थ——महान् योगिराज कपिल भगवान् भी माता की अनुमति पाकर पिता के आश्रम से पूर्व और उत्तर के ईशान कोण में चले गये ॥

## चतुस्त्रिंशः श्लोकः

सिद्धचारणगन्धर्वैर्मुनिभिश्चाप्सरोगणैः ।
स्तूयमानः समुद्रेण दत्तार्हणनिकेतनः ॥३४॥

पदच्छेद—

सिद्ध चारण गन्धर्वैः मुनिभिः च अप्सरोगणैः ।
स्तूयमानः समुद्रेण दत्त अर्हण निकेतनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| सिद्ध | १. | (उस समय) सिद्ध | स्तूयमानः | ७. | उनकी स्तुति करने लगीं (तथा) |
| चारण | २. | चारण | समुद्रेण | ८. | समुद्र ने (भी उनकी) |
| गन्धर्वैः | ३. | गन्धर्व | दत्त | ११. | दिया |
| मुनिभिः | ४. | ऋषिगण | अर्हण | ९. | पूजा करके |
| च | ५. | और | निकेतनः ॥ | १०. | निवास स्थान |
| अप्सरोगणैः । | ६. | अप्सरायें | | | |

श्लोकार्थ——उस समय सिद्ध, चारण, गन्धर्व, ऋषिगण और अप्सरायें उनकी स्तुति करने लगीं तथा समुद्र ने भी उनकी पूजा करके निवास स्थान दिया ॥

## पञ्चत्रिंशः श्लोकः

आस्ते योगं समास्थाय सांख्याचार्यैरभिष्टुतः ।
त्रयाणामपि लोकानामुपशान्त्यै समाहितः ॥३५॥

पदच्छेद—

आस्ते योगम् समास्थाय सांख्य आचार्यैः अभिष्टुतः ।
त्रयाणाम् अपि लोकानाम् शान्त्यै समाहितः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| आस्ते | ११. | स्थित हो गये | त्रयाणाम् | ४. | (उस समय वे) तीनों |
| योगम् | ८. | योग मार्ग का | अपि | ५. | ही |
| समास्थाय | ९. | सहारा लेकर | लोकानाम् | ६. | लोकों की |
| सांख्य | १. | सांख्य शास्त्र के | शान्त्यै | ७. | शान्ति के लिये |
| आचार्यैः | २. | आचार्यगण भी | समाहितः ॥ | १०. | समाधि में |
| अभिष्टुतः । | ३. | उनकी स्तुति करने लगे | | | |

श्लोकार्थ—सांख्य शास्त्र के आचार्यगण भी उनकी स्तुति करने लगे; उस समय वे तीनों ही लोकों की शान्ति के लिये योग मार्ग का सहारा लेकर समाधि में स्थित हो गये ।

## षट्त्रिंशः श्लोकः

एतन्निगदितं तात यत्पृष्टोऽहं तवानघ ।
कपिलस्य च संवादो देवहूत्याश्च पावनः ॥३६॥

पदच्छेद—

एतद् निगदितम् तात यत् पृष्टः अहम् तव अनघ ।
कपिलस्य च संवादः देवहूत्याः च पावनः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | ९. | यह | कपिलस्य | ५. | भगवान् कपिल |
| निगदितम् | १२. | सुनाया | च | ६. | और |
| तात | २. | हे विदुर जी ! | संवादः | ११. | संवाद |
| यत् पृष्टः | ३. | (तुमने) जो, पूछा था | देवहूत्याः | ७. | माता देवहूति का |
| अहम् तव | ४. | मैंने तुम्हें | च | ८. | और |
| अनघ । | १. | निष्पाप | पावनः ॥ | १०. | पवित्र |

श्लोकार्थ—निष्पाप हे विदुर जी ! तुमने जो पूछा था; मैंने तुम्हें भगवान् कपिल और माता देवहूति का यह पवित्र संवाद सुनाया ॥

ॐ तत्सत्

श्रीगणेशाय नमः

# श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

## द्वितीयः स्कन्धः

अथ प्रथमः अध्यायः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

## प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकहितं नृप ।
आत्मवित्संमतः पुंसां श्रोतव्यादिषु यः परः ॥१॥

पदच्छेद—

वरीयान् एषः ते प्रश्नः, कृतः लोक हितम् नृप ।
आत्मवित् सम्मतः पुंसाम्, श्रोतव्य आदिषु यः परः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वरीयान् | ७. | बहुत उत्तम (है) | आत्मवित् | ९. | आत्मज्ञानियों से |
| एषः | ५. | यह | सम्मतः | १०. | मान्य (एवं) |
| ते | ४. | आपका | पुंसाम् | ११. | मनुष्यों के |
| प्रश्नः | ६ | प्रश्न | श्रोतव्य | १२. | श्रवण |
| कृतः | ३. | किया गया | आदिषु | १३. | स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में |
| लोक, हितम् | २. | संसार के, कल्याण के लिए | यः | ८. | यह |
| नृप। | १. | हे राजन् ! | परः ॥ | १४. | सर्वश्रेष्ठ (है) |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! संसार के कल्याण के लिए किया गया आपका यह प्रश्न बहुत उत्तम है। यह आत्मज्ञानियों से मान्य एवं मनुष्यों के श्रवण, स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में सर्वश्रेष्ठ है ।

# द्वितीयः श्लोकः

श्रोतव्यादीनि राजेन्द्र नृणां सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यतामात्मतत्त्वं गृहेषु गृहमेधिनाम् ॥२॥

पदच्छेद—

श्रोतव्य आदीनि राजेन्द्र, नृणाम् सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यताम् आत्म तत्त्वम्, गृहेषु गृह मेधिनाम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| श्रोतव्य | ७. | सुनने (और) | सहस्रशः । | ९. | हजारों (बातें) |
| आदीनि | ८. | स्मरण, कीर्तनादि के योग्य | अपश्यताम् | ४. | न जानने वाले |
| राजेन्द्र | १. | हे राजन् ! | आत्म तत्त्वम् | ३. | आत्मा के स्वरूप को |
| नृणाम् | ६. | मनुष्यों के | गृहेषु | २. | घर में (उलझे हुए तथा) |
| सन्ति | १०. | हैं | गृहमेधिनाम् ॥ | ५. | गृहस्थ |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! घर में उलझे हुए तथा आत्मा के स्वरूप को न जानने वाले गृहस्थ मनुष्यों के सुनने और स्मरण, कीर्तनादि के योग्य हजारों बातें हैं ।

# तृतीयः श्लोकः

निद्रया ह्रियते नक्तं व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्बभरणेन वा ॥३॥

पदच्छेद—

निद्रया ह्रियते नक्तम्, व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा च अर्थ ईहया राजन्, कुटुम्ब भरणेन वा ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| निद्रया | २. | नींद से | दिवा | ११. | दिन |
| ह्रियते | १४. | बिता देते हैं | च | १२. | इस प्रकार |
| नक्तम् | ५. | रात | अर्थ, ईहया | ७. | धन की, इच्छा से |
| व्यवायेन | ४. | स्त्री प्रसंग से | राजन् | १. | हे राजन् ! (मनुष्य) |
| च | ६. | और | कुटुम्ब | ९. | परिवार के |
| वा | ३. | अथवा | भरणेन | १०. | पालन-पोषण से |
| वयः । | १३. | (सारी) आयु | वा ॥ | ८. | अथवा |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मनुष्य नींद से अथवा स्त्री-प्रसंग से रात और धन की इच्छा से अथवा परिवार के पालन-पोषण से दिन, इस प्रकार सारी आयु बिता देते हैं ।

## चतुर्थः श्लोकः

देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि ।
तेषां प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ।।४।।

पदच्छेद—

देह अपत्य कलत्र आदिषु, आत्म सैन्येषु असत्सु अपि ।
तेषाम् प्रमत्तः निधनम्, पश्यन् अपि न पश्यति ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| देह | १. | शरीर | तेषाम् | ९. | उनकी |
| अपत्य | २. | सन्तान | प्रमत्तः | ८. | पागल हुआ (मनुष्य) |
| कलत्र | ३. | स्त्री | निधनम् | १०. | मृत्यु को |
| आदिषु | ४. | इत्यादि | पश्यन् | ११. | देखता हुआ |
| आत्म सैन्येषु | ५. | अपने सम्बन्धियों के | अपि | १२. | भी |
| असत्सु | ६. | असत् होने पर | न | १३. | नहीं |
| अपि । | ७. | भी (उनके मोह में) | पश्यति ।। | १४. | देखता है |

श्लोकार्थ—शरीर, सन्तान, स्त्री इत्यादि अपने सम्बन्धियों के असत् होने पर भी उनके मोह में पागल हुआ मनुष्य उनकी मृत्यु को देखता हुआ भी नहीं देखता है।

## पञ्चमः श्लोकः

तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम् ।।५।।

पदच्छेद—

तस्मात् भारत सर्व आत्मा, भगवान् ईश्वरः हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मर्तव्यः च इच्छता अभयम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तस्मात् | १. | इसलिए | श्रोतव्यः | १२. | श्रवण |
| भारत | २. | हे परीक्षित् ! | कीर्तितव्यः | ११. | कीर्तन |
| सर्व | ५. | सब की | च | १३. | और |
| आत्मा | ६. | आत्मा (एवं) | स्मर्तव्यः | १४. | स्मरण करना चाहिए |
| भगवान् | ८. | भगवान् | च | १०. | ही |
| ईश्वरः | ७. | सर्वशक्तिमान् | इच्छता | ४. | चाहने वाले (प्राणियों) को |
| हरिः । | ९. | श्री हरि की (लीलाओं का) | अभयम् ।। | ३. | अभयपद |

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! अभयपद चाहने वाले प्राणियों को सबकी आत्मा एवं सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का ही कीर्तन, श्रवण और स्मरण करना चाहिए।

## षष्ठः श्लोकः

एतावान् सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया ।
जन्मलाभः परः पुंसामन्ते नारायणस्मृतिः ॥६॥

पदच्छेद—

एतावान् सांख्य योगाभ्याम्, स्व धर्म परिनिष्ठया ।
जन्म लाभः परः पुंसाम्, अन्ते नारायण स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतावान् | ३. | यही | लाभः | ५. | फल (है कि) |
| सांख्य | ७. | ज्ञान | परः | ४. | सर्वोत्तम |
| योगाभ्याम् | ८. | भक्ति (तथा) | पुंसाम् | १. | मनुष्यों के |
| स्व, धर्म | ९. | अपने, धर्म में | अन्ते | ६. | मृत्यु के समय |
| परिनिष्ठया। | १०. | श्रद्धा के कारण | नारायण | ११. | भगवान् नारायण का |
| जन्म | २. | शरीर धारण का | स्मृतिः ॥ | १२ | स्मरण रहे |

श्लोकार्थ—मनुष्यों के शरीर धारण का यही सर्वोत्तम फल है कि मृत्यु के समय ज्ञान, भक्ति तथा अपने धर्म में श्रद्धा के कारण भगवान् नारायण का स्मरण रहे ।

## सप्तमः श्लोकः

प्रायेण मुनयो राजन्निवृत्ता विधिषेधतः ।
नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म गुणानुकथने हरेः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रायेण मुनयः राजन्, निवृत्ताः विधि षेधतः ।
नैर्गुण्यस्थाः रमन्ते स्म, गुण अनुकथने हरेः ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| प्रायेण | ६. | अधिकतर | नैर्गुण्यस्थाः | ५. | निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर(भी) |
| मुनयः | ४. | मुनिजन | रमन्ते स्म | १०. | रमे रहते हैं |
| राजन् | १. | हे परीक्षित् ! | गुण | ८ | अनन्त लीलाओं के |
| निवृत्ताः | ३. | संन्यास लिए हुए | अनुकथने | ९. | कीर्तन में |
| विधि, षेधतः। | २. | (शास्त्रीय) विधि, और निषेध से | हरेः ॥ | ७. | श्री हरि की |

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! शास्त्रीय विधि और निषेध से संन्यास लिए हुए मुनिजन निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर भी अधिकतर श्री हरि की अनन्त लीलाओं के कीर्तन में रमे रहते हैं ।

## अष्टमः श्लोकः

इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
अधीतवान् द्वापरादौ पितुर्द्वैपायनादहम् ॥८॥

पदच्छेद—

इदम् भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
अधीतवान द्वापर आदौ, पितुः द्वैपायनात् अहम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| इदम् | ६. | इस | अधीतवान् | १२. | पढ़ा था |
| भागवतम् | ४. | श्रीमद्भागवत | द्वापर | १०. | द्वापर युग के |
| नाम | ५. | नाम के | आदौ | ११. | प्रारम्भ में |
| पुराणम् | ७. | पुराण को | पितुः | ८. | पिता |
| ब्रह्म | २. | वेद के | द्वैपायनात् | ९. | वेदव्यास जी से |
| सम्मितम् । | ३. | समान ही | अहम् ॥ | १ | मैंने |

श्लोकार्थ—मैंने वेद के समान ही श्रीमद्भागवत नाम के इस पुराण को पिता वेदव्यास जी से द्वापर युग के प्रारम्भ में पढ़ा था।

## नवमः श्लोकः

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्य उत्तमश्लोकलीलया ।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥९॥

पदच्छेद—

परिनिष्ठितः अपि नैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया ।
गृहीत चेताः राजर्षे, आख्यानम् यत् अधीतवान् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| परिनिष्ठितः | ३. | श्रद्धा होने पर | गृहीत | ८. | खिंच जाने से |
| अपि | ४. | भी | चेताः | ७. | हृदय के |
| नैर्गुण्ये | २. | निर्गुण ब्रह्म में | राजर्षे | १. | हे राजन् ! |
| उत्तम श्लोक | ५. | पवित्र कीर्ति (श्री कृष्ण की) | आख्यानम् | १०. | कथा |
| लीलया । | ६. | लीलाओं में | यत् | ९. | (मैंने) जो |
| | | | अधीतवान् ॥ | ११. | पढ़ी थी (उसे कहूँगा) |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निर्गुण ब्रह्म में श्रद्धा होने पर भी पवित्र-कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं में हृदय के खिंच जाने से मैंने जो कथा पढ़ी थी, उसे कहूँगा।

## दशमः श्लोकः

तदहं तेऽभिधास्यामि महापौरुषिको भवान् ।
यस्य श्रद्दधतामाशु स्यान्मुकुन्दे मतिः सती ॥१०॥

पदच्छेद—

तद् अहम् ते अभिधास्यामि, महापौरुषिकः भवान् ।
यस्य श्रद्दधताम् आशु, स्यात् मुकुन्दे मतिः सती ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तद् | ५. | वह (कथा) | श्रद्दधताम् | ८. | श्रद्धा रखने वाले (प्राणियों) की |
| अहम् | ३. | मैं | आशु | १२. | तत्काल |
| ते | ४. | आपको | स्यात् | १३. | लग जाती है |
| अभिधास्यामि | ६. | सुनाऊँगा | मुकुन्दे | ११. | भगवान् श्रीकृष्ण में |
| महापौरुषिकः | २. | परम भक्त (हैं अतः) | मतिः | १०. | बुद्धि |
| भवान् । | १. | आप | सती ॥ | ९. | उत्तम |
| यस्य | ७. | जिस पर | | | |

श्लोकार्थ--आप परम भक्त हैं; अतः मैं आपको वह कथा सुनाऊँगा, जिस पर श्रद्धा रखने वाले प्राणियों की उत्तम बुद्धि भगवान् श्रीकृष्ण में तत्काल लग जाती है।

## एकादशः श्लोकः

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ॥११॥

पदच्छेद—

एतद् निर्विद्यमानानाम्, इच्छताम् अकुतोभयम् ।
योगिनाम् नृप निर्णीतम्, हरेः नाम अनुकीर्तनम् ॥

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| एतद् | २. | सांसारिक विषयों से | नृप | १. | हे राजन् ! |
| निर्विद्यमानानाम् | ३. | विरक्त (तथा) | निर्णीतम् | १०. | निश्चित किया गया है |
| इच्छताम् | ५. | इच्छुक | हरेः | ७. | श्रीहरि के |
| अकुतोभयम् । | ४. | अभयपद के | नाम | ८. | नाम का |
| योगिनाम् | ६. | योगियों के लिए | अनुकीर्तनम् ॥ | ९. | कीर्तन |

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सांसारिक विषयों से विरक्त तथा अभयपद के इच्छुक योगियों के लिए श्रीहरि के नाम का कीर्तन निश्चित किया गया है।

## द्वादशः श्लोकः

किं प्रमत्तस्य बहुभिः परोक्षैर्हायनैरिह ।
वरं मुहूर्त्तं विदितं घटेत श्रेयसे यतः ।।१२।।

पदच्छेद—

किम् प्रमत्तस्य बहुभिः, परोक्षैः हायनैः इह ।
वरम् मुहूर्त्तम् विदितम्, घटेत श्रेयसे यतः ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| किम् | ६. | क्या (लाभ ? इसके विपरीत) | वरम् | ९. | उत्तम (है) |
| प्रमत्तस्य | २. | असावधान (प्राणियों) को | मुहूर्त्तम् | ८. | एक क्षण (भी) |
| बहुभिः | ४. | अनेकों | विदितम् | ७. | ज्ञान-पूर्वक बिताया हुआ |
| परोक्षैः | ३. | अज्ञान में बीतने वाले | घटेत | १२. | प्रयास किया जाता है |
| हायनैः | ५. | वर्षों से | श्रेयसे | ११. | परम कल्याण के लिए |
| इह । | १. | इस संसार में | यतः ।। | १०. | जिसमें |

श्लोकार्थ—इस संसार में असावधान प्राणियों को अज्ञान में बीतने वाले अनेकों वर्षों से क्या लाभ ? इसके विपरीत, ज्ञान-पूर्वक बिताया हुआ एक क्षण भी उत्तम है, जिसमें परम कल्याण के लिए प्रयास किया जाता है ।

## त्रयोदशः श्लोकः

खट्वाङ्गो नाम राजर्षिर्ज्ञात्वेयत्तामिहायुषः ।
मुहूर्त्तात्सर्वमुत्सृज्य गतवानभयं हरिम् ।।१३।।

पदच्छेद—

खट्वाङ्गः नाम राजर्षिः, ज्ञात्वा इयत्ताम् इह आयुषः ।
मुहूर्त्तात् सर्वम् उत्सृज्य, गतवान अभयम् हरिम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| खट्वाङ्गः | १. | खट्वाङ्ग | मुहूर्तात् | ७. | दो घड़ी में (ही) |
| नाम, राजर्षिः | २. | नाम के, राजा ने | सर्वम् | ८. | सबका |
| ज्ञात्वा | ६. | जानने के पश्चात् | उत्सृज्य | ९. | त्याग कर |
| इयत्ताम् | ५. | अवधि को | गतवान् | १२. | प्राप्त कर लिया था |
| इह | ३. | संसार में | अभयम् | ११. | धाम को |
| आयुषः । | ४. | (अपनी) आयु की | हरिम् ।। | १०. | श्रीहरि के |

श्लोकार्थ—खट्वाङ्ग नाम के राजा ने संसार में अपनी आयु की अवधि को जानने के पश्चात् दो घड़ी में ही सबका त्याग कर श्रीहरि के धाम को प्राप्त कर लिया था ।

## चतुर्दशः श्लोकः

तवाप्येतर्हि कौरव्य सप्ताहं जीवितावधिः ।
उपकल्पय तत्सर्वं तावद्यत्सांपरायिकम् ।।१४।।

पदच्छेद—

तव अपि एतर्हि कौरव्य, सप्ताहम् जीवित अवधिः ।
उपकल्पय तत् सर्वम्, तावत् यत् सांपरायिकम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| तव अपि | २. | तुम्हारे तो | उपकल्पय | १०. | कर लो |
| एतर्हि | ५. | अभी | तत् | ८. | वह |
| कौरव्य | १. | हे कुरु नन्दन परीक्षित् | सर्वम् | ९. | सब |
| सप्ताहम् | ६. | सात दिनों की (है) | तावत् | ७ | इस बीच (तुम) |
| जीवित | ३. | जीवन की | यत् | ११. | जो |
| अवधिः । | ४. | अवधि | सांपरायिकम् ।। | १२. | परम कल्याण को देने वाला (है) |

श्लोकार्थ—हे कुरु नन्दन परीक्षित् ! तुम्हारे तो जीवन की अवधि अभी सात दिनों की है । इस बीच तुम वह सब कर लो, जो परम कल्याण को देने वाला है ।

## पञ्चदशः श्लोकः

अन्तकाले तु पुरुष आगते गतसाध्वसः ।
छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृहां देहेऽनु ये च तम् ।।१५।।

पदच्छेद—

अन्तकाले तु पुरुषः, आगते गत साध्वसः ।
छिन्द्यात् असङ्ग शस्त्रेण, स्पृहाम् देहे अनु ये च तम् ।।

शब्दार्थ—

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अन्तकाले | २. | अन्त काल | शस्त्रेण | ७. | शस्त्र से |
| तु | १. | तथा | स्पृहाम् | १३. | ममता-बन्धन को |
| पुरुषः | ४. | मनुष्य को | देहे | ८. | शरीर के |
| आगते | ३. | आने पर | अनु | ११. | सम्बन्धी (हैं) |
| गत साध्वसः । | ५. | निडर होकर | ये | १०. | जो |
| छिन्द्यात् | १४. | काट देना चाहिए | च | ९. | और |
| असङ्ग | ६. | वैराग्य रूप | तम् ।। | १२. | उनके (भी) |

श्लोकार्थ—तथा अन्त काल आने पर मनुष्य को निडर होकर वैराग्य रूप शस्त्र से शरीर के और जो सम्बन्धी हैं, उनके भी ममता-बन्धन को काट देना चाहिए ।